गोम्मटसार कर्मकाण्ड

शिबिर

(भाग - २)

-: वक्ता एवं लेखिका :-

डॉ. श्रीमती उज्ज्वला दि. शहा

एम.बी.बी.एस., डी.सी.एच., डी.जी.पी.

-: संपादक :-

पं. दिनेशभाई शहा

एम.ए., एल.एल.बी.

-: प्रकाशक :-

वीतरागवाणीप्रकाशक

१५७/९, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुंबई - ४०००२२.

टेलिफोन : ९७५७३ ९३६३७

Website : http://www.jainsiddhant.org

Mobile Application : JainSiddhant

गोम्मटसार कर्मकाण्ड

शिबिर - भाग २

प्रथम संस्करण **२६ जनवरी २०२४** **१००० प्रत**

-: प्राप्तिस्थान :-

वीतरागवाणीप्रकाशक

१५७/९, निर्मला निवास, सायन (पूर्व), मुंबई - ४०००२२.

टेलिफोन : ९७५७३ ९३६३७

हमारे प्रकाशन

१) जैनतत्त्व परिचय	- मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश	२५/-
२) जिनागम का कारण-कार्य रहस्य	- मराठी, हिन्दी, गुजराती, इंग्लिश	२५/-
३) करणानुयोग परिचय	- मराठी, हिन्दी, गुजराती	२५/-
४) पंचलब्धि	- मराठी, हिन्दी, गुजराती	२५/-
५) भक्तामर स्तोत्र प्रवचन	- मराठी	१५/-
६) स्वानुभव	- मराठी	६/-
७) परमात्मा कसे बनाल !	- मराठी	६/-
८) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	- हिन्दी	१५०/-
९) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि	- हिन्दी	१५०/-
१०) सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार एवं अर्थसंदृष्टि	- हिन्दी	१००/-
११) सर्वज्ञप्रणीत जैन भूगोल	-हिन्दी, गुजराती	५०/-
१२) सर्वज्ञकथित जैन सिद्धान्त (भाग १ और २)	- हिन्दी	२५०/-
१३) पंच परावर्तन	- हिन्दी	१५०/-
१४) गोम्मटसार कर्मकाण्ड शिबिर (भाग १ और २)	- हिन्दी	३५०/-
१५) गुणस्थान शिबिर	- हिन्दी	२००/-

मूल्य रु. ३५०/- (भाग १ और २)

शास्त्रमर्मज्ञ श्रुतप्रभावक उत्कृष्ट वक्ता

धरसेनाचार्य के शिष्य पुष्पदंत आचार्य और भूतबलि आचार्य ने षट्खण्डागम की रचना की। आचार्य वीरसेन स्वामी ने षट्खण्डागम पर धवला और कषायपाहुड ग्रंथ पर जयधवला टीका लिखी। सिद्धान्तचक्रवर्ती आचार्य नेमिचन्द्र ने अपनी तीक्ष्ण बुद्धि द्वारा षट्खंडागम पर विजय प्राप्त करके गोम्मटसार जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार-क्षपणासार इत्यादि ग्रंथों की रचना की। पं. टोडरमलजी ने गोम्मटसार जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार-क्षपणासार वगरैह ग्रंथों पर ढूंढ़ारी भाषा में सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नामक टीका रची। वर्तमान में एक विशिष्ट क्षयोपशम के धनी, शास्त्रमर्मज्ञ, उत्कृष्ट वक्ता के रूप में आदरणीय विदुषी श्रीमती उज्ज्वलाबेन हुयी है जिनको करणानुयोग विषय संबंधी श्रुत की लब्धि प्राप्त हुयी है। उन्होंने इन सब ग्रंथों का अनेक वर्षों से गहन अध्ययन किया और विदुषी उज्ज्वलाबेन ने वर्षों से अध्ययन करके ये भगीरथ कार्य किये हैं कि पहले तो करणानुयोग द्रव्यानुयोग जैसे सूक्ष्म विषयों की छोटी पुस्तकों के रूप में रचना करके हमारे जैसे साधारण श्रोतागण के लिये बहुत आसान बनाया। उन्होंने जैनतत्त्व परिचय, करणानुयोग परिचय, कारण-कार्य रहस्य, पंचलब्धि, जैन भूगोल इत्यादि अनेक पुस्तकों का लेखन किया है जो वर्तमान में हमारे पास उपलब्ध हैं। पं. टोडरमलजी की टीकायें जो ढाईसौ वर्ष तक जो ढूंढ़ारी भाषा में थी वह जिनमंदिर में अलमारी में बंद थी उनको हिन्दी में रूपांतरित करके जन जन को यहां पर लाभान्वित किया है और दूसरा कार्य लगभग २२ वर्षों से जाहिर में देश-विदेशों में प्रत्यक्ष इन सब ग्रंथों पर आद्योपांत प्रवचन किये हैं।

मैं अपनी बात करूं तो लगभग इ. स. २००७ से इतने वर्षों से आजतक इनके सान्निध्य में प्रवचनों का लाभ प्राप्त हुआ है जो देवलाली महाराष्ट्र में सालों से हर साल दोबार लगातार उनका लाभ लेता आया हूं। मेरे जैसे हज़ारो युवा वर्ग इनके ही माध्यम से इन सब विषयों में रुचि करते हुये अध्ययनशील होने लगे हैं। इनकी शैली की यह विशेषता है कि करणानुयोग जैसे अत्यंत सूक्ष्म और केवलीगम्य विषयों को बहुत ही सरल और सुबोध शैली में प्रस्तुत किया है। आगमशैली के साथ-साथ अध्यात्मशैली की ओर प्रेरित करता हुआ वह आगम से अध्यात्म निकालना वह उनकी खासियत रही है। आज वर्तमानयुग में इन समर्थ आचार्यों और पं. टोडरमलजी जैसे महान विद्वत्गण को

इस धरती पर वापस बुलाने का श्रेय अगर किसीको जाता है तो वह विदुषी उज्ज्वलाबेन को है। इन श्रुत प्रभावनारूपी कार्य में जिनवचन की वैयावृत्ति में विदुषी उज्ज्वलाबेन का जितना महत्वपूर्ण योगदान है उतना ही आदरणीय पं. श्री दिनेशभाई शहा जो बहन के जीवनसाथी रहे हैं और उनके साथ-साथ श्रुत प्रभावक कार्य के भी साथी रहे हैं। उनका भी इतना ही सहकार है जिनके बिना यह कार्य असंभव सा था। इन दोनों अरिहंत भक्तों ने जो तत्त्वज्ञान की गंगा को जगतजन में बहाया है इसके लिये समाज हमेशा उनका ऋणी रहेगा।

विदुषी उज्ज्वलाबेन और पं. दिनेशभाई दोनों को इस कार्य के निमित्त से विशेष विशुद्धि की प्राप्ति हुयी है और विशेष रूप से कर्मों का अभाव करके सिद्धगति को प्राप्त होवे ऐसी हम मंगल भावना भाते हैं।

- **पं. निलेशभाई, मुंबई**

चारों अनुयोगों में आत्मा-आत्मा-आत्मा।

जय जिनेन्द्र उज्ज्वलाबेन, मुझे बहुत हर्ष हुआ आपने याद करके फोन किया। धर्मचक्र यात्रा से लेकर देवलाली में भी बहुत बार हम सब साथ में रहे हैं। आपने कर्मकाण्ड शिबिर का आमंत्रण दिया, भावना अच्छी है मगर अभी खड़ा रहने की भी हिम्मत नहीं हैं। आप पुस्तकें बना रही हैं बहुत अच्छा। मैं अब बोलूंगा, आप पुस्तक में लिख देना।

भगवान की वाणी चार अनुयोगरूप है। द्वादशांग वाणी में प्रथमानुयोग, करणानुयोग, चरणानुयोग, द्रव्यानुयोग है। उसमें जो कुछ है, भले अपेक्षा से कथन करने में आता है लेकिन वस्तुस्वरूप का प्रतिपादन करके अंदर में अपने स्वभाव का लक्ष करना है। भले कर्म की ओर से कथन होता है परंतु कर्म के कर्तृत्व की अकर्म दशा बताने का काम है।

अंदर में ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय, वेदनीय, आयु, नाम, गोत्र उनकी स्थिति है, जीव के परिणाम के साथ निमित्त-नैमित्तिक संबंध है लेकिन अंदर में कर्म से रहित ऐसा जो तत्त्व है; करणानुयोग में जो अध्यात्म है, गुरुदेवश्री कानजीस्वामी

तो बहुत कहते थे जो परिणाम का फल नहीं आवे तो चौद ब्रम्हांड को शून्य होना पड़ेगा। जो परिणाम हुआ उसका फल आयेगा, आयेगा, आयेगा यह निश्चित है। उसमें कोई शंका नहीं। इन्द्र, नरेन्द्र, जिनेन्द्र भी उसमें फेरफार करने में समर्थ नहीं हैं। ऐसा वस्तु का स्वरूप है, उसमें कोई दो राय नहीं है। ऐसा कुछ नहीं है कि वह कथन करणानुयोग का है, वह निश्चय का है। अरे ! चारों अनुयोग समान हैं।

एक गाय है उसके चार आंचल हैं तो उन चारों में से मीठा दूध ही निकलता है। गुरुदेवश्री हाथ से बताते थे ऐसे नाखून लगायेगा तो खून निकलेगा, परंतु ऐसा कला करके निकालेगा तो मीठा दूध निकलेगा। ऐसा ज्ञान में से केवलज्ञान निकलेगा।

मुझे तो बहुत आनंद है, दिनेशभाई ने गुरुदेवश्री का जो फोटो बनाया है और हमारे फतेपुर मंदिर में रखा है। जिस साइड से देखो उस साइड में गुरुदेवश्री आपकी तरफ देख रहे हैं ऐसा दिखता है।

आपने याद किया मुझे बहुत हर्ष हुआ। देवलाली में बहुत बार मैंने आपके करणानुयोग के शिबिरों का लाभ लिया है। ज्ञानियों का योग मिलना कल्पवृक्ष मिले जैसा है। साधर्मी के साथ चर्चा करना, इस काल में बहुत अच्छा है। चारों अनुयोगों में आत्मा, आत्मा, आत्मा ही दिखेगा। प्रथम में प्रथम जीवराजा को जानो, जीवराजा अपने वैभव से विराजमान है। उसकी नजर करो तुम्हें प्राप्त होगा।

- **पं. बाबूभाई मेहता, फतेपुर**

वेबसाइट से ट्रान्सक्रिप्शन तक का सफर

पं. दिनेशजी एवं डॉ. उज्ज्वलाजी से जब दसलक्षण पर्व २०१७ में प्रत्यक्ष मिलना हुआ तब आपसे विशेष परिचय हुआ। हमने कुतुहलवश उनसे दैनिक स्वाध्याय की प्रवचन रेकॉर्डिंग के बारे में पूछा क्योंकि हर प्रवचन के साथ प्रवचन नंबर, विषय वस्तु, रिमार्क्स वगैरह कार्य एकदम सिस्टिमेटिक था। आप दोनों पुस्तक प्रकाशन तथा डिस्ट्रिब्यूशन, दैनिक स्वाध्याय प्रवचन रिकॉर्डिंग, प्रवचन डीव्हीडी डिस्ट्रिब्यूशन इत्यादि की व्यवस्था स्वयं कैसे संभालते हैं यह जानकर मैं और मेरे पति जिनेशजी काफी प्रभावित हुये। मेरे Technical background की वजह से मुझसे बिना पूछे ही जिनेशजी ने DVD की जगह Pen drive पर प्रवचन तैयार करने और आपकी

वेबसाइट संभालने का प्रस्ताव रख दिया क्योंकि वे जानते हैं यह मुझे सहर्ष स्वीकार्य होगा। यह तो हुयी Technical support की बात जो काफी आसान थी।

अप्रेल २०२१ में अमेरिका टीम ने पंचपरावर्तन पुस्तक के लिये ट्रान्सक्रिप्शन की रूपरेखा बनायी तब डॉ. उज्ज्वलाजी ने मुझे टीम में शामिल किया। जैन सिद्धान्त पुस्तक के लिये स्क्राइब, प्रूफरीडिंग और पंचपरावर्तन पुस्तक का प्रूफरीडिंग कार्य 'उज्ज्वल' टीम ने किया, उसके बाद डीटीपी वगैरह कार्य आप दोनों ने ही संभाला। पंचपरावर्तन प्रवचन स्क्राइब करते समय विचार आया कि सभी शिबिर अगर पुस्तकरूप से हो तो करणानुयोग के लिये विषय प्रवेश आसान हो जायेगा। जब आप दोनों के सामने यह प्रस्ताव रखा तो उस समय आपने मना कर दिया क्योंकि पुस्तक छपवाने की प्रोसेस काफी challanging होती है। उस वक्त आप दोनों ने 'पुस्तक नहीं छपवायेंगे, सिर्फ वेबसाइट पर रखेंगे' यह कहकर इस कार्य के लिये सहमती दी।

गोम्मटसार कर्मकाण्ड शिबिर पुस्तक हम वेबसाइट के लिये unicode fonts में बनाना चाहते थे इसलिये इन्हें डीटीपी के लिये नहीं दिया है। शुरुआत में हमने ५-६ अलग-अलग unicode fonts में से Nirmala UI font नक्की किये थे। कुछ शब्द ऐसे हैं जो इस font में हम ठीक से नहीं लिख पाये जैसे शास्त्र, सम्यग्दृष्टि, सम्यक् चारित्र, जगत्श्रेणी, अप्काय इत्यादि। पीडीएफ बनाते समय भी कुछ technical issues आये जैसे की जोड़ाक्षर वाले शब्द में आधा अक्षर अलग हो जाना, लाइन के शब्द सेटिंग्स बदल जाना, इत्यादि। कई बार प्रूफरीडिंग करके ये अशुद्धियां ठीक करने की कोशिश की है, परंतु हो सकता है कुछ अशुद्धियां रह गयी हो। आप इन अशुद्धियों को शुद्ध करके पढ़े और हमें जरूर बतायें जिससे हम उन्हें सुधार लें।

इस पुस्तक का पूरा कार्य किसी प्रोफेशनल व्यक्ति या संस्था ने नहीं बल्कि समर्पित साधर्मीयों ने संपन्न किया है। पुस्तक तैयार करने का यह हमारा प्रथम प्रयास है, इसमें हुयी त्रुटियों को आप अवश्य हमें बताये जिससे हम उन्हें आगे सुधार सके।

अधिक से अधिक साधर्मी इन पुस्तकों के माध्यम से वस्तुस्वरूप समझे और अपने कल्याण का मार्ग प्रशस्त करें यही भावना है।

- **निशा शेठ**

मेरी माँ ने मिलवाया जिनवाणी माँ से

मैं रीना शहा... पं. दिनेशभाई और डॉ उज्ज्वला की पहली पुत्री। बचपन से ही हमने इनसे जिनधर्म की बातें सुनी, अनेक विषय पर प्रवचन सुने। जिनधर्म की रुचि हम दोनों बहनों को बचपन से ही लगी। उसका सारा ही श्रेय है हमारे मातापिता को। पश्चात् शादी हुयी, बच्चे हुये वैसे घर-गृहस्थी में हम व्यस्त रहने लगे। चाहकर भी शास्त्राभ्यास के लिये ज्यादा समय नहीं निकाल पाते थे।

पं. दिनेशभाई और विदुषी उज्ज्वलाजी के शिबिर हमें बड़े ही आधारदायक लगने लगे। शिबिर की खासियत यह है कि एक-एक दिन में ६ घंटे स्वाध्याय होता है। बहुत बड़ा विषय भी पांच दिन में सीख लेते हैं। उज्ज्वलाजी ने कर्मकाण्ड का शिबिर लिया था, तब यह इतना कठिन विषय हमें कैसे समझेगा यह मुझे प्रश्न था। लेकिन उन्होंने बहुत ही सरल भाषा में बेसिक विषय से शुरुआत की और आगे जाकर उसका गहराई तक विषय समझाया।

इनकी खासियत यह है कि कोई भी विषय वे मृदु भाषा में बहुत ही शांति से समझाती हैं। श्रोताजनों में से कोई भी प्रश्न पूछे तो उसका सही उत्तर वे तुरंत ही दे सकती हैं। करणानुयोग के कठिन, गंभीर विषय को वे अत्यंत रुचिकर बना देती हैं। शिबिर एक power packed effect देता है। शिबिर के समय तो वह पूरा विषय ख्याल में आता ही है पर उसका एक फायदा यह भी है कि घर वापस आने के बाद भी स्वाध्याय चालू रखने की पुष्टि मिल जाती है।

यह शिबिर लगाने के लिये भी बहुत ज्यादा पूर्व तैयारी होती है। विषय समझाने के लिये बड़े-बड़े चार्ट्स, printouts, पुस्तकें आदि की तैयारी करना भी बड़ा काम है। इस काम में पं दिनेशभाई दिन-रात मेहनत करते हैं। उनके support बिना शिबिर लगाना मुश्किल है।

पं. दिनेशभाई और उज्ज्वलाजी ने अपनी पूरी जिंदगी शास्त्राभ्यास पढ़ना, पढ़ाना और जिनवाणी के प्रचार में लगा दी है। उनकी पुत्री होना मेरे लिये बड़ा ही सौभाग्य है। जब 'माँ' के मुख से 'जिनवाणी माँ' की बातों का वर्षाव होता है, तब उसका सही मर्म जानकर मैं भी जल्द से जल्द मोक्षमार्ग में लग जाऊं ऐसी भावना भाती हूं।

- **रीना शहा**

करणानुयोग के शिबिर - अद्‌भुत अनुभव

मोक्षमार्गप्रकाशक सातवें अधिकार के अंतिम चार पृष्ठों पर जो विषय वस्तु प्रतिपादित है, जब हमने उसका स्वाध्याय किया तब भान हुआ कि यह करणानुयोग का विषय है। इसमें बहुत रहस्य है; जो आज हमें समझ नहीं आ रहा है पर जिसको अत्यंत गंभीरतापूर्वक हमें समझना चाहिये। योग्य समय और करणानुयोग विशेषज्ञ न मिलने से यह विषय ऐसे ही रह गया। तब से मन में एक जिज्ञासा अवश्य उत्पन्न हुयी कि पं. टोडरमलजी ने जो हमें संकेत किया है वह विषय हमें अवश्य समझना चाहिये।

'जिधर चाह उधर राह' ! योगायोग से जून महीने में देवलाली में आयोजित करणानुयोग शिबिर का आमंत्रण आया जिसका विषय गोम्मटसार जीवकाण्ड बंधव्युच्छित्ति था। यह हम दोनों का करणानुयोग संबंधी प्रथम शिबिर था। आदरणीय दिनेशभाईजी और आदरणीया डॉ. उज्ज्वलाबहनजी के सारे प्रवचन सुने। बहुत अच्छा लगा। हम दोनों को ही बहुत डर था कि हम करणानुयोग संबंधी कुछ भी नहीं जानते हैं, कैसे सब समझ पायेंगे। हमने जब उन्हें अपनी इस अल्पज्ञता के बारे में बताया तब वे बोले कि भाई ! हमको ऐसे ही लोग चाहिये जो बिलकुल करणानुयोग की ए, बी, सी, डी नहीं जानते हैं क्योंकि उन्हें आसानी से समझा सकते हैं जिनकी स्लेट कोरी होती है। पर जिनकी स्लेट पर पहले से ही कुछ लिखा हो तो उसको मिटाना बहुत मुश्किल होता है। हमारा आधा डर तो आप दोनों के हंसमुख और सरल व्यक्तित्व को देखकर ही कम हो गया था और आधा उनकी कक्षा में विषय को सुनने से हो गया था। उस शिबिर से हम मंत्रमुग्ध हो गये और आज तक हमने कोई भी शिबिर नहीं छोड़ा।

विशेष बात यह है कि उनके सारे प्रवचन, १६००० घंटो से भी अधिक प्रवचन हैं वे आज Mobile App पर उपलब्ध हैं। सब लोग उनको सुनकर लाभ ले सकते हैं और करणानुयोग के विषय को सरलता से समझ सकते हैं। हमारा सबसे अनुरोध है कि उनकी जो छोटी-छोटी चार पुस्तकें हैं वे अवश्य ही पढ़े। उनसे काफी कुछ हमारे जैसे लोगों को समझ में आ जाता है। पं. टोडरमलजी साहब ने गोम्मटसार ग्रंथ की टीका सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार-क्षपणासार ढूंढ़ारी भाषा में लिखे थे, उनको डॉ. उज्ज्वलाजी ने अर्थसंदृष्टि सहित हिन्दी भाषा में अनुवाद करके मुमुक्षुओं के ऊपर उपकार किया। हम दोनों की यही मंगल भावना है कि आप दोनों शत वर्ष जियें और जिनवाणी की ऐसे ही सेवा कर अपने मनुष्य भव को सार्थक करें।

- **रमेश भंडारी एवं मुक्ता भंडारी, बेंगलोर**

मेरी बात

जिनागम में चारों ही अनुयोग अत्यंत कार्यकारी हैं, वीतरागता ही उसका प्रयोजन है। द्रव्यानुयोग के सिद्धान्तों का अभ्यास करने के बाद हमने करणानुयोग का अभ्यास शुरू किया उसका दोगुणा लाभ हुआ। एक तो द्रव्यानुयोग की नींव मजबूत होने के कारण करणानुयोग की निमित्तप्रधान शैली होने पर भी हमारी दृष्टि निमित्ताधीन नहीं हुयी और दूसरी बात, केवलज्ञानी ने बताये हुये करणानुयोग के गहन अभ्यास से द्रव्यानुयोग के सिद्धान्तों को दृढ़ता मिली, केवलज्ञान की और अपने सर्वज्ञ स्वभाव की महत्ता आ गयी तथा संपूर्ण मोक्षमार्ग स्पष्टरूप से भासित होने लगा, कहीं पर भी संशय की कोई गुंजाईश नहीं रही।

हम दोनों जहां पर भी प्रवचनार्थ जाते रहे, सर्वत्र लोग दिनेशजी से सिद्धान्त प्रवेशिका और मेरे से करणानुयोग के विषय सीखना चाहते हैं। देवलाली में हमारे २५-३० शिबिर हुये। उनमें एक ही वक्ता ५ दिन तक प्रतिदिन ६-६ घंटे एक ही विषय पर व्याख्यान देता है।

हमारे इन शिबिरों के प्रवचनों को लिखितरूप देकर पुस्तकें बनाने का जटिल, कठिन काम हमारी स्क्राइब टीम निशा शेठ के मार्गदर्शन में कर रही है। निशा शेठ स्वयं अत्यंत मेहनत और लगन के साथ इसे सुचारुरूप से प्रस्तुत करने में अपना योगदान और समय दे रही है।

अभी तक 'जैन सिद्धान्त भाग १ और भाग २' तथा 'पंचपरावर्तन' पुस्तकें प्रकाशित होकर नि:शुल्क वितरित हो चुकी हैं। इस वक्त कर्मकाण्ड शिबिर १ और कर्मकाण्ड शिबिर २ तथा गुणस्थान शिबिर के व्याख्यानों को पुस्तकरूप से प्रस्तुत करते हुये हमें अत्यंत समाधान हो रहा है। जैसे तीर्थंकर का जीव गर्भ में आने से पहले से ही देव रत्नवर्षा शुरू करते हैं, वैसे हमारी पुस्तकें प्रकाशित होनेवाली है इस बात का पता लगते ही हमारे दातार भी धनवर्षा करने लगते हैं। हमारे स्क्राइबर्स तथा दातारों को पुन: पुन: आभार।

आशा है वाचकगण इसका पुरे पूरा लाभ लें।

- **डॉ. उज्ज्वला दि. शहा**

– विषय सूची –

३१. कर्मबंध के भेद-प्रभेद ६२३
३२. बंधप्रकृतियों के भेद ६४४
३३. बंधव्युच्छित्ति - गुणस्थानों में ६६४
३४. बंधव्युच्छित्ति - मार्गणाओं में ६८४
३५. उदय, उदीरणा की व्युच्छित्ति ७०२
३६. उदय, अनुदय प्रकृतियां ७२१
३७. उदय, अनुदय, उदीरणा, व्युच्छित्ति ७४०
३८. सत्त्व, सत्त्व की व्युच्छित्ति ७६०
३९. सत्त्व की व्युच्छित्ति, उद्वेलना ७८०
४०. उद्वेलना, सत्त्व, चूलिका, बंधस्थान ८००
४१. आठ कर्मों के बंधस्थान ८१९
४२. मोहनीय के उदयस्थान ८३६
४३. मोहनीय के उदयस्थान और भंग ८५३
४४. मोहनीय के उदयस्थान - संख्या और प्रकृतियां ८७०
४५. मोहनीय के सत्त्वस्थान - गुणस्थानों में ८८७
४६. नामकर्म के स्थानों के आधारभूत पद ९०५
४७. नामकर्म के बंधस्थान ९२३
४८. गति-आगति ९४१
४९. नामकर्म के बंधस्थानों में प्रकृतियां ९५९
५०. नामकर्म के बंधस्थान ९७८
५१. नामकर्म के बंधस्थानों में भंग ९९५
५२. नामकर्म के उदयस्थानों के काल १०१२
५३. नामकर्म उदयकालों में प्रकृतियां १०३२
५४. नामकर्म के उदयस्थान १०५१
५५. देवों में कहां कौन जन्म लेते हैं ? १०६९
५६. नामकर्म के सत्त्वस्थान १०८६
५७. उद्वेलना ११०४
५८. नामकर्म के सत्त्वस्थान - गुणस्थानों और जीवपदों में ११२४
५९. नामकर्म के बंध, उदय, सत्त्वस्थानों में त्रिसंयोग ११४१
६०. मोहनीय के स्थानों के त्रिसंयोगी भंग ११५८

३१. कर्मबंध के भेद-प्रभेद

ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः, ॐ नमः सिद्धेभ्यः।

॥ॐ शुद्धात्मने नमः॥

॥मंगलाचरण॥

परम भए सब खंडिकैं, करमकांड समुदाय।
सहज अखंडित ज्ञानमय, जयवंते जिनराय॥१॥
विघनहरन मंगलकरन, नमौ सिद्ध सुखकार।
नेमिचंद जिन जगतपति साधुवचन गुनधार॥२॥

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार ग्रंथों की रचना की है। उसमें से यहां हम कर्मकाण्ड का अभ्यास करने जा रहे हैं। उन्होंने तो जीवकाण्ड भी लिखा है, कर्मकाण्ड लिखा है, लब्धिसार-क्षपणासार लिखा है, उनके अन्य भी ग्रंथ हैं। यहां हम नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने लिखे हुये गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ का अभ्यास करेंगे। उनको केवल आचार्य नहीं कहा, सिद्धान्तचक्रवर्ती कहा, क्यों ? हमारा जो मूल आगम है, सबसे शुरुआत में जो षट्खण्डागम लिखा गया था, धरसेन आचार्य के उपदेश से भूतबलीजी और पुष्पदंतजी ने जो लिखा था वह है षट्खण्डागम, छह खण्ड हैं उसके। जैसे चक्रवर्ती छह खण्डों पर विजय पाता है वैसे जिन-जिन आचार्यों ने छह खण्डों का अभ्यास किया है और उसमें वे विशेष ज्ञान हासिल करते हैं उन आचार्यों को कहते हैं सिद्धान्तचक्रवर्ती। इसके भी छह खण्ड हैं - षट्खण्डागम हैं इसलिये उनको सिद्धान्तचक्रवर्ती कहते हैं।

नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती हो गये हैं, उन्होंने गोम्मटसार ग्रंथ की रचना की है। क्यों की है मालूम है ? चामुण्डराय का नाम सुना है आपने ? ये साउथवाले आये हैं न बेंगलोरवाले। चामुण्डरायजी ने क्या किया ? बाहुबली भगवान की वह महाकाय मूर्ति निर्माण की है श्रवणबेलगोला में। उनका दूसरा कार्य किसीको पता ही नहीं है। क्योंकि हम मूर्ति के दर्शन कर आते हैं परंतु उनका जो दूसरा कार्य उसके तो दर्शन भी नहीं करते। मालूम है क्या कार्य किया उन्होंने ? नहीं न मालूम ! उन्होंने नेमिचन्द्र आचार्य को प्रश्न पूछा था। कौनसा प्रश्न पूछा था ? उस प्रश्न का अर्थ हम अभी नहीं समझ सकते

परंतु शिबिर पूर्ण होने पर बिलकुल समझ जायेंगे। प्रश्न का अर्थ भी समझेंगे और उत्तर का अर्थ भी समझेंगे। उन्होंने प्रश्न पूछा था सूक्ष्म अपर्याप्त पृथ्वीकाय आदि जो इकतालीस जीवपद हैं; हमने तो जीवपद क्या है वह भी नहीं सुना है, इकतालीस कौनसे होते हैं उसको भी नहीं जानते, पता ही नहीं हमको; उनमें नामकर्म के सत्त्व का निरूपण करो। अभी नामकर्म कितने हैं, उसका सत्त्व होता है यानी क्या होता है, उसका निरूपण यानी कथन क्या है ? हमें कुछ पता नहीं है। इतनासा प्रश्न पूछा था तो आचार्य डायरेक्ट उसका उत्तर दे सकते थे। परंतु देखिये, वीतरागी भगवान कहो या वीतरागी आचार्यों की ऐसी करुणा होती है। कैसी होती है ? कि वे ऐसा समझते हैं, अभी आचार्यों की बात करूंगी कि उनको ऐसा लगता है कि सभी जीव इसको बहुत सरलता से समझें। तो उन्होंने गोम्मटसार जीवकाण्ड भी लिखा, कर्मकाण्ड भी लिखा और पूरा विस्तृत विषय समझाकर फिर उसमें उस प्रश्न का सारा उत्तर आ गया।

जिसको कर्म क्या है मालूम नहीं है; उसके कितने भेद हैं, कौनसे हैं, वह मालूम नहीं है; बंध क्या होता है, उदय क्या होता है, सत्त्व क्या होता है, इस बात का पता नहीं है तो उनको इसका उत्तर देने से कुछ लाभ नहीं है। इस प्रश्न के उत्तर के रूप में, उन्होंने शिष्य के प्रश्न से प्रेरित होकर पूरे ही गोम्मटसार ग्रंथों की रचना की। उसमें से हमारे हाथ में यहां है जो अभी आपके हाथ में आयेगा इसका नाम है सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड एवं अर्थसंदृष्टि। आचार्य श्री नेमिचन्द्र ने मूल गोम्मटसार लिखा था, स्वयं चामुण्डराय ने उसके ऊपर टीका लिखी थी। टीका का अर्थ होता है स्पष्टीकरण, उसका खुलासा किया था कर्णाटक भाषा में। केशवचंदवर्णीजी हो गये हैं उन्होंने संस्कृत भाषा परंतु कर्णाटक लिपि में उसकी टीका लिखी; उसको कन्नड टीका या संस्कृत टीका कहते हैं। कर्णाटक लिपि में यानी लिपि कैसी थी ? राइटिंग कन्नड़ लिपि में और भाषा थी संस्कृत। पं. टोडरमलजी जयपुर के रहनेवाले; उन्होंने उसको कैसे पढ़ा, उनको कन्नड़ कैसे आती थी पता नहीं। उसका पूरा सरल अर्थ करके उन्होंने उस ज़माने में ढूंढ़ारी भाषा, देशभाषा जिसको कहते हैं; जो रुटीन बोली की लँग्वेज थी उसमें उन्होंने पूरा ही अनुवाद करके अपनी ओर से उसमें भावार्थ भी और जोड़ दिया।

मूलग्रंथ में संदृष्टि जिसको कहते हैं- चिन्ह होते हैं, उनके कुछ पारिभाषिक सिम्बॉल-साइन होते हैं जिसको हम कहेंगे सिम्बॉलिक गणित, जो कठिन गणित का विषय है; बीच-बीच में उसको सिम्बॉलिकरूप में परंपरा से चले आये थे उन सबको

उन्होंने हटाकर अलग एक उसका अधिकार बनाया है और मूल विषय को सरल करके वहां प्रस्तुत किया। इसको निकाल नहीं दिया है, ये संदृष्टियों को इकठ्ठा करके उनका अलग संगठन करके उनकी अलग पुस्तक बनायी जिसका नाम है अर्थसंदृष्टि। जीवकाण्ड की अर्थसंदृष्टि अलग बनायी, कर्मकाण्ड की अलग बनायी, लब्धिसार-क्षपणासार की अलग बनायी। इन तीनों ग्रंथों को उन्होंने नाम दिया सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका यानी सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड, सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड और सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार। पं. टोडरमलजी की यही भावना थी कि जन-जन इसको समझे और अभ्यास करे। इसकी पीठिका इस पुस्तक में है आप जरूर पढ़ना इसको। उसमें तो बारंबार लिखते हैं कि आप अवश्य करणानुयोग का अभ्यास करना, जितना हो सके उतना करना। वे कहते हैं कि सौ टके में से एक टका भी आपको कुछ ख्याल में आये, उसका विषय समझे तो भी आपका कल्याण हो जायेगा।

हमें ऐसा लगता है कि करणानुयोग पढ़कर क्या करना ? हमें तो आत्मानुभूति करनी है। हां, आत्मानुभूति ही करनी है, पं. टोडरमलजी की भाषा में कर्मकाण्ड को पढ़कर ज्ञानकाण्डमय होना है हमें। यह हमारे ज्ञान का विषय है और यह भगवान की वाणी है और इसमें क्या फायदा होता है वह पढ़कर, पढ़ने के बाद ही पता चलता है। यहां बहुत सारे करणानुयोग के अभ्यासी हैं हमारे। यह मत समझना हम ऊपर बैठे हैं इसलिये अधिक जानते हैं, भाई। करणानुयोग के ये अभ्यासी कहां हैं ? ये दोनों चंद्रपुर से आये हैं, यह भाई बेंगलोर से आये हैं, ये सब अभ्यास करनेवाले हैं। धवला, जयधवला का भी अभ्यास चलता है इनका। ये हम बिलकुल पढ़ें क्योंकि यह हमारी धरोहर है। हमारे पूर्वज, बाप-जादे हमारे लिये कोई संपत्ति छोड़ देते हैं तो हमें उनका बहुमान आता है परंतु यह हमारी सच्ची संपत्ति है और इसको हम समझेंगे तो ही यह हमारे लिये कार्यकारी है। आगे की पीढ़ी तो इसको पढ़ेगी ही पर हम इसको जरूर पढ़ेंगे।

पं. टोडरमलजी ने जो देशभाषा या ढूंढ़ारी भाषा में लिखा था, आज की तारीख में भी वे ढूंढ़ारी ग्रंथ सारे उपलब्ध हैं। हमने भी शुरू में इन्हींमें से अभ्यास किया था। जब पहली बार पढ़ा था तो कुछ भी नहीं समझे थे। केवल पढ़ते गये, पढ़ते गये, पढ़ते गये थे। बारंबार पढ़ने से विषय सरल लगने लगा और उसका बहुत सारा अर्थ भासित हुआ। यह लब्धिसार भी हमने पहली बार पढ़ा था न तब कुछ नहीं समझते थे। फिर जब अभ्यास होता है, बारंबार पढ़ते हैं, उसका अर्थ भासित होता है। तो ऐसा विचार

आया कि इसको हिंदी में करें तो इसका हिंदी अनुवाद करके आपके हाथ में दिया है। अभी यह कर्मकाण्ड है, जीवकाण्ड तो पहले ही हो चुका था। उस पर अपने शिबिर भी हुये थे। जीवकाण्ड के दो, कर्मकाण्ड का एक हुआ था, यह दूसरा शिबिर है। उस समय पुस्तक नहीं थी अपने पास। अभी ये पुस्तकें आपके हाथ में मिल जायेंगी। यह अच्छी बात है कि लब्धिसार भी थोड़े दिन में आयेगा अभी। तीन, चार महीने में आपके हाथ में आ जायेगा। उसका भी सब कार्य करीबन पूरा हो गया है।

अब हम आगे बढ़ेंगे। हमने गत साल तीस लेक्चर्स में यह विषय पढ़ाया था। उसको एक लेक्चर में समेटकर हम आगे बढ़ेंगे क्योंकि नये लोग भी बहुत आये हैं। तो हम चाहते हैं कि हम सब एकसाथ चले। कर्मकाण्ड की पहली शिबिर होकर भी अभी एक साल हुआ न ! बहुत समय बीत गया है। तो उसको याद करके हम आगे बढ़ेंगे। यहां कर्म की बात चलेगी, परंतु केवल कर्म की बात नहीं। यहां जीव के परिणाम और कर्म, उनकी जो अवस्थायें हैं उनका है निमित्त-नैमित्तिक संबंध; क्या कहा ? निमित्त-नैमित्तिक संबंध। लौकिक में भी हमें निमित्त कार्य करते हुये भासित होता है। कार्य तो उपादान से ही होता है। प्रत्येक द्रव्य का कार्य यानी उसकी पर्याय, उसकी अवस्था प्रत्येक द्रव्य में अपने में होती है, अपने में स्वयं के कारण होती है। तब उस समय अन्य द्रव्य की वहां उपस्थिति रहती है, वह भी अपना कार्य कर रहा होता है। हमें ऐसा लगता है कि उसने इसका कार्य किया तो उस पर आरोप आता है कि इसने कार्य किया। ऐसे निमित्त-नैमित्तिक संबंध बहुत हैं; जीव और कर्मों में तो हैं ही हैं। उसकी अपेक्षा से जीव ने कर्म बांधा, जीव ने कर्म को उपशमित किया, उसका क्षय किया, भाषा हम ऐसी ही बोलेंगे। कथन तो निमित्त से होगा, करणानुयोग का सारा ही कथन निमित्त से होगा। कथन निमित्त से होगा परंतु कार्य उपादान से ही होता है यह बात हमें बारंबार अपने मन में रखकर इसको पढ़ना है, नहीं तो जिसकी निमित्ताधीन बुद्धि होगी, वह और पुष्ट हो जायेगी। करणानुयोग में मॅक्झिमम कथन निमित्त से है, परंतु करणानुयोग ही प्रूव्ह करता है कि निमित्त से कार्य नहीं होता। वह कैसे होता है वह हम देखेंगे। उसकी बहुत बार शिबिरों में बात हुयी थी, अब हम यहां कर्म की बात देखेंगे।

जीव और कर्म अनादि से ही बंधी हुयी अवस्था में पाये जाते हैं। ऐसा नहीं था कि पहले जीव प्युअर एकदम शुद्ध था और बाद में कर्म आकर जुड़े हों। यदि ऐसा मानेंगे तो सिद्ध भगवान जो कर्म रहित हैं उनको भी कभी न कभी कर्म का बंध होने

की संभावना होगी- ऐसा हो नहीं सकता। किसीने जीव और कर्म को मिलाया नहीं है बस वे ऐसी ही अवस्था में पाये जाते हैं। यह कर्म का क्या होता है ? बंध होता है। बंध होता है यानी क्या होता है ? पहले तो जीव और कर्म बंधे पड़े ही हैं। जो पुराने कर्म वहां पड़े हैं उनका उदय होता है। उदय होता है का अर्थ ये कर्म परमाणु जो कर्मरूप से हैं उनकी अवस्था पलटकर वे अकर्मरूप हो जाते हैं। हमारी भाषा में वे जीव को छोड़कर चले जाते हैं उस समय उसका उदय हुआ कहेंगे। कर्म की जो कुछ फल देने की शक्ति है, उसका फल उस समय मिलेगा। फल मिलेगा यानी उसका जीव के साथ जो कोई निमित्त बनना है वह तब बनेगा। जब कर्म बंधी हुयी अवस्था में पड़े हैं उस समय उनका कुछ भी फल नहीं मिलता। कर्म का जिस समय उदय होता है उसी समय उसका फल मिलता है। जिसको हम कहेंगे कर्म का उदय हो रहा है।

जो पुद्गलपरमाणु हैं; कर्म शब्द से जो पुद्गलपरमाणु हैं उनको कहेंगे द्रव्यकर्म। भावकर्म किसको कहते हैं ? यहां कोई बतायेगा भावकर्म किसको कहना ? हां, बोलो अनुज आपको पता है ? अतुलजी बता रहे हैं, हां। *श्रोता: कर्म की फलदान शक्ति को।* हां, आप कह रहे हैं कर्म की फलदान शक्ति को भावकर्म कहते हैं। हां, आपको कुछ अलग कहना है। *श्रोता: जीव के राग-द्वेष परिणाम।* जीव के राग-द्वेष परिणाम। इन्होंने कहां से ये बात बतायी ? निकालो, निकालो पेज जिनके पास पुस्तक है वे निकालो। ये कुछ पढ़कर आये दिखते हैं, अमेरिका से आये हैं। अमेरिका छोड़कर आये हैं, क्यों ? स्वाध्याय की इतनी अधिक रुचि है। वहां रहते हुये उन्होंने अभी तक कितने ? पांच सौ तो लेक्चर हो गये अपने वहां। हर साल वॉशिंग्टन में हम दोनों मिलकर दिन में आठ घंटे बोलते हैं और दस-दस दिन वहां रहते हैं तो अतुलजी इतने प्रभावित हुये हैं कि सब छोड़कर यहां आ गये हैं। हां, अब हम देखेंगे गाथा नंबर ६ में लिखा है कि कर्म जो हैं कर्मपने से एक ही है और द्रव्य और भाव से दो प्रकार के हैं। कर्म दो प्रकार के हैं, द्रव्यकर्म और भावकर्म। हम अभी तक जो भावकर्म कहते हैं न, उसको क्यों कहा उसकी भी बात यहां आयेगी। गाथा ही सुनना है।

कम्मत्तणेण एक्कं दव्वं भावोत्ति होदि दुविहं तु ।
पोग्गलपिंडो दव्वं तस्सत्ती भावकम्मं तु ॥६॥

कर्म सामान्य भावरूप कर्मत्व से एक प्रकार है यानी कर्म कहने पर वह एक

प्रकार है। वही कर्म द्रव्य और भाव से दो प्रकार का है- द्रव्यकर्म और भावकर्म। ज्ञानावरण आदि जो पुद्गल पिंड है, द्रव्य का पिंड है उसको द्रव्यकर्म कहते हैं और उस पिंड में फल देने की जो शक्ति है; जैसे ज्ञानावरण में क्या शक्ति है ? ज्ञान में जो कुछ उसका निमित्त बनता है, ज्ञान की हीनता आदि वह उसकी शक्ति है। मिथ्यात्व की शक्ति वह मिथ्यात्वरूप जो भ्रम पैदा करना। ये जो उसकी शक्ति है उस शक्ति को भावकर्म कहा। यही बात कही थी न आपने ? अभी तक हम क्या कहते थे कि सिद्ध भगवान द्रव्यकर्म से रहित हैं, भावकर्म से रहित हैं, नोकर्मों से रहित हैं। वहां भावकर्म का अर्थ हम क्या देखते हैं ? सिखाते भी हैं और सीखते भी हैं कि मोह-राग-द्वेष को भावकर्म कहते हैं। यहां क्या कहते हैं ? कर्म में फल देने की जो शक्ति है उसको भावकर्म कहा। वह है कारण और उसका कार्य कहां बनता है ? जीव में, निमित्त बनता है न ! कारण है द्रव्य में, पुद्गल में, कर्म में, फल देने की शक्ति यह हुआ कारण और उसका कार्य क्या हुआ ? जीव में मोह- राग-द्वेष की उत्पत्ति हुयी। उसमें उपचार किया और जीव के भावों को भावकर्म कह दिया। देखो, कार्य में कारण के उपचार से, उस शक्ति से उत्पन्न हुये अज्ञानादि और क्रोधादि भी भावकर्म हैं। तो हम जीव के उन भावों को भावकर्म कहते हैं। वह तो मूल में यहां से बात आयी। आगम में जो अलग-अलग अपेक्षा होती हैं न ! उसको भी जानकर हम आगे बढ़ेंगे।

कर्म एक कहेंगे तो सामान्य से सभी कर्म उसमें गर्भित हैं, हम कहेंगे कर्म का बंध हुआ। अब उसीमें भेद करने हैं तो कहेंगे कुछ घातिकर्म हैं, कुछ अघातिकर्म हैं। इनके नाम सबको पता हैं। घातिकर्मों के नाम मालूम हैं आपको ? *श्रोता: ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय।* ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय; और अघातिकर्म ? *श्रोता: वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र।* वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र ये हुये अघातिकर्म। हम फ़ास्ट इसलिये चल रहे हैं क्योंकि अपना यह विषय बहुत विस्तार से चला है। उनमें जो ज्ञानावरणादि आठ कर्म हैं उनके और भेद करेंगे। इनको कहते हैं मूलप्रकृति, प्रकृति यानी स्वभाव। कर्म का जैसा स्वभाव है, जैसी उसके फल देने की शक्ति है उसके ऊपर से उसको वैसा नाम पड़ा है। ज्ञानावरण, दर्शनावरण आदि कर्मों का हर एक का स्वभाव के अनुसार अपना-अपना कार्य जुदा-जुदा है। ये आठ कर्म हैं इनको कहते हैं मूलप्रकृति, कर्म को ही प्रकृति कहते हैं और इन आठों को क्या कहते हैं ? अनुज है न नाम आपका ? क्या कहते हैं इनको ? मूलप्रकृति और

इसके सबडिव्हिजन्स हैं, भेद हैं, एक-एक प्रकृति के भेद हैं उनको कहेंगे उत्तरप्रकृति।

ज्ञानावरण कर्म के भेद कौनसे हैं ? मालूम है किसीको ? *श्रोता: मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मन:पर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण।* मतिज्ञानावरण, श्रुतज्ञानावरण, अवधिज्ञानावरण, मन:पर्ययज्ञानावरण और केवलज्ञानावरण। इनको क्या कहेंगे ? उत्तरप्रकृति। ऐसे आठों कर्मों के उत्तरप्रकृतियों के सब भेद मिलकर १४८ होते हैं, वन फॉर्टी एट। उसके और भेद करते जाओ तो असंख्यात लोकप्रमाण भेद होते हैं। केवलज्ञानी क्या नहीं जानते हैं, सब कुछ जानते हैं। उसका अर्थ समझते हैं- असंख्यात लोक क्या होता है ? एक लोक यानी एक लोकाकाश में प्रदेश कितने हैं तो असंख्यात हैं। पूरे लोकाकाश में असंख्यात प्रदेश हैं उसको एक लोक कहेंगे। ऐसे एक लोक, दो लोक, चार लोक, लाख लोक, करोड़ लोक ऐसे कितने लोक ? असंख्यात लोक में जितने प्रदेश होंगे उतनी संख्या में कर्मों के भेद हैं। फिर भी हमें समझाने के लिये आचार्यों ने उनको १४८ में गर्भित कर दिया है। उसमें ज्ञानावरण के पांच हैं, अभी हमने नाम लिये थे। दर्शनावरण के नौ हैं, कोई नाम जानता है यहां पर ? *श्रोता: चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन...।* चक्षुदर्शन, अचक्षुदर्शन, अवधिदर्शन बस इतना ही ? ये दर्शन कहेंगे तो गुण हो जायेंगे, आवरण कहना है न ! हां, दर्शनावरण। देखो, पांच तो निद्रा हैं, ये सारे दर्शनावरण के भेद हैं। ये कौनसे हैं ? स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला, निद्रा और प्रचला ये पांच निद्रा हैं और चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण और केवलदर्शनावरण ये दर्शनावरण की ९ प्रकृतियां हैं। ये प्रकृतियों के नाम इसलिये बता रही हूं, आगे सारा विषय इन नामों पर ही चलेगा। कहां कौनसी बंधती है ? कौनसी नहीं बंधती है, क्या होता है ? जिनका अभ्यास नहीं वे तो सुबह आने से पहले पुस्तक में एक बार देखकर आना, जब भगवान का दर्शन करते हैं उसके बाद पुस्तक का- जिनवाणी का भी दर्शन करना और नाम देखकर आना तो बात ख्याल में आ जायेगी और अपनेको ज्यादा बात जानने को मिलेगी। यह हुयी ज्ञानावरण और दर्शनावरण की बात।

मोहनीय की प्रकृतियों के भेद करेंगे तो मूल में दो भेद हैं, दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय। दर्शनमोहनीय की कितनी प्रकृतियां हैं ? *श्रोता: तीन हैं।* हां, तीन। पीछे कोई कहेंगे कौनसी तीन ? *श्रोता: मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति।* हां, मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति इसमें एक बात ख्याल में रखनी है। इसमें

बंधनेवाली प्रकृति तो मिथ्यात्व ही है। अन्य जो दो हैं उनका बंध कभी नहीं होता, मिथ्यात्व में से वे दो तैयार होती हैं जब कभी जीव को सम्यग्दर्शन हो जाता है। इसलिये जब बंधनेवाली और उदयवाली ऐसी अलग-अलग बातें करेंगे तब इस बात को हम दोहरायेंगे। दूसरी कौनसी है ? चारित्रमोहनीय प्रकृति। चारित्रमोहनीय में कौन-कौनसी हैं ? अनंतानुबंधी के चार; देखो, जीव के भाव और कर्म के नाम वे ही हैं, यहां हम उसके आगे कर्म कहेंगे या जीव के भाव को इतना ही कहेंगे उसका क्रोध है और वहां कहेंगे क्रोधकर्म। वे कौन-कौनसे हैं ? अनंतानुबंधी के क्रोध-मान-माया-लोभ ये अभी कर्मों के नाम ले रहे हैं, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध-मान-माया-लोभ। सोलह हो गये ? *श्रोता: संज्वलन रह गया।* संज्वलन, संज्वलन रह गया, अच्छा तो संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ। अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन के चार-चार हुये, सोलह हो गये और नौ हैं वे नोकषाय हैं। कौनसे हैं नोकषाय ? *श्रोता: हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद।* हां, हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, स्त्रीवेद, पुरुषवेद और नपुंसकवेद ये नौ हुये। सबकी टोटल, सोलह और नौ पच्चीस हो गये। अंतरायकर्म के पांच भेद हैं। जैसे अंतरायकर्म जिन गुणों को विघ्न करते हैं ऐसे दान, लाभ, भोग, उपभोग, वीर्य हैं उसके आगे अंतराय-अंतराय शब्द लगा लेना। दानांतराय, लाभांतराय, भोगांतराय, उपभोगांतराय, वीर्यांतराय ये अंतराय के भेद हुये।

अब हम अघाति की बात करेंगे। वेदनीय के दो भेद हैं। देखो, यह बात दुबारा फिर आगे आयेगी। हमने घातिकर्म देखे, अभी अघाति की बात कर रहे हैं। अघाति में हर एक में दो–दो डिव्हिजन्स होंगे; शुभ और अशुभ प्रकृतियां कहो या प्रशस्त और अप्रशस्त प्रकृतियां कहो। वेदनीय में सातावेदनीय और असातावेदनीय। आयु में चार आयु हैं, कौनसी ? नरकायु है, तिर्यंचायु है, मनुष्यायु है और देवायु है। उनमें नरकायु है वह अशुभ प्रकृति है बाकी तीन तो शुभ प्रकृति हैं। नामकर्म की बहुत सारी हैं उनको बाद में याद करेंगे हम। उसमें शुभनाम और अशुभनाम कहेंगे, उसकी ९३ प्रकृतियां हैं उनको भी देखेंगे। गोत्र की उच्चगोत्र और नीचगोत्र दो हैं। अब ये जो नामकर्म की हैं किसीके पास पुस्तक है तो देख लेना, ६२ पेज पर लिखा है। देखो, उनको याद करने का एक तरीका है। उनमें कुछ पिंड प्रकृति हैं और कुछ सिंगल हैं। पिंड किसको कहेंगे ? ग्रुप को। जैसे गति नामकर्म है; गति नामकर्म में चार गतिनामकर्म हैं, केवल

हम गति नामकर्म याद रखेंगे तो आगे का आसान है। जब कहेंगे जाति नामकर्म तो एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिंद्रियजाति, पंचेन्द्रियजाति इन पांच के बदले हम जाति नामकर्म इतना ही याद करेंगे। शरीर नामकर्म कहेंगे तो पांच प्रकार के शरीर नामकर्म हैं। औदारिकशरीर नामकर्म, वैक्रियिकशरीर नामकर्म, आहारकशरीर नामकर्म, तेजसशरीर नामकर्म और कार्माणशरीर नामकर्म। पांच के बदले हम शरीर नामकर्म इतना कहेंगे। उसी नाम के बंधन नामकर्म हैं, उसी नाम के संघात नामकर्म हैं। तो ये याद रखने के लिये आसान हैं। अंगोपांग में भी शरीर पांच हैं, अंगोपांग तीन ही हैं क्योंकि तेजस और कार्माण का कोई अंगोपांग नहीं होता है। वहां औदारिक, वैक्रियिक और आहारक के अंगोपांग तीन हो गये। इसतरह जो पिंड प्रकृतियां हैं उनको अलग याद करेंगे और जो सिंगल हैं उनको अलग याद करेंगे।

जैसे गति, जाति, शरीर, बंधन, संघात, संस्थान, अंगोपांग फिर संहनन; फिर स्पर्श, रस, गंध, वर्ण- नहीं यहां वर्ण, गंध, रस, स्पर्श कहा। क्यों ? प्रदेशों का यानी परमाणु बंधते हैं तब उनके बटवारे का कुछ क्रम है। किसमें अधिक माल जाता है, किसमें कम ये हमने गत साल देखा था। उसके अनुसार इन कर्मों के नामों का क्रम है। इसी ऑर्डर में इसी क्रम से अगर हम याद करेंगे तो ये बटवारा कैसे होता है यह जानने के लिये सुलभ होता है। देखो, वर्ण यह नामकर्म की बात है। जैसे हम पुद्गल का जो वर्ण गुण है उसके कितने भेद करते हैं ? *श्रोता: पांच।* पांच, तो ये पांच अलग-अलग नामकर्म भी हैं। ऐसे स्पर्श, रस, गंध, वर्ण के हम टोटल कितने भेद करते हैं ? *श्रोता: बीस।* बीस करते हैं। यहां बीस ऐसे अलग-अलग कर्म कहेंगे। यदि इनको शॉर्ट में कहना है तो चार में गर्भित कर सकते हैं- वर्ण, गंध, रस, स्पर्श इतना ही कहेंगे। बीस के बदले चार कहेंगे तो सोलह हम कट करेंगे। पहले हमने देखे थे शरीर पांच, बंधन पांच और संघात पांच; उसके बदले शरीर इतना ही कहेंगे तो बंधन और संघात आ गये ऐसा समझेंगे। पंद्रह के बदले मात्र हम पांच कहेंगे तो दस कट होंगे। दस और सोलह; छब्बीस प्रकृतियां। अगर भेद करके समझाना है तो १४८ का नाम लेंगे और उसीको अभेद करके समझायेंगे तो उसमें से छब्बीस कम करके १२२ का हिसाब लगायेंगे।

बंध कितने का होता है ? हम १२० की चर्चा करेंगे क्योंकि दो बंधती नहीं हैं; सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति बंधती नहीं है तो १२० का हिसाब बतायेंगे। उदय कितने का होता है ? तो १२२ का हम कहेंगे। जब सत्ता की बात आयेगी तब हम १४८

का हिसाब लगायेंगे। ऐसा नहीं समझना कभी १४८ कहते हैं, कभी १२२ कहते हैं, कभी १२० कहते हैं ये क्या झमेला है ? हम वहां फिर उसको याद दिलायेंगे। हमने जो देखे न; गति, जाति, शरीर वगैरह; वर्ण, गंध, रस, स्पर्श तक आ गये थे। फिर आनुपूर्वी, जिसको गत्यानुपूर्वी कहते हैं वे भी चार हैं। जैसे गति चार हैं उसी नाम के आनुपूर्वी हैं और विहायोगति, इसमें प्रशस्त, अप्रशस्त दो भेद हैं। अभी इनके कार्य और अर्थ हम इस बार नहीं लेनेवाले, हमने पहले विस्तार से लिया था, आप पुस्तक में से पढ़ सकते हैं। फिर उसके बाद चार की जोड़ी याद रखना। अगुरुलघु, उपघात, परघात और उच्छ्वास। उसके बाद आतप और उद्योत। विहायोगति यहां बाद में लिखा है। परंतु वह पिंड प्रकृति होने से मैंने आपको पहले बतायी। फिर जोड़ी-जोड़ी चार जोड़ियां हैं। हम ऐसा याद कर सकते हैं त्रस, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक। अब उसकी जोड़ी उसके साथ लगाकर आपको याद रखना है त्रस-स्थावर, बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त और प्रत्येक-साधारण। उसके आगे छह जोड़ियां हैं, कौनसी ? स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, सुस्वर-दुस्वर, आदेय-अनादेय और यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति।

आप कहेंगे इतना सब कुछ ? हम पहले ही लेक्चर में भाग जायेंगे। नहीं भागना क्योंकि आगे इंटरेस्टिंग विषय आनेवाला है। गत शिबिर का तीस घंटों का मॅटर हम आपको एक घंटे में बता रहे हैं न ! इसलिये आपको लगेगा कि यह क्या झमेला है। यह बाद में कितने रहे ? निर्माण और तीर्थंकर। ये ९३ प्रकृतियां हैं। आप पेज ६२ पर देखकर उसको दोहरा सकते हैं। उसके आगे हम देखेंगे, हमने अलग-अलग भेद भी देखे थे; उसमें दो प्रकार होते हैं, हमने पहले में पहले देखे थे घाति और अघाति; और अघाति में भी दो भेद किये थे। कौनसे ? *श्रोता: प्रशस्त और अप्रशस्त।* शुभ-अशुभ कहो, पुण्य-पाप कहो। पुण्य-पाप तो मूल में प्रकृतियों के ही नाम हैं। पुण्य प्रकृति और पाप प्रकृति, परंतु जिसके कारण ये बंधती हैं न उसको पुण्य और पाप कहने की हमारी पद्धति है। यह उपचरित कथन जो है वह आरोपित कथन है।

जीव के जिन परिणामों से पुण्य प्रकृतियां बंधती हैं, उन परिणामों को हम कहेंगे ये पुण्यभाव हैं और जिनके कारण पाप प्रकृतियां बंधती हैं उनको कहेंगे ये पापभाव हैं। परंतु ये पुण्य-पाप किसका भेद है ? अघातिकर्मों का। क्यों ? घातिकर्म में इतनी सारी प्रकृतियां हैं; अभी इतने घातिकर्म देखे न ! ज्ञानावरण की ५ देखी, दर्शनावरण की ९ देखी, मोहनीय की २८ देखी और अंतराय की ५ देखी। टोटल ४७ हैं,

४७ घातिकर्म की प्रकृतियां हैं, इनमें प्रशस्त प्रकृतियां कितनी हैं कोई गिनायेगा यहां ? *श्रोता: एक भी नहीं।* एक भी नहीं है, ये सभी पापरूप ही हैं, ही लगा लो आगे। इसमें एक भी प्रकृति पुण्यरूप नहीं है। पुण्य प्रकृति कहां हैं ? हम इतना पुण्य जो इकट्ठा कर रहे हैं किसके खाते में जा रहा है ? तो कहते हैं अघाति में। अभी हमने भेद किया था साता–असाता, उच्चगोत्र–नीचगोत्र, शुभायु और अशुभायु, शुभ नामकर्म और अशुभ नामकर्म; ये पूरा एक टेबल बनाकर ८१ पृष्ठ पर यहां लिखा है। जिसके पास पुस्तक नहीं है वे केवल पेज नंबर नोट करना, बाद में देख लेना उसको।

ये भेदरूप से और अभेदरूप से हैं जैसे १४८ भेदरूप से हैं, १२२ का हिसाब करके अभेदरूप से सारी समझायी हैं। देखो, हम पुण्य कमाना चाहते हैं, उसका फल कौन भोग रहा है इसका विचार करना। रमेशभाई, पुण्य कमावें हम, क्या करें ? जीव उपवास करे, जीव यात्रा करे, जीव स्वाध्याय करे तो उस काल में पुण्य प्रकृतियां बंध रही हैं। परंतु एक नियम ख्याल में रखना कि आयु कभी-कभी बंधती है परंतु अन्य सात कर्म तो निरंतर; निरंतर का अर्थ है अंतर छूटे बिना, एक समय का भी अंतर छूटे बिना; सातों ही कर्म हर समय बंध रहे हैं। अभी हम स्वाध्याय को बैठे हैं किसीको आयु बंधती होगी तो बंधती होगी, नहीं तो भी सात कर्म सबके बंध रहे हैं। सात कर्म में किस-किसको लेना ? ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय, वेदनीय, नाम और गोत्र। यहां हमने जो ज्ञानावरणादि चार घातिकर्म बांधे न, उसमें पुण्य मिला कि पाप मिला ? *श्रोता: पाप।* यहां शुभभाव कर रहे हैं और ये चार पाप प्रकृतियां बंध ही रही हैं; हर समय बंधती हैं और वे तो बंधेगी। मोहनीय नौवें तक बंधेगा और बाकी तीन दसवें तक बंधेगी। तो इतना पुण्य कमाया उसका क्या हुआ ? घातिकर्मों में पापरूप बंधा है। पुण्य-पाप भेद कहां होगा ? अघातिया में। फल कौन भोगेगा ? *श्रोता: जीव भोगेगा।* कहां जीव भोगता है ? नामकर्म में ९३ प्रकृतियां गिनी हमने, वे तो शरीर की रचना में चली गयी। इनमें जीवविपाकी बहुत कम हैं, बाकी सारी तो पुद्गलविपाकी हैं। आनुपूर्वी क्षेत्रविपाकी है, विग्रहगति में उसका उदय होता है। आयु में, कितना वह जियेगा इतना वह आयुकर्म में होता है। कम जिये या अधिक जिये उसमें जीव को क्या लेना देना है ? जीव के भावों के साथ जो निमित्त बनता है- ज्ञान की हीनता होती है; दर्शन की हीनता होती है; मोहनीय में तो वह भ्रमणा चलती है, मिथ्यात्व चलता है और राग-द्वेष होते रहते हैं; उसके जो विघ्नरूप से बातें वीर्य की हीनता हो जाती है। ये जीव को जो कुछ

भुगतना पड़ता है वह सब घातिकर्मों के उदय में होता है।

अघाति के उदय में क्या होगा ? उसको संयोगों में अनुकूलता प्रतिकूलता भासित होगी। संयोग हमसे भिन्न ही हैं। आप दिन-रात कमाई करते हो, भाई किसके खाते में जमा करते हो ? पड़ोसी के बँक खाते में जमा करते हो ? किसके खाते में जमा करते हो ? अपने; और यहां हम क्या कर रहे हैं ? ये सारा पुण्य कमा कर सारा अघाति में जमा कर रहे हैं। वह सारा पड़ोसी ही भोगेगा जिसको भोगने की अक्ल भी नहीं है। नहीं समझे ? शरीर की रचना होगी तो शरीर को सुख मिलेगा कि नहीं ? जीव मैं शरीररूप हूं यह मानकर मिथ्यात्व और पुष्ट कर रहा है। पुण्य के फल में जो कुछ उदयरूप बातें संयोगों में मिलेगी, यदि मिथ्यादृष्टि होगा तो वह पुण्य के फल में उसमें और रचा पचा रहता है। उसको क्या मिला ? उसका तो उलटा नुकसान ही नुकसान हुआ। इसलिये योगीन्दु देव कहते हैं न योगसार में कि पाप को तो सारा जगत पाप कहता है परंतु पुण्य को भी पाप कहनेवाले विरले ही हैं। ये हमारे पंडितजी साहब छोटे बाबूभाई बैठे हैं यहां पर, योगसार के बहुत अच्छे प्रवचनकार हैं।

देखो, यहां पाप और पुण्य का जो हम भेद कर रहे हैं उसकी बात अघाति में ही चली जाती है। मेरा हमेशा का प्रश्न है- जो वेदनीय है न- सातावेदनीय, वह कैसा है ? उसके और भेद करके फिर पूछूंगी आपको। ये जो घातिकर्म हैं न उसके दो भेद और हैं, देशघाति और सर्वघाति। देशघाति यानी पूरा घात नहीं करते, सर्वघाति यानी पूरा ही घात करते हैं। किसका घात करते हैं जीव का ? नहीं, फिर ? अरे, अपने प्रतिपक्षी का। क्या कहा ? हम कहेंगे गुणों का घात करेंगे, परंतु घात किसका होता है ? पर्याय में अपनी शक्ति व्यक्त नहीं होती है उसमें उस पर आरोप आता है। जीव अपने स्वयं के अशुद्ध उपादान से अशुद्ध पर्यायरूप परिणमित होता है। पर यहां निमित्त का कथन चल रहा है तो हम कहेंगे यह घातिकर्मों के निमित्त से हो रहा है। तो जिनके उदय में पूरा ही घात होता है जैसे फॉर एक्झॅम्पल, हम उदाहरण देकर समझायेंगे।

केवलज्ञानावरण है वह सर्वघाति प्रकृति है। केवलज्ञानावरण का उदय चल रहा है तो हमारा केवलज्ञान थोड़ासा प्रगट रहेगा कि नहीं रहेगा ? कहते हैं बिलकुल नहीं। ऐसा नहीं होता कि केवलज्ञान थोड़ासा प्रगट है और थोड़ासा अप्रगट है- ऐसा नहीं है। उसको क्या कहेंगे ? सर्वघाति प्रकृति। और देशघाति प्रकृति ? हमारा मतिज्ञानावरण है

वह देशघाति है तो क्या हो रहा है ? मतिज्ञानावरण का उदय भी चल रहा है और हमारा मतिज्ञान भी प्रगट है। परंतु उसमें तरतमता है। कोई बहुत बुद्धिमान है, कोई मतिमंद है। जैसे एकेन्द्रिय पर्याय को देखेंगे, निगोद को देखेंगे; कितनी ज्ञान की हीनता है और हम संज्ञी पंचेन्द्रिय है हमारा ज्ञान का उघाड़ बहुत है। वह भी मतिज्ञानवाला, श्रुतज्ञानवाला है और हम भी मति-श्रुतज्ञानवाले हैं। देशघाति का उदय होने से किसीका थोड़ा अधिक, किसीका कम ऐसे उसमें कम ज्यादा उघाड़ होता रहता है परंतु उघाड़ रहता ही है। ऐसा एक भी छद्मस्थ जीव नहीं होगा कि उसको बिलकुल मति-श्रुतज्ञान ही नहीं होगा। ख्याल में आती है बात ? मतिज्ञानावरण देशघाति है, उसका उदय भी रहता है और मतिज्ञान भी चलता रहता है इसको कहेंगे हम देशघाति। जैसे ज्ञानावरण में केवलज्ञानावरण है यह सर्वघाति है, बाकी चार ज्ञानावरण जो हैं वे देशघाति हैं।

दर्शनावरण में पांच निद्रा और केवलदर्शनावरण सर्वघाति हैं, बाकी तीन जो हैं वे देशघाति हैं, पूरा घात नहीं करते। फिर, अंतराय में पांचों ही देशघातिरूप प्रकृतियां हैं और मोहनीय में मिथ्यात्व है वह सर्वघाति है, सम्यग्मिथ्यात्व भी सर्वघाति है, सम्यक् प्रकृति कैसी है ? देशघाति, उसका उदय भी हो रहा है और यहां जीव का सम्यक्त्व भी चल रहा है। ये दोनों बातें साथ-साथ होती हैं इसलिये उसको कहेंगे देशघाति। हम कहते हैं न ! क्षयोपशम सम्यक्त्व चल रहा है उसके उदय में। और कौनसी रही है ? चारित्रमोहनीय की अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण और प्रत्याख्यानावरण ये कैसी हैं ? सर्वघाति हैं। संज्वलन देशघाति है। ये किसका घात करती है या नहीं करती है ? अपने प्रतिपक्ष का घात करती है। जैसे पांच प्रकार की निद्रा है, दर्शनावरण की प्रकृतियां हैं; दर्शनावरण की प्रकृतियां नौ हैं टोटल और दर्शन गुण के परिणमन कितने हैं ? *श्रोता: चार।* चार; ये पांच निद्रा किसका घात करती है ? चक्षुदर्शनावरण चक्षुदर्शन का घात करती है। अभी वह देशघाति यानी पूरा घात नहीं होगा फिर भी हम कहेंगे उसका घात करती है। ये पांच निद्रा किसका घात करती है ? हां बोलेंगी आप ? मैंने आपको एक क्लू बता दिया है। *श्रोता: दर्शन का।* दर्शन का... तो नींद में हमें दर्शन बिलकुल नहीं है ? *श्रोता: जाग्रत अवस्था का।* हां क्योंकि हमने बताया था कि प्रतिपक्ष का घात करती है। दर्शन का कार्य चलेगा; वहां जाग्रत अवस्था का नाश होता है, जाग्रत अवस्था का घात है। इसतरह से देशघाति और सर्वघाति का विभाजन हमने देखा। मेरा प्रश्न है कि जो सातावेदनीय है वह देशघाति है या सर्वघाति है ? पीछे कोई बतायेंगे ? *श्रोता:*

दोनों में से कोई भी नहीं क्योंकि वह अघातिकर्म है। हां, वह अघातिकर्म है और सर्वघाति और देशघाति वे घातिकर्म के भेद हैं। हमने बहुत बार यह प्रश्न पूछा है न यहां पर !

यहां अभी हम पहले बंध वगैरह की चर्चा करेंगे। बंध के कारणों की चर्चा हम द्रव्यानुयोग में बहुत सुनकर आये न ! देखते हैं कौन-कौनसे कारण, कोई बतायेगा यहां पर ? बंध के कारण क्या हैं ? *श्रोता: पांच।* हां, पांच, बताना। *श्रोता: मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग।* मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग ये तो बंध के कारण हैं। इन्हींको हम आस्रव भी कहेंगे- ये पांच हैं। कहीं-कहीं शास्त्र में प्रमाद को उन्हींमें गर्भित करके मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग ऐसे चार भी कहेंगे, इसको द्रव्यप्रत्यय कहा है। आस्रव-द्रव्यप्रत्यय यानी पुद्गल के। किसको कहना आस्रव ? आस्रव किसको कहते हैं ? आस्रव की हम परिभाषा क्या सीखे थे ? कर्मों के आने को आस्रव कहते हैं न। समयसार निकालकर देखना है ? भाई, देखेंगे वहां आस्रव किसको कहा और निश्चय से आस्रव किसको कहा।

१६३, १६४ गाथा निकालना भाई। अरे वाह ! वही निकली, बहुत अच्छा ! यहां कहते हैं- **मिथ्यात्व, अविरति, कषाय अने योग अे पुद्गल परिणामो,** पुद्गल परिणामों का अर्थ होता है पुराने कर्मों का उदय; **ज्ञानावरणादि पुद्गल कर्मना आस्रवणनां (आववाना) निमित्त होवाथी**; मैं इसका हिंदी करके बोल रही हूं; वह आने के निमित्त होने के कारण क्या कहा ? पुराने कर्मों का उदय। ज्ञानावरणादि नये कर्म आते हैं न; हमने देखा था हर समय सात कर्म तो बंधते ही हैं, आयु भी कभी-कभी बंधती है। उसका बंधने का क्या कारण है ? पुराने कर्मों का उदय। कौनसे ? मिथ्यात्व, अविरति, कषाय और योग **खरेखर आस्रवो छे**। सच में उनको आस्रव कहा है। **अने तेमने** तेमने अेटले ? **मिथ्यात्वादि पुद्गल परिणामोने** पुद्गल परिणामों का अर्थ क्या है ? कर्मों का उदय। **कर्म आस्रवणनां निमित्तपनानुं निमित्त मोह राग द्वेष छे।** जो अज्ञानमय आत्मपरिणाम है इसलिये उसको भी आस्रव कहते हैं। देखो ये कर्मों पर घटित कर रहे हैं सब, ख्याल में आयी न बात ? हां, तो आगे देखते हैं अभी हम।

यह बंध के कारणों की चर्चा हमने बहुत बार सुनी है, फिर भी यहां एक बात ख्याल में रखना है। जहां-जहां जीव का कोई भी विभावरूप परिणमन है; जीव में

मिथ्यात्व हो रहा है, अविरति हो रही है, प्रमाद है, कषाय है, योग है वहां-वहां कर्मों का निमित्तपना पाया जायेगा। कर्म जीव को कुछ नहीं कर रहे हैं, जीव स्वयं ही उसरूप परिणमित होते हैं। परंतु यहां उस समय कर्मों की जो अवस्था है उसको निमित्तरूप से उपचार किया जाता है। हम देखते हैं मिथ्यात्व में कौन निमित्त है ? मिथ्यात्वकर्म का उदय चल रहा है दर्शनमोहनीय का। अविरति, प्रमाद वगैरह क्यों है ? तो कहेंगे वहां चारित्रमोहनीय आदि का उदय चल रहा है, है न ! योग क्यों हो रहा है ? यहां योग भी जीव का विभाव है न। योग क्या है पहले इसको देखते हैं। देखो, योग में भी दो हैं; एक होता है द्रव्ययोग और एक होता है भावयोग। द्रव्ययोग किसको कहेंगे ? आत्मप्रदेशों का जो चंचलपना है उसको कहेंगे द्रव्ययोग और उसमें कर्म को और नोकर्म को; नोकर्म यानी शरीर, मन, वाणी, उच्छ्वास आदि के जो परमाणु जीव ग्रहण करता है; तो ये कर्म और नोकर्म को ग्रहण करने की, आकर्षित करने की जीव की जो शक्ति है उस शक्ति को भावयोग कहा है। ऐसी शक्ति क्यों उत्पन्न हो रही है हमारे में ? सिद्ध भगवान तो कुछ कर्म का भी ग्रहण नहीं करते हैं, ना ही शरीर के परमाणुओं का। अयोगकेवली भगवान भी, अयोग नाम है न, उनमें योग ही नहीं है। इसलिये वे भी कर्म को ग्रहण नहीं करते, नोकर्म यानी शरीर के परमाणुओं को भी ग्रहण नहीं करते।

हमारे ऐसे क्या हैं, कौनसे कर्म का निमित्त हो रहा है कि जीव में योग उत्पन्न हो रहा है ? रमेशभाई बतायेंगे आप ? यह योग जो जीव का विभाव है उसमें कौनसे कर्म का निमित्त है यह हमें नक्की करना है। अभी हम कर्मकाण्ड की बात देख रहे हैं तो हमें देखना है कि कौनसे कर्म के निमित्त से यह हो रहा है। *श्रोता: नामकर्म।* हां। हुआ न अपना, इंदौरवालों ने कर्मकाण्ड के ऊपर एक पूरा शिबिर रखा था। शरीर नामकर्म के उदय से; कौन-कौनसे शरीर नामकर्म है हमारे पास ? अभी हमने पांच गिने थे। *श्रोता: औदारिकशरीर नामकर्म।* औदारिकशरीर नामकर्म के उदय में औदारिकशरीर संबंधी आहारवर्गणा के परमाणुओं का ग्रहण होता है। जिनके वैक्रियिकशरीर नामकर्म का उदय होगा; जो देव, नारकियों के होता है वे वैक्रियिकजाति के परमाणु लेते हैं। जो आहारकशरीर की रचना करते हैं उस समय में उनको वैसा योग होता है। क्यों ? क्योंकि आहारकशरीर नामकर्म का जिन्होंने बंध किया है उनका उदय होता है तब उनके उन परमाणुओं का ग्रहण होगा; बंध और उदय में सब बातें आयेगी। तेजसशरीर नामकर्म का उदय हर समय चलता है। हर समय हम तेजस वर्गणा का ग्रहण करते

हैं। कार्माणशरीर नामकर्म का उदय हर समय चलता है तो हम कर्मों को भी ग्रहण करते हैं। कर्म का ग्रहण क्यों हो रहा है ? कार्माणशरीर नामकर्म के उदय से।

औदारिकशरीर नामकर्म कार्माणवर्गणा से बना है। कौनसी वर्गणा से बना है ? *श्रोता: आहारवर्गणा से।* क्या यह बात सही है ? हम नामकर्म की बात कर रहे हैं न, पांचों ही शरीर नामकर्म ये नामकर्म के भेद हैं वे कार्माणवर्गणा से बने हैं। हमने यह नहीं पूछा कि औदारिकशरीर किससे बना है, औदारिकशरीर आहारवर्गणा से बना है। आहारवर्गणा के परमाणु क्यों ग्रहण हो रहे हैं ? औदारिकशरीर नामकर्म का उदय है उसके कारण से आहारवर्गणा के उस जाति के परमाणु का ग्रहण होता है। ये सारा ही निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। हमारे यहां सौधर्मइन्द्र आदि देव आयेंगे न पंचकल्याणक मनाने, तो वे कौनसी जाति के परमाणु ग्रहण करेंगे ? हमारे जैसे औदारिकशरीर के ? *श्रोता: वैक्रियिक के।* वैक्रियिक के, क्यों ? उनका वैसा शरीर नामकर्म का उदय है। उनमें वर्ण, गंध वगैरह सारे नामकर्म ले लेना। कोई अमेरिकन यहां आयेंगे, गोरेवाले लोग तो हमारे जैसे काले दिखेंगे क्या ? वे उस वर्ण के नामकर्म के उदय से वैसे-वैसे परमाणुओं को ग्रहण करेंगे। हम चेहरे के ऊपर जो कुछ लगाते हैं न आजकल, टीव्ही पर ॲडव्हर्टाइझमेंट आती है क्रीम की, तो उसे लगाने से हमारे वर्ण वे जो ग्रहण करते हैं शरीर नामकर्म से वह बदल जाते होंगे ? ऊपर से कलर किया तो क्या होगा ? इसलिये बार-बार करना पड़ता है, नहीं तो एक बार में हो जाते कि नहीं, हां !

अभी हमने बंध के कारण भी देखे हैं। बंध का कारण क्या है ? एक बाजू हम कहेंगे योग क्योंकि कर्म के परमाणु क्यों आते हैं ? योग के कारण। योग क्यों होता है ? शरीर नामकर्म के उदय में। अभी हम केवल कर्मों की बात कर रहे हैं। कार्माणशरीर नामकर्म के उदय में कर्म का ग्रहण होता है। अब कभी ये शक्ति कम ज्यादा होती है योग की। आत्मप्रदेशों का कंपन और उदय के अनुसार वह शक्ति कम ज्यादा होती है। जब ज्यादा योग है तो अधिक परमाणुओं का ग्रहण होता है, जब योग कम है तो कम परमाणुओं का ग्रहण होता है। एक समय में जीव जितने परमाणु ग्रहण करता है उसको कहेंगे समयप्रबद्ध। तो एक समय में जीव कितनी कार्माणवर्गणाओं को ग्रहण करता है ? मालूम है ? यहां लिखा था देखो। *श्रोता: सिद्धों से अनंतगुणे ?* सिद्धों से अनंतगुणे ? नहीं जरा शास्त्र में पढ़कर बतायेंगे तो अच्छा लगता है। क्योंकि क्या है ये सारी ही बातें शास्त्र में तो लिखी हैं कि एक समय में जीव कितना-कितना ग्रहण करता

है। यहां कहते हैं कि सिद्धराशि के अनंतवें भाग और अभव्यराशि से अनंतगुणा।

सिद्धराशि में आजतक जितने जीव सिद्ध बने हैं। कितने बने हैं ? हर छह महीने और आठ समय में छह सौ आठ जीव सिद्ध होते ही होते हैं और ऐसा अनादि से चल रहा है और अनंतकाल तक चलेगा, इसको कहेंगे सिद्धराशि। लोगों को यही चिंता होती है, सवाल नहीं होता, चिंता होती है सब जीव मोक्ष चले जायेंगे तो यहां कौन रहेगा। देखो, सिद्ध कितने हैं पता है ? हमने निगोद का बहुत बार वर्णन सुना है, देखा है। जो एक निगोद का शरीर है उसमें अनंत जीव रहते हैं। कितने अनंत ? सिद्धराशि से भी अनंतगुणे जीव एक निगोद शरीर में रहते हैं और ऐसे निगोद शरीर इस विश्व में कितने हैं ? तो पांच बार असंख्यातलोक लिखो और आपस में गुणा करो तो उसका प्रमाण जितना होगा, उसमें जो प्रदेशों की संख्या होगी उतने निगोद शरीर इस विश्व में हैं। यानी एक निगोद शरीर के जीवों का अनंतवां भाग भी कभी सिद्धराशि में नहीं पहुंचेगा। *श्रोता: इतने निगोदिया जीवों के शरीर हैं विश्व में ?* हां, इतने निगोदिया जीवों के शरीर असंख्यात हैं और एक-एक शरीर में अनंत जीव हैं।

यहां क्या बात हो रही है ? एक समय में जीव कितने परमाणुओं को ग्रहण करता है ? तो सिद्धराशि के अनंतवें भाग, दूसरी तरफ से बताना है तो अभव्यराशि से अनंतगुणा ऐसावाला जो पर्टिक्युलर अनंत है उतने अनंत परमाणु जीव एक समय में ग्रहण करता है। उसमें भी जो व्हेरिएशन होता है, कभी छोटा समयप्रबद्ध, कभी बड़ा, असंख्यातगुणा का डिफरन्स हो सकता है। क्यों ? क्योंकि योगों में जितना डिफरन्स होगा उतना उसमें भी होगा। योग ज्यादा है तो वहां परमाणु का ग्रहण भी ज्यादा है। ऐसा नहीं है कि सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे तो योग कम हो जायेगा। अरिहंतों को योग ज्यादा है कि हमें ज्यादा है ? *श्रोता: उनको योग नहीं होता।* उनको भी होता है, सयोगकेवली के योग होता है क्योंकि वह अपने आप उसमें परिणमन होता है उसमें गुणस्थान का कुछ लेना देना नहीं है। सम्यग्दर्शन के कारण योग कम हो गया ऐसा नहीं है। हम क्या समझते हैं हम ऐसे बैठें हैं निश्चल बैठें हैं अभी, इधर-उधर नहीं देख रहे, कुछ विचार नहीं कर रहे शास्त्र का। हमारा योग कम हुआ होगा कि नहीं होगा ? ऐसा कुछ नहीं है। इनके कारण योग में कुछ परिवर्तन नहीं होता, कुछ नहीं होता।

कर्म के परमाणु कितने आते हैं और कितने जाते हैं उसमें कुछ अपना फायदा,

नुकसान या उसकी फलदान शक्ति उस पर है ही नहीं, क्योंकि जब बंध होता है तो चारों प्रकार का होता है। क्या-क्या होता है ? प्रकृतिबंध- कौनसी प्रकृति बंधी क्योंकि अलग-अलग गुणस्थानों में अलग-अलग बंध होगा; उसकी बात करेंगे हम। कौनसी प्रकृति बंधी उसको कहेंगे प्रकृतिबंध। एक समय में कितने परमाणु बंधते हैं उसको कहेंगे प्रदेशबंध, नंबर ऑफ़ परमाणु। उसी समय जो परमाणु बंधे हैं, कितने काल तक जीव को उन एक समय में बंधे हुये परमाणुओं का उदय चलेगा ? एक समय में बंधे हुये समयप्रबद्ध की कैसी निषेक रचना होती है ? एक समय में बंधे हुये एक साथ कभी उदय में नहीं आते हैं। कुछ काल तक उसके निषेकों की यानी जो एक समय में उदय आने योग्य परमाणुओं का लॉट होता है उसकी रचना नहीं होती, उसको आबाधाकाल कहते हैं। इसका विस्तार अभी नहीं होगा, वह विस्तारपूर्वक पढ़ा है। आबाधाकाल के बाद ऊपर निषेक रचना होती है यानी वह हो जाती है, तो अंतिम जो टॉपमोस्ट निषेक है वह कितने काल के बाद उदय में आयेगा उसको कहेंगे इतनी स्थिति बांधी।

परंतु एक समय में जीव अनंत परमाणु बांधता है और आबाधा के ऊपर उसके जो निषेक रचना हुयी है तो मान लेते हैं ७० कोड़ाकोड़ी सागर का मिथ्यात्व का बंध हुआ किसीको, मॅक्झिमम इतना हो सकता है किसीको। उस समय बंधे हुये का सात हजार वर्ष तक आबाधाकाल है। सात हजार वर्ष और एक समयवाला परमाणुओं का एक लॉट है, उसको हम पहला निषेक कहेंगे। फिर दूसरा निषेक एक समय अधिक स्थितिवाला। तीसरा निषेक एक समय और अधिक स्थितिवाला। ऐसे लास्ट निषेक जो है टॉपमोस्ट उसकी स्थिति कितनी है ? *श्रोता: ७० कोड़ाकोड़ी सागर।* ७० कोड़ाकोड़ी सागर। तो परिणाम एक, बंधे परमाणु अनंत और हर परमाणु की स्थिति अलग, हर परमाणु का अनुभाग अलग। ये निमित्त से कार्य होता है इस बात को प्रूव्ह कर रहा है या निमित्त से कार्य नहीं होता है इसको प्रूव्ह कर रहा है ? ख्याल में आती है बात ? एक समय में जो अनंत परमाणु बंधे हैं हर एक परमाणु में अलग-अलग स्थिति पड़ी है, हर एक परमाणु में अलग-अलग अनुभाग पड़ा है, परंतु जो टॉपमोस्ट है उसको हम गिनते हैं। यह कहने की पद्धति है, हम कहेंगे इतनी स्थिति बांधी तो कुछ परमाणुओं में इतनी बंधी है, बाकी परमाणु तो कम स्थितिवाले बंधे हैं।

जो मॅक्झिमम अनुभाग बंधा है उसकी बात करेंगे कि इतना अनुभाग बांधा है, परंतु मिनिमम से मॅक्झिमम तक उसमें अनंत अनुभाग बंधे हैं। जो अधिक से अधिक

बंधा है उसका नाम लेकर हम कहेंगे इतना अनुभाग बांधा है। यह करणानुयोग की कथन पद्धति है। परंतु उसीसे क्या सिद्ध होता है ? परिणाम एक, परमाणु बंधे अनंत और उसमें हर एक की अपनी-अपनी स्थिति भी अलग-अलग बंधी। क्यों ? उसकी अपनी योग्यता से बंधी यानी प्रत्येक कर्म परमाणु में अपनी योग्यता से विशिष्ट स्थिति बंधती है; स्थिति का अर्थ होता है कितने काल तक जीव के साथ रहेगा और कब उदय में आकर निकल जायेगा उसको कहेंगे कर्म की स्थिति। बंध एक समय में हुआ। जितने परमाणु आये उनमें कौनसी प्रकृति बंधी, कितने परमाणु आये, वे कितने काल तक रहेंगे वह सारी निषेक रचना होकर कितनी स्थिति बंधी उसको स्थितिबंध कहेंगे।

उसमें फल देने की शक्ति कितनी बंधी, कितनी इन्टेन्सिटीवाली बंधी उसको अनुभागबंध कहेंगे क्योंकि जहां कषाय बहुत तीव्र होता है वहां अशुभ कर्मों में अनुभाग भी ज्यादा बंधता है; अशुभ में कहा मैंने। देखो स्थिति में दोनों की स्थिति ज्यादा बंधेगी। शुभ और अशुभ कर्म जो बंधते हैं जहां कषाय ज्यादा है वहां स्थिति अधिक लंबी बंधेगी, अभी इसमें तीन आयु को छोड़ दो और जहां मंद कषाय है वहां स्थिति कम बंधेगी। अनुभाग में- जहां कषाय तीव्र है वहां अशुभकर्मों का अनुभाग ज्यादा बंधेगा और वहां शुभ भी कुछ बंधेंगे न तो उनका अनुभाग कम बंधेगा। अब कहेंगे मंद कषाय है, विशुद्धि बढ़ रही है ऊपर के गुणस्थानो में जा रहा है तो वहां शुभकर्मों का अनुभाग बहुत ज्यादा बंध रहा है और अशुभकर्मों का - पापकर्मों का अनुभाग अत्यंत हीन हो रहा है। जब हमने बताया कि यहां स्वाध्याय चल रहा है तो भी ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय बंध रहे हैं तो हमें चिंता होने लगी। परंतु उस समय उनका अनुभाग अत्यंत मंद बंध रहा है। बंध हो तो रहा है परंतु उस समय जीव के ऐसे परिणाम हैं कि पाप प्रकृतियों का अनुभाग अत्यंत मंद बंध रहा है। तो उदय भी उसके अनुसार होगा, उदय की चर्चा जब करेंगे तब उसकी चर्चा भी आ जायेगी।

हमने बंध के कारण देखे और बंध के प्रकार चार देखे- प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध और अनुभागबंध। अब प्रकृतियों के बंध का निरूपण चलेगा इसमें हम हिसाब लगायेंगे १२० का। १२० प्रकृतियों का हिसाब चलेगा यानी सभी जीवों की अपेक्षा पहले बात करेंगे। कितनी प्रकृतियां बंधयोग्य होती हैं यानी कितनी प्रकृतियों का बंध हो सकता है ? कहते हैं १२० का। दो कौनसी नहीं हैं इसमें ? *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति।* सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति का बंध नहीं होता। बंधने योग्य

प्रकृतियां कितनी हैं ? १२० हैं। जब बंधने योग्य कहते हैं तो जिस किसीको जिस किसी गुणस्थान में बंधती हैं उसकी बात करेंगे। उसमें कुछ नियम अवश्य हैं कि कोई विशिष्ट प्रकृतियां कहीं बंधती हैं, कहीं नहीं भी बंधती हैं। जैसे आहारक प्रकृति कहां बंधती है ? आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग ये प्रकृतियों का अभी हमारा अभ्यास नहीं हुआ है फिर भी यहां पहले उन्होंने कुछ चार पांच प्रकृतियों के बारे में नियम बता दिया है। क्या नियम बताते हैं कि जो आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग प्रकृति है वह कौनसे जीव को बंधती है ? तो कहेंगे कि सातवें और आठवें गुणस्थानवाले को ही बंधती है। पहले से छठे तक किसीको नहीं बंधती और सातवें–आठवें गुणस्थानवाले सब जीवों को बंधेगी ऐसी कोई बात नहीं। किसीको बंधेगी किसीको नहीं भी बंधेगी, यह जरूरी नहीं कि उसका बंध हो ही सबको। बिना उसके भी मोक्ष चला जाता है।

जैसे क्या सभी को तीर्थंकर प्रकृति बंधेगी ? नहीं बंधेगी। आप कहते हैं बंधती तो बहुत अच्छा होता। जिसको बंध की इच्छा है उसको नहीं बंधती है। उसका भी नियम है। कहां बंधेगी, किस गुणस्थान में ? चौथे से लेकर आठवें तक बंधती रहती है। उसकी शुरुआत कौन करता है ? चौथा, पांचवां, छठा या सातवां गुणस्थानवाला। उसमें भी क्या कंडिशन्स हैं ? कर्मभूमि के मनुष्य को ही बंधेगी। वह तीर्थंकरों के, केवली के पादमूल में ही बंधेगी। ऐसे नियम आपने भी सुने होंगे न ! तीर्थंकर के पादमूल में बंधती है तो समवशरण में कितनी गति के जीव आते हैं ? *श्रोता: तीन गति के।* तीन या चार ? तीन गति के। वहां तिर्यंच भी हैं, देव भी आते हैं और मनुष्य भी जाते हैं। तो सबको बंधनी चाहिये कि नहीं बंधनी चाहिये ? अरे तीर्थंकर के पादमूल में बंधती है न ! तो वह कंडिशन तो पूरी हुयी, परंतु उनमें वह योग्यता नहीं है। कर्मभूमि के मनुष्यों के ही बंधेगी। तिर्यंचों के तो बंधती नहीं। देवों के बाद में बंधती है, जिस मनुष्य ने शुरुआत की है तीर्थंकर प्रकृति के बंध की और जब मरकर देव हो जायेगा वहां बंधेगी उसके। बंधना प्रारंभ हुआ तो लगातार बंधती रहेगी। जिसने पहले नरकायु का बंध करके बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया और बाद में तीर्थंकर प्रकृति बांधना शुरू की है और जो क्षायिक नहीं है तो नरक जाने के एक अंतर्मुहूर्त पहले वह मिथ्यात्व में जाता है। उस समय एक अंतर्मुहूर्त के लिये उसका बंध नहीं होगा। फिर वहां जाकर अंतर्मुहूर्त में ही सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तो फिर लगातार उसका बंध करेगा हर समय। कब तक ? वहां से आकर मनुष्य में आठवें गुणस्थान तक। ये बंध के कुछ नियम हमें ध्यान में रखने हैं।

आयु के बारे में बंध का क्या नियम है ? जब आयु के बंध का काल है इसकी चर्चा अभी नहीं करेंगे क्योंकि वह तीसरे भाग-तीसरे भाग में जो अपकर्षणकाल में बंधती है; आयु की स्थिति २/३ बीत गयी तब बंधने का अवसर आता है, एक अंतर्मुहूर्त तक लगातार बंधती है। परंतु कहां नहीं बंधती आयु ? कौनसे गुणस्थानवालों के आयु बंधती नहीं है मालूम है आपको ? *श्रोता: तीसरे में।* तीसरे में नहीं बंधती, हां बाकी जो बातें हैं उपशम सम्यक्त्व के काल में नहीं बंधती है। ऊपर के गुणस्थानों में यानी सातवें तक बंधती है ऊपर नहीं बंधती है। जो पर्याप्त जीव हैं न उनके; जो कहीं से मरकर आया है और उसकी पर्याप्ति होती हैं न छह पर्याप्ति, तो दूसरी पर्याप्ति पूरी होने तक जिसको हम निर्वृत्तिअपर्याप्त कहते हैं वैसे तो छहों पर्याप्ति तक लेना, सब पर्याप्ति पूरी होने तक उसको आयु का बंध नहीं होता बाद में हो जाता है। लब्धिअपर्याप्तों में तो होगा ही न, उनकी आयु इतनी छोटी है। अभी दो ही मिनट हैं।

लब्धिअपर्याप्त की बात आयी थी, जिसको हम क्षुद्रभव कहते हैं। कितना छोटा काल है मालूम है ? कहते हैं, एक श्वास में अठ दस बार यानी १८ बार। श्वास किसको कहते हैं जिसको उच्छ्वास भी कहते हैं ? एक मुहूर्त यानी अड़तालीस मिनट में ३७७३ उच्छ्वास यानी श्वास होते हैं। इतने उच्छ्वास के लिये अड़तालीस मिनट तो एक मिनट में कितने होंगे ? ऐसा हिसाब निकालेंगे तो ७८.६० ऐसा आयेगा, एक मिनट में इतने होते हैं। यानी पल्स-नाड़ी जो है न, टक और टक के बीच में जो काल है न, जो हेल्दी युवा मनुष्य है तो उसके लिये एक मिनट लगता है। तो एक श्वास के लिये कितना लगा ? ७८ के लिये एक मिनट लगता है यानी ६० सेकंड लगते हैं तो एक श्वास के लिये पौना सेकंड आयेगा। मालूम है उसमें कितनी आवली बीत जायेंगी ? आवली में असंख्यात समय हैं ! सैकड़ों, हम तो आज तक सैकड़ों कहते भी आये थे और बताते भी आये थे। कल परसों ही जयधवला में पढ़ा चौदहवीं पुस्तक में कि इतने काल में, पौने सेकंड में संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवली बीत जाती हैं। संख्यात हजार यानी हजारों। अभी हजारों में भी लाखों ले लेना वहां पर। चौदहवीं पुस्तक में १३२ पेज पर है और उससे ग्यारहवें गुणस्थान का काल दुगुना है। उपशमश्रेणी पूरी चढ़कर उतरने का काल बहुत अल्प है। उसकी चर्चा हम करेंगे। अभी अपना समय समाप्त होता है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३२. बंधप्रकृतियों के भेद

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है। उसीका हिंदी अनुवाद हम पढ़ रहे हैं। यहां अभी अपनी कर्मकाण्ड संबंधी विस्तार से बातें चलेंगी। सुबह हमने बहुत ही संक्षेप में, इससे पहले के शिबिर में तीस घंटे कर्मकाण्ड विषय पर जो अपने व्याख्यान हुये थे उस संबंधी थोड़ी बातें देखी। सभी नहीं हम जुटा पाये; आबाधाकांडक, आबाधाकाल, स्थितिबंध, प्रदेशबंध, प्रकृतिबंध, परमाणुओं का बटवारा कैसे होता है आदि बातें हमने पहले देखी थी। उससे अभी के विषय का कुछ खास संबंध नहीं है, इसीलिये उन बातों को गौण करके हम बंध का निरूपण नाम का नया विषय है यहां से शुरू करते हैं।

बंध में सामान्य से हम इतना ही जानते हैं कि चार प्रकार के बंध हैं। स्थितिबंध आदि बातें हमने देखी थी। अब यहां चार्ट देखना उसमें प्रकृतियों के कुछ नाम आये हैं उनका स्वरूप देखकर फिर हम यह बंध की व्युच्छित्ति आदि क्या बातें हैं, व्युच्छित्ति किसे कहना है, उसकी चर्चा हम करेंगे। यहां ऊपर बोर्ड पर लिखा है; दूर जो बोर्ड नहीं देख सकते, किसीके मन में भाव आया कि चलो इनके सबके चार्ट बनाओ, झेरॉक्स कराओ और सबको बाटों, तो वह भी आपके हाथ में चार्ट आ गये हैं।

वहां लिखा है बंधयोग्य प्रकृतियां कितनी हैं ? तो १२०। यहां हम चार्ट पर देख सकते हैं बंधयोग्य प्रकृतियां १२० हैं। यहां अभेद करके १४८ में से छब्बीस कम करके १२२ प्रकृतियों को गिनेंगे। उसमें से दो प्रकृतियों का बंध होता ही नहीं, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति। उनके बिना १२० प्रकृतियां ये बंधनेवाली प्रकृतियां हैं, उनको कहते हैं बंधयोग्य। किसी भी जीव को एक साथ १२० प्रकृतियों का बंध नहीं होता है। परंतु अलग-अलग जीवों में कभी न कभी, कहीं न कहीं किसी गुणस्थान में जो प्रकृतियां जहां बंधती हैं उनको कहेंगे बंधयोग्य प्रकृतियां। वह किसको कितना हो सकता है ? कौनसे गुणस्थान में कितनी बंध सकती हैं, उसकी बात हम बाद में करेंगे।

ये जो बंधयोग्य प्रकृतियां १२० हैं उनका हम यहां विभाजन देखेंगे। यहां लिखा है ध्रुवबंधी और यहां लिखा है अध्रुवबंधी। ध्रुवबंधी के नीचे ४७ लिखा है। ये ध्रुवबंधी क्या होता है पहले उसको देखेंगे फिर अध्रुवबंधी की भी बात हम देखेंगे। क्या होता है,

कौनसी-कौनसी प्रकृतियां अध्रुवबंधी होती हैं उसकी बात हम करेंगे। ध्रुवबंधी का पहले अर्थ देखते हैं। ध्रुवबंधी प्रकृतियां उन्हें कहते हैं जिनका अनादि से हर समय बंध चला आ रहा है। कब तक चलेगा ? जब तक उनका बंध नहीं मिटता है, बंध का नाश नहीं होता है तब तक बंध रही हैं। जैसे हमारी सबकी परिचित मिथ्यात्व प्रकृति। परिचित हैं न ! अनादि से हर समय उसका बंध चला आ रहा है। अभी हम ऐसा जीव लेते हैं जो कभी सम्यग्दृष्टि हुआ ही नहीं है तो अनादि से उसका मिथ्यात्व प्रकृति का बंध हर समय, हर समय, हर समय, हर समय चल रहा है। कब तक चलेगा ? जब वह जीव सम्यग्दर्शन प्राप्त करेगा तब उसका वह बंध मिट जायेगा, रुक जायेगा या नष्ट हो जायेगा। उसको हम कहेंगे उसके बंध की व्युच्छित्ति हो जायेगी, तब जाकर उसका मिथ्यात्व का बंध रुक जाता है।

कौनसी प्रकृति का बंध कहां तक है, उसके आगे नहीं है यानी जिस गुणस्थान तक उसका बंध है उसके आगे के गुणस्थानों में बंध नहीं है तो उसको यहां एक नाम लिखा है बंधव्युच्छित्ति। बंध की व्युच्छित्ति हुयी यानी बंध होना मिट गया परंतु उस गुणस्थान में उसका बंध है, आगे के गुणस्थानों में नहीं है। जैसे मिथ्यात्व की बंधव्युच्छित्ति कहां हुयी ? हम कहेंगे कि मिथ्यात्व गुणस्थान में हुयी। मिथ्यात्व गुणस्थान में तो बंध हो रहा है न ! नाश कहां हो रहा है तो उसको कहते हैं वहीं पर, हम उसको कहेंगे उसकी बंधव्युच्छित्ति हुयी। बंधव्युच्छित्ति की चर्चा बाद में करेंगे। पहले ध्रुवबंधी और अध्रुवबंधी की बात करेंगे। व्युच्छित्ति का प्रकरण हम विस्तार से लेनेवाले हैं।

जो ४७ प्रकृतियां ध्रुवबंधी हैं तो इनको घातिकर्मों के साथ नहीं लेना ? वे भी ४७ हैं, हां, नंबर वही है। ऐसा नहीं कहना कि घातिकर्म ये सारे ध्रुवबंधी हैं। ऐसा नहीं है क्योंकि अभी हमें ध्रुवबंधी किसे कहना यह मालूम नहीं है। कहते हैं जो अनादि से बंधती आ रही है जब तक उसकी व्युच्छित्ति नहीं होती तब तक बंधती रहेगी उसको कहेंगे ध्रुवबंधी। ऐसी कौनसी प्रकृतियां हैं जो ध्रुवबंधी हैं उनको पहले देखेंगे। कहते हैं ज्ञानावरण की पांचों ही प्रकृतियां अनादि से बंधती आ रही हैं। कब तक बंधेंगी ? हर जीव को दसवें गुणस्थान तक बंधेंगी, पांचों के पांचों ही का बंध होगा उसको कहेंगे वे ध्रुवबंधी प्रकृतियां हैं। दर्शनावरण की नौ की नौ प्रकृतियां हर समय बंध रही हैं। जीव सोते हो, जागते हो, कभी भी हो, नौ का बंध हो रहा है। किसको हो रहा है ? पहले दो गुणस्थानवालों को; क्योंकि बाद में वहां उनमें से तीन प्रकृतियां बंधना रुक जाती हैं,

आगे छह प्रकृतियों का बंध चलता है। उसे व्युच्छित्तिवाले प्रकरण में हम देखेंगे। तो उनको भी कहेंगे ध्रुवबंधी प्रकृतियां हैं। अंतराय की जो पांच हैं, अनादि से पांचों ही अंतरायों का बंध हो रहा है; यहां बंध की बात चल रही है और वह कहां तक चलेगा ? तो वह भी दसवें गुणस्थान तक चलेगा, तो ये भी ध्रुवबंधी हैं।

मिथ्यात्व प्रकृति भी ध्रुवबंधी है; अनादि से बंधती है, कब तक बंधेगी ? जब तक जीव पहले गुणस्थान में है, ऊपर के किसी भी गुणस्थान में उसका बंध नहीं है। फिर भी उसका नाम क्या है ? ध्रुवबंधी प्रकृति। उसके बाद सोलह कषाय; अनंतानुबंधी के चार, अप्रत्याख्यानावरण के चार, प्रत्याख्यानावरण के चार और संज्वलन के चार इनका बंध भी अनादि से ही चल रहा है। देखो, उदय जब क्रोध का होगा; तो मिथ्यादृष्टि है उसके चार क्रोधों का उदय ॲट अ टाइम चलेगा। कौनसे ? अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन चारों ही क्रोधों का उदय होता है। जब क्रोध का उदय हो रहा है तब मान, माया, लोभ का नहीं है। उदय या तो चार क्रोध का या तो चार मान का या चार माया का या चार लोभ का और बंध कितने का कहा ? *श्रोता: सोलह का।* सोलह का, ध्रुवबंधी कहा न ! तो कौनसा कषाय करना चाहिये ? कुछ भी करो क्रोध, मान, माया, लोभ; माया तो बाहर दिखती नहीं है, लोभ भी नहीं दिखायी देता है, हमें क्रोध ही दिखायी देता है तो हम कहते रहते हैं क्रोध मत करो। कोई भी कषाय होता हो, बंध तो सोलह का ही चल रहा है, तो इसको कहेंगे ध्रुवबंधी।

नोकषाय में से भय और जुगुप्सा का बंध हर समय हो रहा है। जब उदय की बात आयेगी तो उदय के बारे में भी कहेंगे। हर समय उनका उदय नहीं होता है फिर भी बंध हर समय चल रहा है। मोहनीय की मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा ध्रुवबंधी हैं। मोहनीय की जो अन्य प्रकृतियां हैं न; हास्य-रति हैं, अरति-शोक हैं, तीन वेद हैं; कभी बंधती हैं, कभी नहीं बंधती हैं क्योंकि वे प्रतिपक्षवाली-ऑप्शनल हैं। ऑप्शनलवालों की लिस्ट बाद में देखेंगे। अभी ध्रुवबंधी में हमने कौनसी देखी ? पहले तो ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय की मिलकर १९; मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा की १९; १९ और १९, ३८ हुयी। हमारी टोटल कितनी थी ? *श्रोता: ४७।* ४७, कितनी रही अभी बाकी ? *श्रोता: नौ।* हां, तो ये हैं तेजस, कार्माण। पुस्तकें हैं तो उसका हमें उपयोग भी करना चाहिये। पृष्ठ संख्या १३६, १२४ गाथा की टीका, पहला ही पॅरेग्राफ। यहां जो ४७ ध्रुवबंधी प्रकृतियां हैं उनके नाम बताये हैं। मैं पढ़ती हूं आप भी

देखना अपनी पुस्तक में।

ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय की १९। १९ कैसे हैं ? ज्ञानावरण की ५, दर्शनावरण की ९ और अंतराय की ५ ये १९। मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा; फिर आगे, तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श ये चार। ये सब मिलकर कितनी हुयी ? *श्रोता: ४७।* ४७, ये कैसी प्रकृतियां हैं, तो ध्रुवबंधी हैं। हर समय निरंतर इनका बंध अनादि से ही चल रहा है। विग्रहगति में हो, कहीं भी, किसी भी पर्याय में हो, देव में हो, नारकियों में, कहीं भी हो इनका तो बंध हर समय चलेगा। इनको कहते हैं ध्रुवबंधी प्रकृतियां। अब यहां १२० में से ४७ गयी क्योंकि हमारी बंधयोग्य की बात चल रही है। बंधयोग्य १२० हैं उनमें से ४७ ध्रुवबंधी हैं, इनका बंध हर समय चलेगा ही चलेगा। कितनी रही अभी ? *श्रोता: ७३।* ७३, इनको कहेंगे अध्रुवबंधी। अध्रुव यानी इनका निरंतर बंध नहीं है; कभी होता है, कभी नहीं होता है।

अब उसमें भी और दो भेद किये हैं - चार्ट में भी देखो। अप्रतिपक्षवाली और सप्रतिपक्षवाली। अप्रतिपक्ष का अर्थ ऐसा है कि बंधेगी तो बंधेगी, नहीं तो नहीं बंधेगी। किसीको बंधेगी, किसीको नहीं बंधेगी और वह भी कभी बंधेगी, कभी नहीं बंधेगी इसको कहेंगे अप्रतिपक्ष। परंतु सप्रतिपक्ष प्रकृतियां ऐसी हैं बंध तो जरूर होगा परंतु किसी एक का होगा। जैसे गति कर्म बंधेगा ही बंधेगा; गति नामकर्म का बंध हर समय चलेगा; कभी देवगति बंधेगी, नरकगति बंधेगी, तिर्यंचगति बंधेगी या मनुष्यगति बंधेगी। तो उसको क्या कहेंगे हम ? ऑप्शनल हैं न वे, उस ग्रुप में से कोई एक बंधेगी। जैसे त्रस नामकर्म बंधेगा या स्थावर बंधेगा उसको कहेंगे प्रतिपक्षवाली। अप्रतिपक्ष कौनसी देखी ? बंधेगी तो बंधेगी, नहीं तो नहीं बंधेगी। उसमें ग्यारह प्रकृतियां अप्रतिपक्षवाली हैं। अब ये ग्यारह कौनसी होती हैं ? हम पृष्ठ १३७ पर, १२५ गाथा की टीका पढ़ते हैं।

४७ ध्रुव प्रकृतियों के बिना शेष रही ७३ प्रकृतियों में से तीर्थंकर, आहारकद्विक; आहारकद्विक का अर्थ होता है आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग; **परघातादि चार,** ये परघातादि चार कौनसी हैं ? *श्रोता: परघात, उपघात।* उपघात इसमें नहीं लेना। परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योत ये परघातादि चार हैं। उपघात को हमने ध्रुवबंधी में लिया था। अगुरुलघु, उपघात हमने ध्रुवबंधी में लिया था। परघात किसी-किसीके बंधेगी, सबको नहीं बंधती है, कभी-कभी बंधेगी। कब-कब बंधेगी,

किसके साथ बंधेगी जब हम नामकर्म के बंधस्थान की बात विस्तार से करेंगे तब उसकी चर्चा होगी। ये जो हम अभी यहां पढ़ रहे हैं इसका अर्थ आपको जब हम आगे पढ़ेंगे तब अधिक विस्तार से ख्याल में आयेगा। उसकी कारणमीमांसा समझेगी। अभी हमने केवल कौनसी प्रकृतियां ध्रुवबंधी हैं, कौनसी नहीं हैं उसकी चर्चा कर ली।

तीर्थंकर, आहारकद्विक, परघातादि चार और **चार आयु** क्योंकि हमें मालूम है आयु हर समय नहीं बंधती है, कभी-कभी बंधती है और ऐसा नहीं है कि दो समय के लिये बंधती है। मनुष्यायु बंधी और फिर चार समय के लिये देवायु बंधी- ऐसा तो नहीं होता। एक भव में किसी एक आयु का बंध होगा। दोबारा उसके बंध का चान्स आ सकता है परंतु उसी आयु का बंध होगा। जैसे किसीको मनुष्यायु का बंध हुआ। आयु के बंध के आठ अवसर होते हैं। किसीको एक ही बार आयु बंधी, किसीको आठों ही बार बंधेगी। परंतु एक बार मनुष्यायु का बंध किया है तो दूसरी बार भी मनुष्यायु ही बंधेगी और यह जरूरी नहीं है कि फिर दूसरी बार बंधेगी। एक ही बार में वह परभव की आयु बांध लेगा। इसका अर्थ क्या है ? आयु में ऑप्शन नहीं है। जो कोई आयु बंधती है उसी आयु का बंध होगा। अलग-अलग जीवों की अपेक्षा अलग-अलग परंतु एक जीव किसी एक ही आयु का बंध करेगा यह बात यहां बताने जा रहे हैं। इसलिये उसको क्या कहते हैं ? अप्रतिपक्ष कहते हैं। यह बात ख्याल में आयी ?

देखो, आयु और गति में बहुत घोटाला होता है। गति नामकर्म का भेद है। गति हर समय बंधती है और हम सुबह से रात तक जैसे-जैसे परिणाम करते हैं वैसे-वैसे उस-उस गति का बंध होता है और उसके साथ मेरी भाषा में नामकर्म के जो बंध होते हैं उसका पॅकेज होता है। वह पॅकेज क्या होता है जब हम नामकर्म के बंध के स्थान देखेंगे तब उसकी बात ख्याल में आयेगी। देवगति बांधता है तो उसके साथ विशिष्ट प्रकृतियों का ही बंध होगा, २८ प्रकृतियों का पॅकेज है उसका बंध होगा। मनुष्यगति बांधनेवालों को वहां २९ प्रकृतियां बंधेंगी या तीर्थंकर के साथ ३० प्रकृतियां बंधेंगी, उसका पॅकेज अलग होगा। जो एकेन्द्रिय संबंधी बंध कर रहा है उसकी प्रकृतियां निश्चित हैं, फिर उसमें पर्याप्त-अपर्याप्त के भेद से जो कुछ बातें होती हैं उसका पॅकेज अलग होगा। नामकर्म में जो अलग-अलग बातें बनती हैं उसकी चर्चा अपना आगामी विषय है। परंतु यहां क्या है ? गति नामकर्म हर समय बंधता है। जो मिथ्यादृष्टि जीव है उसको चारों गति में से कोई भी बंधेगी। ये भी गुणस्थानों में है। मिथ्यादृष्टि की बात

इसलिये की है कि जो मनुष्य सम्यग्दृष्टि है वह देवगति ही बांधेगा। उसकी बात नहीं है। गति नामकर्म को प्रतिपक्ष में क्यों लिया ? क्योंकि उन चारों में से कोई एक बंधेगी। गुणस्थानों में जब हम देखेंगे आगे, कहां कौनसी प्रकृतियां बंधती हैं, तब वहां चार में से एक बंधेगी। कहां कितने में से एक बंधेगी उसकी बात हम तब करेंगे।

अब अप्रतिपक्ष यानी उसके कोई प्रतिपक्ष नहीं। या तो यह बंधेगी या तो वह बंधेगी ऐसा कुछ भी नहीं है। बंधेगी तो बंधेगी, नहीं तो नहीं बंधेगी इसको कहेंगे अप्रतिपक्षवाली। वे ग्यारह कौनसी हैं जो हमने पढ़ी ? तीर्थंकर है, आहारकद्विक है, परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योत है और उसके बाद आयु चार। ग्यारह प्रकृतियां अप्रतिपक्षवाली हैं और वे कैसी हैं ? अध्रुवबंधी हैं। अध्रुव क्यों ? ध्रुव उसको कहते हैं जो अनादि से आज तक बंधती आ रही है। इतनी बात ख्याल में आयी ? अब हम अध्रुवबंधी में से दूसरी ये जो सप्रतिपक्षवाली हैं, प्रतिपक्ष कहो या सप्रतिपक्ष कहो, ये सप्रतिपक्षवाली कौनसी हैं ? उनमें तो बासठ हैं। प्रतिपक्ष सहित, प्रतिपक्ष यानी उसमें जो एक ग्रुप है गतिवाला एक ग्रुप है उसमें से कोई एक गति बंधेगी, विहायोगति का बंध हो रहा है तो कोई एक ही बंधेगी उसमें से, गोत्रकर्म का बंध हो रहा है तो उच्चगोत्र बंधेगा या नीचगोत्र बंधेगा। वेदनीय में साता बंधेगी या असाता। मोहनीय में भी हास्य, रति का बंध होगा या शोक, अरति का बंध होगा। भय, जुगुप्सा तो हमने ध्रुवबंधी में ली थी। अन्य जो सात प्रकृतियां हैं; तीन वेद हैं, तीनों वेदों का ॲट अ टाइम बंध तो किसी जीव को नहीं होगा। परिणामवश किसी एक वेद का बंध होगा ॲट अ टाइम, तो उनको कहेंगे ये प्रतिपक्षवाली प्रकृतियां हैं। तीन वेद में से एक वेद बंधेगा। हास्य, रतिवाला युगल बंधेगा या अरति, शोकवाला। हास्य के साथ अरति नहीं बंधेगी कभी। हास्य की जोड़ी रति वह निश्चित है; या तो उसका बंध होगा या इसका बंध होगा।

यानी जब हम कहेंगे मोहनीय कर्म का बंध होता है तो उसमें मिथ्यात्व तो हर समय बंध रहा है। सोलह कषाय हर समय बंध रहे हैं। भय, जुगुप्सा हर समय – ये १९ तो हर समय बंध रहे हैं और जो दो युगल हैं, उसमें से एक युगल यानी दो प्रकृतियां बंधेगी और एक वेद बंधेगा। कितने हुये ? *श्रोता: १९।* वे १९ ध्रुवबंधी और ये ऑप्शनल ३, २२ प्रकृतियों का बंध होगा मिथ्यात्व गुणस्थान में। मोहनीय की प्रकृतियां कितनी हैं ? २८ और मिथ्यात्व गुणस्थान में कितनी बंधेंगी ? *श्रोता: २२ बंधेंगी।* २२ बंधेंगी। एक-एक बात थोड़ी-थोड़ी सीखकर फिर हम आगे बढ़ेंगे। ख्याल में आयी इतनी बात ? अब

कौनसे गुणस्थान में कितनी बंधती हैं वह आगे का विषय है। देखो, यहां बंधयोग्य प्रकृतियां हैं और आगे चलकर हम बंधस्थान देखेंगे। उसका अर्थ क्या है ? जब बंधयोग्य कहते हैं तो अलग-अलग यानी इसको कहते हैं नाना जीव - अनेक जीव। तो अनेक जीवों में कौनसी बंध सकती हैं उनको बंधयोग्य कहेंगे, बंध प्रकृतियां कहेंगे और बंधस्थान किसको कहेंगे ? एक जीव एक काल में जितनी प्रकृतियां बांध सकता है।

अब हम मोहनीय की बात करेंगे। तो अभी हमने देखा मिथ्यादृष्टि जीव प्रत्येक समय में बाइस प्रकृतियों का बंध करेगा तो उसको कहेंगे उसका बंधस्थान। यह चर्चा हम भविष्य में फिर दुबारा करेंगे। अभी हम क्या देख रहे हैं कि सभी जीव मिलकर यानी कोई न कोई जीव- कोई तीर्थंकर प्रकृति बांधता है, कोई नहीं बांधता है; कोई आहारकद्विक बांधता है कोई नहीं बांधता है; सम्यग्दृष्टि जो जीव हैं मिथ्यात्व को नहीं बांधते हैं; मिथ्यादृष्टि हैं वे अन्य आहारकद्विक वगैरह को नहीं बांध रहे हैं। तो सभी जीव कोई न कोई गुणस्थानवाले जो बांध रहे हैं, नाना जीव जो प्रकृतियां बांध सकते हैं उनको कहेंगे बंधयोग्य प्रकृतियां। ऐसी कितनी हैं ? १२० हैं। १२० का अभी हमने देखा न यहां हिसाब। उनमें से ध्रुवबंधी किसको कहेंगे ? उसको मैं निरंतरबंधी इसलिये नहीं कह रही हूं क्योंकि निरंतरबंधी का प्रकरण एक अलग है। यहां ध्रुवबंधी आदि बात हम देख रहे हैं जो अनादि से बंधती हैं और कब तक बंधेगी ? जब तक उनकी बंध की व्युच्छित्ति नहीं होती उस गुणस्थान तक वे हमेशा ही बंधती हैं। उनको कहेंगे ध्रुवबंधी प्रकृतियां। हमने उनके नाम देख लिये हैं, वे ४७ हैं।

अभी हमने अध्रुवबंधी, रिमेनिंग जो ७३ प्रकृतियां अध्रुवबंधी हैं उनमें दो ग्रुप बनाये। एक अप्रतिपक्षवाली; बंधेगी तो बंधेगी, नहीं बंधेगी तो नहीं बंधेगी; वे ११ हैं। उनमें अन्य ६२ हैं ये कैसी हैं ? सप्रतिपक्षवाली। अब सप्रतिपक्षवाली में देखते हैं। जो आसान हैं उनको मैं पहले बताती हूं। वेदनीय की २ हैं, गोत्र की भी २ हैं और मोहनीय की ७ हैं क्योंकि दो युगल यानी चार प्रकृतियां हो गयी और तीन वेद हो गये। तो मोहनीय की ७, बाकी ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय को तो हमने ध्रुवबंधी में ले लिया था। अब कौनसी रह गयी हैं ? नामकर्म, बहुत तकलीफ देनेवाला है। ये टोटल ६२ प्रकृतियां हैं सप्रतिपक्षवाली, उनमें हमने २ वेदनीय की देखी, २ गोत्र की देखी और ७ मोहनीय की देखी। ११ को हटा दिया तो ५१ प्रकृतियां फिफ्टी वन प्रकृतियां जो नामकर्म की हैं वे कैसी हैं ? सप्रतिपक्षवाली हैं। *श्रोता: मोहनीय की और कौनसी बाकी*

हैं ? हां, मोहनीय की ध्रुवबंधी बाकी हैं। कौनसी ? मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय, जुगुप्सा ये १९ प्रकृतियां ध्रुवबंधी हैं और मोहनीय की ७ प्रकृतियां अध्रुवबंधी हैं और वे प्रतिपक्षवाली हैं। या तो यह बंधेगी या तो वह बंधेगी उसको कहेंगे प्रतिपक्षवाली।

नामकर्म की ५१ प्रकृतियां हैं प्रतिपक्षवाली। हम गिनते हैं- चार गतियों में से एक गति बंधेगी। पांच जातियों में से ॲट अ टाइम एक ही जाति बंधेगी। गति, जाति, शरीर; शरीर में देखो, औदारिकशरीर या औदारिकअंगोपांग बंधेगा कभी उसके साथ, जब द्वीन्द्रियादि का बंध करता है तब अंगोपांग भी लेना; या वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग लेना। आहारकद्विक को हमने ऊपर अप्रतिपक्षवाली में लिया था; किसीके बंधेंगी तो बंधेंगी, नहीं तो नहीं, वे प्रतिपक्षवाली नहीं हैं। जो देवगति बांध रहा है, नरकगति बांध रहा है वह वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग को बांधेगा। जो तिर्यंचगति और मनुष्यगति बांध रहा है उसके साथ औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग को बांधेगा यानी प्रतिपक्ष किसमें आया ? वैक्रियिक में और औदारिक में। उसके साथ बंधन, संघात भी समझना। अभी हम १२० का हिसाब लगा रहे हैं। गति, जाति, शरीर; शरीर में देखा न हमने तेजस, कार्माणशरीर हमने ध्रुवबंधी में लिया था, आहारक वगैरह हमने अप्रतिपक्ष में लिया था, प्रतिपक्षवाले में वैक्रियिक और औदारिक को लेना। गति, जाति, शरीर, बंधन, संघात हो गया। संस्थान- ॲट अ टाइम ६ में से किसी एक संस्थान नामकर्म का बंध होगा। संहनन- वह भी ६ में से किसी एक संहनन का बंध होगा। जो त्रस के साथ औदारिकशरीर बांध रहा है उसके साथ संहनन बंधेगा; जो एकेन्द्रिय संबंधी, नरकगति या देवगति संबंधी बंध कर रहा है उसको संहनन नहीं बंधेगा। जहां बंधेगा तो ६ में से १ बंधेगा, इसतरह इसको कहेंगे प्रतिपक्षवाली।

हम उसके नाम देखते हैं। देखो, यहां १३७ पृष्ठ पर दूसरा पॅरेग्राफ। अवशेष रही बासठ प्रकृतियां सब सप्रतिपक्ष हैं। सप्रतिपक्ष का अर्थ ख्याल में आता है न ? या तो यह बंधेगी या दूसरी बंधेगी, एक ग्रुप में से कोई एक बंधेगी उसको सप्रतिपक्ष कहेंगे। इनकी प्रतिपक्षी प्रकृतियां पायी जाती हैं। इसलिये परस्पर प्रतिपक्षियों में से, जो प्रतिपक्षी प्रकृतियां हैं उनमें से एक काल में एक का ही बंध होता है। जैसे सातावेदनीय, असातावेदनीय परस्पर प्रतिपक्षी हैं; एक ही काल में दोनों का बंध नहीं हो रहा है; बंध किसी एक का होता है। मोहनीय में रति-अरति प्रतिपक्षी हैं; हास्य-शोक प्रतिपक्षी हैं; तीन वेद परस्पर प्रतिपक्षी हैं, तीन वेद में से किसी एक का बंध होगा। इनमें से एक-

एक का ही बंध होता है। नामकर्म में चार गति परस्पर प्रतिपक्षी हैं; पांच जाति परस्पर प्रतिपक्षी हैं; त्रस-स्थावर प्रतिपक्षी हैं; या तो स्थिर का बंध होगा या अस्थिर का होगा; हमने जो-जो भी देखी हैं, विहायोगति या तो प्रशस्त बंधेगी या अप्रशस्त बंधेगी। जैसे गति चार में से एक बंधेगी, ऐसे गत्यानुपूर्वी भी चार में से एक बंधेगी। इसतरह से ॲट अ टाइम किसी एक का बंध होता है उसकी बात है यहां पर, बंध होने की बात है।

नामकर्म के डीटेल १३६ पृष्ठ पर है देखो, हमने सारी ७३ अध्रुवबंधी प्रकृतियां गिनायी थी उनमें से हम केवल प्रतिपक्षवाली देखेंगे। **वेदनीय** की **दो** देखी, **मोहनीय की सात** देखी, **चार आयु** को प्रतिपक्ष में नहीं लेना है, उसको हमने किसमें लिया था ? अप्रतिपक्ष में लिया था। यहां ये ७३ अध्रुवबंधी प्रकृतियां एक साथ गिनी हैं इसीमें वे ग्यारह भी गर्भित हैं। **चार गति** प्रतिपक्षवाली, **पांच जाति** प्रतिपक्षवाली, **औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग** या **वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग** इनको भी प्रतिपक्ष में ले लेना। **आहारकशरीर** और **आहारकअंगोपांग** को हमने अप्रतिपक्षवाली में लिया था- किसीके बंधेगी तो बंधेगी, नहीं तो नहीं बंधेगी। **छह संस्थान**- छह में से एक का बंध होगा। **छह संहनन**- उसमें से एक का ॲट अ टाइम बंध होगा। **चार आनुपूर्वी** जो गत्यानुपूर्वी हैं, जिस गति का बंध हो रहा है उसी गत्यानुपूर्वी का उस समय बंध होगा। **परघात, आतप, उद्योत, उछ्वास** ये जो हैं उनको हमने अप्रतिपक्ष में लिया था।

पृष्ठ १३६ पर मैं पढ़ रही हूं। बंध होगा तो होगा, नहीं तो नहीं होगा। **विहायोगति** एक का बंध होगा। त्रस का बंध हो रहा है उस समय स्थावर का नहीं होगा, स्थावर तो एकेन्द्रिय संबंधी है। जब त्रस संबंधी बंध हो रहा है द्वीन्द्रिय आदि संबंधी, तब स्थावर का बंध नहीं हो रहा है। ॲट अ टाइम एक का बंध होगा। बादर बंधेगा या सूक्ष्म तो ये जो जोड़ी-जोड़ीवाले हैं न **त्रस-स्थावर, बादर-सूक्ष्म, पर्याप्त-अपर्याप्त, प्रत्येक-साधारण, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, सुस्वर-दुस्वर, आदेय-अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति** इसमें ये जोड़ी-जोड़ीवाले हैं, उन सबको यहां सप्रतिपक्षवालों में ले लेना। क्योंकि जिस परिणाम से वह शुभ नामकर्म बंध रहा है उसी समय अशुभ नामकर्म नहीं बंधेगा यह बात है यहां। इसतरह से हमने ये नामकर्म की ५१ प्रकृतियां सप्रतिपक्षवाली देखी, मोहनीय की सात देखी, वेदनीय की दो देखी और गोत्र की दो। टोटल ६२ प्रकृतियां सप्रतिपक्षवाली हैं।

देखो, हमें इन शब्दों के अर्थ समझना है। प्रकृतियों के नाम एक बार सुनने से कुछ याद में नहीं रहनेवाले परंतु जब हम पुस्तक पढ़ेंगे, ग्रंथ पढ़ेंगे तब हमें इन शब्दों का अर्थ ख्याल में आ जायेगा, वहां क्या कहना चाहते हैं वह बात ख्याल में आ जायेगी। क्योंकि शिबिर में पूरा ग्रंथ नहीं होगा, परंतु ग्रंथ कैसे पढ़ना ? कहां कहां कौनसे महत्व के बिंदु हैं उस पर हम चर्चा जरूर करेंगे। वैसे हर एक को ग्रंथ का आद्योपांत स्वाध्याय जरूर करना चाहिये। ये हमने सप्रतिपक्षवाली और अप्रतिपक्षवाली बात देखी। अब थोड़ी हम व्युच्छित्ति के बारे में बात करेंगे। यह व्युच्छित्ति क्या होती है और किसको व्युच्छित्ति कहना और कहां कहना उसकी बात करेंगे।

व्युच्छित्ति का अर्थ होता है कि जिस गुणस्थान में उन प्रकृतियों का बंध होता है वहां हम उनको बंध प्रकृतियां कहेंगे। उसके ऊपर के किसी भी गुणस्थान में उनका बंध नहीं होता तो उसको कहेंगे उन प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति वहां हो गयी। देखो, कुछ काल के लिये शुभ प्रकृतियां बंधती हैं, उस काल में हम अशुभ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति नहीं कहेंगे; वे कुछ काल के लिये रुकी हैं क्योंकि बाद में उनका बंध हो सकता है। जैसे कोई मिथ्यादृष्टि है और हास्य-रति का बंध कर रहा है तो क्या हम कहेंगे वहां अरति-शोक की बंधव्युच्छित्ति हुयी ? नहीं कहेंगे क्योंकि अरति और शोक का बंध एक अंतर्मुहूर्त के लिये छठे गुणस्थान तक होता है। बंधेगी तो एक अंतर्मुहूर्त के लिये। हमने उनको प्रतिपक्ष में लिया- यह बंधेगी या वह बंधेगी। ऊपर के किसी भी गुणस्थान में अगर उसका बंध नहीं हो रहा है तब हम कहेंगे जहां बंधती थी वहीं पर उसकी व्युच्छित्ति होती है। आप कहेंगे जहां बंधती है वहीं उसकी व्युच्छित्ति क्यों कह रहे हैं ? आगे कहो न उसका नाश हुआ। इसके लिये कथन के दो प्रकार होते हैं। एक का नाम है उत्पादानुच्छेद और एक कथन का नाम है अनुत्पादानुच्छेद। अपनी भाषा में द्रव्यार्थिकनय का कथन है और पर्यायार्थिकनय का कथन है। द्रव्यार्थिक यानी जहां है वहीं पर नाश कहना यह द्रव्यार्थिकनय का कथन है और जहां नहीं है इट इज़ नो मोर तब उसका नाश कहना यह है पर्यायार्थिकनय का कथन।

जैसे मिथ्यात्व का बंध कहां है ? तो पहले गुणस्थान में और उसकी व्युच्छित्ति कहां देखी हमने ? यहां हमने पहले ही गुणस्थान में लिखी है उसके बंध की व्युच्छित्ति, तो उसको क्या कहेंगे ? यह द्रव्यार्थिकनय का कथन है। उसको अगर दूसरे में कहते तो पर्यायार्थिकनय का कथन हो जाता। उसका नाम है, निकालो पहली पुस्तक पृष्ठ

१०६, देखो, नीचे से दूसरी लाइन, वहां लिखा है- **व्युच्छित्ति के कथन में दो नय हैं।** किसमें ? कथन में। **एक उत्पादानुच्छेद** और **एक** है **अनुत्पादानुच्छेद**। उच्चार करने में, सुनने में ख्याल में नहीं आता कैसे शब्द लिखा जाता है। उत्पादानुच्छेद- यहां उसका उत्पाद है, जहां पर है वहीं पर छेद यानी नाश कहना वह है उत्पादानुच्छेद। दूसर कौनसा है ? अनुत्पादानुच्छेद। नीचे पढ़ते हैं **उत्पादानुच्छेद नाम द्रव्यार्थिकनय का है। इस नय के अभिप्राय से तो जहां अस्तित्व है वहीं पर विनाश कहते हैं, क्योंकि जहां अस्तित्व ही नहीं वहां बुद्धि में कैसे आये ?** और **जब बुद्धि में नहीं आयेगा, तब वचन से अगोचर होने पर अभाव है इसतरह का व्यवहार भी कैसे किया जा सकता है ?** इसलिये उसको क्या कहा ? जहां है वहीं पर उसका नाश कहेंगे। आगे के पॅरेग्राफ में देखते हैं- **अनुत्पादानुच्छेद नाम पर्यायार्थिकनय का है। इस नय के अभिप्राय से जहां सत्त्व न हो वहीं पर अभाव कहते हैं।**

यह मिथ्यात्व अभी है ही नहीं वहां पर, उसका बंध ही नहीं है तो वहां उसका अभाव कहेंगे। जैसे हम लौकिक में भी समझते हैं न ! जैसे हम सब देवलाली में यहां इकट्ठे हुये हैं। तो ये हमारी कोई बहन सातारा से आयी, कोई फलटण से आये हैं, कोई पूना से आये हैं, कोई बेंगलोर से आये हैं, बहुत अलग-अलग शहरों से आये हैं; चंद्रपुर से आये भाई हमारे, औरंगाबाद से बहुत सारे लोग आये हैं। हम कहां मिले थे ? देवलाली में। अब यह शिबिर समाप्त होगा तब हम बिछुड़ जायेंगे। तो किसीने आपसे गांव में पूछा कि कहां बिछुड़े ? तो क्या कहेंगे भाई ? देवलाली में। अरे वहां तो आप साथ में थे न, बिछुड़े कहां थे ? यह जो कहने का प्रकार है इसको कहेंगे उत्पादानुच्छेद या द्रव्यार्थिकनय। जहां हम साथ में थे वहीं पर बिछुड़े कहने की पद्धति है, मालूम है ? तो कब बिछुड़े ? कहां बिछुड़े ? हम जब देवलाली छोड़कर दूर गये ॲक्चुअलि बिछुड़ना तो तब हुआ, यहां तो हम साथ में थे। ऐसे ही यह कथन के दो प्रकार आते हैं। वैसे ही यहां बंधव्युच्छित्ति के कथन में हम वह पहले द्रव्यार्थिकनय को ही यूज़ करेंगे। द्रव्यार्थिकनय की अपेक्षा यहां कथन चलेगा कि जहां पर बंध है उसके आगे के किसी भी गुणस्थान में नहीं है तब हम उसको कहेंगे यहां उसके बंध की व्युच्छित्ति हुयी क्योंकि यह पूरा प्रकरण बंध की व्युच्छित्ति का चलेगा यहां पर।

देखो, हमें पूरा गुणस्थानों का अभ्यास किसीको है किसीको नहीं है, तो ये बंध कौनसे गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों का होता है, कहां रुक जाता है, कहां व्युच्छित्ति

होती है ये बातें ख्याल में आती हैं तो पहले गुणस्थान से चौदहवें गुणस्थान तक का पूरा मोक्षमार्ग और फिर गुणस्थानों का स्वरूप भी हमारे बिलकुल ख्याल में आता है। अभी तो हम बंध की बात कर रहे हैं, उदय की भी बात ऐसी ही है। हम सोचते हैं, मान भी लेते हैं कि चलो हमने सम्यग्दर्शन भी प्राप्त कर लिया परंतु हमने अनादि से इतनी कुछ नालायकी की है, इतना बंध किया है तो उसको भुगतना तो पड़ेगा कि नहीं पड़ेगा ? तो कहते हैं मोक्षमार्ग में बहुत अच्छी तजवीज़ है। कितनी ही प्रकृतियां बंधी हैं और सम्यक्त्व प्राप्त किया है तो उनका उदय ही नहीं होगा। बिना उदय आये उसका क्या होगा वह बाद में देखेंगे हम। जैसे एकेन्द्रिय संबंधी प्रकृतियां बांधी हैं कुछ, तिर्यंचगति बांधी है, नरकगति बांधी है, वह गति के परमाणु तो कोड़ाकोड़ी सागरों के हैं या उससे भी तो ज्यादा समय की स्थिति बंधी है। सत्ता में तो सभी कुछ पड़े हैं तो पर्याय में उसको भोगना पड़ेगा कि नहीं पड़ेगा ? क्यों, भोगना जरूरी है ?

श्रेणिक राजा अभी नरक में हैं, मनुष्यगति बांध रहे हैं। वहां से मां के पेट में आयेंगे, सम्यग्दृष्टि हैं तो देवगति बांधेगे; कब तक ? आठवें गुणस्थान तक। वे देवगति को कब भोगेंगे ? भोगेंगे ही नहीं, हां, तो क्या फायदा ? बांधना फायदा है क्या ? यानी हम फायदा किसको समझते हैं ? जो भोगेंगे तो फायदा हुआ। जितना पैसा कमाते हो उतना भोगते हो क्या ? *श्रोता: नहीं।* तो क्या फायदा ? यूज़ होना चाहिये। मेरी सहेली मुझे कहती थी हम लोग फावड़े से पैसा कमाते हैं, डॉक्टर है न ! फावड़ा समझते हैं ? मराठी में खोऱ्याने पैसे कमवते। फावड़ा, फावड़ा। मैंने कहा पैसा तो फावड़े से कमाती हो, लेकिन खाना तो चम्मच से खाती हो कि फावड़े से खाती हो ? हमें जो मनुष्यभव मिला है उसका फायदा क्या है ? कमाओ और भोगो और मर जाओ और फिर निगोद आदि में चले जाओ। मालूम ही नहीं न हम क्या कर रहे हैं ? ये कर्मों की बातें पढ़ते हैं तो ख्याल आता है कि जीव कौन-कौनसी पर्यायों में पड़े हैं और कैसे परिणामों से कैसे बंध होता है। हम तो लौकिक फायदा ही देखते हैं परंतु उसके पीछे हमारे जो कोई एक-एक समय के परिणाम हैं, उस एक-एक समय में कर्म का बंध होता है, बंधा है तो उसका फल तो भुगतना पड़ेगा।

आप कहेंगे अभी तो आप बोल रहे थे कि बांधा है उसे भोगने की जरूरत नहीं। हां, सम्यग्दर्शन प्राप्त करोगे तो भोगने की जरूरत नहीं। उसमें से छुटकारा पाना चाहते हैं तो पहले में पहले सम्यग्दर्शन प्राप्त करेंगे तो कहां कौनसे उदय भी रुक जाते

हैं, उदय की भी व्युच्छित्ति होती है, वह भी हम देखेंगे आगे। ये जब सीखते हैं तो पूरा ही मोक्षमार्ग हमारी आंखों के सामने स्पष्टरूप से भासित होता है। यह ज्ञान की जो निर्मलता है, जो स्पष्टता है वही विशुद्धि है। ज्ञान में ही सारा कार्य होनेवाला है। यह तो स्वामीजी-गुरुदेवश्री ने भी बताया है। अभी हमारा स्वाध्याय नाटक समयसार का चल रहा है। संवर को भी ज्ञानमय कहा, सब ज्ञान पर घटित किया। हमने तो केवल कर्म का संवर इतना ही सीखा है न ! वहां तो संवर को भी ज्ञानमय घटित किया है। देखो, ज्ञानियों के तो कितनी-कितनी अपेक्षाओं से कैसे-कैसे कथन आते हैं।

अभी यहां कर्मों की अपेक्षा से सब बात चलेगी। कहां कौनसे बंध रुकते हैं तो उसको कहेंगे बंध की व्युच्छित्ति यहां होती है। हम देखेंगे उसको, पहले में पहले बंध के कुछ नियम हमने सुबह लास्ट में पढ़े। हमने कुछ देखे थे कि जो १२० प्रकृतियां हैं उनमें कौनसी प्रकृतियां कहां बंध सकती हैं, कहां नहीं बंध सकती। पहले गुणस्थान में तो १२० की १२० का बंध किसीको भी नहीं होता है क्योंकि तीर्थंकर प्रकृति तो सम्यग्दृष्टि के ही बंधती है; वह भी चौथे, पांचवें, छठे, सातवें गुणस्थान में बंध का प्रारंभ होता है और आठवें तक उसका बंध चलता रहता है। आहारकद्विक का बंध कहां देखा था हमने ? *श्रोता: सातवें, आठवें गुणस्थान में।* सातवें में, आठवें में होता है। उसके नीचे के गुणस्थानों में नहीं होता है। आयु का बंध- वह तो कभी-कभी होता है, वह भी कहां कौनसे गुणस्थान में होता है ? तीसरे में नहीं होता है और आठवें के ऊपर भी नहीं होता। *श्रोता: उपशमश्रेणी में ?* उपशमश्रेणी में भी नहीं होता; सातवें गुणस्थान तक ही बंध है, उसके ऊपर आयु का बंध ही नहीं है। क्षपकश्रेणी में तो सवाल ही नहीं है क्योंकि जिसने आयु का बंध किया है वह क्षपकश्रेणी चढ़ नहीं सकता और वहां जाने के बाद आयु का बंध करने का कोई सवाल ही नहीं है। सातवें गुणस्थान के ऊपर तो आयु बंधती ही नहीं। अभी और भी जो कुछ है कहीं से मरकर पर्याप्त में आया है और पर्याप्ति चल रही है उस अवस्था में भी आयु का बंध नहीं होता। लब्धिअपर्याप्तों में तो उसी अवस्था में आयु बंधेगी। बंध के नियम इसलिये बताये हैं कि कौनसे गुणस्थान में, किस पोझिशन में, कैसे बंध हो सकते हैं यह बात हमें ख्याल में आती है।

पहले गुणस्थान में ना तीर्थंकर प्रकृति बंधेगी, ना आहारकद्विक बंधेगी। तो वहां बंध कितनी प्रकृतियों का कहेंगे हम ? *श्रोता: एक सौ सत्रह।* १२० में से एक सौ सत्रह; ये अलग-अलग जीवों की अपेक्षा बता रहे हैं। एक जीव कितना बांध सकता है उसकी

अपनी बात अलग चलेगी, उसको बंधस्थान कहेंगे। यहां किसकी बात चल रही है ? बंध प्रकृतियां, अबंध प्रकृतियां, उस गुणस्थान में कितनी व्युच्छित्ति होती है। पुस्तक में बहुत सारे टेबल बनाये गये हैं। मूल पुस्तक में जो थे वे भी लिये गये हैं और जो मूल पुस्तक में नहीं थे ऐसे बहुत सारे चार्ट्स बनाकर इसमें जोड़ दिये हैं। जो तिरछे-तिरछे अक्षरों में जहां कुछ लिखा है वह सब मैंने अपनी ओर से विशेषार्थ के रूप में डाला है ताकि यह समझने में सुलभ रहे। ये चार्ट्स कैसे पढ़ना, यह अगर हम जान लेंगे तो आगे का भी समझने में आसान होगा। क्योंकि एक-एक चार्ट या एक-एक पेज तो हम यहां नहीं पढ़ रहे हैं। पुस्तक कैसे पढ़ना यह बात हमारे ख्याल में आ जायेगी।

यहां हम बंधव्युच्छित्ति देख रहे हैं। उसके पहले हमने निश्चित किया कि पहले गुणस्थान में किसी न किसी जीव को कितनी प्रकृतियां बंध सकती हैं। ११७ का बंध हो सकता है नाना जीवों की अपेक्षा। वहां तीन प्रकृतियां बंधेंगी ही नहीं उनको अबंध प्रकृतियां कहेंगे- आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृति। पहले में पहले तीर्थंकर प्रकृति का नियम देख लेते हैं। वह किसके बंधती है ? सम्यग्दृष्टि के बंधती है। कौनसे सम्यग्दृष्टि के ? क्षायिक के बंधेगी कि वेदक सम्यग्दृष्टि के बंधेगी या औपशमिक सम्यग्दृष्टि के बंधेगी ? *श्रोताः क्षायिक सम्यग्दृष्टि के।* क्षायिक सम्यग्दृष्टि के बंधती है ऐसा कहेंगे तो जो दूसरे और तीसरे नरक में भी सम्यग्दृष्टि जीव हैं और वे तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे हैं और वे मिथ्यात्व के साथ वहां गये हैं। ख्याल में आया न ? वह तो उन्होंने वेदक सम्यक्त्व के काल में बांधी है। तीनों ही प्रकार के सम्यग्दृष्टि जीव तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर सकते हैं परंतु उसके बंध का प्रारंभ मनुष्य ही करता है।

हमने सुबह देखा था कर्मभूमि का मनुष्य चौथे, पांचवें, छठे या सातवें गुणस्थान में तीर्थंकर या केवली के पादमूल में तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रारंभ करता है। यह सहजरूप से होता है। हमें अभी इस तीर्थंकर प्रकृति को बांधना है इसलिये षोडशकारण भावना भाओ यह बात नहीं है। यह भावना यानी इच्छा करना ऐसा अर्थ नहीं है। भावना यानी उस रूप से होना। वह बंध स्वाभाविक रूप से होता है। वैसे वह तो हर समय बंध रही है। यदि हम भावना को इच्छा कहेंगे तो हर समय तो वह इच्छा नहीं है। जो तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहा है वह खाते पीते भी बंध करेगा कि नहीं उसका ? क्योंकि वह तो जब से बंधना शुरू हो गयी है वह जीव तीन-तीन भवों तक लगातार बांधेगा। कोई यहां बांध रहा है, देव में गया तो वहां भी बांध रहा है हर समय।

वहां से आयेगा मनुष्य में, बांध रहा है कब तक ? आठवें गुणस्थान तक। उसको निरंतरबंधी कहा, हर समय बांध रहा है।

अब कोई तीर्थंकर प्रकृति बांधनेवाला अभी नरक में है; पहले, दूसरे, तीसरे नरक में पड़े हैं। तो वहां के योग्य उनके लड़ाई झगड़ा चलेगा कि नहीं आपस में ? कि शांति से बैठे रहेंगे ? उस पर्याय में गये हैं तो उस पर्याय के योग्य भाव वहां चलेंगे उनके। उनके ऊपर उपसर्ग भी चलेगा, हां, अंतिम छह महीने में उनका वह उपसर्ग खत्म हो जायेगा वह बात अलग है। तो ये बातें ऐसी हैं कि हर समय उसका बंध हो रहा है। हम तो केवल वह शुभभाव करते हैं और उसको बंध होता है यह तो बहुत स्थूल कथन है, सामान्य कथन है। यहां पृष्ठ संख्या १०५ नंबर पर ये बात लिखी हैं। तीर्थंकर प्रकृति के बंध का जरा विशेष नियम हम देखकर आगे बढ़ेंगे। देखो, दूसरे पॅरेग्राफ में, पहले हम पहला पॅरेग्राफ पढ़ लेते हैं। **प्रथमोपशम सम्यक्त्व में या अवशेष द्वितीयोपशम, क्षायोपशमिक, क्षायिक सम्यक्त्व में** यानी सभी लिये न सम्यक्त्व, **असंयत से लेकर** यानी चौथे गुणस्थान से लेकर **अप्रमत्त गुणस्थान तक** सातवें गुणस्थान तक **मनुष्य ही तीर्थंकर प्रकृति के बंध को प्रारंभ करता है।** वह प्रारंभ की बात है, बिगिनिंग कौन करता है ? वह जीव मरकर देव में जायेगा तो वहां भी बंध करेगा। जीव मरकर कोई नरक में जाता है तो वहां भी बंध करेगा। तिर्यंच की आयु जिसने बांधी है या जिसने मनुष्य की भी आयु बांधी है यानी जिस मनुष्य ने तिर्यंचायु या मनुष्यायु का बंध किया है उसको तीर्थंकर प्रकृति नहीं बंधेगी। **वह भी प्रत्यक्ष केवली या श्रुतकेवली के चरणों के निकट ही करता है।** यह उसका नियम बताया।

अब उसी बात को नीचे समझाया है और वह अधिक से अधिक कितने काल तक बांध सकता है इसका भी वहां नियम बताया है जो विशेषार्थ में आपको स्पष्ट भासित होगा। नीचे देखते हैं- यानी तीर्थंकर प्रकृति का बंध अधिक से अधिक काल तक करनेवाला जीव कितने काल तक कर सकता है उसकी बात यहां बतायी है। **ऊपर जो उत्कृष्ट काल बताया है** यह विशेषार्थ मैं पढ़ रही हूं, **वह इस प्रकार घटित होता है। एक करोड़ पूर्व की आयुवाले मनुष्य ने**, कर्मभूमि के मनुष्य की उत्कृष्ट आयु एक करोड़ पूर्व; एक पूर्व का हिसाब तो मालूम है सबको ? एक पूर्व कितना होता है ? सत्तर लाख छप्पन हजार करोड़ वर्ष का एक पूर्व। ऐसे **एक करोड़ पूर्व की आयुवाले मनुष्य ने आठ वर्ष और अंतर्मुहूर्त में सम्यक्त्व प्राप्त कर या जो**

सम्यक्त्व के साथ जन्मा है उसने वहां तीर्थंकर प्रकृति का बंध प्रारंभ किया आठ साल के बाद। **संयम धारण करके मरकर सर्वार्थसिद्धि**, वह सबसे ऊपर का स्वर्ग, वहां **तैंतीस सागर का देव हुआ। वहां से चयकर फिर करोड़ पूर्व की आयुवाला मनुष्य हो यथायोग्य काल में संयम धारणकर आयु के अंत में पृथक्त्व वर्ष शेष रहने पर क्षपकश्रेणी पर आरोहण किया।** अभी अंतर्मुहूर्त नहीं कहना चाहिये, यहां तीर्थंकर का जीव है इसलिये इसको कहते हैं कि पृथक्त्व वर्ष तक तो तेरहवें गुणस्थान में रहेगा ही रहेगा। तो तेरहवें गुणस्थान के पहले श्रेणी का अंतर्मुहूर्त लेना है यहां। क्षपकश्रेणी पर आरोहण कर **अपूर्वकरण के छठवें भाग तक लगातार यानी निरंतर बंध होता है।** यानी हर समय इसका बंध चलता है यह बात यहां बताना चाहते हैं।

अब हम यहां बंधव्युच्छित्ति के बारे में देखेंगे। कौनसे गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति होती है यह चार्ट में भी सामने लिखा ही है। इसको पहले हम देखते हैं फिर मैं आपको पुस्तक का भी पेज बताऊंगी। देखो, इस चार्ट में पहली पंक्ति में गुणस्थानों की संख्या लिखी है एक, दो, तीन, चार... तेरह तक लिखा है; क्यों ? अरे ! गुणस्थान चौदह होते हैं न ! चौदहवें गुणस्थान में किसी भी प्रकृति का बंध नहीं होता है, वहां व्युच्छित्ति कहने का कोई प्रयोजन नहीं। अब कहते हैं कि पहले गुणस्थान में कितनी ही प्रकृतियां बंधवाली प्रकृति थी। फिर उनमें से इन सोलह प्रकृतियों का बंध दूसरे, तीसरे आदि ऊपर कहीं भी नहीं होता। मात्र पहले गुणस्थान में ही इनका बंध होता है। अन्य का भी बंध होता है पर ये सोलह प्रकृतियां ऐसी हैं कि मात्र पहले ही गुणस्थान में बंधती हैं ऊपर कहीं नहीं बंधती। उसको कहेंगे इन सोलह प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति पहले गुणस्थान में हुयी। उनकी संख्या दूसरी पंक्ति में लिखी है।

पहले गुणस्थान में १६ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति है; दूसरे में २५ की है; तीसरे में बंधव्युच्छित्ति नहीं है, बंध है वहां, बंध हो रहा है परंतु कोई भी प्रकृति बंध होने से वहां घटी नहीं है इसलिये झिरो कहा। चौथे में १० प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति होती है यानी ये १० प्रकृतियां चौथे गुणस्थान तक ही बंध सकती हैं ऊपर के किसीको भी नहीं बंधेगी। पांचवें में ४ की, छठे में ६ की, सातवें में १ की, आठवें में ३६ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति है। तो ये जो छत्तीस, यहां बोर्ड पर भी देख सकते हैं आप। आपके पास भी चार्ट है, उसमें देखना। देखो, वह बंधव्युच्छित्ति है। यहां गुणस्थानों की क्रम से एक से लेकर तेरह संख्या बतायी हैं, क्रम बताये हैं और यहां व्युच्छित्ति बता रहे हैं। पहले

गुणस्थान में १६ की व्युच्छित्ति है। दूसरे में २५ की है। इन प्रकृतियों के नाम देखेंगे हम बाद में। तीसरे में है ० यानी यहां बंध की व्युच्छित्ति नहीं है, बंध तो है। चौथे में १० प्रकृतियों के बंध की व्युच्छित्ति हुयी। पांचवें में ४, छठे में ६, सातवें में १, आठवें में ३६ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति है। ये जो ३६ हैं; आठवें गुणस्थान के अगर हम सात भाग करते हैं, तो पहले भाग में २, छठे भाग में ३० और सातवें भाग में ४ प्रकृतियों के बंध की व्युच्छित्ति होती है। नौवें में ५ और दसवें में १६ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति होती है। ग्यारहवें, बारहवें में बंध की व्युच्छित्ति नहीं है, यहां एक सातावेदनीय का ही बंध हो रहा है वह कंटिन्युअस है। ग्यारहवें में बंधती है, बारहवें में भी बंधती है, तेरहवें में भी बंधती है परंतु तेरहवें के आगे चौदहवें में नहीं बंधती। सातावेदनीय तेरहवें तक ही बंधती है तो हम कहेंगे तेरहवें में १ प्रकृति की बंधव्युच्छित्ति होती है।

सुशीलाबहन याद है ? पहले गुणस्थान से आप कहेंगी क्रम से ? *श्रोता: सोलह, पच्चीस, शून्य, दस, चार, छह, एक, छत्तीस, पांच, सोलह, शून्य, शून्य, एक।* सोलह, पच्चीस, शून्य, दस, चार, छह, एक, छत्तीस, पांच, सोलह, झिरो, झिरो, एक। हमने बंधव्युच्छित्ति की संख्या देखी, उनके नाम भी देखेंगे। इनको सब याद है। हमारे यहां रोज के स्वाध्याय में चल रहा हैं कर्मकाण्ड। अभी एक सौ बीस लेक्चर्स हो गये हैं। थोड़े अभी लास्ट तक आये न पुस्तक के। घर में हम सब इसतरह से कोशिश करते हैं कि हर एक को याद हो जाता है क्योंकि वहां कोई जल्दी नहीं है न पढ़ाने की। यहां तो शिबिर में लिमिटेड घंटे हमारे हैं, तीस घंटों में तो आपको कुछ माल परोसना है। यहां तो आपको पुस्तक में कहां क्या विषय है उसके कुछ बिंदुओं पर विशेष गौर करना है।

अब आप पृष्ठ संख्या निकालना ११३, वहां यही टेबल है देखो। परंतु उसमें हमारे चार्ट में दो ही कॉलम बनाये थे; दो पंक्तियां- एक गुणस्थान की पंक्ति और एक व्युच्छित्तिवाली पंक्ति। ११३ नंबर पृष्ठ पर जो चार्ट है - यंत्र कहते हैं उसको, कोष्टक बनाया है उसको हम चार्ट कहेंगे; तो उसमें क्या-क्या लिखा है ? पहली पंक्ति में गुणस्थान बताये हैं, चौदह तक लिखे हैं क्योंकि वहां कोई बंध नहीं होता है यह बताना था। दूसरी पंक्ति में व्युच्छित्ति बतायी है। तीसरी पंक्ति में बंध कहा है। इसका अर्थ उस गुणस्थान में कितनी प्रकृतियां बंधती हैं इसका हिसाब वहां बताया है। फिर हम देखते हैं पहले गुणस्थान में, वहां ११७ बंध प्रकृतियां कही, बंध प्रकृतियां ११७ हैं और अबंध प्रकृतियां ३ हैं। उसकी अभी हमने बात की थी। तीन यहां कौनसी नहीं बंधती हैं ?

श्रोता: आहारकद्विक और तीर्थंकर। हां, आहारकद्विक और तीर्थंकर प्रकृति का बंध पहले गुणस्थान में नहीं होता है इसलिये उसको अबंध में रखा। अभी-अभी हमने देखा, व्युच्छित्ति कितनी लिखी है ऊपर ? *श्रोता: १६।* हां, १६।

अभी हमको ऐसा हिसाब करना है ये अबंध तो तीन थी और ये सोलह प्रकृतियों का बंध आगे कहीं नहीं होता। दूसरे गुणस्थान के लिये ये सोलह भी अबंध में चली जायेंगी। यह टेबल कैसे पढ़ना उसको हम देखेंगे। दूसरे गुणस्थान में १९ अबंध में चली गयी। बंध और अबंध दोनों की टोटल १२० आनी चाहिये। १९ अबंध रही तो बंध कितने का होगा ? *श्रोता: १०१।* १०१ है न ! अभी तो अबंध गिनना आसान है। आगे चलकर फिर बंध को गिनना आसान हो जायेगा जब अबंध की संख्या बढ़ जायेगी। देखो, तीसरे गुणस्थान में; अभी दूसरे गुणस्थान में १९ अबंध में हैं। उसी कॉलम में ऊपर देखना २५ की बंधव्युच्छित्ति हुयी वहां पर। २५ और १९ कितने होते हैं ? *श्रोता: ४४।* १९ और २५, ४४ होते हैं। परंतु ये सोलह और २५ हैं, हमने जो गिनी हैं उनका यहां बंध नहीं होता है। ख्याल में आती है बात ? किसको गिना था वहां पर ? *श्रोता: आयु को गिना था।* दो आयु को तो हमने वहां गिना था। नरकायु तो पहले गुणस्थानवाले को ही बंधती है, तिर्यंचायु दूसरे तक ही बंधती है परंतु तीसरेवाले को कोई भी आयु बंधती नहीं है। तो यहां देवायु और मनुष्यायु भी नहीं बंधेगी किसी जीव को। इसलिये उन प्रकृतियों को भी अबंध में गिना। इस गुणस्थान के लिये व्युच्छित्ति नहीं कही उनकी, क्योंकि उनका बंध तो चौथेवाले को होगा। जो चौथा गुणस्थानवाला देव है वह मनुष्यायु का बंध करेगा और मनुष्य देवायु को बांधेगा। ख्याल में आती है बात ?

अन्य जो पहले व्युच्छित्ति हुयी है उनमें तो हमने अन्य भी दो आयु को देखा। गति वगैरह को उसमें गिनेंगे। जब उनकी व्युच्छित्ति की प्रकृतियों के हम नाम सीखेंगे तो यह बात आपको और ख्याल में आ जायेगी। आयु का बंध तीसरे गुणस्थान में होता ही नहीं है तो तीसरे गुणस्थान के लिये हम उन दो प्रकृतियों को अबंध में गिनेंगे। चौथेवाले को जब उसका बंध होगा तब उसको फिर बंधयोग्य में गिनेंगे इसलिये तीसरे गुणस्थान में उनको व्युच्छित्ति में नहीं कहकर अबंध में गिना। तीसरे गुणस्थान में ४६ को अबंध में देखा। तीसरे गुणस्थान में कोई भी व्युच्छित्ति नहीं होती। अब चौथे गुणस्थान के लिये अबंध के लिये फिर ४६ में से ३ कम कर दिये थे। कौनसे तीन कम कर दिये ? अबंध में से ३ कम कर दिये- २ आयु जो अबंध में रखी थी वे कम हो ही

गयी और चौथा गुणस्थान है- पहले, दूसरे, तीसरे में जो अबंध में रखी थी तीर्थंकर प्रकृति उसका यहां बंध होगा इसलिये उसको यहां बंध में ले लिया। अबंधवाली घट गयी यहां यानी क्या लिखा है यह, इसके आंकड़ों का क्या महत्व है उसको देख रहे हैं हम। ये कुछ याद नहीं होनेवाली बात, मैं समझती हूं परंतु करणानुयोग में तो समझना मुख्य बात है। याद रह जाये तो बहुत अच्छी बात है।

याद नहीं रहता परंतु समझना है कि ऐसा क्यों ? यह तो कॉमनसेन्स के अलावा करणानुयोग में और कुछ नहीं है, इतना ही है। अरे ! इसको समझ जायेंगे तो इतना मजा आता है। नहीं तो हम टाइमपास नहीं होता है इसलिये क्या करते हैं ? वह क्रॉसवर्ड और क्या-क्या खेलते हैं ! सुडोकु ? वह क्या होता है ? हमको पता ही नहीं है क्योंकि हमारे घर में न्यूजपेपर आता है न तो उसको खोलते भी नहीं, ऐसे ही रह जाता है, टाइम ही नहीं मिलता है। टाइमपास नहीं होता इसलिये लोग क्या-क्या नहीं पढ़ते पेपर का, सब कुछ पढ़ लेते हैं। टाइमपास करना है और ज्ञान की निर्मलता बढ़ाना है तो करणानुयोग से बढ़कर और कुछ भी नहीं है। तो ये ४३ अबंध देखी थी, चौथे गुणस्थान में दस प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति होती है। अब ४३ और १० कितने हुये ? *श्रोता: फिफ्टी थ्री।* ५३, पांचवें के लिये अबंध में चली जायेगी। वहां पर ४ की व्युच्छित्ति और हो जायेगी तो ५३ और ४, ५७ प्रकृतियां छठे में अबंध हैं। छठे गुणस्थान में ६ की व्युच्छित्ति और हो जायेगी। ५७ और ६ कितने होते हैं ? *श्रोता: ६३।* ६३ और यहां सातवें में कितनी लिखी ? ६१, क्यों ? *श्रोता: आहारकद्विक।* आहारकद्विक का बंध होता है। इसलिये अबंध में से उसको बंध में डाल देंगे। देखो, जब हम इनके नाम सीखेंगे तो आपको भी यह याद आ जायेगा। *श्रोता: लॉजिक है ?* हां, लॉजिक है यह बिलकुल।

हां, तो यहां सातवें में एक के बंध की व्युच्छित्ति होती है। वह देवायु वहां तक ही बंधती है, आगे नहीं बंधती है तो एक ही व्युच्छित्ति हुयी। तो ६१ और १, ६२ हो गयी। *श्रोता: एक प्रकृति कौनसी ?* देवायु, वह बतायेंगे हम। हमने अभी प्रकृतियों के नाम नहीं देखे, केवल संख्या देख रहे हैं। अब ये ६२ हैं और आठवें गुणस्थान में ३६ की बंधव्युच्छित्ति होती है तो ६२ और ३६ ? ९८ हो गयी, ये नौवें में अबंध में चली गयी। देखो, आप सोच सकते हैं जितना ऊपर के गुणस्थानों में जाते हैं तो कितनी कम प्रकृतियों का बंध होता है और ये ऐसी प्रकृतियां बंधना रुक जाती हैं जो मोस्ट अप्रशस्त हैं या जो बिलकुल ज्यादा में ज्यादा घात करनेवाली हैं, जो अपना नुकसान करनेवाली

प्रकृतियां हैं। यानी यह सब अपने फेवर में बात है। मोक्षमार्ग प्रकट होता है तो बिलकुल उदय में और बंधव्युच्छित्ति में तो ऐसी बातें हम देखते हैं कि जिन प्रकृतियों से सब लोग डरते हैं तो ऐसी प्रकृतियां पहले, सबसे पहले भाग जाती हैं। बंध होना रुकता है और बंधी हुयी का उदय नहीं होता है। देखो, मिथ्यात्व का बंध पहले गुणस्थान में ही है और उसका उदय भी पहले गुणस्थान में होता है। तो किसी जीव ने सम्यक्त्व प्राप्त किया तो उसकी सत्ता में मिथ्यात्व बंधा हुआ पड़ा है न ! पड़ा है। उस जीव को डरने की बात नहीं है, हां, सम्यग्दृष्टि बना रहा तो उस मिथ्यात्व का कुछ नहीं होगा। वह उसका क्षय करके चला जायेगा मोक्ष में। हम तो डरते हैं न, ऐसी प्रकृति होगी, कर्म हमको नचा रहा है। वह क्या करेगा, हमने ऐसा बांधा है वह आड़े आ रहा है। तो कहते हैं देखो मोक्षमार्ग पर चलने से कर्म में कैसी उथलपुथल होती है। अभी हम आगे बढ़ेंगे।

नौवें गुणस्थान में वह ९८ अबंध प्रकृतियां थी और उसमें ५ की व्युच्छित्ति हुयी। दोनों मिलाकर दसवें गुणस्थान में १०३ अबंध में चली गयी। दसवें गुणस्थान में १७ का ही बंध है। दसवें में १६ का बंध रुक जायेगा। ज्ञानावरण ५, दर्शनावरण ४, अंतराय ५, यशस्कीर्ति और उच्चगोत्र का बंध था वह रुक जायेगा। ग्यारहवें गुणस्थान में ११९ अबंध होगी, मात्र एक सातावेदनीय बंधेगी, वहां व्युच्छित्ति नहीं होगी। बारहवें में सातावेदनीय का ही बंध है, व्युच्छित्ति नहीं है। तेरहवें में सातावेदनीय का बंध हो रहा है, वहां एक की व्युच्छित्ति हो जायेगी। तेरहवें में बंध रुक जायेगा क्योंकि चौदहवां तो अयोगी है। उनको तो बंध ही नहीं है क्योंकि बंध के कारण हमने देखे थे- मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, कषाय और योग। अभी तो अकेला योग था; ग्यारहवें, बारहवें, तेरहवें में योग था इसलिये सातावेदनीय का बंध था; वह भी एक समयवाला, वह भी रुक गया है, तो चौदहवेंवाले को तो बंध ही नहीं है। तो व्युच्छित्ति का भी सवाल नहीं है। इसतरह से हमने तो केवल इनकी संख्या देखी है, इनके नाम देखना अभी बाकी है। यह व्युच्छित्ति कौनसे प्रकृतियों की होती है, कौनसी नहीं, १६ कौनसी होती हैं, २५ कौनसी होती हैं वह हम देखेंगे तो आपको ये सब बातें ख्याल में आ जायेंगी।

बोलो चौबीसों भगवान की जय।

३३. बंधव्युच्छित्ति - गुणस्थानों में

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती ने गोम्मटसार ग्रन्थ की रचना की है। उसमें से जो कर्मकाण्ड है उसकी भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका नाम से की हुयी है। उसीका हिंदी अनुवाद आपके हाथ में है और उसके आधार से हम अभी बंधव्युच्छित्ति का प्रकरण देख रहे हैं। हमने कर्मों के बारे में, उनके बंध के बारे में प्राथमिक जानकारी ली। अभी विषय थोड़ा विस्तार से चलेगा।

बंध की व्युच्छित्ति का अर्थ होता है कुछ विशिष्ट प्रकृतियां जिस गुणस्थान तक बंधती हैं, उसके ऊपर के गुणस्थानों में नहीं बंधती हैं तब हम कहेंगे उनका बंध वहीं पर रुक गया है। उस गुणस्थान तक बंध है, ऊपर के गुणस्थानों में बंध नहीं है तब हम उसको बंधव्युच्छित्ति कहेंगे। थोड़े से काल के लिये बंध रुक जाने को बंधव्युच्छित्ति नहीं कहते हैं। जैसे सुबह एक प्रश्न आया था कि प्रायोग्यलब्धि में; प्रायोग्यलब्धि मालूम है ? सम्यग्दर्शन होता है, उसके पूर्व पांच लब्धि होती हैं, उसमें चौथी प्रायोग्यलब्धि है; पहले क्षयोपशमलब्धि, फिर विशुद्धिलब्धि, देशनालब्धि और प्रायोग्यलब्धि। जीव प्रायोग्यलब्धि में आता है तो अनेक प्रकृतियों का बंध रुक जाता है अलग-अलग स्थानों पर, ऐसे चौंतीस स्थान हैं तो उनमें सब मिलकर छियालीस प्रकृतियों का बंध रुक जाता है। कितने समय तक रुक जाता है ? कहते हैं प्रायोग्यलब्धि, फिर करणलब्धि और बाद में उपशम सम्यक्त्व होने तक उनका बंध रुक जाता है। उसके बाद क्या होगा ?

सम्यक्त्व होने के पश्चात् कुछ प्रकृतियों का बंध वापस शुरू होगा और कुछ प्रकृतियों का बंध रुक जायेगा, उन सबका प्रायोग्यलब्धि में हम बंधापसरण हुआ कहेंगे। उसको हम बंधव्युच्छित्ति नहीं कह सकते। क्यों नहीं कह सकते ? जैसे चार आयु का बंध वहां से लेकर बंद हो गया है, रुक गया है। परंतु आगे जब सम्यग्दर्शन हो जाता है तब फिर मनुष्यायु, देवायु का बंध शुरू हो जाता है। जो कुछ अप्रशस्त प्रकृतियों का बंध कुछ काल के लिये रुक गया है; वहां जीव के विशुद्ध परिणाम हैं, अत्यंत निर्मल परिणाम हैं तो कुछ काल के लिये अशुभ प्रकृतियों का बंध रुक गया है। परंतु उन प्रकृतियों का बंध बाद में भी होता है। जैसे उतने काल तक अरति, शोक का बंध नहीं हो रहा था, परंतु बाद में छठे गुणस्थान तक उनका बंध होगा। प्रायोग्यलब्धि में वहां हम बंधव्युच्छित्ति नहीं कहेंगे। प्रायोग्यलब्धि में अगर उसको बंधव्युच्छित्ति

कहेंगे तो अभव्यों के भी बंधव्युच्छित्ति का प्रसंग आयेगा क्योंकि अभव्यों को भी प्रायोग्यलब्धि तक चार लब्धि होती हैं। वे आगे करणलब्धि नहीं मांडते तो सम्यग्दर्शन नहीं होता परंतु प्रायोग्यलब्धि तक के परिणाम और अंतर्मुहूर्त तक उतने बंध का रुकना यह कार्य उनके भी होता है। नहीं तो हमें मानना पड़ेगा न, जब पुण्य प्रकृति बांध रहा है तो पाप की व्युच्छित्ति हुयी। एक अंतर्मुहूर्त के लिये उतना बंध रुक गया है।

हमने देखा था प्रत्येक गुणस्थान में क्रम से कितनी-कितनी प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति होती है। कौन कहना चाहता है ? सिंगतकरजी गुणस्थान वाईज़ बताना। *श्रोता: पहले गुणस्थान में १६।* पहले में १६। *श्रोता: दूसरे में २५।* दूसरे में २५। तीसरे में कितने उर्वशीबहन ? *श्रोता: ०।* ०। चौथे में आरतीबहन ? *श्रोता: १०।* हां १०। पांचवें में ? *श्रोता: ४।* हां, छठे में ? *श्रोता: ६।* सातवें में ? *श्रोता: १।* आठवें में ? *श्रोता: ३६।* हां, ३६। नौवें में ? *श्रोता: ५।* दसवें में ? *श्रोता: १६।* १६। ग्यारहवें में ? *श्रोता: ०।* बारहवें में ? *श्रोता: ०। तेरहवें में ? श्रोता: १।* चौदहवें में ? *श्रोता: नहीं।* बंध ही नहीं है तो बंध रुकने का सवाल नहीं है। हमने संख्यायें देखी, उनके नाम भी देखेंगे। उसके पहले यहां एक प्रश्न है- *श्वासोच्छ्वास तो निरंतर होता है फिर उच्छ्वास नाम प्रकृति की अप्रतिपक्ष में गणना कैसे हुयी ?* हमारी सोच में क्या कहां गलत हो रहा है वह प्रश्न में ख्याल में आता है। उच्छ्वास हर समय चल रहा है, श्वासोच्छ्वास चल रहा है। किसका चल रहा है ? *श्रोता: जीवों का, सभी जीवों का।* नहीं, वह बात नहीं पूछ रहे हम। पर्याप्त जीवों का चल रहा है कि अपर्याप्तों का ? *श्रोता: पर्याप्त।* पर्याप्त जीवों का। क्योंकि अपर्याप्तों की आयु इतनी छोटी है कि श्वास के अठारहवें भागप्रमाण एक आयु है। उसके श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है क्योंकि एक भी पर्याप्ति पूरी हुये बिना मरण हो जाता है तो उसके श्वासोच्छ्वास प्राण होने का सवाल ही नहीं है। यह तो उदय की बात चल रही है।

श्वासोच्छ्वास नामकर्म का उदय किसके होगा ? जो पर्याप्त जीव हैं उनके होगा। अभी यहां बात किसकी चल रही है ? बंध की। जीव पर्याप्त हो या अपर्याप्त हो, उसके परिणाम के स्वरूप वह आगामी भव के लिये पर्याप्त नामकर्म बांध रहा है कि अपर्याप्त ? जो जीव अपर्याप्त नामकर्म का बंध कर रहा है उस समय उसके साथ उसको उच्छ्वास नामकर्म का बंध नहीं होता। जिस समय वह पर्याप्त नामकर्म बांध रहा है उसके साथ उसको उच्छ्वास का बंध भी होगा, हमने देखा न ! नामकर्म का पॅकेज जब हम आगे पढ़ेंगे तब देखेंगे। यहां प्रश्न था- उच्छ्वास का कार्यरूप श्वासोच्छ्वास होना

इसको हम श्वासोच्छ्वास प्राण कहेंगे और उसका कारण क्या है ? श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति जिसके हुयी है वह उसका कारण है; उसमें कौनसा कर्म निमित्त है ? उच्छ्वास नामकर्म का उदय निमित्त है। इसलिये हमें यह प्रश्न आता है कि श्वासोच्छ्वास चल रहा है वहां उच्छ्वास नामकर्म का उदय तो है न ! परंतु, यहां नये बंध की बात चल रही है। उच्छ्वास नामकर्म का बंध होता है कि नहीं होता ? तो किसीको होता है किसीको नहीं होता। जो जीव पर्याप्त नामकर्म बांध रहा है उसके साथ उसको उच्छ्वास नामकर्म का बंध होगा। जो जीव अपर्याप्त नामकर्म का बंध करके लब्धिअपर्याप्त होनेवाला है उसे उस समय उच्छ्वास नामकर्म का बंध नहीं हो रहा है। ख्याल में आयी बात ? अब आगे बढ़ेंगे।

अपना विषय तो है बंधव्युच्छित्ति होनेवाली ऐसी कौनसी प्रकृतियां हैं ? तो हमने सोलह, पच्चीस, झिरो इतना ही देखा है। हम उन प्रकृतियों के नाम भी देखेंगे तो यह विषय हमें और स्पष्टरूप से ख्याल में आ जायेगा। पृष्ठ १०८, आठ गाथाओं के द्वारा ये सारे नाम बतायें हैं उनको हम क्रम से देखेंगे। ये जो १६ प्रकृतियां हैं जिनका मिथ्यात्व में बंध होता है, आगे के किसी भी गुणस्थान में इनका बंध नहीं होता उनको कहेंगे इन सोलह प्रकृतियों के बंध की व्युच्छित्ति पहले गुणस्थान में होती है। हैं सोलह, फिर भी हम देखेंगे उनको याद करने का तरीका बहुत आसान है। यहां हम पढ़ेंगे, पहले मैं पूरे सोलह नाम बताऊंगी। मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद और असंप्राप्तासृपाटिका, इसको कहते हैं असंप्राप्त असृपाटिका यह संहनन का नाम है। छह प्रकार के संहनन में से यह छठे नंबर का संहनन है और छह संस्थानों में से यह हुंडकसंस्थान छह नंबर का संस्थान है। यानी अत्यंत अप्रशस्त ऐसी इन प्रकृतियों का बंध पहले गुणस्थान में ही होता है, आगे के गुणस्थानों में नहीं होता।

चार नाम हमने कौनसे देखे कोई कहेंगे ? *श्रोता: मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन।* **मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद** और **असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन** ये चार नाम हमने देखे। अब आगे के देखते हैं। **एकेन्द्रिय, स्थावर** और **आतप,** एकेन्द्रिय संबंधी हैं न ! जो एकेन्द्रिय का बंध करता है, हो सकता है आतप का भी बंध करे उसके साथ और जो एकेन्द्रिय का बंध करता है उसको स्थावर नामकर्म का बंध होता ही है। एकेन्द्रिय, स्थावर और आतप ये तीन और याद रखना। उसके आगे फिर तीन का एक ग्रुप **सूक्ष्म, अपर्याप्त** और **साधारण**। एकेन्द्रिय देखे, उसके बाद **द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय** और **चतुरिन्द्रिय**; पुस्तक है तो देखना

आप। अब रह गये **नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी** और **नरकायु**। फिर से देखते हैं देखो, मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद और असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन। उसके बाद एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप; सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण; द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी और नरकायु।

मैं बोलूंगी, आपको रिपीट करना है। मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद और असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन। बोलिये- *श्रोता: मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद और असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन।* एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप। *श्रोता: एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप।* सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण। *श्रोता: सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण।* द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय। *श्रोता: द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय।* नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु। *श्रोता: नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु।* कितने हुये ? *श्रोता: सोलह।* हां, १६ प्रकृतियों के बंध की व्युच्छित्ति पहले में होती है। ये प्रकृतियां पहले गुणस्थान में ही बंधती हैं, आगे के किसी भी गुणस्थान में नहीं बंधती यानी मिथ्यात्व के कारण ही इनका बंध होता है। मिथ्यात्व गुणस्थान के अंतिम समय में व्युच्छित्ति होती है यानी मिथ्यात्व में उसका बंध है आगे कहीं भी नहीं है। ना दूसरे में है, ना तीसरे में है, ना चौथे में। इसतरह कहेंगे मिथ्यात्व गुणस्थान में बंध की व्युच्छित्ति १६ प्रकृतियों की है।

अब दूसरे गुणस्थान की बात हम देखेंगे नीचे के पॅरेग्राफ में ९६ की टीका। **दूसरे सासादन गुणस्थान के अंतिम समय में**; जब अंतिम समय में कहते हैं तो हमें पता है कि दूसरा गुणस्थानवर्ती नियम से पहले गुणस्थान के सन्मुख है और वह पहले गुणस्थान में जाता है। अंतिम समय का अर्थ ऐसा नहीं समझना कि जो पहले में जाता है उसका वह अंतिम समय है। दूसरे में उसका बंध है, तीसरे में नहीं है तो उसको कहेंगे इसकी बंधव्युच्छित्ति दूसरे में होती है क्योंकि दूसरे में से जो पहले में जानेवाला है तो दूसरे गुणस्थान में जो प्रकृतियां बंधती है वह पहले गुणस्थान में बंधेगी कि नहीं बंधेगी ? *श्रोता: बंधेगी।* बंधेगी ही, क्योंकि जो दूसरे गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति है उन प्रकृतियों का बंध पहले और दूसरे दोनों गुणस्थान में है ऊपर कहीं नहीं है। सासादन के अंतिम समय में बंधव्युच्छित्ति का अर्थ सासादन में बंध है और पहले में नहीं है - ऐसा नहीं है। किसी भी गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति कहेंगे तो उसके नीचे के गुणस्थानों में उसका बंध है, ऊपर के गुणस्थानों में नहीं है ऐसा समझना। *श्रोता: अपर लिमिट ?* अपर लिमिट है। अंतिम यानी अपर लिमिट की ओर से ले लेना। यहां शब्द कुछ और

होंगे, उसका अर्थ जैसा हमको भासित होता है वैसा लगायेंगे तो गड़बड़ी हो जायेगी।

दूसरे गुणस्थान में किस-किसकी व्युच्छित्ति होती है ? पहले मैं पूरा पढ़ लेती हूं फिर आपको समझाऊंगी; **अनंतानुबंधी चार** यानी कौनसी ? अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ; फिर **स्त्यानगृद्धि-निद्रानिद्रा-प्रचलाप्रचला ये तीन,** ये तीन प्रकृति कौनसे कर्म की हैं ? *श्रोता: दर्शनावरण।* हां, दर्शनावरण, ये जो तीन निद्रा हैं वे दर्शनावरण की हैं। **दुर्भग-दुस्वर-अनादेय ये तीन**, **न्यग्रोधपरिमंडल-स्वाति-कुब्जक-वामन ये चार संस्थान**; छह नंबर का संस्थान पहले गुणस्थान में देखा था, ये बीचवाले चार संस्थान हैं। आगे बीचवाले चार संहनन भी देखेंगे- **वज्रनाराच-नाराच-अर्धनाराच-कीलित ये चार संहनन**। **अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद** और **नीचगोत्र; तिर्यंचगति और तिर्यंचगत्यानुपूर्वी ये तिर्यंचद्विक; उद्योत और तिर्यंचायु ये पच्चीस प्रकृतियां व्युच्छित्तिरूप होती हैं।**

अब इतना सारा कैसे याद करना ? हैं न ! तीन या चार के ग्रुप करेंगे। पहले अनंतानुबंधी की चार- किसको नहीं याद है ? अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ। फिर हमने दर्शनावरण की तीन देखी थी- स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा और प्रचलाप्रचला। उसके बाद दुर्भग, दुस्वर और अनादेय ये तीन का ग्रुप याद रखना। उसके बाद चार संस्थान और चार संहनन हैं- न्यग्रोधपरिमंडल, स्वाति, कुब्जक और वामन ये संस्थान; वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच और कीलित ये संहनन। उसके बाद और तीन बताना है। कौनसी ? अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद और नीचगोत्र। उसके बाद तिर्यंच संबंधी हैं- तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत और तिर्यंचायु। उद्योत जो नामकर्म है वह मात्र तिर्यंचों के ही पाया जाता है, उसका बंध कब होगा ? जब तिर्यंचगति बांध रहा है तब होगा। इसलिये चार का एक ग्रुप बनाया- तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत और तिर्यंचायु। अब मैं बोलूंगी आपको रिपीट करना है।

अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ। *श्रोता: अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ।* स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला। *श्रोता: स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला।* दुर्भग, दुस्वर, अनादेय। *श्रोता: दुर्भग, दुस्वर, अनादेय।* न्यग्रोधपरिमंडल, स्वाति, कुब्जक और वामन संस्थान। *श्रोता: न्यग्रोधपरिमंडल, स्वाति, कुब्जक और वामन संस्थान।* ये संस्थान अब संहनन की बात करेंगे- वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच

और कीलित संहनन। *श्रोता: वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच और कीलित संहनन।* अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद और नीचगोत्र। *श्रोता: अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद और नीचगोत्र।* अब तिर्यंच संबंधी- तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत और तिर्यंचायु। *श्रोता: तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत और तिर्यंचायु।* हां, बहुत अच्छा। अब इन सबको एक-एक से बुलवा नहीं सकते, सुशीलाबहन को मालूम है। रोज आती है, हमारे यहां कर्मकाण्ड रोज चलता है। जितने बैठते हैं बीस-पच्चीस लोग, सबसे हम एक-एक से वह याद करा लेते हैं और फिर याद हो जाता है। एक बार बंधव्युच्छित्ति पक्की हो गयी तो कौनसी गति में, कौनसी मार्गणा में, कौनसा बंध होता है, क्यों नहीं होता है, क्या है ये सब बातें बिलकुल अच्छी तरह से हमें समझ में आ सकती हैं। आगे कुछ नहीं याद करना पड़ता। याद करने के लिये सोलह और पच्चीस ही मुख्य हैं।

देखो, जीव सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है, मिथ्यात्व में से चौथे गुणस्थान में जाता है तो कितनी प्रकृतियां बंधने से रुक जायेंगी ? सोलह और पच्चीस, इकतालीस हो गयी न ! यह इन जनरल इकतालीस की बात है। मनुष्यों और तिर्यंचों के लिये यहीं पर और छह प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति हो जाती है उसकी बात हम गति के प्रकरण में करेंगे। जो सम्यग्दृष्टि मनुष्य है वह देवगति बांधेगा; परंतु जो सम्यग्दृष्टि देव है वह मनुष्यगति बांधेगा इसलिये मनुष्यगति को बाद में व्युच्छित्ति में रखा है, चौथे में। इन जनरल सभी चारों गतियों की अपेक्षा बात है। जो मनुष्य सम्यग्दर्शन प्राप्त करेगा, चौथे में जायेगा उसके १२० बंधयोग्य में से ४७ प्रकृतियों का बंध रुक जायेगा। यह मोक्षमार्ग ऐसा शुरू होता है। उस जीव को इतनी प्रकृतियां बंधेंगी ही नहीं क्योंकि ये तो सारी मिथ्यात्व और अनंतानुबंधी के कारण बंधती थी। अब वे दोनों ही नहीं रहे, तो इतनी प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति हुयी, इतना संवर हुआ कहेंगे हम; इतनी बंधती थी अब ये नहीं बंधेगी। हमने ये दो गुणस्थानों की बात देखी थी। तीसरे में तो बंधव्युच्छित्ति नहीं है यानी जितना वहां बंध है उतना वहां बंध है। बंध से रुकनेवाले ऐसी कोई प्रकृति वहां पर नहीं है।

देखो, यहां एक वाक्य बताया उसका मैं अर्थ बताना चाहती हूं। पृष्ठ १०८, गाथा ९६ की टीका में नीचे से पांचवीं लाइन लिखी है। हमने जो २५ प्रकृतियों के नाम देखे उसके बाद लिखा है। ये जो २५ प्रकृतियां हैं ये कौनसे गुणस्थानों में बंधती हैं ? ये २५ प्रकृतियां जिनकी दूसरे में बंधव्युच्छित्ति होती है वे कहां बंधती हैं ? *श्रोता: पहले में।* पहले और दूसरे दोनों में बंधती हैं। ये प्रकृतियां कौनसे कर्म के कारण बंधती हैं ?

अनंतानुबंधी से बंधती हैं कि मिथ्यात्व से बंधती हैं ? आप कहते हैं अनंतानुबंधी से। ये २५ प्रकृतियां पहले में भी बंधती हैं, दूसरे में भी बंधती हैं। पहले गुणस्थान में अनंतानुबंधी है कि नहीं है ? *श्रोता: है।* दूसरे में भी है तो अनंतानुबंधी से ही बंधती हैं ऐसा कह सकते हैं कि नहीं कह सकते ? यहां क्या लिखा है देखेंगे पहले। **ये प्रकृतियां अनंतानुबंधी के उदय बिना मिथ्यादृष्टि में यानी मिथ्यात्व गुणस्थान में केवल मिथ्यात्व से भी बंधती हैं।** ऐसा कौन महाभाग मिथ्यादृष्टि है कि जिसके अनंतानुबंधी का उदय नहीं है ? होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: होगा।* होगा, इनका अभ्यास है न ! तो कहते हैं होगा। हमें तो पता नहीं कैसे होगा क्योंकि मिथ्यादृष्टि के तो अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन चारों ही उदयरूप होते हैं।

हमने देखा था, चारों क्रोध का उदय है, चारों मान का उदय है तो अनंतानुबंधी का उदय मिथ्यादृष्टि के होता ही है। यहां क्या लिखा है ? यदि अनंतानुबंधी का उदय न हो तो मिथ्यादृष्टि को ये मिथ्यात्व से बंध रही हैं। **और सासादन में मिथ्यात्व के उदय बिना** सासादनवाले को मिथ्यात्व नहीं है, वहां भी ये २५ बंधती हैं। वहां **अनंतानुबंधी से बंधती हैं।** यानी अकेले अनंतानुबंधी से भी बंधती हैं और अकेले मिथ्यात्व से भी बंधती हैं। प्रश्न है कि अकेला मिथ्यात्व कैसे हो सकता है बिना अनंतानुबंधी का ? उसका हम यहां उत्तर देखेंगे। **इसलिये इनका कारण मिथ्यात्व और अनंतानुबंधी दोनों जानना।** पहले गुणस्थान की बंधव्युच्छित्तिवाली १६ प्रकृतियां देखी, वे मिथ्यात्व से ही बंधनेवाली हैं। यदि वहां अनंतानुबंधी से बंधती तो दूसरे में भी बंधनी चाहिये थी। वे तो मात्र मिथ्यात्व से बंधती हैं परंतु ये जो २५ हैं वे अकेले मिथ्यात्व से भी बंध सकती हैं और वह कैसे उसको बतायेंगे अब। तो इसके लिये हम विशेषार्थ पढ़ेंगे।

देखो, **ऊपर जो मिथ्यात्व गुणस्थान में केवल मिथ्यात्व से बंध कहा है उसका कारण यह है कि जो सम्यग्दृष्टि जीव अनंतानुबंधी की विसंयोजना करने के पश्चात्-** अभी इसका अर्थ हमें मालूम नहीं है। अनंतानुबंधी की विसंयोजना का अर्थ क्या है कि जो कोई ऑलरेडि सम्यग्दृष्टि जीव है उसकी विशुद्धि इतनी बढ़ती है। वहां पर भी तीन करण परिणाम होते हैं जैसे मिथ्यात्व से जब सम्यग्दर्शन होता है तब जीव के अध:प्रवृत्तकरण, अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण ये तीन करण परिणाम होते हैं। ऐसे जो सम्यग्दृष्टि जीव हैं, उनके आत्मसन्मुख विशुद्ध परिणाम होते हैं उस काल में पूरा ही अनंतानुबंधी जो सत्ता में पड़ा हुआ है; कितना होगा ? अंत:कोड़ाकोड़ी सागरवाला पूरा

का पूरा टर्न होकर एक अंतर्मुहूर्त में अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन और अन्य नोकषायरूप परिवर्तित होता है, संक्रमित होता है उसको कहेंगे उसकी विसंयोजना होती है। यह कार्य चौथे से सातवें गुणस्थान तक कहीं पर भी हो सकता है और यह कार्य सातवें नरक का सम्यग्दृष्टि नारकी भी कर सकता है। चारों ही गतियों में यह अनंतानुबंधी की विसंयोजना हो सकती है। परंतु यह कैसी है ? पर्मनन्ट नहीं है। इसलिये इसका नाम विसंयोजना कहा।

जिसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है ऐसा सम्यग्दृष्टि भी सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर मिथ्यात्व में आ जाता है। अब मिथ्यात्व में आने पर क्या होगा उसको ? मिथ्यात्व के कारण नया अनंतानुबंधी का बंध शुरू होगा। परंतु एक नियम है किसी भी कर्म का बंध होता है उसके बाद एक आवली तक उसका उदय नहीं होता। बंधने का नियम क्या है ? आबाधाकाल तक उदय नहीं होता। परंतु भले ही आबाधाकाल कितना भी क्यों न हो यह भी नयी बात है अभी सुन लेना। जिसने सत्तर कोड़ाकोड़ी सागर का मिथ्यात्व का बंध किया है; यह मैं पहले उदाहरण बता रही हूं फिर अनंतानुबंधी पर आयेंगे; तो उसमें सात हजार वर्ष की तो आबाधा है और ऊपर निषेक की रचना है। परंतु नियम से प्रत्येक बंधे हुये कर्म में एक आवली के बाद उदीरणा होती है और आवली के बाद नियम से ऊपर के कुछ परमाणु पुराने सत्ता के कर्मों के साथ जुड़कर उनका उदय में आना शुरू हो जाता है। यानी आवली के पश्चात् उसका उदय शुरू हो जाता है। अभी हमने कौनसा जीव लिया ? जिसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है, जिसकी सत्ता में अनंतानुबंधी बिलकुल नहीं है वह मिथ्यात्व में आ गया है। मिथ्यात्व का उदय है, नया अनंतानुबंधी का बंध हो रहा है परंतु बंधने के आवली के पश्चात् ही उसका उदय आयेगा; उसके पहले नहीं आ सकता, सत्ता में आ गया। *श्रोता: सत्ता में पड़ा था।* सत्ता में आ गया। सत्ता में नहीं था पहले; सत्ता में था वह सारा टर्न हो गया था, सत्ता का अनंतानुबंधी उसकी विसंयोजना होकर नष्ट हुआ था। अब ये नया बंधेगा क्योंकि वह जीव मिथ्यात्व में आया है। तो यह जो नया बंधा हुआ अनंतानुबंधी है उसका उदय कब होगा ? एक आवली काल के बाद।

आवली समझते हो न ! जघन्ययुक्तासंख्यात समयों की एक आवली होती है। उतने समयों तक अनंतानुबंधी का उदय नहीं है परंतु मिथ्यात्व का उदय है। उस पहले गुणस्थानवर्ती को इन पच्चीस प्रकृतियों का बंध किसके उदय में हो रहा है ? मिथ्यात्व

के उदय में हो रहा है। यह बहुत इम्पॉर्टंट पॉइंट है, बहुत महत्व का है क्योंकि मिथ्यात्व से बंध नहीं होता, मिथ्यात्व बंध में कुछ नहीं करता अगर ऐसा किसीका मत हो तो यह उसके लिये बहुत बड़ा पॉइंट है जिनागम का; देखो, अनंतानुबंधी नहीं होने पर भी मात्र मिथ्यात्व के उदय में इन २५ का बंध हो रहा है। पच्चीस का तो हो ही रहा है, १६ का भी हो रहा है। यह सुनकर रखना क्योंकि यह सारा विषय नया है तो आपको उसकी गहरायी - उसकी सूक्ष्मता शायद ख्याल में आये या नहीं आये, फिर भी कभी तो सुनना है न ! हां, *श्रोता: भले एक आवली का समय है ?* वहां तो एक समय का भी कुछ होगा तो उसका हिसाब होगा। केवलज्ञानी के ज्ञान में क्या नहीं आया है ! एक समय का भी होता है तो बता देते हैं। जैसे सासादन गुणस्थान एक समय का भी हो सकता है तो उसकी भी चर्चा है न शास्त्र में ऐसे ही यहां पर भी आवली काल तो बहुत बड़ा काल हुआ, असंख्यात समय हैं उसमें। तब तक अनंतानुबंधी का उदय नहीं हो रहा है; नया बंध है, सत्ता में आ चुका है, उदय नहीं है। तो उदय के बिना ये प्रकृतियां बंध रही हैं क्योंकि जो नया बंध होता है उसमें कोई निमित्त होता है। कर्मों के उदय के निमित्त से ही वहां नया बंध होता है क्योंकि यहां हम सारी निमित्त की ही चर्चा कर रहे हैं।

देखो, पुराने कर्मों के उदय में यहां जीव के परिणाम होते हैं और उसके निमित्त से नया कर्म बंधता है, तो हम कहेंगे न ! इन कर्मों के उदय में इन कर्मों का बंध होता है और बीच में जीव के परिणाम हैं ही निमित्तरूप से। पुराने कर्मों का उदय न हो तो वहां वैसे कर्मों का बंध भी नहीं होगा। अभी हमने १६ प्रकृतियां यहां देखी थी मिथ्यात्व गुणस्थान में जिनकी व्युच्छित्ति होती है वे मात्र मिथ्यात्व के उदय में बंधती हैं। २५ प्रकृतियां जिनकी बंधव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में है वे अकेले अनंतानुबंधी के उदय में भी बंधती हैं क्योंकि दूसरे गुणस्थानवाले के बंध है और जो विसंयोजना करके पहले में आया है उसके अकेले मिथ्यात्व के उदय में भी बंधती हैं। *श्रोता: इकतालीस ?* सोलह की बात है। ये २५ जो हैं, वे यहां पहले गुणस्थान में भी बंधती हैं अकेले मिथ्यात्व के उदय में। हां, वहां ४१ प्रकृतियों का बंध होगा लेकिन अनंतानुबंधी उदय में है ही नहीं, अकेला मिथ्यात्व है। यह बात ख्याल में आयी ?

मिथ्यात्व में हमने कितनी प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति देखी, पहले गुणस्थान में ? *श्रोता: सोलह।* १६ की और दूसरे में ? *श्रोता: पच्चीस।* २५ की, उनके नाम भी हमने देख लिये हैं। तीसरे में ? *श्रोता: झिरो।* झिरो, आगे बढ़ेंगे। यह विषय नया है और सारे

प्रकृतियों के नाम ही नाम हैं जो कुछ हमें याद नहीं है या मालूम नहीं है। फिर भी जो विषय हम बार-बार सुनते हैं, उससे परिचित भी हो जाते हैं, वह याद भी हो जाता है। हमारे घर में बच्चा जन्मता है तो हम उसके साथ क्या क्या बातें करते हैं ! उसकी शादी, बारात सब कैसे होगी ? किसको बुलायेंगे, सब बोलते हैं कि नहीं ? उसके साथ तो इतनी बातें करते हैं कि छह महीने में वह अपनी भाषा भी समझता है और फिर थोड़े दिनों में बोलना भी सीख जाता है। शास्त्र की भी भाषा हमारे परिचय में नहीं है, हम उससे परिचित नहीं हैं। बार-बार सुनेंगे तो हमें उसका अर्थ भी ख्याल में आयेगा और हम उससे परिचित भी हो जायेंगे। फिर उसकी सूक्ष्मता ख्याल में आती है तो बिलकुल अनोखा आनंद आ जाता है। क्योंकि ये सारी सत्य बातें हमारे ख्याल में आती हैं, जो केवलज्ञानी ने जानी हुयी हैं।

करणानुयोग जाने बिना कोई श्रेणी नहीं चढ़ेगा, मालूम है ? तत्त्वार्थसूत्र में सूत्र है कि जो श्रेणी चढ़ते हैं, उनके शुक्लध्यान होते हैं; हां, पूर्वविदों के होते हैं न ! वहां नौवें अध्याय में ३७वां सूत्र है न, **शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः**। तत्त्वार्थसूत्र के जानकार ये सब पंडित लोग बैठे हैं यहां पर। अभी हम आर्तध्यान, रौद्रध्यान, धर्मध्यान और शुक्लध्यान इन ध्यान के प्रकारों में नहीं जायेंगे। शुक्लध्यान के स्वामी कौन हैं ? शुक्लध्यान किसके होता है ? शुक्लध्यान के भी चार प्रकार हैं; पहला कौनसा है ? पृथक्त्ववितर्कवीचार यानी वहां जो ध्यान का विषय है वह भी चेंज होता है; उसके जो शब्द हैं उनका और योग का भी पलटना होता है तो उसको कहेंगे पृथक्त्ववितर्कवीचार; वीचार यानी पलटना। दूसरे नंबर का है एकत्ववितर्कअवीचार, पलटना नहीं होता है। एक ही विषय पर, एक ही योग से कॉन्संट्रेशन होता है। फिर तीसरा और चौथा केवली के होता है। ये जो पहले दो शुक्लध्यान हैं शुक्ले चाद्ये पूर्वविदः वे श्रेणी में होते हैं। पहला शुक्लध्यान आठवें गुणस्थान से बारहवें तक होता है और दूसरे नंबर का शुक्लध्यान बारहवें के अंत में होता है। ये जो पहले दो शुक्लध्यान हैं वे किनके होते हैं ? पूर्वविदों के होते हैं। पूर्वविद् किनको कहेंगे ? जिन्हें दस पूर्व का ज्ञान है और जिन्हें चौदह पूर्व का ज्ञान है उनको पूर्वविद् कहते हैं। हमें लगता है न करणानुयोग बेकार की बातें हैं। जो केवलज्ञान प्राप्त करनेवाले हैं, उन्हें इतना ज्ञान होगा, कितने तो श्रुतकेवली हो जाते हैं। बस उनमें परोक्ष और प्रत्यक्ष का ही फर्क है।

अभी हम चौथे गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति देखेंगे। आगे इतना ज्यादा नहीं है न,

थोड़ा-थोड़ा ही है। छत्तीसवाला ज्यादा है, जब उसकी बात आयेगी तब करेंगे। चौथे गुणस्थान की बात देखते हैं, पृष्ठ १०९। **असंयत गुणस्थान के अंतिम समय में**, यहां भी ऐसे ही समझना- चौथे गुणस्थान में इनका बंध है ऊपर के किसी भी गुणस्थान में इनका बंध नहीं है। चौथे गुणस्थान में यानी चौथे गुणस्थान तक, पहले से चौथे तक इनका बंध है। अभी कहीं अबंधरूप होगी तो उसकी चर्चा वहां यथासमय करेंगे। **चौथे गुणस्थान के अंतिम समय में अप्रत्याख्यानावरण कषाय चार** अप्रत्याख्यानावरण का बंध कहां है ? पहले में भी है, दूसरे में भी है, तीसरे में भी है, चौथे में भी है। **वज्रवृषभनाराचसंहनन** पहले गुणस्थानवर्ती को इसका बंध होता होगा कि नहीं होता होगा ? *श्रोता: नहीं होता है।* होता होगा न, क्योंकि हमने देखा है कोई निगोद जीव, बादर निगोद से मरकर मनुष्य में आकर उसी भव से मोक्ष जाता है। तो बादर निगोदवाली पर्याय में उसने मनुष्यायु बांधी, मनुष्यगति बांधी, मनुष्यगत्यानुपूर्वी बांधी, यह वज्रवृषभनाराचसंहनन बांधकर आया है तो ही उस भव में मोक्ष जायेगा।

निगोद जीव कैसे शुभभाव करता होगा ? किसीको प्रश्न नहीं आता कि उसको अशुभभाव कैसे होता होगा क्योंकि हम शुभभाव के कर्ता होकर बैठे हैं। हम कैसे सोच समझकर यहां देवलाली शिबिर में आये हैं, है न ! अशुभभाव- वह आता है हम करते नहीं हैं और शुभभाव हमें करना पड़ता है। तो लगता है कि वे निगोद जीव कैसे करते होंगे शुभभाव ? कोई-कोई ऐसा भी पूछते हैं कि जो सिद्धक्षेत्र में पाये जाते हैं या यहां मानस्तंभ के आजू-बाजूवाले जो कोई पृथ्वीकायिक आदि होंगे या कोई सूक्ष्म जीव भी सर्वत्र होते हैं न, निगोद भी होंगे; उनको ज्यादा शुभभाव होता होगा न ? क्यों भाई ? ऐसा नहीं है। नहीं तो शिखरजी पहाड़ के जो पृथ्वीकायिक हैं न, वे जल्दी मोक्ष जायेंगे। हमारे पहले उनका नंबर लग जायेगा। क्यों ? वह पहाड़ चढ़नेवालों को मोक्ष हो जाता है। तो पहाड़ के जीवों को तो होना चाहिये कि नहीं होना चाहिये ? किसी क्रिया से कुछ मोक्ष-वोक्ष नहीं होता है। अपने परिणामों से, वह भी कौनसे ? वीतरागी परिणामों से होगा। ये जो कुछ शुभ-अशुभ हैं वे तो बंधनेवाले परिणाम हैं, बंध के योग्य परिणाम हैं।

हम चौथे गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति देख रहे थे। **अप्रत्याख्यानावरण चार**। देखो, यह बात कषायों के बारे में है। जहां तक उसका उदय है वहीं तक उसका बंध है- सब कषायों के बारे में। सब नोकषायों के बारे में ऐसा नहीं है, कषायों के बारे में कह रही हूं- मिथ्यात्व और कषाय। मिथ्यात्व का उदय पहले गुणस्थान तक है, उसका

बंध भी पहले तक है। अप्रत्याख्यानावरण का उदय कहां तक है ? चौथे गुणस्थान तक है, उसका बंध भी चौथे गुणस्थान तक ही है। प्रत्याख्यानावरण का उदय भी और बंध भी पांचवें गुणस्थान तक है। संज्वलन का ? *श्रोता: दसवें गुणस्थान तक। श्रोता: नौवें गुणस्थान तक।* दसवें गुणस्थान तक उदय भले लोभ का है परंतु सभी का बंध नौवें गुणस्थान तक है। हां, अब उसकी बात हम देखेंगे क्रम से। हम यहां चौथे गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति में फिर १० प्रकृतियां गिन रहे हैं।

अप्रत्याख्यानावरण की चार, वज्रवृषभनाराचसंहनन, औदारिकशरीर और **औदारिकअंगोपांग, मनुष्यगति-मनुष्यगत्यानुपूर्वी ये दो और मनुष्यायु ये दस प्रकृतियां बंध से व्युच्छित्तिरूप होती हैं क्योंकि ये प्रकृतियां अप्रत्याख्यानावरण कषाय के उदय से बंधती हैं।** जहां उदय है वहां बंधती ही है ऐसा मत कहो, परंतु जहां बंध है वहां उसका उदय है। अभी कोई मनुष्य है चौथे गुणस्थानवाला है, वह देवगति का बंध करेगा, वह मनुष्यगति और मनुष्यायु का बंध नहीं करेगा फिर भी उसके अप्रत्याख्यानावरण का उदय चल रहा है। कुछ ख्याल में आया मैं क्या बताना चाहती हूं ? ये प्रकृतियां किसके उदय से बंधती हैं ? अप्रत्याख्यानावरण के। परंतु जिसको अप्रत्याख्यानावरण का उदय है उसको ये बंधेंगी ऐसा नियम है ? ऐसा नहीं है। उलटा नियम नहीं बनाना। करणानुयोग में कोई भी नियम अपनी बुद्धि से नहीं बनाना है यह हम रोज दो चार बार तो बताते - कहते ही हैं क्योंकि करणानुयोग के नियम ऐसे कुछ सूक्ष्म हैं हम अपनी ओर से उसका अर्थ लगाने जाओ या उसका कुछ नियम करके बताने जाओ तो बिलकुल उलटा-पुलटा हो जाता है।

हम ये १० प्रकृतियां फिर से देखते हैं। ये कौनसी हैं ? मनुष्यगति संबंधी ये सारी प्रकृतियां हैं, सम्यग्दृष्टि देव और सम्यग्दृष्टि नारकी इन प्रकृतियों को बांधता है। कौन-कौनसी हैं ये ? अभी कषाय को पहले लेना, कषाय में कषाय का बंध होता है इसलिये अभी अप्रत्याख्यानावरण पहले समझ लेना। अप्रत्याख्यानावरण की चार हो गयी। आगे की कौन-कौनसी हैं ? वज्रवृषभनाराचसंहनन, औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और मनुष्यायु। अब मैं बोलूंगी आपको रिपीट करना है। अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ। *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ।* वज्रवृषभनाराचसंहनन। *श्रोता: वज्रवृषभनाराचसंहनन।* औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग। *श्रोता: औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग।* मनुष्यगति,

मनुष्यगत्यानुपूर्वी और मनुष्यायु। *श्रोता: मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और मनुष्यायु।* ये कितनी हुयी ? १०। चौथे गुणस्थान में इन १० की बंधव्युच्छित्ति होती है, इसके आगे ये प्रकृतियां नहीं बंधती। अब पांचवें गुणस्थान की बात करेंगे। कितनी लिखी हैं यहां पर ? *श्रोता: चार।* ४, अब वह आसान है, चार ही हैं और किसी कषाय की बात होनी चाहिये। तो कौनसी होगी ? प्रत्याख्यानावरण क्रोध, मान, माया, लोभ।

छठे गुणस्थान में ६ हैं और उसमें 'अ' से शुरुवात होनेवाली पांच हैं। देखो, १०९ पृष्ठ पर नीचे का पॅरेग्राफ। **छठवें प्रमत्तसंयत गुणस्थान के अंतिम समय में अस्थिर, अशुभ, असातावेदनीय, अयशस्कीर्ति, अरति और शोक** अरति की जोड़ीदार वह शोक है ही उसके साथ। बाकी सारी 'अ'-'अ' वाली हैं। मैं कहूंगी आप रिपीट करना। अस्थिर। *श्रोता: अस्थिर।* अशुभ। *श्रोता: अशुभ।* अयशस्कीर्ति। *श्रोता: अयशस्कीर्ति।* असातावेदनीय यहां पर पहले है। फिर से, अस्थिर। *श्रोता: अस्थिर।* अशुभ। *श्रोता: अशुभ।* असातावेदनीय। *श्रोता: असातावेदनीय।* अयशस्कीर्ति। *श्रोता: अयशस्कीर्ति।* अरति और शोक। *श्रोता: अरति और शोक।* ये छठे गुणस्थान की बंध की व्युच्छित्ति हैं। यहां तक इन प्रकृतियों का बंध हो सकता है आगे नहीं है।

अभी कुछ ऐसा मत चल रहा है कि देखो छठे गुणस्थानवर्ती को ये अस्थिर, अशुभ ये क्या हैं सारी ? अशुभ प्रकृतियां बंध रही हैं। तो इन मुनियों को अशुभोपयोग होगा कि नहीं होगा ऐसा मत चल रहा है और पं. टोडरमलजी के नाम पर कुछ गलत प्ररूपणा हो रही है। वे कहते हैं कि देखो, 'पं. टोडरमलजी इतने गलत थे कि उन्होंने ऐसा लिखा है कि मुनियों को अशुभोपयोग होता ही नहीं है और यहां देखो इतनी अशुभ प्रकृतियां बंध रही हैं। उनके अशुभोपयोग होगा कि नहीं होगा ?' जो पंडितों को गलत कहेंगे वे और ऊपर के पंडित हो जायेंगे कि नहीं हो जायेंगे; क्यों भाई ? जैसे करणानुयोग के महान वक्ता जो पं. टोडरमलजी हैं उन पर इसतरह का आरोप करना अत्यंत अयोग्य बात है, यह अच्छी बात नहीं है। इस बंध का कारण क्या है ? यह जो बंध होता है यह संक्लेश और विशुद्धि से होता है, उनके शुभोपयोग ही है। मेरा प्रश्न है दसवें गुणस्थान में ज्ञानावरण का बंध होता है कि नहीं होता है ? *श्रोता: होता है।* होता है, तो ये शुभ प्रकृति कि अशुभ प्रकृति है ? *श्रोता: अशुभ है।* तो वहां भी अशुभोपयोग कहेंगे क्या ? *श्रोता: नहीं।* ख्याल में आती है न बात ? करणानुयोग के किसी बात को तोड़ मरोड़कर और अपनी बुद्धि का जो कुछ शो-ऑफ करके अन्य को नीचा दिखाना

यह बात गलत है। इसकी चपेट में बहुत लोग आते हैं। अभी महाराष्ट्र में नहीं है, ऊपर नॉर्थ की तरफ इस बात का बहुत प्रचार हो रहा है। इसलिये यह बात हमने सुनी और हमारे मन में भी कुछ ऐसे संशय निर्माण नहीं हो, भ्रमणा नहीं हुयी हो- अरे यह बात कहते हैं इसमें कुछ दम है कि नहीं है- जीव भी सोचने लगते हैं। ये बातें ऐसी नहीं हैं।

यहां उपयोग की बात है वह चारित्रमोह की अपेक्षा है। चारित्र की अपेक्षा क्या होता है; शुभोपयोग, अशुभोपयोग और शुद्धोपयोग यह बहुत स्थूल कथन है वह भी द्रव्यानुयोग का। इसकी चर्चा पं. टोडरमलजी ने स्वयं मोक्षमार्गप्रकाशक में आठवें, नौवें अधिकार में बहुत विस्तार से की है। यहां शुभोपयोग यानी स्थूल शुभ परिणाम हैं, बुद्धिपूर्वकवाले जो जीव के अपने ख्याल में आवे उसको शुभोपयोग कहा है। अशुभोपयोग- उसकी बुद्धि में आवे ऐसे अशुभ परिणामों को अशुभोपयोग कहा है और इनके बिना जो-जो शुद्धोपयोगवाले परिणाम हैं उनको वहां शुद्धोपयोग कहा है। करणानुयोग में तो शुद्धोपयोग बारहवें गुणस्थान में कहेंगे। स्वयं पं. टोडरमलजी ने लिखा है ऐसा। इतनी बात और है कि यहां जो अशुभ प्रकृतियां हैं वे छठेवाले को बंधती ही हैं ऐसी बात नहीं है लेकिन इनका बंध यहां तक है। शुभ भी बंधेगी, यहां जो अस्थिर लिखा है कभी स्थिर का भी बंध होगा। यहां असातावेदनीय; जरूरी नहीं कि उनके हर समय असाता का ही बंध हो, साता का भी बंध होगा उनके। परंतु इनका बंध यहां तक है ऊपर नहीं है यह बताने के लिये यहां इनकी बंधव्युच्छित्ति बताने में आती है।

कौन दोहरायेगा छठे गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति ? कुसुमबहन बोलो। *श्रोता: अस्थिर, अशुभ, असातावेदनीय, अयशस्कीर्ति, अरति और शोक।* अस्थिर, अशुभ, असातावेदनीय, अयशस्कीर्ति, अरति और शोक ये ६ प्रकृतियां छठे तक बंधती हैं; पहले गुणस्थान से लेकर छठे तक बंधती हैं, ऊपर कहीं नहीं बंधती तो इसको कहेंगे छठे की बंध की व्युच्छित्ति। सातवें गुणस्थान की १ ही है। कौनसी है ? *श्रोता: देवायु।* देवायु, आयु का बंध यहां तक ही है और उसमें भी यहां देवायु ली। नरकायु की बंधव्युच्छित्ति कहां देखी थी हमने याद है ? *श्रोता: पहले में।* पहले में, तिर्यंचायु की ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में, मनुष्यायु की ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में और देवायु की ? *श्रोता: सातवें में।* सातवें में यानी देवायु यहां सातवें तक बंध सकती है, आगे कहीं भी उसका बंध नहीं होगा। सातवें तक की बंधव्युच्छित्ति तो हो गयी अभी आगे की देखते हैं।

अपूर्वकरण गुणस्थान में बंधव्युच्छित्तिवाली ३६ प्रकृतियां हैं। हम प्रकृतियों के तीन भाग करेंगे और गुणस्थान के सात भाग करेंगे। पहले भाग में दो प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति है- निद्रा और प्रचला; छठे भाग में तीस प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति है और सातवें भाग में चार प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति है- हास्य, रति, भय और जुगुप्सा। *श्रोता: दूसरे, तीसरे ?* दूसरे, तीसरे नहीं ईकल सात भाग करना; उसमें से एक भाग, फिर छठा भाग और सातवां भाग। *श्रोता: इसमें चार भाग ?* चार भाग नहीं हैं। अपूर्वकरण के सात ईकल भाग किये हमने। पहला एक सप्तमांश भाग हुआ न, फिर डायरेक्ट छह भाग पूर्ण होने पर और फिर सातवां भाग पूर्ण होने पर इसतरह से उसकी बंधव्युच्छित्ति कहने में आती है। *श्रोता: दूसरे, तीसरे भाग में कुछ नहीं है ?* नहीं, दूसरे-तीसरे भाग की बात ही नहीं है। डायरेक्ट छठे भाग की ही बात है।

हम देखते हैं ये ३० प्रकृतियां कौनसी हैं, पृष्ठ ११०, १०० नंबर की गाथा की टीका। **'निवृत्ति' अर्थात् अपूर्वकरण गुणस्थान।** नौवें का नाम क्या है ? *श्रोता: अनिवृत्तिकरण।* नौवें अनिवृत्ति और यहां निवृत्ति, आठवें तक के परिणाम निवृत्तिरूप यानी भेदरूप हैं। अनिवृत्ति यानी अलग-अलग नाना जीवों के परिणामों में कोई विशुद्धि की अपेक्षा भेद नहीं हैं। विशुद्धि की अपेक्षा कहेंगे हम; किसीको क्रोध का उदय होगा, किसीको मान का, माया का उसकी बात नहीं है; विशुद्धि की अपेक्षा असमानता है वहां निवृत्ति कहेंगे और यहां उनकी समानता में अनिवृत्ति कहेंगे। यहां अपूर्वकरण को ही निवृत्ति कह दिया है। **उसके चढ़ने के काल में मरण से रहित ऐसे प्रथम भाग में** यह विशेषता है देखो, क्षपकश्रेणी में कोई जीव मरता ही नहीं है परंतु उपशमश्रेणी चढ़नेवाले का आठवें गुणस्थान के पहले भाग में मरण नहीं होता ऐसा सहज ही नियम है। इसी **भाग में निद्रा और प्रचला के बंध की व्युच्छित्ति होती है।** मरण का इससे कोई संबंध नहीं है, फिर भी पहला भाग कौनसा है यह बताने के लिये उसकी बात यहां बतानी थी। **उसी प्रकार छठवें भाग के अंतिम समय में** यहां कौन-कौनसी तीस प्रकृतियां हैं- **तीर्थंकर, निर्माण, शुभ विहायोगति**, फिर **पंचेन्द्रियजाति, तेजसशरीर-कार्माणशरीर ये दो, आहारकशरीर-आहारकअंगोपांग ये दो, समचतुरस्रसंस्थान, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग ये चार, वर्ण-गंध-रस-स्पर्श ये चार, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास ये चार, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय।**

अब ये कैसे याद करना ? पहले हम तीन देखेंगे तीर्थंकर, निर्माण और शुभ विहायोगति; तीर्थंकर, निर्माण और शुभ विहायोगति। फिर हमें मालूम है न गति, जाति आदि बोलते हैं हम। अभी यहां के ऑर्डर्स भूल जाओ, मैं अपनी ओर से बताऊंगी। जैसे हमने नामकर्म याद किये थे न; गति, जाति, शरीर, बंधन, संघात वैसे ही इसको हम देखेंगे। कौनसी गति का यहां तक बंध है ? *श्रोता: देवगति।* देवगति का है न ! देवगति की बंध की व्युच्छित्ति होनेवाली है। *श्रोता: देवायु की बंध की व्युच्छित्ति हो गयी।* देवायु की सातवें में हो गयी, हम गति की बात कर रहे हैं। गति नामकर्म का बंध यहां तक है, देवगति का बंध यहां तक है। तभी तो उसके साथ बंधनेवाली इतनी सारी प्रकृतियां ली। देवायु की बंधव्युच्छित्ति सातवें में हुयी और देवगति के बंध की व्युच्छित्ति आठवें में होगी। *श्रोता: सातवें में देवायु का बंध होता है ?* देवायु का बंध, बंध की बात है। सातवें गुणस्थानवाले मुनिराज हैं उनकी तो मनुष्यायु चल रही है। सम्यग्दृष्टि मनुष्य किस गति का बंध करते हैं ? देवगति का और आयु बांधेंगे तो कौनसी बांधेंगे ? मनुष्य की बात चल रही है तो देवायु का बंध करेंगे। कौनसे गुणस्थान तक करेंगे ? *श्रोता: सातवें तक।* सातवें तक ही करेंगे। ऊपर के गुणस्थानों में आयु का बंध ही नहीं होता।

अत्यंत विशुद्ध परिणामों में और अत्यंत संक्लेश परिणामों में आयु का बंध नहीं होता यह नियम है। आयु के बंध के परिणाम जो होते हैं उनको कहेंगे मध्यम परिणाम। उपशमश्रेणीवाले जो परिणाम हैं- आठवें, नौवें, दसवें, ग्यारहवें गुणस्थान में आयु का बंध होने का सवाल नहीं है। क्षपकश्रेणी में कोई बात ही नहीं है क्योंकि जीव उसी भव में मोक्ष जानेवाला है, आयु का बंध हुआ तो मोक्ष कैसे जायेगा ? गति का बंध हुआ तो बिना भोगे चल सकता है, वह सजातीय अन्य प्रकृतिरूप से उदय में आकर नष्ट हो जाता है। आयु का बंध हुआ हो तो वह भोगनी ही पड़ेगी। देवायु का बंध हुआ हो तो देव का भव करके फिर आकर मोक्ष में जा सकता है। आयु हमें अच्छी लगती है न !

देखो, हमने तीर्थंकर, निर्माण और शुभ विहायोगति तीन प्रकृतियां देख ली। एक गति कौनसी होगी यहां पर ? *श्रोता: देवगति।* देवगति है। अभी जाति एक है तो पंचेन्द्रियजाति; बाकी जातियों की बंधव्युच्छित्ति पहले में ही देखी थी, पंचेन्द्रियजाति का बंध यहां तक है। कौनसी गति बंध रही है ? देवगति। उसके साथ देवगत्यानुपूर्वी भी बंधेगी। जो देवगति बांधता है वह कौनसा शरीर बांधेगा ? वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग बांधेगा। जो जीव आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग बांधेगा तो

यहां तक ही बांधता है तो आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग को भी ले लेते हैं। तेजसशरीर, कार्माणशरीर नामकर्म का बंध अनादि से ध्रुवबंधी में था, यहां तक बंधता है, उसको भी ले लिया है यहां पर। वैक्रियिकशरीर में कोई संहनन नहीं होता है इसलिये उसको छोड़ दिया। *श्रोता: समचतुरस्रसंस्थान।* संस्थान का बंध होगा, वैक्रियिकशरीर के साथ समचतुरस्रसंस्थान का बंध होगा। अब और क्या क्या बंधेगा, इसतरह से हमें सोचना है। अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास बंधेंगे; त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक बंधेंगे; स्पर्श, रस, गंध, वर्ण बंधेंगे; स्थिर बंधेगी, शुभ बंधेगी, सुभग बंधेगी, सुस्वर बंधेगी,आदेय बंधेगी, यशस्कीर्ति का भी बंध है परंतु बंध की व्युच्छित्ति नहीं है। यशस्कीर्ति का बंध दसवें गुणस्थान तक है। नामकर्म की एक ही प्रकृति बंधने से रह जाती है वह है यशस्कीर्ति। उसका बंध दसवें गुणस्थान तक है और गोत्र में से उच्चगोत्र भी दसवें गुणस्थान तक बंधता है। बाकी यहां बहुत सारी शुभ प्रकृतियां ही हैं, उपघात अशुभ है परंतु इन सभी की यहां पर बंध की व्युच्छित्ति होती है।

फिर से हम दुबारा इसको पढ़ेंगे। यहां जो क्रम दिया है उसके साथ हम पढ़ेंगे, आप रिपीट करना। तीर्थंकर, निर्माण, शुभ विहायोगति। *श्रोता: तीर्थंकर, निर्माण, शुभ विहायोगति।* पंचेन्द्रियजाति। *श्रोता: पंचेन्द्रियजाति।* तेजसशरीर, कार्माणशरीर। *श्रोता: तेजसशरीर, कार्माणशरीर।* आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग। *श्रोता: आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग।* समचतुरस्रसंस्थान। *श्रोता: समचतुरस्रसंस्थान।* देवगति, देवगत्यानुपूर्वी। *श्रोता: देवगति, देवगत्यानुपूर्वी।* वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग। *श्रोता: वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग।* वर्ण, गंध, रस, स्पर्श। *श्रोता: वर्ण, गंध, रस, स्पर्श।* अगुरुलघुवाली चार- अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास। *श्रोता: अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास।* त्रस के भी चार हैं; त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक। *श्रोता: त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक।* स्थिर आदि छह हैं परंतु उसमें से पांच ही हमको यहां लेनी हैं क्योंकि बंध की व्युच्छित्ति देखनी है। यशस्कीर्ति का बंध आगे भी होता है इसलिये उसका बंधव्युच्छित्ति में नाम नहीं लेंगे। वैसे तो छह जोड़ी में से यहां पांच लेना है। जोड़ी नहीं लेनी पूरी उसमें से शुभ प्रकृतियां ले रहे हैं, इसके जोड़ीदार तो पहले ही भाग गये हैं। उनके बंध की व्युच्छित्ति पहले ही हुयी थी। यहां देखते हैं स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर और आदेय- बोलना। *श्रोता: स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर और आदेय।* इन ३० प्रकृतियों की यहां बंधव्युच्छित्ति होती है। थक गये न ! अब **सातवें भाग में हास्य,**

रति, भय और जुगुप्सा ये चार प्रकृतियां बंध से व्युच्छित्तिरूप होती हैं।

अब आगे की व्युच्छित्ति देखते हैं, नौवें गुणस्थान में कितनी लिखी हैं ? *श्रोता: पांच।* ५, नौवें गुणस्थान में मोहनीय कर्म की पांच कौनसी बंधती हैं ? यह बहुत आसान है। देखो, यहां उदय किसका है ? उसके आधार से हम बंध को सोच सकते हैं। एक किसी वेद का उदय है, उदय की बात कर रही हूं। स्त्रीवेद, पुरुषवेद या नपुंसकवेद यह भाववेद की बात चल रही है। इनका उदय है, बंध मात्र पुरुषवेद का है। किसी एक संज्वलन कषाय का उदय है- क्रोध का होगा, मान का, माया का या लोभ का परंतु संज्वलन का चारों का ही बंध है। जब नौवें गुणस्थान में जीव आया है तब पुरुषवेद का बंध हो रहा है और संज्वलन चार बंध रहे हैं। फिर क्रम से क्या होगा ? वेद का उदय मिट गया तो पुरुषवेद का बंध भी रुक गया; फिर अकेले चार संज्वलन का बंध होगा। फिर क्रोध का बंध रुक जायेगा; तब मान, माया, लोभ का बंध होगा। फिर मान का बंध भी रुक जायेगा; तब माया और लोभ का बंध होगा। फिर माया का बंध रुक जायेगा तब नौवें के अंत तक मात्र लोभ का बंध होगा। नौवें गुणस्थान में जो पांच प्रकृतियां हैं वे एक-एक क्रम से नष्ट होती हैं। पहले पांच का बंध है, फिर चार का है, फिर तीन का है, फिर दो का है, फिर एक का है; यह मोहनीय कर्म की बात है।

नौवें में अन्य भी प्रकृतियों का बंध हो रहा है; ज्ञानावरण का भी बंध हो रहा है, दर्शनावरण का भी बंध हो रहा है, अंतराय का भी बंध हो रहा है, नामकर्म में से यशस्कीर्ति का बंध हो रहा है, गोत्र में से उच्चगोत्र का बंध हो रहा है, वेदनीय में से सातावेदनीय का बंध हो रहा है। परंतु व्युच्छित्ति कितने की हो रही है ? *श्रोता: पांच।* पांच की। मोहनीय के पहले पांच का बंध था, व्युच्छित्ति में से ही बात कर रहे हैं। पहले एक पुरुषवेद की व्युच्छित्ति हुयी, फिर क्रोध के बंध की व्युच्छित्ति हुयी, फिर मान के बंध की व्युच्छित्ति हुयी, फिर माया के बंध की व्युच्छित्ति हुयी, नौवें के अंत में लोभ के बंध की व्युच्छित्ति हुयी। अभी हमें प्रोसेस मालूम नहीं है, सारा लब्धिसार-क्षपणासार का विषय है, फिर भी कुछ तो समझेंगे। अभी हम बंध की व्युच्छित्ति देख रहे हैं तो इनका बंध क्रम से रुकता चला जायेगा, यह बात तो ख्याल में आती है। नौवें गुणस्थान में हमने पांच की बंधव्युच्छित्ति देखी। अभी हम आगे बढ़ेंगे।

अब दसवें गुणस्थान में ? *श्रोता: सोलह।* १६ की व्युच्छित्ति। दसवें गुणस्थान में

सत्रह का बंध है उसमें से सोलह का बंध रुक जानेवाला है क्योंकि बाद में अकेले सातावेदनीय का एक का बंध रह जायेगा। व्युच्छित्ति होनेवाली प्रकृतियां कौनसी हैं ? ज्ञानावरण की पांच; दर्शनावरण की चार क्योंकि तीन निद्रा गयी थी दूसरे में और निद्रा-प्रचला गयी थी आठवें में है न, अभी चार बाकी थी दर्शनावरण। ज्ञानावरण की पांच, दर्शनावरण की चार और अंतराय की पांच। कितनी हो गयी ? *श्रोता: चौदह।* १४ हो गयी। नामकर्म की यशस्कीर्ति और एक उच्चगोत्र, ये १६ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति दसवें में होती है। बाद में ग्यारहवें में एक सातावेदनीय बंधती है परंतु व्युच्छित्ति नहीं है। सातावेदनीय बारहवेंवाले को भी बंधती है उसकी व्युच्छित्ति नहीं है। तेरहवेंवाले को भी सातावेदनीय का बंध होता है, वे जब अयोगकेवली होते हैं तब बंध रुक जाता है। परिपूर्ण संवर कहां है ? अयोगकेवली गुणस्थान में है, एक भी प्रकृति का वहां बंध नहीं। संवर शुरू कहां हुआ था ? हां, चौथे से शुरू हुआ था। तेरहवें में बंध हैं न सातावेदनीय का। *श्रोता: बंधव्युच्छित्ति ?* बंधव्युच्छित्ति एक की। तेरहवें में बंध की व्युच्छित्ति १ की। जो बंध रहा है उसकी व्युच्छित्ति हुयी। *श्रोता: दोनों में कौनसी ?* सातावेदनीय की। तेरहवें गुणस्थान में सातावेदनीय के बंध की व्युच्छित्ति हुयी। अकेला एक ही बंध हो रहा था और वह भी बंधना रुक गया है तो हम उसको कहेंगे बंध की व्युच्छित्ति।

मुझे पता है यह सुनकर इन्डायजेशन हो रहा है, हां, हलवा खाने से किसीको तकलीफ नहीं होती है। देखो, पहले गुणस्थान में १६ की व्युच्छित्ति होती है। कोई कहेंगे कौनसी १६ ? *श्रोता: मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी और नरकायु।* मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद; सुनो-सुनो; असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु। दूसरे गुणस्थान की २५, बोलो बासंतीबहन। *श्रोता: अनंतानुबंधी चार।* अनंतानुबंधी चार। *श्रोता: स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा, प्रचलाप्रचला।* स्त्यानगृद्धि आदि तीन। *श्रोता: दुर्भग, दुस्वर, अनादेय।* दुर्भग, दुस्वर, अनादेय। न्यग्रोधपरिमंडल, स्वाति, कुब्जक और वामन संस्थान। *श्रोता: वज्रनाराचसंहनन, नाराचसंहनन, अर्धनाराचसंहनन और कीलितसंहनन।* वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच और कीलित संहनन ये चार। *श्रोता: अप्रशस्त विहायोगति, स्त्रीवेद और नीचगोत्र।* हां, *श्रोता: तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत और तिर्यंचायु।*

तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत और तिर्यंचायु। हां, ये हो गयी।

तीसरे गुणस्थान में ? *श्रोता: झिरो।* झिरो। चौथे की कौन बतायेंगे ? *श्रोता: तीसरे गुणस्थान में कोई प्रकृति की बंधव्युच्छित्ति क्यों नहीं होती ?* ऐसी कोई भी प्रकृति नहीं है जो तीसरे में बंधती हो और चौथे में न बंधती हो। अप्रत्याख्यानावरण तीसरेवाले को भी बंध रही हैं, चौथेवाले को भी बंध रही हैं, है न ! उसकी बंधव्युच्छित्ति चौथे में जाकर होती है। जो चौथे गुणस्थान तक बंधती हैं वे तीसरेवाले को भी बंधती हैं तो बंध की व्युच्छित्ति नहीं होती। बंध नहीं होता ऐसा नहीं कहा, व्युच्छित्ति नहीं होती। चौथे की दस हैं। पाटनीजी बोलो। *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण चार।* हां, अप्रत्याख्यानावरण चार। *श्रोता: वज्रवृषभनाराचसंहनन।* वज्रवृषभनाराचसंहनन। *श्रोता: औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग।* औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग। *श्रोता: मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, मनुष्यायु।* मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, मनुष्यायु।

पांचवें गुणस्थान की चार कौन बतायेगा ? आरतीबहन आप बतायेंगी ? *श्रोता: प्रत्याख्यानावरण चार हैं।* हां, प्रत्याख्यानावरण ४ हैं। छठे की ६, छठे की छह सब ऐसी 'अ'-'अ' वाली हैं, बोलो। *श्रोता: अस्थिर, अशुभ, असातावेदनीय, अयशस्कीर्ति, अरति और शोक।* अस्थिर, अशुभ, असातावेदनीय, अयशस्कीर्ति, अरति और शोक। सातवें में १ देवायु। आठवें में पहले भाग में निद्रा और प्रचला। छठे भाग में तीस- तीर्थंकर, निर्माण, प्रशस्त विहायोगति, पंचेन्द्रियजाति, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग, आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग, तेजसशरीर, कार्माणशरीर, समचतुरस्रसंस्थान, वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय इनकी बंधव्युच्छित्ति होती है। *श्रोता: सातवें भाग में ?* सातवें भाग में हास्य, रति और भय, जुगुप्सा। नौवें गुणस्थान में ? पुरुषवेद और चार संज्वलन इन ५ की बंध की व्युच्छित्ति। दसवें में १६, कौनसी ? ज्ञानावरण की पांच, दर्शनावरण की चार, अंतराय की पांच चौदह हुयी, यशस्कीर्ति और उच्चगोत्र। फिर ग्यारहवें में बंध की व्युच्छित्ति नहीं, बारहवें में नहीं है। तेरहवें में एक सातावेदनीय की। अब अपने इस व्युच्छित्ति के प्रकरण की यहीं व्युच्छित्ति होती है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३४. बंधव्युच्छित्ति - मार्गणाओं में

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रन्थ की रचना की है, पं. टोडरमलजी ने उसके ऊपर सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है, उसीका हिंदी अनुवाद हम यहां देख रहे हैं। हमने गुणस्थानों में बंध की व्युच्छित्ति देखी। गुणस्थानों में कहने का प्रयोजन ऐसा है कि जो मार्गणायें हैं वहां जितनी प्रकृतियां और जो प्रकृतियां बंधती होंगी उनमें से ही व्युच्छित्ति कहेंगे।

मार्गणा पता है न ! कितनी होती हैं मार्गणा ? *श्रोता: चौदह।* चौदह। नाम याद हैं किसीको ? *श्रोता: गति, इन्द्रिय, काय।* गति, इन्द्रिय, काय। *श्रोता: योग, वेद, कषाय।* योग, वेद, कषाय। *श्रोता: ज्ञान, संयम, दर्शन।* ज्ञान, संयम, दर्शन। *श्रोता: लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व।* लेश्या, भव्य, सम्यक्त्व। *श्रोता: संज्ञी और आहार।* संज्ञी और आहार। ये मार्गणायें हैं तो कौनसी मार्गणा में कितने गुणस्थान हैं, वहां कौनसी प्रकृतियां बंधती हैं, तो जो बंधती हैं उसमें से हम कहेंगे व्युच्छित्ति है। जो बंधती ही नहीं है उसको बंध के अयोग्य ही कह देंगे। यहां हमने सभी गुणस्थानों की अपेक्षा कितनी बंधती हैं कहा था ? १२० बंधती हैं। यदि हम नरक की, तिर्यंच की, देवों की या मनुष्यों की अपेक्षा बात करेंगे तो वहां बंधनेवाली प्रकृतियों की संख्या अलग-अलग होगी। जितनी वहां बंधेंगी, उदाहरण के तौर पर हम गतिमार्गणा की बात करेंगे। सभी मार्गणाओं में हम यहां नहीं जानेवाले हैं; पुस्तक में एक-एक मार्गणा को लेकर; उसके भेदों में कितने कर्म बंधयोग्य हैं, उसमें से कितने की बंधव्युच्छित्ति होती है इसका विस्तार से वर्णन है, वह कैसे समझना इसके लिये हम गति पर घटित करेंगे। गतिमार्गणा की अपेक्षा कितने भेद हैं संसारी जीवों के ? *श्रोता: चार।* चार भेद हैं। नरकगति, तिर्यंचगति, मनुष्यगति और देवगति। हम सोचते हैं नारकी जीवों के कौन-कौनसी प्रकृतियां नहीं बंधती होंगी, उनको तो पहले ही हम आऊट कर देंगे। फिर जो रहेगी तो उसकी बातें हम सोचेंगे।

श्रोता: सातवें गुणस्थान में देवायु के बंध की व्युच्छित्ति होती है, देवगति की बंध की व्युच्छित्ति आठवें में होती है। यह समझ में नहीं आया। सातवें गुणस्थान में देवायु के बंध की व्युच्छित्ति होती है, आठवें में देवगति के बंध की व्युच्छित्ति होती है। गति नामकर्म का भेद है। गति नामकर्म अलग है, आयुकर्म अलग है। आयु कभी-कभी बंधती है और गति निरंतर बंधती है। आपका प्रश्न ऐसा है देवायु के बंध की व्युच्छित्ति

आपने सातवें में कही और देवगति की बंधव्युच्छित्ति आप आठवें में कह रही हो। हमने नरकगति और नरकायु की बंध की व्युच्छित्ति एक साथ पहले में देखी थी, तिर्यंचगति और तिर्यंचायु की एक साथ दूसरे में देखी थी, मनुष्यगति और मनुष्यायु की एक साथ चौथे में देखी थी; तो यहां ऐसा डिफरन्स क्यों ? अति विशुद्ध परिणामों में यानी आठवें गुणस्थान के विशुद्ध परिणाम में आयु का बंध नहीं होता। छठे में जिसके आयु का बंध शुरू हुआ है वह सातवें में जाकर कम्प्लीट होता है। वैसे देखा जाये तो सातवें में जाने के बाद आयु का नया बंध भी नहीं होगा, बिगिनिंग नहीं होगी एक बात। दूसरी बात, आठवें के योग्य विशुद्ध परिणामों से देवगति का बंध हो सकता है। गति नामकर्म है वह नामकर्म का भेद है, और आयु बिलकुल अलग ही प्रकृति है।

श्रोता: आयु का फंक्शन क्या है ? यह वर्तमान आयु की बात है। हमारी वर्तमान आयु जो हम भोग रहे हैं उसका फंक्शन है कि जिसको हम मनुष्य जीवन, मनुष्यभव कह रहे हैं वह चलता रहे। आयु के उदय में उसका भव चालू रहता है, वह मर नहीं सकता। आयु का कार्य क्या है ? वह जीव मरकर अन्यत्र नहीं जा सकता है। जब तक आयु का उदय है तब तक वह मर नहीं सकता। यह अच्छी बात है न बहन ! क्योंकि हम मरना नहीं चाहते यानी हम आयुकर्म का उदय चाहते हैं। कर्म चाहते हैं कि नहीं ? आयुकर्म ने हमको जकड़कर रखा है इसी भव में, वह मरकर दूसरे भव में नहीं जाने देता है। प्रत्येक कर्म का अपना-अपना स्वभाव है। कहां किसकी बंधव्युच्छित्ति होगी, कहां किसका उदय होगा, कहां किसका बंध रुक जायेगा, किसका क्या होगा इसको कहेंगे वह उसका स्वभाव है और स्वभाव में हमारे प्रश्नों का कोई स्थान नहीं होता। ऐसा लिखा है, धवला और जयधवला में भी बारंबार यही लिखते हैं कि वस्तु का स्वभाव ऐसा ही है। इन प्रकृतियों का स्वभाव ऐसा ही है। इसीके कारण वह ऐसा हो जाता है।

हमारी बहन ने और भी प्रश्न पूछा था कि *आप कहते हैं नौवें गुणस्थान में लोभ की भी बंधव्युच्छित्ति हो गयी है और हमने पढ़ा है कि दसवें गुणस्थान में सूक्ष्मलोभ है।* वह उदय है, सूक्ष्मलोभ के उदय में नये लोभ का बंध नहीं होता। यदि सूक्ष्मलोभ के उदय में भी नया बंध होने लगा तो फिर उस बंध का अभाव ही नहीं हो सकता। ऐसे कोई प्रश्न हैं न यह क्यों ? क्योंकि अभी आपको बंध और उदय के बारे में सही जानकारी नहीं है। अभी हमने उदय की व्युच्छित्ति नहीं सीखी है। बंध और उदय में बहुत उलझनें होनेवाली हैं क्योंकि पहली बार हम पढ़ते हैं। अभी हमने बंधव्युच्छित्ति

बहुत अच्छी तरह से याद कर ली, थोड़ी सुन ली। जब उदय की बात आयेगी तो वह बंध की याद आती रहेगी हमको और वह फिर उलटा–पुलटा होने लगेगा, कोई बात नहीं है। हमारा बच्चा भी चलना शुरू करता है तो कितनी बार गिरता है ? बाद में क्या होता है ? अच्छा चलना सीख जाता है, दौड़ने लगता है। हम भी दौड़ेंगे कर्मकाण्ड में।

हम अभी मार्गणाओं में किसतरह से बंधव्युच्छित्ति होती है उसको गति मार्गणा पर लगाकर देखेंगे। बाकी मार्गणाओं पर पुस्तक में बहुत विस्तार से लिखा है, वहां से पढ़कर हम जानेंगे। जो १२० प्रकृतियां बंधयोग्य हैं उसमें से नरक में कौनसी प्रकृतियां नहीं बंधती हैं उसकी पहले हम चर्चा करेंगे। मिथ्यात्व गुणस्थान में १६ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति कही हमने, उसमें से पहली चार नारकियों के भी बंधती हैं। कौनसी ? *श्रोता: मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद और असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन।* मिथ्यात्व, हुंडकसंस्थान, नपुंसकवेद और असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन ये उनके बंधेगी। परंतु आगे की जो हैं न ! एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु ये प्रकृतियां नारकियों के नहीं बंधेंगी। सोलह में से चार ही वहां बंध रही हैं आगे की बारह नहीं बंध रही हैं। और भी कोई नहीं बंधेगी ? नारकियों के और कौनसी नहीं बंधेगी ? देवगति नहीं बंधेगी। देखो, यह नियम है; देव हैं वे देवगति को नहीं बांधेंगे, देवगत्यानुपूर्वी को नहीं बांधेंगे, देवायु को नहीं बांधेंगे। वैसे नारकी हैं वे नरकगति को नहीं बांधेंगे, नरकानुपूर्वी को नहीं बांधेंगे, नरकायु को नहीं बांधेंगे। *श्रोता: सम्यग्दृष्टि हो तो ?* सम्यग्दृष्टि हो तो सम्यग्दृष्टि नारकी मनुष्यायु का बंध करेंगे। सम्यग्दृष्टि की कहां बात आयी ? मिथ्यात्व में बंधयोग्य की बात है और इन चार प्रकृतियों की मिथ्यात्व गुणस्थान में बंधव्युच्छित्ति हो जायेगी।

नारकी जीवों के लिये बंधयोग्य प्रकृतियां हम गिन रहें हैं। फिर उनके ऊपर चार गुणस्थानों में अलग से घटित करेंगे। पहले मार्गणा की बात है, जैसे हमने सभी गतियों की अपेक्षा देखा। कितनी बंधयोग्य हैं ? १२०। नारकी जीवों के लिये बंधयोग्य कितनी हैं ? चारों गुणस्थानों की अपेक्षा जो बंधयोग्य हैं उनको पहले टोटल बतायेंगे। कॉमनलि बतायेंगे कि नारकी जीव कितनी प्रकृतियों का बंध कर सकते हैं, कितने का बंध नहीं करते उसको हम मायनस करेंगे १२० में से। मिथ्यात्व गुणस्थान की १६ हमने याद की थी उसमें से बारह उनके नहीं बंधती हैं। एकेन्द्रिय संबंधी तीन और तीन छह; द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय वे तीन और नरक संबंधी तीन ये बारह का उनके बंध नहीं

होता है। इनके अलावा किसका बंध नहीं होता ? देवायु, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग, आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग। नारकियों के तीर्थंकर प्रकृति का बंध होगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं, छठे गुणस्थानवालों को होगा।* अरे होता है न ! तीसरे नरक तक होता है। हमने यहां गुणस्थान कहां पूछा है ? हमने नारकियों को तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है कि नहीं इतना पूछा है। *श्रोता: होता है ?* हां, होता है। *श्रोता: क्षायिक सम्यग्दृष्टि ?* बांधते हैं न ! अभी श्रेणिक राजा कहां है ? नरक में है तो नारकी बांधते हैं तीर्थंकर प्रकृति। तीसरे नरक तक के नारकी बांध सकते हैं। कितनी प्रकृतियां बांध सकते हैं ? हमने कितनी मायनस की ? *श्रोता: बारह।* बारह पहलेवाली और आगे कितनी ? देवायु की तीन, वैक्रियिक की दो, आहारक की दो, सात हुयी न ! बारह और सात उन्नीस प्रकृतियों का बंध नारकी नहीं करेंगे।

फिर से दुबारा- हमने मिथ्यात्व में बंधव्युच्छित्ति याद की थी उसमें से नारकी को सिर्फ पहली चार का बंध है, आगे की बारह का किसी भी नारकी को बंध ही नहीं होता। कोई भी नारकी मरकर एकेन्द्रिय में नहीं जायेगा। देव मरकर एकेन्द्रिय में जा सकता है, नारकी संज्ञी पंचेन्द्रिय में ही जन्मेगा तो उसीका बंध करेगा। ये नारकी जीव हैं उनके ये बारह प्रकृतियां नहीं बंधती और क्या नहीं बंधता ? देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, देवायु; उसके साथ बंधनेवाली वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग; आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग सातवें-आठवें गुणस्थानवालों को बंधती है; नारकी के गुणस्थान चार ही हैं ये प्रकृतियां भी उनके नहीं बंधती। बारह और सात, उन्नीस प्रकृतियां नारकियों के नहीं बंधती। कितनी बंध सकती हैं ? १२० में से उन्नीस गयी तो १०१ का बंध होगा।

नारकियों में गुणस्थान कितने होते हैं ? *श्रोता: चार।* चार। पहले गुणस्थान में किसीके भी तीर्थंकर प्रकृति नहीं बंधेगी। तो कितनी बंधेंगी वहां पर ? *श्रोता: १००।* १०१ में से १०० बंध सकती हैं। अब वहां व्युच्छित्ति कितनी होगी ? हमने देखी थी वहां १६ की व्युच्छित्ति कही थी। उनमें से बारह बंधती नहीं हैं, चार बंधती हैं उसकी व्युच्छित्ति हो जायेगी। नारकियों के लिये पहले गुणस्थान में हम चार की व्युच्छित्ति कहेंगे। ख्याल में आती है यह बात ? जितनी बंधती हैं उनमें से व्युच्छित्ति कहेंगे। नारकियों के ये चार प्रकृतियां मिथ्यात्व में बंधेगी। आगे दूसरे, तीसरे, चौथे में नहीं बंधेगी तो उसको क्या कहेंगे हम ? बंध की व्युच्छित्ति है। व्युच्छित्ति का अर्थ क्या देखा ? उस गुणस्थान में बंध है ऊपर नहीं है उसको बंध की व्युच्छित्ति कहते हैं। याद है न यह कि भूल गये ?

नरकगति में हमने उन्नीस प्रकृतियां मायनस कर दी तो हम कहेंगे बंधयोग्य १०१ प्रकृतियां हैं। ये अलग-अलग जीवों की अपेक्षा बात हो रही है। इन १०१ प्रकृतियों का बंध कहां तक होगा ? कौनसे नरक तक होगा ? कहते हैं तीसरे नरक तक होगा। क्यों ? तीर्थंकर प्रकृति का बंध करनेवाले जीव तीसरे नरक तक जा सकते हैं। जिसने पहले नरकायु का बंध किया है, बाद में सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है परंतु क्षायिक नहीं हुये हैं, वेदकसम्यग्दृष्टि हैं और जिन्होंने तीर्थंकर प्रकृति का बंध करना प्रारंभ किया है वे दूसरे या तीसरे नरक में जाने के पहले; एक अंतर्मुहूर्त पहले; मिथ्यात्व में जाते हैं। वे नरक में मिथ्यादृष्टि अवस्था में जन्म लेते हैं, एक अंतर्मुहूर्त में वहां सम्यक्त्व प्राप्त कर लेते हैं और फिर तब से प्रति समय तीर्थंकर प्रकृति का बंध चलता है। तीसरे नरक तक इसका बंध होगा। वहां से आकर वे डायरेक्ट तीर्थंकर होकर मोक्ष चले जानेवाले जीव हैं, फिर आगे उनके और भव बाकी नहीं हैं। हमने देखा तीसरे नरक तक १०१ का बंध होगा, हो सकता है। आगे बंधयोग्य में तीर्थंकर प्रकृति नहीं है तो एक मायनस करेंगे। चौथे, पांचवें और छठे नरक में १०० ही प्रकृतियां बंधेंगी। जितनी बंधती हैं उसमें से हम व्युच्छित्ति कहेंगे। अब सातवें नरक में और क्या है जिसका बंध नहीं हो सकता ? मनुष्यायु का बंध सातवें नरक के नारकी को नहीं होता। वे नियम से तिर्यंचायु बांधकर तिर्यंच में ही जन्म लेते हैं। इसतरह से मार्गणा में कैसे विचार करना ? पुस्तक में ये बातें विस्तार से लिखी हैं परंतु कैसे सोचना, कैसे विचार करना इसको हम देख रहे हैं।

अब हम नारकी के सामने देव की बात करेंगे। हमने मिथ्यात्व गुणस्थान में १६ प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति देखी, उनमें से देवों के कौनसी नहीं बंधती, कौनसी बंधती हैं ? पहली चार बंधेगी। अभी सौधर्मद्विक और भवनत्रिक में एकेन्द्रिय संबंधी बंध हो सकता है, ऊपर के देवों के नहीं होता। एकेन्द्रिय, स्थावर और आतप इनका बंध करेंगे यानी पहली चार और आगे की तीन इसलिये हमने क्रम से याद किया था। मिथ्यात्व की १६ में से ये सात प्रकृतियों का बंध भवनत्रिक के और सौधर्म-ईशानवालों को हो सकता है, ऊपर के देवों को इन तीन का बंध नहीं होगा। नारकी में बारह का बंध नहीं होता ऐसा देखा था। देवों को सोलह में से सात का बंध हो सकता है, नौ का नहीं होगा। और किसका नहीं होगा ? अभी देव हैं वे नरकगति नहीं बांधेगे, नरकगत्यानुपूर्वी नहीं बांधेंगे, नरकायु नहीं बांधेंगे, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग नहीं बांधेंगे। नरकगति वगैरह तो आगेवाले नौ में आ गयी थी। पहले गुणस्थान की हमने नौ प्रकृतियां गिनी थी वहां

नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु को गिना था। परंतु देवों के लिये किसको गिना ? वे नौ अभी हमने गिनी है। देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, देवायु का बंध नहीं होगा; वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग नहीं बांधेंगे; आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग को नहीं बांधेंगे तो हम उनमें से ये और निकाल देंगे। नारकी १०१ बांधते हैं ऐसा हमने देखा था, देवों में उसमें तीन ॲड करना- १०४ बांधेंगे।

कोई भी देव सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण नामकर्म का बंध नहीं करेंगे। इसका अर्थ क्या है ? कोई भी देवगति का जीव मरकर निगोद में नहीं जायेगा। एकेन्द्रिय में जा सकता है, कहां तक का ? भवनत्रिक और सौधर्मद्विक। छहढाला में कहा है कि कोई मिथ्यादृष्टि ग्रैवेयक तक जाता है, वहां से चयकर वह एकेन्द्रिय में जाता है। एकेन्द्रियों में जघन्य आयु श्वास के अठारहवें भाग प्रमाण होती है। तो लोग ऐसी प्ररूपणा करते हैं कि देव वहां से मरता है और निगोद में चला जाता है- कोई भी देव मरकर तीन काल में डायरेक्ट निगोद में नहीं जा सकता। यहां आकर मनुष्य अथवा तिर्यंच होकर बाद में निगोद में जायेगा तो जायेगा क्योंकि देवों के साधारण नामकर्म प्रकृति बंधती ही नहीं है। ऐसी प्ररूपणा होती है, हो रही है, पुस्तकों में भी हमने लिखी हुयी देखी है। अभी क्या करें ? कहां-कहां तक किसका निषेध करें ? कोई भी देव डायरेक्ट निगोद में जाता नहीं क्योंकि उनके साधारण नामकर्म बंधता ही नहीं। *श्रोता: देव डायरेक्टलि नहीं जा सकते ?* वही तो बोला, डायरेक्टलि नहीं जाता। अभी देव में से मरकर मनुष्य में आया है अथवा अन्य तिर्यंच में आया और बाद में निगोद में चला गया तो जा सकता है। परंतु देव में से मरकर डायरेक्ट कोई भी जीव निगोद में नहीं जाता। हां, सौधर्म-ईशान तक के देव जो हैं एकेन्द्रिय में जायेंगे। कौनसे एकेन्द्रियों में ? बादर, पर्याप्त; वह भी पृथ्वीकायिक, जलकायिक या वनस्पतिकायिक; देव मरकर अग्निकायिक, वायुकायिक नहीं होगा; देव मरकर निगोद में नहीं जायेगा। ये सारे करणानुयोग के नियम हैं और ये नियम बिलकुल अबाधित हैं। उसके लिये वहां कोई ऐसा-वैसा नहीं चलेगा और हम इन नियमों के विरुद्ध अगर प्ररूपणा करते हैं तो हमारा हमारे आगम से विरोध हो जाता है। ये हमारी जिम्मेवारी है बहुत बड़ी, हां।

अभी मनुष्य, नारकी और देवों की बात हमने देखी। देवों में कितनी प्रकृतियां बंध सकती हैं ? १०४। कहां तक ? सौधर्म-ईशान तक। उसके आगे क्या होगा ? एकेन्द्रिय, स्थावर और आतप का बंध नहीं होगा, बाकी बंधेगी। कहां तक ऐसा होगा ?

सहस्रार तक क्योंकि वहां तक तिर्यंचगति भी बंध सकती है, मनुष्यगति भी बंध सकती है; तिर्यंचायु का भी बंध हो सकता है, मनुष्यायु का भी बंध हो सकता है। सहस्रार यानी कितने नंबर का है ? *श्रीता: बारह।* बारहवां, ऊपर के देव नियम से मनुष्यगति, मनुष्यायु का बंध करके मनुष्य में ही जन्मेंगे। वहां भी सदरचउक्क यानी चार कर्म वहां तक बंधेगे आगे नहीं बंधेगे। कौनसे ? तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, उद्योत और तिर्यंचायु का बंध वहां तक ही होगा। ऊपर के सभी देव मिथ्यादृष्टि हों या सम्यग्दृष्टि, वे नियम से मरकर मनुष्य में ही आयेंगे। हम ग्रैवेयक में भेजते हैं और वहां से डायरेक्ट एकेन्द्रिय में भेजते हैं ऐसा बिलकुल नहीं है। अनुदिश और अनुत्तर के सभी सम्यग्दृष्टि ही हैं, वे मनुष्य होंगे ही होंगे; परंतु आनत-प्राणत, आरण-अच्युत, ग्रैवेयक के मिथ्यादृष्टि भी मनुष्य में ही जन्मेंगे बिलकुल ऐसा नियम है। अलग-अलग मार्गणाओं में बंध कौनसे हो सकते हैं ? उदय कौनसे हो सकते हैं ? इसका ज्ञान होने पर हमें बिलकुल क्लॅरिटी होती है कि कौनसा जीव मरकर कहां जा सकता है, कहां नहीं जा सकता। यह बात हम बंध के द्वारा सोच सकते हैं, समझ सकते हैं।

मनुष्य में हमने सभी चौदह गुणस्थान देखे थे। तो बंधयोग्य सभी १२० प्रकृतियां घटित होती हैं। तिर्यंचों में क्या विशेषता है ? कोई भी तिर्यंच तीर्थंकर प्रकृति का बंध नहीं करता यानी जिस मनुष्य को तिर्यंचायु का बंध हुआ हो वह तीर्थंकर प्रकृति नहीं बांध सकता। नरकायु का बंध हुआ हो वह तीर्थंकर प्रकृति बांध सकता है; देवायु का बंध हुआ हो वह तीर्थंकर प्रकृति बांध सकता है; परंतु जिस मनुष्य ने मनुष्यायु का बंध किया है या जिस मनुष्य ने तिर्यंचायु का बंध किया है उसके तीर्थंकर प्रकृति नहीं बंधती। ये ऐसे ही कुछ गतियों के और बंध के नियम हैं। ये सारे हम नाना जीवों की अपेक्षा देख रहे हैं। यहां बंध प्रकृतियां, अबंध प्रकृतियां, व्युच्छित्ति जो बात देख रहे हैं इसको क्या कहेंगे ? नाना यानी अनेक जीवों की, अलग-अलग जीवों की अपेक्षा कौन-कौनसी प्रकृतियां उस गुणस्थान में बंध सकती हैं इसकी अपेक्षा बात है। एक जीव एक काल में जितनी प्रकृतियों का बंध करता है उसको हम बंधस्थान कहेंगे। बंधस्थान अलग बात है और बंधयोग्य प्रकृतियां अलग बात है। अभी तक हमने बात की है वह अनेक जीवों की अपेक्षा से बात की। कोई एक जीव एक काल में कितनी प्रकृतियां बांध सकता है उन बंधस्थानों की बात बाद में देखेंगे, जब बंधस्थानों का नंबर आयेगा।

अब हम उदय की प्ररूपणा देखेंगे। हमने बंध की बात देखी कि कितनी बंधती

हैं, कितनी अबंधरूप हैं, कितने की व्युच्छित्ति होती है - ये हमने गुणस्थानों में देखा है ऐसे ही उदय के बारे में देखेंगे। थोड़ा कन्फ्यूजन और बढ़ायेंगे। उदय का प्ररूपण पृष्ठ २७४ से शुरू हो जाता है। अभी तक बंध की ही बात चली, उसमें से हमने कुछ पॉईंट्स लिये हैं। उसमें स्थितिबंध, प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, आबाधाकांड, वगैरह बहुत सारी बातें कर्मकाण्ड के प्रथम शिबिर में हुयी थी। उन विषयों में से हमने केवल बंधव्युच्छित्ति गुणस्थानों में और मात्र गतिमार्गणा में देखी, ऐसे ही प्रत्येक मार्गणा में लगाना चाहिये। कैसे ? इन्द्रियमार्गणा में कोई एकेन्द्रिय जीव है उसके कितनी प्रकृतियां बंध सकती हैं, उसके कौनसी नहीं बंधेंगी यह सोच सकते हैं न ! उसके गुणस्थान कितने होंगे और कौनसी प्रकृतियां बंधेंगी। जैसे कोई भी एकेन्द्रिय जीव ना तो देवगति का बंध कर सकता है, ना नरकगति का बंध कर सकता है, ना उसके तीर्थंकर प्रकृति बंधेगी, ना आहारकद्विक बंधेगी; अन्य यथायोग्य प्रकृतियां उसके नहीं बंध सकती। इसतरह से यह सारा वर्णन इसमें है, हम उसको पढ़कर समझ सकते हैं।

कायमार्गणा में कायिकों की अपेक्षा; वनस्पतिकायिक, जलकायिक, वायुकायिक, अग्निकायिक की बात करेंगे। जैसे अग्निकायिक, वायुकायिक हैं वे मनुष्यगति को नहीं बांधेंगे, मनुष्यायु को नहीं बांधेंगे। उलटा उनकी सत्ता में ये प्रकृतियां होगी न; मनुष्यगति बांधनेवाला कोई तिर्यंच अग्निकायिक में उत्पन्न हुआ है तो वहां जाकर जो मनुष्यगति बंधी है उसका नाश कर देगा जिसको हम उद्वेलना कहते हैं। ये ऐसी-ऐसी बातें हम देखेंगे। ऐसे हर एक मार्गणा है, हमने जीवकाण्ड में मार्गणा का प्रकरण देखा था; प्रत्येक मार्गणा में कहां कितने का बंध होता है, कितने की बंधव्युच्छित्ति होती है उसका विस्तार से वर्णन है। इतने सारे पेजेस उसीमें चले गये। यहां मार्गणाओं में बंधव्युच्छित्ति बतायी है। अब हम उदय की थोड़ी बात यहां देखेंगे-

उदय संबंधी भी कुछ नियम हैं, जैसे हमने बंध के नियम देखे थे। तीर्थंकर प्रकृति किसको बंधती है, आहारकद्विक किसको बंधती है, आयु किसको नहीं बंधती, किसको बंधती है उसकी बात हमने देखी थी। अब उदय के बारे में भी ऐसे ही कुछ नियम हैं। बंध में हमने कितनी प्रकृतियों का हिसाब लगाया था ? *श्रोता: १२२ का।* १२० का बंध में। बंधनेवाली प्रकृतियां १२० है। उदय में १२२ की बात चलेगी क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति ये उदययोग्य प्रकृतियां हैं। उनका उदय पाया जाता है तो इसतरह से अभी यहां १२२ का हिसाब चलेगा। पृष्ठ २७४ पर हम एक पॅरेग्राफ

पढ़ेंगे फिर मैं समझाऊंगी। हम यहां गाथा २६१ की टीका पढ़ेंगे। **चारों प्रकार के बंध के निरूपण के पश्चात्**, चारों प्रकार के बंध यानी प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध और अनुभागबंध का बहुत विस्तार से वर्णन हो चुका है जो हमने कर्मकाण्ड के पहले शिबिर में विस्तार से देखा भी था। अब यहां **गुणस्थानों में उदय का नियम कहते हैं**। गुणस्थानों में उदय के निरूपण में नियम कहते हैं। कुछ नियम हैं; कहां, किसमें, कौनसी विशिष्ट प्रकृतियों का उदय चलता है उस संबंधी बातें विशेषरूप से बतायेंगे।

आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग का उदय प्रमत्त गुणस्थान में ही है। आहारकशरीर किसे कहते हैं यह हमने सिद्धान्त प्रवेशिका में पढ़ा था। किसको कहते हैं ? किसके होता है ? *श्रोता: मुनिराज को।* मुनिराज को, कौनसे ? *श्रोता: छठे गुणस्थानवाले को।* छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराजों को। हमने देखा था न, तत्त्व में शंका होती है तो मस्तक से एक हाथ प्रमाण सफेद पुतला निकलता है वगैरह; हमने अच्छी तरह से याद किया था। वह क्या सभी छठे गुणस्थानवर्तीवालों को होता है ? नहीं। उसमें भी किसका उदय निमित्त है ? आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग का उदय निमित्त है। जिन्होंने ये प्रकृतियां बांधी हुयी होगी उन्हींको उदय होगा। ये बंधती हैं ऊपर और उदय होता है नीचे, नहीं समझे ? उसका बंध होता है सातवें और आठवें गुणस्थानवाले को और उदय होता है छठे गुणस्थानवर्तीवाले को। छठे गुणस्थान के काल के अंदर-अंदर ही इसका उदय होता है और वहां आहारकशरीर की रचना होती है। बाकी आपको मालूम है- समवशरण में जहां भगवान विराजमान हैं, वहां तक जाकर वे अंतर्मुहूर्त के अंदर लौट आते हैं। वह छठे गुणस्थान से भी छोटा काल है। आहारकद्विक का उदय कहां है ? छठे गुणस्थान में ही है, अन्यत्र कहीं भी नहीं है।

आगे देखते हैं तीर्थंकर प्रकृति का उदय कहां होता है ? कौनसे गुणस्थान में ? *श्रोता: तेरहवें और चौदहवें में।* तेरहवें और चौदहवें गुणस्थान में तीर्थंकर प्रकृति का उदय है। बंध हमने चौथे से आठवें गुणस्थान तक देखा था, यहां उदय की बात चल रही है। मिश्रमोहनीय कहो या सम्यग्मिथ्यात्व कहो एक ही बात है, उसका उदय सम्यग्मिथ्यात्व यानी तीसरे गुणस्थान में ही होता है और सम्यक् मोहनीय यानी सम्यक् प्रकृति का उदय कहां होता है ? जिसको हम क्षयोपशम सम्यक्त्व या वेदक सम्यक्त्व कहते हैं ? चौथा, पांचवां, छठा और सातवां गुणस्थान- इन चार गुणस्थानों में ही उसका उदय हो सकता है, अन्यत्र नहीं। क्या-क्या नियम देखें हमने ? आहारकशरीर और

आहारकअंगोपांग का उदय कहां है ? *श्रोता: छठे गुणस्थान में।* छठे में। तीर्थंकर प्रकृति का उदय ? *श्रोता: तेरहवें और चौदवें गुणस्थान में।* तेरहवें और चौदहवें में। मिश्रमोहनीय का उदय ? *श्रोता: तीसरे में।* तीसरे ही में और सम्यक् प्रकृति का उदय ? *श्रोता: चौथा, पांचवां, छठा और सातवां गुणस्थान।* हां, चौथे, पांचवें, छठे और सातवें गुणस्थान में, ये उदय के कुछ नियम हैं। इतनी बात ख्याल में आयी ?

अब आगे- आनुपूर्वी के उदय में; गत्यानुपूर्वी नामकर्म को आनुपूर्वीकर्म कहेंगे। ये चार प्रकार के हैं; मनुष्यगत्यानुपूर्वी, नरकगत्यानुपूर्वी, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी और देवगत्यानुपूर्वी। इनका उदय मात्र विग्रहगति में ही होता है। इसका कार्य सबको पता है न, क्या है ? किसीका मरण हो गया, उसने पूर्व शरीर छोड़ दिया। वह अब आगे के भव में चला गया है और वहां अभी उसने शरीर धारण किया नहीं है। वहां पहुंचा नहीं है, वहां पहुंचने पर उसके संस्थान नामकर्म का उदय शुरू हो जायेगा, शरीर नामकर्म का उदय वहां शुरू हो जायेगा। अन्य भी अनेक प्रकृतियों का उदय वहां शुरू होगा। वहां जाने के पश्चात् वह नया आकार धारण करेगा, नया शरीर धारण करेगा। तब तक ? शरीर नहीं है परंतु आकार कौनसा है तब तक ? पूर्वभव का आकार कायम है। जैसे मनुष्य मर गया और अभी उसकी कुत्ते की पर्याय शुरू हुयी है परंतु कुत्ते का शरीर, कुत्ते का आकार उसने धारण नहीं किया है; वह मनुष्य के आकार का कुत्ता है। गत्यानुपूर्वी का उदय मात्र एक, दो या तीन समय तक ही होता है, वह भले बंधती है हर समय। जिस गति नामकर्म का बंध हो रहा है उसके उस गत्यानुपूर्वी का भी बंध होता है। परंतु उदय मात्र विग्रहगति में होगा, वह भी मोड़वाली गति में होगा। यदि सीधी गति से जाता है तो वहां उसका उदय भी नहीं होगा। वह प्रकृति ऐसे ही सत्ता में पड़ी रहेगी। ये गत्यानुपूर्वी के बारे में कुछ विशेष नियम हैं।

गाथा २६२ की टीका में कहते हैं **सासादन सम्यग्दृष्टि मरकर,** यानी दूसरे गुणस्थानवाला जीव मरकर अन्य भव में सासादन के साथ जाता है तो कहते हैं **नरकगति में नहीं जाता है**। यह नियम आपने गुणस्थानों में भी पढ़ा होगा कि सासादन में मरकर सासादन के साथ जीव देव में उत्पन्न हो सकता है, मनुष्य में उत्पन्न हो सकता है, तिर्यंच में उत्पन्न हो सकता है परंतु सासादन के साथ नरक में नहीं जाता। **इसलिये सासादन गुणस्थान में नारकानुपूर्वी का उदय नहीं है**। नरक जानेवाला जीव जो है, नारकी जीव सासादन में नहीं जा सकता। क्या कहा ? एक भव से दूसरे

भव में जाते हुये विग्रहगति में कौनसा गुणस्थान है उसकी बात चल रही है। जीव नरक जा रहा है उसके नरकगति का उदय है, नरकगत्यानुपूर्वी का उदय है पर वहां सासादन गुणस्थान नहीं होता। मैंने ऐसा नहीं कहा कि नारकी जीवों को सासादन नहीं होता क्योंकि जो वहां पहुंचे हैं, नरकपर्याय धारण की है, औपशमिक सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है वहां से गिरकर सासादन में आ गये ऐसे हो सकता है कि नहीं हो सकता है ? *श्रोता: हो सकता है।* क्यों ? क्योंकि वहां नरकगति का उदय है परंतु गत्यानुपूर्वी का उदय मात्र विग्रहगति में होता है। इसलिये किसी गुणस्थान में मरकर नरक में जायेगा तो नरक में पहले गुणस्थान में मरकर जा सकता है कि नहीं जा सकता है ? जा सकता है। वहां नारकानुपूर्वी का उदय होगा। सासादन में जीव मरकर जा सकता है कि नहीं जा सकता ? नहीं जा सकता। नरकगत्यानुपूर्वी का सासादन गुणस्थानवाले को उदय नहीं होगा। वहां जाने पर नारकी जीव सासादन में आ सकता है, उसको नरकगति का उदय होगा परंतु नरकगत्यानुपूर्वी का उदय नहीं होगा। यह सासादन के बारे में ख्याल रखने की बात है। अभी ये विशेषतायें बतायी हैं, किसका उदय कहां नहीं होता और किसका उदय कहां होता है ये बातें उन्होंने बता दी हैं ।

कौनसे नियम देखे ? आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग का उदय कहां होता है ? *श्रोता: छठे गुणस्थान में।* छठे में होता है। तीर्थंकर प्रकृति का ? *श्रोता: तेरहवें और चौदहवें गुणस्थान में।* तेरहवें और चौदहवें में। मिश्रमोहनीय का ? *श्रोता: तीसरे में।* तीसरे में और सम्यक् प्रकृति का ? *श्रोता: चौथा, पांचवां, छठा और सातवां गुणस्थान।* चौथे, पांचवें, छठे, सातवें गुणस्थान में। आनुपूर्वी में नरकानुपूर्वी का उदय किसको नहीं होता है? *श्रोता: सासादन में।* सासादनवाले को नरकानुपूर्वी का उदय नहीं होता है। ये कुछ नियम बताये हैं। इसके बाद कितनी प्रकृतियां उदययोग्य हैं और उनमें से कितने की व्युच्छित्ति होती है इसका अपना प्रकरण चलेगा। हम अभेद की विवक्षा से १२२ का हिसाब लगायेंगे, भेद १४८ होते हैं; हम भेदों की चर्चा नहीं करेंगे अभेदरूप से बतायेंगे।

देखो, २७५ पृष्ठ पर गाथा २६३ की टीका- **अभेद विवक्षा से उदय प्रकृति एक सौ बाइस हैं।** कितनी प्रकृतियों का उदय पाया जाता है ? १२२ का। यहां उदय के प्रकरण में नाना जीवों की अपेक्षा बात कर रहे हैं। एक जीव की अपेक्षा गुणस्थानों में जो कुछ बातें होंगी वे हम बाद में देखनेवाले हैं। नाना जीवों की अपेक्षा इन जनरल कितनी प्रकृतियों का उदय हो सकता है इसकी चर्चा चल रही है। उसमें **उदयविधि**

अर्थात् उदयव्युच्छित्ति अर्थात् विवक्षित गुणस्थान के ऊपर उदय का अभाव। अभी तक हमने क्या देखी थी ? बंधव्युच्छित्ति। उस गुणस्थान तक बंध है, ऊपर नहीं है तो हमने कहा था बंध की व्युच्छित्ति। उदय की व्युच्छित्ति किसको कहेंगे ? उस गुणस्थान तक उदय है, ऊपर के गुणस्थानों में उसका उदय नहीं है तो उसको कहेंगे उदय की व्युच्छित्ति। देखो, यहां हम पहले क्रम से उनकी संख्या देखेंगे। यहां चौदहवें तक गुणस्थान बतायें हैं, उदय चौदहवें तक है न ! बंध तेरहवें तक ही था।

उदय व्युच्छित्ति

गुणस्थान	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
व्युच्छित्ति	५ (१०)	९ (४)	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	२९	१३

उदययोग्य प्रकृतियां १२२ गति

नरक- ७६ तिर्यंच- १०७

मनुष्य- १०२ देव- ७७

यहां चौदह गुणस्थान बताये हैं, व्युच्छित्ति भी क्रम से लिखी है। पहले गुणस्थान में पांच भी लिखा है और दस भी लिखा, दूसरे में नौ और चार लिखा है- दोनों मिलकर चौदह होते हैं। इसमें दो अलग-अलग पक्ष हैं, आचार्यों की परंपरा से दो अलग-अलग उपदेश हमें प्राप्त हैं। जहां आचार्यों की परंपरा से दो उपदेश प्राप्त हैं तो हम नहीं कह सकते कि इसमें से कौनसा सच्चा है और कौनसा गलत है क्योंकि मूल परंपरा से ये बातें चली आयी हैं। अभी यहां कोई केवली नहीं है, तीर्थंकर नहीं है जिनको जाकर हम पूछ सकते हैं कि इनमें कौनसा सत्य है। स्वयं वीरसेन आचार्य ने धवला, जयधवला में लिखा है कि इसका निर्णय हम नहीं कर सकते, हमें करना भी नहीं चाहिये। जो उपदेश है उन दोनों ही धाराओं को हमें जानना चाहिये, समझना चाहिये, बताना चाहिये। हम अपनी ओर से नहीं कह सकते कि यह सच्चा है और यह गलत है। स्वयं वीरसेन आचार्य नहीं कह सके जिन्होंने टीकायें लिखी हैं, तो हम कौन हैं ऐसे कि उस पर अपना निर्णय दें ! इसलिये दोनों ही मत यहां लिख दिये हैं। हम किसी एक पक्ष की अपेक्षा वह प्ररूपणा करते रहेंगे। हम यहां ५, ९, १, १७ यह बात चलायेंगे। फिर भी वहां दूसरा उपदेश है। कोई कहते हैं कि १० की व्युच्छित्ति पहले में होती है और ४ की

दूसरे में होती है। कोई कहते हैं कि पहले में ५ की होती है और दूसरे में ९ की होती है। ऐसा कहने का क्या प्रयोजन है उसको भी हम यहां देखेंगे।

हम यहां देखेंगे पृष्ठ २७५, सेकंड लाइन- **विवक्षित गुणस्थान के**, विवक्षित यानी पर्टिक्युलर जिसकी हम बात कर रहे हैं। मान लेते हैं पहले गुणस्थान की, तो मिथ्यात्व कर्म का उदय पहले में है ऊपर कहीं नहीं है तो हम क्या कहेंगे ? मिथ्यात्व के उदय की व्युच्छित्ति पहले में हुयी। बंध की व्युच्छित्ति हमने देखी थी, अब यहां पर हमें उदय की बात करनी है। हम देखेंगे वे कौनसी प्रकृतियां हैं। पहले हम उनकी संख्या देखेंगे फिर जैसे बंध में हमने याद किया था न, ऐसे यहां पर भी देखेंगे हम। पहले गुणस्थान में ५ की उदयव्युच्छित्ति है, दूसरे में ९ की, तीसरे में १ की, चौथे में १७ की, पांचवें में ८ की, छठे में ५ की, सातवें में ४ की, आठवें में ६ की, नौवें में ६ की, दसवें में १ की, ग्यारहवें में २ की, बारहवें में १६ की और तेरहवें में २९ की, चौदहवें में १३ की उदयव्युच्छित्ति है। नाना जीवों की अपेक्षा है इसलिये। यहां पर २९ और १३ नाना जीवों की अपेक्षा बतायेंगे और एक जीव की अपेक्षा ३० और १२ कहेंगे। वे प्रकृतियां कौनसी हैं देखेंगे तब हम आपको उसकी बात बतायेंगे।

गुणस्थानों में उदय की व्युच्छित्ति कौन बतायेगा ? देखकर बताना है आपको। कौन कहना चाहते हैं ? सुशीलाबहन बताओ। *श्रोता: पांच, नौ, एक, सत्रह, आठ, पांच, चार, छह, छह, एक।* हां, ५, ९, १, १७, ८, ५, ४, ६, ६, १ यानी दसवें की १, फिर ग्यारहवें की ? *श्रोता: दो।* २, बारहवें की ? *श्रोता: सोलह।* १६, तेरहवें की ? *श्रोता: उनतीस।* २९ और चौदहवें की ? *श्रोता: तेरह।* १३, ये उदयव्युच्छित्ति की यहां हमने संख्या और उनके क्रम देखे, उनके नाम भी देखेंगे।

श्रोता: टोटल १२१ आ रही हैं। टोटल, १२१ आ रही हैं ? देखिये, कुल उदययोग्य प्रकृतियां १२२ हैं। तो सभी गुणस्थानों की उदयव्युच्छित्ति की टोटल - उनका योग भी १२२ होगा। हां, मैं समझ गयी आपकी टोटल १२१ क्यों आ रही हैं। आपके पास सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका जीवकाण्ड का प्रथम संस्करण होगा तो उसके पृष्ठ २७६ पर जहां चार्ट बनाया है उसमें सुधार करना है। दूसरे, तीसरे संस्करणों में यह सुधार किया हुआ है। वहां चार्ट में पहली पंक्ति में गुणस्थानों के नंबर लिखे हैं। दूसरी पंक्ति में उस गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों की व्युच्छित्ति होती है उसकी संख्या लिखी है। जहां

गुणस्थान की संख्या ९ लिखी है उसके नीचे व्युच्छित्ति की संख्या ५ होगी, उसके बदले आपको ६ करना है। हमारे घर पर सामूहिक स्वाध्याय में हमने जहां करेक्शन्स-सुधार करने हैं, वह बताये हैं। आप भी अपनी-अपनी पुस्तक में नौवें गुणस्थान के नीचे व्युच्छित्तिवाली पंक्ति में ६ लिखना। प्रूफ रीडिंग करते समय ऐसी कोई गलती रह जाती है मगर उसे सुधारना हमारा और आपका - सबका कर्तव्य है। हां, यह अच्छी बात है। नहीं-नहीं यह देखना ही चाहिये। हम व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियों के नाम देखते तो यह गलती पकड़ी ही जाती, आपके ख्याल में आ जाती। इनके नाम हम अब देखेंगे।

देखो, मिथ्यात्व में जो एक पक्ष बताता है जहां दस की व्युच्छित्ति बतायी है, पृष्ठ २७५, गाथा २६३ की टीका की तीसरी लाइन- **इस पक्ष में एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय इन नामकर्म के प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति मिथ्यात्व में कही** और दूसरे पक्ष में ये पांच प्रकृतियां हैं इनके उदय की व्युच्छित्ति दूसरे में कहेंगे। दो मत क्या हैं ? ये पांच प्रकृतियों के बारे में दो मत हैं कि इनके उदय की व्युच्छित्ति पहले में होती है कि दूसरे में होती है। एक मत के अनुसार पहले में होती है तो बेसिक पांच है उनमें ये पांच मिलायेंगे तो दस हो जायेगी और वहां चार रह जायेंगी। दूसरा मत क्या है ? पहले में ५ की होती है और ये ५ को अगर आगे पकड़ेंगे तो ५ और ४ नौ वहां पर दूसरे में हो जायेगी। ५ और ९ या १० और ४- हैं तो चौदह; पहले और दूसरे की मिलकर कितनी हैं ? *श्रोता: चौदह।* चौदह, इसमें दो मत क्या हैं ? एक मत के अनुसार इन पांच की व्युच्छित्ति पहले में होती है और दूसरे मत के अनुसार इनकी व्युच्छित्ति दूसरे में होती है। इनके अलावा भी और प्रकृतियां हैं न, कौन-कौनसी प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति होती है तो हम उनके नाम देखेंगे।

ये व्युच्छित्ति की प्रकृतियां कौनसी हैं ? पेज २७८, गाथा २६५ की टीका- देखो, **मिथ्यात्व गुणस्थान में मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण ये पांच प्रकृतियों की उदय से व्युच्छित्ति होती है।** इन पांच के बारे में कोई दो राय नहीं है, दोनों ही मत मानते हैं कि इन पांच के उदय की व्युच्छित्ति पहले में होती है। यानी इन पर्यायोंवाले जीव नियम से पहले गुणस्थान में ही हैं। **सासादन में अनंतानुबंधी चार, एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय इन नौ की उदय से व्युच्छित्ति हुयी।** हम सबको प्रश्न होना स्वाभाविक है कि इनको सासादन गुणस्थान कैसे कहते हैं। ये कौनसे जीव हैं ? एकेन्द्रिय हैं, द्वीन्द्रिय हैं, त्रीन्द्रिय हैं, चतुरिन्द्रिय हैं

इनमें सासादन गुणस्थान कैसे हो सकता है ? सासादन गुणस्थान में कौन आता है ? जो संज्ञी पंचेन्द्रिय जीव औपशमिक सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है और गिरकर सासादन में आता है इनमें कैसे सासादन कहा ? एक पक्ष ऐसा मानता है कि कोई जीव सासादन गुणस्थान में मरकर इन पर्यायों में उत्पन्न हुआ है; इन पर्यायों में उत्पन्न होकर बिलकुल थोड़े ही काल में - शरीरपर्याप्ति पूरी होने के भी पहले-पहले वह जीव मिथ्यात्व में चला जाता है। परंतु अत्यंत थोड़े काल के लिये ये सासादन में रहते हैं इसलिये एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय का उदय सासादन में भी कहा- इन जीवों की अपेक्षा से। जो सासादन में मरकर इनमें उत्पन्न होते हैं परंतु ये कैसे जीव हैं ? पर्याप्त हैं, बादर हैं; सूक्ष्म या अपर्याप्तों में सासादनवाले भी मरकर नहीं जाते। इतनी अपेक्षा लेकर ये दो मत हो गये हैं। तो कहीं पर इसकी अपेक्षा से उनका उदय भी कहेंगे।

हम अभी आगे यहां ५ और ९ ऐसा मत लेकर कथन करेंगे। हां, दूसरा मत गलत है ऐसा नहीं है क्योंकि हमें किसी एक को फॉलो करना है न ! बार-बार हम दोनों का कथन नहीं करेंगे। एक बार हम दोनों कथन कहेंगे कि एक के मत के अनुसार पहले गुणस्थान में ५ के उदय की व्युच्छित्ति होती है। कौनसे हैं ये ५ ? मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण। दूसरे मत के अनुसार इन पांच के साथ-साथ एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय इनके भी उदय की व्युच्छित्ति यहीं पर होती है। इनका उदय है और इनके उदयव्युच्छित्ति होती है। जो मत यहां दस को ॲक्सेप्ट करता है उनके लिये दूसरे की उदय की व्युच्छित्ति के लिये मात्र अनंतानुबंधी चार ही रहे। जो मत यहां पांच को ॲक्सेप्ट करता है तो बाकी पांच और अनंतानुबंधी चार- दूसरे गुणस्थान में नौ के उदय की व्युच्छित्ति होती है। अभी बार-बार उदय की व्युच्छित्ति सोचना है, बंध की नहीं। फिर दुबारा- मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण इन ५ के उदय की व्युच्छित्ति पहले में होती है।

दूसरे में अनंतानुबंधी चार, एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय। कोई कहेगा कि आतप को दूसरे में क्यों नहीं लिया एकेन्द्रिय के साथ ? क्योंकि आतप नामकर्म का उदय शरीरपर्याप्ति पूरी होने के बाद शुरू होता है और शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही सासादन गुणस्थान नष्ट होकर जीव मिथ्यात्व में चला जाता है। देखो, इतनी सूक्ष्मता की बात वहां होगी। इसलिये आतप के उदय की व्युच्छित्ति पहले में ही कही है। आतप नामकर्म का उदय एकेन्द्रियों के होता है, कब होता है ? शरीरपर्याप्ति

पूरी होने के बाद उसका उदय चालू हो जाता है, इसके पहले नहीं। ये बातें आपको अभी खाली इमॅजिनेशन ऐसी लगती हैं, जब हम नामकर्म के उदय के अलग-अलग स्थान सीखेंगे तब इसका इम्पॉर्टंस आपको ज्यादा ख्याल में आयेगा। हमने पहले दो गुणस्थानों में उदय की व्युच्छित्ति के नाम देखे थे। क्या है ? ५ और ९ ऐसा हम याद रखेंगे। आपको मेरे बाद रिपीट करना है- मिथ्यात्व, आतप। *श्रोता: मिथ्यात्व, आतप।* सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण। *श्रोता: सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण।* ये पहले गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति है। दूसरे गुणस्थान में ९ कौनसे रह गये? अनंतानुबंधी चार। *श्रोता: अनंतानुबंधी चार।* एकेन्द्रिय, स्थावर। *श्रोता: एकेन्द्रिय, स्थावर।* द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय। *श्रोता: द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय।* हां, इनके उदय की व्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में होती है। हम आगे बढ़ेंगे।

तीसरे गुणस्थान में कितना लिखा है ? *श्रोता: एक।* एक; तीसरे गुणस्थान में जिसका उदय है और जिसका उदय आगे कहीं भी नहीं है। कौनसी होगी ? *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व। उसका उदय तीसरे में है। आगे किसी भी गुणस्थान में उसका उदय नहीं है। पहले में भी नहीं था न ! तो वहां हमने उसको अनुदय कहा था, वहां व्युच्छित्ति नहीं कही थी। क्यों ? पहले में उदय नहीं था मगर तीसरे में था न ! हमने क्या देखा ऊपर ? ऊपर कहीं नहीं हो तो व्युच्छित्ति कहना और ऊपर हो और नीचे नहीं हो तब क्या कहना ? अनुदय कहना। आहारकद्विक का उदय कहां होगा ? *श्रोता: छठे में।* छठे में होगा, परंतु पहले पांच गुणस्थानों में आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग का उदय नहीं है तो वहां उनको अनुदय कहेंगे। छठे में उदय है और ऊपर कहीं उदय नहीं है तो छठे में उसकी व्युच्छित्ति कहेंगे। ऊपर कहीं नहीं होना चाहिये, नीचे नहीं होता है तो उसको अनुदय में रखेंगे। तीर्थंकर प्रकृति का उदय कहां है ? *श्रोता: तेरहवें और चौदहवें में।* तेरहवें और चौदहवें में। बारहवें गुणस्थान तक क्या कहेंगे ? *श्रोता: अनुदय कहेंगे।* अनुदय कहेंगे और व्युच्छित्ति कहां कहेंगे ? चौदहवें में कहेंगे। कहां उसको कहना और कहां नहीं कहना ये बात ख्याल में रखनी है। उनके नाम पुस्तक में लिखे हैं। इसको याद करना ही चाहिये ऐसी बात नहीं है। यह समझना चाहिये कि क्यों कह रहे हैं और इन शब्दों का क्या अर्थ है। जब हम पुस्तक पढ़ते हैं तो वह बात हमारे ख्याल में आती है कि नहीं आती है यह बात महत्व की है।

अभी हमने पहले तीन गुणस्थानों की उदयव्युच्छित्ति के नाम यहां याद किये।

कौन बताना चाहता है ? पहले गुणस्थान की ५ बतानी हैं आपको। *श्रोता: मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण।* मिथ्यात्व पहले बताया। मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण। दूसरे गुणस्थान की ९ हैं, कौन बतायेंगे ? *श्रोता: अनंतानुबंधी चार।* अनंतानुबंधी चार। *श्रोता: एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय।* द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय। तीसरे की ? *श्रोता: एक।* कौनसी ? *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व।

अभी हम चौथे की देखेंगे। चौथे में १७ के उदय की व्युच्छित्ति है। पहले में पहले कौनसी कषाय वहां उदय में से जायेगी ? *श्रोता: अनंतानुबंधी।* अनंतानुबंधी गयी है दूसरे में। चौथे गुणस्थान में अप्रत्याख्यानावरण का उदय है आगे कहीं नहीं है तो वह चार हम कह सकते हैं कि नहीं ? सत्रह में से चार आ गये। क्यों वहां उदय से व्युच्छित्ति हुयी है, इसका विचार कैसे करना वह मैं बताऊंगी आपको। पृष्ठ २७८, गाथा २६६ की टीका पढ़ेंगे- **असंयत में अप्रत्याख्यानावरण चार, वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग** हम देखते हैं- देवों में भी चार गुणस्थान हैं, नरक में भी चार गुणस्थान हैं। वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग का उदय देव और नारकियों के ही होता है, चौथे गुणस्थान के ऊपर किसीके उनका उदय नहीं होगा। यहां वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग के उदय की व्युच्छित्ति कही। नरकगति और नारकानुपूर्वी, देवगति और देवानुपूर्वी उनकी भी उदयव्युच्छित्ति यहीं पर कहेंगे। देवायु और नरकायु इनकी भी उदयव्युच्छित्ति यहीं पर कहेंगे।

अब रही मनुष्यगत्यानुपूर्वी और तिर्यंचगत्यानुपूर्वी। विग्रहगति में जीव जायेगा। मनुष्यगति का उदय चौदहवें तक है परंतु मनुष्यगत्यानुपूर्वी का उदय कहां तक है ? *श्रोता: चौथे गुणस्थान तक।* चौथे तक क्योंकि गत्यानुपूर्वी का उदय कहां होता है ? विग्रहगति में। विग्रहगति में कौनसे गुणस्थान हो सकते हैं ? पहला हो सकता है, दूसरा हो सकता है, चौथा हो सकता है तो मनुष्यगत्यानुपूर्वी के उदय की व्युच्छित्ति भी चौथे में होगी। तिर्यंचगत्यानुपूर्वी के उदय की व्युच्छित्ति भी चौथे में ही होगी क्योंकि तिर्यंचों में भले ही पांच गुणस्थान हैं, परंतु जो मरकर तिर्यंच में जा रहा है उसका अधिक से अधिक गुणस्थान चौथा हो सकता है। पहला हो सकता है, दूसरा हो सकता है, चौथा हो सकता है इसलिये इन दो गत्यानुपूर्वी को भी यहां पर लिया। आगे ये तीन रह गयी न अभी- दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति इनके उदय की व्युच्छित्ति यहां पर होती है।

अभी हमने १७ में से चार कौनसी देखी थी ? अप्रत्याख्यानावरण की चार। उसके बाद हमें देवगति और नरकगति संबंधी उदयवाली प्रकृतियां यहां सोचना है। तो हम देखते हैं देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, देवायु, नरकायु और उनके शरीर कौनसे ? वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग। इतनी सारी आप एक साथ बता दो। कितनी हुयी ? *श्रोता: बारह।* बारह हो गयी न ! देखो, देव और नरक की गति, गत्यानुपूर्वी, उनकी आयु; उनके शरीर वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग; ये आठ हुयी और पहले चार कषाय देखे थे। अभी अन्य दो आनुपूर्वी भी यहां बतानी हैं- मनुष्यगत्यानुपूर्वी, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी। कितने हुये ? चौदह हुयी न ! अभी तीन कौनसी रह गयी? *श्रोता: दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति।* दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति। अयशस्कीर्ति का उदय चौथे तक ही होगा आगे नहीं होगा, ये ऐसे नियम हैं। चौथे गुणस्थान में हमने १७ प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति देखी, बंध की व्युच्छित्ति कितने की देखी थी ? १० की देखी थी चौथे में, है न ! अभी हम चौथे तक ही रुकेंगे।

पहले में कितनी देखी हमने ? अभी हमें एक ही कोई फॉलो करना है। *श्रोता: ५।५* के नाम बतायेगा कोई ? *श्रोता: मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण।* मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण। दूसरे की ९ ? *श्रोता: अनंतानुबंधी चार।* अनंतानुबंधी चार। *श्रोता: एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय।* एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय ये हो गयी नौ। तीसरे की १ ? *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व और चौथे की १७ हैं। *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण चार।* देखो कषाय चार बताने हैं- अप्रत्याख्यानावरण चार। अभी हमें सोचना है कि देवगति और नरकगति की सभी बताना है यानी गति, गत्यानुपूर्वी और आयु; नरक संबंधी तीन, देव संबंधी तीन और उनके शरीर और अंगोपांग ये दो - आठ हो गयी। आठ और चार बारह हो गयी। अब मनुष्यगत्यानुपूर्वी और तिर्यंचगत्यानुपूर्वी भी यहीं बतानी हैं, चौदह हुयी। अब तीन ही याद करनी है- दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति। इसतरह से हमने चौथे गुणस्थान तक उदय की व्युच्छित्ति देखी है। आगे हम चौदहवें तक जायेंगे और वहां तक के उदय की व्युच्छित्ति देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३५. उदय, उदीरणा की व्युच्छित्ति

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रन्थ की रचना की है। उसके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड भाषाटीका लिखी है जिसका हिंदी अनुवाद हम पढ़ रहे हैं। विषय शुरू करने से पहले दो प्रश्न हैं उनकी चर्चा करके फिर आगे बढ़ते हैं।

प्रश्न: आबाधाकाल और अनुदय में क्या अंतर है ? आबाधाकाल हम किसको कहते हैं ? बंध होने के पश्चात् जितने काल तक उस समय में बंधे हुये कर्म उदय में नहीं आते उसको आबाधाकाल कहेंगे। हम हमेशा मिथ्यात्व की बात उदाहरण के तौर पर लेते हैं कि किसीके ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध होता है। देखो ऐसा नहीं कि हर जीव को ७० कोड़ाकोड़ी का बंध होता होगा। कभी-कभी ऐसा होता है कि चारों ही गतियों के जीवों में से एक भी जीव को ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध नहीं हो रहा है; ऐसा कितने काल तक हो सकता है ? अंगुल के असंख्यातवें भागप्रमाण काल तक हो सकता है। चारों ही गतियों में से एक भी जीव को इतना बंध न हो ऐसा हो सकता है क्योंकि हमें पता ही नहीं है न क्या-क्या बातें हैं तो हम हर एक को ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध कराते हैं। किसीको इतना उत्कृष्ट स्थितिबंध न हो ऐसा भी बन सकता है इसको कहेंगे उत्कृष्ट बंध का अंतर। चारों गति के जीवों की अपेक्षा उत्कृष्ट स्थितिबंध का अंतर इतना हो सकता है, परंतु हम उसको उदाहरण के तौर पर ले रहे हैं।

किसी जीव ने ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया; सात हजार वर्ष की आबाधा है, उदय की अपेक्षा आबाधा कह रहे हैं, बाद में उदीरणा की अपेक्षा आबाधा कहेंगे वह अलग बात है। सात हजार वर्ष तक उसकी आबाधा है। पहले जो निषेक रचना हुयी थी उसमें ७००० वर्ष अधिक एक समय, दो समय, तीन समय ऐसे शेष ७० कोड़ाकोड़ी सागर के जितने समय हैं उतने निषेक हैं। प्रत्येक समय में एक-एक लॉट है जिसको हम एक-एक निषेक कहेंगे। इसको निषेक रचना कहेंगे, जहां तक निषेक नहीं है उसको आबाधा कहेंगे। परंतु क्या आबाधाकाल में मिथ्यात्व का अनुदय चल रहा है ? यह मेरा प्रश्न है। सत्ता में पड़े हैं न, जिनका उदय चल रहा है हर समय। विशिष्ट समय में बंधे हुये की आबाधा है, परंतु उसी समय सत्ता में पड़े हैं क्योंकि मिथ्यात्व अनादि से है, उसका उदय भी चल रहा है। जिस समय बंध हो रहा है तो पूर्व

में बंधे हुये कर्म के उदय के बिना थोड़े ही बंध हो रहा है ? उस समय उसको अनुदय नहीं कह सकते। पूर्व में बंधे हुये कर्म जिनकी स्थिति पूरी हुयी है उनका वहां उदय चल ही रहा है, आबाधा तो किसी विवक्षित समय में बंधे हुये की अपेक्षा आबाधा कह सकते हैं। उस काल में कर्मों का सर्वथा अनुदय है ऐसी बात नहीं है। हम जो अनुदय बता रहे हैं, अनुदय में दोनों ही गर्भित हैं। जैसे हमने पहले गुणस्थान में आहारक और तीर्थंकर प्रकृतियों का अनुदय कहा। दूसरे गुणस्थान में वहां कितनी ही प्रकृतियों का अनुदय है न ! सम्यग्मिथ्यात्व का भी अनुदय है, सम्यक् प्रकृति का अनुदय है।

पहले गुणस्थान में कौन-कौनसी प्रकृतियों का उदय नहीं हो सकता ? तीसरे में जिसका उदय है ऐसी मिश्र प्रकृति, चौथे पांचवें आदि में उदय है ऐसी सम्यक् प्रकृति, छठे में उदय है ऐसी आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग और तेरहवें चौदहवें में उदय है ऐसी तीर्थंकर प्रकृति- ये सारी प्रकृतियां पहले गुणस्थान में अनुदयरूप कहलायेगी। उसको आबाधा नहीं कहेंगे। दूसरे गुणस्थान की बात सोचते हैं। पहले गुणस्थान में जो मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्तवाली प्रकृतियां उदयरूप हैं जिनकी पहले में उदय की व्युच्छित्ति हुयी है, दूसरे गुणस्थान में उनको क्या कहेंगे ? अनुदय कहेंगे। उसको आबाधा नहीं कहेंगे। आबाधा कुछ अलग बात है और अनुदय कुछ अलग बात है। *श्रोता: अनुदय के दो भेद हो गये ?* नीचे के गुणस्थानों में जिनका उदय नहीं है, ऊपर के गुणस्थानों में जो उदयरूप होती हैं, उनको नीचे के गुणस्थानों में अनुदय कहेंगे। हमने अभी पांच की बात की थी- मिश्र है, सम्यक् प्रकृति है, तीर्थंकर है, आहारकद्विक है, इनका ऊपर के गुणस्थान में उदय है, यहां नहीं है इसलिये अनुदय है; जिनके उदय की व्युच्छित्ति हो गयी है आगे के गुणस्थानों में उनको कहेंगे वे भी अनुदय हैं। अनुदय में दोनों ही प्रकार की प्रकृतियां हो सकती हैं- जो आगे चलकर उदय में आयेगी या जिनके उदय की व्युच्छित्ति हो गयी है।

यहां एक प्रश्न है। *कर्म प्रकृति की फल देने की शक्ति सिर्फ नोकर्म यानी शरीर तक है या शरीर के संबंधी पुत्र, मकान, स्त्री, पैसा तक भी है ?* इसके दो अर्थ हो सकते हैं- क्या हमारे कर्म हमारे पुत्रों को, स्त्री को भी फल देंगे ? ऐसा तो हो नहीं सकता। परंतु क्या हमें कर्म के उदय में पुत्र की प्राप्ति, स्त्री की प्राप्ति, पैसे की प्राप्ति होगी कि नहीं होगी ? यह यहां पंखा घूम रहा है वह कौनसे कर्म के उदय में घूम रहा है ? *श्रोता: साता।* साता और ठंड के दिनों में असाता ? ऐसा नहीं है। पर द्रव्यों का परिणमन

किसी भी कर्म के आधीन नहीं है। पुत्र का मिलना, स्त्री का मिलना, पैसे का मिलना किसी कर्म से नहीं परंतु उन चीजों को देख-देखकर हम साता या असातारूप होते हैं यानी सुख-दुःखरूप होते हैं। क्यों होते हैं ? वहां मोह पड़ा है इसलिये। संयोगों की प्राप्ति पुण्य से मिलती है यह कथन बहुत स्थूल है; जिसको कहेंगे न लौकिक व्यवहार है क्योंकि किसी भी कर्म के उदय में यह पंखा नहीं घूम रहा है। किसी भी कर्म के उदय में वहां का पैसा यहां नहीं आ रहा है या यहां का पैसा बाहर नहीं जा रहा है। परंतु उन संयोगों को देख-देखकर लोग हर्ष या विषाद करते हैं। देखो, साता-असाता के उदय का फल क्या है ? संयोगों में अनुकूलता भासित होना। अनुकूल संयोग मिलना साता का फल है यह कहने के लिये है, यह तो बच्चों को समझाने जैसी बात है।

हम करणानुयोग पढ़ रहे, कर्मकाण्ड पढ़ रहे हैं तो हमारे संयोग हैं वे संयोग अनुकूल होते हैं कि प्रतिकूल होते हैं यह कौन डिसाइड करेंगे ? पुत्र अनुकूल होते हैं कि प्रतिकूल होते हैं ? बचपन में अनुकूल लगते हैं, बड़े होने पर प्रतिकूल लगते हैं। तो पैसा अच्छा है न ! छोटे हो या बड़े हो सबको अनुकूल लगता है। अनुकूल होता तो चक्रवर्ती उन्हें क्यों छोड़कर चले जाते ? उसमें न अनुकूलता है न प्रतिकूलता है। वह इष्ट-अनिष्ट लगते हैं हमारे मोहभाव के कारण। हमारे मिथ्यात्व, रागद्वेष हैं तब तक परपदार्थों में हमें इष्टता-अनिष्टता लगती है। मोहनीय होगा तो ही वेदनीय का फल सुख-दुःखरूप मिलेगा। मोहनीय जब नहीं रहता तब वेदनीय का सुख-दुःखरूप फल भी नहीं मिलता। वह मिट्टी के ढेर के समान है। उसका उदय हो या नहीं हो उससे कुछ लेना-देना नहीं है। हम कहेंगे साता का उदय है, असाता का उदय है, केवली को भी कहेंगे। परंतु केवली के क्या है ? ना इन्द्रियज्ञान है और ना ही इन्द्रियजनित सुख-दुःख है। पुस्तक निकालो, उसके आधार से बतायेंगे, कर्म के आधार से बतायेंगे।

पेज २८१, गाथा २७३ के ऊपर पहली लाइन- **आगे पहले गुणस्थानवत् सयोगकेवली में भी साता-असाता का उदय होगा, ऐसी शंका को दूर करते हैं**। यानी जैसे साता-असाता के उदय का फल पहले गुणस्थानवाले को मिल रहा है वैसा ही; क्योंकि उदय चौदहवें गुणस्थान तक है। साता का भी उदय चौदहवें तक है, किसी जीव को असाता का उदय भी चौदहवें गुणस्थान तक है। पहलेवाले को जैसा फल मिलता है क्या ऐसा ही साता-असाता का फल चौदहवें गुणस्थान में, तेरहवें गुणस्थान में मिलता होगा ? यह प्रश्न है। स्वयं आचार्य ने उसका जवाब दिया है, गाथा पढ़ेंगे।

णट्ठा य रायदोसा इंदियणाणं च केवलिम्हि जदो।
तेण दु सादासादजसुहदुक्खं णत्थि इंदियजं ॥ २७३ ॥

हम संस्कृत छोड़ देते हैं, नीचे पढ़ेंगे। **सयोगकेवली के घातिकर्मों का नाश हुआ है।** घातिकर्म यानी कौन-कौनसे कर्म ? *श्रोता: ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय।* हां, ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय और अंतराय। इसलिये **राग के कारणभूत चारों प्रकार की माया**। ये चार प्रकार कौनसे हैं ? *श्रोता: अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन।* अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन ये **चारों प्रकार के लोभ, तीन वेद, हास्य-रति का**; क्या कहा ? इनको किसमें लिया ? राग में लिया। ये सारे रागरूप हैं और राग के कारणभूत हैं। नहीं समझे ? सभी कषाय और नोकषायों को राग और द्वेष में डिव्हाइड करना है तो राग में कारणभूत-निमित्तभूत कौनसे हैं ? माया, लोभ, वेद और हास्य-रति उसमें चारों प्रकार के माया, लोभ ले लेना। **और द्वेष के कारणभूत सभी चारों प्रकार के क्रोध, चारों प्रकार के मान और अरति, शोक, भय और जुगुप्सा इनका निर्मूल नाश हुआ है**। बिलकुल सत्ता में से पूर्ण नष्ट हो गये हैं। इनके उदय होने का कोई सवाल ही नहीं है। **अतः रागद्वेष नष्ट हुये हैं।** पुराने कर्मों के उदय में रागद्वेष उत्पन्न होते थे। अब इन कर्मों का समूल नाश हो गया है। यहां निमित्त की बात चल रही है। यहां रागद्वेष होने का कोई कारण नहीं रहा, एक बात। **पुनश्च** अभी दूसरी बात, **युगपत्** यानी ॲट अ टाइम **सकल प्रकाशी,** यानी सब कुछ जाननेवाले सर्वज्ञ, केवलज्ञान की बात चल रही है; सकल प्रकाशी पूरे लोक-अलोक को ॲट अ टाइम जाननेवाले, **ज्ञान में यानी केवलज्ञान में क्षयोपशमरूप परोक्ष मतिज्ञान और श्रुतज्ञान पाया नहीं** जाता। परोक्ष क्यों कहा ? यह इन्द्रियज्ञान कहेंगे, इन्द्रियजनित ज्ञान कहेंगे वह परोक्ष है। **इन्द्रियजनित ज्ञान नष्ट हुआ है**। यह बात ख्याल में आ रही है ? उनके केवलज्ञान है, आत्मा के द्वारा डायरेक्ट वे जानते हैं तो बीच में इन्द्रियों की मीडिया नहीं रही उनके। इन्द्रियजनित ज्ञान नहीं है, क्षयोपशमज्ञान नहीं है, क्षायिकज्ञान हुआ। **इस कारण केवली के साता-असाता वेदनीय के उदय से सुख-दुःख नहीं है**। उसका उदय नहीं ऐसा नहीं कहा। उसके उदय में उनके सुख-दुःख नहीं है।

केवली के सुख नहीं है ? *श्रोता: अतीन्द्रिय सुख है।* हां, उनके अतीन्द्रिय सुख है। अनंत सुख है परंतु यहां कौनसे ? इन्द्रियजनित सुख-दुःख की बात है। हमें वेदनीय

के उदय में कौनसे सुख-दुःख मिलते हैं ? या हम मान लेते हैं कि हमें मिल रहे हैं ? यह इन्द्रिय सुखों की बात है जो ॲक्चुअल में दुःखरूप ही हैं। कहते हैं कि **सुख-दुःख इन्द्रियजनित हैं**। सुख-दुःख यानी जो हर्ष-शोक के परिणाम होते हैं, हम जिसमें अपने को सुखी-दुःखी मानते हैं उनकी बात यहां चल रही है। एक और महत्व की बात **वेदनीय का सहकारी कारण मोहनीय का अभाव हुआ है।** मोहनीय के सद्भाव में ही वेदनीय का कार्य; कौनसा ? सुख-दुःख उत्पन्न कराने का; संपन्न होगा। जिसके मोह नष्ट हुआ है उसके वहां साता का उदय कहो या असाता का उदय कहो, उसका कुछ फल नहीं होगा, वह परमाणुओं का ढेर है। उनका उदय हो रहा है, वे खिर रहे हैं। उनसे ना इन्द्रियजनित सुख हो रहा है और ना दुःख। मोह ही नहीं है तो जीव पूर्ण सुखी है, अनंत सुखी है। मोह ही नष्ट हुआ है। आत्मिक अतीन्द्रिय आनंद का अनुभव हो रहा है उनके। इन्द्रियों से सुख नहीं है, यानी वेदनीय का उदय है परंतु उससे न सुख है, न दुःख है। पढ़ने के बदले मैं अपनी भाषा में समझाऊंगी तो आप जल्दी समझ जायेंगे।

केवली भगवान को साता का बंध हो रहा है हमने देखा था। बंध की व्युच्छित्ति तेरहवें में होती है तो केवलज्ञानी के साता का बंध है। परंतु वह कैसा है ? स्थितिबंध और अनुभागबंध उसमें नहीं है। प्रकृति बंध रही है, नंबर ऑफ परमाणु आयेंगे क्योंकि योग है। पूरा-पूरा एक समयप्रबद्ध अनंत परमाणुओं का सारा ही सातावेदनीयरूप से बंध रहा है और दूसरे ही समय में वह नहीं रहता वहां। एक ही समय के लिये वहां बंध है एक बात और दूसरी बात असाता का बंध नहीं है। स्थिति और अनुभागवाला जो बंध है सातावेदनीय का, वह कहां हो रहा था ? जब तक कषाय है तब तक स्थिति और अनुभाग का बंध हो रहा था। यानी दसवें गुणस्थान के अंत में जो सातावेदनीय बंधा वह शुभप्रकृति है तो बहुत अधिक अनुभागवाला बंधा। तब सत्ता में जो असाता के परमाणु पड़े थे उनमें से कुछ बंधनेवाले में संक्रमित होते हैं यह नियम है। सत्ता में सातारूप जो थे वे अधिक अनुभागवाले हुये, जो असातारूप थे वे कितने ही परमाणु सातारूप हुये और असाता का अनुभाग मंद होते-होते यहां तक आया है जो नहीं के बराबर रह गया है। नाम के लिये असाता रह गया है, उनमें असाता का कार्यरूप करने की कोई शक्ति बाकी नहीं है परंतु नाम मात्र का रह गया। इसको यहां कहेंगे असाता का उदय।

असाता के परमाणु असातारूप बंधे थे, उनका उदय है फल नहीं है इसलिये तत्त्वार्थसूत्र में कहा है न कि **'एकादश जिने', 'वेदनीये शेषाः'** २८२ पृष्ठ पर लिखा है,

देखो २७५ गाथा की टीका में। **इसी कारण केवली के निरंतर साता ही का उदय है तथा इसी कारण असाता के उदय से उत्पन्न** हमें जो क्षुधा तृषा आदि उत्पन्न होती है क्यों होती है? असाता वेदनीय की उदीरणा में होती है। जो रोग आदि होते हैं, वे क्या क्या है ? **क्षुधा, पिपासा, शीत, उष्ण, दंशमशक, चर्या, शय्या, वध, रोग, तृणस्पर्श, मल ये ग्यारह परिषह केवली के नहीं हैं। तत्त्वार्थसूत्र के कर्ता ने 'एकादश जिने' और 'वेदनीये शेषाः' कहा है वह कारणरूप असातावेदनीय के उदय में कार्यरूप परिषह का उपचार करके कहा है।** केवली के कोई रोग नहीं होते, उनके कोई क्षुधा नहीं, उनके कोई तृषा नहीं कुछ नहीं है। असातावेदनीय का उदय है इतना बताना था इसलिये उनके ये परिषह है ऐसा कह दिया, परंतु उनके ऐसा कुछ होता ही नहीं हैं। ऐसा नहीं कि उनके ऊपर उपसर्ग होते हो और वे सहन करते हों ऐसी बात है ही नहीं है। *श्रोता: आदि मूलभाव ?* कुछ नहीं है। असाता है इतना ही बताना था बस इतना ही प्रयोजन है। *श्रोता: असातावेदनीय की अपेक्षा ?* ये अपेक्षाओं से जो कथन है वह हमें बराबर बिलकुल समझना चाहिये। अब हम आते हैं अपने विषय पर।

यहां प्रश्न पूछा था कि बाहर की चीजें कौनसे कर्म के उदय में आती हैं और जाती हैं ? किसी भी कर्म के उदय में ना आती हैं ना जाती हैं। पुद्गल की जो कुछ रचना होती है, पुद्गल में जो कुछ बातें बनती हैं बिगड़ती हैं वे उनकी अपनी योग्यता से बनती हैं, उसमें हम कालद्रव्य को निमित्त कहेंगे। परंतु हम मान रहे हैं कि हमारे कारण वे बनती हैं और बिगड़ती हैं और हमने उनकी रचना की है। यह मंदिर किसने बनाया ? कौनसे परमाणु यहां लाना किसने नक्की किया ? वह तो बनते-बनते कोई परमाणु छूटकर हवा से उड़ गये न ! हमने कहीं से लायी थी मिट्टी, चुन-चुनकर पत्थर भी लाये थे। उसमें से कितने ही परमाणु उड़कर चले गये, कहीं आगे के खेत में जाकर गिर गये। उनका वह परिणमन किसने किया ? किसी भी परमाणु की रचना कोई भी जीव नहीं करता है। हमारे कर्म से कुछ नहीं आता जाता और जो कुछ आता भी होगा जिस कारण से, उन संयोगों से ना हमें दुःख होता है ना सुख होता है। फिर भी हम जन्म से मरण तक संयोगों को सुधारने के पीछे अपनी जिंदगी व्यर्थ खो देते हैं।

अभी हम आगे बढ़ेंगे। क्योंकि इन सिद्धांतों में घुस गये न, तो उसमें से बाहर निकलना पड़ेगा और फिर करणानुयोग में आना पड़ेगा। किसी भी अनुयोग की बात हम देखेंगे, सभी अनुयोगों का सार वीतरागता है। सबका सार वीतरागता ही है। हमें

भेदज्ञान करने के लिये सभी अनुयोग उतने ही कार्यकारी हैं। हमें भेदज्ञान करके अपने को पहचान कर निज आत्मा में स्थिरता करना हमारा प्रयोजन है। किसीको किसी अनुयोग में रुचि है, किसीको किसी अन्य अनुयोग में रुचि है परंतु कोई भी अनुयोग बेकार का नहीं है। तीर्थंकरों के टाइम पास नहीं हो रहा था, तो क्या टाइम पास करने के लिये करणानुयोग बताया ? नेमिचन्द्र आचार्य को टाइम पास नहीं हो रहा था इसलिये उन्होंने करणानुयोग की रचना की, ऐसा है क्या ? ऐसा है नहीं। लोग कहते हैं हमें आत्मा में स्थिर रहना है, करणानुयोग पढ़ते हैं तो बहुत विकल्प आते हैं। उन्हें टीव्ही के सामने कोई विकल्प आते ही नहीं हैं, क्यों, ऐसा है ? चलो, हम आगे बढ़ेंगे।

हमने चौथे गुणस्थान तक के उदय की व्युच्छित्ति देखी थी। अभी उदय की बात है, बंध की नहीं। हम पहले गुणस्थान में ५ की उदय की व्युच्छित्ति कहेंगे। याद है ? हां, बोलो-बोलो। *श्रोता: मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण।* मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण। दूसरे गुणस्थान में हमने ९ के उदय की व्युच्छित्ति देखी थी। *श्रोता: अनंतानुबंधी चार, एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय।* अनंतानुबंधी चार, एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय। तीसरे गुणस्थान में ? *श्रोता: सम्यग्मिथ्यात्व।* सम्यग्मिथ्यात्व। चौथे गुणस्थान में ? *श्रोता: १७ थी।* १७ थी। १७ याद हैं ? पहले चार कषाय बता दो, अप्रत्याख्यानावरण चार; उसके बाद देवगति और नरकगति संबंधी सभी प्रकृतियां बताना- देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, देवायु, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु और वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग ये आठ उस संबंधी हो गयी; आठ और चार बारह हो गयी। सभी गत्यानुपूर्वी यहीं कह देना है क्योंकि गत्यानुपूर्वी का उदय विग्रहगति में होता है और विग्रहगति में अधिक से अधिक चौथा ही गुणस्थान होता है। इसलिये अन्य दो गत्यानुपूर्वी भी यहीं बताना- मनुष्यगत्यानुपूर्वी और तिर्यंचगत्यानुपूर्वी। कितने हुये ? चौदह हो गये। अभी तीन ही रह गये। *श्रोता: दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति।* दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति। हां, दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति। अब हम पांचवें गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति देखेंगे।

अब पांचवें का विचार कैसे करना ? पांचवां गुणस्थान भले मनुष्यों में है, मनुष्य में आगे के गुणस्थान भी हैं। अन्य किस गति में होगा पांचवां गुणस्थान ? *श्रोता: तिर्यंचगति।* तिर्यंचगति; जैसे चौथा गुणस्थान देव और नारकी में होता है तो उन गति संबंधी प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति वहीं पर हमने कही। तिर्यंचों के पांचों गुणस्थान

हैं तो तिर्यंचगति संबंधी जो प्रकृतियां हैं उनके उदय की व्युच्छित्ति हम यहीं कहेंगे। पहले में पहले यहां का कषाय कौनसा है ? *श्रोता: प्रत्याख्यानावरण।* प्रत्याख्यानावरण चार हैं और अभी तिर्यंचगति संबंधी हमें और बताना है। तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, नीचगोत्र और तिर्यंचायु। *श्रोता: तिर्यंचगत्यानुपूर्वी चौथे में आ गयी।* तिर्यंचगत्यानुपूर्वी नहीं, अच्छा हुआ अपने याद दिला दिया। तिर्यंचगति, तिर्यंचायु, उद्योत और नीचगोत्र। देखो, हम २७९ पेज पर पढ़ेंगे **देशविरत में** यानी पांचवें गुणस्थान में **प्रत्याख्यानावरण चार, तिर्यंचायु, उद्योत, नीचगोत्र और तिर्यंचगति।** ये चार और चार मिलकर आठ। **प्रमत्तविरत** में अभी छठे गुणस्थान की बात कर रहे हैं, **छठे गुणस्थान में** हमने देखा जिसका उदय मात्र छठे में है उसकी व्युच्छित्ति भी यहीं पर होगी **आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग** और किसकी उदयव्युच्छित्ति होती है ? **स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा और प्रचलाप्रचला** ये तीन निद्रा और आहारक की दो मिलकर **पांच** की **उदयव्युच्छित्ति** छठे में होती है। अब आगे बढ़ते हैं।

अप्रमत्तविरत यानी सातवां गुणस्थान। हमने देखा था सम्यक् प्रकृति का उदय चौथे में है, पांचवें में है, छठे में है, सातवें में है। क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि के उसका उदय होता है, आगे श्रेणी में इसका उदय नहीं होता। जिसको सम्यक् प्रकृति का उदय है ऐसा जीव यानी क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि श्रेणी चढ़ने का कार्य नहीं करता। इसका उदय कहां तक है ? सातवें तक है। क्यों यहां उदयव्युच्छित्ति कह रहे हैं ? इसका कारण समझ में आये तो ये प्रकृतियां याद हो जाती हैं। आगे ये तीन संहनन बताये हैं, नीचेवाले तीन संहनन हैं। कौनसे तीन है ? *श्रोता: अर्धनाराच, कीलित और असंप्राप्तासृपाटिका संहनन।* अर्धनाराच, कीलित और असंप्राप्तासृपाटिका संहनन ये तीन संहनन, इनके उदय की व्युच्छित्ति सातवें गुणस्थान में होती है; इसका अर्थ ऐसा है कि ये तीन संहननवाले जीव ऊपर के गुणस्थानों में नहीं जा सकते।

पंचमकाल में मोक्ष क्यों नहीं होता ? *श्रोता: नीचे के संहनन के कारण।* ये करणानुयोग के नियम हैं कि इस काल में यहां ऊपर के तीन संहननवाले जीव जन्मते ही नही हैं। यहां आर्यखण्ड की बात चल रही है। पांचवें काल में यहां पर यानी ? अभी भरतभूमि की बात चल रही है जहां छह काल का परिवर्तन होता है। यहां पर नीचे के तीन संहननवाले जीव ही इस काल में जन्मेंगे। पुरुषों के भी ऊपर के तीन संहनन नहीं होंगे तो महिलाओं की तो बात छोड़ो। पुरुषों को भी इस काल में मोक्ष नहीं है। दूसरी

बात- स्त्रियों को मोक्ष क्यों नहीं ? ऐसी पार्शलिटि क्यों ? स्त्रियों के भी- ये कर्मभूमि की स्त्रियों को- ऊपर के तीन संहनन होते ही नहीं हैं। उनके भी नीचे के ही तीन संहनन हो सकते हैं। तो उनके भी मोक्ष नहीं होगा। उनको सातवां गुणस्थान तो कहो ! तो कहते हैं नहीं होगा क्योंकि जो द्रव्यस्त्रियां हैं शरीर से, जिनको हम कहेंगे द्रव्यस्त्री, उनके पांचवें गुणस्थान तक का पुरुषार्थ हो सकता है; उसके ऊपर के गुणस्थानों में जितनी अंतरंग स्थिरता होती है वह उनके नहीं हो सकती। करणानुयोग का अकाट्य नियम है कि द्रव्यस्त्री के पांचवें गुणस्थान तक का ही पुरुषार्थ हो सकता है।

पंचमकाल में पुरुषों को भी मुनि अवस्था तक का ही पुरुषार्थ होगा यानी छठे-सातवें गुणस्थान तक का। उत्तम संहननवाले ही श्रेणी चढ़ते हैं। ध्यान के विषय में सूत्र है न। उत्तम संहननवाले को अंतर्मुहूर्त तक ध्यान होता है '**एकाग्रचिन्तानिरोधो ध्यानमन्तर्मुहूर्तात्**'। उस उत्तम ध्यान की बात है, श्रेणीवाला जो ध्यान है उसकी वहां बात है। वह उत्तम संहननवाले को होता है, उत्तम संहनन यानी ऊपर के तीन संहनन। वज्रवृषभनाराचसंहननवाला है वह मोक्ष जायेगा, वह क्षपकश्रेणी चढ़ सकता है। तीनों ही ऊपर के संहननवाले उपशमश्रेणी चढ़ सकते हैं। आगे हम ग्यारहवें गुणस्थान में उसकी और बातें करेंगे। ये सारे उदय के नियम हैं उसीके कारण हम अन्य नियम बता देते हैं- इस काल में मोक्ष नहीं है, यह नहीं है वह नहीं है। क्यों नहीं है ? उसके पीछे ये कारण हैं। हमने देखा है **अप्रमत्तविरत** यानी सातवें गुणस्थान **में सम्यक्त्वमोहनीय, अर्धनाराच, कीलित, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन तीन**, **ये** मिलकर **सब** चार हुये। यहां ४ के उदय की व्युच्छित्ति है। यहां कितनी लिखी है ? *श्रोता: चार।* चार लिखी हैं न !

अपूर्वकरण- आठवें गुणस्थान **में हास्य, रति, अरति, शोक, भय और जुगुप्सा** ये **छह नोकषाय।** तीन वेद को छोड़ा है, बाकी छह जो हैं इनके उदय की व्युच्छित्ति यहीं हो जाती है। **अनिवृत्तिकरण में प्रकृतिनाश के अनुक्रम की अपेक्षा सवेदभाग और अवेदभाग में।** देखो, क्या कहते हैं ? सवेद यानी वेद के उदयवाला भाग। अवेद कहो या अपगतवेद- वेद का उदय जहां नहीं है उसको अवेद कहते हैं। नौवें गुणस्थान में शुरू में एक वेद का उदय है और वहां किसी एक कषाय का उदय है। तो यहां वेद का उदय मिट जायेगा। कौन-कौनसे वेदों का उदय हो सकता है श्रेणी में ? किसीके स्त्रीवेद का; यहां भाववेद की बात चल रही है, नहीं तो अभी हमने देखा स्त्री को पांचवें गुणस्थान के ऊपर के गुणस्थान नहीं होते और अभी आप कह रही हैं

कि स्त्रीवेद के उदय में। जो द्रव्य से पुरुष ही है और भावों की अपेक्षा जिसके स्त्रीवेद है, किसीके नपुंसकवेद है और किसीके पुरुषवेद है वे तीनों ही उपशमश्रेणी भी चढ़ सकते हैं और क्षपकश्रेणी चढ़कर मोक्ष भी जा सकते हैं। उनके नौवें गुणस्थान के पहले भाग तक ही वेद का उदय है, यहां वेद का उदय रुक जाता है, मिट जाता है तो उसको कहेंगे सवेदभाग तक वेद का उदय है। तो कौन-कौनसे वेदों के उदय की यहां व्युच्छित्ति होगी ? *श्रोता: तीनों वेद की।* तीनों वेदों की व्युच्छित्ति होगी। गाथा २६९ की टीका- **अनिवृत्तिकरण का वेदसहित जो सवेदभाग उसमें तो तीन वेद की व्युच्छित्ति हुयी।** ये तीन वेद जो कहा है वह अलग-अलग जीवों की अपेक्षा कहा है।

जिस जीव को जो वेद है, वह जन्म से मरण तक वही वेद रहता है। उस वेद में बिलकुल हेरा-फेरी पलटना कुछ नहीं होता है। *श्रोता: भाववेद में ?* भाववेद की ही बात चल रही है। द्रव्यवेद तो शरीर की रचना है। बाहर से ऑपरेशन किया, कुछ किया उससे कुछ नहीं होता है। ख्याल में आता है न ? क्योंकि वे बातें कर्मों के उदय के निमित्त से ही बनती है। यहां जो भाववेद की बात है; जन्म से कोई पुरुष है और उसको स्त्रीवेद है- स्त्रीवेद का अर्थ उसको पुरुष के प्रति आकर्षण है। पुरुष होते हुये भी पुरुष के प्रति आकर्षण है तो उसको हम कहेंगे कि यह भाव से स्त्रीवेदी है। पुरुष होते हुये भी उसको स्त्री और पुरुष दोनों के प्रति आकर्षण है तो उसको कहेंगे नपुंसकवेदी है और पुरुष होते हुये स्त्री के प्रति आकर्षण है जो सामान्य से देखा जाता है तो उसको कहेंगे यह पुरुषवेदी है। जन्म से जिसको जो भाववेद होगा वही वेद उसका मरण तक रहेगा या जब श्रेणी चढ़ेगा तो उसके वेद का उदय नौवें गुणस्थान तक रहेगा। वेदों का उदय है इसलिये नौवें गुणस्थान तक उसके परिणामों में ऐसी कुछ बातें होती हैं, यह बात नहीं है। पांचवें गुणस्थान में उसने ब्रह्मचर्य प्रतिज्ञा ली है, है न ! प्रतिमा ली है कि नहीं ? तो उसके भावों में कुछ खोट नहीं है, परंतु पूर्वावस्था बताने के लिये और कर्मों का अनुभाग घटते-घटते बहुत हीन यानी नहीं जैसा रह जाता है; उस अपेक्षा कहां तक उदय है यह बताने के लिये नौवें गुणस्थान के पहले भाग तक वेदों का उदय बताया है।

अवेदभाग में किसका-किसका उदय मिटता जायेगा ? क्रोध का, फिर मान का, फिर माया का, फिर बादरलोभ का। पूरे लोभ का उदय मिटा ऐसा हम नहीं कहेंगे क्योंकि दसवें में भी लोभ का उदय है। परंतु लोभ में अगर हम दो भाग करेंगे बादर यानी स्थूल, बादरलोभ और सूक्ष्मलोभ। सूक्ष्मलोभ को ही कृष्टि कहते हैं। अनुभाग का

घटना, लोभ का जो अनुभाग है, फल देने की शक्ति अत्यंत मंद होकर, अत्यंत हीन होकर सूक्ष्मरूप हो जाती है तो उसको कहेंगे सूक्ष्मलोभ, दसवें गुणस्थान में उसका उदय रहेगा। नौवें गुणस्थान में किसके उदय की व्युच्छित्ति होगी ? तीन वेद, संज्वलन क्रोध, मान और माया। लोभ की व्युच्छित्ति नहीं कहेंगे, अगर कहना है तो बादरलोभ कहना पड़ेगा। केवल लोभ कहेंगे तो दसवें में लोभ के उदय की व्युच्छित्ति हो जायेगी। इसलिये दसवें में एक मात्र लोभ के उदय की व्युच्छित्ति कही।

श्रोता: ये तीन वेद में से एक ही वेद होगा ? एक जीव को एक वेद होगा और यहां जो उदय की व्युच्छित्ति और बंध की व्युच्छित्ति बता रहे हैं, वहां हम नाना जीवों की अपेक्षा बात कर रहे हैं। किसीके नपुंसकवेद है, किसीके स्त्रीवेद है, किसीके पुरुषवेद है; कहां पर उनकी उदयव्युच्छित्ति होगी ? नौवें गुणस्थान के पहले भाग में उदय है, उनका उदय भी मिट जायेगा। बंध भी मिटा हुआ हमने देखा था। उदय किसीका भी हो- पुरुषवेद का हो, स्त्रीवेद का हो या नपुंसकवेद का हो, बंध कौनसा चल रहा था ? पुरुषवेद का ही बंध चल रहा था, क्यों ? नपुंसकवेद के बंध की व्युच्छित्ति पहले गुणस्थान में हुयी, स्त्रीवेद के बंध की व्युच्छित्ति दूसरे में हुयी। यानी तीसरे गुणस्थान से आगे सभी जीव पुरुषवेद का ही बंध कर रहे थे परंतु तीनों ही वेदों का उदय हो सकता है। कहां तक ? नौवें गुणस्थान तक। यह उदय और बंध को बार-बार, बार-बार सुनने से थोड़ा क्लिअर होगा। इसके लिये सुनना ही पड़ेगा, उसके बिना कन्फ्यूजन दूर नहीं होगा। आप कहेंगे सुनने से कन्फ्यूजन बढ़ रहा है। बढ़ नहीं रहा है। पहले कुछ मालूम ही नहीं था। अभी थोड़ा ऐसा मालूम हुआ तो लगता है कन्फ्यूजन हुआ ! कुछ कन्फ्यूजन नहीं है। जितना हम आगे स्टडी करते जायेंगे यह सारा ही कन्फ्यूजन दूर होकर स्पष्टता हो जायेगी, बिलकुल ज्ञान की निर्मलता हो जायेगी।

हमने नौवें गुणस्थान में तीन वेद और संज्वलन के तीन कषाय के उदय की व्युच्छित्ति देखी। दसवें गुणस्थान में १ है। कौनसा है ? *श्रोता: बादरलोभ।* बादर ? सूक्ष्मलोभ, बादरलोभ नौवें में गया। अब ग्यारहवें गुणस्थान में २ बताये हैं। कौनसे लिखे यहां पर ? **उपशांतमोह में वज्रनाराच और नाराच इन दो संहनन की व्युच्छित्ति हुयी।** ऐसा क्यों कहा ? क्योंकि उपशमश्रेणीवाला है। ग्यारहवें के बाद का गुणस्थान कौनसा है ? *श्रोता: क्षीणमोह।* गुणस्थानों के क्रम से, वह कहां जाता है इसकी बात नहीं है। पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा, पांचवां, छठा, सातवां, आठवां, नौवां, दसवां बाद में

ग्यारहवां। उसके बाद बारहवां, ग्यारहवेंवाला बारहवें में नहीं जा रहा है। हम व्युच्छित्ति की बात सोच रहे हैं तो ग्यारहवें में जो प्रकृतियां उदयरूप हैं और जो ऊपर के गुणस्थानों में यानी बारहवें में नहीं है उनकी व्युच्छित्ति यहां पर कहेंगे। नहीं समझे ?

ग्यारहवें में जिनका उदय है, हो सकता है; परंतु बारहवें, तेरहवें, चौदहवें में उदय हो ही नहीं सकता, उनकी उदयव्युच्छित्ति कहां कहेंगे ? *श्रोता: ग्यारहवें में।* ग्यारहवें में; ऐसी कौनसी प्रकृतियां हैं कि जिनका उदय यहां पर है परंतु बारहवें में हो ही नहीं सकता ? तो कहते हैं दो संहनन क्योंकि बारहवेंवाले को वज्रवृषभनाराचसंहनन का ही उदय रहेगा। परंतु ग्यारहवेंवाला जीव अन्य दो संहनन के साथ भी चढ़ सकता है। जिनके वज्रनाराच है और नाराच संहनन है उन जीवों को भी ग्यारहवां गुणस्थान प्राप्त हो सकता है, वे उपशमश्रेणी चढ़ सकते हैं। वज्रवृषभनाराचवाला चढ़ेगा उसमें कोई संदेह नहीं है। परंतु अन्य कौन चढ़ सकते हैं ? *श्रोता: वज्रनाराचवाले।* वज्रनाराच और नाराचवाले। इसलिये इनके उदय की व्युच्छित्ति ग्यारहवें में कही। इसका अर्थ ऐसा नहीं है कि ग्यारहवें में से कोई बारहवें में जा रहा है। ग्यारहवें तक उनका उदय है; बारहवें में, तेरहवें में किसीको नहीं, ऊपर कहीं भी नहीं है इसलिये इसको कहेंगे इनके उदय की व्युच्छित्ति ग्यारहवें में हुयी। बंधव्युच्छित्ति और उदयव्युच्छित्ति में इस गुणस्थान से उस गुणस्थान में जाता है कि नहीं इसकी बात नहीं है। यहां उदय है उसके ऊपर उदय नहीं है इतनी बात देखनी है, इसको व्युच्छित्ति कहेंगे हम।

अब बारहवें गुणस्थान की उदयव्युच्छित्ति देखते हैं। जिनका उदय बारहवें में है और ऊपर तेरहवें, चौदहवें में नहीं है उनको कहेंगे यहां उनके उदय की व्युच्छित्ति हो गयी। यहां जो उदयरूप हैं उनमें से व्युच्छित्ति कहेंगे तो कहते हैं अंत के दो समयों में कम्पेअर करेंगे। उपांत्य यानी आखिर से दूसरा, लास्ट से दूसरा - लास्ट बट वन। तो **द्विचरम** यानी **उपांत्य समय में निद्रा और प्रचला दो की उदय से व्युच्छित्ति** होती है। यानी निद्रा और प्रचला नाम की जो दो निद्रा हैं उनका उदय कहां तक है ? बारहवें गुणस्थान के उपांत्य समय तक। हम जैसे सोते हैं वैसी निद्रा नहीं होती है इनके। तो कैसा है ? बस अत्यंत मंद अनुभागवाली निद्रा का उदय वहां है इतना ही वहां बताना है। वैसे तो सारा श्रेणी का शुद्धोपयोग का ही काल है। फिर भी वहां जो कुछ यथायोग्य इनके उदय में कार्य बनता होगा वह केवलज्ञानगम्य है। इसका उदय यहां उपांत्य समय तक पाया जाता है। **अंतिम समय में पांच ज्ञानावरण, पांच अंतराय, चार**

दर्शनावरण ये चौदह और पहले की दो - कितने लिखे यहां पर ? *श्रोता: सोलह।* सोलह, बारहवें गुणस्थान में १६ की व्युच्छित्ति होती है। १६ हो गये टोटल- अंतिम समय में चौदह गयी हैं, निद्रा और प्रचला उपांत्य समय में गयी है। वह बारहवें गुणस्थान का ही उपांत्य समय है। बारहवें गुणस्थान में टोटल कितनी गयी हैं ? *श्रोता: १६।* दो और चौदह मिलकर १६। अगर उसको भेद करके बताना है तो हम कहेंगे उपांत्य समय में दो के उदय की व्युच्छित्ति हुयी और अंतिम समय में चौदह गयी तो टोटल १६ गयी।

अब सयोगकेवली में देखते हैं- सयोगकेवली में कितनी लिखी वहां पर ? *श्रोता: २९।* हां, उनतीस। २९ और बाद में १३- यहां नाना जीवों की अपेक्षा और एक जीव की अपेक्षा ऐसे अलग-अलग हैं। कहीं पर तीस और बारह भी लिखा है वह एक जीव की अपेक्षा है। कहीं पर २९ और १३ लिखा है। दोनों ही अपेक्षा बतायेंगे। पहले ये कौनसी प्रकृतियां हैं उसको देखेंगे। अभी हमने वेदनीय की बात की थी, किसीको सातावेदनीय का उदय है, किसीको असातावेदनीय का उदय है। इसतरह से उदय की व्युच्छित्ति है २८० पृष्ठ पर क्या लिखा ? **सयोगकेवली गुणस्थान में दो वेदनीय में से कोई एक वेदनीय** यानी एक जीव को तो कोई एक वेदनीय है न, उसका उदय वहां मिट गया है। **वज्रवृषभनाराच संहनन, निर्माण, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुस्वर-दुस्वर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, औदारिकशरीर और अंगोपांग, तेजसशरीर, कार्माणशरीर, संस्थान छह, वर्णादि चार, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास ये चार, प्रत्येक शरीर, इन तीस प्रकृतियों की उदयव्युच्छित्ति हुयी।** देखो, यहां तीस है कि उनतीस है इसका वर्णन आगे के पॅरेग्राफ में पढ़ेंगे।

पहले अयोगकेवली की बात कर लेते हैं। **अयोगकेवली गुणस्थान के अंतिम समय में दो वेदनीय में से एक कोई वेदनीय, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति।** देखो यहां दो वेदनीय में से एक वेदनीय कहा- किसीके साता, किसीके असाता इसलिये दो में से एक कहा। किसी जीव को साता का उदय है, किसीको असाता का उदय है। जिसको जिसका उदय है तो अन्य की व्युच्छित्ति कहेंगे हम वहां पर। किसी एक का उदय चल रहा है वह चौदहवें तक चलेगा। *श्रोता: असाता और साता दोनों का ?* असाता भी और साता भी। तीर्थंकरों के साता का उदय कहेंगे हम। सामान्य केवली को किसीको साता का उदय रहेगा, किसीको असाता का उदय होगा। परंतु कार्यरूप असाता नहीं समझना वहां। अयोगकेवली में कौन-कौनसे उदय हैं जिनके उदय की

व्युच्छित्ति होगी ? तो कहते है एक वेदनीय; घातिकर्म तो हैं नहीं, अघातिकर्मों में से सोचना है। तो एक **वेदनीय, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, सुभग, त्रस, बादर और पर्याप्त, आदेय, यशस्कीर्ति, तीर्थंकर, मनुष्यायु, उच्चगोत्र- बारह की व्युच्छित्ति हुयी।** वहां जो उदयरूप थी उसकी व्युच्छित्ति कहेंगे। **यह व्युच्छित्ति नाना जीवों की अपेक्षा कहते हैं। वहां सयोगी-अयोगी गुणस्थान में साता और असाता में से एक ही की व्युच्छित्ति कही है वह तो एक जीव की अपेक्षा कही है। नाना जीवों की अपेक्षा सयोगी गुणस्थान में साता और असाता दोनों की व्युच्छित्ति नहीं है।** यानी किसीके हुयी है मगर दूसरे को नहीं हुयी न ! दूसरे को उदय चल रहा है। किसीको एक का उदय है, किसीको दूसरे का- इसलिये एक की व्युच्छित्ति हो गयी ऐसा कह ही नहीं सकते। एक जीव की अपेक्षा कह सकते हैं, परंतु नाना जीवों की अपेक्षा नहीं कह सकते कि उसकी व्युच्छित्ति हुयी; चौदहवें में उदय नहीं है ऐसा नहीं कह सकते।

श्रोता: दोनों में से एक तो होगी ? किसीको है न, एक जीव की अपेक्षा कहेंगे तो उदय रुक गया उसका और अन्य जीव की अपेक्षा उदय है वहां पर। इसलिये उसकी व्युच्छित्ति नहीं कह सकते हम। साता, असाता को हमने गिना तो सही यहां, फिर भी नाना जीवों की अपेक्षा यह नहीं कह सकते कि यहां साता का ही उदय सबको होगा, असाता का किसीको नहीं होगा- ऐसा नहीं कह सकते। यदि ऐसा होता तो हम उसको व्युच्छित्ति में ले लेते। इसलिये नाना जीव और एक जीव ऐसी दो अपेक्षा बताकर यहां कहीं २९ और १३ कहेंगे, कहीं ३० और १२ कहेंगे। इसलिये ये नीचे की दो लाइन में लिख दिया है- **सयोगी अयोगी में एक जीव की अपेक्षा तीस और बारह की व्युच्छित्ति है और नाना जीवों की अपेक्षा उनतीस और तेरह की व्युच्छित्ति है।** इसमें कोई डिस्प्यूट नहीं है, दो मत नहीं हैं। अपेक्षायें दो लगती हैं- एक जीव की अपेक्षा और नाना जीवों की अपेक्षा।

अब इसी चार्ट में एक देखने लायक बात है। ये सारी उदय की व्युच्छित्ति जो अभी हमने देखी, कितनी ? ५, ९, १, १७, ८, ५, ४, ६, ६, १, २, १६, २९ और १३। अब नीचे क्या लिखा है ? उदीरणा की व्युच्छित्ति। यह उदीरणा क्या होती है उसको देखेंगे फिर उसकी व्युच्छित्ति भी देखेंगे। देखो, एक नियम है जिन कर्मों का उदय चल रहा है, उन कर्मों की उदीरणा भी होती ही है- ही लगाया है मैंने। क्या कहा ? फिर भी उसमें भी जिसकी व्युच्छित्ति हुयी है उसकी बाद में उदीरणा भी रुकेगी, केवल उदय चलेगा।

क्या कहा ? उलटी तरफ से कहेंगे। उदीरणा किन कर्मों की होती है ? *श्रोता: जिनका उदय चल रहा है।* जिनका उदय चल रहा है। उदय है इसलिये उदीरणा होती है वह बात नहीं है। उदीरणा क्या होती है ? जो उदयावली यानी उदय के समय से लेकर एक आवली काल तक के जो निषेक हैं उसको उदयावली कहते हैं। सत्ता में बहुत सारे कर्म पड़े हैं, कोड़ाकोड़ी सागरों के कर्म पड़े हैं। ऊपर के निषेक यानी जो लॉट उनमें से कुछ परमाणु वहां से छूट-छूटकर नीचे आते हैं, नीचे सर्वत्र डिपॉझिट होते हैं उसको अपकर्षण कहेंगे परंतु जो अपनी-अपनी जगह छोड़कर नीचे आते हैं और उदयावली में आकर मिल जाते हैं। क्या कहा ? उदयावली के ऊपर के जितने निषेक हैं उनमें से थोड़े-थोड़े परमाणु छूटकर उदयावली में आकर मिल जाते हैं, उदयरूप निषेक के साथ उनका भी उदय होता है उसको कहेंगे उदीरणा होती है।

ऐसी उदीरणा कौनसे कर्मों में होती है ? हां बोलो, चन्द्रपुरवाले ? *श्रोता: वेदनीयकर्म में।* वेदनीयकर्म में, उदीरणा पूछा मैंने, कर्मकाण्डवाले हैं न ! *श्रोता: आयु छोड़कर सभी।* आयु छोड़कर सभी ? मैं कहूं आयु सहित सभी, आयु में भी निरंतर उदीरणा होती है। हमारी मनुष्यायु का उदय चल रहा है। हमारे मनुष्यायु की उदीरणा भी विग्रहगति के पहले समय से चल रही है। जिसका उदय है उसकी उदीरणा है यानी उदीरणा किसकी होती है ? जिसका उदय चल रहा है। आयुकर्म की उदीरणा कब तक चलेगी ? गुणस्थानों की अपेक्षा देखना है तो छठे गुणस्थान तक ही आयु की उदीरणा होगी, ऊपर रुक जाती है। ऐसा ही स्वभाव है उस प्रकृति का। या अभी मरण आया है, कितने निषेक बाकी हैं ? एक आवली और उदीरणा किसको कहेंगे ? आवली के ऊपर के निषेकों के कुछ परमाणु नीचे के आवली में आते हैं। अभी ऊपर कुछ निषेक ही नहीं बचे, आवली मात्र ही निषेक शेष रहे हैं। मरण को एक आवली काल ही बाकी है तब उसकी उदीरणा नहीं होगी। नहीं तो आयुकर्म की भी उदीरणा हर समय चलती है। कौनसे आयु की ? जो हम भोग रहे हैं उसकी, जिसको भुज्यमान आयु कहते हैं। उसकी उदीरणा उसके उदय के पहले समय से निरंतर चलती है।

आयु का उदय कब होता है ? देखो, मनुष्य मरा, तो उसकी मनुष्यायु समाप्त हो गयी। अनंतर यानी नेक्स्ट समय में- एक समय का भी अंतर छूटे बिना; भले वह विग्रहगति में हो, दो मोड़वाला हो, तीन मोड़वाला हो या डायरेक्ट पहुंचा हो; उसकी जो नयी आयु है उसका उदय प्रारंभ होता है। गति का भी उदय उसी समय चालू होता है।

गति और आयु दोनों का उदय चालू हो जाता है, उसी समय से उसकी उदीरणा भी चालू होगी। अन्य कर्मों में भी, हर एक कर्म में उदीरणा होती रहती है। यहां उदीरणा किसकी होती है ? जिसका उदय है उसकी उदीरणा होती है। उसमें कुछ नियम हैं कि वेदनीयकर्मों की उदीरणा कब तक होती है ? छठे गुणस्थान तक होती है। साता कहो या असाता कहो इसकी उदीरणा कहां तक है ? छठे तक है। हमें आपको भूख क्यों लगती है ? असाता की उदीरणा होती है, तीव्र उदय होता है इसलिये वहां भूख लगती है। साता, असाता की उदीरणा कहां तक है ? छठे गुणस्थान तक है।

मुनिराजों को खाने की इच्छा कौनसे गुणस्थान तक होगी ? *श्रोता: छठे तक।* छठे तक क्योंकि असाता की उदीरणा छठे तक ही है। इसलिये आहारसंज्ञा भी छठे गुणस्थान तक कही है, सातवें से आगे आहारसंज्ञा ही नहीं है। केवली भगवान आहार लेते होंगे कि नहीं लेते होंगे ? नक्की करना करणानुयोग के आधार से। आपको कुछ भी डिसाइड नहीं होता हो न तो कर्मकाण्ड के शरण जाओ- सभी उत्तर उसमें गर्भित हैं। हम ऐसा कहते हैं, आप ऐसा कहते हैं ऐसी कोई बात नहीं है। करणानुयोग में कौनसे नियम हैं ? उदय के, उदीरणा के, बंध के, सत्त्व के सारे नियम यहां हैं और ये केवली भगवान ने जानकर कहे हुये नियम हैं। इसमें हमारी बुद्धि का कोई काम नहीं चलता है। हां, हमें उसमें कोई संशय हो तो करणानुयोग से दूर हो सकता है। अभी समय है तो उदीरणा की व्युच्छित्ति हम देखते हैं।

देखो, उदीरणा कब होगी ? जहां उदय है उसकी उदीरणा होगी। यदि उदय ही रुक गया तो उदीरणा होगी कि नहीं होगी ? मिथ्यात्व के उदय की व्युच्छित्ति पहले में है, मिथ्यात्व का उदय पहले में ही होता है। मिथ्यात्वकर्म का उदय पहले गुणस्थान में ही है, दूसरे आदि ऊपर के गुणस्थानों में नहीं है तो मिथ्यात्वकर्म की उदीरणा कौनसे गुणस्थान में होगी ? *श्रोता: पहले में।* तो उसकी व्युच्छित्ति भी पहले में ही होगी। इसलिये पहले गुणस्थान में भी ५ लिखा है, उदीरणा की व्युच्छित्ति भी पांच लिखी है। आगे दूसरे गुणस्थान में ९ के उदय की व्युच्छित्ति है; वह एक मत लेकर हम पढ़ रहे हैं अभी; तो उदीरणा की भी ९ की व्युच्छित्ति होगी। तीसरे गुणस्थान में सम्यग्मिथ्यात्व का उदय है और उसकी उदीरणा भी यहीं होगी, उसकी व्युच्छित्ति भी यहीं होगी उसके आगे नहीं होती। १७ प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति चौथे में है, उदीरणा की भी व्युच्छित्ति चौथे में ही होगी। पांचवें गुणस्थान में कितनी कही हैं ? *श्रोता: आठ की।* हां,

८ की है तो उदीरणा की भी व्युच्छित्ति ८ की होगी।

छठे गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति पांच की है और उदीरणा की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: ८ की।* ८ की लिखी है, क्यों ? छठे गुणस्थान के उदय की व्युच्छित्ति पांच की कही। कौनसे पांच ? आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग, स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा और प्रचलाप्रचला। हैं न कि कुछ अलग है ? मैं बिना देखे बोल रही हूं। इन पांच के उदय की व्युच्छित्ति है, और तीन कौनसी ॲड करना तो ये उदीरणा की व्युच्छित्ति होगी ? साता, असाता और आयु। अभी हमने बात की थी न ! इनकी उदीरणा छठे तक ही है इसलिये तीन यहां ॲड करना। साता का, असाता का और आयु का उदय कहां तक चलेगा ? चौदहवें तक। उदीरणा की व्युच्छित्ति कहां है ? छठे में। इसलिये वहां प्लस तीन किये, पांच में और तीन प्लस करके ८ कर दिये; साता, असाता, आयु। उनकी उदीरणा यहीं तक होगी, आगे उदीरणा नहीं होगी, उदय चलेगा। अब आगे बढ़ते हैं।

सातवें गुणस्थान में ४। कौनसी ४ ? एक सम्यक् प्रकृति और तीन संहनन नीचेवाले। आठवें गुणस्थान में ६ नोकषाय, वेद बिना। नौवें गुणस्थान में भी ६- तीन वेद और तीन कषाय। दसवें गुणस्थान में १। कौनसा है ? *श्रोता: सूक्ष्मलोभ।* हां सूक्ष्मलोभ है। ग्यारहवें में २ संहनन हैं। बारहवें में १६ हैं। किसी भी कर्म की उदीरणा चौदहवें में होती ही नहीं है। जिनकी उदीरणा हो रही थी वह तेरहवें तक ही होगी। जितनी उदय की व्युच्छित्ति है न तेरहवें और चौदहवें की मिलकर, इन सभी की उदीरणा की व्युच्छित्ति तेरहवें में कहेंगे। जिनके उदय की व्युच्छित्ति तेरहवें में है; कितनी बतायी हमने यहां ? *श्रोता: उनतीस।* उनतीस तेरहवें में और चौदहवें में ? *श्रोता: तेरह।* तेरह, दोनों मिलकर कितने हुये ? *श्रोता: बयालीस।* बयालीस। बयालीस में से तीन कम कर दो; कौनसे तीन कम किये ? जिनकी व्युच्छित्ति छठे गुणस्थान में हुयी थी, यहां पर उदय चल रहा है। वहां हमने ॲड की थी, यहां इनको मायनस करके गिनेंगे। बयालीस में से तीन गयी तो ३९ प्रकृतियों के उदीरणा की व्युच्छित्ति हो जायेगी यहां।

हम आपको याद करने को नहीं बोल रहे हैं। बात समझ में आती है कि नहीं यह जरूरी है। कारण सहित समझना है, बस इतनी बात है। हम बिलकुल अपेक्षा नहीं करते कि इसको आपको याद करना है, कोई बोझा मत रखना ! अपने आप याद हो जायेगा, नहीं हो तो भी चिंता नहीं, समझने की मुख्यता है। यह ऐसा क्यों कहते हैं ?

इनका क्या अर्थ है ? उदीरणा का क्या अर्थ है ? उसकी व्युच्छित्ति होती है यानी क्या होता है ? कहां किसकी होती है ? बस ये तीन की बात है न ! आयु, साता और असाता की उदीरणा की व्युच्छित्ति छठे में होती है बस इतनी बात है और बाकी कर्मों की ? आगे जिनका उदय है, उनके उदय की व्युच्छित्ति के साथ उदीरणा की व्युच्छित्ति होती है। तेरहवें के आगे कोई उदीरणा नहीं होती। तेरहवें में लास्ट पॉइंट है जहां उदीरणा रुक जाती है। उदय तो चौदहवें तक यथायोग्य का चलेगा, परंतु उनकी भी उदीरणा की व्युच्छित्ति तेरहवें में कहेंगे। इतनी बातें हमने उदय और उदीरणा संबंधी देखी थी।

श्रोता: फल किससे मिलता है ? उदय से या उदीरणा से ? हां, फल तो उदय से मिलता है; उदीरणा में अगर तीव्र उदय हो जाये तो उसका और ॲडिशनल फल। ऐसे आयु की उदीरणा होने से कुछ और फल नहीं मिलता क्योंकि थोड़े ही परमाणु आकर मिलते हैं। परंतु यह सहज प्रोसेस है कि जिसका उदय चलता है उसकी उदीरणा होती है। ऊपर के निषेकों में से कुछ परमाणु छूटकर नीचे आते हैं और नीचे सर्वत्र मिलते हैं उसको अपकर्षण कहेंगे। परंतु जितने उदयावली में आकर मिलते हैं उसीको उदीरणा कहेंगे। जिसका उदय है, हम मान लेते हैं कि साता का उदय चल रहा है तो साता की उदीरणा हो रही है। उस समय असाता का उदय नहीं है, परंतु असाता के भी ऊपर के निषेकों में से परमाणुओं का अपकर्षण होकर उदयावली के ऊपर दिये जाते हैं, जिसको सामान्य अपकर्षण कहेंगे। यह तो सभी कर्मों में चलता ही रहता है। थोड़ा अपकर्षण, थोड़ा उत्कर्षण चलता है, उसमें कौन-कौनसे नियम हैं उसकी बात करेंगे। परमाणुओं का ऊपर से नीचे आना, नीचे से थोड़ी उनकी स्थिति बढ़कर ऊपर चले जाना, अनुभागों का घटना-बढ़ना ये सब बातें अपने आप चलती रहती हैं। कर्मों की जो अलग-अलग अवस्था हैं न ! दस करण के रूप में उसको देखेंगे अभी।

कर्मों में ये अवस्थायें सहज होती हैं। जीव ने पुरुषार्थ किया इसलिये हुयी ऐसा कुछ नहीं है। आगे के गुणस्थानों में बहुत सारी निर्जरा हो जाती है वहां किस रूप से अपकर्षण बढ़ता है, किस रूप से गुणितप्रमाण में कैसी बातें होती है, गुणश्रेणी वगैरह होती है वह बात अलग है। परंतु सामान्य से उनकी जो अवस्थायें पलटती रहती हैं, वह चलता रहता है। इसमें उनका फल बदलता है ऐसी कुछ बात नहीं है। *श्रोता: उसमें यदि उदीरणा बढ़े या कम होये ?* कुछ नहीं होता क्योंकि एक-एक निषेक में अनंत परमाणु हैं। उनमें से थोड़े-थोड़े परमाणु नीचे आते हैं तो उसके फल में कुछ परिवर्तन

नहीं होता है। ना ही आयु घटती है और ना ही बढ़ती है।

श्रोता: भूख ? हां, भूख में ऐसा होता है कि असातावेदनीय का तीव्र उदय है, उसीके साथ उदीरणा भी होती है क्योंकि उदय है उसकी उदीरणा होती रहती है। उदीरणा होना, यह दो अर्थ में आती है। उदय के लिये भी उदीर्ण शब्द आता है, ण के ऊपर ऐसा रफार है, अनुदीर्ण यानी उदय नहीं होना और एक है उदीरणा अलग शब्द। केवल उदीर्ण कहेंगे तो उसका अर्थ उदय भी होगा। उदीरणा होती है यानी कुछ परमाणु नीचे आते हैं, उदयावली में मिलते हैं। जिसका उदय चल रहा है वह मंद अनुभागवाला है कि तीव्र अनुभागवाला है ? कितने परमाणु नीचे खिरते हैं उसका कुछ फल नहीं है। कितने अनुभागवाले कर्म हैं उसका फल मिलता है। तीव्र अनुभागवाला असातावेदनीय का उदय चलेगा तो वहां भूख लगेगी। किसीको रोग होगा। अन्य-अन्य बातें जो बनती हैं, हम देखते हैं यहां पर, वे साता-असाता के उदय में होती हैं।

श्रोता: जो कर्म आकर मिलते हैं उनकी स्थिति पूरी नहीं हुयी ? स्थिति पूरी नहीं हुयी थी परंतु वे अपनी जगह छोड़कर, अपनी स्थिति घटाकर, कम स्थितिवाले होकर एक आवली में उदय आने योग्य हो जाते हैं। यह सहज ऐसे कुछ परमाणु नीचे आते हैं। कोई-कोई आवली के ऊपर पड़े हैं परंतु जो उदयावली में एंटर हो गये न, वे फिर ऊपर नहीं जा सकते। उदयावली के ऊपर कुछ पड़े हैं तो नये बंध के साथ वे फिर ऊपर भी चले जा सकते हैं, उनका उत्कर्षण भी हो सकता है। तो आप पूछेंगे कोई अनादि का कर्म होगा न अपने पास ? हर बार उत्कर्षण होता है, हर बार उत्कर्षण होता है। पहले ७० कोड़ाकोड़ी का बांधा था फिर वह छूट नहीं पाया। फिर वह ऊपर चला गया नये बंध के साथ, ऐसा नहीं होता है। जिस समय बंधा है उसकी मॅक्झिमम स्थिति कितनी थी ? ७० कोड़ाकोड़ी सागर। वहां के कोई भी परमाणु ऊपर नीचे हो जावे तो भी ७० कोड़ाकोड़ी सागर के अंदर ही अंदर वे सब खिरकर निकल ही जायेंगे। उसके ऊपर उनका उत्कर्षण नहीं हो सकता, उसको उनकी शक्तिस्थिति कहते हैं। उस समय में बंधे हुये परमाणुओं का अपनी शक्तिस्थिति के ऊपर उत्कर्षण नहीं हो सकता। उदय के संबंधी कुछ नियम हैं उसकी बात हम थोड़ी देर में करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३६. उदय, अनुदय प्रकृतियां

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है और उसीका हिंदी अनुवाद हम देख रहे हैं। इसमें हमने बंध और उसकी व्युच्छित्ति का प्रकरण देखा है, उदय की व्युच्छित्ति के बारे में हमने बहुत सारी बातें देखी थी। एक प्रश्न आया है उसको देखकर हम आगे बढ़ेंगे।

प्रश्न: मराठी में लिखा है, *कदलीघाताच्या वेळी आयुची उदीरणा कशी होते ? आयु तर ठरलेलीच असते ? यानी कदलीघात के समय में आयु की उदीरणा कैसे हो सकती है या कैसे होती है ? आयु तो नक्की है न ?* यहां घात कहा है, ऊपर के निषेकों का पूर्ण घात होकर, नीचे के अंतर्मुहूर्त प्रमाण निषेकों में वें सब निषेक आ मिलते हैं; ऊपर कोई निषेक ही नहीं रहते हैं उसको कहेंगे कदलीघात हुआ, पूरा घात हुआ। निषेक रचना जो होती है न, एक-एक समय में एक-एक निषेक है। मान लेते हैं कोई सौ साल की आयु बांधकर आया था। अब पच्चीस साल में हम देखते हैं किसीका ॲक्सिडेंट हुआ। तो उस समय क्या हुआ ? उसके पचहत्तर साल के प्रत्येक समय में जो एक-एक निषेक बने थे वे सारे ही कट हो कर, पूरे के पूरे नीचे आ गये। अंतर्मुहूर्त प्रमाण समयों में उसके सभी परमाणु डिस्ट्रिब्यूट हो गये। कदलीघात उसीका होता है जिसके आगामी आयु का बंध नहीं हुआ है। क्या कहा ? क्योंकि जिसके आगामी आयु का बंध हुआ है; मान लेते हैं किसीने आयु का बंध किया है तो उसकी वर्तमान यानी भुज्यमान आयु समाप्त होने के बाद आगे की आयु का उदय होगा यानी उसकी आबाधा अभी निश्चित हो गयी है। जिसने आयु का बंध किया है उसने बांधी हुयी आयु की आबाधा निश्चित कर ली है, अब उसका उसके पहले मरण नहीं हो सकता।

हम देखते हैं न, कोई बहुत वृद्ध है, बहुत बीमार है, बहुत संकट आते हैं। लोग उनको मारना चाहते हैं - मरण आवे तो अच्छा होगा कहते हैं। परंतु जिसका आयु का बंध हुआ है उनका कदलीघात से मरण नहीं होता यह नियम है। वैसे कदलीघात से मरण ना नरकगति में होता है ना देवगति में होता है, ना भोगभूमि में। कहां होता है ? कर्मभूमि के मनुष्यों और तिर्यंचों में होता है, वह भी किसी-किसीका होता है, सबका होता होगा ऐसी बात नहीं है। उन्होंने ऐसे ही परिणामों में वह आयु बांधी थी कि वैसे

कदलीघात होकर निश्चितरूप से उसी समय उसी निमित्त से वैसे ही होना था। नहीं तो लोग कहते हैं कदलीघात हुआ, अधिक आयु बांधकर आया था तो क्रमबद्धपर्याय कहां है ? प्रश्न तो वही रहता है न ! वह भी उसी निमित्त से, उसी काल में वैसा होता है ही जो होना था। हमें दुःख होता है क्योंकि हमारी कोई प्रिय व्यक्ति हमें छोड़कर चली जाती है, परंतु यहां हमें सिद्धान्त देखना है, नियम देखना है कि उसमें क्या-क्या होता है।

कदलीघात होता है यानी ऊपर के इतने सारे, मान लेते हैं पचहत्तर साल के निषेक अभी बाकी थे, वह इतनी आयु बांधकर आया था, उन सारे निषेकों के परमाणु नीचे के अंतर्मुहूर्त प्रमाण निषेकों में आ मिलते हैं। वहां उस समय में आयु का बंध होता है और आयु का बंध होकर फिर अंतर्मुहूर्त काल में उसका मरण हो जाता है, इसको कहेंगे कदलीघात। हो सकता है करोड़ पूर्व की आयु बांधकर आया है और पर्याप्ति पूर्ण होने पर कदलीघात से अंतर्मुहूर्त में मर सकता है। करणानुयोग के ग्रंथों में इसकी सभी बातें बतायी हुयी हैं। यह पूरा घात हुआ है, केवल उदीरणा नहीं हुयी है। मात्र उदीरणा होती है, तो ऊपर के निषेक अपने-अपने स्थान पर मौजूद रहते हैं। आयु के पचहत्तर साल के प्रत्येक समय के निषेक हैं, उनमें से थोड़े-थोड़े परमाणु नीचे आते रहते हैं उसे आयु की उदीरणा कहते हैं। आयु जितनी है उतनी ही रहती है, उसमें कोई परिवर्तन नहीं होता। आयु में सामान्य उदीरणा होती है यानी वह कुछ बीमार पड़ता होगा या उसका जीना ज्यादा अच्छा हो जाता होगा ऐसी कुछ बात नहीं होती; क्योंकि परमाणु बढ़ने या घटने से कुछ नहीं होता है। उसके प्रत्येक निषेक में अनुभाग होते हैं और अनुभागों का फल मिलता है।

अभी एक बहन ने प्रश्न पूछा था कि *पंचलब्धि पुस्तक में ऐसा लिखा है कि जो निषेक रचना होती है उसमें नीचे के निषेकों में परमाणु ज्यादा हैं और ऊपर कम होते हैं और वहां अनुभाग ऊपर ज्यादा होता है, नीचे कम होता है ?* हां, क्योंकि ऐसा ही हम सीखे थे। परंतु अनुभाग संबंधी यह बात बिलकुल गलत है। क्यों ? क्योंकि अभी हमारा अभ्यास हुआ न, धवला भी पढ़े, जयधवला के भी चौदहवीं पुस्तक तक आ गये हैं। तो यह बात निश्चित है कि प्रत्येक निषेक में जघन्य अनुभाग से लेकर उत्कृष्ट अनुभाग तक के सभी परमाणु पाये जाते हैं, उदयरूप निषेक में भी। हम निषेक की रचना अलग दिखाते हैं और अनुभाग की रचना अलग दिखाते हैं। अनुभाग में हम नीचे जघन्य स्पर्धक यानी जघन्य अनुभागवाले परमाणु दिखाते हैं और ऊपर अधिक अनुभागवाले।

परंतु वहां वे कब उदय में आयेंगे उसकी अपेक्षा नहीं है, वहां मात्र अनुभाग की रचना है। जैसे स्कूल में हम हाइट-ऊंचाई के अनुसार अलग लाइन बनाते थे, मार्क्स मिलते थे उसके अनुसार अलग और नाम के अनुसार कुछ अलग नंबरिंग देते थे- हर एक की अपनी अलग-अलग अपेक्षा होगी। ऐसे ही स्थिति की अपेक्षा निषेक रचना करेंगे तो कब उदय में आयेंगे उसके अनुसार वहां रचना होती है। जहां अनुभाग की अपेक्षा बतायेंगे वहां कौनसे परमाणु में कितना अनुभाग है उसके अनुसार रचना दिखायेंगे। हम जिन परमाणुओं में कम अनुभाग है उनको नीचे और जिनमें अधिक अनुभाग है उसको ऊपर दिखायेंगे। नीचे-ऊपर किसमें ? अनुभाग की अपेक्षा में, उसका अर्थ निषेकों में नहीं लगाना है। नीचे के भी निषेकों में जघन्य से उत्कृष्ट अनुभाग तक सभी स्पर्धक हैं और ऊपर के, सबसे ऊपर के निषेकों में भी सभी स्पर्धक हैं।

हम जब पढ़ते थे तब ऐसा ही हमने सुना था, सीखा था, ऐसा हम बताते भी थे, ऐसा हमने कहीं लिखा भी होगा, परंतु अभी स्पष्टरूप से ग्रंथों में लिखा हुआ हमने पढ़ा है। अभी हम जयधवला पढ़ रहे हैं न, चौदहवीं पुस्तक में पृष्ठ ६१ पर, १७ पर कुछ है, ३२, ३५ पर- बहुत सारे पेज पर ये बातें आती हैं। प्रत्येक निषेक में जघन्य से उत्कृष्ट स्पर्धक पाये जाते हैं यानी वर्तमान जो उदयरूप निषेक है उसमें भी। देखो, हम कहते हैं न, जैसा उदय आयेगा- कर्म का तीव्र उदय आयेगा तो जीव को तीव्र राग-द्वेष करने पड़ेंगे, मंद उदय आयेगा तो मंद, ऐसा बिलकुल नहीं है। क्यों नहीं है ? क्योंकि वर्तमान उदयरूप निषेक में मिनिमम अनुभाग से मॅक्झिमम अनुभाग तक सभी परमाणु पड़े हैं। जीव जिस रूप से राग-द्वेष करता है उसरूप का उदय आया कहलायेगा, बाकी परमाणु उसरूप होकर उदय में आते हैं। जीव के अपने परिणामों के अनुसार कर्मों का अनुभाग चेंज होकर उदय में आता है। हम अपने को पराधीन समझते हैं न ! क्या करें ? हमारे कर्मों का तीव्र अनुभाग का उदय आता है तो हमें वैसा करना पड़ता है ऐसा लोग मानते हैं। ऐसा बिलकुल नहीं है, वहां सारे परमाणु पड़े हैं- तीव्र अनुभागवाले भी हैं, मंद अनुभागवाले भी हैं। आप तीव्र राग करते हो तो वहां तीव्र उदय कहलायेगा, मंद रागरूप परिणमित होते हो तो उसको मंद का उदय कहलायेगा।

हम अभी तक क्या समझते थे, उलटा-सुलटा ऐसा कुछ कि ऊपर के निषेकों में अनुभाग ज्यादा है, नीचे कम, ऐसा नहीं है। हमने कहीं लिखा था या बोला था मगर अभी हम सही बात जानते हैं फिर भी पहलीवाली बात पकड़कर रखेंगे तो वह योग्य

नहीं है। एक गाथा आती है न, गोम्मटसार में भी है- '**अजाणमाणो गुरुनियोगा**' बात है न ! हमने कोई बात सुनकर सच मानकर पहले समझा था समझाया था, मगर अभी जो सच बात है जो शास्त्रों के - आगम के आधार से जो बात मिलती है, वही बात सत्य है। अभी मई महीने में यहीं पर देवलाली में शिबिर हुआ था न, उस समय भी इन बातों की बहुत चर्चा हुयी थी और उसको स्पष्ट किया था। कुसुमबहन है न यहां पर, आपने भी ऐसा समझा था न पहले ? यह तो हमारे बहुतों से चर्चा हुयी थी इस बारे में।

अब अपना विषय चलेगा आगे। अभी तक हमने उदय की व्युच्छित्ति देखी। सभी गुणस्थानों में कितने-कितने की हुयी ? पहले में ५, दूसरे में ९, तीसरे में १, चौथे में १७, पांचवें में ८, छठें में ५, सातवें में ४। कौनसी ४ ? एक सम्यक् प्रकृति और नीचेवाले तीन संहनन। आठवें में ६ नोकषाय, नौवें में ६ - तीन वेद और तीन संज्वलन कषाय, दसवें में १ लोभ, ग्यारहवें में २ संहनन, बारहवें में १६, तेरहवें में २९ और चौदहवें में १३। ये उदय की व्युच्छित्ति के नाम भी हमने देखे हैं। हम जब पुस्तक निकालकर देखेंगे तो नाम हमें याद आ जायेंगे। अब हम उदय के संबंधी कुछ नियम देखेंगे। जैसे हमने बंध के संबंधी भी नियम देखे थे- खास करके कौनसी प्रकृति का बंध कहां होता है उसकी बात देखी थी। जैसे तीर्थंकर प्रकृति का बंध कहां होता है, आहारकद्विक का किसको कहां होता है उसकी बातें हमने देखी थी। अब उदय के कुछ नियम देखेंगे। नियम देखकर फिर हम जो यहां लिखे हैं कुछ गतियों में अलग-अलग बंध कितने हैं, उदय कितने हो सकते हैं, वह कैसे डिराइव्ह किया उसको भी देखेंगे।

यहां देखते हैं पेज २८७, गाथा २८५ की टीका- **विवक्षित पर्याय के प्रथम समय में** पर्याय यानी भव; पर्याय यानी ज्ञान की पर्याय, दर्शन की पर्याय, उस एक समय के पर्याय की बात यहां नहीं है। मनुष्यभव है उसको मनुष्यपर्याय भी कहेंगे। देवपर्याय है, मनुष्यपर्याय है, नरकपर्याय है, तिर्यंचपर्याय है। उस पर्याय के पहले समय में ही **उस विवक्षित** विवक्षित यानी पर्टिक्युलर, जिसकी हम बात कर रहे हैं। यानी मनुष्य की बात करेंगे तो मनुष्यपर्याय के पहले ही समय में मनुष्य**पर्याय संबंधी गति** यानी मनुष्यगति, दूसरी क्या है ? मनुष्यगत्यानुपूर्वी और मनुष्यायु का उदय होता है। अब हम देवपर्याय पर घटित करेंगे तो ? देवपर्याय के पहले समय में ही यानी विग्रहगति से अगर जाता है तो विग्रहगति के पहले समय में ही देवगति का उदय चालू हो गया है, देवगत्यानुपूर्वी का उदय चालू हो गया है, देवायु का भी उदय चालू हो गया

है, समझ में आयी बात ? जिस पर्याय में अभी जन्म लेने जा रहा है; अभी यानी ? वहां शरीर धारण किया नहीं है अभी तक, विग्रहगति में ही है; तभी से गति, गत्यानुपूर्वी और आयु तीनों का उदय होगा। हां, यदि वह एक ही समय में पहुंचनेवाला है, उस समय में गत्यानुपूर्वी का उदय नहीं होगा। गत्यानुपूर्वी का उदय मोड़वाली गति में ही होता है, मोड़ के पहले। आगे की बात, **एक पर्याय संबंधी समान गति, आनुपूर्वी और आयु का उदय एक जीव के युगपत् होता है।** यानी मनुष्यगति का उदय हो रहा हो और देवगत्यानुपूर्वी का उदय हो या नरकायु का उदय हो ऐसी बात होगी या नहीं ? जिस गति का उदय है, उसी नामवाली आनुपूर्वी का उदय होता है, उसी नामवाली आयु का उदय होता है; यह सहज समझ में आये ऐसी बात है।

अब आतप के बारे में बता रहे हैं। **आतप प्रकृति का उदय** किसके होता है ? **बादर पर्याप्त पृथ्वीकायिक जीव के ही होता है, अन्य के नहीं** और वह भी सूर्य विमान के जो पृथ्वीकायिक जीव हैं उन्हींके आतप नामकर्म का उदय है। आप सोचते होंगे किसी अग्निकायिक को उदय होगा कि नहीं होगा इसका ? नहीं होता है। उनके स्पर्श नामकर्म का उदय है, ऐसा उष्ण स्पर्श है। उनके आतप का उदय नहीं है। उच्चगोत्र का उदय किसको होता है ? देवगतिवालों को नियम से होगा और किसी मनुष्यों के होगा। देखो, नारकी और तिर्यंचों को नीचगोत्र का ही उदय होता है, मनुष्य में किसीके उच्चगोत्र है, किसीके नीचगोत्र है और देवों के उच्चगोत्र का ही उदय होता है। यह आगे की अच्छी बात है- **स्त्यानगृद्धि आदि तीन निद्रा का उदय मनुष्य और तिर्यंच में ही है, अन्यत्र नहीं है।** देखो जो देवों में, स्वर्गों में जाना चाहते हो न, तो यहां अच्छी तरह से खूब सो लो। देव में जाने पर वहां ऐसी गहरी नींद का सुख नहीं मिलेगा। स्वाध्याय में भी सोयेंगे, उसमें क्या है ! स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा और प्रचला-प्रचला का उदय कर्मभूमि के मनुष्यों के होता है। भोगभूमिवालों के भी नहीं होता है, ना देवों के होता है, ना नारकियों के होता है। यहां भी मनुष्यों और तिर्यंचों के होता है, छह पर्याप्ति हैं न, उसमें तीसरी इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण होने के बाद इसका उदय शुरू होता है यानी हो सकता है; कभी होगा, कभी नहीं भी होगा। ये इसके उदय संबंधी कुछ नियम हैं। *श्रोता: देवगति में उच्चगोत्र पाया जाता है, जैसे व्यंतरादि होते हैं उनके भी उच्चगोत्र होता है क्या ?* आपका प्रश्न ऐसा है कि देव के बहुत सारे भेद हैं; देवों में भवनवासी हैं, ऊपर के स्वर्गों में कल्पवासी हैं, कल्पातीत हैं, अन्य-अन्य जो भेद हैं, तो क्या सभी में

यह नियम लागू है कि वे उच्चगोत्रवाले हैं ? हां, देवगतिवाले सभी देव जिनको हम नीचजाति के देव कहते हैं उनके भी उच्चगोत्र का ही उदय है- व्यंतरों के भी। व्यंतर हैं, भवनवासी हैं, ज्योतिषी हैं उन सबके उच्चगोत्र का उदय पाया जाता है, जिनको हम भवनत्रिक कहेंगे। यह इतने उदय के नियम देखे न, हम आगे बढ़ेंगे।

अभी मैंने आपको बताया थी संख्यात वर्ष की जिनकी आयु है ऐसे कर्मभूमि के मनुष्य और तिर्यंच- संख्यात वर्ष यानी करोड़ पूर्व तक को संख्यात वर्ष कहेंगे। संख्यात यानी करोड़ पूर्व वर्ष प्लस एक समय आयुवाले भोगभूमिवाले कहलायेंगे। वे भले हैं संख्यात वर्षायुष्क फिर भी उनको असंख्यात वर्षायुष्क कहेंगे, क्योंकि बाकी मेजॉरिटी असंख्यात वर्षोंवाले हैं न। वहां पल्यों की आयु होती है- एक पल्य, दो पल्य, तीन पल्य तो उस हिसाब से उनको असंख्यात वर्षायुष्क कहते हैं। यह कर्मभूमि के मनुष्य और तिर्यंचों के भी इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण होने के पश्चात् इनका उदय होगा। छह पर्याप्ति होती हैं- कहीं से मरकर जीव आता है, पहली आहारपर्याप्ति, फिर शरीरपर्याप्ति, फिर इन्द्रियपर्याप्ति, उसके बाद उच्छ्वासपर्याप्ति, फिर भाषापर्याप्ति और फिर मन:पर्याप्ति पूर्ण होती है। इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण होने के पश्चात् स्त्यानगृद्धि आदि तीन प्रकृतियां उदययोग्य हैं। हर जीव को उनका उदय होगा यह बात नहीं, परंतु उनका उदय कब हो सकता है ? ये तीन पर्याप्ति पूरी होने के पश्चात्। वहां भी किसके नहीं है ? मनुष्यों के है वह तो कह दिया, परंतु स्पेशल मनुष्यों के नहीं होगी। तो ये कौनसे हैं ? आहारकऋद्धि और वैक्रियिकऋद्धि धारक मनुष्य, यें ऋद्धियां हैं उनके। आहारकऋद्धि तो समझे न ? आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग का उदय होता है; जिनके वह आहारकऋद्धि है, उनके स्त्यानगृद्धि आदि तीन प्रकृतियों का उदय नहीं पाया जायेगा।

हम आगे बढ़ते हैं, अभी यहां चौथे गुणस्थानवाले की बात है। स्त्रियों के चौथा गुणस्थान होगा या नहीं होगा ? होगा न ! चौथा क्या पांचवां भी होगा। कोई सम्यक्त्व के साथ मरकर, स्त्री हो या पुरुष हो, मरकर स्त्रीपर्याय में उत्पन्न होगा कि नहीं होगा ? नहीं होगा। हो ही नहीं सकता, वह नियम से पुरुषपर्याय में ही उत्पन्न होगा। गाथा २८७ की टीका में क्या लिखते हैं देखो- **निर्वृत्तिअपर्याप्त असंयत** निर्वृत्तिअपर्याप्त यानी जिसकी पर्याप्ति पूरी नहीं हुयी है परंतु जो चौथे गुणस्थानवाला है, उस समय वह चौथा गुणस्थान प्राप्त नहीं करता है। उसके चौथा गुणस्थान कैसे आया ? पूर्व भव से सम्यक्त्व

के साथ मरकर आया है, उसको कहेंगे निर्वृत्तिअपर्याप्त असंयत। प्रतिभाताई, क्या कहा ? निर्वृत्तिअपर्याप्त अवस्था यानी जिसकी पर्याप्ति अभी चल रही है, पूर्णता की ओर चल रही है, उस अवस्था में कोई वहां सम्यक्त्व प्राप्त नहीं करता है; मिथ्यादृष्टि से सम्यग्दृष्टि नहीं होता, एक बात। पूर्व भव में कोई चौथे से ग्यारहवें गुणस्थान तक कहीं पर भी मरा तो विग्रहगति में वह चौथे गुणस्थान में आयेगा और चौथे गुणस्थान के साथ अन्य भव में आयेगा तो वहां उसको कहेंगे निर्वृत्तिअपर्याप्त असंयत।

निर्वृत्तिअपर्याप्त असंयत गुणस्थान में स्त्रीवेद का उदय नहीं है यानी उस जीव को पुरुषवेद ही रहेगा **क्योंकि असंयत सम्यग्दृष्टि मरकर स्त्री में जन्म नहीं लेता**, ख्याल में आयी बात ? वहां स्त्रीवेद के उदय का निषेध किया है। नपुंसकवेद का उदय होगा कि नहीं होगा ? नारकी की अपेक्षा हो सकता है, पहले नरक की अपेक्षा होगा। अन्यत्र कोई कहीं सम्यग्दृष्टि है और मनुष्य में सम्यक्त्व के साथ जन्म ले रहा है तो उसको ना स्त्रीवेद का उदय होगा, ना नपुंसकवेद का उदय होगा, वह पुरुषवेद सहित ही जन्मेगा। **तथा घर्मा नरक बिना नपुंसकवेद का भी उदय नहीं है** यानी जो सम्यक्त्व के साथ पहले नरक में जाते हैं वहां एक ही वेद है, अन्य वेद वहां है ही नहीं। तो वहां गुणस्थान कोई भी क्यों न हो, वहां सबके नपुंसकवेद ही है। इसलिये पहला एक नरक छोड़ा, घर्मा नरक यानी पहला नरक, क्यों ? सम्यक्त्व के साथ यदि कोई नरक में जा सकता है तो पहले ही नरक में जायेगा, नीचे के नरकों में सम्यक्त्व के साथ उत्पन्न नहीं हो सकता; वहां जाने के पश्चात् सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है, परंतु सम्यक्त्व लेकर कोई नहीं जायेगा। क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो या कृतकृत्य वेदक यानी जिसने क्षपणा प्रारंभ की है और क्षपणा के लिये अभी अंतर्मुहूर्त बाकी है ऐसा जीव मरकर पहले नरक में सम्यक्त्व के साथ जायेगा। कोई भी जीव वेदक सम्यक्त्व के साथ नरक में जाता ही नहीं है। पहले तिर्यंचायु बांधी है ऐसा सम्यग्दृष्टि भोगभूमि का तिर्यंच बनेगा, वह भी क्षायिक होगा तो ही बनेगा। कर्मभूमि का मनुष्य जिसने पहले मनुष्यायु बांधी है वह भोगभूमि का मनुष्य होगा- सम्यक्त्व के साथ की बात है। मिथ्यात्व के साथ जा सकता है, सम्यक्त्व के साथ जायेगा तो उसके क्षायिक सम्यक्त्व होना आवश्यक है। ये ऐसे कुछ नियम हैं।

यहां कहते हैं **जिसने पहले नरकायु बांधी है ऐसे ~~तिर्यंच और~~ मनुष्य**, यह तिर्यंच क्यों कहा पता नहीं है, **सम्यक्त्व सहित मरकर घर्मा नरक में ही उत्पन्न होते**

हैं। यहां लिखा है परंतु कोई भी तिर्यंच सम्यक्त्व के साथ नरक में नहीं जायेंगे क्योंकि अभी हमने देखा है न रूल- क्षायिक सम्यक्त्व होना आवश्यक है। परंतु जहां जैसा अनुवाद करना पड़ा, मैंने जो मूल पुस्तक में लिखा था वैसा यह लिख दिया है। परंतु जहां कोई परिवर्तन किया है कहां-कहां सुधारा है, कहां सुधारना चाहिये वगैरह बात प्रस्तावना में लिखी है। उसमें से एक बात यह भी है। क्षायिकवाला या कृतकृत्य वेदकवाला मनुष्य ही सम्यक्त्व के साथ नरक में उत्पन्न हो सकता है। कोई नारकी भी सम्यक्त्व के साथ तिर्यंच में नहीं जायेगा, सम्यक्त्व के साथ जन्मेगा तो मनुष्य में ही आयेगा। कोई सम्यग्दृष्टि तिर्यंच सम्यक्त्व के साथ जायेगा तो देव में ही जायेगा, मनुष्य में भी नहीं आयेगा। ऐसे नियम हैं, कौनसे जीव कौनसे कर्म बांधते हैं, क्या है उसकी सब बातें निश्चित हैं उसके ॲकॉर्डिंगलि ये नियम बनते हैं। हमें सब कुछ याद नहीं है न, फिर भी मैं जो रूल बता रही हूं वे इन बंध और उदय के रूल्स पर ही आधारित हैं।

श्रोता: तिर्यंच नरकायु बांधकर भी सम्यक्त्व प्राप्त सकता है ? हां, सम्यक्त्व प्राप्ति में कोई बाधा नहीं है। चारों गति का कोई भी जीव बद्धायु हो, कहीं की भी आयु बंधी हो तो सम्यक्त्व प्राप्त सकता है। परंतु देवायु के बिना अन्य; अभी मनुष्य तिर्यंच के बारे में; देवायु के बिना उसने मनुष्यायु बांधी है, तिर्यंचायु बांधी है, नरकायु बांधी है तो पांचवां गुणस्थान भी प्राप्त नहीं हो सकता। सम्यक्त्व होने में बाधा नहीं है, नरकायु भी क्यों न बंधी हो उसके सम्यक्त्व हो सकता है पर वह सम्यक्त्व के साथ मरकर नरक में नहीं जायेगा यह बात है। *श्रोता: क्षायिक लेकर ही जायेगा ?* क्षायिक लेकर, क्षायिक तो मनुष्य में ही होगा, तिर्यंच में नहीं। यहां लिखा है वह ठीक नहीं है अपने नियम के साथ। ऐसे एक दो जगह बात आयी है कि नियम के साथ वह मिलता नहीं। आगे इसीका निराकरण किया है कि जा नहीं सकता ऐसा आगे भी लिखा है। *श्रोता: अभी आपने जो कहा सम्यक्त्व के साथ मरकर अगले भव में स्त्री नहीं होता तो वह भावस्त्री की बात है कि द्रव्यस्त्री की बात है ?* जो जीव सम्यक्त्व के साथ मरकर अन्य भव में जाता है, वहां स्त्री नहीं होता- ना द्रव्य से स्त्री होता है, ना भाव से स्त्री होता है। देखो, आजकल ये बातें बहुत चल रही हैं न। अपने में नहीं है, मगर अन्यमति कहते हैं कि मल्लिनाथ तो स्त्री थी। अभी ऐसी कुछ उलटी बातें चल रही हैं कि उनकी स्त्री पर्यायवाली मूर्ति भी बनाने जा रहे हैं कहीं पर। ऐसी बातें शास्त्र के बिलकुल विरुद्ध हैं।

करणानुयोग के आधार से हम प्रूव्ह कर सकते हैं। मल्लिनाथ तीर्थंकर यहां

भरतक्षेत्र में हुये हैं, उनके कितने कल्याणक हुये ? पांच। जिनका गर्भकल्याणक होता है, वे सम्यक्त्व के साथ आये कि बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया ? *श्रोता: सम्यक्त्व के साथ आये।* तीर्थंकर प्रकृति बांधकर आये, वह सम्यग्दृष्टि को ही बंधती है, तो सम्यक्त्व के साथ आये हैं। सम्यक्त्व के साथ कोई स्त्रीपर्याय में जन्म लेगा क्या ? ना भाव से स्त्री होगा, ना द्रव्य से स्त्री होगा। वे कहां से मरकर आये थे ? अपराजित से। पंचलब्धि पुस्तक में यह बात लिखी है न ! अपराजित में सारे कौन होते हैं ? सारे ही सम्यग्दृष्टि हैं; वहां चौथा गुणस्थान है, अन्य कोई गुणस्थान ही नहीं है। वहां भी सारे पुरुष ही हैं, अरे वहां की क्या बात है, नीचे ग्रैवेयक में भी सारे मिथ्यादृष्टि पुरुष ही हैं न, वहां कोई स्त्रियां होती ही नहीं। तो अपराजित में भी सम्यग्दृष्टि और पुरुष। वहां कौन जाता है ? भावलिंगी मुनि ही मरकर वहां जाते हैं तो उस पर्याय में भी वे पुरुष थे। तीन-तीन भव में वे पुरुष थे और यहां उनको स्त्री मान रहे हैं इसको अवर्णवाद कहते हैं। देव के स्वरूप का अभी निर्णय नहीं है। निर्णय क्या ? इतनी तीव्र भ्रांति दूसरों को भी कराते हैं और स्वयं भी करते हैं। यदि सम्यक्त्व प्राप्त करना है तो सच्चे देव, सच्चे गुरु और सच्चे शास्त्र का निर्णय होना ही चाहिये। हमारे आसपास अभी दिखायी नहीं देते इसलिये किसीको भी सच्चा कह दो, उसके पीछे लग जाओ, उसके पैर छुओ यह बात ठीक नहीं है। सच्चे देवादि नहीं मिलते तो जो है उसके पीछे लग जाओ यह गलत बात है।

यह निर्णय सबसे पहले होना चाहिये। यह बात अन्य प्रवचनों में भी आती है, द्रव्यानुयोग में भी आती है। अभी यह विषय नहीं है, फिर भी यह सबसे मूल बात है। देव के स्वरूप का निर्णय होना चाहिये। निर्णय होना चाहिये ? आप कहेंगे हम दिगंबर हैं, जो हमारे वीतरागी भगवान हैं उनके अलावा हमने किसीको आज तक नमस्कार नहीं किया है। तो क्या आपको उनके स्वरूप का पता है ? नहीं पता। तो कहेंगे गृहीत मिथ्यात्वी हो, मालूम है ? अष्टपाहुड़ में कुन्दकुन्द आचार्य ने अरिहंत भगवान की स्थापना किसे कहा मालूम है ? आपने सुना होगा, नहीं सुना ? बोधपाहुड़ निकालो, है क्या यहां ? अष्टपाहुड़ में बोधपाहुड़ में यह बात आयी है। हमारे यहां ये अकलुजवाले हैं न ? अभी मंदिर बनायेंगे, स्थापना करेंगे। यह फलटणवालों ने बहुत अच्छा मंदिर बनाया, बहुत सुंदर है। ऐसी वीतरागी प्रतिमा है, बहुत सुंदर वहां स्थापना हुयी है तो केवल उसको स्थापना नहीं कहेंगे। कुन्दकुन्द आचार्य कहते हैं कि स्थापना किसको कहना ? अरे वाह ! वही पेज निकला, देखो ३१ नंबर की गाथा में स्थापना द्वारा अरिहंत

का वर्णन कहते हैं। अरिहंत की स्थापना करना यानी क्या करना ? हमें लगता है करणानुयोग का निषेध किया है क्योंकि कुन्दकुन्द आचार्य समयसार की पचास से पचपन गाथाओं में कहते हैं कि मैं गुणस्थान नहीं, मार्गणास्थान नहीं, मैं उदयस्थान नहीं, मैं बंधस्थान नहीं, मैं सत्त्वस्थान नहीं, मैं स्पर्धक नहीं, मैं वर्ग नहीं, मैं वर्गणा नहीं, मैं कुछ भी नहीं हूं। वही कुन्दकुन्द आचार्य यहां क्या कहते हैं देखो।

'छे स्थापना अर्हंतनी कर्तव्य पांच प्रकारथी। गुण, मार्गणा, पर्याप्ति तेम ज प्राण ने जीवस्थानथी॥' अर्थात् गुणस्थान, मार्गणास्थान, पर्याप्ति, प्राण अने जीवस्थान अेटले जीवसमास, आ पांच प्रकारथी अरिहंत पुरुषनी स्थापना प्राप्त करवी अथवा तेमने प्रणाम करवा जोईअे। यानी अरिहंतों का गुणस्थान जानना चाहिये; मार्गणास्थान- अभी हमने चौदह मार्गणा देखी वह प्रत्येक मार्गणा की अपेक्षा अरिहंतों का क्या स्वरूप है; उनकी कितनी पर्याप्ति हैं; उनके कितने प्राण हैं; उनके कौनसा योग है, उनके कौनसे जीवसमास हैं, कौनसा संयम है, कौनसा कषाय है, कौनसी लेश्या है ये सब अपेक्षा उन पर लगाकर उनका स्वरूप निश्चित करना चाहिये। तब हम कहेंगे हमने उनको नमस्कार किया। हमने दो घंटे पूजा की, बहुत भाव-भक्ति से की, परंतु अरिहंतों का स्वरूप नहीं जानते तो वह पूजा, भक्ति सब बेकार हैं। गुणस्थान, मार्गणास्थान यानी चौदह मार्गणास्थान लगाने हैं अरिहंतों के ऊपर। पर्याप्ति- छह पर्याप्ति का स्वरूप उनके ऊपर लगाना है। प्राण- अरिहंतों के कितने प्राण हैं वह जानना चाहिये। जीवस्थान यानी जीवसमास यानी जो हमने बीस प्ररूपणायें जीवकाण्ड में देखी हैं, वे बीस की बीस प्ररूपणा अरिहंतों के ऊपर अप्लाय करनी चाहिये। अपने ऊपर भी करना है कि हमारा स्वरूप भी देखेंगे, उनका भी स्वरूप निश्चित करेंगे तो हमने अरिहंतों को जाना और इतना जानकर उनको प्रणाम करना, तब हमने अरिहंतों की स्थापना की ऐसे कुन्दकुन्द आचार्य बोधपाहुड़ में कह रहे हैं।

हमने ग्रंथों का अभ्यास कहां किया है ? पता ही नहीं न कौनसे ग्रंथों में क्या बातें बतायी हैं ! ऐसा कोई एअरटाइट कम्पार्टमेंट नहीं है कि यह द्रव्यानुयोग है, यह करणानुयोग है। यह कुन्दकुन्द आचार्य ने ही पांचों परमागम लिखे हैं और कितने स्पष्ट शब्दों में लिखी है बात। अन्य भी बहुत ग्रंथ लिखे हैं। अरे, उन्होंने षट्खण्डागम के ऊपर परिकर्म नाम की एक टीका लिखी थी करणानुयोग की, हमारा ऐसा कमनसीब है कि वह अभी उपलब्ध नहीं है। वे जानते नहीं थे, उनका अभ्यास नहीं था ऐसा नहीं है

और उन्होंने कहीं किसीका निषेध नहीं किया है। पर आज दुःख होता है कि कोई इसका निषेध करता है। ऐसा निषेध नहीं करना चाहिये। आप अभ्यास करो, मत करो वह बात अलग है। द्रव्यानुयोग बिलकुल कार्यकारी है- उसीसे होगा सब कुछ निर्णय। परंतु अभी बता रहे हैं न कुन्दकुन्द आचार्य, अरिहंत को द्रव्य से, गुण से और पर्याय से जानो और यहां कह रहे हैं उनकी स्थापना किससे करो। गुणस्थान से, मार्गणास्थान से, पर्याप्ति से, प्राण से, जीवसमास से- अभी उसमें क्या छोड़ा ? सब कुछ आया, बीस प्ररूपणा सभी लगायी उन्होंने। हमें पता ही नहीं है, यह सारा द्रव्यानुयोग का विषय है; जीवकाण्ड का विषय यह द्रव्यानुयोग का विषय है। करणानुयोग का विषय तो केवल वह तीन लोक की रचना को और कर्मों की अवस्थाओं को करणानुयोग में डाला है। कहीं-कहीं ऐसी भी अपेक्षा आती है आपने पढ़ा होगा, हां, लिखा है वहां पर। हम जानने का निषेध कर रहे हैं। इसका निषेध नहीं होना चाहिये, यह बहुत कार्यकारी है। जो हम द्रव्यानुयोग में सिद्धान्त सीखते हैं, उन एक-एक सिद्धान्त को करणानुयोग द्वारा प्रूव्ह करते हैं। एक-एक, एक-एक पॉइंट इसके द्वारा प्रूव्ह हो जाते हैं। हां, अभी हम जो देख रहे थे यहां पर, यह मल्लिनाथ की बात आयी न बीच में।

हम आगे देखते हैं, गाथा २८८- **एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति नामकर्म और स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण नामकर्म** कौनसे गतिवालों के उदय में होंगे ? हां, **तिर्यंचों में ही उदययोग्य हैं।** तिर्यंचगति में ही उनका उदय होता है क्योंकि तिर्यंचों में ही बहुत व्हरायटी है न ! एकेन्द्रिय भी हैं, द्वीन्द्रिय भी हैं, त्रीन्द्रिय भी हैं, चतुरिन्द्रिय भी हैं, पंचेन्द्रिय भी हैं। पंचेन्द्रियों को यहां छोड़ा क्योंकि पंचेन्द्रिय जाति नामकर्म का उदय मनुष्यों के होगा, देवों के होगा, नारकी के होगा और पंचेन्द्रिय तिर्यंचों के भी होगा। केवल तिर्यंचों में जो उदय में आती हैं ऐसी एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रियजाति। अब एकेन्द्रिय संबंधी और कौनसी हैं ? स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण है। यहां आतप, उद्योत भी नहीं लेना, वे काय में लेंगे। आगे बता रहे हैं- **अपर्याप्त प्रकृति मनुष्य में भी उदययोग्य है** यानी अपर्याप्त नामकर्म का तिर्यंचों में उदय है, मनुष्य भी अपर्याप्त होते हैं तो मनुष्यों में भी उदययोग्य है। परंतु यह लब्धिअपर्याप्त जिसको कहेंगे न, एक श्वास में अठ-दस बारवाले, वे देवों में नहीं होते और नारकियों में भी नहीं होते। मनुष्य लब्धिअपर्याप्त हो सकते हैं। एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय तिर्यंच भी लब्धिअपर्याप्त

पर्याय में पाये जाते हैं, उनके भी उसका उदय पाया जायेगा। **छह संहनन, औदारिक शरीर और अंगोपांग।** *श्रोता: यह अपर्याप्त नामकर्म मनुष्यों में भी होते हैं, तिर्यंचों में भी होते है ?* अपर्याप्त नामकर्म का उदय तिर्यंचों में होता है, एकेन्द्रिय में भी, दो इन्द्रिय में भी, त्रीन्द्रिय में, चतुरिन्द्रिय में, पंचेन्द्रिय में भी, मनुष्य में भी होता है। तिर्यंचों के साथ-साथ मनुष्यों में भी क्योंकि मनुष्य लब्धिअपर्याप्त होते हैं न, जिनको हम सम्मूर्च्छन मनुष्य कहते हैं उनके अपर्याप्त नामकर्म का उदय है। इसलिये मनुष्यों में भी लिखा है, तिर्यंचों के साथ-साथ मनुष्यों में भी इसका उदय होता है।

अब कहते हैं संहनन किसको होता है ? द्वीन्द्रियादि त्रसों के होता है। परंतु किसके नहीं होता है ? तो वैक्रियिकशरीरवालों के नहीं होता यानी देवों के नहीं होता है, नारकियों के नहीं होता है; एकेन्द्रियों के नहीं होता है और आहारकशरीर में भी संहनन नहीं होता। किसके होता है ? मनुष्य और तिर्यंच को औदारिकशरीर के साथ इसका उदय होता है। भोगभूमि में संहनन होता है, भोगभूमि में वज्रवृषभनाराचसंहनन ही होता है- पुरुषों को भी और स्त्रियों को भी। वहां से कोई मोक्ष नहीं जाता, ना ही कोई नरक में जाता है। सभी स्वर्ग में ही जाते हैं - वहां से मरकर सारे मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक में जाते हैं और सारे सम्यग्दृष्टि सौधर्म-ईशान में जाते हैं। यानी संहनन से कुछ फ़ायदा होगा ऐसी बात नहीं है। ये बस नियम हैं, कहां, कौनसे संहनन होते हैं। **वैक्रियिकशरीर और अंगोपांग देव और नरक में ही उदययोग्य हैं** क्योंकि उनके वैक्रियिकशरीर होता है यानी उनके उस शरीर नामकर्म का उदय होता है।

अग्निकायिक, वायुकायिक, साधारण वनस्पतिकायिक को छोड़कर; साधारण वनस्पति यानी निगोद; **अन्य बादर पर्याप्त तिर्यंचों में उद्योत प्रकृति का उदय है।** यह उद्योत का उदय किसके है ? हां, एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तिर्यंचों तक है। किसको छोड़ा ? निगोद को छोड़ा, अग्निकायिक को छोड़ा और वायुकायिक को छोड़ा। **अवशेष प्रकृतियों का उदय का अनुक्रम गुणस्थानवत्**। आतप तो हमने पहले ही देखा था न, सूर्य विमान के बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्तों के ही होता है- वह आतप की बात तो पहले ही बता दी थी। यहां उद्योत की बात है। आपका प्रश्न है *सूर्य में उष्णता है, यहां क्यों गरम लगता है ?* यहां बीच के सारे परमाणु गरमरूप परिणमित होते हैं, उसको निमित्तरूप से हम कहेंगे। वहां से यहां कुछ नहीं आता है, यहां के परमाणु स्वयं उष्णरूप परिणमित होते हैं क्योंकि परमाणु में स्पर्श, रस, गंध, वर्ण हैं तो

उसकी पर्याय भी चलेगी। उसका अपना-अपना परिणमन होता तो अपने से है, हम निमित्तरूप से कहेंगे आरोप देकर, उसके कारण यहां होता है।

यहां बोर्ड पर चार्ट में नरकगति में उदययोग्य प्रकृतियां कितनी लिखी है ? ७६। उसको कैसे सोचना हम उसकी बात देखेंगे। घातिकर्म कितने हैं ? ४ और उनकी उत्तरप्रकृतियां ? ४७। नारकी में उनमें से क्या उदयरूप नहीं होगा ? स्त्रीवेद होगा ? पुरुषवेद होगा ? नहीं होगा। और क्या नहीं होता है ? स्त्यानगृद्धि आदि तीन प्रकृतियां उदयरूप नहीं होती । हमने देखा था देव में भी नहीं होती हैं, नरक में भी नहीं होती हैं। घाति की ४७ में से क्या-क्या नहीं है ? स्त्यानगृद्धि तीन, स्त्रीवेद और पुरुषवेद- पांच नहीं हैं। ४७ में पांच नहीं है तो कितनी रह गयी ? हां ४२ रह गयी, घाति की ४२।

अब अघाति का हम हिसाब लगायेंगे। अघाति में क्या-क्या है ? वेदनीय, तो वेदनीय में किसीको साता का, किसीको असाता का दोनों का उदय पाया जाता है। दोनों लेंगे, गिनना हां, पहले कितने लिये हमने ? ४२। फिर वेदनीय में से दोनों लेना। कौनसी आयु का उदय है ? अरे इतना टाइम लगता है ? नरकायु का ही उदय है। बंध की बात नहीं कर रहे हैं, हम उदय की बात कर रहे हैं। नारकी जीवों के नरकायु का उदय है। वेदनीय की दो, आयु की एक। गोत्र कौनसा होगा उनके ? नीचगोत्र, वह एक। अब रही नामकर्म की प्रकृतियां। नामकर्म की भाषापर्याप्ति के योग्य काल कहा है यहां पर। भाषापर्याप्ति काल; नामकर्म के उदय में अलग-अलग पांच काल होते हैं, अलग-अलग प्रकृतियों का उदय अलग-अलग स्थानों पर चालू हो जाता है। विग्रहगति में कुछ प्रकृतियों का उदय है। वहां पहुंचता है, शरीर ग्रहण करने के समय और कुछ प्रकृतियों का उदय चालू हो जाता है। शरीरपर्याप्ति पूरी हुयी फिर और कुछ प्रकृतियों का उदय शुरू हो गया। उच्छ्वासपर्याप्ति में उच्छ्वास प्रकृति का उदय शुरू हुआ। भाषापर्याप्ति में स्वर नामकर्म का उदय शुरू हुआ। यानी लास्ट में भाषापर्याप्ति जब चालू होती है तब उनके सभी प्रकृतियों का उदय चालू होगा। तो वे कितनी हैं ? कहते हैं २९ हैं और नारकानुपूर्वी का उदय मात्र विग्रहगति में होगा, नरक में जानेवाले को।

हमने घातिकर्म की कितनी देखी थी ? बयालीस। उसमें एक आयु, एक नीचगोत्र, दो वेदनीय और नामकर्म की ये उनतीस और एक तीस। कितनी हुयी टोटल ? देख लो बयालीस, फिर नरकायु, नीचगोत्र, दोनों वेदनीय और नामकर्म की

उनतीस प्रकृतियां। अभी कौनसी उनतीस हैं उसकी बात छोड़ो, उनतीस हैं इतना ख्याल में रखो। ये उनतीस कौनसी हैं वह यथासमय देखेंगे और एक नारकानुपूर्वी जो पर्याप्तों के नहीं, उसका विग्रहगति में उदय है। तीस टोटल लेना नामकर्म की। एक, एक, दो मिलकर चार और ये तीस मिलकर चौंतीस और वे बयालीस सब मिलकर ७६ उदययोग्य हैं। अब इसमें से फिर हम उदय की व्युच्छित्ति वगैरह देखेंगे। उनके जो उदयरूप हैं, उनमें से व्युच्छित्ति कहेंगे। यानी नारकियों के किस-किसका उदय नहीं होगा ? एकेन्द्रिय संबंधी नहीं होगा, द्वीन्द्रिय का नहीं होगा, त्रीन्द्रिय का नहीं होगा, चतुरिन्द्रिय का नहीं होगा, अपर्याप्त का नहीं होगा। है न ? सूक्ष्म का नहीं होगा, अपर्याप्त का नहीं होगा, साधारण का नहीं होगा, शेष तीन गति संबंधी का नहीं होगा सबको टालते चले जाओ। तो कितने का होगा ? ७६ का होगा। इसतरह से हम यहां बिलकुल मोटी-मोटी बातें देखेंगे, यह ऐसा ७६ क्यों लिखा उसका हमने हिसाब देखा।

हम देव का भी देखते हैं। अभी हम मिथ्यादृष्टि में घटायेंगे, फिर चारों गुणस्थानों में घटायेंगे। जो मिथ्यात्व का उदय मिथ्यादृष्टि के होगा, आगे जिनका उदय नहीं होगा उनको घटाते जाना। अभी यहां हम गुणस्थानों की बातें और नहीं देख रहे हैं, रोज के स्वाध्याय में एक-एक लाइन को हम बहुत विस्तार से समझाते हैं, उसको हर एक से बुलवाते हैं और वे तैयार होते हैं। यह हमारी सुशीलाजी आयी है, बहुत सारे आते हैं हमारे यहां रोज कर्मकाण्ड का स्वाध्याय चलता है। हम डेली पढ़ रहे हैं तो हमें कुछ कठिन नहीं लगता है। विषय लगातार चलता है न, तो हर एक उसका उत्तर दे सकते हैं। अभी हमें किसतरह से विचार करना है, इस पर हम थोड़ा ख्याल करेंगे। अभी हम मोटे-मोटे तौर पर सभी बातें देखेंगे। फिर वह पूरा आद्योपांत स्वाध्याय तो होता रहेगा। पहले तो क्या-क्या विषय हम सीखनेवाले हैं, इसका तो थोड़ासा अंदाजा आ जायेगा न !

हमने नरक में जैसे उदययोग्य ७६ देखे, देव में यहां कितना लिखा है ? ७७। तो हम देव में देखते हैं। देव में कहां अंतर होगा ? घाति की यहां बयालीस देखी थी, वहां घाति की एक एक्स्ट्रॉ होगी। नरक में यहां एक ही वेद का उदय है और देवों में दो वेदों का उदय है। नारकियों में स्त्रीवेद नहीं था, पुरुषवेद नहीं था; देवों में स्त्रीवेद और पुरुषवेद दो हैं, नपुंसकवेद नहीं है। *श्रोता: गोत्र बढ़ाया क्या ?* नहीं उसकी बात नहीं, नीचगोत्र नहीं है पर उच्चगोत्र है न वहां पर। एक वेद बढ़ा यानी घाति की बयालीस के बदले तैंतालीस हो गयी। आयु कौनसी है उनके? देवायु है। गोत्र कौनसा है ? उच्चगोत्र

है। अब भाषापर्याप्ति काल में कितनी है ? उनकी भी उनतीस है, हां और उनकी भी एक देवानुपूर्वी मिलायेंगे तो तीस हो जायेगी। तो डिफरन्स कहां हुआ ? घातिकर्म की एक एक्स्ट्रा होगी उनकी। वेद है वह मोहनीय का ही भेद है, इसलिये उसको घातिकर्म में लिया। तो देवों में ७७ प्रकृतियां उदययोग्य हैं। फिर उसमें कहां कौनसे गुणस्थान में किसकी व्युच्छित्ति होती है वह बाद में देखेंगे। पुस्तक में यह सारा ही लिखा है। केवल कितनी उदययोग्य हैं, उसकी बात चल रही है, हम ज्यादा डीटेल में अभी नहीं जायेंगे।

सभी गुणस्थानों में मिलकर उदयव्युच्छित्ति हमने देखी, अब देखेंगे कौनसी गति में कितनी बंधती हैं, कितने का उदय होता है। बाद में जो पुस्तक में लिखा है उसको पढ़कर समझ में आ जावे ऐसी बात है। यहां अब देखते हैं, अभी तिर्यंचों में १०७ बतायी हैं, तो १०७ में कौन-कौनसी होगी और कौन-कौनसी नहीं होगी उसको देख लेते हैं। तिर्यंचों में कौनसी नहीं होती ? देखो पृष्ठ २९१ पर। देखो, हम घातिकर्म की बात करेंगे। घाति में कुछ नहीं है ऐसा होगा क्या ? स्त्यानगृद्धि वगैरह हैं उनके, तीनों वेद उनमें पाये जायेंगे; तो कुछ नहीं है ऐसा नहीं, सभी कुछ है। आयु कौनसी होगी ? तिर्यंचायु, अन्य तीन आयु नहीं होगी। हमको किसको घटाना है वह देख रहे हैं न, उदययोग्य १०७ है यानी कितनी नहीं है ? १२२ में से कितने घटाये तो १०७ आये ? पंद्रह और सात बाइस होते हैं न। पंद्रह कौनसी घटायी ? तीन आयु का उदय नहीं है उनके। गोत्र कौनसा है उनको ? नीचगोत्र है यानी उच्चगोत्र नहीं है- चार घटायी। उनके गति कौनसी है और आनुपूर्वी कौनसी है ? तिर्यंचगति है और तिर्यंचानुपूर्वी है तो उनके मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी नहीं है; देवगति, देवानुपूर्वी नहीं है; नरकगति, नरकानुपूर्वी नहीं है; ये छह नहीं हैं। वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग होगा ? वह भी नहीं है, ये आठ नहीं है उनके। आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग का उदय इनके पॉसिबल नहीं है और तीर्थंकर ? हो ही नहीं सकता। इसतरह से ये पंद्रह प्रकृतियां उदययोग्य नहीं है।

हमने क्या-क्या घटाया ? तिर्यंचायु छोड़कर अन्य तीन आयु घटायी। वेदनीय दोनों होते हैं, उनका उदय होता है उसकी बात नहीं है। गोत्र में- नीचगोत्र है इनके, उच्चगोत्र घटाया हमने। नामकर्म में से क्या घटाया ? तीन गति, उनकी गत्यानुपूर्वी; आयु पहले ही घटायी थी; फिर वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग; आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग और तीर्थंकर। इतने का इनको उदय हो ही नहीं सकता है, होता ही नहीं है, तो उदययोग्य १०७ हैं। अब इसको हम गुणस्थानों में लगायेंगे। पांच गुणस्थान

हैं, तो कहां कौनसा उदय है, कहां कौनसी व्युच्छित्ति है, कौनसे उदय, अनुदय है इसकी बात करेंगे। यह तो हुयी तिर्यंच की बात।

अब मनुष्यों में कितना लिखा है आगे ? १०२। उसमें और कम कर दिये, है न ! हम मनुष्यों की बात देखते हैं। कौनसी नहीं है यहां ? हम देखते हैं पेज २९५, गाथा २९८ की सेकंड लाइन, टोटल १२२ है उसमें से मनुष्यों की कौन-कौनसी नहीं है इसकी लिस्ट बता रहे हैं- **स्थावर, सूक्ष्म**; लेकिन अपर्याप्त होता है मनुष्यों के इसलिये मनुष्यों में उसको छोड़ा नहीं, लिया है। स्थावर और सूक्ष्म को यहां छोड़ दिया है, साधारण को भी छोड़ेंगे आगे। **तिर्यंचगति और आनुपूर्वी, आतप, उद्योत, एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय जाति; साधारण, नरकायु, तिर्यंचायु, देवायु, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग, देवगत्यानुपूर्वी, नरकगत्यानुपूर्वी ये छह**। देवायु यहां लिखना रह गया है वह लिख लो आप। नरकायु के साथ वहां देवायु भी लिखना है क्योंकि उसकी संख्या बराबर गिनी है। नरकायु, तिर्यंचायु, देवायु तीनों आयु को घटाना हैं न इसमें से क्योंकि इनके एक मनुष्यायु ही है। घटायी हुयी प्रकृतियों में देवायु का नाम भी डालना। हमने नारकायु लिखा, तिर्यंचायु लिखा, वहां देवायु भी लिखना चाहिये क्योंकि हमने अन्य गति और आनुपूर्वी, अन्य आयु सबको घटाया है। मनुष्यों को लेना है तो उनके वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग नहीं होगा, तिर्यंच संबंधी जो हैं-स्थावर है, सूक्ष्म है, साधारण है, एकेन्द्रिय आदि चार हैं, आतप, उद्योत हैं इन सबको घटा दिया।

श्रोता: चार प्रकार के मनुष्य क्या हैं ? चार प्रकार के मनुष्य जब कहते हैं; गतिमार्गणा के भेद में मनुष्यगति में चार प्रकार के मनुष्य कौनसे हैं ? एक सामान्य मनुष्य। सामान्य मनुष्य यानी सभी भेद जिसमें गर्भित है वह सामान्य। तो कौन-कौनसे भेद हैं ? मनुष्य पर्याप्त- इसमें नपुंसकवेदी और पुरुषवेदी दो ही लेना। एक होता है योनिमति मनुष्य या मनुष्यनी यानी भाव से स्त्रीवेदी मनुष्य - द्रव्य से स्त्री हो या पुरुष हो, जो भाव से स्त्री है उसको कहेंगे मनुष्यनी। उसका एक भेद और है लब्धिअपर्याप्त मनुष्य। चार भेद कौनसे हो गये ? तीन भेद हुये और जिसमें सभी भेद गर्भित हैं ऐसा सामान्य मनुष्य यानी भेद किये बिना उसको सामान्य कहेंगे और भेद कौनसे ? मनुष्य पर्याप्त, मनुष्यनी और लब्धिअपर्याप्त मनुष्य। यहां सामान्य से बात की है।

हर एक भेद में अगर लेना है तो कहां कौनसा उदय है ? मनुष्यनी कहेंगे वहां

अकेले स्त्रीवेद का ही उदय कहेंगे, अन्य दो वेदों का उदय नहीं कहेंगे। मनुष्यपर्याप्त कहेंगे तो नपुंसकवेद, पुरुषवेद का ही उदय कहेंगे। अब मनुष्यनी कहेंगे, वहां तीर्थंकर प्रकृति का उदय नहीं हो सकता। क्या कहा ? जो पहले भाव से स्त्री थी; पहले यानी नौवें गुणस्थान तक की बात है, पहले यानी भाववेद पलटता नहीं है; भाव से स्त्री है या नपुंसकवेदी है उनके उस पर्याय में मोक्ष हो सकता है, परंतु उनके तीर्थंकर प्रकृति का उदय नहीं हो सकता। मैंने बंध की बात नहीं उठायी है। भाव से स्त्रीवेदवालों को तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो सकता है, परंतु उसी भव में उनको मोक्ष नहीं होगा। वहां से वे देव में चले जायेंगे, वहां पुरुष होंगे, फिर आकर वे पुरुषपर्याय प्राप्त करके मोक्ष चले जायेंगे। यानी भाव से भी पुरुष होकर ही तीर्थंकर होते हैं। तीर्थंकर जीव अन्य वेदों के साथ नहीं पाये जाते, यह बिलकुल नियम है।

श्रोता: क्षपकश्रेणी में भाव स्त्रीवेद हो सकता है ? हां, क्षपकश्रेणी में भाव स्त्रीवेदी हो सकते हैं। हमने बोला न वे मोक्ष भी जा सकते हैं। नौवें गुणस्थान तक भाव से स्त्रीवेदी, परंतु द्रव्य से पुरुष होने चाहिये यह नियम है। यानी मुनिराज हैं, परंतु भावों में जो वेद जन्म से चला आ रहा है, वह वैसा ही रहता है; हम कहेंगे भाव से स्त्रीवेदी है, भाव से नपुंसकवेदी है, भाव से पुरुषवेदी है। नौवें गुणस्थान में वे अपगतवेदी हो जाते हैं और उसी भव में मोक्ष जा सकते हैं। परंतु स्त्रीवेदी, नपुंसकवेदी तीर्थंकर नहीं होते, सामान्य केवली हो सकते हैं। *श्रोता: जो तीर्थंकर होते हैं वे द्रव्य और भाव से पुरुष ही होते हैं ?* हां, जो तीर्थंकर होते हैं, द्रव्य से और भाव से पुरुषवेदवाले ही होते हैं। परंतु तीर्थंकर प्रकृति का बंध भाव से स्त्री या नपुंसकवालों को भी हो सकता है, उदय नहीं हो सकता। उनके एक और भव देव का करके फिर मनुष्य होकर फिर तीर्थंकर होंगे। *श्रोता: नपुंसकवाले बांध सकते हैं ?* नपुंसकवेदवाले बांधते हैं न, अभी श्रेणिक राजा बांध रहे हैं न नरक में। भाव नपुंसक- वहां द्रव्य और भाव दोनों से नपुंसकवेद चल रहा है। हां, बंध हो सकता है, बंधने में कोई रुकावट नहीं, उदय नहीं हो सकता उनके। भाव से नपुंसकवेदी के बंधने में कोई रुकावट नहीं है।

हमने अनुदय की बात यहां नहीं देखी थी। बंध में बंध-अबंध की बात देखी थी, उदय में केवल मैंने मिथ्यात्व गुणस्थान में बताया था की अनुदय किसको कहेंगे। जो ऊपर गुणस्थानों में कहीं उदय होगा तो उसको भी अनुदय में रखेंगे या नीचे के गुणस्थानों में जिनकी उदयव्युच्छित्ति हो गयी है, उनको भी अनुदय में कहेंगे। आपको

देखना ही है तो पृष्ठ २९६ पर चार्ट के द्वारा हम उदय-अनुदय को देखेंगे। यहां सर्वत्र ऐसी रचना बनायी है। रचना किसको कहना ? ऊपर गुणस्थानों के नंबर लिखें हैं, उसके नीचे व्युच्छित्ति होनेवाली प्रकृतियों की संख्या लिखी है, फिर उदय कितने का होता है वह लिखा है और सबसे नीचे अनुदय कितने का होता है वह लिखा है। यह मनुष्यों की अपेक्षा लिखा है। हमने यहां उदय की व्युच्छित्ति वगैरह लिखी थी न बोर्ड पर, वहां तो १२२ का हिसाब लगाया था, वहां केवल व्युच्छित्ति की ही संख्या लिखी थी, वहां उदय-अनुदय नहीं लिखा था। यहां पृष्ठ २९६ पर जो टेबल है वह मात्र मनुष्यों के लिये है। मनुष्यों में उदययोग्य कितनी अभी देखी हमने, वहां लिखी है न १०२। १०२ का हिसाब हम यहां इस चार्ट में देख रहे हैं। उदय क्या होता है, अनुदय क्या होता है इसकी चर्चा यहां करनी है हमको। देखो यहां यह चार्ट कैसे पढ़ना ?

पहले गुणस्थान के आगे लिखा है मि. यानी मिथ्यात्व, यानी क्रम से उनके नाम बताये हैं शॉर्टफॉर्म में। अब यहां १०२ टोटल उदयरूप हैं, तो मिथ्यात्व गुणस्थान में किस-किसका उदय नहीं हो सकता ? मनुष्यों की बात चल रही है न। सम्यक् प्रकृति का उदय होगा ? नहीं। सम्यग्मिथ्यात्व का ? नहीं। आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग का ? नहीं। तीर्थंकर प्रकृति का ? नहीं। तो ये ५ प्रकृतियां यहां अनुदय में रखी हैं और टोटल हमें १०२ चाहिये। कितनी बची ? ९७। वह हमने उदय में रखी है यहां पर तो नाइन्टी सेवन यानी ९७ का उदय है, ५ अभी अनुदय में हैं। यहां व्युच्छित्ति कितनी लिखी है ? २ की और यहां बोर्ड पर कितनी लिखी हैं ? श्रोता: पांच। कौनसी पांच हैं ? मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण। इनमें से मनुष्यों के तो आतप का उदय ही नहीं है, साधारण का उदय ही नहीं है, सूक्ष्म का उदय ही नहीं है। उदय में कौनसी थी ? मिथ्यात्व थी, अपर्याप्त थी जिनका उदय मिथ्यात्व गुणस्थान में होगा, आगे कहीं भी नहीं होगा क्योंकि लब्धिअपर्याप्त मनुष्य तो मिथ्यात्व गुणस्थानवाले होते हैं। उदयरूप १०२ में जिनको इन्क्लूड किया है, उनमें से कितनी बची यहां ? दो ही बची, उनकी व्युच्छित्ति यहां हुयी। कुछ ख्याल में आती है बात ?

हमेशा हम ५ गिनते हैं। व्युच्छित्तिवाली ५ कब गिनते थे ? जब १२२ का हिसाब चलता था चारों गति की अपेक्षा से। यहां हम अकेले मनुष्यगति की बात कर रहे हैं। मनुष्यगति में साधारण का उदय ही नहीं है, आतप का उदय ही नहीं है और सूक्ष्म का उदय ही नहीं है। मिथ्यात्व का उदय है, अपर्याप्त का भी उदय हो सकता है, मनुष्यों में

इन २ का उदय हो सकता है। उनकी व्युच्छित्ति पहले में हो गयी, ऊपर कहीं भी इनका उदय नहीं होगा। अब आगे देखते हैं ये दो अनुदयवाली पांच में मिलाओ तो सासादन में ७ अनुदय में चली जायेगी और हमारा हिसाब १०२ का होना चाहिये तो ९५ उदयरूप प्रकृति होगी। यहां सासादन में व्युच्छित्ति ४ की बतायी। हमेशा कितनी देखते थे ? नौ की। कौनसी नौ ? अनंतानुबंधी चार, एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय। ये मनुष्यों के उदयरूप होती ही नहीं हैं। मनुष्यों में कौनसी होती है ? अनंतानुबंधी होती है, उसकी दूसरे गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति हो जाती है। अब ये सात और ये चार ११। तीसरे गुणस्थान में सम्यग्मिथ्यात्व उदयरूप और मनुष्यगत्यानुपूर्वी अनुदयरूप होगी। ये ११ अनुदयरूप में चली जायेगी और ९१ रह जायेगी। यहां पर उदयव्युच्छित्ति कौनसी होगी ? सम्यग्मिथ्यात्व की। अब चौथे में चले जाते हैं, वहां तो ये ग्यारह हैं और एक की व्युच्छित्ति हुयी तो बारह होने चाहिये थे परंतु यहां कुछ गड़बड़ी है क्या ? हां क्या है वहां पर ? हां-हां उदय की बात है। *श्रोता: सम्यक् प्रकृति का उदय होगा।* सम्यक् प्रकृति का उदय होगा। यह अनुदयरूप में रखी थी उसको उदयरूप में करेंगे। तीसरे गुणस्थान में आनुपूर्वी का उदय नहीं होता क्योंकि तीसरे गुणस्थान में मरण नहीं होता। यहां मनुष्यगत्यानुपूर्वी को भी उदयरूप करेंगे इसलिये वह ग्यारह और एक बारह के बदले यहां पर १० अनुदयरूप कही।

यह सब लिखा हुआ है, ऐसी ही आगे चर्चा चलेगी इसकी। कितने उदय और अनुदय होते हैं, जो व्युच्छित्ति हो जाती है वह आगे-आगे जोड़कर हम उसको अनुदय में डालते चले जाते हैं। यह मनुष्यगति की अपेक्षा ख़ास बात है। जो हमने टेबल यहां देखा है उदयव्युच्छित्ति का, उसमें भी उदय और अनुदय यह सब चर्चा हो गयी है। इस पुस्तक में कर दिया है तो वहां भी ऐसे ही समझना। अभी जो हमने अनुदय में रखी है, छठा गुणस्थान आयेगा तो आहारक को उदय में कहेंगे, तेरहवां गुणस्थान आयेगा तो तीर्थंकर को उदयरूप कहेंगे। जो जहां अनुदयरूप है उसका अनुदय रखेंगे, जहां उदय होगा उसको वहां उदय में रखेंगे। आज के लिये हम यहीं रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३७. उदय, अनुदय, उदीरणा, व्युच्छित्ति

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीकी टीका है सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड जो पं. टोडरमलजी ने ढूंढ़ारी भाषा में, अपनी देशभाषा में लिखी थी। उसीका हिंदी अनुवाद हम पढ़ रहे हैं यहां पर जो आपके हाथ में है। कल हमने बंध की व्युच्छित्ति देखी थी और अंतिम लेक्चर में उदय संबंधी, उदयव्युच्छित्ति आदि बातें देखी थी, जो कुछ भी समझ में नहीं आयी। हमें इतना तो समझ में आया कि हमें कुछ नहीं समझा ! हमने जब जीवकाण्ड का शिबिर यहां रखा था, जिसको कुछ समझ में नहीं आये उसके लिये प्राइज रखा था। मेरी मौसी आयी थी, तो उसने हाथ ऊपर किया- हमें कुछ नहीं समझा। मैंने बोला इतना तो समझा कि नहीं कि कुछ नहीं समझा ? जिसको कुछ नहीं समझता ऐसा कोई जीव ही नहीं है ! हम उदय के बारे में दुबारा थोड़ी चर्चा करके आगे बढ़ेंगे। हमने गुणस्थानों में जैसे बंध की व्युच्छित्ति देखी वैसे उदय की व्युच्छित्ति देखी थी।

उदय व्युच्छित्ति / उदीरणा व्युच्छित्ति

गुणस्थान	१	२	३	४	५	६	७	८	९	१०	११	१२	१३	१४
उदय व्यु.	५	९	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	२९	१३
	१०	४				+३							४२-३	
उदीरणा व्यु.	५	९	१	१७	८	८	४	६	६	१	२	१६	=३९	

उदययोग्य प्रकृतियां १२२ गति -

नरक- ७६ तिर्यंच- १०७

मनुष्य- १०२ देव- ७७

पहले गुणस्थान में ५, दूसरे में ९ - इसमें दो मत हैं वह भी हमने देखे थे। एक मत है कि पहले में १० की व्युच्छित्ति होती है और दूसरे में ४ की व्युच्छित्ति होती है। दूसरा मत क्या है ? पांच, नौ। दोनों ही मत उतने ही हमें मान्य होने चाहिये जो यहां हमें प्राप्त है आज की तारीख में, तो हम दोनों की ही बात करेंगे परंतु किसी एक को फिक्स रखकर बात करेंगे तो थोड़ा आसान होगा इसलिये हमने यहां ५, ९ लिखा है। पहले गुणस्थान में पांच प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति है। अभी यहां बंध की बात

नहीं है, उदय की बात है। जब व्युच्छित्ति कहते हैं तो उसका अर्थ उन प्रकृतियों का उदय उस गुणस्थान में है; ऊपर के किसी भी गुणस्थान में नहीं है उसको व्युच्छित्ति कहेंगे। अनुदय में उस गुणस्थान में उसका उदय नहीं है; आगे के गुणस्थानों में होगा, नीचे के गुणस्थानों में होगा, परंतु उस गुणस्थान में उदय नहीं है तो उसको हम अनुदय कहेंगे। व्युच्छित्ति किसको कहेंगे ? जिसका वहां उदय है, उसका आगे के किसी गुणस्थान में उदय नहीं है तो उसको हम व्युच्छित्ति कहेंगे।

पहले गुणस्थान में ऐसी हमने ५ प्रकृतियां देखी थी जिनकी वहां व्युच्छित्ति होती है, जिनका उदय है वहां परंतु आगे किसी भी गुणस्थान में उदय नहीं है। वे कौनसी प्रकृतियां थी, याद है इंद्रजीतजी ? पहले गुणस्थान में कौनसी ५ प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति होती है ? पहले गुणस्थान में व्युच्छित्ति किस-किसकी होती है, कौन कहेंगे ? मिथ्यात्व, आतप, सूक्ष्म, अपर्याप्त और साधारण इन ५ प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति होती है। यह याद आया न ? हमने कल सुना था। दूसरे गुणस्थान के ९ कौनसी हैं जिनका उदय है परंतु वहां पर व्युच्छित्ति होती है ? तो अनंतानुबंधी चार। अन्य कौनसी पांच हैं ? एकेन्द्रिय, स्थावर, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय।

तीसरे गुणस्थान में जिसका उदय है परंतु आगे कहीं नहीं है ? सम्यग्मिथ्यात्व। चौथे गुणस्थान में १७ देखी थी। इसका ऐसा विचार करना कि चार गुणस्थान नरक में भी हैं, देव में भी हैं; चौथे गुणस्थान का कषाय कौनसा है जो वहां तक ही है और आगे नहीं है ? अप्रत्याख्यानावरण। तो अप्रत्याख्यानावरण की चार हो गयी। अभी देव और नारकी संबंधी हमें देखना है तो गति भी लेना, आयु भी लेना, गत्यानुपूर्वी भी लेना और उनके वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग भी लेना। तो नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु, देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, देवायु, वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग ये आठ और ये पहलीवाली चार- बारह हो गयी न ! यह कौनसे गुणस्थान की बात चल रही है ? चौथे की। यहां और किसकी व्युच्छित्ति हो जायेगी जो आगे उदय में नहीं आयेगी ? तो गत्यानुपूर्वी। मनुष्यगत्यानुपूर्वी और तिर्यंचगत्यानुपूर्वी को यहीं पर लेना- चौदह हुये। अभी तीन ही बाकी रही जिन्हें हमें चौथे गुणस्थान के लिये याद में रखना है कि जिनका उदय यहां तक है और आगे नहीं है। कौनसी हैं ? दुर्भग, अनादेय, और अयशस्कीर्ति। इन १७ प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति चौथे में होती है।

पांचवें गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति जब हम कहेंगे तो पांचवां गुणस्थान तिर्यंचों के भी होता है, उन संबंधी जो प्रकृतियां हैं वे आगे कहीं नहीं होगी, तो उनकी व्युच्छित्ति यहीं पर हो जायेगी। तिर्यंच संबंधी जो प्रकृतियां है उनमें से तिर्यंचानुपूर्वी को हमने चौथे में ही बाद कर दिया था। यहां के कषाय कौनसे है ? प्रत्याख्यानावरण के चार। अब तिर्यंच संबंधी कौनसी रहेगी ? गति रही, आयु रही, उद्योत रहा और नीचगोत्र। ये ८ प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति पांचवें में होती है। अब छठे गुणस्थान में जिसका उदय है और आगे कहीं भी नहीं है। यह आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग जिसका उदय मात्र छठे में है, तो उसकी व्युच्छित्ति भी वहीं पर कहेंगे; उदय वहां है तो उसकी व्युच्छित्ति भी वहीं होती है। अन्य तीन कौनसी हैं ? तीन निद्रा हैं-स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला। ये तीन और पहली दो इन ५ की उदयव्युच्छित्ति छठे में है।

सातवें गुणस्थान की तो आसान है। कौन बतायेगा ? हां चार, कौनसी चार हैं ? एक सम्यक् प्रकृति जिसका उदय किसके होता है ? क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि को होता है। क्षयोपशम सम्यक्त्व कहां तक है ? चौथे से सातवें तक है। एक सम्यक् प्रकृति हुयी और नीचेवाले तीन संहनन हैं। नीचे के तीन संहनन कौनसे हैं ? अर्धनाराच, कीलित और असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, यह सातवें गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति हुयी। आठवें में ६ नोकषाय यानी हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इनके उदय की व्युच्छित्ति होती है। नौवें गुणस्थान में तीन वेद और संज्वलन के तीन कषाय- क्रोध, मान और माया क्योंकि लोभ तो दसवें में भी है। दसवें गुणस्थान में कितने लिखे हैं ? १। कौनसा है ? लोभ, संज्वलन लोभ कहो या सूक्ष्मलोभ कहो ठीक है। ग्यारहवें गुणस्थान में किसके उदय की व्युच्छित्ति है ? २ संहनन- दूसरा और तीसरा यानी वज्रनाराच और नाराच संहनन। फिर बारहवें गुणस्थान में ? १६ हैं क्योंकि हमने देखा है ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय वहां तक हैं। नाम, गोत्र भी होंगे, उनकी भी एक-एक प्रकृति वहां व्युच्छित्ति में लेना। यहां तो ज्ञानावरण की पांच, दर्शनावरण की दो और चार मिलकर छह और अंतराय की पांच- १६ इनके उदय की व्युच्छित्ति हो जायेगी।

फिर सयोगकेवली में लेना, वहां २९ या ३० ऐसा कहते हैं। २९ नाना जीवों की अपेक्षा और ३० एक जीव की अपेक्षा ऐसा उसका भेद करते हैं। जैसे यहां पांच और दस का जो डिफरन्स है, ऐसा डिफरन्स वहां नहीं है। केवल विवक्षा यानी अपेक्षा से जो कथन होता है उसमें भेद है। तो उसमें कौन-कौनसी प्रकृतियां हैं ? पहले तीन हैं -

तीर्थंकर, निर्माण और प्रशस्त विहायोगति। तीन- यही हैं न ? देखो पेज २८०, गाथा २७१ की टीका में- क्या-क्या है ? एक वेदनीय, वज्रवृषभनाराचसंहनन और निर्माण। फिर स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ। देखो यह स्थिर-अस्थिर प्रकृति और शुभ-अशुभ प्रकृति हैं ये कैसी हैं ? दोनों का ही उदय सतत चलता है, ध्रुवोदयी हैं। जैसे हमने ध्रुवबंधी देखी थी न, अपना यह विषय बाद में आनेवाला है परंतु ये ध्रुवोदयी प्रकृतियां हैं। हर समय इन दोनों का ही उदय होता है। जब बंध होता है तो स्थिर का होगा या अस्थिर का होगा क्योंकि वे प्रतिपक्षी प्रकृतियां हैं; परंतु उदय स्थिर का भी है और अस्थिर का भी है। कबसे ? पहले गुणस्थान से लेकर तेरहवें तक है। उसको ध्रुव उदयवाली प्रकृति कहते हैं, ध्रुवोदयी प्रकृति। स्थिर-अस्थिर और शुभ-अशुभ ये ध्रुवोदयी प्रकृतियां हैं, नामकर्म की स्पेशल उदयरूप प्रकृतियां। जब हम नामकर्म के उदयस्थान देखेंगे तो इसके बारे में आपको और बहुत अधिक स्पष्टता हो जायेगी, क्योंकि कौनसे गुणस्थान में एक जीव के अलग-अलग कितनी प्रकृतियां उदयरूप हो सकती हैं उसकी बात जब आयेगी तो यह विषय और अधिक सरल होगा, और स्पष्ट होगा।

अभी हम देखेंगे कि तेरहवें में कौन-कौनसी प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति होती है। एक वेदनीय, वज्रवृषभनाराचसंहनन, निर्माण; फिर स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुस्वर-दुस्वर। देखिये तीर्थंकरों के तो सुस्वर का उदय है परंतु सामान्य केवली है तो उनके सुस्वर का उदय भी हो सकता है और दुस्वर का भी हो सकता है। यानी यहां तक उसका उदय है, तेरहवें तक उदय है तभी तो व्युच्छित्ति कहेंगे हम। आगे क्या है ? प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति यानी किसीके शुभ प्रकृति का उदय होगा किसीके अशुभ का होगा। तीर्थंकर जीव है उनके तो सभी प्रशस्त ही प्रकृतियों का उदय होगा परंतु अन्य जो सामान्य केवली हैं उनके इनका भी उदय वहां पाया जाता है। औदारिकशरीर और औदारिकअंगोपांग- देखिये हमने यह बात देखी थी कि योग क्यों होता है ? योग का कारण कौनसा कर्म है ? शरीर नामकर्म। अभी यहां सयोग कहा, सयोगकेवली गुणस्थान तक योग है। अयोगकेवली को योग नहीं है, क्यों नहीं है ? देखो औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग का उदय भी यहां तक ही है, आगे नहीं है। शरीर के परमाणुओं का ग्रहण भी यहां तक ही होगा।

आगे लिखा है तेजस और कार्माणशरीर नामकर्म, नामकर्म की बात है तो उनके भी परमाणु यहां तक ही ग्रहण होंगे। यानी कर्म का ग्रहण यहां तक ही होगा,

अपनी भाषा में योग यहां तक ही होगा क्योंकि शरीर नामकर्म का उदय यहां तक ही है, आगे नहीं है, उसके उदय की व्युच्छित्ति हो जाती है। चौदहवें गुणस्थान में शरीर है परंतु नये परमाणु ग्रहण करके शरीररूप बनने का जो कार्य सतत चलता है हमारा आपका सबका, सयोगकेवली का भी होता है, वह कार्य यहां चौदहवें गुणस्थान में नहीं होता। तेरहवें गुणस्थान में हर समय अनंत परमाणु शरीर के भी ग्रहण करते हैं और पुराने में से अनंत चले जाते हैं। हमारा भी ऐसा ही है। हर समय हम शरीर के नये-नये परमाणु ग्रहण करते हैं और पुराने में से अनंत चले जाते हैं। फिर भी सुबह उठते ही पहले क्या नक्की करते हैं ? कल जैसा ही आज हूं न 'मैं' ? कौन ? आईने में दिख रहा है- जो मैं कल था, वह ठीक-ठाक हूं कि नहीं हूं ? ऐसी हमारी हालत है कि नहीं है ? परंतु उसमें तो अनंत परमाणु आते हैं और चले जाते हैं। ये क्यों आते हैं ? तो शरीर नामकर्म के उदय से, तो यह कार्य यहां तेरहवें गुणस्थान तक ही है।

श्रोता: तीनों शरीर कैसे हैं- औदारिक? औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग; तेजसशरीर और कार्माणशरीर इन दोनों के तो अंगोपांग होते ही नहीं हैं। अब केवली के वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग का उदय है ही नहीं है। उसकी उदयव्युच्छित्ति हमने चौथे गुणस्थान में देखी थी। *श्रोता: तीनों शरीर नहीं है तो चौदहवें गुणस्थान में उदय कैसा समझेंगे ?* देखिये, आपकी उलझन यह हो रही है कि यहां कर्मों के उदय की बात चल रही है, जीव का शरीर तो जो बना हुआ है वह तो है वहां पर। *श्रोता: बिना उदय के ?* बिना उदय के यानी ? उदय के कारण क्या होता है ? शरीर नामकर्म के उदय से नये परमाणु ग्रहण करके उस पुराने शरीर में जुड़ते हैं। हमारे औदारिकशरीर नामकर्म का उदय चल रहा है, हर समय हम नये-नये परमाणु; शरीर के परमाणु यानी आहारवर्गणा को ग्रहण करते हैं और यह शरीर का जो स्कंध है उसमें वे भी आकर जुड़ते हैं। उदय का कार्य इतना ही है। यह शरीर बना है उसको कुछ औदारिकशरीर का उदय नहीं कहते। यह औदारिकशरीर है, आहारवर्गणा से बना है और यहां जिस उदय के व्युच्छित्ति की बात कर रहे हैं हम, वह नामकर्म है। वह कार्माणवर्गणा से बना हुआ नामकर्म है और उसका जो उदय होगा उसके उदय का फल क्या है ? नये परमाणुओं को ग्रहण करेगा, उसको योग कहते हैं। औदारिकशरीर संबंधी भी योग है। योग से क्या होता है ? कर्म का भी ग्रहण होता है और नोकर्म यानी शरीर का भी, नये-नये परमाणुओं का ग्रहण होता है। हर समय नये-नये परमाणु आते हैं, इस शरीर के

ढांचे में जुड़ जाते हैं और पुराने उसमें से चले जाते हैं।

यहां औदारिकशरीर नामकर्म का उदय रुक गया, मिट गया। यहां तक उदय है, अयोगकेवली में उदय नहीं है परंतु जो शरीर पहले से बना हुआ है वह तो बना है। अब नोकर्म ही है कहेंगे न उसको। तो उसमें से क्या होगा ? हर समय परमाणु निकल जायेंगे, नये का ग्रहण नहीं होगा। हर समय अनंत-अनंत चले जायेंगे। औदारिकशरीर नामकर्म का उदय रुक गया है, तेजसशरीर नामकर्म और कार्माणशरीर नामकर्म का उदय रुक गया है, तो ना तेजस के परमाणुओं का ग्रहण होगा, ना कर्मों का ग्रहण होगा इसलिये सातावेदनीय का बंध यहां तक ही है। आगे क्यों नहीं है ? क्योंकि यहां कार्माणशरीर नामकर्म का उदय मिट गया है। अभी योग से रहित हो गया है। आत्मा का कंपन भी रुक गया है और कर्म को ग्रहण करने की शक्ति अब नहीं रही। वह तो विभावरूप शक्ति है। हम शक्ति तो कहते हैं, कर्मों को ग्रहण करने की शक्ति को योग कहते हैं। यह तो विभाव था जीव का, अब स्वभावरूप परिणमन हो गया है। पहले प्रदेश चंचल थे, अब वे निश्चल हो गये हैं, निष्कंप हो गये हैं। यह स्वभावरूप अवस्था प्राप्त हो गयी। कर्मों के उदय में जो-जो बातें बनती थी, यहां सारे उदय मिट गये हैं। कर्मों के उदय की तरफ से कथन है, वहां जीव का भी जो कुछ विभावरूप परिणमन हो रहा था, योग हो रहा था, वह सब रुक गया है। तो उसके यहां कारण मिलते हैं। कर्मों के उदय वहां पर आकर रुक गये।

देखो, मोक्षमार्ग के ऊपर-ऊपर गुणस्थानों में कर्म को कैसे पता चलता है कि अभी हमको उदयरूप नहीं होना है, अभी हमको संक्रमित होना है, अभी हमको यहां से क्षय होकर निकल जाना है ? यह सहज ऐसी निमित्त-नैमित्तिक व्यवस्था है, वह सहज ऐसी अवस्थायें बनती हैं। हमारे करने से या चाहने से नहीं होता। हम तो चाहते हैं न, कर्म का हमें उपशम करना है कि क्षय करना है ? आपको क्या करना है ? क्षय करना है ? हम कुछ नहीं कर सकते हैं यह पहले नक्की करना है। ऐसा ही हमें लगता है कि, नहीं-नहीं हमें कर्म का क्षय करना चाहिये क्योंकि अरिहंत भगवान ने भी चार घातिकर्मों का क्षय किया है न ! चार घाति का क्षय किया तब तो वे अल्पज्ञ थे, तभी घाति का क्षय करके सर्वज्ञ हो गये। अभी सर्वज्ञ हुये तब सभी कर्म तो स्पष्ट दिख रहे हैं उनको, ज्ञान में आ रहे हैं और अनंतवीर्य के धारी भी हो गये है। इन चार अघातिकर्मों को जल्दी क्यों नष्ट नहीं किया ? इतना लंबा काल क्यों किसीको लगता है ? क्यों बेन ?

यह जीव की और कर्मों की बात है, वहां सहजरूप से उनकी अवस्थायें बनती हैं।

अभी हम आगे बढ़ेंगे। यहां उदय की व्युच्छित्ति देख रहे थे, हम तेजस-कार्माण शरीर तक आये थे। छह संस्थानों का उदय भी यहां तक है, संस्थान यानी शरीर के आकार में जो कर्म निमित्त है उसकी बात है। इसका अर्थ क्या है ? तीर्थंकरों के तो समचतुरस्रसंस्थान होगा, परंतु अन्य सामान्य केवली हैं, उनके किसी भी संस्थान के उदय में केवलज्ञान हो सकता है। जैसे संहनन का निमित्त है वैसे संस्थान का नियम नहीं है। छहों संस्थानों में से किसी भी संस्थान के उदय में, हुंडकसंस्थान हो या वामनसंस्थान हो - केवलज्ञान की प्राप्ति में कोई बाधा नहीं है यानी निमित्तरूप से यह बात है। वर्णादि चार यानी वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, क्योंकि वर्ण का कार्य क्या है ? वर्ण नामकर्म का कार्य क्या है ? उस जाति के वर्णवाले परमाणुओं का ग्रहण होकर शरीर का वैसा वर्ण होता है। कोई गोरा है, कोई काला है, किसीकी आंखें ब्राउन हैं, किसीकी काली हैं, किसीकी नीली हैं, क्यों ? उस-उस जाति के नामकर्म वहां मौजूद हैं। आंखें कहां होना और उसकी रचना कितनी होना, दो ही आंखें क्यों, तीन क्यों नहीं हैं ये सारी निर्माण नामकर्म के उदय में होती है; बहुत सारे नामकर्म के भेद हैं। अपना सायन्स कहता है न, जीन्स है, हां, जीन्स के कारण ऐसा बनता है। अभी और ज्यादा तरक्की हो गयी, वह डी एन अे, आर एन अे सब ढूंढ़ लिये; तो कौनसा रोग होगा वह भी निश्चित है।

हम भी यही कहते हैं न ! हमारे यहां तो कर्मों की थिअरी है और वह सर्वज्ञ ने जानी हुयी है। मेरी भाषा में सायंटिस्ट तो उसको कहते हैं जिनकी खोज पूरी नहीं होती और सर्वज्ञ उन्हींको कहते हैं जिनको अभी कुछ खोजने का क्या, जानने का भी कुछ बाकी नहीं और वह भी तीन काल का, आज की बात नहीं है। अनादि से अनंतकाल तक के सभी द्रव्य, गुण, पर्यायों को युगपत् एक समय में जानते हैं, वे हैं सर्वज्ञ और हम इतने भाग्यवान हैं कि सर्वज्ञ ने जानकर बतायी हुयी बातें हमारे हाथ में हैं। इनको पढ़कर हम इनको जानते हैं तो हमारा ज्ञान भी सर्वज्ञ के ज्ञान जैसा हो जाता है। गोम्मटसार में लिखा है, मूल गाथा है कि जो केवलज्ञान और श्रुतज्ञान में फर्क यानी अंतर मानता है वह मिथ्यादृष्टि है। फर्क कितना है ? वे प्रत्यक्ष जानते हैं, हम परोक्ष जानते हैं। उन्होंने जानकर बताया और उन्होंने बताया हुआ हमने पढ़कर जाना, सुनकर जाना तो हमारा भी जानना उनके जैसा ही है। इस पर हमारा कितना विश्वास है जरा अपने आप से विचार करो। क्या शास्त्र में लिखी हुयी बातों पर हम इतना

विश्वास करते हैं जितना एक पॅथॉलॉजिस्ट के रिपोर्ट पर विश्वास करते हैं ? हमने खून की जांच की, उसने लिख दिया आपकी ब्लड शुगर इतनी-इतनी है तो कितना विश्वास होता है ? फिर दूसरे दिन डॉक्टर जैसा बताये वैसा खाना, वैसा परहेज, बिलकुल वैसा। आज से हमें मिठाई नहीं खानी है, आज से पोटॅटो यानी बटाटा नहीं खाना है।

हमारे पास एक भाई आये थे। पहले से बहुत बोला था- अरे तू जैन है, आलू-प्याज खाना जैनियों को शोभा नहीं देता है क्योंकि उसमें तो एक राई जितने कटकी में असंख्यात शरीर हैं निगोद के और एक-एक शरीर में आज तक के सिद्धों से भी अनंतगुणे जीव रहते हैं। तो ऐसे परिणाम जैनियों के नहीं हो सकते। आप जैन कहलाते हो और यह खाते हो ? तो मानते ही नहीं थे। एक दिन आये और बोले- मैंने आज से आलू छोड़ दिये, देखो आप कहते थे न छोड़ने को। तो उनसे पूछा, क्या हुआ ? ऐसी परिणति कैसे हो गयी ? मैंने ब्लड रिपोर्ट करवाया तो उसमें शुगर आ गयी, डायबिटीस है, तो डॉक्टर ने आलू खाना मना कर दिया। परंतु वह परिणाम उन जीवों को बचाने के नहीं थे; मैं शरीर हूं और मैं अगर खाऊंगा तो मेरा नाश हो जायेगा ऐसा सोचा था - यह सारी मिथ्याभ्रमणा के कारण छोड़ भी दिया तो उसी भ्रमणा से छोड़ दिया है। उस पर जीव विश्वास करता है तो इतना विश्वास उसके सर्वज्ञ की वाणी पर नहीं है। क्यों ? जब कहते हैं किसने देखा ! सायन्स ने देखा है क्या ? फिर ऐसे प्रश्न पूछता है। सर्वज्ञ की वाणी पर उसका रंचमात्र भी विश्वास नहीं है; क्योंकि उसने सर्वज्ञ का स्वरूप ही निश्चित नहीं किया है। सर्वज्ञ का थोड़ा एहसास होने के लिये करणानुयोग पढ़ेंगे तो बहुत अच्छी तरह से एहसास हो जायेगा।

यहां ३० प्रकृतियों की बात चल रही थी अपनी। हमने वर्णादि चार देखे, अगुरुलघु, उपघात, परघात और उच्छ्वास ये चार और प्रत्येक शरीर। यह शरीर संबंधी जो-जो नामकर्म हैं; ये वर्णादि भी शरीर संबंधी ही हैं, उच्छ्वास आदि भी उसी संबंधी हैं, प्रत्येक शरीर भी शरीर संबंधी है; इन सभी नामकर्मों का उदय यहां तक ही है। यहां पर उसका उदय रुक जाता है, मिट जाता है। देखिये उदय रुका यानी इसका अर्थ सत्ता में से ये प्रकृतियां नष्ट हुयी ऐसी बात नहीं है। यह हम सत्त्व के प्रकरण में देखेंगे। तेरहवें गुणस्थान में एक भी प्रकृति का क्षय नहीं होता। क्या कहा ? बारहवें गुणस्थान में उन्होंने ज्ञानावरण का क्षय कर दिया, दर्शनावरण का क्षय कर दिया, अंतराय का क्षय कर दिया, दसवें में मोहनीय का क्षय कर दिया। परंतु तेरहवें गुणस्थान में एक भी

प्रकृति का क्षय नहीं होता। परंतु इन सारी प्रकृतियों का उदय था तो उदय मिट गया, बस इतना ही। सत्ता में पड़ी हैं, वह कब क्षय होता है ? सत्ता का प्रकरण आयेगा तो उसमें हम उसकी बात करेंगे। हम कल यह पढ़ रहे थे उसको इसलिये दोहराया क्योंकि कल का छठा लेक्चर था, है न ! बहुत सॅच्युरेट हुआ था सबका दिमाग।

अयोगी का रह गया न ! अयोगी के देख लेते हैं। तेरहवें, चौदहवें गुणस्थान में कितने की उदयव्युच्छित्ति बतायी ? देखो, नाना जीवों की अपेक्षा २९ और १३ कहो या एक जीव की अपेक्षा वहां ३० और १२ कहो, एक ही बात है। एक जीव ने एक वेदनीय कि व्युच्छित्ति की है, पर दूसरे वेदनीय का उदय है। परंतु किसी जीव को साता का उदय है, उसकी व्युच्छित्ति हुयी, किसीके असाता की व्युच्छित्ति हुयी। सभी जीवों की अपेक्षा विचार करेंगे तो व्युच्छित्ति हुयी ही नहीं, है न ! चौदहवें में किसीके उदय चल रहा है साता का, किसीके असाता का चल रहा है। इसलिये उसके बारे में हम २९ ही कहेंगे। *श्रोता: वेदनीय को छोड़कर ?* हां वेदनीय को छोड़कर, क्योंकि किसीके साता का उदय है, किसीके असाता का है। नाना जीवों की अपेक्षा हम दोनों को उदय से बाद नहीं कर सकते हैं। इसलिये वहां हिसाब २९ का होगा। अब हम अयोगकेवली की बात करते हैं- यहां भी दो वेदनीय में से एक वेदनीय, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, सुभग, त्रस, बादर, पर्याप्त; ये जो चार की जोड़ी है न- त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक; प्रत्येक को हमने तेरहवें गुणस्थान में लिया था इसलिये तीन को यहां लिया। आदेय, यशस्कीर्ति, तीर्थंकर, मनुष्यायु और उच्चगोत्र- ये बारह की उदय से व्युच्छित्ति होती है। यानी यहां पर ही उसका क्षय भी हो जाता है और जीव सिद्ध अवस्था को प्राप्त कर लेता है।

अब हम थोड़ा उदय और अनुदय के बारे में देखेंगे। हमने व्युच्छित्ति देखी, अब इसी पर उदयरूप और अनुदयरूप देखेंगे। पृष्ठ २७६ पर विशेषार्थ में टेबल बनाया है वहां उदययोग्य प्रकृतियां १२२ लिखी हैं। वह कौनसा मत है ? १० और ४ की व्युच्छित्ति की अपेक्षा से वहां वह संख्या लिखी है। हम आपको ५ और ९ की अपेक्षा से क्या होता है वह भी बता देंगे। पहले जो लिखा है उसको समझेंगे फिर दूसरी बात करेंगे। वहां व्युच्छित्ति १०, ४, १, १७, आगे तो सेम है सब, जो हमने अभी देखा था। अब हमको उदय और अनुदय नक्की करना है। प्रत्येक गुणस्थान में नाना जीवों की अपेक्षा कितनी प्रकृतियों का उदय है और कहां कितने का अनुदय है यह टेबल के द्वारा कैसे समझना इसकी बात हम देखेंगे। पहले हम अनुदय की ओर से देखेंगे। पहले गुणस्थान में

अनुदय- जिनका उदय नहीं है; व्युच्छित्ति की बात नहीं है यहां पर। व्युच्छित्ति उसकी होती है जिसका उदय है। हम उनकी बात कर रहे हैं जिन प्रकृतियों का उदय पहले गुणस्थान में होता ही नहीं।

पहले गुणस्थान में कौन-कौनसी प्रकृतियां अनुदयरूप है ? सम्यग्मिथ्यात्व है, सम्यक् प्रकृति है, आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग जिसको आहारकद्विक कहते हैं और तीर्थंकर। दो, दो और एक ५ प्रकृतियां अनुदयरूप हैं। बात ख्याल में आयी ? उदय और अनुदय मिलकर उदययोग्य प्रकृतियां कही हैं न ? किसी गुणस्थान में टोटल हिसाब कितने का होगा ? १२२ का। उदययोग्य प्रकृतियां कितनी हैं ? १२२। पहले में सबका उदय नहीं हो रहा है। पहले में उदय कितने का होगा ? अनुदय हो रहा है ५ का तो कितनी बची ? ११७। तो यहां पर लिखा है ११७ का उदय है, ५ का अनुदय है।

अब हम दूसरे गुणस्थान में देखेंगे। यहां टेबल में लिखा है- १० की व्युच्छित्ति उसके हिसाब से हम आगे बढ़ेंगे। पुस्तक में पेज २७६ पर ही देखना, व्युच्छित्ति १० की बतायी है। अनुदय ५ का है, तो दस और पांच कितने होते हैं ? पंद्रह। परंतु वहां कितने लिखे हैं ? १६। कौनसी एक बढ़ गयी ? दूसरे सासादन गुणस्थान में नारकानुपूर्वी का उदय नहीं है क्योंकि सासादन में मरकर जीव नरक में नहीं जाता। इसलिये पांच और दस पंद्रह होते हैं परंतु उसको भी इन्क्लूड करेंगे तो १६ अनुदय में चली जायेगी। यह बात ख्याल में आयी ? अनुदय प्लस वहां होनेवाली व्युच्छित्ति, दोनों मिलकर आगे के गुणस्थान का अनुदय होगा। टेबल में देखना- पहले गुणस्थान में अनुदय के आगे ५ लिखा था और व्युच्छित्ति के आगे १० लिखा था जो अन्य पक्ष है। पांच और दस मिलकर पंद्रह दूसरे गुणस्थान में अनुदयरूप होनी चाहिये थी परंतु वहां १६ लिखा है क्योंकि नारकानुपूर्वी का वहां उदय नहीं हो सकता। वह अनुदय में है, व्युच्छित्ति नहीं है। अनुदय क्यों ? क्योंकि चौथे गुणस्थान में भी जीव मरकर नरक में जाता है, तो चौथे में नारकानुपूर्वी का उदय है, दूसरे में उसको अनुदय में रखा है। तो ये १६ हो गयी।

अब दूसरे गुणस्थान में यहां टेबल में व्युच्छित्ति कितनी लिखी है ? ४ की। हम ९वाली बात नहीं देख रहे हैं, हम पुस्तकवाली १० और ४ की बात देख रहे हैं। किताब में जो टेबल है उसको पहले समझेंगे, बाद में आपको मैं ५ और ९ में घटित करके बताऊंगी। दूसरे में चार की व्युच्छित्ति हुयी, सोलह और चार कितने होने चाहिये थे ?

बीस, परंतु तीसरे गुणस्थान में कितने लिखे हैं वहां पर ? २२। यह क्यों इसका हम विचार करेंगे। यहां बीस थी, तो तीसरे में क्या हुआ ? यह सोलह जो अनुदय में रखी थी न, उसमें एक सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति उदयरूप हो जायेगी; पंद्रह हो गये और तीसरे गुणस्थान में किसी भी आनुपूर्वी का उदय नहीं है। नारकानुपूर्वी हमने पहले ही अनुदय में रखी थी, जो तीन आनुपूर्वी बची उनको भी अब अनुदय में डाल दो। बाद में चौथे में उसको उदयरूप करेंगे। यह १६ में से एक गयी, १५ रही। कौनसी एक निकाली ? सम्यग्मिथ्यात्व उदयरूप हो गयी तीसरे गुणस्थान में। १५ में तीन आनुपूर्वी और मिला दी। तो १८ हो गयी और दूसरे गुणस्थान में व्युच्छित्ति ४ की हुयी तो १८ और ४ मिलकर २२ हो गयी। २२ का हिसाब बराबर हुआ अपना।

अब इसी बात को हम ५ और ९ व्युच्छित्तिवाली प्रकृति लेकर घटित करेंगे। पहले गुणस्थान में अनुदय कितना है, उसमें कोई डिफरन्स नहीं है; अनुदय है ५ का। उदय कितना है ? ११७ का। वहां पर व्युच्छित्ति कितनी हो गयी है ? ५ की। ५ की व्युच्छित्ति हुयी, ५ का अनुदय है, तो दूसरे में १० होना चाहिये था। उसके बदले कितना होगा ? ११ होगा। क्यों ? नारकानुपूर्वी उसमें मिला देना। अब वे ११ अनुदय में चली जायेगी और दूसरे की व्युच्छित्ति वहां कितनी कहेंगे हम ? हां, नौ होगी। ग्यारह और नौ कितनी हो जायेगी ? बीस। वह बीस में से सम्यग्मिथ्यात्व उदयरूप करना तो उन्नीस हो जायेगी और उसमें तीन आनुपूर्वी और मिला देना, २२ हो गयी। समझ में आया ?

श्रोता: दूसरे गुणस्थान में नारकानुपूर्वी का हो गया, तीसरे गुणस्थान में तीन ही होगी। चार आनुपूर्वी लिखी है न ? चार आनुपूर्वी आपको समझ में आवे इसलिये लिखी हैं। हर एक गुणस्थान में यह हमारे ख्याल रहे; दूसरे में नारकानुपूर्वी गयी है, तीसरे में चारों ही आनुपूर्वी उदयरूप नहीं हैं, इसको इन्क्लूड करके चारों आनुपूर्वी यहां नहीं है, अनुदयरूप है यह समझाने के लिये यहां लिखा है। हां, केवल तीन आनुपूर्वी लिखते तो फिर कन्फ्यूजन होता। यहां अनुदय में रखी है, यहां चारों अनुदय है तो एक हमने ऑलरेडि पकड़ी है, उसको एक बार गिनी है तो दुबारा यहां नहीं गिनेंगे। वैसे यहां पर हमने अन्य भी पांच को नहीं गिना था। जो पहले अनुदय में रखी थी, तीर्थंकर को नहीं गिना था, आहारकद्विक को नहीं गिना था। टोटल गिनना है तो फिर से गिनेंगे हम।

अब हम आगे देखते हैं तीसरे गुणस्थान में। तीसरे गुणस्थान में २२ अनुदय में

थी। वहां सम्यग्मिथ्यात्व का उदय था, उसकी व्युच्छित्ति हो जायेगी तो चौथे गुणस्थान में बाइस और एक तेइस होने चाहिये थे। परंतु वहां कितने लिखे हैं ? अठारह। अभी उसका हिसाब देखते हैं ऐसा क्यों ? देखो, बाइस में चारों आनुपूर्वी थी, चौथे में उनको उदयरूप करेंगे। तो कितने हो गये ? १८। सम्यग्मिथ्यात्व गया न, परंतु उसके बदले सम्यक् प्रकृति आ गयी। चौथे गुणस्थान में सम्यग्मिथ्यात्व व्युच्छित्ति होकर अनुदय में चली गयी और अनुदय में रखी हुयी सम्यक् प्रकृति को उदयरूप किया। हिसाब बराबर हुआ न १८ का ? अब चौथे में अनुदय १८ और चौथे गुणस्थान की व्युच्छित्ति है १७ की, दोनों मिलकर पांचवें में अनुदय ३५। ये ३५ और पांचवें गुणस्थान में व्युच्छित्ति ८, दोनों मिलकर कितनी होनी चाहिये थी ? ४३। लेकिन उसके बदले वहां छठे में हैं ४१, क्योंकि अनुदय में रखी हुयी आहारकद्विक का छठे में उदय होगा, इसलिये वहां ४१ लिखना। अब वहां छठे में व्युच्छित्ति है ५ की, तो सातवें में अनुदय में ४६ आ गयी।

वहां सातवें में व्युच्छित्ति ४ की तो आगे आठवें में अनुदय में ५० आ गयी। ५० ये और ६ की व्युच्छित्ति हुयी आठवें में, तो नौवें में अनुदय में ५६ आ गयी। ५६ ये और ६ की व्युच्छित्ति है नौवें में तो दसवें में अनुदय में ६२ आ गयी। यहां हमने करेक्शन किया था छपे हुये में, पांच का छह बना दिया था नौवें में। फिर ६२ ये और दसवें में १ की व्युच्छित्ति तो ग्यारहवें में अनुदय में ६३ हो गयी। ६३ ये और २ की व्युच्छित्ति तो बारहवें में अनुदय में ६५ हो गयी। *श्रोता: बासठ में एक व्युच्छित्ति कौनसी मिलायी ?* ६२ में एक व्युच्छित्ति जो दसवें में सूक्ष्मलोभ की होती है उसको मिलाकर ग्यारहवें में ६३ अनुदय में चली गयी। अब ग्यारहवें में अनुदय ६३ और २ की व्युच्छित्ति मिलकर ६५ बारहवें में अनुदय में चली गयी। बारहवें में अनुदय में ६५ और १६ की व्युच्छित्ति कितनी होनी चाहिये थी ? इक्यासी। किसको उदयरूप किया ? तीर्थंकर प्रकृति को उदयरूप किया तो तेरहवें में अनुदय में ८० और २९ की व्युच्छित्ति, १०९ हो गयी। यहां चौदहवें में १०९ अनुदय में हैं। यहां १३ का उदय अन्य-अन्य नाना जीवों की अपेक्षा बताया है और उन सब १३ की, यहां उदय की व्युच्छित्ति हो जाती है।

यह उदय-अनुदय की बातें हमें रटना नहीं है। इस टेबल का अर्थ कैसे करना, कैसे पढ़ना, यह आगे-आगे के अनुदय कैसे उन्होंने डिराइव्ह किये, यह संख्या कैसे आयी उसको समझना है। कहां का हमने समझा ? पहले हमने पांच अनुदय में रखी, दूसरे में नारकानुपूर्वी को भी अनुदय में डाल दिया। तीसरे में सम्यग्मिथ्यात्व को

उदयरूप किया और तीन आनुपूर्वी को अनुदय में डाली। चौथे में सम्यक् प्रकृति को उदयरूप किया और चारों आनुपूर्वी को भी उदयरूप किया अनुदय में से। फिर और डिफरन्स कहां आया ? छठे में जो आहारकद्विक अनुदय में पड़ी थी उसको उदयरूप किया। फिर तीर्थंकर प्रकृति के बारे में, वह अनुदय में थी उसको तेरहवें में उदयरूप किया। यह क्यों लिखा है उसका अर्थ ख्याल में लेना है। पढ़ते समय इसका अर्थ ख्याल में आता है या नहीं इतनी बात महत्व की है। यह आंकड़े कोई याद करने की बात नहीं है। समझकर हम उसको डिराइव्ह कर सकते हैं। यह उदयवाली बात कल हुयी थी। अब उदीरणा की भी बात थोड़ी हुयी थी, जिस संबंध में भी बहुत प्रश्न आये हैं।

प्रश्न: यह उदीरणा क्या होती है ? प्रत्येक कर्म में उदय होता है तो उदयावली के ऊपर के जो कोई निषेक हैं; निषेक का अर्थ क्या होता है ? जैसे आड़ी लाइन में हम निषेक रचना बताते हैं। नीचे वर्तमान समय का निषेक है और ऊपर भविष्य के प्रत्येक समय के निषेक सत्ता में पड़े हैं, वे अनेक कोड़ाकोड़ी सागरों के रहते हैं। यह नीचे का उदयरूप निषेक है। निषेक का अर्थ क्या है ? एक साथ उदय में आनेवाले परमाणुओं का जो गठ्ठा है - लॉट है उसको निषेक कहेंगे। एक-एक निषेक में अनंत परमाणु होते हैं। अब एक समय, दो समय, तीन समय ऐसे मान लेते हैं यहां आवलीप्रमाण समय हैं, इतने निषेकों को कहेंगे उदयावली। उदय के समय से लेकर आवली काल तक के जो निषेक हैं इसको कहेंगे उदयावली, उदयावली के निषेक। नीचे से हम तीन-चार ही मान लेंगे न; यहां असंख्यात कैसे बता सकेंगे ? हमारे पंद्रह-सोलह निषेक भी नहीं हैं यहां। तो इतने को हम उदयावली कहेंगे। अब क्या होता है कि ऊपर के सभी निषेकों में से पूरे के पूरे निषेक नीचे नहीं आ रहे हैं, सब निषेकों में से थोड़े-थोड़े परमाणु निकलकर फिर नीचे सर्व निषेकों में दिये जाते हैं। अपने-अपने निषेक के नीचे अन्य सर्व निषेकों में उनको दिया जाता है। उसके भी कुछ नियम हैं उनको हम बाद में देखेंगे। ऊपर के निषेकों में से जो कोई परमाणु निकलकर उदयावली में आकर जुड़ गये, ऊपर से छूटकर उदयावली में आये तो उसको कहेंगे उदीरणा। कुछ परमाणु ऊपर से छूटकर उदयावली के ऊपर ही दिये जायेंगे उसको अपकर्षण कहेंगे। अपकर्षण यानी स्थिति का घटना। ये सर्वत्र ही दिये जाते हैं, यह है सामान्य अपकर्षण और अपकर्षण होकर जो उदयावली में आकर जुड़ते हैं उनको कहेंगे उदीरणा।

ऐसी उदीरणा हर कर्म में होती रहती है और जीव के कुछ पुरुषार्थ से उदीरणा

होती है यह बात नहीं है। हां जहां वह असंख्यात समयप्रबद्धों की उदीरणा वगैरह जो श्रेणी का कार्य है वह बात अलग है, परंतु सामान्य से आठों ही कर्मों में ऐसी उदीरणा होती रहती है। कब होती है ? तो बंध होने के एक आवली के पश्चात् उदीरणा शुरू होती ही है। मात्र उसमें नियम क्या है ? जिसका उदय है उसीकी उदीरणा होती है यानी उदीरणा होने के लिये उदय का नियम है परंतु उदय है इसलिये उदीरणा होगी ही ऐसा नहीं है। उलटा नहीं लेना, मेरी भाषा में, अपनी ओर से कोई नियम नहीं बनाना क्योंकि हमने कल क्या देखा था ? साता या असातावेदनीय की उदीरणा कहां तक होती है ? छठे तक गुणस्थान तक होती है। ऊपर उसका उदय कहां तक है ? चौदहवें तक है। परंतु वहां उसकी उदीरणा नहीं है। क्यों ? उनकी उदीरणा वहां छठे गुणस्थान में रुक गयी। छठे तक उदीरणा है, आगे उदीरणा नहीं है उसको हम क्या कहेंगे ? उदीरणा की व्युच्छित्ति हुयी। साता-असाता के उदय की व्युच्छित्ति हमने चौदहवें गुणस्थान में देखी थी और उदीरणा की व्युच्छित्ति हमने छठे गुणस्थान में देखी।

कोई और ऐसा कर्म है जिसकी उदीरणा पहले रुक जाती है ? हां आयु कर्म की उदीरणा। आयु कर्म में भी ऐसे निषेक होते हैं। हम जितनी आयु बांधकर आये हैं, एक-एक समय का निषेक सुनिश्चित है। उन निषेकों में कोई बढ़ोतरी नहीं होती। अभी हमारी मनुष्यायु चल रही है, इसमें एक समय का भी निषेक बढ़ेगा नहीं। परमाणु थोड़े ऊपर चले जायेंगे, तो आयु बढ़ जायेगी ? क्यों अतुलभाई, अमेरिका जायेंगे तो आयु बढ़ेगी कि नहीं ? कितने समय से बढ़ सकती है ? वह कहते हैं आजकल अमेरिकावाले ही मेडिकल ट्रीटमेंट के लिये इंडिया में आते हैं। उनकी तो आयु बढ़ती होगी ? जितनी आयु बांधकर आये हैं उसमें एक समय की भी बढ़ोतरी होनेवाली नहीं है। हम तो देखते हैं न ऑपरेशन करते हैं, ओपन हार्ट सर्जरी की और आयु बढ़ गयी कि नहीं बढ़ गयी ? अरे जिसकी जितनी आयु है उसके लिये वैसे निमित्त सहजरूप से मिलनेवाले हो तो मिलेंगे। आपका कोई प्रश्न था ? *श्रोता: उदीरणा होती है आयु की तो क्या फ़ायदा है ?* हां हम तो कर्मों की अवस्था हमारे फायदे की तरफ से देखते हैं। भाईसाहब का प्रश्न है कि *आयु की उदीरणा होती है तो उसका क्या फ़ायदा है ?* कुछ नहीं, ऊपर की थोड़ी धूल नीचे आती है और कुछ फ़ायदा नहीं होता है। *श्रोता: स्वास्थ्य में फायदा है ?* स्वास्थ्य में कोई फायदा नहीं होता। क्योंकि यहां अनंत परमाणु पड़े हैं उसमें से थोड़ेसे परमाणु नीचे आते हैं और सहजरूप से ऐसी बातें बनती हैं इतना ही है।

जैसे हमने कल देखा था उदय की अपेक्षा हम जो आबाधा देखते हैं न, कि किसीने ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया है मिथ्यात्व का, तो उसका उस समय में बंधे हुये का उदय कब होगा ? तो कहेंगे सात हजार वर्ष के बाद। परंतु वह बंध होने के एक आवली के पश्चात् ही सात हज़ार वर्ष के ऊपर जो निषेक रचना थी, उन सबमें से कुछ परमाणु नीचे आते हैं और वहां सत्ता में ऑलरेडि पड़े थे उनके साथ वे उदयावली में जाकर उनका उदय भी चालू होता है। कब ? एक आवली के पश्चात् होता ही है, बंध के बाद एक आवली में सभी कर्मों का उदीरणा के द्वारा उदय चालू हो जाता है। तो आप कहेंगे फिर आबाधा का क्या मतलब है ? आबाधा का मतलब है बंधते समय उसकी उतनी आबाधा थी, परंतु बंध के एक आवली के पश्चात् उदीरणा होती ही है और जिनका उदय है उनका वहां पर उदीरणा द्वारा उदय भी मिलेगा और उसका फल भी मिलेगा। *श्रोता: आबाधाकाल में उसका उदय है ?* वह उदय की आबाधा है और इसको कहेंगे उदीरणा की आबाधा। उदीरणा की आबाधा तो एक आवली ही होती है। हम सोचते हैं न, क्या अभी तो फल नहीं न मिल रहा है; आपकी थिअरी कहते हो, चलो देखेंगे आगे के भव में, अभी तो भोग लो, कर लो कैसे भी परिणाम; ऐसी कुछ बात नहीं है। उदीरणा से उदय होता है इतनी ही बात है, बहुत सारी बातें होती हैं।

पुराने बंधे हुये कर्मों में भी वर्तमान परिणाम के अनुसार संक्रमण होते हैं। वर्तमान में अभी कोई बहुत तीव्र अशुभ परिणाम कर रहा है, तो उसके अशुभवाली प्रकृतियां बंध ही रही हैं। जो बंधती हैं उनमें पुरानी प्रकृति संक्रमित होती हैं। अभी मान लेते हैं असातावेदनीय का बंध हो रहा है, पहले बंधा हुआ सातावेदनीय अभी वर्तमान में जब तक वह परिणाम चले तब तक असातारूप से संक्रमित होते रहता है। यानी एक ही परिणाम से बहुत सारी अवस्थायें होती हैं परंतु हम सभी अवस्थायें एक साथ समझ नहीं सकते हैं। इसलिये एक बार हम बंध की बात कर रहे हैं, एक बार उदय की बात कर रहे हैं। अभी दस की दस अवस्थाओं की बात आयेगी इसमें, दस करण की बात। ये सभी अवस्थायें ॲट अ टाइम चलती हैं, परंतु उसको समझने के लिये हमें क्रम से समझना चाहिये। इसीको नहीं पचा पाते तो सबकी एक साथ बातें कैसे करेंगे हम, है न ! तो यह उदीरणा की बात है और ऐसी उदीरणा सभी कर्मों में होती है।

श्रोता: ॲक्सिडेंट में एक साथ पांचसौ आदमी मर जाते हैं, क्या इसमें उदीरणा आयु कर्म की होती है ? देखो हमें अचरज लगता है, एक साथ पांचसौ आदमी मर गये।

परंतु आपको पता नहीं है हर समय में अनंत जीव एक साथ मर रहे हैं। एक निगोद शरीर के जो जीव एक साथ जन्मे हैं वे एक साथ मरते हैं। मान लेते हैं यह निगोद का एक शरीर है। निगोद शरीर की ऐसी विशेषता है कि उसमें एक साथ जो लॉट जन्म लेता है उन सबकी आयु समान है, एक समय का भी डिफरन्स नहीं होता। वे एक साथ मरेंगे, कितने मरेंगे ? अनंत जीव। निगोद के शरीर की ऐसी विशेषता है- एक समय में अनंत जीव जन्मे; दूसरे समय में और अनंत का लॉट वहीं पर आया, उसी शरीर को अपना शरीर बनाकर वहां जन्मे; तीसरे समय में और अनंत जन्मे। अब वे कब मरेंगे ? वे भी क्रम से मरेंगे। जैसे हमारी स्कूल है और उसमें दस क्लासेस हैं, हैं न पहली से लेकर दसवीं तक ? तो मान लेते हैं सौ स्टुडंट्स ने ॲडमिशन ली। अभी कोई फेल नहीं होता है ऐसा समझना। फिर क्या होगा ? दस साल तक रहेंगे और फिर वह सौ की बॅच निकल जायेगी। परंतु वह सौ की बॅच निकल जाये तो स्कूल खाली होगा क्या ? नहीं-नहीं। अरे हर साल वहां सौ की बॅच आ रही है यानी स्कूल में तो हमेशा ही हर क्लास के सौ-सौ ऐसे हजार तो स्टुडंट्स वहां रहेंगे और हर साल में नये सौ आयेंगे और पुराने सौ निकल जायेंगे। निगोद शरीर भी हरा-भरा रहता है। कोई निगोद शरीर तो ऐसे हैं जो असंख्यात वर्षों तक रहनेवाले हैं। हमें मालूम है- आलू है, प्याज है, गाजर वगैरह है, वे कुछ दिन, कुछ महीनों तक टिके रहेंगे। परंतु ये तो ऐसे हैं कि हर समय नयी बॅच आती है और अनंत जीव एक साथ मरकर चले जाते हैं। ऐसा ही सहज होता है कि जिन्होंने उतनी ही आयु बांधी थी, एक साथ आकर उस शरीर में जन्म लेते हैं।

अब यह ॲक्सिडेंट में भी जो मरते हैं तो उनकी आयु वैसी ही, उसी निमित्त से समाप्त होनी थी - वैसे ही बनना था। हां वहां बहुत समयों का, अंतर्मुहूर्त क्या घंटे भर का भी डिफरन्स हो सकता है। हमें लगता है कि वहां एक साथ मरे, परंतु समय-समय की बात देखो उसमें। उसमें भी कुछ नहीं मरते, कुछ मरते हैं, क्यों ? ऐसा भी देखने में आया है कि कोई भूकंप आता है, कितने ही लोग आठ-आठ दिन के बाद भी ज़मीन के नीचे से ज़िंदा निकलते हैं। क्यों ऐसा होता है ? हां जिसकी उसकी आयु है, उनका कदलीघात नहीं होना था तो नहीं मरे। कोई ऐसे भी होते हैं कि आगामी आयु का बंध किया होगा, वे भी नहीं मरेंगे। जिस जीव का जिस समय में जिस क्षेत्र में जिस निमित्त से जैसा जन्म-मरण, जन्म-मरण के बीच में जो-जो कोई घटनायें हैं; ॲक्सिडेंट होना हो या बीमारी आनी है, जो कुछ होना है; जैसे जिनेन्द्र भगवान ने जाना है वैसा ही होगा। यह

जाना है बीच में क्यों लिखा ? क्योंकि वह सब कुछ सुनिश्चित है। सुनिश्चित है, तभी तो उन्होंने जाना। सुनिश्चित नहीं होता तो वे सुनिश्चितरूप से कैसे जानते ? हम पराधीन नहीं हुये कि उन्होंने जाना इसलिये हमें वैसा ही करना पड़ेगा, ऐसी बात नहीं है।

वह उनके ज्ञान की विशेषता है, ज्ञान की महानता है कि उन्होंने जान लिया है। वस्तु अपनी स्वयं की योग्यता से हर समय परिणमित होती है। यानी किसी भी पदार्थ की अनादि से अनंतकाल तक की एक-एक पर्याय सुनिश्चित है और अपने स्वयं से होती है। हम केवल बाहर देखते हैं, संयोगों को देखते हैं, निमित्तों को देखते हैं। निमित्त भी निश्चित है क्योंकि हर कार्य जो है, कार्य यानी पर्याय उसमें पांच समवाय होते हैं। स्वभाव है, पुरुषार्थ है, काललब्धि है, होनहार है और निमित्त है। यह एक-एक पर्याय का सब कुछ निश्चित है। यह निश्चित है उसको हम अपने ज्ञान के द्वारा निश्चित करेंगे, समझेंगे, तभी उसको सम्यग्दर्शन हो जायेगा। यह तत्त्वनिर्णय करना है। हमें लगता है उन्होंने जान लिया पहले से तो हमारा पुरुषार्थ क्या रहा ? उन्होंने जान लिया कि हम ऐसा घर बांधनेवाले हैं। अभी यहां से जाकर लेफ्ट में मुड़नेवाले हैं, तो हमको वैसे मुड़ना पड़ेगा तो हमारा पुरुषार्थ क्या रहा ? पुरुषार्थ किसमें माना हमने ? इच्छा करने में और वैसा पर पदार्थ का परिणमन होने में हमने अपना पुरुषार्थ माना। परंतु कोई भी एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का परिणमन कर ही नहीं सकता। फिर इतनी कर्मों की बातें क्यों जाननी ? क्योंकि सीधे कथन से नहीं मानते न, इसलिये थोड़ा डिफिकल्ट करके बतायेंगे, तो कहते हैं हां-हां अभी कुछ समझ में आया, बात यही है। देखो, यह ज्ञान का विषय है और ज्ञान उसको जानता है। ज्ञान का कार्य ही सब कुछ जानना है तो वह सब कुछ जानता है। जानने का निषेध नहीं है न, क्योंकि यह सत्य बात जान रहे हैं। ये न्यूज चॅनल क्यों इतने चलते हैं ? वह सत्य है इसकी कोई गॅरंटी है ? उसको भी मॅन्युप्युलेट करके दिखाया जाता है। हम तो सर्वज्ञ ने बतायी हुयी सत्य बातें जान रहे हैं।

प्रश्न: उदीरणा क्या आबाधाकाल को छोड़कर होती है ? नहीं। एक समय में जो सात हज़ार वर्ष की आबाधा बनी वह उदय की अपेक्षा है, उसी आबाधा का एक आवली काल बीत गया और वहां उदीरणा के द्वारा, पूर्व सत्ता में जो निषेक पड़े थे उनके साथ, ये भी परमाणु उदयावली में जुड़ जाते हैं और वहां उनका उदय भी शुरू हो जाता है। *प्रश्न: अकाल मृत्यु कहते हैं वह क्या है ?* वह तो बात बतायी न कदलीघात से होता है। उदीरणा नहीं, वहां उसको कदलीघात कहते हैं। निषेकों का पूरा ही घात

हो जाता है। हमने जो अभी वहां निषेक रचना दिखायी थी, वैसी आयु में भी होती है। मान लेते हैं ६० साल इतनी लंबी आयु बाकी थी। अब क्या होगा ? कदलीघात ऐसी अवस्था है कि ऊपर के सभी के सभी निषेक नष्ट होकर ये सभी परमाणु नीचे के मान लो १० मिनट के निषेकों में आ मिलते हैं। अभी भी इतनी १० मिनट की आयु बाकी है। उसमें क्या होगा ? पहले एक अंतर्मुहूर्त में आयु का बंध होगा क्योंकि आयु का बंध हुये बिना कोई नहीं मरता। आगामी पूरा रिझर्वेशन हो जाता है ऑटोमॅटिक।

हमें कहीं जाना है तो कहां ठहरेंगे, कौनसा हॉटेल लेंगे, पहले से बुकिंग करेंगे, वहां जगह मिलेगी कि नहीं मिलेगी, जैन भोजन मिलेगा या नहीं मिलेगा, रस्ते में क्या-क्या होगा कितनी सारी चिंता ! यहां तो कोई चिंता नहीं क्योंकि अनादि से हम जन्म-मरण करते आये हैं और आगामी भव का सब कुछ अपने परिणामों के वश, अपने आप वहां पर रिझर्वेशन हो जाता है। तो टेवाइ गया छे ! यानी आदत हो गयी है। क्या करें क्योंकि अभी तो हम मनुष्य हैं तो अच्छा लगता है। अधिक से अधिक पैसा कमायें कैसे और इसको भोगे कैसे इसीमें हमारी सारी पूरी व्याकुलता है, पूरे विचारों की जो बात चलती है इसीमें चलती है। परंतु हम अगर देखेंगे अनादि से कैसे-कैसे भव करके हम यहां आये हैं। पहले हमने जीवकाण्ड में देखे थे न सारे जीवसमास ? किस-किस पर्याय में कितना काल बिताकर हम आज इस मनुष्यपर्याय में आये हैं और यह अवसर है कि यह बात समझे और जल्द से जल्द अपना कल्याण करें। अब यह बात यहां नहीं होगी तो ? क्योंकि कर्म तो कुछ जानते नहीं न और उनके पास कुछ दया-माया नहीं है। जैसे परिणाम हम करते हैं वैसे कर्म ऑटोमॅटिक बंधते हैं और उसके अनुसार उनके उदय भी होते रहते हैं और उनके फल भी भुगतने पड़ते हैं। अब है पांच मिनट अपने विषय के लिये ये तो दो प्रश्न हो गये अभी।

यह हमने उदय के बारे में, उदीरणा के बारे में देखा है, उदीरणा में इतना ही समझना था। हां, देखिये एक प्रश्न ऐसा है कल जो बात आयी थी आयु बंध के बारे में। *आयु का बंध कब होता है ?* कर्मभूमि के मनुष्य और तिर्यंचों के लिये जितनी आयु लेकर आया है उसका टू थर्ड-दो तिहाई यानी दो तृतीयांश काल बीत जाये, और एक तिहाई काल बाकी रहे तब पहले अंतर्मुहूर्त में उसके आयु का बंध होता है। यह आयु का बंध होता है तो क्या एक ही बार होता है ? इसको आयु बंध के अवसर ऐसा क्यों कहते हैं ? क्योंकि उस समय जीव के मध्यम परिणाम होते हैं। आयु बंध के योग्य

परिणाम उतने अंतर्मुहूर्त तक ही रहते हैं। तो ऐसे आयु बंध के योग्य परिणाम कब-कब हो सकते हैं ? पहला वन थर्ड बाकी है तब, फिर जो वन थर्ड बचा उसका वन थर्ड बाकी रह जायेगा तब। जैसे इक्यासी वर्ष की आयुवाला कोई मनुष्य है। समय कहां से गिनना ? विग्रहगति के पहले समय से वह समय गिनना। उसके वन थर्ड बाकी यानी सत्ताइस साल बाकी है तब पहला अंतर्मुहूर्त है वहां आयु का बंध होने का अवसर है। उस समय बंध करेगा भी या नहीं भी कर सकता है। दूसरा अवसर कब आयेगा ? सत्ताइस का वन थर्ड नौ साल बाकी रहेंगे तब। तीसरा अवसर उसका वन थर्ड यानी तीन साल बाकी रहेंगे तब। उसका एक साल बाकी रहेगा तब चौथा अवसर आयेगा, फिर साल भर के उसके दिन करो, फिर उसके वन थर्ड-वन थर्ड बाकी रहेंगे तब, ऐसे आठ बार आयु बंध के अवसर आते हैं।

किसी जीव को एक ही बार में; आयु की बात है गति की नहीं, कोई न कोई गति हर समय बंधती है; जब आयु बंध रही है उसकी, मान लेते हैं मनुष्य की आयु बांधी उसने, पहले ही अवसर में मनुष्यायु बांधी। दूसरे अवसर में ज़रूरी नहीं उसको फिर दुबारा आयु का बंध होगा। एक ही अवसर में आयु बांध ली उसने। आगामी आयु संबंधी सारे परमाणु एक बार में ही ग्रहण किये। कोई ऐसा जीव होगा उसने दो बार मिलकर ग्रहण किये। उसमें आयु की स्थिति बढ़ती है ऐसी कुछ बात नहीं। निषेक रचना इतनी की इतनी हो जाती है, उन्हीं निषेकों में और परमाणु आकर मिलते हैं। कोई दो बार में मिलकर बांधते हैं, कोई तीन बार, कोई चार बार, कोई आठ बार मिलकर भी आयु का बंध कर सकते हैं। यह हो सकता है किसी जीव को- यह बताने के लिये बताया था आठ बार। हर जीव को आठ बार आयु का बंध होता है, ऐसा नहीं है। किसीको आठ बार में मिलकर होता है, किसीको सात बार, किसीको छह बार, किसीको पांच बार, किसीको एक बार। उसमें कितनी बार होता है तो ज्यादा पक्की आयु होगी ऐसा कुछ नहीं है।

पहली बार सौ साल की आयु बांधी होगी और अगली बार एक सौ बीस साल की बांधी होगी तो वह एक सौ बीस साल की होगी। परंतु नेक्स्ट बार अस्सी साल की बांधी तो क्या होगा ? वह सौ साल की रहेगी ही क्योंकि सौ साल की बांधी हुयी है। हम अभी मनुष्य हैं और हमने देव की आयु बांधी है। अभी दोबारा आयु बंध के अवसर बिना परिणाम के वश वह बंधी हुयी आयु घट सकती है। उसको उदीरणा नहीं कहेंगे,

उसको घातायुष्क कहेंगे। ऊपर के स्वर्गों की आयु बंधी है, अनेक सागरों की बंधी है और वह घटकर नीचे के स्वर्गों जैसी हो जावें तो उसको क्या कहेंगे ? घातायुष्क। जैसे श्रेणिक राजा ने पहली बार नरकायु बांधी थी। कितनी बांधी थी ? ३३ सागर की। फिर क्या हुआ ? दूसरी बार उन्होंने बांधी होगी कि नहीं ? सम्यग्दर्शन हुआ, तीर्थंकर प्रकृति का बंध करने लगे, फिर दूसरी बार उन्होंने आयु बांधी होगी कि नहीं ? *श्रोता: बांधी।* कौनसी बांधी ? क्या सम्यग्दृष्टि नरकायु का बंध करता है ? बंध की व्युच्छित्ति कहां होती है ? नरकायु के बंध की व्युच्छित्ति कहां होती है ? पहले में। यानी दूसरी बार उन्होंने आयु बांधकर नहीं घटायी है। उनके सम्यक्त्व के परिणाम के वश यह बंधी हुयी आयु घटकर; घटने के लिये उनके फिर दुबारा आयु बंध के अवसर की जरूरत नहीं है। सम्यक्त्व होने के बाद नरकायु बांध ही नहीं सकते तो आयु बंध के काल में नहीं घटायी, ऐसे ही परिणामों के वश आयु घट सकती है।

श्रोता: बढ़ भी सकती है ? बढ़ेगी नहीं। बढ़ेगी कब ? नया बंध होगा तब। हमेशा उत्कर्षण के लिये नये बंध की अपेक्षा होती है। दूसरी बार; अभी-अभी मिथ्यात्व में ही रहते हुये किसीने दुबारा नरकायु बांधी है। अभी पहले एक सागर की बांधी थी, दो सागर की बांधी थी, फिर बढ़ सकती है या दूसरी बार सात सागर की बंध सकती है, ख्याल में आयी न बात ? उत्कर्षण के लिये नये बंध की आवश्यकता है, घटने के लिये नहीं। वह परिणामों के वश ऐसे ही घट सकती है। *श्रोता: बढ़ती है या घटती है, आठों बार आठ आयु बंधती है ?* आठ आयु नहीं बंधेगी, वही आयु आठ बार बांधी। अलग-अलग स्थिति बंधी तो भी उन्हीं निषेकों में जा मिलेंगे। फायनल जो कोई मॅक्झिमम आयु बंधी है वही फायनल रिझल्ट है। पहले अधिक बांधी है और बाद में कम बांधी तो उन्हीं निषेकों में वे सारे निषेक मिल जाते हैं। हां इसतरह से वह फायनल आयु हो जाती है। देखो आयु और गति के बारे में बहुत सारे प्रश्न उठते हैं, हमने उसके बारे में अभी कुछ बातें देखी है। उदय-उदीरणा की भी बात देखी थी। अभी आगे हम सत्ता की बात देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३८. सत्त्व, सत्त्व की व्युच्छित्ति

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से कर्मकाण्ड की भाषा टीका है सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका, जो पं. टोडरमलजी ने ढूंढ़ारी भाषा में लिखी हुयी है और उसीका हिंदी अनुवाद आपके हाथ में है। अभी तक हमने बंध की बात विस्तार से देखी, उदय संबंधी व्युच्छित्ति आदि भी बात देखी है। अब हम सत्ता की बात देखेंगे। बंधने के बाद कर्म सत्ता में पड़े रहते हैं। नया बंध नहीं हुआ तो भी पुराना बंधा हुआ कर्म सत्ता में कितने ही काल तक पड़ा रहता है उसकी चर्चा करेंगे। पहले बंध संबंधी एक प्रश्न है उसको लेकर आगे बढ़ेंगे।

प्रश्न: अगर किसीने पहले तिर्यंच या मनुष्य की आयु बांधी हो और बाद में तीर्थंकर प्रकृति का बंध हुआ हो, तो कितने भव में मोक्ष जायेगा और कौन-कौनसे भव रहेंगे ? जिसने तिर्यंचायु या मनुष्यायु का बंध किया है उसके तीर्थंकर प्रकृति का बंध ही नहीं होता। जिस मनुष्य ने पहले तिर्यंचायु या मनुष्यायु बांधी है, बाद में वह क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। क्षायिक सम्यक्त्व लेकर वह भोगभूमि का मनुष्य या तिर्यंच हो सकता है - क्षायिक की बात है, परंतु वह जीव तीर्थंकर प्रकृति का बंध नहीं करेगा यह नियम है। पेज ३६८, ऊपर से छह नंबर की लाइन, देखो क्या लिखा है ? **क्योंकि जिनके बध्यमान तिर्यंचायु** बध्यमान किसको कहते हैं ? जो बंधी हुयी आयु है उसको बध्यमान आयु कहते हैं और जिस आयु का उदय है, जो हम भोग रहे हैं उसको भुज्यमान आयु कहते हैं। **जिनके बध्यमान तिर्यंचायु, मनुष्यायु हो और भुज्यमान मनुष्यायु हो** यानी जो मनुष्य है, जिसने ऑलरेडि मनुष्यायु या तिर्यंचायु का बंध किया हो **उस असंयत सम्यग्दृष्टि के**; असंयत क्यों कहा ? आगे के गुणस्थानवाले क्यों नहीं कहे ? उनके पांचवां गुणस्थान भी नहीं होगा, वह बात आगे आयेगी। जिन्होंने मनुष्यायु, तिर्यंचायु या नरकायु पहले बांधी हो, उनके पांचवां गुणस्थान भी नहीं होगा; मुनि होने की तो बात ही नहीं और श्रेणी चढ़ने की भी बात नहीं। वह नियम की बात आगे आयेगी। यहां तीर्थंकर प्रकृति संबंधी प्रश्न था जिन्होंने पहले तिर्यंचायु या मनुष्यायु बांधी है ऐसा मनुष्य है, वह तीर्थंकर प्रकृति का बंध करेगा ही नहीं। **तीर्थंकर प्रकृति के बंध का प्रारंभ नहीं होता।** बध्यमान देवायु और भुज्यमान- वह सत्त्व के भंगों की बात है जो हम छोड़ देते हैं। अपना यह विषय नहीं है, प्रश्न संबंधी यह रेफरन्स बताया।

एक यह भी प्रश्न था कि *ॲक्सिडेंट के काल में आयु के बंधयोग्य परिणाम क्या सबके हो जाते हैं ?* हमने देखा था कि मध्यम परिणाम में आयु का बंध होता है। कदलीघात से होता है या ॲक्सिडेंट में तो सबके संक्लेश परिणाम होते होंगे- क्या यह ज़रूरी है ? हम आपको किसीको ॲक्सिडेंट हुआ तो हम तत्त्व की बात सोचेंगे या रोना-धोना चालू करेंगे ? बात ख्याल में आती है ? एक बात यह है। दूसरी बात क्या है, यह ज़रूरी नहीं कि ॲक्सिडेंट में मरण होता है तो कदलीघात से ही होता है। क्यों ? हो सकता है वह जीव उतनी ही आयु बांधकर आया है और उसका उसी निमित्त से वहां वैसा ही मरण होना है। हो सकता है पूर्व भव में उसने पच्चीस साल की आयु बांधी है या तीस साल की बांधी है, जिस समय उसका मरण होता है उसकी बात है। वह मरण दो प्रकार से होता है- उस समय उतनी ही आयु लेकर आया होगा और आयु पूरी हो गयी है या दूसरी बात कदलीघात से मरण हुआ होगा, दोनों ही बातें हो सकती हैं।

यहां अभी सत्ता की बात चलेगी। अभी तक हमने बंध की बात देखी है, कौनसे गुणस्थान में किसका बंध होता है, किसका नहीं होता। जैसे मिथ्यात्व का बंध कहां होता है ? तो कहेंगे पहले गुणस्थान में। उदय भी पहले में ही होता है, ऊपर कहीं भी नहीं होता। परंतु सत्ता ? बंधा हुआ मिथ्यात्व ग्यारहवें गुणस्थान तक पड़ा रहता है। यह सत्ता की बात कुछ अटपटी है। ऐसा होता है क्योंकि उस पर्याय में भले ही उसने वह कर्म नहीं बांधा हो पर पूर्व पर्याय से बांधकर आया हो तो सत्ता में पाया जाता है। उसके बारे में हमें कुछ अलग ढंग से सोचना पड़ेगा। उसके बारे में पहले कुछ नियम हम देखेंगे। यहां गुणस्थानों में सत्ता की बात चलेगी। कौनसे गुणस्थानों में कौनसे प्रकृतियों का सत्त्व, सत्ता यानी सत्त्व हो सकता है ? सत्त्व कहो सत्ता कहो, एक ही बात है।

क्या किसी जीव को मिथ्यात्व गुणस्थान में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व होगा ? आप कहते हैं नहीं होगा क्योंकि हमने देखा है वहां बंध नहीं है तो सत्त्व कैसे हो सकता है ? यह प्रश्न है न ! परंतु जिस किसी सम्यग्दृष्टि ने तीर्थंकर प्रकृति बांधी है, कौनसा सम्यग्दृष्टि ? ऐसा कि जिसने मिथ्यात्व अवस्था में पहले नरकायु का बंध किया था, बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया है। वेदक सम्यक्त्व है, क्षायिक नहीं हुआ है और उसने तीर्थंकर प्रकृति बांधी है, बांध रहा है। परंतु उसने नरकायु बड़ी बांधी है, दूसरे-तीसरे नरक के योग्य। क्षायिक किया नहीं है, वह सम्यक्त्व लेकर जानेवाला नहीं है। तो वह मनुष्य नरक जाने के पहले नियम से मिथ्यात्व में जायेगा। तीर्थंकर प्रकृति का बंध

किया है तो उसकी सत्ता है उसके। अब मिथ्यात्व में गया है, वह अंतर्मुहूर्त के लिये मिथ्यात्व में है। वह जीव नरक में जायेगा और एक अंतर्मुहूर्त में ही सम्यक्त्व प्राप्त करेगा, उससे अधिक उसके मिथ्यात्व का काल नहीं है। मात्र इसी जीव के, अन्य किसीके नहीं; कि जिसने पहले नरकायु बांधकर बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया है; बाद में तीर्थंकर प्रकृति बांध रहा है और मरकर जो दूसरे-तीसरे नरक में जानेवाला है। क्यों ? क्योंकि क्षायिक होगा तो मिथ्यात्व में जाने का सवाल नहीं है, परंतु जो वेदक सम्यग्दृष्टि यानी क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि है, वह मिथ्यात्व में जाकर फिर नरक में जायेगा और वहां सम्यक्त्व प्राप्त करके फिर तीर्थंकर प्रकृति बांधेगा। यह अंतर्मुहूर्त के लिये मिथ्यात्व में रहते हुये उसको तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता है, ख्याल में आया न ? मिथ्यात्व में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व कैसे पाया जाता है तो मात्र ऐसे ही जीव को पाया जाता है।

आप कहेंगे श्रेणिक राजा को ? उन्होंने क्षायिक प्राप्त किया, उनका तो मिथ्यात्व में आने का सवाल नहीं था। नरक में गये हैं परंतु पहले नरक में गये हैं और क्षायिक लेकर गये हैं तो उनके मिथ्यात्व गुणस्थान में आने का कोई सवाल नहीं है। *श्रोता: वेदक सम्यक्त्व प्राप्त करने के बाद भी तीर्थंकर प्रकृति का बंध करेगा ?* हां बिलकुल ! देखो तीर्थंकर प्रकृति का बंध प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि भी कर सकता है, द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि भी कर सकता है, वेदक सम्यग्दृष्टि भी कर सकता है और क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी कर सकता है। *श्रोता: द्वितीयोपशम में भी ?* हां उसका बंध हो सकता है उसको। आगे लिखा है, अभी पेज नंबर याद नहीं है। पर हर एक को अलग-अलग लिखकर यह बात बतायी है कि सबके होता है। किसीके मत से नहीं होता है ऐसा था, परंतु उसमें भी उन्होंने दोनों ही मत प्रस्तुत किये हैं। अब यहां हम देखते हैं कि तीर्थंकर की सत्ता, तीर्थंकर की सत्ता का अर्थ होता है तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता। इतना लंबा-लंबा नहीं कहेंगे। पुस्तक में भी इतना लंबा-लंबा नहीं लिखेंगे। कहेंगे तीर्थंकर की सत्ता यानी तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व पहले गुणस्थान में किसी जीव के पाया जाता है।

अब आहारकद्विक की सत्ता होगी की नहीं होगी पहले गुणस्थान में ? तो आप कहते हैं नहीं। अरे परंतु जिन्होंने सम्यक्त्व प्राप्त किया, मुनि हो गये, सातवें गुणस्थान में जाकर फिर छठे में आ गये और फिर मिथ्यात्व में चले गये तो उन्होंने बांधे हुये कर्म सत्ता में पड़े रहेंगे, वे अभी इमीजिएट्लि नष्ट नहीं होंगे। तत्काल नष्ट नहीं होते हैं, कितने ही काल तक रहते हैं। ऐसे ही जिन्होंने संयम भी धारण किया था, भावलिंगी संत हुये थे,

आहारक प्रकृति का बंध किया था और मिथ्यात्व में चले गये हैं; ऐसे जीव कौन-कौनसे जीवसमास में होंगे कि जिनकी सत्ता में आहारक प्रकृति पड़ी है ? जीवसमास समझते हो ? अतुल कहां गये ? चौदह जीवसमास हैं। कोई सूक्ष्म एकेन्द्रिय में पड़े हैं, निगोद में पड़े हैं, उनके भी आहारक की सत्ता हो सकती है। इसका अर्थ उन्होंने भी कभी संयम प्राप्त किया था और अभी उस पर्याय में पड़े हैं। परिणामों की विचित्रता है न ऐसी। सातवें नरक के नारकी जो मिथ्यादृष्टि हैं, किसीके उनकी भी सत्ता में आहारकद्विक की सत्ता पड़ी है। यानी यह परिणाम, एक बार सम्यक्त्व हुआ तो चलो हो गया अपना काम, अभी हमें कुछ नहीं करना, हम स्वच्छंदता से वर्तेंगे इसतरह की बात नहीं होती।

अरे ! एक बार क्या, एक बार की बात नहीं है, असंख्यात बार जिसने सम्यक्त्व प्राप्त किया है। क्यों ? कोई जीव बार-बार मिथ्यात्व में भी गया है और उसने असंख्यात बार सम्यक्त्व प्राप्त किया। असंख्यात बार अनंतानुबंधी की विसंयोजना भी की थी, असंख्यात बार पंचम गुणस्थान भी प्राप्त किया था, चार बार उपशमश्रेणी चढ़कर उतरा था और अनेकों बार संयम भी प्राप्त किया था, भावलिंगी संत भी हुआ था। ऐसे भी जीव अभी वे मिथ्यात्व में पड़े हैं, कोई निगोद में पड़े हैं। हमें तो पता ही नहीं न, एक बार सम्यक्त्व हुआ तो हम अभिमान करने लगे हम सम्यग्दृष्टि ! वह बात नहीं है। जीवों के परिणाम कैसे उलट-पुलट हो जाते हैं और गुणस्थानों से कैसे गिरना-चढ़ना होता है, इस बात का हमें पता नहीं है। हम थोड़ासा कुछ हो गया, तो जोर-शोर मचाते हैं। इसीलिये करणानुयोग के द्वारा हमें यह बात पता चलती है।

सत्ता में आहारकद्विक है यानी इसे उन्होंने कब बांधा था ? जब संयमी हुये तब बांधा था और अभी वे मिथ्यात्व में हैं। ऐसे कितने ही जीव हैं हमने देखा था, एक बार सम्यक्त्व हुआ तो अर्धपुद्गलपरावर्तनकाल में उनका मोक्ष निश्चित है - ऐसे अनंत जीव मिथ्यात्व में पड़े हैं। जो अर्धपुद्गलपरावर्तन काल है वह अनंत अनंतकाल है। जिन्होंने कभी सम्यक्त्व प्राप्त किया था और अभी कोई एकेन्द्रिय में पड़े हैं, कोई द्वीन्द्रिय में पड़े हैं, कोई कहां पड़े हैं। सत्ता के द्वारा हमें प्रकृतियों का ख्याल आता है, परंतु ऐसा नहीं है कि एक बार बंधी है तो कायम अनंतकाल तक सत्ता में पड़ी रहेगी वह बात तो नहीं हो सकती। इसकी बात आयेगी कि उसकी भी उद्वेलना होती है यानी वह भी बंधने के कुछ काल के बाद नष्ट हो जाती है। उसकी बात हम क्रम से देखेंगे।

पहले गुणस्थान में तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता किसीके हो सकती है, किसीके आहारकद्विक की सत्ता हो सकती है परंतु किसी भी जीव को एक काल में दोनों की सत्ता नहीं हो सकती। जिसने आहारकद्विक का बंध कर लिया है और जिसके तीर्थंकर प्रकृति सत्ता में है ऐसे कोई मुनिराज पहले गुणस्थान में आयेंगे कि नहीं आयेंगे ? नहीं आ सकते। हमने अभी आपको एक नियम बताया; जिसने तिर्यंचायु, मनुष्यायु या नरकायु भी बांधी हो, वह पांचवां गुणस्थान भी प्राप्त नहीं कर सकता। तीर्थंकर प्रकृति बांधकर मिथ्यात्व में कौनसा जीव आता है ? वही जीव आ सकता है जिसने नरकायु का बंध किया है। तो कोई जीव क्रम से आ सकता है। देखो कोई जीव सम्यग्दृष्टि हुआ, मुनिराज हुआ, उसने आहारकद्विक का बंध किया, फिर मिथ्यात्व में चला गया। वहां कुछ काल के बाद आहारकद्विक की उद्वेलना होती है यानी वे प्रकृतियां नष्ट हो जाती हैं; मिथ्यात्व में लंबे काल तक रहने के कारण, आहारकद्विक नष्ट हो जाती है। अन्य नामकर्म की प्रकृतिरूप होकर नष्ट हो जाती है। दुबारा उसने नरकायु बांधी, फिर सम्यक्त्व प्राप्त किया और फिर तीर्थंकर प्रकृति बांधी। हमने देखा दूसरे-तीसरे नरक में जानेवाला वेदक सम्यग्दृष्टि, वह मिथ्यात्व में आया है तो उसको तीर्थंकर प्रकृति सत्ता में है। पहले उसी जीव के आहारक की सत्ता थी, अब वह नष्ट होने के बाद कालांतर में उसको तीर्थंकर की सत्ता पायी गयी तो किसी जीव के मिथ्यात्व में क्रम से उन दोनों की सत्ता हो सकती है, पर ॲट अ टाइम दोनों की सत्ता मिथ्यात्व में नहीं हो सकती। *श्रोता: एक ही भव में ?* एक साथ नहीं हो सकती, एक भव की बात नहीं है।

हमने बंध देखे, उदय देखे और यहां सत्त्व देख रहे हैं, सर्वत्र नाना जीवों की अपेक्षा बात कर रहे हैं। जो अनेक जीव हैं उनमें किसीके तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता मिथ्यात्व में है, किसके ? जो तीर्थंकर प्रकृति बांधकर वेदक सम्यक्त्व के साथ नरक में जानेवाले हैं और किसीके आहारकद्विक की सत्ता है। नाना जीवों की अपेक्षा देखेंगे तो सभी प्रकृतियों का सत्त्व पहले गुणस्थान में मिलेगा। यानी पहले गुणस्थान में सत्त्वरूप प्रकृतियां कितनी हैं ? यहां हम १४८ का हिसाब लगायेंगे। अभी तक हमने बंध में १२० का हिसाब लगाया था, उदय में १२२ का हिसाब लगाया था, अभी और स्पष्ट करने के लिये १४८ का हिसाब चलेगा। पहले हम आहारकद्विक कहते थे अभी आहारकचतुष्क कहेंगे। क्यों ? आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग, आहारकबंधन और आहारकसंघात, भेद करके उसको समझायेंगे। उसका प्रयोजन कुछ नहीं है, बस स्पष्टता के लिये।

पहले गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों का सत्त्व नाना जीवों की अपेक्षा हो सकता है ? १४८। ख्याल में आयी बात ? हो सकता है उसकी बात चल रही है।

अब हम पृष्ठ ३३९ पर गाथा ३३३ की टीका पढ़ेंगे। देखो **मिथ्यात्व गुणस्थान में जिसके तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता है, उसको आहारकद्विक का सत्त्व नहीं होता;** उस समय; **जिसके आहारकद्विक का सत्त्व है, उसके तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं होता** है। **इसलिये मिथ्यात्व गुणस्थान में युगपत्** यानी ॲट अ टाइम एक जीव की अपेक्षा, एक जीव की अपेक्षा अगर लगायेंगे तो दोनों का ही सत्त्व एक साथ है ऐसा नहीं हो सकता। किसीके तीर्थंकर की सत्ता हो सकती है, उस समय उसके आहारक की सत्ता नहीं है। **एक जीव की अपेक्षा युगपत् तीर्थंकर और आहारकद्विक, दोनों का सत्त्व नहीं होता - एक का ही हो सकता है परंतु अनुक्रम से।** जो मैंने अभी क्रम से कैसे हो सकता है, बताया था। पहले आहारक का बंध किया था, मिथ्यात्व में गया, आहारक नष्ट हुआ, बाद में नरकायु बांधी, फिर उसने सम्यक्त्व प्राप्त किया, फिर तीर्थंकर प्रकृति बांधी। तब एक अंतर्मुहूर्त के लिये मिथ्यात्व में आया था तब उसके तीर्थंकर की सत्ता है। ऐसा नहीं हो सकता कि पहले तीर्थंकर प्रकृति बांधी, मिथ्यात्व में गया और तीर्थंकर प्रकृति नष्ट हुयी - ऐसा कभी नहीं होगा क्योंकि किन प्रकृतियों का नाश होता है, उद्वेलना होती है उसके भी नियम है। आगे बढ़ेंगे, एक जीव के अनुक्रम से हो सकता है या ॲट अ टाइम **नाना जीवों की अपेक्षा उन दोनों का सत्त्व पाया जाता है।** हम सत्त्व का चार्ट यहां बोर्ड पर देखते हैं। ऊपर गुणस्थान लिखे हैं और उसके नीचे सत्त्व लिखा है।

सत्त्व प्रकृतियां १४८ (१२२)

गुणस्थान	१	२	३	४	५	६	७	८ से ११
सत्त्व	१४८	१४५	१४७	१४८	१४७	१४६	१४६	१४२/१३९
क्षायिक सम्यग्दृष्टि के				१४१	१३९	१३९	१३९	(८-से क्षपकश्रेणी) १३८

सत्त्वव्युच्छित्ति - क्षपकश्रेणी में

गुणस्थान	८	९(१)	९(२)	९(३)	९(४)	९(५)	९(६)	९(७)	९(८)	९(९)	१०	१२	१३	१४(द्विच)	१४(च)
व्युच्छित्ति	०	१६	८	१	१	६	१	१	१	१	१	१६	०	७२	१३
सत्त्व	१३८	१३८	११२	११४	११३	११२	१०६	१०५	१०४	१०३	१०२	१०१	८५	८५	१३

पहले गुणस्थान में नाना जीवों की अपेक्षा १४८ प्रकृतियों की सत्ता है। किसीके कोई है, किसीके कोई है क्योंकि किसीने किसी आयु का बंध किया है, कोई आयु भोग रहा है। चारों ही गतियों की अपेक्षा सभी आयुओं की सत्ता किसी न किसीके तो है ही। तो सभी आयु भी लेना, आहारकद्विक भी लेना, तीर्थंकर भी लेना, सभी कुछ लेना, तो यहां सत्ता है १४८ की। दूसरे गुणस्थान में १४५ लिखा है क्योंकि तीर्थंकर की सत्तावाला जीव एक अंतर्मुहूर्त में मिथ्यात्व में आ सकता है, परंतु दूसरे गुणस्थान में कोई नहीं जायेगा। आहारक की सत्तावाला भी दूसरे गुणस्थान में जा ही नहीं सकता। इसलिये वैसे यहां चार कम करनी चाहिये परंतु वहां द्विक-द्विक कहने की पद्धति है, इसलिये यहां १४५ बता दिया। तीसरे गुणस्थान में १४७ बताया, तीर्थंकर की सत्तावाला आयेगा ही नहीं, परंतु आहारक की सत्तावाला आ सकता है। इसलिये यह पहले तीन गुणस्थानों में पहले में १४८ का सत्त्व, दूसरे सासादन में १४५ का सत्त्व यानी आहारकद्विक और तीर्थंकर के बिना १४५ यहां नाना जीवों की अपेक्षा घटित कर रहे हैं। तीसरे गुणस्थान में केवल तीर्थंकर की सत्ता बिना १४७ का सत्त्व है।

अब चौथे गुणस्थान की बात करेंगे। चौथे गुणस्थानवाले के आहारक की सत्ता होगी कि नहीं होगी ? हो सकती है न, मुनियों को बंध होता है वह चौथें में भी नीचे तक आ सकते हैं। और तीर्थंकर प्रकृति ? चौथेवाले बांधते हैं, उसकी भी सत्ता हो सकती है। चारों गतियों की अपेक्षा नाना जीव जो चौथे गुणस्थानवाले हैं, उनमें कितनी प्रकृतियों का सत्त्व होगा ? १४८। अनेक जीवों की अपेक्षा सभी की सभी प्रकृतियों की सत्ता चौथे गुणस्थानवाले के हो सकती है। पांचवें गुणस्थान की बात करेंगे। यहां क्या लिखा है ? १४७। पांचवें गुणस्थान में ऐसा क्या है कि कोई एक प्रकृति वहां नहीं हो सकती ? तीर्थंकर की प्रकृति हो सकती है कि नहीं हो सकती ? हो सकती है। आहारकद्विक ? हो सकता है। आयु ? नरकायु जिसके बंधी है; देखो यहां आयु का सत्त्व जब कहेंगे, अकेले बंधी हुयी आयु को नहीं सोचना है; कौनसी आयु भोग रहा है और कौनसी आयु बंधी है दोनों की अपेक्षा से सत्त्व है। पांचवां गुणस्थान कौनसे-कौनसे गतिवालों को होता है ? मनुष्यों और तिर्यंचों के। मनुष्य के भुज्यमान मनुष्यायु है और तिर्यंचों के तिर्यंचायु है। दोनों ही जीवों ने देवायु का बंध किया होगा, बंध नहीं भी किया होगा तो भी उनके पांचवां गुणस्थान होता है। परंतु यदि किसी जीव ने तिर्यंचायु, मनुष्यायु, नरकायु बांधी हो तो उसके पांचवां गुणस्थान नहीं हो सकता। हमने तिर्यंचायु, मनुष्यायु

भुज्यमान में ली है इसलिये उसकी सत्ता है; परंतु नरकायु ना भुज्यमानरूप से ले सकते हैं, ना बध्यमानरूप से ले सकते हैं। इसके लिये मैं एक नियम आपको बताती हूं।

हम देखेंगे इसी पृष्ठ पर गाथा ३३४ की टीका नीचे की लाइन में; क्या कहते हैं ? **क्षेत्र अर्थात् गति संबंधी जिनके आयु बंधी हो** यानी चारों ही आयु में से किसी भी आयु का जिनके बंध हुआ हो **उनके सम्यक्त्व हो सकता है।** यानी सम्यक्त्व होने में कोई बाधा नहीं है। क्या कहा ? किसी भी गति का जीव है और उसने किसी भी अन्य गति संबंधी आयु का; आयु की बात चल रही है, आयु का बंध किया है तो उसके सम्यक्त्व होने में कोई रुकावट नहीं है। **परंतु देवायु बिना अन्य गति संबंधी आयु जिनके बंधी हो, वे तिर्यंच तो अणुव्रत को और मनुष्य अणुव्रत या महाव्रत को प्राप्त नहीं हो सकते।** क्या कहना चाहते हैं ? जिस तिर्यंच ने देवायु बिना यानी कब बंधी होगी ? अभी मिथ्यात्व अवस्था में मान लेते हैं तिर्यंच ने तिर्यंच की आयु बांधी है, तिर्यंच ने मनुष्यायु बांधी हो या तिर्यंच ने नरकायु बांधी हो तो उसको पांचवां गुणस्थान नहीं होगा। जिस मनुष्य ने मिथ्यात्व अवस्था में नरकायु बांधी हो, तिर्यंचायु बांधी हो या मनुष्यायु भी बांधी हो तो उसके भी ना अणुव्रत होंगे ना महाव्रत होंगे।

इसीका भावार्थ पढ़ते हैं ३४० पृष्ठ पर। **यदि पहले चारों आयु में से किसी भी आयु का बंध हुआ हो और पश्चात् सम्यक्त्व को धारण करे तो करे, कोई दोष नहीं है।** कोई बाधा नहीं है, वह कर सकता है। **परंतु यदि पहले नरकायु, तिर्यंचायु या मनुष्यायु का बंध हो तो वह जीव अणुव्रत, महाव्रत धारण करने के लिये समर्थ नहीं होता।** यह नियम है। पहले देवायु का बंध हुआ हो और अणुव्रत, महाव्रत धारण करे तो कुछ दोष नहीं। जिनके अन्य आयु का बंध हुआ हो उनके व्रत परिणाम के कारणभूत विशुद्धिरूप कषायों के स्थानों का उदय नहीं पाया जाता। उनके इतनी विशुद्धि नहीं हो सकती कि जिसके कारण उनके पांचवां गुणस्थान प्राप्त हो।

अब मेरा एक छोटासा सवाल है। श्रेणिक राजा को श्रावकोत्तम कहते हैं, है न ? और श्रावक किसको कहते हैं ? पांचवें गुणस्थानवाले को। तो वे पांचवें गुणस्थानवाले थे कि नहीं थे ? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं ? अरे नरकायु का बंध हुआ था उनके, तो उनके अधिक से अधिक गुणस्थान कौनसे हो सकता है ? चौथा। भले ही उन्होंने क्षायिक सम्यक्त्व प्राप्त किया, तीर्थंकर प्रकृति बांधी, फिर भी पांचवां गुणस्थान नहीं ले सकते

यह बिलकुल नियम है। या तो वह जीव बिना आयु का बंध किया हुआ होना चाहिये या यदि आयु बंधी हो तो देवायु होनी चाहिये; अन्य आयु का ऑलरेडि बंध किया हो तो उसके पांचवां या छठा, सातवां ये आगे के गुणस्थान हो नहीं सकते। देखो, इसके लिये आगे की गाथा ३३५, ३३६ की टीका पढ़ेंगे- **विद्यमान जिस आयु को भोगता है वह भुज्यमान आयु** अभी हम सब मनुष्यायु को भोग रहे है, हमारी मनुष्यायु का उदय चल रहा है, तो हमारी भुज्यमान आयु कौनसी है ? मनुष्यायु। **और आगामी जिस आयु का बंध किया है वह बध्यमान आयु, ऐसी दोनों अपेक्षा से नरकायु का सत्त्व होने पर देशव्रत नहीं होते;** दोनों अपेक्षा लिखी हैं कि तिर्यंचायु का सत्त्व होने पर देशव्रत हो सकता है; वह स्वयं तिर्यंच है न, उसकी भुज्यमान आयु तिर्यंच है। सत्त्व के समय हमें बध्यमान, भुज्यमान दोनों की अपेक्षा सोचना है। तिर्यंच जीव स्वयं पांचवें गुणस्थान में जाता है परंतु उसके लिये कंडिशन क्या होगी ? बद्धायु होंगे तो देवायु का बंध किया हो तो उनके पांचवां गुणस्थान हो सकता है या आयु का बंध न किया हो तो पांचवां गुणस्थान हो सकता है। हम देखते हैं न, तिर्यंच अंतर्मुहूर्त में भी - सम्मूर्च्छन तिर्यंच जन्मने के अंतर्मुहूर्त पश्चात् भी पांचवां गुणस्थान प्राप्त कर सकता है। वहां कहां आयु का बंध करने गये ? हां, अबद्धायु है उस समय वह पांचवें गुणस्थान में जा सकता है या आयु बंधी हो तो देवायु की यह कंडिशन है उसकी।

अब कहते हैं **नरक और तिर्यंचायु का सत्त्व होने पर सकल व्रत नहीं होते।** क्योंकि सकल व्रत यानी मुनिव्रत किसके होते हैं ? मनुष्यों के होते हैं। उनकी भुज्यमान मनुष्यायु है और यदि उन्होंने तिर्यंचायु का बंध किया हो तो ? मुनिव्रत हो नहीं सकते। नरकायु का बंध किया हो तो भी नहीं हो सकते। मनुष्यायु का बंध किया हो तो भी उनके पांचवां या आगे का गुणस्थान नहीं हो सकता। परंतु भुज्यमान आयु की अपेक्षा उसका सत्त्व है, यहां सत्त्व की बात है। यदि बंध की बात पूछेंगे तो जिसने मनुष्यायु का बंध किया है; पहले मनुष्यायु का बंध करके कोई सम्यक्त्व प्राप्त करता है, क्षायिक सम्यग्दृष्टि होता है तो सम्यक्त्व के साथ वहां भोगभूमि का मनुष्य होता है। यहां किसकी बात है ? उसकी भुज्यमान मनुष्यायु है न, तो मनुष्यायु का सत्त्व पाया जायेगा। छठे-सातवें में कौनसा सत्त्व बिलकुल नहीं होगा ? नरकायु का भी नहीं होगा और तिर्यंचायु का भी नहीं होगा। यहां दोनों ही अपेक्षायें हमें साथ में लेना है; उसमें यदि बद्धायु होगी तो भुज्यमान और बध्यमान, दोनों ही आयु की अपेक्षा से सोचकर उसका सत्त्व है या

नहीं है देखना है।

तिर्यंचों में हमें कैसे सोचना ? तिर्यंच में उसके स्वयं तिर्यंचायु का उदय चल रहा है, उसकी सत्ता में है। इसलिये पांचवें गुणस्थान में तिर्यंचायु की सत्ता हो सकती है। परंतु किसी भी पांचवें गुणस्थानवर्ती जीव को, भले तिर्यंच हो या मनुष्य हो, नरकायु की सत्ता हो सकती है ? *श्रोता: नहीं।* नहीं हो सकती। इसलिये पांचवें गुणस्थान में यहां लिखा है, कितना सत्त्व है ? अन्य अलग-अलग जीवों की अपेक्षा १४७ है। किस एक को यहां बाद किया ? नरकायु को। नरकायु बिना १४७ का सत्त्व पांचवें गुणस्थानवर्ती जीवों को पाया जाता है। हम गति की अपेक्षा भेद नहीं कर रहे हैं, इन जनरल सबकी बात सोच रहे हैं। अब आगे देखेंगे छठें-सातवें गुणस्थान में। यहां भुज्यमान भी तिर्यंचायु नहीं हो सकती है क्योंकि छठा-सातवां गुणस्थान मनुष्यों के ही होता है और बद्धायु होगी तो एक देवायु ही होगी। अन्य दो आयु का सत्त्व यहां पाया ही नहीं जायेगा। छठे-सातवें गणस्थानवर्ती जीवों के अन्य सभी प्रकृतियां हो सकती है परंतु तिर्यंचायु और नरकायु हो ही नहीं सकती। यहां उनका सत्त्व १४६ बताया। यहां तक बात ख्याल में आयी ?

उपशमश्रेणी चढ़ता है उसकी अपेक्षा से बात बाद में करेंगे क्योंकि उतनी सत्ता रहती है, भले वह द्वितीयोपशम करके चढ़े तो सत्ता उतनी ही रहेगी न। यहां १४६ की सत्ता थी। अब द्वितीयोपशम के बारे में अभी इसमें दो मत हैं। द्वितीयोपशम करता है तो अनंतानुबंधी की विसंयोजना करके ही चढ़ता है ऐसा एक मत है। इसलिये चार को कम करके यहां १४२ कहा। परंतु एक मत ऐसा भी है कि वहां बिना अनंतानुबंधी की विसंयोजना किये उसकी सत्ता पायी जाती है, तो वहां १४६ भी कहेंगे और कहीं लिखा हुआ भी पायेंगे। स्पष्ट करने के लिये यहां १४२ लिखा। १३९ क्यों लिखा उपशमश्रेणी में ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशमश्रेणी चढ़ेगा, तो कौनसी बद्धायु होगी ? कौनसी आयु होगी उसके ? देवायु। क्षायिक सम्यग्दृष्टि है तो उसके कौनसी प्रकृतियां नहीं हैं ? सात नहीं हैं न ? अनंतानुबंधी चार और दर्शनमोहनीय की तीन - वे सात नहीं है। और क्या नहीं है ? नरकायु और तिर्यंचायु नहीं हैं तो १४८ में से नौ मायनस करो। यदि क्षायिक सम्यग्दृष्टि बद्धायु होगा तो १३९ का सत्त्व होगा, यह नाना जीवों की अपेक्षा है इसलिये वहां पर सब कुछ ले लिया। इसको नहीं भी लेंगे तो जिसकी सत्ता है उसको १४२ या १४६ भी यहां लिखेंगे। किसी न किसीके सत्ता है तो नाना जीवों की अपेक्षा वह घटित होगा। यही बात आगे बतायी है, ३४२ पृष्ठ पर चार्ट है ।

देखो, हम पहले बोर्ड पर देखेंगे। क्षायिक सम्यग्दृष्टि के गुणस्थान कहां से कहां तक होते हैं ? *श्रोता: चौथे से चौदहवें तक।* चौथे से चौदहवें गुणस्थानों तक की बात है। कौनसे गुणस्थान तक होते हैं ऐसे हमने पूछा था। सिद्धों को भी क्षायिक सम्यक्त्व होता है यानी अनंतकाल तक वह रहता है। चौथे गुणस्थान में सत्ता १४१ बतायी हैं इसका कारण कोई कहेगा ? हां, सात प्रकृतियां नहीं हैं। कौनसी सात ? अनंतानुबंधी की चार और दर्शनमोहनीय की तीन इनका क्षय करके क्षायिक सम्यग्दृष्टि हुआ है। जहां पर सामान्य से १४८ बतायी हैं, यहां सात कम करके चौथे गुणस्थान में क्षायिक सम्यग्दृष्टि के १४१ बतायी हैं। इसका अर्थ है चारों ही आयु की सत्ता यहां स्वीकार की गयी है। नहीं समझें ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि कौन-कौनसी गति में पाये जाते हैं ? चारो गति में। यानी चारों आयु का सत्त्व होगा कि नहीं होगा उनके ? हां, होगा। ख्याल में आता है कैसे सोचना है ? हमें केवल रटना नहीं है, ऐसा क्यों लिखते हैं इसको सोचना है।

अब पांचवें गुणस्थान में क्षायिक सम्यग्दृष्टि की बात करेंगे। पांचवें गुणस्थान में सामान्य कथन में नरकायु की सत्ता नहीं थी, १४७ थी। उसमें भी सात कम करने चाहिये थे। यहां कितने लिखे हैं ? १३९। क्यों ? किताब में वहां जहां १४० लिखा है वहां १३९ कर देना और उसका कारण मैं आपको पूछ रही हूं। कौन बताना चाहता है ? देखो, पांचवां गुणस्थान कौन-कौनसी गतियों में पाया जाता है ? मनुष्य और तिर्यंच। इसलिये यहां सामान्य कथन में हमने तिर्यंचायु का स्वीकार किया था, मात्र नरकायु का स्वीकार नहीं किया था। बराबर ? अब क्षायिक सम्यग्दृष्टि हुआ है; तिर्यंचों में क्षायिक सम्यग्दृष्टि का गुणस्थान कौनसा है ? क्षायिक के साथ यानी मनुष्य जो क्षायिक है वही मरकर तिर्यंच में जायेगा। तो क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच कहां होते हैं ? भोगभूमि में होते हैं और भोगभूमि के गुणस्थान कितने हैं ? चार ही होते हैं। यानी कोई भी क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच पांचवें गुणस्थानवाला होता ही नहीं है। पुस्तक में ऐसा ही लिखा है, सबमें से सात-सात कम कर दो। इसलिये वहां १४० संख्या लिखी थी। परंतु सोचकर हम इसको डिराइव्ह कर सकते हैं कि तिर्यंचों में क्षायिक सम्यक्त्व पाया जाता है, परंतु क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच कहां होते हैं ? भोगभूमि में होते हैं जो यहां से क्षायिक के साथ मरकर वहां गये हैं। जिसने पहले तिर्यंचायु बांधी थी, बाद में जिसने सम्यक्त्व प्राप्त किया था, बाद में जिसने क्षायिक सम्यक्त्व किया था, ऐसा मनुष्य मरकर भोगभूमि का क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच होता है। परंतु उसका गुणस्थान तो चौथा ही रहेगा। भोगभूमि

में चौथे गुणस्थान के ऊपर के गुणस्थान होते ही नहीं हैं।

पांचवें गुणस्थानवाले तिर्यंच कहते हो, तो वे या तो प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि होते हैं या क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि यानी वेदक सम्यग्दृष्टि होते हैं, क्षायिक नहीं होते हैं। अगर हम क्षायिक पांचवां कहेंगे तो यहां तिर्यंचायु की भी सत्ता नहीं है, यह बात ख्याल में आती है ? पांचवें गुणस्थानवाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि की बात चल रही है। पांचवें गुणस्थानवाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि कौनसे गतिवाले होंगे ? मनुष्य में ही होंगे, बद्धायु होंगे तो देवायु का बंध किया होगा उन्होंने। यानी वहां ना तिर्यंचायु होगी, ना नरकायु होगी। दो वहां नहीं होंगी और क्षायिक हैं इसलिये ७ नहीं हैं तो ९ कम कर दिये हमने। इसलिये यहां भी १३९ बताये। यह बात ख्याल में आयी कि नहीं आयी कि फिर दुबारा बताऊं ? दुबारा बताना है ? देखो, पांचवें गुणस्थान में १४७ की सत्ता स्वीकार की है। क्यों की है ? क्योंकि जिनके भुज्यमान तिर्यंचायु है उनके पांचवां गुणस्थान तो होता है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि की बात यहां नहीं ली थी ऑर्डिनरि पांचवें गुणस्थानवाले के तो सभी की सत्ता स्वीकार की है, अनंतानुबंधी और दर्शनमोहनीय की तीन की सत्ता है यहां पर। उसमें तो नरकायु का सत्त्व ही नहीं था क्योंकि जिसके नरकायु का बंध हुआ है उनके किसीको पांचवां गुणस्थान नहीं होगा। भुज्यमान मनुष्यायु, भुज्यमान तिर्यंचायु और बध्यमान देवायु यह कॉम्बिनेशन वहां हो सकता है। इसलिये तीन आयु को तो वहां स्वीकार किया है, नरकायु का वहां स्वीकार नहीं किया है।

अब बात है क्षायिक सम्यग्दृष्टि के पांचवें गुणस्थान की। क्षायिक सम्यग्दृष्टि कहां है ? देव में है गुणस्थान चौथा; नारकी क्षायिक सम्यग्दृष्टि गुणस्थान चौथा; तिर्यंच क्षायिक सम्यग्दृष्टि गुणस्थान चौथा ही है, पांचवां नहीं है क्योंकि वहां जाकर कोई क्षायिक प्राप्त नहीं कर सकता है, मनुष्य में से वहां गया है और मनुष्य क्षायिक सम्यग्दृष्टि तिर्यंच में जाता है तो भोगभूमि का तिर्यंच होता है। तो वह चौथा ही गुणस्थान होता है, उसके ऊपर का गुणस्थान नहीं है। इसलिये वहां पुस्तक में भी आप १३९ कर देना। पुस्तक में तो उनके जो डिस्क्रिप्शन है उसमें तो उन्होंने हर गुणस्थान में सात-सात कम कर दो ऐसा ही लिखा है परंतु सोच समझकर हम इसको डिराइव्ह कर सकते हैं। अब हम आगे के गुणस्थानों में थोड़ी बात देखेंगे। यहां तक बात ख्याल में आयी ?

हां, क्षायिक सम्यग्दृष्टि के छठे सातवें में सत्ता वही १३९ की रहेगी, क्षायिक

सम्यग्दृष्टि मनुष्य ही है। उसके तिर्यंचायु भी नहीं है, नरकायु भी नहीं है, बंधी हुयी होगी तो देवायु होगी और क्षायिक सम्यग्दृष्टि है तो उसके सात प्रकृतियां नहीं हैं, ख्याल में आती है बात ? अनंतानुबंधी चार, दर्शनमोहनीय तीन और दो आयु नहीं हैं। यानी ९ प्रकृतियां नहीं हैं, १४८ में से ९ हमने कम कर दी तो १३९ का सत्त्व उसके छठे-सातवें गुणस्थान में भी होगा। इसी सत्त्व के साथ क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशमश्रेणी भी चढ़ सकता है। द्वितीयोपशमवाला होगा तो उसने केवल उनका उपशम किया है, परंतु द्वितीयोपशम करनेवाले अनंतानुबंधी की विसंयोजना करते हैं यानी उसका नाश करके चढ़ते हैं इसलिये चार और कम करना वहां पर। जो हमने पहले ऊपर देखा था यहां पर ऑर्डिनरि १४६, द्वितीयोपशम करने के बाद अनंतानुबंधी की चार कम कर दी तो १४२ हो गयी। कोई आचार्य ऐसा भी स्वीकार करते हैं कि अनंतानुबंधी की वहां सत्ता है, तो उसकी अपेक्षा से वहां १४६ भी कहेंगे। दोनों ही मत हैं और हमें दोनों ही मत प्रस्तुत करने हैं यानी दो आयु बिना १४६ होंगे या अनंतानुबंधी के बिना १४२ होंगी और क्षायिक सम्यग्दृष्टि के यदि आयु का बंध किया हो तो १३९ होंगे। ऐसा भी हो सकता है आयु का बंध नहीं किया है और उपशमश्रेणी चढ़े हैं तो कितनी होगी ? *श्रोता: १३८।* १३८ और श्रेणी चढ़ रहे हैं। एक जीव की अपेक्षा मैं बात कर रही हूं तो उसके १३८ प्रकृतियां सत्त्वरूप हो सकती हैं।

अभी और भी कुछ नियम हैं, हम उनको भी देखेंगे। एक तो बात यह है कि तिर्यंचों में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व ही नहीं होता। अभी जो प्रश्न था न, जिसने तिर्यंचायु बांधी है, वह तीर्थंकर प्रकृति का बंध करके कहां जायेगा ? तो उसके तीर्थंकर प्रकृति का बंध ही नहीं होगा। यानी वही जीव तीर्थंकर प्रकृति का बंध करते हैं, मनुष्य में शुरुआत करते हैं जिन्होंने ना तिर्यंचायु का बंध किया है, ना ही मनुष्यायु का बंध किया है क्योंकि तीर्थंकर प्रकृति के साथ मरकर देव में जा सकता है, नरक में जा सकता है। *श्रोता: द्रव्यस्त्री के हो सकता है ?* द्रव्यस्त्री के बारे में तीर्थंकर प्रकृति के बंध की चर्चा इसमें नहीं आयी है। परंतु कहीं-कहीं क्षायिक के बारे में उसको स्वीकार किया गया है। परंतु तीर्थंकर प्रकृति के बारे में ऐसी कोई शास्त्र में चर्चा नहीं है। उसका निषेध भी करते हैं अन्य जगह, दोनों ही मत आते हैं। यहां तो जो भाव से स्त्री है उसको तीर्थंकर प्रकृति का बंध हो सकता है इस बात की हमने पहले भी यहां विस्तार से चर्चा की थी।

अब हम आगे देखते हैं कुछ और नियम। हमने क्या देखा ? जिसके तीर्थंकर

प्रकृति की सत्ता है; किसके नहीं होती है ? तो तिर्यंचों के नहीं होती। पुस्तक में से मैं आपको कुछ और भी बताना चाहती हूं। प्रत्येक गुणस्थान के भी सत्त्व-असत्त्व हम बाद में देखेंगे। उसके पहले यह सत्त्व की बात है, नियम है। भोगभूमि के मनुष्यों को तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता होगी कि नहीं होगी ? *श्रोता: होगी।* भोगभूमि के मनुष्यों को तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता होगी ? नहीं हो सकती, नहीं हो सकती। तीर्थंकर प्रकृति बांधनेवाला या तो देव में जायेगा या नरक में जायेगा या तो उसी भव में मोक्ष जायेगा; उसके भोगभूमिवाला भव नहीं होता। जैसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि के होता है, वैसे तीर्थंकर प्रकृति बांधनेवाले को भोगभूमि का भव नहीं होता। मैंने पहले ही बताया था जिसने मनुष्यायु का बंध किया है, जिसने तिर्यंचायु का बंध किया है ऐसा जो मनुष्य है वह तीर्थंकर प्रकृति का बंध प्रारंभ नहीं कर सकता।

पहले नक्की करो तीर्थंकर प्रकृति का बंध करना है कि यहां से विदेह में जाना है। सब लोग यहां से मरकर विदेह में जाना चाहते हैं डायरेक्ट। कौनसे विदेह में ? महाविदेह में। कौनसे महाविदेह में ? विदेह तो एक सौ साठ हैं, सीमंधरस्वामी के पास जाना है। अन्य बाहु, सुबाहु, संजातक, स्वयंप्रभ, ऋषभानन, चंद्रप्रभ कोई नहीं चलेंगे। हां, क्योंकि हमारा कल्याण करनेवाले मात्र वे ही एक तीर्थंकर है सीमंधरस्वामी। वहां भी एक आर्यखंड और पांच म्लेच्छखंड हैं। विदेह में जन्म लिया और वहां के म्लेच्छ खंड में उत्पन्न हुये तो ? कर्मभूमि का मनुष्य कर्मभूमि में उत्पन्न होता है तो वह नियम से मिथ्यादृष्टि ही होता है। हमें मिथ्यात्व में रहना है ? ये सारे कथन अपने अभिप्राय को बताते हैं क्योंकि हमने माना है- हमें वही निमित्त चाहिये, वही हमारा कल्याण करेगा, यह हमारी निमित्ताधीन दृष्टि है। यह निमित्त नक्की किया हमने, हमें वही निमित्त चाहिये। यह हमारी अभिप्राय की भूल है, जो हमें अपने में ढूंढ़ना है, है न ? हम निमित्त वही चाहते हैं। कौनसा ? महाविदेहवाले सीमंधर तीर्थंकर का। दूसरा क्या रास्ता है ? हम देव में जायेंगे, वहां छूट है कहीं भी जा सकते हैं। वहां से हम समवशरण में जायेंगे, तीर्थंकर का उपदेश सुनेंगे। बात सही है न ? इसमें कोई रुकावट नहीं है न ? थोड़ी अनुकूलता छोड़कर, धंधा-पानी छोड़कर यहां स्वाध्याय में नहीं आते, शिबिर में नहीं आते और वहां कितनी अनुकूलता है ! सबको छोड़कर वे तीर्थंकर के समवशरण में जायेंगे या नंदनवन घूमने जायेंगे ? असंख्यात द्वीप समुद्र में घूमने की छूट है उनके, कहीं भी जा सकते हैं। देव सर्वत्र घूमने को जायेंगे कि वहां समवशरण में जायेंगे ?

लोग कहते हैं मई महीने में शिबिर मत रखना, हमको कहीं-कहीं जाना है। कहां जाना है ? किसीको अमेरिका जाना है, किसीको स्विट्झरलँड जाना है। नहीं-नहीं हम यात्रा के लिये, कैलाश पर्वत पर जाना चाहते हैं। वहां तो सिद्धक्षेत्र है न जहां से आदिनाथ भगवान ने निर्वाण पाया। परंतु हम भी वही दिखा रहे हैं। वहां तो उस क्षेत्र से निर्वाण पाया था लेकिन वहां जाने में कितनी तकलीफ होती है। क्यों, आप जाकर आये न कैलाश मानसरोवर में ? पता है कितनी-कितनी तकलीफ झेलते हैं। उसकी बात छोड़ो, शिखरजी चढ़ते समय कोई कहता है, अरे क्या आपको यही जगह मिली थी ऊपर आकर मोक्ष जाने के लिये ! फिर भी कैसे भी करके, डोली में बैठकर या कैसे भी चढ़कर आते हैं एक बार क्योंकि 'एक बार बंदे जो कोई, ताके नरक-पशु गति नहीं होई' हमने सुन रखा है, गा रखा है। वह जगह देखते हैं, उस भूमि में कितनी भी तकलीफ भी सहन करते हैं, एक बार तो यात्रा भी कर लेते हैं। फिर भले दो-चार दिन आराम कर लेते हैं। हम भी वही दिखाना चाहते हैं।

लोग कहते हैं कितनी तकलीफ होती है। हम कुछ नहीं समझते हैं इन कर्मों के बारे में। अरे किन कर्मों का नाश करके इन्होंने सिद्धपद प्राप्त किया है और वह कहां-कहां कितना बंध होता है, कहां उदय होता है, कहां कितना सत्त्व होता है, कहां उसका क्षय करते हैं, किस विधि से क्षय करते हैं यह जानेंगे तो यह भी निर्वाण क्षेत्र की यात्रा ही है। वहां केवल भूमि को देखते हैं और उस भूमि में क्या-क्या होता है ? वहां जाने की तकलीफ, वहां रिझर्वेशन की तकलीफ, जगह मिलती नहीं तो, अपने परिणाम कैसे रहते हैं विचार करो। यात्रा करने का निषेध नहीं है, ऐसे भाव जरूर आयेंगे यात्रा के। यहां भी वही बात चल रही है न, किस विधि से उन्होंने यह सारा मोक्षमार्ग प्रकट किया है ? मोक्ष तक का पुरुषार्थ किया उस समय कर्मों में क्या-क्या अवस्था बनी है यह जानने का सहजरूप से हमें उत्साह आता है कि कैसे किया होगा, क्या किया होगा ? लोगों को लगता है यह क्यों पढ़ना ? बार-बार यह विषय क्यों निकाल रही हूं ? क्योंकि लोग ऐसा पूछते भी हैं और उसका निषेध भी करते रहते हैं।

कोई क्रिकेट की मॅच चलती है, तो वहां एक-एक बॉल कैसा मारा, किसने मारा, पूरा दिन उसके पीछे बिगाड़ देते हैं। फिर उसके हायलाइट होते हैं उसको भी देखते हैं। उसका रिझल्ट तो नक्की है कि नहीं है ? भगवान ने जाना है कि नहीं कौन जीतेगा ? दिनभर रुकेंगे तो रात को एकदम डायरेक्ट पता चलनेवाला है कौन हारा,

कौन जीता ? उसका वह एक-एक बॉल कैसे मारा उसमें क्यों इंटरेस्ट है ? क्योंकि उसमें रुचि है। तो इसमें भी हमें मोक्षमार्ग में रुचि है, हमें अरिहंत भगवान की श्रद्धा है, उनके प्रति हमें बहुत अहोभाव है तो उन्होंने भी कैसे-कैसे किस मार्ग से मोक्ष प्राप्त किया, कहां कितने बंध हो रहे थे, कहां कितने का उदय हो रहा था, कहां कैसे व्युच्छित्ति हुयी, सत्ता की व्युच्छित्ति -नाश कैसे किया, क्षय कैसे किया यह बात जानने में तो सहजरूप से रुचि हो जाती है और इसमें तो अपना उपयोग इतना सूक्ष्म हो जाता है, बाहर दुनिया में क्या चल रहा है इसका पता ही नहीं चलता। यहां तो हम इतना बहुत फ़ास्ट ले रहे हैं मुझे पता हैं क्योंकि एक के बाद दूसरा विषय आता है, दूसरे के बाद तीसरा नया विषय आता है। परंतु शिबिर में तो हम आपको कुछ मुख्य बिंदु दिखाना चाहते हैं।

हमारे रोज के स्वाध्याय में सत्ता की व्युच्छित्ति तक हम आये थे, तो हमारे १०६ लेक्चर हुये थे, इतने विस्तार से लिया है इसको। कर्मकाण्ड की भी नौ सीडी हो गयी न ! बारह घंटों की एक ऐसी नौ सीडी में एक सौ आठ घंटे हुये हैं। आगे भी अपना विषय चल रहा है, हम आगे बढ़े हैं थोड़ासा। यानी यहां ३४९ पेज तक तो हमारे एक-एक घंटे के १०६ लेक्चर हुये हैं। यानी इतना विस्तार है और विस्तार से स्लोलि पढ़ेंगे तो ऐसा कुछ बोझा नहीं लगेगा। अभी शिबिर में थोड़ा बोझा लगता है तो जैसा एक दिन में यात्रा करके बोझा होता है न, थकान होती है ! भले होने दो न, इसमें क्या है ! बाद में आप निश्चितरूप से पुस्तक पढ़ सकते हैं, इसका अर्थ आपको भासित होगा, स्वयं इसका अर्थ निकाल सकते हैं। अब हम आगे बढ़ेंगे।

यह सत्त्व की व्युच्छित्ति तो अभी हमने देखी नहीं है। सत्त्व कहां कितना है उसकी बात देखी थी, कहां कौनसा सत्त्व नहीं हो सकता उसकी बात हमने देखी। अब सत्त्व की व्युच्छित्ति जब कहेंगे यानी सत्ता में से नाश होना; उस गुणस्थान के ऊपर वह नहीं होगा या कोई भी प्रकृति सत्ता में से नाश होती है या सत्ता में नहीं है ऐसा कहेंगे तो उसके कारण क्या हो सकते हैं ? या तो नहीं बंधी है; दूसरी बात बंधी हुयी है और उसकी उद्वेलना हुयी है, उद्वेलना यानी अन्य प्रकृतिरूप वह संक्रमित होकर वह नष्ट हो गयी है; या तीसरी बात उसका क्षय हो गया है। सत्ता में कोई प्रकृति नहीं है ऐसा जब हम कहेंगे तब या तो उसका बंध नहीं किया है या उसकी उद्वेलना हुयी है- जैसे आहारक प्रकृति है उसकी मिथ्यात्व में लंबे काल तक रहने पर उद्वेलना हो जाती है।

उद्वेलना हो गयी है या तीसरी बात क्षय हो गया है। अब हम उसकी अपेक्षा से कुछ बातें देखेंगे। उसके पहले यहां कौनसी गतियों में कितना सत्त्व होता है उसकी थोड़ी बात देखेंगे, फिर हम प्रकृतियों के क्षय की बात देखेंगे। देखो यहां पृष्ठ संख्या है ३४८। पहले हमें गुणस्थानों में ही सत्त्व की व्युच्छित्ति देखनी है, परंतु पहले थोड़ी गतियों की अपेक्षा देख लेते हैं कहां कौनसा सत्त्व नहीं होता। चार गतियों में कहां कौनसा सत्त्व नहीं होता इतनी बात देखेंगे। यहां प्रत्येक मार्गणा में सत्त्व का बहुत वर्णन है परंतु हम हर एक की बात नहीं करेंगे, मात्र गतियों की बात करेंगे।

पृष्ठ ३४८ पर गाथा ३४४ की टीका है, वहां लिखा है- **यहां से आगे नरकगति आदि मार्गणाओं में प्रकृति, स्थिति, अनुभाग, प्रदेश- चारों प्रकार के भेदवाले कर्मों का जो सत्त्व वह यथायोग्य प्राप्त करना।** देखो क्या कहना है ? जब हमने बंध देखा था तो बंध में हमने चार प्रकार कहे थे- प्रकृतिबंध, प्रदेशबंध, स्थितिबंध, और अनुभागबंध। जो बंधे हुये परमाणु हैं उनकी भी कौनसी प्रकृतियां है, उनके कितने प्रदेश हैं सत्ता में, उनमें कैसा-कैसा स्थिति और अनुभाग पड़ा है। इसको कहेंगे प्रदेशसत्त्व, प्रकृतिसत्त्व, स्थितिसत्त्व और अनुभागसत्त्व। उदय में आनेवालों में भी ये चार बातें लगेगी। कौनसी प्रकृतियों का उदय हो रहा है उसको प्रकृतिउदय कहेंगे, कितनी संख्या में परमाणु खिरते हैं उसको कहेंगे प्रदेशउदय, कितनी स्थितियों में से यानी निषेकों में से उदय हो रहा है उसको कहेंगे स्थितिउदय और किस अनुभागरूप से उदय हो रहा है उसको कहेंगे अनुभागउदय। ये चार-चार बातें हर एक में लगती हैं, बंध में भी लगती हैं, सत्त्व में भी लगती हैं और उदय में भी लगती हैं। इसलिये यहां चारों प्रकार से सत्त्व होगा। अभी हम चार प्रकार की अलग-अलग भिन्न बातें नहीं करेंगे। हम केवल प्रकृतियों का सत्त्व है या नहीं है उसकी चर्चा करनेवाले हैं।

अभी गाथा ३४५ की टीका हम देखेंगे, वहां क्या लिखा है ? **तिर्यंच में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं है।** तिर्यंच जीव ना उसको बांध सकते हैं, ना जिसने बांधा है वे तिर्यंच में जाते हैं। **नरकगति में भुज्यमान नरकायु, बध्यमान तिर्यंचायु और मनुष्यायु- ऐसे तीन आयु का ही सत्त्व है, देवायु का सत्त्व नहीं होता है।** इसका अर्थ है कोई भी नारकी देवायु का बंध नहीं कर सकते। उनकी वर्तमान में भुज्यमान नरकायु है तो उसका सत्त्व है और नारकी कौनसी आयु का बंध कर रहे हैं ? कोई मनुष्यायु का बंध करेंगे, कोई तिर्यंचायु का करेंगे तो छठे नरक तक तो दोनों ही

ऑप्शन है परंतु सातवें नरक के नारकी मात्र तिर्यंचायु का ही बंध करेंगे, हां, उनके किसीके मनुष्यायु का बंध नहीं होता। सातवें नरक का नारकी नियम से मिथ्यात्व गुणस्थान में ही मरता है, मिथ्यात्व गुणस्थान में ही आयु का बंध करता है और वह हिंस्र श्वापद संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच होता है। तो कहते हैं नरकगति में देवायु का सत्त्व नहीं है। **तिर्यंचगति में भुज्यमान तिर्यंचायु; बध्यमान नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु और देवायु** यानी जो तिर्यंच जीव है, तिर्यंचों में चारों आयु का बंध हो सकता है। कोई तिर्यंच तिर्यंचायु का बंध कर सकता है, कोई तिर्यंच मनुष्यायु का बंध करता है, कोई तिर्यंच देव में जाता है- देवायु का बंध करके जाता है और कोई नरकायु का बंध करके नारकी हो जाता है। सत्त्व की बात चल रही है, तिर्यंचों में किस आयु का सत्त्व पाया जाता है ? भुज्यमान एक तिर्यंचायु है और बध्यमान में चारों आयु होगी। **मनुष्यगति में भुज्यमान** आयु कौनसी है ? **मनुष्यायु** और **बध्यमान नरकायु, तिर्यंचायु, मनुष्यायु और देवायु**। देखो तिर्यंच भी चारों ही गति और चारों आयु का बंध करते हैं। मनुष्य भी चारों गति और चारों आयु का बंध करते हैं।

देवगति में- देखो आयु को ही हर समय में क्यों लिया, गति को क्यों नहीं लिया है ? यह प्रश्न हो सकता है न ? यहां क्या कहा- अभी हम मनुष्य की बात करते हैं कि मनुष्यगतिवाले के भुज्यमान मनुष्यायु का सत्त्व है और बध्यमान चारों आयुओं का सत्त्व है। बात सही है न, गतियों की बात क्यों नहीं की ? आयु की ही बात बार-बार क्यों करते हैं ? पहले ऊपर हमने क्या देखा था ? नरकगति की बात करते हैं; नरकगति में भुज्यमान नरकायु, बध्यमान तिर्यंचायु, मनुष्यायु ऐसे तीन आयु का ही सत्त्व है, देवायु का सत्त्व नहीं है। वहां ऐसा क्यों नहीं लिखा कि देवगति का सत्त्व नहीं है ? हां, क्या कहते हैं ? वह नामकर्म है परंतु जब कभी उसने नरकगति बांधी होगी न, उसने कभी देवगति भी बांधी थी, तिर्यंचगति, मनुष्यगति भी बांधी थी। अब जो नारकी है उनकी सत्ता में चारों ही गतियों का सत्त्व पड़ा है। चारों ही गति के जीव हैं उनमें हर एक में चारों ही गति संबंधी सत्त्व पड़ा है क्योंकि पूर्व भव में कभी न कभी वे बंधी हुयी हैं उनकी सत्ता वहां पड़ी है। हां, उसमें भी वह उद्वेलना का नियम है; एकेन्द्रिय आदि में जाकर देवगति, नरकगति की उद्वेलना होती है परंतु सत्त्व सर्वत्र पाया जाता है। ख्याल में आया ? इसलिये यहां आयु को लिया, गति को नहीं लिया क्योंकि आयु तो आगामी एक ही भव संबंधी बंधती है और गति एक बार बंधी है तो सत्ता में पड़ी रहती है।

देखो, थोड़ी देर में क्षय की बात करेंगे यहां पर। ऐसा नियम है कि नौवें गुणस्थान में जाकर अनेक प्रकृतियों का क्षय होना चालू हो जाता है। वहां जाने के बाद नरकगति और तिर्यंचगति संबंधी कुछ प्रकृतियों का क्षय होता है और वह नियम से प्रत्येक जीव के होता है। किसीके होता है, किसीके नहीं होता ऐसा नहीं है। यानी जो तीर्थंकर होनेवाले जीव हैं वे भी उनकी सत्ता में जो नरकगति और तिर्यंचगति के परमाणु पड़े हैं उनका क्षय कहां करते हैं ? तो नौवें गुणस्थान में करते हैं। अब महावीर भगवान की बात करते हैं। दस भव से सम्यग्दृष्टि थे तो दस भव में उन्होंने तो नरकगति नहीं बांधी थी, ना ही तिर्यंचगति बांधी थी। हां ? सम्यग्दृष्टि तिर्यंचगति बांधेगा ? वही तो हम कह रहे हैं, हम बांधने की बात आपको बता रहे हैं। दस भवों तक उन्होंने तिर्यंचगति भी नहीं बांधी है। अभी हो सकता है सिंह की पर्याय में उसने मिथ्यात्व अवस्था में तिर्यंचगति बांधी थी। तो दस भवों में तो वह निकल जानी चाहिये थी कि नहीं चाहिये थी ? तो नहीं निकल जाती है। जब उसका क्षय होगा तब सत्ता में से नाश होगा। यानी गति के परमाणु; क्योंकि वे तो कोड़ाकोड़ी सागरों के रहते हैं न ? सम्यग्दर्शन प्राप्त किया तो भी अंतःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण सत्ता तो रहती ही रहती है। जब तक क्षय नहीं होता तब तक तो उसकी इतनी सत्ता पड़ी रहती है। मैं यही बात कहना चाहती हूं कि गति का नाम यहां नहीं लिया, आयु का लिया है क्योंकि एक भव में एक आगामी भव संबंधी आयु बंधती है; मिथ्यादृष्टि जीव एक दिन में चारों गतियों का बंध करता है। तो गति के परमाणु तो सत्ता में हमेशा रहेंगे ही रहेंगे। आयु की बात बार-बार करते हैं, मात्र आयु की ही यहां सर्वत्र चर्चा है। क्योंकि आयु ही यहां बंधी है या नहीं बंधी उसके ऊपर उसकी सत्ता है कि नहीं वह निर्भर है।

जो क्षपकश्रेणी चढ़ता है, अभी हम यहां देखेंगे क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला आठवें गुणस्थान में आया है। क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला आठवें गुणस्थान में है, यहां पर १३८ की सत्ता है, सत्त्व १३८ का है यानी १४८ में से कितनी प्रकृतियां नहीं है उनके ? दस नहीं है। कौनसी दस नहीं हैं ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि है तो उसकी सत्ता में अनंतानुबंधी चार और दर्शनमोहनीय की तीन नहीं हैं, सात नहीं हैं और कौनसी तीन का क्षय कर दिया है उसने ? *श्रोता: मनुष्यायु तिर्यंचायु, देवायु।* क्षय किया ? तीन आयु का क्षय किया कि नहीं किया ? उसने बांधी ही नहीं ! जिसने आयु का बंध किया है उसको आयु भोगनी ही पड़ती है। जिस किसी जीव ने आयु का बंध किया हो वह क्षपकश्रेणी चढ़ ही नहीं

सकता क्योंकि क्षपकश्रेणी चढ़नेवाला उसी भव में अरिहंत-सिद्ध तो होनेवाला ही है। तो जिनके ये दस प्रकृति नहीं हैं, ये कौनसी नहीं हैं ? तीन आयु का बंध ही नहीं किया है; भुज्यमान मनुष्यायु है और बाकी सात नहीं है क्योंकि क्षायिक सम्यग्दृष्टि है। ऐसे १३८ के साथ वह आठवें गुणस्थान में आया है। तो आठवें गुणस्थान में उसकी सत्ता १३८ की है। अभी ये कौनसी प्रकृतियां हैं हम बाद में देखेंगे आगे जाकर।

नौवें गुणस्थान में जब उसने प्रवेश किया, वहां पर भी उसके १३८ की सत्ता थी और नौवें के पहले भाग में सोलह प्रकृतियों का क्षय हो जायेगा उसको ही सत्त्व की व्युच्छित्ति कहेंगे। सत्त्व की व्युच्छित्ति क्षय से हुयी है। क्षपकश्रेणी में जितनी-जितनी प्रकृतियों का लगातार क्षय होता है, वहां उतनी प्रकृतियों के सत्त्व की व्युच्छित्ति कहेंगे। नौवें गुणस्थान के हमने यहां नौ भाग किये हैं। पहले भाग में १६ प्रकृतियों का क्षय हुआ, दूसरे भाग में ८ का क्षय हुआ; इन प्रकृतियों के नाम हम देखेंगे दोपहर में; तीसरे भाग में १ का, चौथे भाग में १ का, पांचवें भाग में ६ का, छठे भाग में १ का, सातवें भाग में १ का, आठवें भाग में १ का, नौवें भाग में १ प्रकृति का क्षय हुआ है। दसवें में जब प्रवेश किया तो १०२ प्रकृतियां थी उसके। वहां पर एक लोभ का क्षय करके बारहवें में प्रवेश किया तो १०१ की सत्ता हुयी। वहां पर ज्ञानावरणादि सोलह का क्षय किया तो जाकर तेरहवें में आया, सत्ता में ८५ प्रकृतियां रह गयी। हम तो गाते हैं ना, 'चऊ कर्म सु त्रेसठ प्रकृति नाशि' उसमें तो केवल घाति कर्मों का ही नाश नहीं किया, अघाति की भी यहां तेरह प्रकृतियां गयी हैं- नामकर्म की तेरह गयी हैं यहां पर और बाकी घाति सब गयी हैं यहां आते आते, तो यह ८५ रह गयी। उसने तेरहवें गुणस्थान में कोई क्षय का कार्य नहीं किया है। उदय की व्युच्छित्ति हमने देखी थी, क्षय कुछ नहीं हुआ है। चौदहवें के द्विचरम - लास्ट बट वन समय में उसने वहां ७२ प्रकृतियों का नाश किया है और तेरह प्रकृतियां सत्ता में रहती हैं। उनका अंतिम समय में क्षय करके वह सिद्ध बनता है। इन सबकी व्यवस्थित चर्चा हम दोपहर में करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

३९. सत्त्व की व्युच्छित्ति, उद्वेलना

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांतचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की हुयी है, जिसके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड ढूंढ़ारी भाषा में लिखा है और उसीका हिंदी अनुवाद हम देख रहे हैं। बंधव्युच्छित्ति और उदयव्युच्छित्ति के बाद सत्त्व प्रकृतियां और उनकी व्युच्छित्ति की बात हम देख रहे हैं। विशिष्ट गुणस्थानों में बंध नक्की है, कौनसी बंधने योग्य प्रकृतियां है उसका और उदय का भी नियम है। परंतु सत्त्व का नियम ऐसा है- जो बंधी हुयी प्रकृतियां सत्ता में पड़ी रहती हैं, भले उस गुणस्थान में उसका बंध न भी हो; परंतु ऊपर के गुणस्थानों में बंध होकर जीव अगर मिथ्यात्व में आता है तो उनकी सत्ता बनी रहती है; या नीचे के गुणस्थानों में बंधी हुयी प्रकृतियों की ऊपर के गुणस्थानों में भी सत्ता बनी रहती है; भले उसका नया बंध रुक गया है, उदय रुक गया है फिर भी सत्ता में पड़ी रहती हैं। जब तक सत्ता में से नाश नहीं होता, क्षय नहीं होता तब तक वे प्रकृतियां सत्ता में बनी रहती हैं। इसलिये सत्त्व की बात सोचने में ज़रा और अटपटी लगती है। बंध की बात हमने सीख ली, उदय के बारें में भी देख लिया है। अभी सत्ता की बात हम देख रहे हैं।

हमने देखा कि मिथ्यात्व गुणस्थान में ये बात हो रही हैं नाना जीवों की अपेक्षा। नाना यानी अनेक, 'णाणा जीवा णाणा कम्मा' सुना है न ? *श्रोता: छाबड़ाजी। पं.* पूनमचंद छाबड़ाजी की याद आ गयी। ये नाना यानी अनेक जीव, अलग-अलग जीव, तो अलग-अलग जीवों की अपेक्षा यहां बात है कि किसीके मिथ्यात्व गुणस्थान में तीर्थंकर की सत्ता भी है। जैसे हमने देखा, तीर्थंकर प्रकृति बांधकर और वेदक सम्यक्त्व के साथ दूसरे-तीसरे नरक में जानेवाले मनुष्य मरण के एक अंतर्मुहूर्त पहले मिथ्यात्व में आते हैं और मरकर नरक में चले जाते हैं और वहां एक अंतर्मुहूर्त में सम्यक्त्व प्राप्त कर लेते हैं। मिथ्यात्व में रहते हुये भी तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता उनके है। बंध नहीं हो रहा है, उनके सत्ता पायी जाती है इसलिये कहेंगे तीर्थंकर की सत्ता है। किसी मुनिराज ने आहारक प्रकृति का बंध करके, कालांतर से वे मिथ्यात्व में गये हैं, तो उनके आहारक प्रकृति की भी सत्ता मिथ्यात्व गुणस्थान में पायी जाती है। किसीके आहारक की सत्ता है, किसीके तीर्थंकर की सत्ता है और फिर चारों गतियों के आयु की अपेक्षा सभी प्रकृतियों की सत्ता किसी न किसी जीव के होती है। यहां पर नाना जीवों की

अपेक्षा से कहा है कि पहले गुणस्थान में १४८ प्रकृतियों की सत्ता पायी जाती है। *प्रश्नः वह फिर से उदय में आयेंगे कि नहीं जो सत्ता में है ?* सत्ता में पड़ी हुयी प्रकृतियां हैं वे फिर से उदय में आ सकती हैं, परंतु उसके कुछ नियम हैं, उसकी चर्चा बाद में करेंगे।

यहां हमने देखा कि पहले गुणस्थान में १४८ का सत्त्व है यानी उनकी सत्ता है। दूसरे गुणस्थान में ? तीर्थंकर और आहारक की जिनकी सत्ता है वह जीव गिरकर दूसरे गुणस्थान में नहीं आ सकता। कोई भी जीव दूसरे गुणस्थानवाला- ना उसके आहारक की सत्ता है और ना ही तीर्थंकर की सत्ता है तो वहां सत्त्व कितना है ? १४५ का है। ये तीन नहीं हैं उनको हम वहां असत्त्व कहेंगे। जैसे हमने बंध-अबंध देखा, उदय-अनुदय देखा, वैसे यहां सत्त्व और असत्त्व कहना है। टोटल हमारी १४८ आनी चाहिये। सत्त्व १४५ का है, तो असत्त्व हम तीन का कहेंगे। अब तीसरे गुणस्थान में देखते हैं। तीर्थंकर की सत्तावाला जीव गिरकर तीसरे गुणस्थान में नहीं जा सकता परंतु आहारक की सत्तावाला जा सकता है इसलिये सत्त्व १४७ का बताया है, असत्त्व एक कहेंगे वहां पर। चौथे गुणस्थान में पूरे १४८ की सत्ता बनी रहती है, वहां असत्त्व हम झिरो कहेंगे। पांचवें गुणस्थान में हमने देखा था, कौनसी आयु वहां होगी ही नहीं ? *श्रोताः नरकायु।* या तो भुज्यमान या बध्यमान, तो कहते हैं नरकायु। नरकायु के सत्त्व बिना पांचवें गुणस्थान में १४७ का सत्त्व पाया जाता है, वहां असत्त्व में एक को रखेंगे। छठे, सातवें गुणस्थान में ना तिर्यंचायु की सत्ता है ना नरकायु की है, १४६ की सत्ता है, असत्त्व में दो को रखेंगे।

अभी क्षपक की अपेक्षा बात करते हैं। क्षपकश्रेणी की अपेक्षा, क्षपकश्रेणी की अपेक्षा क्यों लेते हैं सत्त्व में ? उपशमश्रेणीवाले जीव ने कर्मों का उपशम किया है, दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय का उपशम किया है परंतु उसको सत्ता में से नष्ट नहीं किया है। हां, उसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है; अनंतानुबंधी को अन्य कषायरूप परिणमाया है, सत्ता में से अनंतानुबंधी का नाश हो गया है इसलिये कहीं पर १४६ के बदले १४२ कहेंगे। दूसरा मत है वहां उसकी सत्ता है तो वहां १४६ भी कहेंगे। ऐसे दोनों ही अलग-अलग मत पाये जाते हैं। यहां आगे के गुणस्थानों में हम क्षपकश्रेणी की अपेक्षा बात करेंगे तो क्षपकश्रेणी में जो जीव प्रवेश करता है वह कौनसा होता है ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि। क्षायिक सम्यग्दृष्टि है तो उसके ऑलरेडि सात प्रकृतियों का नाश हो गया है, अनंतानुबंधी की चार और दर्शनमोहनीय की तीन। वह ऐसा जीव होना चाहिये जिसने आयु का बंध नहीं किया है क्योंकि क्षपकश्रेणी वही जीव चढ़ता है

जो उसी भव में मोक्ष जानेवाला है। आयु का बंध करता है तो वह क्षपकश्रेणी चढ़ ही नहीं सकता। हो सकता है उपशमश्रेणी चढ़कर उतरे जिसने आयु का ऑलरेडि बंध किया है और वह भी देवायु ही होगी क्योंकि ऊपर के गुणस्थान में पांचवें, छठवें, सातवें के आगे कोई बद्धायु होते हैं तो देवायु का ही बंध करनेवाले ऊपर चढ़ सकते हैं। उपशमश्रेणी चढ़ सकते हैं परंतु आयु का बंध हुआ है तो क्षपकश्रेणी नहीं चढ़ सकते। इसलिये तीन आयु का सत्त्व नहीं है और दर्शनमोहनीय तीन, अनंतानुबंधी चार मिलकर सात नहीं है, तो दस से रहित है। १४८ में से दस गये तो १३८ की सत्ता है।

आठवें में प्रवेश करने पर, १३८ का सत्त्व है। नौवें अनिवृत्तिकरण में गया उसके पहले भाग में भी १३८ का सत्त्व होता है। वहां पर उसने सोलह प्रकृतियों का क्षय कर दिया। यह हमने पहले देखा था- क्रम से सोलह, आठ, एक, एक, छह, फिर एक, एक, एक, एक इतनी प्रकृतियों का नौवें गुणस्थान में उसने क्षय किया। दसवें में एक प्रकृति का क्षय किया। बारहवें गुणस्थान में सोलह प्रकृतियों का क्षय किया। इसतरह से सत्त्व ८५ पर आ गया है। जब सयोगकेवली गुणस्थान में प्रवेश किया तो प्रकृतियों की संख्या ८५ हो गयी। वह सत्त्व बना रहा अयोगी में भी क्योंकि सयोगकेवली अवस्था में एक भी प्रकृति का क्षय नहीं होता, भले किसीका उदय मिट जाये। वही बात अयोगी के द्विचरम समय तक रही, अंत से दूसरे समय तक भी उतनी ही सत्ता बनी रही। द्विचरम समय में बहत्तर प्रकृतियों का उसने क्षय कर दिया। १३ प्रकृति रह गयी जो अंतिम समय में उनका क्षय हो जायेगा। ये सोलह आदि प्रकृतियां कौनसी हैं उनको हम देखते हैं यहां।

वे सोलह आदि प्रकृतियां कौनसी हैं कहते हैं- ये जो सोलह प्रकृतियां कहने में आती हैं, उसमें तेरह प्रकृतियां नामकर्म की हैं और तीन प्रकृतियां दर्शनावरण की हैं; स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा और प्रचलाप्रचला इनका क्षय यहां नौवें गुणस्थान में हो जाता है। हम पृष्ठ ३४३ पर गाथा ३३८ की टीका पढ़ेंगे डायरेक्ट- **नरकगति और आनुपूर्वी, तिर्यंचगति और आनुपूर्वी, विकलत्रिक** यानी द्वीन्द्रिय जाति, त्रीन्द्रिय जाति, चतुरिन्द्रिय जाति, **स्त्यानगृद्धित्रिक, उद्योत, आतप, एकेन्द्रिय, साधारण, सूक्ष्म और स्थावर- इन सोलह प्रकृतियों की अनिवृत्तिकरण के पहले भाग में व्युच्छित्ति है।** व्युच्छित्ति किसकी ? सत्ता की। एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप सब का बंध और उदय पहले ही गुणस्थान में वहीं पर रुक गया था। ये प्रकृतियां नौवें गुणस्थान तक सत्ता में पड़ी हुयी

थी और इनका अब यहां सत्ता में से नाश होनेवाला है। ये तिर्यंचगति और नरकगति संबंधी प्रकृतियां हैं, इनका क्षय करता है। यहां आयु का सवाल नहीं है क्योंकि आयु नहीं बांधनेवाला जीव ही क्षपकश्रेणी में आया है।

यहां नरकगति की दो प्रकृतियां ली है- नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वी। तिर्यंचगति की कौन-कौनसी ली है ? तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी। अब एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय लेना है। एकेन्द्रिय के साथ स्थावर भी लेना है, साधारण भी लेना है, सूक्ष्म भी लेना है, आतप है और तिर्यंचगति है तो उद्योत भी उसके साथ ही ले लेना वहां पर। इसतरह से ये विकलत्रय लिये हमने, तो तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी। फिर जाति नामकर्म एकेन्द्रियजाति नामकर्म; एकेन्द्रिय के साथ स्थावर कहेंगे; स्थावर के साथ आतप कहेंगे; आतप के साथ सूक्ष्म, साधारण भी कह देंगे। बाकी द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय के साथ उद्योत भी कहेंगे। इसतरह से ये तेरह प्रकृतियां नामकर्म की हैं और स्त्यानगृद्धि, निद्रानिद्रा और प्रचलाप्रचला कौनसे कर्म की है ? *श्रोता: दर्शनावरण।* दर्शनावरण की। इन १६ प्रकृतियों का क्षय नौवें गुणस्थान के पहले भाग में आकर हो जाता है। पहले भाग में आया था तब सत्ता कितने की थी ? १३८ की। सोलह का क्षय हो चुका, दूसरे भाग में प्रवेश करेगा तो १२२ की सत्ता हो जायेगी ।

अब हम आगे बढ़ेंगे, **अप्रत्याख्यानावरण कषाय चार और प्रत्याख्यानावरण कषाय चार, इन मध्यम आठ कषायों की** इसको मध्यम आठ क्यों कहा ? क्योंकि क्रम से कहेंगे तो अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन; ये बीचवाले दो हैं न। क्षायिक सम्यग्दृष्टि अनंतानुबंधी का नाश करके ही क्षपकश्रेणी में आया है। उदय संज्वलन का चल रहा है और ये अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण सत्ता में पड़े हैं। देखो हम द्रव्यानुयोग पढ़ते हैं- जब सम्यग्दृष्टि हुआ तो मिथ्यात्व का अभाव हो गया, अनंतानुबंधी का अभाव हो गया, हम ये भाषा सीखे हैं। परंतु ये सारे ही कर्म सत्ता में पड़े रहते हैं, सत्ता में हैं तभी तो कभी उनका उदय भी हो सकता है; जीव के परिणाम बिगड़ गये तो उनका उदय चालू हो गया। जीव के परिणामों के अनुसार इन कर्मों के उदय होते रहते हैं। जीव ऐसा पराधीन नहीं है कि बाय चान्स इनका उदय हुआ और जीव को वैसे परिणाम करने पड़े। कितनी ही प्रकृतियां ऐसी होती हैं कि जीव के परिणामों के अनुसार उनमें परिवर्तन नहीं होता। जैसे नामकर्म की प्रकृतियां - शरीर संबंधी हैं या अन्य कुछ हैं, जैसा उनका उदय है वैसे शरीर की रचना होगी।

परंतु विशेषता यह है कि ये मोहनीय आदि कर्म ऐसे हैं कि जैसे जीव परिणाम करता है- जिस मात्रा में, उस-उस मात्रा में - उस अनुभाग में उसका उदय वहां चालू रहता है, दोनों एक ही समय में होते हैं। ऐसी पराधीनता नहीं कि बाय चान्स बहुत तीव्र उदय आया, इसलिये जीव को तीव्र क्रोध करना पड़ा। हम तो इतने निमित्ताधीन हो गये हैं ! क्या करें हमारा चारित्रमोहनीय कर्म है न ! पड़ा है, पहले बांधा हुआ है, अभी बहुत तीव्र अनुभाग का उदय आता है तो हमें बहुत तीव्र क्रोध करना पड़ता है ! ऐसा नहीं है। मैंने एक बात बतायी थी आपने गौर किया कि नहीं, पता नहीं है। हमने आपको निषेक रचना बतायी थी, इसको स्थिति की रचना कहते हैं। निषेक रचना में हमने देखा था कि जो वर्तमान का उदयरूप निषेक है या कोई भी निषेक ले लो, उसमें अलग-अलग अनुभागवाले परमाणु प्रत्येक निषेक में हैं। जब अनुभाग की रचना बताते हैं तो नीचे से ऊपर तक स्पर्धकों की रचना बताते हैं मिनिमम अनुभाग से लेकर मॅक्झिमम अनुभाग तक। परंतु ये मिनिमम से मॅक्झिमम अनुभागवाले परमाणु प्रत्येक निषेक में पड़े हैं। ऐसा नहीं है कि नीचे के निषेक कम अनुभागवाले और ऊपर के निषेक अधिक अनुभागवाले हैं ऐसा नहीं है। हम ऐसा समझते थे, पहले सुनते भी थे और सुनाते भी थे।

हर निषेक में अलग-अलग अनुभागवाले परमाणु पड़े हैं, वे किसरूप में उदय में आयेंगे ? तो जैसे जीव के परिणाम चलेंगे वैसे उदय में आयेंगे। हां, क्योंकि अभी वर्तमान निषेक में जघन्य से उत्कृष्ट तक सभी टाइप का अनुभाग पड़ा है- मिथ्यात्व का भी, चारित्रमोहनीय का भी। अब जीव तत्त्वविचार में जुड़ जाता है, तत्त्वचिंतन करता है तो अनुभाग घटकर वे परमाणु उदय में आते हैं यानी वहां तीव्र अनुभागवाले परमाणु मंद-मंद होकर उदय में आयेंगे। जब जीव अधिक संक्लेश परिणाम करता है तो जो तीव्र अनुभागवाले पड़े हैं उनका उदय चलेगा और बाकी जो मंद हैं वे एक समय के लिये चेंज होकर तीव्ररूप होकर उदय में आयेंगे। जैसा जीव का परिणाम है वैसे वहां उदय कहलायेगा। वहां सभी शक्ति पड़ी है- जघन्य से लेकर उत्कृष्ट तक की शक्ति पड़ी है तो जीव के जैसे परिणाम हैं उसरूप उनका उदय कहलायेगा। तब कहेंगे जैसा उदय है वैसे जीव के भाव होते हैं। कथन उसकी ओर से कर रहे हैं परंतु जीव पराधीनता से ऐसे भाव नहीं कर रहा है। जीव के जैसे भाव हो रहे हैं उस अनुभाग के रूप में वहां उदय चलता है। आगे लब्धिसार, क्षपणासार आदि ग्रंथों में इन बातों की

और अधिक क्लॅरिटी हो जायेगी क्योंकि बड़े-बड़े ग्रंथों में भी इसकी बहुत विस्तार से चर्चा की है। जैसे मैंने सुबह धवला, जयधवला का रेफरन्स दिया था- चौदहवीं पुस्तक में बहुत स्पष्टरूप से लिखा है कि प्रत्येक स्थिति यानी प्रत्येक निषेक में सभी जघन्य से उत्कृष्ट तक के अनुभागवाले परमाणु पड़े हैं और जैसी विशुद्धि है वैसे उनके अनुभाग का उदय चलता है।

अब हम यहां आगे बढ़ते हैं, ये बीचवाले जो कषाय हैं, **आठ कषायों की दूसरे भाग में सत्त्वव्युच्छित्ति है।** नौवें में प्रवेश किया तब १३८ की सत्ता थी, वहां सोलह का क्षय हो गया तो १२२ रह गयी। १२२ में से फिर आठ क्षय होकर चली गयी, कितनी रह गयी ? ११४। आगे एक और एक दो बार लिखा है उसका अभी अर्थ देखेंगे। हम गाथा ३३९ की टीका देखेंगे- **नपुंसकवेद की तीसरे भाग में** क्या होती है ? व्युच्छित्ति यानी सत्ता की व्युच्छित्ति। किस विधि से ? तो उसका क्षय हो जाता है। पहले नपुंसकवेद का क्षय तीसरे भाग में हो जाता है तो सत्ता ११३ की होती है। **स्त्रीवेद की** सत्त्वव्युच्छित्ति **चौथे भाग में** है। यानी पहले नपुंसकवेद की क्षपणा हुयी, उसकी एक संख्या लिखी। दूसरी बार एक लिखा है उसका अर्थ क्या है ? चौथे भाग में स्त्रीवेद की क्षपणा हुयी तो सत्ता में ११२ रही। उसके बाद छह लिखे हैं, **छह नोकषाय की पांचवें भाग में,** कौनसे छह नोकषाय ? हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा इनका क्षय यहां पर हुआ तो सत्ता में १०६ रही। उदय कहां रुका था, उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें में।* हां, आठवें गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति हुयी थी। फिर भी सत्ता में थे और क्षय होगा तब उनके सत्ता की व्युच्छित्ति हो जायेगी।

उसके बाद पुरुषवेद; देखो ये छह नोकषाय और पुरुषवेद का क्षय कहो या उपशमना कहो, जहां जो प्रोसेस है एक साथ शुरू तो होता है, परंतु पुरुषवेद का अभी नया-नया जो लास्ट-लास्ट में बंध हुआ है, उसकी क्षपणा होने के लिये थोड़ा और ज्यादा काल लगता है। इसलिये पुरुषवेद को अलग से यहां बताया है। इसको नवक बंध कहते हैं। नया-नया बंधा हुआ लास्ट में क्योंकि बंध के बाद आवली काल तक उसमें कुछ परिवर्तन नहीं होता और फिर क्षपणा होने के लिये और कुछ काल लगेगा। आगे एक समय कम दो आवली काल में उसकी यह क्षपणा पूरी होती है। इसलिये उसका एक नंबर बाद में डाला, पहले छह लिखा बाद में एक लिखा उसका अर्थ है पुरुषवेद। जब ११२ में से छह गयी थी, १०६ रही थी और फिर उसमें से एक पुरुषवेद

चला जायेगा, १०५ रह जायेगी। फिर पुरुषवेद के बाद, क्रम से एक-एक का क्षय होगा। पहले **पुरुषवेद** का क्षय हो जायेगा फिर **संज्वलन क्रोध** का क्षय हो जायेगा तब १०४; फिर **संज्वलन मान** का क्षय हो जायेगा तब १०३; **संज्वलन माया** का क्षय हो जायेगा तब १०२ रह जायेगी। **की छठवें, सातवें, आठवें, नौवें भाग में अनुक्रम से व्युच्छित्ति** होती **है** यानी इनका क्षय हो जाता है, सत्ता में से ये प्रकृतियां नष्ट हो जाती हैं।

नौवें गुणस्थान में १०३ में से एक माया चली जाने के बाद अभी भी संज्वलन लोभ बाकी है। चार बार एक-एक लिखा न ? चार बार एक-एक का अर्थ क्या है ? पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध, संज्वलन मान, संज्वलन माया। नौवें गुणस्थान में अभी भी लोभ बाकी है, उसका क्षय नहीं हुआ है। बादरलोभ यहां नष्ट हो जायेगा परंतु दसवें में सूक्ष्मलोभ है। यहां कहते हैं **नौवें गुणस्थान में छत्तीस प्रकृतियों की सत्ता से व्युच्छित्ति हुयी।** इसका क्रम याद है ? पहले सोलह, फिर आठ, फिर एक, एक, उसके बाद छह और चार बार एक, एक, एक, एक ऐसी टोटल ३६ की व्युच्छित्ति होती है। *श्रोता: पांच बार एक आया। श्रोता: दसवें में।* पांचवीं बार एक दसवें में है। पांचवां एक दसवें में आ जाता है। देखो न - सोलह और आठ चौबीस, चौबीस और दो छब्बीस, छब्बीस और दस छत्तीस। यहां देखना है आपको ? नौवें गुणस्थान में कितनी चली जाती है ? सोलह और आठ चौबीस, और एक पच्चीस, और एक छब्बीस, छब्बीस और छह बत्तीस, फिर एक-एक ४ बार तैंतीस, चौंतीस, पैंतीस, छत्तीस। यह जो एक है वह दसवें गुणस्थान में इसका क्षय हो जाता है; सूक्ष्मलोभ का - संज्वलन लोभ का दसवें गुणस्थान में क्षय हो जाता है वहां १०१ रह जायेगी। नौवें गुणस्थान में छत्तीस प्रकृतियों की सत्ता से व्युच्छित्ति हुयी इसका अर्थ है उनका क्षय हुआ। उपशमश्रेणी में इन प्रकृतियों का उपशम करते-करते जीव ग्यारहवें तक पहुंचता है। सत्ता में से एक भी प्रकृति नष्ट नहीं होती। उपशम होता है, दब जाता है, उसका जो कुछ प्रोसेस है उसका संक्रमण होना, अपकर्षण होना, उदीरणा होना, उदय होना ये सब उनके करण जो हैं वे रुक जाते हैं, परंतु सत्ता में से प्रकृतियां नष्ट नहीं होती। इसलिये उसको कहते हैं उपशमश्रेणी। क्षपकश्रेणी में अभी एक-एक प्रकृतियों का ऐसा क्षय करते-करते ऊपर चढ़ जाता है जीव।

आगे पढ़ेंगे, **सूक्ष्मसाम्पराय में संज्वलन लोभ की व्युच्छित्ति है।** यहां सत्ता

की व्युच्छित्ति की बात है और क्षपकश्रेणी में जो व्युच्छित्ति कहते हैं, उसमें क्षय की अपेक्षा लगती है। **क्षीणकषाय में** यानी बारहवें गुणस्थान में **उदय की व्युच्छित्ति के समान** कंपॅरिझन उसके साथ कर रहे हैं, **पांच ज्ञानावरण, चार दर्शनावरण, पांच अंतराय, निद्रा, प्रचला** निद्रा, प्रचला को अलग इसलिये कहा- वे हैं तो दर्शनावरण की; दर्शनावरण की तो छह हो गयी है, फिर भी इनको अलग इसलिये कहा कि उपांत्य समय में इनका क्षय होता है और अंतिम समय में बाकी चार दर्शनावरण जाती हैं। इसलिये यहां उनका उल्लेख अलग से किया। **इन सोलह के सत्त्व की व्युच्छित्ति है** यानी इन सोलह का क्षय बारहवें गुणस्थान में होता है तो सत्ता में ८५ रह जाती हैं। देखो, मोहनीय का क्षय दसवें में पूरा हो गया। नौवें में शुरुआत हुयी थी, दसवें में पूर्णरूप से मोह का क्षय हो गया। बारहवें में घातिकर्मों में से मोह के बिना तीन घातिकर्म शेष हैं- ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय। उनका क्षय बारहवें गुणस्थान में होता है। तेरहवें गुणस्थान में हम कहेंगे चार घातिकर्म का नाश करके जीव ने केवलज्ञान यानी अनंतचतुष्टय प्राप्त किया, उनके अरिहंत अवस्था प्राप्त हो गयी। ये सारा मेजॉरिटी क्षपणा का कार्य नौवें गुणस्थान में होता है। *श्रोता: छठवें भाग में चार की व्युच्छिति हुयी ?* छठवें भाग में ? कौन से छठवें भाग में ?*श्रोता: पुरुषवेद, संज्वलन क्रोध-मान-माया।* एक साथ नहीं। छठवां भाग, सातवां भाग, आठवां भाग, नौवां भाग ऐसे भाग किये न, यहां लिखे हैं न ! *श्रोता: क्रम में लिखे हैं।* जैसे लिखा है वैसे, ३४३ पृष्ठ पर चार्ट है, उसमें भी यही बात बतायी है। *श्रोता: लिखा है।* एक साथ कहां चार लिखे हैं ? छठवें, सातवें, आठवें, नौवें भाग में, अनुक्रम बताया है न।

देखो, आगे लिखते हैं- **सयोगकेवली में व्युच्छित्ति नहीं है।** किसकी ? सत्ता की। उदय की व्युच्छित्ति हमने देखी थी- नाना जीवों की अपेक्षा उनतीस कहो या एक जीव की अपेक्षा तीस कहो। परंतु यहां सत्ता में से कुछ नष्ट नहीं हुआ। तेरहवें गुणस्थान में अनंतवीर्य के धारी हैं। हमें लगता है न, उनको तो करना चाहिये था कि नहीं चाहिये था ? हम गलत सोचते हैं। ये कर्म भी अपनी योग्यता से चले जाते हैं और किस विशुद्धि से कौनसे कर्म में चेंजेस होते हैं, यह हम नहीं कह सकते। देखो, जब जीव मिथ्यात्व में से सम्यक्त्व प्राप्त करता है तब भी उसके तीन करण होते हैं- अधःकरण, अपूर्वकरण और अनिवृत्तिकरण। जब अनंतानुबंधी की विसंयोजना करता है, तब भी तीन करण होते हैं परंतु उस समय अन्य प्रकृति पर उसका कोई इफेक्ट नहीं है। जब दर्शनमोह

की क्षपणा करता है, तब मात्र मिथ्यात्व कर्म नष्ट हो जाता है, सम्यग्मिथ्यात्व भी नष्ट हो जाता है, फिर सम्यक् प्रकृति भी नष्ट हो जाती है। उन्हीं कर्मों में उसके इतना डिफरन्स होता है, बाकी कर्मों में थोड़े बहुत चेंजेस होते हैं मगर ज्यादा कुछ नहीं होता।

जब श्रेणी चढ़ता है, उपशमश्रेणी चढ़नेवाले के सारे ही परिणाम अलग हैं, भले नाम समान हैं और क्षपकश्रेणी चढ़नेवाले के सारे ही परिणाम अलग हैं, अनंतगुणा विशुद्ध हैं। उनके कहां पर कौनसी प्रकृति में कौनसी अवस्थायें होती हैं वह सब सुनिश्चित है। अभी क्या चल रहा है ? श्रेणी चढ़ रहा है। हमने क्षपणा की बात देखी न पहले सोलह का क्षय होता है। अन्य कर्मों में कुछ इफेक्ट क्यों नहीं हुआ ? वे सोलह ही पहले क्यों गये ? फिर वे आठ ही क्यों नष्ट होते हैं ? यानी विशिष्ट प्रोसेस; विशिष्ट जो पर्टिक्युलर अपनी विशुद्धि है उसके द्वारा पर्टिक्युलर कर्मों पर ही उसका असर होगा, अन्य कर्मों पर उसका ऐसा असर नहीं होगा। उसकी क्षपणा वगैरह नहीं होगी यानी ये इतना सुनिश्चित है कि किस समय क्या होता है निश्चित है। एक-एक समय का परिणाम अलग-अलग है। अभी अपूर्वकरण कहो या अनिवृत्तिकरण, वहां अनंतगुणा-अनंतगुणा विशुद्धि होती है। तो किस समय में कौनसी प्रकृति में वे बातें होगी यह सुनिश्चित है। सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लब्धिसार-क्षपणासार इसके आगेवाला ग्रंथ है न, अकेले नौवें गुणस्थान के उपशमश्रेणी के प्रकरण में १५० पेजेस हैं और अकेले नौवें गुणस्थान के क्षपकश्रेणी के प्रकरण में १५० पेजेस हैं। हर बार संख्यात हजार बार स्थितिकांडकघात होते हैं और ये इतने अंतर्मुहूर्त, इतने अंतर्मुहूर्त कोड़ाकोड़ी, कोड़ाकोड़ी कोड़ाकोड़ी अंतर्मुहूर्त भी उसमें हैं और सबका मिलकर नौवां गुणस्थान भी एक अंतर्मुहूर्त का है। ये हमें पता ही नहीं है कि केवलज्ञानी के ज्ञान की महत्ता क्या होती है।

मैंने एक बार आपको शायद बताया होगा, हमारा लब्धिसार-क्षपणासार का स्वाध्याय चलता है। आप आती थी न पाटनीजी ? वहां सायन के कोई एक गृहस्थ आये थे, बुज़ुर्ग थे, विद्वान थे। तो उन्होंने सुना था कि यहां स्वाध्याय चलता है तो आये थे। 'मैं बैठूंगा आज यहां पर' तो आये, बैठे, सुना सब। जाते समय इनको बताया 'मैं कल से नहीं आऊंगा क्योंकि घंटे भर मैंने सुना मुझे कुछ नहीं समझा। फिर भी मुझे आज बहुत लाभ मिला है जो आज तक नहीं हुआ था। एक तो मेरा मान गाल गया और दूसरी बात मुझे आज सर्वज्ञ की सच्ची माहिमा आ गयी। इतनी एक घंटे जितनी बातें

सुनी उसमें इतनी गहराई है तो ये पूरे शास्त्र लिखनेवाले तो हमारे आप जैसे मतिश्रुत ज्ञानी हैं, उनके ज्ञान में भी इतनी बातें आती हैं तो यह केवलज्ञान कैसा होगा ? तो सर्वज्ञ की महिमा मुझे आज आ गयी !'

हमने जो बातें देखी है सत्ता की व्युच्छित्तिवाली, तो सयोगी में व्युच्छित्ति नहीं है। अयोगी में तो होनी ही चाहिये, नहीं तो जीव मोक्ष कैसे जायेगा ? तो सत्ता की व्युच्छित्ति करके ही जायेगा। अयोगकेवली गुणस्थान जब शुरू हुआ था, तब उसकी सत्ता में केवल ८५ ही प्रकृति थी। उपांत्य समय में बहत्तर प्रकृतियों का नाश करके तेरह की सत्ता रहती है, अंतिम समय में तेरह प्रकृतियों का क्षय करके जीव सिद्ध अवस्था को प्राप्त करता है। ये कौनसी बहत्तर है पृष्ठ ३४४ पर लिखी है। देखो **पांच शरीर, पांच बंधन, पांच संघात,** देखो उदय में उसके औदारिकशरीर नामकर्म का उदय चल रहा था, है न ? तेरहवें गुणस्थान तक, परंतु सत्ता में बाकी है न ? जिसने आहारक का बंध किया होगा तो उसके आहारक होगा अन्यथा वह नहीं होगा। परंतु वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग पड़ा होगा अंदर। यहां जिन-जिन प्रकृतियों के नाम ले रहे हैं, वे कभी न कभी बंधी थी तो सत्ता में पड़ी हैं। तो **पांच शरीर, पांच बंधन, पांच संघात, छह संस्थान, तीन अंगोपांग, छह संहनन, पांच वर्ण, दो गंध, पांच रस, आठ स्पर्श, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, सुस्वर, दुस्वर, देवगति और आनुपूर्वी** तो देवगति सत्ता में पड़ी थी न। हमें लगता है क्या फायदा उसका भोग नहीं किया न।

बहुत बार श्रेणिकराजा हमारे बहुत काम आते हैं, हां, क्योंकि हर बार उनका एक्झॅम्पल लेकर हम समझा सकते हैं। जब तीर्थंकर होंगे तो हमारा उपकार करेंगे, अभी वर्तमान में भी बहुत कर रहे हैं। अभी वे मनुष्यगति बांध रहे हैं; नरक में हैं, सम्यग्दृष्टी हैं तो सम्यग्दृष्टि नारकी मनुष्यगति का बंध करता है। वहां से आयेंगे मनुष्य में; सम्यग्दृष्टि मनुष्य हर समय देवगति का बंध करता है। चौथे गुणस्थानवाला मनुष्य हर समय देवगति, देवगत्यानुपूर्वी वगैरह का बंध करता है। कब तक करेंगे ? आठवें गुणस्थान में जब तक उनकी व्युच्छित्ति नहीं होती तब तक उनका बंध चलेगा। उदय किसका चलेगा तब उनका ? मनुष्यगति का, कब तक चलेगा ? चौदवें गुणस्थान तक मनुष्यगति का उदय चलेगा और उस भव में बंध कौनसा करेंगे ? *श्रोता: देवायु।* देवायु नहीं, देवगति। *श्रोता: देवगति।* आयु का बंध करेंगे तो फिर भोगना पड़ेगा। तीर्थंकर की प्रकृति सहित आये हैं। अभी आयु नहीं बांधेंगे, उसी भव में मोक्ष चले जायेंगे। आठवें

तक देवगति बांधेंगे और फिर चौदहवें के उपांत्य समय में जाकर नाश करेंगे। लोग पूछते हैं फिर क्या फायदा ? यानी प्रकृति बांधना और उसको भोगना इसमें उन्हें फायदा लगता है ! उसका नाश किया तो सबसे बड़ा फायदा हो गया।

देवगति और आनुपूर्वी, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति, दुर्भग, निर्माण, अयशस्कीर्ति ये सत्ता में पड़े हैं। अयशस्कीर्ति का उदय कब मिटा था ? बोलो इन्द्रजीतजी अयशस्कीर्ति के उदय की व्युच्छित्ति कहां हुयी थी ? *श्रोता: छठवें में।* छठवें में बंध की व्युच्छित्ति हुयी थी। *श्रोता: चौथे में।* चौथे में। फिर भी सत्ता में पड़ी है, हां और उसका क्षय अभी यहां जाकर करेंगे उपांत्य समय में। **अनादेय, प्रत्येक, अपर्याप्त, अगुरुलघु, उपघात, परघात, उच्छ्वास, जिसका उदय नहीं है ऐसी साता-असाता में से एक वेदनीय, नीचगोत्र इन बहत्तर प्रकृतियों की अयोग केवली के द्विचरम समय में** द्विचरम यानी अंत से दूसरा समय, **व्युच्छित्ति है**। यानी उसका वहां पर क्षय है। अब अयोगी की बात कर रहे हैं, **पुनश्च जिनका उदय अयोगी में पाया जाता है,** वह भी अयोगी की ही बात थी परंतु द्विचरम समय में थी। अब अयोगी के अंतिम समय में, बात कर रहे हैं। *श्रोता: द्विचरम समय मतलब क्या ?* द्विचरम समय यानी लास्ट से दूसरा समय। अंतिम समय में वे तेरह प्रकृतियों का क्षय करके सिद्ध होनेवाले हैं। द्विचरम का अर्थ होता है लास्ट बट वन- उपांत्य। अंतिम समय और उपांत्य समय। मान लेते हैं एक दो तीन चार में से चार को अंतिम कहेंगे, तो तीन को क्या कहेंगे ? उपांत्य कहेंगे। उपांत्य समय में कौनसी जाती हैं ? अंतिम समय में कौनसी जाती हैं ? जिस वेदनीय का उदय है वह **एक वेदनीय, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, सुभग, त्रस, बादर, पर्याप्त, आदेय, यशस्कीर्ति, तीर्थंकर, मनुष्यायु, उच्चगोत्र- ये बारह** जिनका उदय पाया जाता है **और मनुष्यानुपूर्वी** वहां पड़ी है, उसका उदय होने का सवाल नहीं है क्योंकि उसका उदय तो विग्रहगति में होता है। उसके उदय की व्युच्छित्ति तो हमने चौथे में देखी थी और यह है चौदहवां गुणस्थान, यहां तक उसकी सत्ता है, यहां उसका क्षय हो जायेगा और जीव निर्वाण पद प्राप्त करेगा।

अभी हम सत्त्व-असत्त्व की बात करेंगे। अभी हमने देखी न सत्त्व-असत्त्व, जहां जितने का सत्त्व है- १४८ का सत्त्व होगा तो हम असत्त्व में झिरो रखेंगे; १४५ का सत्त्व है, तो असत्त्व में तीन रखेंगे; जहां १४७ हैं, वहां असत्त्व में एक रखेंगे; १४६ होगा वहां

असत्त्व में दो रखेंगे। यह हम देख चुके हैं। इसतरह से सत्त्व-असत्त्व मिलकर १४८ की हमें टोटल करनी चाहिये। जैसे हमने उदय-अनुदय में देखा, बंध-अबंध में देखा, वैसे ही यहां हम सत्त्व-असत्त्व की बात देखते हैं। पृष्ठ ३४५ पर गाथा ३४२ की टीका में, नीचे से दूसरा पॅरेग्राफ- **असत्त्व** कौनसे गुणस्थान में कितना है ? तो **मिथ्यात्व में शून्य** क्योंकि वहां सत्त्व १४८ देखा था। **सासादन में** असत्त्व में **तीन** क्योंकि सत्त्व हमने १४५ देखा था, तीन असत्त्व हैं वहां उनकी सत्ता नहीं पायी जाती। किसी भी जीव के सत्त्व कितना पाया जायेगा ? १४८ में से तीन कम कर दो तो १४५ का। **मिश्र में एक,** मिश्र में कौनसा एक असत्त्व देखा था हमने ? तीर्थंकरप्रकृति, उसकी सत्तावाला जीव वहां नहीं आ सकता। **असंयत में शून्य** क्योंकि असंयत में १४८ की सत्ता है। **देशसंयत में एक** असत्त्व है, कौनसी ? *श्रोता: नरकायु।* **प्रमत्तसंयत में दो**- नरकायु और तिर्यंचायु; अप्रमत्त में भी वही लेना। अपूर्वकरण जो लिखा है यह क्षपक की अपेक्षा लिया है। क्षपकश्रेणीवाला अपूर्वकरण क्योंकि उपशमश्रेणीवाले में सत्ता में कोई खास डिफरन्स नहीं होता है। **अपूर्वकरण में दस** क्योंकि तीन आयु का बंध नहीं किया है और यह क्षायिक सम्यग्दृष्टि है इसलिये दस असत्त्वरूप हैं। अनिवृत्तिकरण में प्रवेश किया तो पहले भाग में दस ही असत्त्वरूप थी।

श्रोता: उपशमश्रेणी में कितना बताया आपने ? उपशमश्रेणी में १४६ की सत्ता हो सकती है न। हां, आप कौनसी पुस्तक पढ़ रहे हैं ? हां ? क्या लिखा उसमें ? *श्रोता: छह का असत्त्व होता है।* छह का असत्त्व इसलिये- अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है और एक मात्र देवायु की सत्ता है। दो आयु नहीं हैं और अनंतानुबंधी चार नहीं है- यह यहां भी हमने लिखे हैं १४२। द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टि ने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है और एक ही आयु की सत्ता हो सकती है, देवायु बांधी हो तो १४२ लिया और १३९ किस अपेक्षा से लिखा था ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि है और देवायु का बंध किया है। है न, तो अन्य दो आयु नहीं है; क्षायिक सम्यग्दृष्टि होने के कारण सात नहीं है और दो आयु - नौ नहीं हैं तो १३९। बात सही है न ? हां अच्छा आप पुस्तक में से कम्पेअर करते हो तो अपनी कुछ भूलें हो तो निकल जायेगी और कुछ शंका है तो भी निकल जायेगी।

अभी हम आगे देखेंगे- अपूर्वकरण में दस देखे। अनिवृत्तिकरण में शुरुआत में आ गया है; आठवें से नौवें में प्रवेश किया तो उसी १३८ की सत्ता के साथ आया यानी दस असत्त्व थे। जब सोलह का क्षय हो जायेगा तब दस और सोलह छब्बीस

असत्त्वरूप हो जायेंगे। ख्याल में आती है न बात ? जब और आठ का क्षय हो जायेगा तो छब्बीस में और आठ मिला देना, उतना असत्त्वरूप हो जायेगा। एक-एक मिलाते जाओ फिर छह मिलाओ फिर एक-एक-एक-एक मिलाते जाओ तो टोटल छत्तीस हो जायेंगे। पहले १० असत्त्व थे, उसमें और ३६ मिलाये तो ४६ असत्त्वरूप हो जायेंगे। दसवें में प्रवेश हुआ है तो ४६ की सत्ता नहीं है, १०२ की सत्ता है। देखो, पुस्तक में ३४५ पृष्ठ पर बीच में यंत्र-टेबल बनाया है। अनिवृत्तिकरण आदि में क्षपकश्रेणी में रचना है, असत्त्व में देख रहे थे, १० का असत्त्व था। सोलह चली गयी तो असत्त्व २६ हुआ; और आठ का क्षय हुआ तो असत्त्व ३४ हुआ; फिर एक नपुंसकवेद गया तो ३५ हुआ; स्त्रीवेद गया तो असत्त्व ३६ हुआ; छह नोकषाय की क्षपणा हुयी तब जाकर असत्त्व ४२ होगा; उसके बाद एक यानी पुरुषवेद की क्षपणा हुयी तो ४३ हुये। उसके बाद एक कौनसा है ? संज्वलन क्रोध गया तो ४४ हो जायेंगे; संज्वलन मान गया तो ४५ हो गये; संज्वलन माया गयी तो ४६ हो गये।

जब दसवें में प्रवेश हुआ तो ४६ का सत्त्व नहीं था, वहां पर लोभ का क्षय हो गया। जब बारहवें में प्रवेश हुआ तो ४७ का सत्त्व नहीं था, १०१ का सत्त्व था। बारहवें में सोलह का क्षय हो गया- ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय सोलह जाने पर अरिहंत के टोटल ६३ प्रकृतियों की सत्ता नहीं है, असत्त्व है। हम कहते हैं ६३ प्रकृतियों का नाश करके, क्षय करके अरिहंत हुआ। तीन का क्षय किया ही नहीं; तीन बंधी नहीं थी, तीन आयु बंधी ही नहीं थी, उनका क्षय भी नहीं किया उन्होंने; कहने के लिये क्या कहा ? हम क्या कहेंगे ? ६३ प्रकृतियों का नाश कर दिया। ६३ प्रकृति क्यों नहीं है उनकी ? तीन आयु बंधी नहीं उनकी और उन्होंने बाकी यथायोग्य प्रकृतियों की यथासमय क्षपणा करके अरिहंत पद पाया है। तेरहवें में आये तो ६३ का असत्त्व है, सत्त्व वहां ८५ का है। तेरहवें गुणस्थान में किसी भी प्रकृति का क्षय नहीं होता है। अयोगकेवली यानी चौदहवें गुणस्थान के उपांत्य समय में ८५ में से ७२ का नाश हो जाता है, क्षय हो जाता है तब बाकी १३ रह जाती हैं जिनमें से १२ उदयरूप हैं। मनुष्यगत्यानुपूर्वी की सत्ता है, परंतु उदय नहीं है तो इन सभी १३ का नाश अयोगकेवली के अंतिम समय में होकर, जीव सिद्ध अवस्था को प्राप्त करता है। यह बात ख्याल में आयी न ?

क्षपकश्रेणी की अपेक्षा सत्ता में से किस-किसका नाश होता है यह बात देखी।

ऐसा सत्ता का नाश उद्वेलना से भी होता है। मैंने सुबह बताया था कि कुछ कर्मों की सत्ता नहीं पायी जाती वहां तीन कारण हो सकते हैं- एक तो उस कर्म का बंध ही नहीं किया होगा तो सत्ता में नहीं आयेगा; या बंधने के बाद उसकी उद्वेलना हो गयी तो सत्ता में से नाश होगा; या क्षय कर दिया तो सत्ता में से नाश होगा। अभी हमने क्षय की अपेक्षा बात की। अब उद्वेलना क्या है यह प्रश्न है। अभी एक प्रश्न आया था उद्वेलना से नाश कैसे होता है, किसके होता है और कौन करता है ? उद्वेलना के बारे में प्रश्न हुआ था कि उद्वेलना और संक्रमण में क्या अंतर है ? आपके पास ४ नंबर का चार्ट है, वहां संक्रमण लिखा है। अभी हम वह विषय नहीं चलायेंगे। उसमें पांच प्रकार के संक्रमणों के नाम लिखे हैं- उद्वेलनासंक्रमण, विध्यातसंक्रमण, अधःप्रवृत्तसंक्रमण, गुणसंक्रमण और सर्वसंक्रमण। संक्रमण पांच अलग-अलग प्रकार के होते हैं। उद्वेलनासंक्रमण संक्रमण का एक प्रकार है। यह कैसा संक्रमण है कि कोई बंधी हुयी प्रकृतियां; मिथ्यात्व गुणस्थान में आने के कारण या अन्य कारण बतायेंगे आपको तो उसके कारण; उन बंधी हुयी प्रकृतियों का नाश हो जाता है, वे नष्ट हो जाती हैं। कैसा नाश हो जाता है ? उलटा संक्रमण होता है।

जैसे किसी जीव ने सम्यक्त्व प्राप्त किया तब उसका अनादि से मिथ्यात्व प्रकृति का ही बंध हो रहा था, उसकी सत्ता में मात्र मिथ्यात्व प्रकृति बंधी हुयी थी। वह जब सम्यग्दृष्टि हुआ, तब मिथ्यात्व में से सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति तैयार हुयी। पहली बार सम्यक्त्व हुआ- प्रथमोपशम सम्यक्त्व हुआ, तो तीन प्रकृतियां तैयार हुयी। अब ऐसी तीन प्रकृतियां हैं वह जीव मिथ्यात्व में गया। मिथ्यात्व में जाने के बाद क्या शुरू हो जाता है ? ये दो प्रकृतियां हैं न, वे उलटा संक्रमण करके मिथ्यात्वरूप टर्न होती रहती हैं और असंख्यात वर्षों के काल में उनकी पूरी सत्ता नष्ट होकर फिर से मिथ्यात्वरूप हो जाती हैं तो उसको कहते हैं उनकी उद्वेलना हुयी। भले वह अनादि मिथ्यादृष्टि नहीं है, सादि मिथ्यादृष्टि है, परंतु जब तक तीन की सत्ता रहेगी तब तक हम उनको सत्त्व में गिनेंगे। सम्यक् प्रकृति पहले नष्ट हो जाती है, फिर दो रहती हैं; फिर सम्यग्मिथ्यात्व भी नष्ट हो जाता है, अकेला मिथ्यात्व रह जाता है तो फिर अनादि मिथ्यादृष्टि जैसी उसकी अवस्था हो जाती है।

श्रोता: ये दो तो बंधी नहीं थी - सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति ? सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व बनी थी, वे दोनों ही मिथ्यात्व में टर्न होती रहती हैं इसको

कहेंगे उद्वेलना। यह उद्वेलना होते-होते पहले नष्ट होनेवाली, मिटनेवाली कौनसी है ? *श्रोता: सम्यक् प्रकृति।* सम्यक् प्रकृति मिथ्यात्वरूप हो जाती है, टर्न हो जाती है परंतु सम्यग्मिथ्यात्वरूप टर्न नहीं होती क्योंकि संक्रमण भी उसी प्रकृति में होता है जिसका बंध है। क्या कहा ? संक्रमण होने के लिये मिथ्यात्व गुणस्थान में मिथ्यात्व प्रकृति का बंध हो रहा है, सम्यग्मिथ्यात्व का नहीं। तो सम्यक् प्रकृति डायरेक्ट मिथ्यात्व में जायेगी, सम्यग्मिथ्यात्व भी डायरेक्ट मिथ्यात्व में जायेगा। दोनों का उद्वेलना का कार्य ॲट अ टाइम चलता है, परंतु सम्यक् प्रकृति पहले नष्ट हो जाती है। इसकी उद्वेलना पूरी हो गयी। उद्वेलना दोनों की स्टार्ट हुयी थी फिर इसकी उद्वेलना पूरी हुयी। पश्चात् और असंख्यात वर्षों के काल में सम्यग्मिथ्यात्व की भी उद्वेलना पूर्ण होकर अकेला मिथ्यात्व रह जाता है जैसे अनादि से था। इसको कहेंगे उद्वेलना के द्वारा इन प्रकृतियों का नाश होना, पहले अधिक प्रकृतियों का सत्त्व था फिर इन दो प्रकृतियों का नाश हो गया।

जैसे हमने आहारकद्विक का भी देखा था न, आहारकद्विक प्रकृति की भी उद्वेलना हो जाती है। पहले आहारकद्विक का बंध हुआ था, जीव मिथ्यात्व में चला गया। मिथ्यात्व में जाने के बाद क्या है ? अन्य प्रकृतिरूप टर्न होकर वह नष्ट हो जाती है। नामकर्म की अन्य जो प्रकृतियां हैं तो उन प्रकृतियों में; क्योंकि बंध की अपेक्षा है वहां। जो बंधनेवाली अन्य शरीर नामकर्म हैं उनमें वह टर्न होकर नष्ट हो जाती है। उद्वेलना में ऐसा ही है कि वे प्रकृतियां वहां विशिष्ट काल में नष्ट होती हैं तो ऐसी उद्वेलना कौन-कौनसी प्रकृतियों की हो सकती है उसको भी ज़रा देख लेते हैं। देखो, वैसे हमें अभी अन्य गतियों में भी सत्त्व देखना था फिर भी उद्वेलना का प्रश्न आया है। सत्ता से नाश होने का एक कारण है उद्वेलना इसलिये इसकी बात हमने बीच में ली।

३५१ पृष्ठ पर नीचे पूछा है, **उद्वेलना किसे कहते हैं ?** वहां लिखते हैं- **जैसे, रस्सा जोर लगाकर बनाया था,** मराठी में कहते हैं दोरखंड, वह क्या होता है ? ऐसे वह हाथ से तो नहीं होता है, वह तो पैर पर ही करते हैं। जोर-जोर से ऐसे बल दे करके फिर उसको बनाते हैं ट्विस्ट करते रहते हैं, पीळ देणे म्हणतात त्याला, उसमें बहुत मेहनत लगती है और उसको खोलने में भी मेहनत लगती है। **पश्चात् जोर लगाकर ही उधेड़ दिया; वैसे, जिन प्रकृतियों का बंध किया था, पश्चात् उनका उद्वेलनभागहार से अपकर्षण करके** इसका अर्थ देखेंगे- **अन्य प्रकृतिपने को प्राप्त**

करके नाश करना उद्वेलन कहलाता है। बीच में एक शब्द आया उद्वेलनभागहार से अपकर्षण करके यानी एक समय में पूरी की पूरी उद्वेलना नहीं होती। सत्ता में जैसे हमने देखा- निषेक रचना उसकी भी हुयी थी जिसका बंध हुआ था, तो एक समय में थोड़ेसे परमाणु अन्य प्रकृतिरूप हो जाते हैं। दूसरे समय में और थोड़े अन्यरूप हो जायेंगे, तीसरे समय में और थोड़े अन्यरूप हो जायेंगे, इसतरह से उसका सत्त्व का नाश हो जायेगा। तो एक समय में कितने परमाणु टर्न होंगे उसका कुछ हिसाब किताब है कि नहीं है ? तो सबका हिसाब किताब रहता है।

सत्ता में जितने परमाणु हैं उनको विशिष्ट संख्या से भाग देंगे, डिव्हाइड करेंगे और जो संख्या आयेगी उतने परमाणु एक समय में टर्न होंगे। इस विशिष्ट संख्या को कहेंगे उद्वेलनभागहार। संक्रमण में भी ऐसा ही है। कितने परमाणु संक्रमित होते हैं ? तो उसके जो अलग-अलग संख्या के भागहार है, उसके कारण उन संक्रमणों के भी अलग-अलग नाम हैं जो अभी हमने पढ़े थे- विध्यातसंक्रमण, गुणसंक्रमण, अध:प्रवृत्तसंक्रमण, सर्वसंक्रमण। सर्वसंक्रमण क्या होता है ? जब क्षय होने को आता है न तो लास्ट में थोड़े परमाणु रहते हैं तो लास्ट में क्या होगा ? जितने हैं सारे के सारे एक समय में नष्ट हो जायेंगे, संक्रमित हो जायेंगे तो उसमें भागहार कितना होगा ? सर्व संक्रमण में भागहार क्या होगा ? हां बोलो अतुल क्या होगा ? *श्रोता: एक।* हां, एक क्यों ? मान लेते हैं लाख परमाणु थे और उन लाख के लाख का संक्रमण होना है तो लाख को कौनसी संख्या से भाग देंगे तो लाख परमाणु आयेंगे ? *श्रोता: एक।* एक से। तो ऐसे गुणसंक्रमण में भी ऐसा है। विशुद्धि जहां बढ़ती है, गुणित प्रमाण में पहले समय में जितना संक्रमण हुआ दूसरे समय में असंख्यातगुणा, तीसरे समय में उससे असंख्यातगुणा, चौथे समय में असंख्यातगुणा। तो वहां तो संक्रमित होनेवाले परमाणु असंख्यातगुणा होते हैं तो उसका जो भागहार है, वह असंख्यातवें भाग - असंख्यातवें भाग होता है। जहां भागहार छोटा है वहां संख्या बड़ी-बड़ी आयेगी। तो ये भागहार के अनुसार उसके नाम बताये हैं।

यह संक्रमण का विषय समय मिलेगा तो हम बाद में बतायेंगे। क्योंकि मुझे तो क्रम से इसीको लेना था, परंतु अभी ये बंध की, उदय की और सत्त्व की बात हुयी है। अब हम बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान को देखेंगे तो हमारा पक्का होगा क्योंकि हमने बंध, उदय और सत्ता की बात देखी है और व्युच्छित्ति, बंध, अबंध वगैरह बातें वह

नाना जीवों की अपेक्षा देखी है। एक जीव एक समय में कितनी प्रकृतियों का बंध कर सकता है, कितनी प्रकृतियों का उदय होता है उसको स्थान कहते हैं। यहां बंधस्थानों की बात हम करेंगे और बीचवाले कुछ प्रकरण छोड़कर इसी विषय पर हम आगे बढ़ेंगे तो वह पक्का होगा अपना। बीच में और भी अन्य-अन्य कोई विषय हैं उनकी बात यथायोग्य स्थान पर फिर करेंगे क्योंकि वह अपने लिये सरल हो जायेगा।

यहां कहते हैं उद्वेलना किसकी होती है ? हम आगे बढ़ेंगे, देखो ३५२ पृष्ठ। **उद्वेलना का विधान आगे विस्तार से कहेंगे।** आगे विस्तार से कहेंगे यानी आगे पंच भागहार चूलिका आयेगी यानी पांच प्रकार के संक्रमण के लिये एक अलग अधिकार है। इसमें वहां उद्वेलना का और भी विस्तार से स्वरूप बतानेवाले हैं परंतु कौनसी प्रकृतियों में उद्वेलना होती है यह बात यहां बता रहे हैं। कौन-कौनसी हैं ? देखो हम इसको पढ़ेंगे। १३ ही प्रकृतियों की उद्वेलना होती है, अन्य किसीकी नहीं होती। वे तेरह प्रकृति कौनसी हैं देखो- **आहारकद्विक** यानी आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग यानी द्विक कहने से वह बंधन, संघात उसमें समझ लेना; तेरह जब गिन रहे हैं तो द्विक कहकर गिन रहे हैं। **सम्यक्त्वमोहनीय** यानी सम्यक् प्रकृति, **मिश्रमोहनीय** यानी सम्यग्मिथ्यात्व, **देवगति और देवानुपूर्वी, नरकगति और नरकानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर और अंगोपांग - ये वैक्रियिक चतुष्क या नारक चतुष्क की चार,** फिर **उच्चगोत्र,** फिर **मनुष्यगति और मनुष्यानुपूर्वी - ये तेरह प्रकृतियां अनुक्रम से उद्वेलनारूप करते हैं।**

अनुक्रम क्यों कहा ? *श्रोता: क्रम है।* क्रम है क्योंकि सबसे पहले किसीकी उद्वेलना होगी तो आहारकद्विक यदि सत्ता में पड़ी हो और जीव मिथ्यात्व में जाता है, सबसे पहले उद्वेलना कम्प्लीट होनेवाली प्रकृति कौनसी है ? *श्रोता: आहारकद्विक।* तो आहारकद्विक; हां, उस समय में अन्य की भी उद्वेलना चल रही है, किसकी ? सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व की। परंतु उसके कम्प्लीट होने के लिये टाइम ज्यादा लगता है, अल्प काल में आहारकद्विक की उद्वेलना पूरी होती है और उसके लिये बहुत लंबा काल लगता है यानी पल्य के असंख्यातवें भाग इतना बड़ा काल लगता है। फिर अभी ये किसके-किसके होती है उसकी बात करेंगे। आगे के पृष्ठ पर कौनसा जीव कौनसी प्रकृतियों की उद्वेलना करता है, क्या सभी जीव सभी प्रकृतियों की उद्वेलना करते हैं,

क्या जो देव है वही देवगति की उद्वेलना करेगा क्या ? या मनुष्य उसकी उद्वेलना करेगा ? तो नहीं। कौन कर सकता है ? उद्वेलना कौनसे प्रकृतियों की होती है वह तो बात बता दी उन्होंने। अब कौनसे जीव कौन-कौनसी प्रकृतियों की उद्वेलना करते हैं वह बात आगे बता रहे हैं, ३५३ पृष्ठ पर।

चारों गतिवाले मिथ्यादृष्टि जीवों में चार, चार यानी कौनसी हम अभी देखेंगे, आगे देखेंगे, उसको। *श्रोता: विकलेन्द्रिय और एकेन्द्रिय मिलकर चार।* क्या ? नहीं। **चारों गतिवाले मिथ्यादृष्टि जीवों में चार**। देखो आहारकचतुष्क की उद्वेलना कौन करेंगे ? *श्रोता: मिथ्यादृष्टि।* मिथ्यादृष्टि। कौनसा मिथ्यादृष्टि ? नारकी मिथ्यादृष्टि कि मनुष्य मिथ्यादृष्टि कि देव मिथ्यादृष्टि कि तिर्यंच मिथ्यादृष्टि ? कोई भी जीव - कोई भी मिथ्यादृष्टि। *श्रोता: चारों गति।* मिथ्यात्व में आया है, आहारक प्रकृति बांधकर गया है तो उन दो की उद्वेलना तो करेगा ही करेगा। कोई भी मिथ्यादृष्टि क्यों न हो, सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर मिथ्यात्व में गया है तो सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना उसकी चालू हो गयी है। ये चार हैं; एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय के चार नहीं कहा; चार कौनसी ? आहारकद्विक और दर्शनमोहनीय की दो- इन चार प्रकृतियों की उद्वेलना कौन करते हैं ? चारों गति के मिथ्यादृष्टि। अभी आगे की जो प्रकृतियां हैं देवगति, नरकगति, वगैरह उसकी उद्वेलना कौन करता है वह आगे बतायेंगे। तो **एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रियों में छह;** कौनसी छह ? जीव लंबे काल तक एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय में रहेगा तो पहले पूर्व में बंधी हुयी देवगति और देवगत्यानुपूर्वी की उद्वेलना चालू होगी। उनकी उद्वेलना पूर्ण होने पर नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग चार एक साथ जायेगी क्योंकि देवगति भी गयी और नरकगति भी जा रही है तो वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग का क्या काम है ? वे भी उनके साथ चली जायेगी।

चार एक साथ हैं यानी ये छह प्रकृतियों की उद्वेलना कौन करता है ? एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय। एक भव में उसकी उद्वेलना पूरी नहीं होगी; वह लंबे काल तक उसी पर्याय में रहा- एकेन्द्रिय मरकर एकेन्द्रिय या विकलत्रय होता रहा तो इन प्रकृतियों की उद्वेलना कालांतर में पूरी होगी। फिर उसके बाद **अग्निकायिक और वायुकायिक में तीन प्रकृतियां** इसके बाद तीन प्रकृतियां कौनसी है ? **उच्चगोत्र, मनुष्यगति, और मनुष्यगत्यानुपूर्वी।** क्या कहा ? अग्निकायिक और वायुकायिक जीव ऐसे हैं कि उनमें

उत्पन्न होने के बाद पूर्व में कभी बंधे हुये उच्चगोत्र, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी की उद्वेलना होती चली जाती है। कोई भी अग्निकायिक और वायुकायिक जीव मनुष्यायु को बांधता नहीं है, मनुष्यगति को बांधता नहीं है, उलटा मनुष्यगति उसकी सत्ता में हो तो उसका नाश कर देता है। इसका अर्थ है अग्निकायिक, वायुकायिक में से मरकर कोई भी जीव मनुष्य नहीं हो सकता। निगोद में से डायरेक्ट मनुष्य हो सकता है, अरे मोक्ष भी जा सकता है ! परंतु अग्निकायिक, वायुकायिक में से कोई भी जीव मनुष्य में नहीं उत्पन्न हो सकता। उलटा वह तो उच्चगोत्र, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी सत्ता में हो तो उनकी उद्वेलना करके नाश कर देता है।

अब जिस अग्निकायिक, वायुकायिक ने ऐसी उद्वेलना की है यानी उनकी सत्ता में मनुष्यगति नहीं है या मनुष्यगत्यानुपूर्वी नहीं है, उच्चगोत्र नहीं है, वह जीव जिस किसी पर्याय में उत्पन्न होगा; जिस किसी यानी अभी उसको क्या रह गया उत्पन्न होने के लिये एक मात्र ? *श्रोता: तिर्यंच।* तिर्यंचगति; नरक की तो आयु बांधता ही नहीं है, एकेन्द्रिय आदि बांधते ही नहीं, एकेन्द्रिय और विकलत्रय ना नरक में जाते हैं ना स्वर्ग में जाते हैं। वह ना नरकगति बांधते हैं ना देवगति बांधते हैं तो एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय तिर्यंचों के लिये बंधनेयोग्य मनुष्यगति और तिर्यंचगति है। परंतु यहां अग्निकायिक और वायुकायिक की स्पेशल बात हो रही है, उनके किसका बंध होगा ? तो वे तिर्यंचगति का ही बंध करेंगे। अग्निकायिक और वायुकायिक मरकर मात्र तिर्यंचों में ही उत्पन्न होंगे- एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तिर्यंच तक कहीं भी। हां, उत्पन्न होने की अपेक्षा उन जीवों में भी मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और उच्चगोत्र की सत्ता नहीं पायी जाती। अब कोई अग्निकायिक और वायुकायिक मनुष्यगति आदि की उद्वेलना करके संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न हुआ या अन्य द्वीन्द्रियादि में उत्पन्न हुआ या अन्य एकेन्द्रिय में उत्पन्न हुआ तो वहां जाने के पश्चात् वह मनुष्यगति बांध सकता है; तब जाकर मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, उच्चगोत्र की सत्ता आयेगी वहां पर, नहीं तो तब तक उसकी सत्ता में वह नहीं रहेगी। तो सत्ता के जो अलग-अलग स्थान हम बतायेंगे एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय में। अभी तो हमने क्षपणा की अपेक्षा अलग-अलग सत्त्वस्थान देखे।

अभी एकेन्द्रियों की अपेक्षा सत्त्व अलग-अलग कैसे हो सकते हैं उसे देखते हैं। तीर्थंकर, देवायु, नरकायु बिना उनमें सत्त्व १४५ का होता है। जिसने आहारकचतुष्क

की उद्वेलना कर दी है तो उसका सत्त्व कितना कम हो जायेगा ? आहारकचतुष्क के चार कम कर दो तो १४१ का सत्त्व हो जायेगा; उसके बाद सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक् प्रकृति की भी उद्वेलना कर देंगे तब और दो घटा देना तो १३९ का सत्त्व होगा; फिर उसमें से क्रम से लेना है न देवगति, देवगत्यानुपूर्वी तो और दो कम हो जायेगी, फिर उसकी सत्ता १३७ की हो जायेगी; फिर उसमें से नरकगति वगैरह चार एकसाथ कम कर दो तो उसकी सत्ता और घट जायेगी १३३ हो जायेगी। नहीं समझ में आ रही बात ?

देखो फिर से दुबारा, हम इसीमें से पढ़ेंगे ३५३ पृष्ठ पर दूसरा पॅरेग्राफ। **तीर्थंकर, नरकायु, देवायु - इनकी सत्ता जिनके नहीं पायी जाती** देखो ये उद्वेलना करनेवाले जीव कौन है ? *श्रोता: चारों गतिवाले।* चारों गतिवाले ? कौनसी चार प्रकृतियों के बारे में चारों गतिवाले कहेंगे ? वहां तो चतुर्गतिवाले कहेंगे, अब एकेन्द्रियों की बात अगर कहेंगे तो जो एकेन्द्रिय जीव हैं, उनकी सत्ता में तीर्थंकर की सत्ता है क्या ? *श्रोता: नहीं है।* नहीं है, देवायु की ? *श्रोता: नहीं है।* नहीं है और नरकायु की ? *श्रोता: नहीं है।* नहीं है। तो इन तीन की सत्तारहित जीव **उद्वेलना हुये बिना सत्त्व एक सौ पैंतालीस पाया जाता है।** अभी हम एकेन्द्रियों की बात करेंगे। एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय इन सब प्रकृतियों की उद्वेलना करनेवाले हैं और जो जीव उद्वेलना कर रहा है, इतने लंबे काल तक मिथ्यात्व में रहता है, क्या वह तीर्थंकर की सत्तावाला होगा ? *श्रोता: नहीं।* नहीं होता न। तो वहां तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता नहीं है। यदि हम एकेन्द्रियों की बात पहले ले लेंगे तो एकेन्द्रियों में ना तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता है, ना देवायु की है, ना नरकायु की है, बराबर ? अभी आगे वह कौन-कौनसी प्रकृतियों की उद्वेलना करेगा तो वहां सत्ता के नियम बदलेंगे वह बात हम थोड़े समय के बाद देखेंगे। तब तक उद्वेलना होने दो न !

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४०. उद्वेलना, सत्त्व, चूलिका, बंधस्थान

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है और पं. टोडरमलजी ने इसीके आधार से सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है। उसीका हिंदी अनुवाद हम देख रहे हैं। सत्त्व के प्रकरण में सत्ता की व्युच्छित्ति यानी नाश कैसे-कैसे हो सकता है वह हमने क्षपणा की अपेक्षा क्षपकश्रेणी में देखा।

अब कहते हैं कि उद्वेलना के द्वारा भी सत्ता का नाश हो सकता है। उद्वेलना क्या होती है ? बंधी हुयी प्रकृतियों का अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण होकर नष्ट हो जाना उसको उद्वेलना कहते हैं। यह उद्वेलना कौन-कौनसी प्रकृतियों में होती है ? ऐसी हमने १३ प्रकृति देखी और यह उद्वेलना मिथ्यात्व गुणस्थान में आकर होती है। उन प्रकृतियों में हमने देखे आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक् प्रकृति- चार हो गयी; फिर देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग; फिर उच्चगोत्र, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी- इन १३ प्रकृतियों की उद्वेलना होती है तो उद्वेलना की अपेक्षा अलग-अलग सत्त्व पाये जाते हैं।

श्रोता: मिथ्यात्व दशा में सम्यक्त्व मोहनीय और मिश्रमोहनीय की उद्वेलना होती है। क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि क्षायिक करता है तो वह इन प्रकृतियों का क्षय करता है ? देखो, क्षय की बात होती है तो हमने देखा था, उनका भी सत्ता में से क्षय हो जाता है। हमने क्षपणा करनेवाले की सात प्रकृतियों को लिया था। जब अलग-अलग जीव की अपेक्षा बात करेंगे तो उसकी मोहनीय की सत्ता है वह क्रम से बतायेंगे- अनंतानुबंधी चार गयी हैं; मिथ्यात्व गया है; सम्यग्मिथ्यात्व गया है; फिर सम्यक् प्रकृति गयी है। एक जीव की अपेक्षा जब सत्ता की बात आयेगी तब उसकी बात हम करेंगे। यहां क्षायिक करनेवाले को नहीं लिया क्योंकि वहां अन्य अलग-अलग जीवों की अपेक्षा बात की थी।

अब एकेन्द्रिय में जाने पर कहां कौनसी सत्ता पायी जाती है, कौनसी नहीं पायी जाती इसकी बात यहां हो रही है। उद्वेलना से सत्ता में से नष्ट हुयी प्रकृतियों का पुन: सत्त्व हो सकता है। सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति दुबारा सम्यक्त्व प्राप्त होने पर पुन: तैयार होती है। मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी, उच्चगोत्र का बंध अन्य पर्यायों में

आने पर पुन: होता है। वैक्रियिक षटक् का बंध पंचेन्द्रियों में आने पर होता है। आहारकद्विक का बंध संयम धारण करने पर पुन: होता है। परंतु जिनका क्षय हुआ है, उनका पुन: बंध नहीं हो सकता। मुख्यत: यहां एकेन्द्रियों और विकलेन्द्रियों की बात है। पहली जो चार प्रकृतियां हैं आहारकद्विक, सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व - इनकी उद्वेलना चारों ही गति के मिथ्यादृष्टि जीव करते हैं। अब कोई सादि मिथ्यादृष्टि नौवें ग्रैवेयक का है तो वह मिथ्यात्व अवस्था में सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना करेगा कि नहीं करेगा ? *श्रोता: करेगा।* करेगा, लंबे काल तक मिथ्यात्व में रहा है तो वहां उसकी उद्वेलना चलती ही रहती है, किसी भी गति में हो, तो भी।

अब ऐसे जीव एकेन्द्रिय में या विकलेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं तो वहां सत्ता में और क्या-क्या बातें हो सकती हैं इसकी चर्चा चल रही है। ऐसे जीव जो लंबे काल तक मिथ्यात्व में हैं उनके उन प्रकृतियों की उद्वेलना होती है। तीर्थंकर की सत्तावाला जीव जब मिथ्यात्व में आता है तो अंतर्मुहूर्त के लिये आता है। उस काल में वहां पर किसी भी प्रकृति की उद्वेलना वगैरह की बात होती ही नहीं। एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय में उत्पन्न होनेवाले जीव हैं उनकी बात यहां चलेगी। उनकी सत्ता में तीर्थंकर प्रकृति है ही नहीं है, देवायु भी नहीं है और नरकायु भी नहीं है। ऐसे जीव एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय में उत्पन्न होते हैं तो उनके इन तीन की सत्ता नहीं है। कितने की सत्ता के साथ एकेन्द्रियों में जन्म ले रहे हैं ? १४५ की सत्ता के साथ। आगे हम उद्वेलनावाली प्रकृतियों की बात करेंगे। उनकी सत्ता में तीर्थंकर नहीं है, देवायु नहीं है और नरकायु नहीं है ऐसे एकेन्द्रिय में या विकलत्रय में जो उत्पन्न हुये हैं उन जीवों की अभी बात बतायेंगे।

३५३ पृष्ठ निकालना, दूसरा पॅरेग्राफ- **तीर्थंकर, नरकायु, देवायु- इनकी सत्ता जिनके नहीं पायी जाती ऐसे चतुर्गतिवाले संक्लेशपरिणामी मिथ्यादृष्टि जीव, उनके उद्वेलना हुये बिना,** उद्वेलना होने के पहले, सत्त्व कितना है ? इन तीन की सत्ता नहीं है तो कितना सत्त्व है ? **एक सौ पैंतालीस का पाया जाता है।** अब कहते हैं **आहारकद्विक की उद्वेलना होने पर** कितना हो जायेगा ? **एक सौ तैंतालीस** का हो जायेगा। अभी जिनके इनकी सत्ता नहीं उनकी अपेक्षा से बात चल रही है। उसके बाद नंबर किसका है ? तो सम्यक्त्वमोहनीय की उद्वेलना पूर्ण होती है। स्टार्टिंग तो हो गयी है सबकी परंतु वह पूर्णता को प्राप्त होती है तो उसकी सत्ता नष्ट हो जाती है। तो सत्त्व १४३ से १४२ हो जायेगा। जब उसके बाद मिश्रमोहनीय की भी उद्वेलना पूरी हो जायेगी

तो एक और प्रकृति घट जायेगी। तब सत्ता कितनी हो जायेगी ? १४१। यह १४१ की सत्ता यानी उसने चार प्रकृतियों का नाश किया है और ये तीन प्रकृतियां तो उसकी सत्ता में नहीं थी तो १४१ की सत्ता उन्होंने बता दी।

अब **उत्पन्नस्थान में** यानी ऐसे १४५ की सत्तावाले जो एकेन्द्रियों में उत्पन्न हुये उसको उत्पन्नस्थान कहते हैं। उनमें वह १४५ की सत्तावाला है उसने आहारकद्विक की उद्वेलना की तो १४३ हो गया; उसने सम्यक् प्रकृति की उद्वेलना की तो १४२ हो गया; उसने सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना की तो १४१ हो गया। अब उसके बाद वह एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय वगैरह जीव हैं तो वे और आगे किसकी उद्वेलना करेंगे ? देवगति और देवगत्यानुपूर्वी। १४१ में से दो गये तो १३९ हो जायेगी। उसके बाद वैक्रियिकचतुष्क यानी नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग चार एक साथ चली जायेंगी तो १३९ में से चार गयी तो १३५ का सत्त्व उनके पाया जायेगा। अब ऐसे ही जीव जो पहले हमने देखे थे वहां तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता नहीं थी, देवायु नहीं थी और नरकायु नहीं थी और १४५ की सत्तावाला जीव वहां उत्पन्न हुआ था।

देखिये, अग्निकायिक में जो उत्पन्न होते हैं वहां मनुष्यायु का भी सत्त्व नहीं है, देवायु का तो है ही नहीं, नरकायु का भी नहीं है। वह कितनी प्रकृतियों के साथ अग्निकायिक में आया है ? १४४ के साथ आया है। वह जीव जब आहारकद्विक की उद्वेलना करेगा तो १४२ हो जायेंगे; सम्यक् प्रकृति की उद्वेलना होने पर १४१ हो जायेंगे; सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना पूरी होने पर १४० हो जायेंगे; देवद्विक की उद्वेलना हो जायेगी तब १३८ हो जायेंगे; वैक्रियिकचतुष्क की उद्वेलना होने पर १३४ का सत्त्व उनका हो जायेगा। यह सत्ता अलग-अलग कैसे पायी जाती है ? उसका यहां वर्णन है। अब कहते हैं कि अग्निकायिक और वायुकायिक में १३४ की सत्तावाले आगे और किसकी उद्वेलना कर सकते हैं ? उच्चगोत्र की। उच्चगोत्र की उद्वेलना होने पर १३४ में से १३३ हो जायेंगे और मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी की उद्वेलना होने पर १३१ का सत्त्व हो जायेगा। किसमें ? अग्निकायिक में और वायुकायिक में लंबे काल तक रहनेवालों में ही यह बात होती है। मरकर फिर उसी पर्याय में, मरकर फिर उसी पर्याय में उत्पन्न होकर उन्हीं पर्यायों में रहनेवालों की यह बात है।

हमने देखा न कि अग्निकायिकों और वायुकायिकों में से कोई भी जीव मनुष्यों

में उत्पन्न नहीं होता। हम तो केवल निगोद को ही ऐसा कहते हैं कि अरे वहां बेकार है ! कोई भी देव और नारकी; नारकी एकेन्द्रिय में जाते ही नहीं हैं, देव एकेन्द्रिय में जन्म ले सकते हैं परंतु कोई भी देव मरकर अग्निकायिक और वायुकायिक में जन्म लेता ही नहीं है; हां, बादर पर्याप्त पृथ्वीकायिक में जा सकते हैं, बादर पर्याप्त जलकायिक में जा सकते हैं या पर्याप्त प्रत्येक वनस्पति में जन्म ले सकते हैं; परंतु अन्य पर्यायों में देव नहीं जायेंगे। करणानुयोग के जो नियम हैं उसकी अपेक्षा सत्ता के अलग-अलग स्थान बन सकते हैं इसकी बात यहां बतायी है। ख्याल में आयी न बात ? यह याद करने की बात नहीं है मैं बारंबार यही बात कहती हूं, परंतु जब हम इसको पढ़ते हैं तो क्यों ऐसा कह रहे हैं इसका रीझनिंग - इसका जो कारण है वह हमारे ख्याल में आना चाहिये।

यहां दो शब्द आते हैं- एक है स्वस्थान और एक है उत्पन्नस्थान। उत्पन्नस्थान उसको कहते हैं जो पूर्व पर्याय में उतनी सत्ता करके इसमें उत्पन्न होता है, तो जितनी सत्ता करके उत्पन्न हुआ है उसको कहेंगे उत्पन्नस्थान। अभी हमने देखा अग्निकायिक और वायुकायिक उसमें मिनिमम सत्ता कितनी कर दी ? उन्होंने मनुष्यद्विक की उद्वेलना होने पर १३१ कर दी। अब यह जीव मरकर अन्य पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न होगा। तो पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न हुआ तो उसको १३१ का सत्त्व स्टार्टिंग में होगा। जब वहां फिर वह नरकद्विक बांधेगा, वैक्रियिकचतुष्क बांधेगा, देवगतिद्विक बांधेगा, मनुष्यगतिद्विक, उच्चगोत्र- सब कुछ बांधेगा तब जाकर उनकी सत्ता फिर वहां हो जायेगी। पूर्व पर्याय में इतनी सत्ता घटाकर आया है तो उत्पन्न होने की अपेक्षा इतनी सत्ता वहां हो सकती है यह बात बताना चाहते हैं। परंतु इतनी सत्ता लेकर कोई मनुष्य में नहीं आयेगा क्योंकि मनुष्यगति की उद्वेलना की है और वह मनुष्यायु बांधता नहीं है। ऐसा अग्निकायिक, वायुकायिक अन्य तिर्यंच में जायेगा। वहां मनुष्यगति, मनुष्यायु बांधकर फिर मनुष्य में आ सकता है। इतनी बातें इसमें से भी - सत्ता की अपेक्षा से भी घटित होती हैं। यही बात ३५४ पृष्ठ पर आपको टेबल द्वारा बतायी है। ऊपर उद्वेलना प्रकृति लिखी हैं। आहारकद्विक, सम्यक् प्रकृति, मिश्र, सुरद्विक, नारकचतुष्क। फिर अग्निकायिक, वायुकायिक में तीन और ली हैं उच्चगोत्र और मनुष्यद्विक। अभी हमने पढ़ा वही वहां अलग-अलग सत्त्व बताया गया है- उत्पन्न होने की अपेक्षा से भी और स्वस्थान की अपेक्षा से भी।

उद्वेलना क्या है, वे प्रकृतियां कौनसी हैं और उनके कैसे-कैसे सत्त्व बन सकते

हैं इसकी अपेक्षा से यह बात यहां बतायी गयी है। उद्वेलना प्रकृति की अपेक्षा अभी हमने सत्त्व देखे हैं। सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व यह कौनसे कर्म का भेद है ? दर्शनमोहनीय का। बाकी जो प्रकृतियां कौनसी ? आहारकद्विक है, देवद्विक है, नारकचतुष्क है, मनुष्यद्विक है एक उच्चगोत्र छोड़ दो तो बाकी सभी क्या हैं ? नामकर्म की बहुत सारी प्रकृतियां हैं। तो उसकी अपेक्षा सत्ता के अलग-अलग भेद यहां हमने देखे। सत्त्व और असत्त्व की बात यहां घटित हो जाती है। एकेन्द्रियों और विकलेन्द्रियों में ही यह अधिकतर उद्वेलना होती है। पहली चार प्रकृतियों की उद्वेलना चारों गतियों में होती है। इसतरह से यह उद्वेलना की बात हमने देख ली है, हम गतियों की अपेक्षा सत्ता की थोड़ी बात करेंगे। जैसे पहले हमने गतियों की अपेक्षा बंधयोग्य प्रकृतियां भी देखी थी। गति की अपेक्षा उदययोग्य प्रकृतियों की भी हमने थोड़ी चर्चा की थी, अब गतियों की अपेक्षा सत्ता की प्रकृतियां यानी सत्त्ववाली प्रकृति भी देखेंगे। कौनसी गति में कौनसा सत्त्व हो सकता है या नहीं हो सकता है इतनी बात हमको देखनी है।

हम शुरू करते हैं नरकगति से। नरकगति में कौनसी प्रकृतियों का सत्त्व नहीं होगा ? बिलकुल नहीं होगा ? कहते हैं देवायु का सत्त्व नहीं हो सकता। देवगति का हो सकता है क्योंकि पूर्व में बंधी है और वह नरक में गया है तो देवगति की सत्ता पड़ी रहेगी, उसकी कोई ना नहीं है, परंतु देवायु वहां बंधती नहीं है। देवायु की सत्ता नहीं हो सकती क्योंकि नारकी जीव तिर्यंचायु का बंध कर सकते हैं, मनुष्यायु का बंध कर सकते हैं, परंतु देवायु का बंध तीन काल में नहीं कर सकते हैं। नरकायु का बंध नहीं करेंगे परंतु उसकी भुज्यमान नरकायु है तो उसकी सत्ता तो है ही। वह स्वयं नारकी है उनकी नरकायु की सत्ता तो है ही है। तो कौनसी प्रकृति की सत्ता नहीं होगी ? देवायु की। क्या तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता हो सकती है नारकियों में ? *श्रोता: तीसरे नरक तक हो सकती है।* हां, तीसरे नरक तक हो सकती है। तीसरे नरक तक के नारकियों के होगी। आगे चौथे, पांचवें, छठे सातवें नरक में तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता नहीं है। आगे सातवें नरक के लिये अगर कहना है तो कहेंगे कि वहां मनुष्यायु की भी सत्ता नहीं है क्योंकि सातवें नरक का कोई भी नारकी मनुष्यायु का बंध करता ही नहीं हैं। इसलिये नरक में हम तीन भाग करेंगे; पहले, दूसरे और तीसरे नरक तक मात्र देवायु बिना बाकी सभी प्रकृतियां अलग-अलग जीवों की अपेक्षा उनके पायी जाती हैं। तो हम वहां

सत्त्व कितना कहेंगे ? *श्रोता: १४७/*१४७।

देखो अभी ३४८ पृष्ठ पर ३४६ गाथा की टीका पढ़ेंगे, नीचे से चौथी लाइन - **नरकगति में गुणस्थानवत् है। वहां देवायु का सत्त्व नहीं है; इसलिये सत्त्व योग्य एक सौ सैंतालीस हैं। वहां भी तीर्थंकर का सत्त्व तीसरी पृथ्वी तक है।** देखो, तीसरी पृथ्वी तक है इसका अर्थ है तीसरी पृथ्वी से जो तीर्थंकर की सत्तावाला जीव है वह मरकर यहां मनुष्य में आयेगा और पांचों ही कल्याणक सहित वह तीर्थंकर होगा उसी पर्याय में, अब उसके अधिक भव नहीं होंगे। ख्याल में आती है न बात ? तीर्थंकर की सत्तावाले को ज्यादा भव नहीं होते। यहां मनुष्य में बंध शुरू किया था, नरक में गया है अब वहां से आकर तीर्थंकर होकर मोक्ष चला जायेगा। **चौथी आदि पृथ्वियों** में यानी चौथी में, पांचवीं में और छठी में **सत्त्व एक सौ छियालीस है** क्योंकि वहां तीर्थंकर की भी सत्ता नहीं है और देवायु की भी नहीं है। फिर **सातवीं पृथ्वी में एक सौ पैंतालीस** क्योंकि तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता नहीं है, देवायु की नहीं है और मनुष्यायु की भी नहीं है इसलिये १४५ का सत्त्व है। बस हमें नरकगति में इतना ही देखना था।

अब तिर्यंचगति में देखते हैं। तिर्यंचगति में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व पाया जाता है कि नहीं पाया जाता ? *श्रोता: नहीं पाया जाता।* नहीं पाया जाता क्योंकि तिर्यंच तो तीर्थंकर प्रकृति बांधते नहीं हैं। जिसने तिर्यंचायु का बंध किया है उनके तीर्थंकर प्रकृति बंधती नहीं और मरकर वहां जाने का सवाल नहीं है। तिर्यंचों में तीर्थंकर बिना १४७ का सत्त्व पाया जायेगा, अब उसमें और डीटेल में देखना है। पांचवें गुणस्थानवाला जो तिर्यंच है उसमें कौनसी और सत्ता नहीं होगी ? देवायु का सत्त्व हो सकता है। जिसने नरकायु बांधी है, जिसने मनुष्यायु बांधी है ऐसे तिर्यंच को पांचवां गुणस्थान नहीं होगा। हमने जैसे मनुष्यों में घटित किया- जिस मनुष्य ने तिर्यंचायु, मनुष्यायु या नरकायु बांधी है उसके पांचवां या ऊपर का कोई भी गुणस्थान नहीं होगा; ऐसे तिर्यंचों के लिये- जिस तिर्यंच ने तिर्यंचायु बांधी हो, मनुष्यायु बांधी हो या नरकायु बांधी हो यानी देवायु बिना अन्य आयु का बंध किया हो तो उसके पांचवां गुणस्थान नहीं होगा। अब तिर्यंचायु की सत्ता उसकी भुज्यमानरूप से है वहां पर, तो कौनसी आयु वहां नहीं होगी बिलकुल ? पांचवें गुणस्थानवाले तिर्यंच को नरकायु और मनुष्यायु की सत्ता बिलकुल नहीं पायी जायेगी। हमने तिर्यंचों में सामान्यरूप से १४७ की सत्ता देखी थी, पांचवें गुणस्थानवाले में ये दो नहीं हैं तो १४५ की हो जायेगी। इसके डीटेल में अभी हम नहीं जायेंगे, हम तो

केवल यहां स्थूलरूप से देख रहे हैं।

मनुष्यगति में हमने यहां देखा ही है। यहां गुणस्थानवत् सारी सत्ता है। आपके चार्ट में देखना सत्त्व प्रकृति में, हमने जो क्षपकश्रेणी में घटित किया है या अन्य नीचे के गुणस्थानों में। मनुष्यों में चौदह गुणस्थान हैं तो मनुष्यों की ही अपेक्षा ये सब सत्त्व हो सकते हैं। हमने देखा न, मिथ्यात्व में १४८ का हो सकता है वगैरह-वगैरह, सारी बातें मनुष्यों में घटित होती हैं। एक ही बात है कि जो मनुष्यणी है- जो भाव से स्त्रीवेदी पुरुष है और तीर्थंकर की सत्ता है वे तो सातवें गुणस्थान तक ही जा सकते हैं; वे जीव क्षपकश्रेणी नहीं चढ़ सकते। उनके और भव हो जायेंगे, तीर्थंकर की सत्ता है, तीर्थंकर प्रकृति बांधी है। जो तीर्थंकर प्रकृति बांधते हैं वे तीर्थंकर होकर ही मोक्ष चले जाते हैं। अब वे भाव से स्त्री हैं, तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे हैं परंतु उस भव में वे क्षपकश्रेणी नहीं चढ़ सकते। उनका एक देव का भव हो जायेगा, वहां वह पुरुष होंगे; वापस लौटकर आयेंगे वहां पर भी द्रव्य और भाव से वे पुरुष ही होंगे और फिर उस भव में तीर्थंकर होकर मोक्ष चले जायेंगे, यह उसमें एक विशेषता है। मनुष्यगति में तो हमने देख ही लिया है चौदह गुणस्थानों में क्या होता है।

देवगति में सत्त्व देखते हैं। जैसे नरकगति में क्या देखा था ? देवायु का सत्त्व नहीं होता है। देवगति में क्या होगा ? *श्रोता: नरकायु का सत्त्व नहीं होगा।* नरकायु का सत्त्व नहीं होगा। कोई तिर्यंचायु बांधते हैं, कोई मनुष्यायु बांधते हैं तो अलग-अलग जीवों की अपेक्षा उनका सत्त्व पाया जायेगा। वहां भी सत्त्व प्रकृतियां कितनी हो सकती हैं ? १४७। परंतु भवनत्रिकवालों को तीर्थंकर की सत्ता नहीं रहेगी क्योंकि सम्यग्दृष्टि मरकर भवनत्रिक में नहीं जाते। इसलिये भवनत्रिकवाले देव तीर्थंकर की सत्तावाले नहीं होते- यह एक बात ख्याल में रखना है। अब तिर्यंचायु की सत्ता कहां तक पायी जा सकती है ? तो सहस्रार तक; वहां तक के देव हैं वे ही तिर्यंचायु का बंध कर सकते हैं- या तो मनुष्यायु या तिर्यंचायु दो ऑप्शन हैं। ऊपर के आनत-प्राणत, आरण-अच्युत, ग्रैवेयक वगैरह सभी देव मनुष्यायु का ही बंध करेंगे। इसलिये उस अपेक्षा से भी वहां डिफरन्स होगा। इसतरह से देवों में भी कहां कितनी सत्ता हो सकती है ? सामान्य से देखना है तो देवगति में कितने का सत्त्व है ? नरकायु बिना १४७ का। फिर देवों के भेद करेंगे, भवनत्रिक में कितना हो सकता है ? वहां तीर्थंकर का सत्त्व भी नहीं होगा। ऊपर

के देवों में तिर्यंचायु का भी नहीं होगा। इसतरह हम उसको घटित कर सकते हैं।

देखो बंध की बात हो, उदय की हो या सत्त्व की हो हमने मात्र गतियों में थोड़ा-थोड़ा उसको लगाकर देखा है। हर एक मार्गणा में कितने का सत्त्व है इस बात की यहां विस्तार से चर्चा की हुयी है। हमने गतिमार्गणा में देखा। फिर इन्द्रियमार्गणा में बतायेंगे- एकेन्द्रिय में कितने-कितने का सत्त्व हो सकता है ? तो अभी जो हमने देखा, उद्वेलना की अपेक्षा अलग-अलग सत्त्व हो सकते हैं, द्वीन्द्रिय आदि में कितने होते हैं, पंचेन्द्रिय में कितने होते हैं। फिर कायमार्गणा में, पृथ्वीकायिक, अग्निकायिक हर एक में अलग-अलग डिराइव्ह करेंगे। वेदमार्गणा की अपेक्षा वेदों में डिराइव्ह करेंगे। इसतरह से सभी मार्गणाओं में सत्त्व कितना-कितना हो सकता है उसकी चर्चा आगे करेंगे। हमें उसके डीटेल में नहीं जाना है। उदय, उसकी व्युच्छित्ति, अनुदय हमने देखा। उसके पहले बंध और उसकी व्युच्छित्ति, कहां कितनी अबंध रहती हैं इसको देखा। अब हम सत्ता की बात कर रहे हैं तो सत्त्व कितना हो सकता है, तो हमने सामान्य से गुणस्थानों में घटित किया और फिर कहां कितना असत्त्व है, कहां कितनी क्षपणा होती है, कहां कितनी उद्वेलना होती है उसकी भी हमने चर्चा की। यह तो सामान्य से सत्त्व का निरूपण हो गया है। तो यहां हमने देखा है कौनसे जीव कौनसी प्रकृतियों की उद्वेलना करते हैं और फिर बाद में इसको उन्होंने संपूर्ण मार्गणाओं में घटित किया है।

अभी आगे का विषय शुरू करने के पहले जो हमने पढ़ा है उस पर थोड़ी चर्चा करके फिर हम आगे बढ़ेंगे। वैसे यह विषय बड़ा है परंतु उसमें से थोड़ा ही मैं आपको बताना चाहती हूं। बहुत इंटरेस्टिंग विषय है। यह त्रिचूलिका अधिकार है, हम यह पूरा नहीं लेनेवाले हैं। उसमें से केवल पहले तीन प्रश्नों पर हम गौर करेंगे। किसी भी ग्रंथ की चूलिका किसको कहते है ? ग्रंथ में जो विषय आया है, ग्रंथ में जो विषय नहीं भी आया है या आये हुये विषय को कुछ अलग अँगल से आचार्य प्रस्तुत करना चाहते हैं तो इसकी चर्चा जिसमें होती है उसको कहेंगे चूलिका। यहां पृष्ठ ३९८, देखो बीच में लिखा है- **चूलिका किसे कहते हैं ? - जो अर्थ कहा है, नहीं कहा है और विशिष्टरूप से नहीं कहा है, उसका जो चिंतवन, उसे चूलिका कहेंगे।** यानी आचार्यों का अपना जो चिंतन है वह यहां प्रस्तुत किया है। यहां नौ प्रश्न पूछे गये हैं और उन प्रश्नों के उत्तर में आचार्यों ने अपना चिंतन प्रस्तुत किया है। हम पहले तीन प्रश्नों को यहां ले लेंगे।

पहले तीन प्रश्न कौनसे हैं ? नीचे की तीन लाइन हम देखेंगे। हमने बंधव्युच्छित्ति देखी, उदयव्युच्छित्ति देखी और सत्त्व की भी व्युच्छित्ति देखी है। अभी यहां मात्र बंध और उदय में ही कम्पेअर करेंगे, यहां सत्ता को अभी बाजू में रखेंगे। बंधव्युच्छित्ति और उदयव्युच्छित्ति कम्पेअर करके यहां बात होगी। तो कहते हैं **उदय की व्युच्छित्ति के पहले बंध की व्युच्छित्ति कौनसी प्रकृतियों की होती है ?** क्या कहा ? पहले बंध की व्युच्छित्ति होती है उसका अर्थ है नीचे के गुणस्थानों में बंध था, उसकी बंधव्युच्छित्ति हुयी और ऊपर के गुणस्थानों में उदय होकर उसकी व्युच्छित्ति हुयी तो वे प्रकृतियां कौनसी हैं ? दूसरा प्रश्न **उदय की व्युच्छित्ति के पश्चात् बंध की व्युच्छित्ति कौनसी प्रकृतियों की होती है ?** यानी नीचे के गुणस्थानों में उदय है और ऊपर के गुणस्थानों में जाकर बंध है, क्या ऐसा भी हो सकता है ? *श्रोता: हां।* ऐसा हो सकता है, कौनसी है ? *श्रोता: आहारक।* आहारक की है, हां, तो ऐसी कौनसी प्रकृति है यह दूसरा प्रश्न और तीसरा प्रश्न **उदय की व्युच्छित्ति के साथ युगपत् बंध की व्युच्छित्ति कौनसी प्रकृतियों की होती है ?** *श्रोता: साथ-साथ ?* साथ-साथ, जैसे मिथ्यात्व की जहां बंधव्युच्छित्ति है वहीं पर उदयव्युच्छित्ति पहले गुणस्थान में है। फिर अनंतानुबंधी की दूसरे में है। अप्रत्याख्यानावरण की ? *श्रोता: चौथे में है। श्रोता: मिश्र गुणस्थान में ?* चौथे में है, मिश्र की क्या ? वहां उसका बंध है क्या ? मिश्र का तो बंध ही नहीं होता है। ये प्रश्न पूछे गये हैं उनके उत्तर हम देखेंगे। हमने अभी तक बंधव्युच्छित्ति भी देखी, उदय की भी व्युच्छित्ति देखी। अब वे कौनसी प्रकृतियां हैं उसकी चर्चा करनेवाले हैं हम।

हम देखते हैं, पृष्ठ ३९९ पर गाथा ४०० और ४०१ की टीका, नीचे का पॅरेग्राफ- देखो, पहले ऐसी आठ प्रकृतियां बतानेवाले हैं जिनकी उदय की व्युच्छित्ति पहले होती है और बंध की व्युच्छित्ति बाद में होती है। नीचे के गुणस्थानों में उदय है और रुक जाता है; बंध आगे के गुणस्थानों तक होता रहता है। हम प्रकृतियां पढ़ेंगे फिर उसकी चर्चा करेंगे। पहले में पहले बताया **देवगति और देवानुपूर्वी**, तो मेरा प्रश्न है देवगति और देवानुपूर्वी के बंधव्युच्छित्ति कहां होती है ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में है न ! देवों के अधिक से अधिक कौनसे गुणस्थान हैं ? चौथा गुणस्थान यानी उदय की व्युच्छित्ति चौथे में है और बंध की व्युच्छित्ति आठवें में है। आगे- **वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग**- इनकी भी

उदय की व्युच्छित्ति चौथे में है, बंध की व्युच्छित्ति आठवें में है क्योंकि देवगति के साथ बंध रही थी। **आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग**, कौन बताना चाहता है उदय की व्युच्छित्ति कहां है और बंध की व्युच्छित्ति कहा है ? हां, रीना ? *श्रोता: उदय की व्युच्छित्ति छठे में।* उदय की व्युच्छित्ति छठे में और बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: सातवें में।* आठवें में; जहां तक बंध है सातवें में बंध है लेकिन व्युच्छित्ति नहीं है, आठवें में बंध की व्युच्छित्ति है। **अयशस्कीर्ति** का उदय कहां रुकता है और बंध कहां रुकता है ? *श्रोता: उदय की व्युच्छित्ति चौथे में।* उदय की व्युच्छित्ति चौथे में, बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: बंध की व्युच्छित्ति छठे में।* बंध की व्युच्छित्ति छठे में, छह में से 'अ' 'अ' वाले पांच देखे थे न हमने छठे गुणस्थान में ? उदय की व्युच्छित्ति पहले होती है और बाद में बंध की व्युच्छित्ति होती है। ऐसे ये आठ प्रकृतियां- और कौनसी है ? **देवायु**- देवायु की उदय की व्युच्छित्ति कहां है ? बोलो सुशीला ? *श्रोता: चौथे में।* बंध की व्युच्छित्ति ? छठे में ? नहीं, सातवें में बंध की व्युच्छित्ति है और उदय की व्युच्छित्ति चौथे में है। यह हम पढ़ेंगे नहीं, हमने उसको डिराइव्ह कर लिया। अब आगे बढ़ते हैं।

अब जिनकी एक साथ उदयव्युच्छित्ति और बंधव्युच्छित्ति होती है। पृष्ठ संख्या ४०० पर, दूसरा पॅरेग्राफ- **जिनकी उदयव्युच्छित्ति और बंधव्युच्छित्ति युगपत् होती है** ऐसी ३१ प्रकृतियां बतायी हैं। **मिथ्यात्व** कहां पर होता है ? *श्रोता: पहले गुणस्थान में।* बंध और उदयव्युच्छित्ति पहले में। **आतप** की बंध और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: पहले में।* पहले में। **मनुष्यानुपूर्वी** की बंधव्युच्छित्ति और उदयव्युच्छित्ति ? चौथे में। नहीं समझे ? मनुष्यगति, मनुष्यानुपूर्वी, मनुष्यायु वगैरह के बंध की व्युच्छित्ति हमने चौथे में देखी थी और मनुष्यानुपूर्वी का उदय चौथे तक ही है। मनुष्यानुपूर्वी की सत्ता चौदहवें तक है, परंतु बंध चौथे तक ही है, उदय भी वहीं तक है। इसका उदय कहां होता है ? विग्रहगति में होता है। परंतु सत्ता चौदहवेंवाले को भी है हमने देखी थी, उदय के बिना ही उसका क्षय हो जाता है। **स्थावर, सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण** ? *श्रोता: पहले में।* पहले में। **संज्वलन लोभ के बिना अन्य पंद्रह कषाय**, एक-एक देखते हैं; अनंतानुबंधी का उदय और बंध पहले में या चौथे में ? नक्की करो। *श्रोता: बंधव्युच्छित्ति दूसरे में।* बंधव्युच्छित्ति दूसरे में है; उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे में।* अरे, अनंतानुबंधी का उदय और बंध दोनों ही दूसरे में है। हमने उदय की व्युच्छित्ति में देखा न ! पांच और नौ देखा या दस और चार देखा, तो चार में किसको गिना था ? अनंतानुबंधी को

गिना था। देखो, ये सोलह कषाय हैं जहां उनका बंध है वहीं उनका उदय है। नीचे लिखा है, वह नीचे का नहीं पढ़ना है, अभी सोचना है हमें।

संज्वलन लोभ बिना कहा- अनंतानुबंधी के बंध और उदय की व्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में है, अप्रत्याख्यानावरण चार का बंध और उदय एक साथ बताया न ? केवल हमको गुणस्थान नक्की करना है। *श्रोता: चौथे में।* चौथे में। प्रत्याख्यानावरण का ? *श्रोता: पांचवें में।* पांचवें में। संज्वलन के उदय और बंध की व्युच्छित्ति कहां होती है ? नौवें में जहां तक क्रोध का वेदककाल कहा जाता है वहां तक उसका बंध भी है। यानी क्रोध-मान-माया-लोभ चारों का बंध है और क्रोध का वहां तक उदय हो सकता है। उसके बाद आगे क्रोध का बंध रुक जाता है फिर मान वगैरह का। संज्वलन का क्रोध, मान और माया के बारे में नौवां गुणस्थान समझना, संज्वलन लोभ को छोड़ दिया यहां। नौवें में बादरलोभ का उदय है तब तक संज्वलन लोभ का बंध भी है, परंतु बाद में सूक्ष्मलोभ का उदय है इसलिये संज्वलन लोभ को उन प्रकृतियों में नहीं गिना। उदय बाद में है और बंध पहले रुक जाता है इसलिये इसको नहीं गिना। **भय** और **जुगुप्सा** के बंध की व्युच्छित्ति कहां है और उदय की व्युच्छित्ति कहां है ? *श्रोता: आठवें में है।* आठवें में है। आठवें में छह नोकषायों की उदयव्युच्छित्ति हमने देखी थी। **हास्य, रति,** भय, जुगुप्सा के बंध की व्युच्छित्ति आठवें के अंत में देखी थी। **एकेन्द्रिय आदि चार जाति** ? *श्रोता: पहले में।* हां पहले में, बंध की और उदय की व्युच्छित्ति पहले में है।

पुरुषवेद के बंध और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: नौवें में।* हां नौवें में; पुरुषवेद का बंध नौवें तक है, उसका उदय भी नौवें तक पाया जाता है। स्त्रीवेद का उदय कहां हैं और बंधव्युच्छित्ति कहां है ? *श्रोता: बंधव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में।* बंधव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: सातवें में।* सातवें नहीं नौवें गुणस्थान में; नपुंसकवेद की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: पहले में।* पहले में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: नौवें में।* नौवें में। अभी १४८ में एक-एक प्रकृति का नाम लेकर एक-एक को पूछना चाहिये। ऐसा मैंने कारंजा में सिखाया था- बोर्ड पर १४८ प्रकृति लिखी थी और कहां किसकी बंधव्युच्छित्ति होती है, उदयव्युच्छित्ति होती है यह प्रकरण लिया था। कोई हैं क्या यहां पर कारंजावाले ? उसको भी बहुत साल हो गये। हां, आप हैं न ! याद है न ? उस क्लास में कंकुबाई महिलाश्रम स्कूल की बच्चियां भी बैठी थी। देखो, यह कौनसे

गुणस्थान में होती है वह विशेषार्थ में लिख दिया। मूल पुस्तक में नहीं था, परंतु समझाने के लिये वहां लिखा है।

अब बंधव्युच्छित्ति पहले होती है और फिर ऊपर के गुणस्थानों में जाकर उदय की व्युच्छित्ति होती है ऐसा तीसरा ग्रुप रह गया है। मेजॉरिटी प्रकृतियां हैं, ८१ प्रकृतियों के उदय की व्युच्छित्ति पश्चात् होती है, पहले बंध की व्युच्छित्ति होती है। पहले देख लेते हैं कौन-कौनसी हैं। ज्ञानावरण की पांच- बंधव्युच्छित्ति कहां होती है ? *श्रोता: दसवें में।* दसवें में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: बारहवें में।* बारहवें में। दर्शनावरण की नौ- उसमें स्त्यानगृद्धि आदि तीन की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में; उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: छठे में।* छठे में। निद्रा-प्रचला की बंधव्युच्छित्ति आठवें के पहले भाग में और उदयव्युच्छित्ति बारहवें के उपांत्य समय में। बाकी चार की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: दसवें में।* दसवें में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: बारहवें में।* बारहवें में। वेदनीय की दो में से सातावेदनीय की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौदहवें में।* चौदहवें में। असातावेदनीय की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: छठे में।* छठे में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौदहवें में।* चौदहवें में।

संज्वलन लोभ की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: नौवें में।* नौवें में, बंध नौवें तक है और उदयव्युच्छित्ति दसवें में। अभी हमने देखा, स्त्रीवेद की बंधव्युच्छित्ति दूसरे में होती है और उदयव्युच्छित्ति नौवें में। नपुंसकवेद की बंधव्युच्छित्ति पहले में और उदयव्युच्छित्ति नौवें में होती है। अरति और शोक की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: छठे में।* छठे में और उदय की व्युच्छित्ति आठवें में। नरकायु की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: पहले में।* पहले में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* हां चौथे में। तिर्यंचायु की बंधव्युच्छित्ति ? दूसरे तक बंधती है और उदय ? *श्रोता: पांचवें तक।* पांचवें तक है। मनुष्यायु की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में, और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौदहवें में।* चौदहवें तक उदय है। नरकगति की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: पहले में।* पहले में, उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में। तिर्यंचगति की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता दूसरे में।* दूसरे में, उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: पांचवें में।* पांचवें में। मनुष्यगति की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौदहवें में।* चौदहवें में। पंचेन्द्रियजाति की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में और उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौदहवें में।* चौदहवें में। औदारिकशरीर नामकर्म की बंधव्युच्छित्ति चौथे में और उदयव्युच्छित्ति ? तेरहवें में।

देखो बहुतों का कन्फ्यूजन है- औदारिकशरीर नामकर्म के उदय की बात है। औदारिकशरीर का होना उसका उदय नहीं कहलाता; उसके उदय में औदारिकशरीर के परमाणु ग्रहण होते हैं और वे शरीर के साथ जुड़ते हैं, यह उसका कार्य है। वह तो तेरहवें तक है और जो शरीर ऑलरेडि वहां बना पड़ा है वह शरीर चौदहवें तक रहेगा। परंतु औदारिकशरीर नामकर्म का उदय मिट गया है। यह हम उसके साथ कन्फ्यूजन कर रहे हैं। औदारिकशरीर का होना उसका उदय नहीं है, नये परमाणु को ग्रहण करना यह उसका कार्य है तो वह तेरहवें तक ही है।

देखो, पुस्तक में ४०१ पृष्ठ पर टेबल है उसमें करेक्शन करना है, ऊपर से बारहवीं लाइन गिनो। मनुष्यगति, मनुष्यायु, औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग, वज्रवृषभनाराचसंहनन के बंध की व्युच्छित्ति चौथे में सबके लिये है; परंतु उदय मनुष्यगति और मनुष्यायु के लिये चौदहवां है। औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग और वज्रवृषभनाराचसंहनन के लिये तेरहवां है। ऊपर और नीचे की लाइन में दो भेद करने थे। यहां छपने में कुछ उलटा-पुलटा हो गया है। मनुष्यगति और मनुष्यायु की बंधव्युच्छित्ति चौथे में और उदयव्युच्छित्ति चौदहवें में; परंतु अन्य औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग और वज्रवृषभनाराचसंहनन की बंधव्युच्छित्ति चौथे में होती है, उदय की व्युच्छित्ति तेरहवें में होती है। यह एक करेक्शन इसमें करना है। हां, उस दो को ऐसा राउंड करके उसके आगे तेरहवां लिख देना उदय की व्युच्छित्ति में।

अभी आगे बढ़ते हैं, छह संहनन में से देखना है हमको। छह संहनन के बंध की व्युच्छित्ति और उदय की व्युच्छित्ति हम एक-एक अलग-अलग देखेंगे। उलटे क्रम से देखेंगे, लास्टवाला संहनन कौनसा है ? *श्रोता: असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन।* असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: पहले में।* पहले में और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: सातवें में।* सातवें में। हमने देखा था न, नीचे के तीन संहनन सातवें तक हैं। अब कहते हैं बीचवाले चार संहनन हैं उनके बंध की व्युच्छित्ति दूसरे में होती है। उसमें से नीचे के जो दो हैं अर्धनाराच और कीलित, उनकी उदयव्युच्छित्ति सातवें में है। वज्रनाराच और नाराच की उदय की व्युच्छित्ति ग्यारहवें में है। अब पहला संहनन, वज्रवृषभनाराचसंहनन बंध की व्युच्छित्ति कहां देखी हमने ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में, और उदय की व्युच्छित्ति तेरहवें में। अभी हमने बात की थी उसकी।

हमने जैसे औदारिकशरीर की बात की थी वैसे औदारिकअंगोपांग के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। छह संस्थान में छठे नंबर का हुंडकसंस्थान है उसकी बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: पहले में।* पहले में और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। ये सारे संस्थान नामकर्म तेरहवें तक उदयरूप हैं। बीचवाले चार संस्थान दूसरे तक बंधते हैं, दूसरे में बंधव्युच्छित्ति है। अब छहों संस्थान की उदय की व्युच्छित्ति तेरहवें में कहना। पहला समचतुरस्रसंस्थान बंध कहां तक है ? उसकी बंधव्युच्छित्ति कहां होती है ? आठवें में होती है क्योंकि देवगति के साथ बंध रहा था; उदय की व्युच्छित्ति कहां होगी ? तेरहवें में। वर्णादि चार- वर्ण, गंध, रस, स्पर्श के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। नारकानुपूर्वी- जैसे हमने नरकगति देखी। *श्रोता: पहले में।* पहले में; उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* चौथे में। तिर्यंचानुपूर्वी के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में; उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: पांचवें में।* पांचवां नहीं चौथा, तिर्यंचगति पांचवें में है परंतु तिर्यंचगत्यानुपूर्वी चौथे में है क्योंकि विग्रहगति में इसका उदय होगा; विग्रहगति में किसीके पांचवां गुणस्थान नहीं पाया जाता है।

अगुरुलघु आदि चार यानी अगुरुलघु, उपघात, परघात और उच्छ्वास के बंध की व्युच्छित्ति आठवें में और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। उद्योत के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में और उदय की व्युच्छित्ति पांचवें में क्योंकि तिर्यंचों के ही यह होता है। प्रशस्त और अप्रशस्त विहायोगति, तो अप्रशस्त विहायोगति के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे गुणस्थान में।* दूसरे में। उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। प्रशस्त विहायोगति की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में। उदयव्युच्छित्ति ? तेरहवें में। त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में, बंधव्युच्छित्ति आठवें में और उनके उदय की व्युच्छित्ति ? चारों एक साथ नहीं हैं। त्रस, बादर और पर्याप्त का चौदहवें तक उदय है और प्रत्येकशरीर नामकर्म का उदय तेरहवें तक है। त्रस, बादर और पर्याप्त के उदय की व्युच्छित्ति चौदहवें में और प्रत्येकशरीर के उदय की व्युच्छित्ति तेरहवें में है। यहां आगे शायद लिखा होगा।

स्थिरद्विक यानी स्थिर और अस्थिर, स्थिर का बंध कहां तक है ? *श्रोता: आठवें तक।* आठवें तक; अस्थिर का ? *श्रोता: छठवें तक।* छठे तक; दोनों का उदय ? *श्रोता:*

तेरहवें तक। तेरहवें तक, यहां नहीं लिखा था इसलिये शुभ और अशुभ मैंने ब्रॅकेट में डाला है। अशुभ के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: छठे में।* छठे में; उदय की व्युच्छित्ति ? तेरहवें में। शुभ के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में; उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। सुभगद्विक यानी सुभग और दुर्भग, दुर्भग के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में; उदय की व्युच्छित्ति ? चौथे में। सुभग के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में; उदय की व्युच्छित्ति चौदहवें में। सुभग एक अकेला लिया था हमने चौदहवें में। सुस्वर-दुस्वर में से दुस्वर के बंध की व्युच्छित्ति ? दुस्वर की ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में; उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। सुस्वर के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें में; उदयव्युच्छित्ति तेरहवें में।

आदेय-अनादेय; अनादेय के बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* बंधव्युच्छित्ति ? दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति की चौथे गुणस्थान में उदय की व्युच्छित्ति है। बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में; उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौथे में।* हां, देखो यह दूसरे में बंधनेवाले दुर्भग और अनादेय का बंध दूसरे तक है और उदय चौथे तक है। *श्रोता: आदेय के बंध की व्युच्छित्ति कौनसे गुणस्थान में है ?* आदेय के बंध की व्युच्छित्ति आठवें में है और आदेय के उदय की व्युच्छित्ति चौदहवें में है। यशस्कीर्ति का बंध कहां तक है ? *श्रोता: दसवें तक।* हां, दसवें तक है और उदय ? *श्रोता: चौदहवें तक।* चौदहवें तक है। निर्माण का बंध ? *श्रोता: आठवें तक।* आठवें तक है और उदय ? *श्रोता: तेरहवें तक है।* तेरहवें तक है क्योंकि शरीर की रचना का कार्य तेरहवें तक ही चलेगा आगे नहीं चलेगा। तीर्थंकर के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: आठवें तक।* आठवें में है और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौदहवें में।* चौदहवें में। गोत्रद्विक में नीचगोत्र के बंध की व्युच्छित्ति ? दूसरे में और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: पांचवें में।* पांचवें में होती है। उच्चगोत्र के बंध की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: दसवें में।* हां, दसवां देखकर बता रहे हैं, हां और उदय की व्युच्छित्ति ? *श्रोता: चौदहवें में।* चौदहवें में।

यही टेबल में लिख दिया है पूरा का पूरा। यहां पढ़ने से क्या फायदा ? जब हम स्वयं सोचकर उसका उत्तर निकालेंगे तो वह ज्यादा अपने ख्याल में आयेगा; भले भूल हो जाये उसकी कोई बात नहीं है, परंतु सोचने की आदत पड़ जाती है। अब जिनको पता था उन्होंने फटाफट बोल दिया वह बात सही है। जब हम घर में स्वाध्याय करते हैं

तो जिसको नहीं आता है उसको पूछते हैं। जब तक वह सोचता है तब जिनको आता है उनको मौन रहता है। जब हम घर में स्वाध्याय करते हैं तब जिनको यह सब मालूम है उनको बीच में नहीं बोलना, ऐसी हमारी कंडिशन होती है। क्यों सुशीलाबहन ? हमारे आश्विनभाई हैं, दूसरे अरविंदभाई हैं - उनको बताते है आपको कुछ नहीं बोलना है तो उनको अंदर से रहा नहीं जाता। फिर बीच में कुछ तो बोल देते हैं। क्योंकि क्या है ? हम साथ में स्वाध्याय करते हैं तो अगर कोई तत्काल उत्तर दे देता है तो दूसरा सोचना बंद कर देता है। कोई फ़ास्ट सोचते हैं, कोई स्लोलि सोचते हैं। हम सामूहिक स्वाध्याय करते हैं तो सबको एक साथ आगे बढ़ना है। हम आपको बताना चाहते हैं कहां कौनसी व्युच्छित्ति है इसलिये किसीने उत्तर दिया तो हमने उसको कुछ बोला नहीं है क्योंकि हम आगे का भी विषय आपको बताना चाहते हैं। इस पुस्तक में और भी विषय हैं; दस करण हैं, कर्मों की जो दस अवस्थायें हैं वे अलग-अलग कर्मों पर घटित करके बतायी हैं। वह बहुत इंटरेस्टिंग विषय है, अगर समय मिला तो हम बाद में इस विषय को कव्हर करेंगे।

अभी हम आगे के विषय पर बढ़ते हैं जिसका नाम है बंध के स्थान। पहले भी हमने बंध को देखा था- बंध, अबंध, व्युच्छित्ति वगैरह। अब यहां नया नाम आ गया है बंध के स्थान। स्थान शब्द बहुत जगह आता है न, गुणस्थान, मार्गणास्थान, उदयस्थान, बंधस्थान, सत्त्वस्थान ये सब स्थान-स्थान क्या होते हैं ? हमने तो हिंदुस्तान, पाकिस्तान इतना ही देखा है। तो स्थान यानी यहां व्हेरिएशन्स। अभी बंध के व्हेरिएशन्स का अर्थ क्या है ? बंध हमने देखा न, बंधयोग्य प्रकृतियां कितनी हैं ? हमने १२० देखी थी। मिथ्यात्व में कितनी बंधती हैं किसीको ? यानी अलग-अलग जीवों को ? हमने देखा था तीर्थंकर, आहारकद्विक नहीं बंधती, ११७ का बंध मिथ्यात्व अवस्था में हो सकता है। परंतु यहां स्थानों की चर्चा है। वहां अनेक जीव यानी नाना जीवों की अपेक्षा बात थी, अब यहां एक जीव एक काल में कितनी प्रकृतियों का बंध कर सकता है उसको यहां बंध के स्थान कहेंगे और वह हम अलग-अलग प्रकृतियों में अलग-अलग घटित करेंगे।

हर एक गुणस्थान में बंध के कितने स्थान हो सकते हैं उसकी भी चर्चा करेंगे। अलग-अलग मूलप्रकृतियां हैं उनमें बंध के कौन-कौनसे स्थान होते हैं ? यहां बंध के स्थान का अर्थ ऐसा है- एक समय में यानी किसी एक काल में एक जीव कितनी प्रकृतियों का बंध करता है उनकी संख्या को बंधस्थान कहेंगे। क्या कहा ? एक जीव

एक काल में जितनी प्रकृतियों का, अभी यहां बंध की बात चल रही है; जितनी प्रकृतियों का बंध करता है उसको कहेंगे बंध का स्थान। अभी हम ज्ञानावरण की बात करते हैं। बंधस्थान पहले कर्मों पर घटित किया है- मूलकर्मों पर हम यहां देख रहे हैं। ज्ञानावरण जो कर्म है उसमें पांच प्रकृतियों का बंधस्थान एक ही है। यहां लिखा न ! ५ प्रकृतियों का एक बंधस्थान है। किसकी बात चल रही है ? *श्रोता: ज्ञानावरण की।* ज्ञानावरण की यानी जो जीव ज्ञानावरण का बंध करता है। कौनसा जीव करता है ? अनादि से वह ध्रुवबंधी है न ! तो अनादि से बंध हो रहा है। कब तक चलेगा ? दसवें गुणस्थान तक बंध चलेगा। हर समय कितनी प्रकृतियों का बंध करेगा ? कभी चार का, कभी पांच का, कभी सात का- ऐसा करेगा क्या ? नहीं, हर समय पांचों ही ज्ञानावरण का बंध हो रहा है। अनादि से हर समय; पहले से लेकर दसवें तक प्रत्येक गुणस्थान में पांचों ही ज्ञानावरण प्रकृतियों का बंध हो रहा है, तो ज्ञानावरण में बंध का स्थान एक ही है- ५ प्रकृतियों का एक बंधस्थान। उसे ५ प्रकृतिक कहेंगे यानी ५ प्रकृतिवाला एक ही स्थान है। ख्याल में आती है यह बात ? उसके पांचों ही प्रकृतियों का बंध लगातार होता है तो उसमें बंधस्थान के भेद नहीं है, व्हेरिएशन्स नहीं हैं, बस एक ही स्थान है।

अब दर्शनावरण का देखते हैं। दर्शनावरण की प्रकृतियां कितनी हैं ? *श्रोता: नौ हैं।* नौ हैं। वहां अभी उन नौ में से बंधव्युच्छित्ति तो हमने याद की थी। पहले में पहले उनमें से बंध की व्युच्छित्ति होनेवाले कौनसी प्रकृतियां थी ? *श्रोता: स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला।* स्त्यानगृद्धि आदि तीन की कहां पर बंधव्युच्छित्ति होती है ? *श्रोता: दूसरे में।* दूसरे में। इसका अर्थ है पहले में भी दर्शनावरण की नौ प्रकृतियां बंधती हैं, दूसरे गुणस्थान में भी नौ प्रकृतियां बंधती हैं तो ९ प्रकृतियों का एक बंधस्थान हुआ। अब जो तीसरे गुणस्थान से ऊपर के गुणस्थानों में हैं वे स्त्यानगृद्धि आदि तीन का बंध नहीं कर रहे हैं, तो हर समय दर्शनावरण की कितनी प्रकृतियों का बंध कर रहे हैं ? *श्रोता: छह का।* छह का बंध कर रहे हैं। छह का बंध कब तक करेंगे ? आठवें गुणस्थान के पहले भाग तक जहां जाकर निद्रा और प्रचला के बंध की व्युच्छित्ति होगी; उसके बाद चार का बंध करेंगे। पहले दो गुणस्थानों में ९ का बंध कर रहे थे। तीसरे गुणस्थान से लेकर आठवें के पहले भाग तक छह का बंध कर रहे थे और आठवें गुणस्थान के दूसरे भाग से लेकर ऊपर कहां तक ? *श्रोता: दसवें गुणस्थान तक।* दसवें

गुणस्थान तक; बारहवें में तो उदय है; दसवें गुणस्थान तक ४ का बंध हो रहा है। यहां क्या लिखा है ? देखो, दर्शनावरण का ९ का एक स्थान है, ६ का एक स्थान है और ४ प्रकृतिवाला एक स्थान- ऐसे ये अलग-अलग तीन बंधस्थान हैं। यानी दर्शनावरण के बंध के स्थान कितने हैं ? तो कहते हैं तीन हैं- ९वाला, ६वाला और ४वाला। ९वाला स्थान कहां है ? पहले और दूसरे गुणस्थान में क्योंकि ये कैसी प्रकृतियां हैं ? ध्रुवबंधी हैं; अनादि से ही बंधती आयी हैं, अपनी व्युच्छित्ति तक बंधेगी।

किसीका प्रश्न था यह ध्रुवबंधी और निरंतरबंधी में क्या अंतर है ? ध्रुवबंधी तो वे हैं कि जो अनादि से बंधती चली आ रही हैं और अपनी बंधव्युच्छित्ति तक निरंतर बंधती हैं उनको कहेंगे ध्रुवबंधी। ध्रुवबंधी को भी निरंतरबंधी कह सकते हैं परंतु अन्य जो निरंतरबंधी प्रकृतियां हैं- हो सकता है अनादि से नहीं बंधती थी, एक बार बंधना शुरू हुआ है तो लगातार उनका बंध अपने बंधयोग्य काल में होता रहता है। बंधयोग्य काल क्यों कहा ? जैसे तीर्थंकर प्रकृति का बंध एक बार शुरू हुआ तो लगातार बंधता रहेगा। अकेले वह जीव जिसने नरकायु बांधकर बाद में सम्यक्त्व प्राप्त किया था वह अंतर्मुहूर्त के लिये मिथ्यात्व में जायेगा, उस काल में उसका बंध रुकेगा। अन्यथा जिसने देवायु का बंध किया या जिसने आयु का बंध नहीं किया, उसी भव से मोक्ष जायेगा ऐसे जीव के उसका बंध आठवें गुणस्थान तक हर समय चलता है। उसको निरंतरबंधी कहेंगे। आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग का बंध भी मिनिमम अंतर्मुहूर्त तक होगा ही होगा, सातवें और आठवें गुणस्थान में होता है। वह लगातार हर समय होता है तो उसको भी निरंतरबंधी कहेंगे। आयु का बंध वह भी अंतर्मुहूर्त तक ही होता है लेकिन उस अंतर्मुहूर्त में लगातार उसी आयु का बंध होता रहता है इसलिये उसको भी हम निरंतरबंधी कहेंगे।

उन प्रकृतियों को हमने अप्रतिपक्ष में गिना था। आप अप्रतिपक्षवाला चार्ट निकालो, पहला ही था न ! यहां अप्रतिपक्ष में ग्यारह लिखे थे और उसमें सात और चार ऐसा अलग-अलग लिखा था। यह सात और चार अलग क्यों लिखा ? तीर्थंकर, आहारकद्विक और चार आयु ये सात जो प्रकृतियां हैं; कौनसी ? एक तीर्थंकर, आहारकद्विक और चार आयु - सात हुयी न ? ये सात हैं वे निरंतरबंधी हैं। ॲट लिस्ट अंतर्मुहूर्त तक तो बंधेगी ही बंधेगी। आगे की जो चार हैं, कौनसी चार हैं ? परघात, उच्छ्वास, आतप और उद्योत वे बंधेगी तो बंधेगी, नहीं बंधेगी तो नहीं बंधेगी और एक

समय के लिये भी बंध सकती हैं फिर उनका बंध रुक भी सकता है। इसलिये वहां वे सात और चार अलग-अलग किये हैं, उनमें से ये जो सात हैं ये निरंतरबंधी कहलाती हैं और ये जो चार हैं वे अप्रतिपक्षवाली हैं, जो अध्रुव का ही भेद है। अध्रुव होते हुये भी इन सात को निरंतरबंधी इसलिये कहते हैं कि एक बार बंधना शुरू हो जाये तो लगातार उनका बंध अपने बंधयोग्य काल में होता रहता है। आयु का बंधयोग्य काल अंतर्मुहूर्त है तो लगातार उस काल में उसका बंध होता है। आहारक का बंध सातवें-आठवें में है उसमें जब तक है तब तक वह लगातार बंध हो रहा है। इसके लिये उसको निरंतरबंधी कहा है। ध्रुवबंधी उसीको कहा जो अनादि से बंधती आ रही है, अपने बंधव्युच्छित्ति के काल तक सदैव बंधती रहेगी। जो ध्रुवबंधी है वह तो निरंतरबंधी है ही है। परंतु जो अन्य हैं उनको भी निरंतरबंधी कहते हैं परंतु उनको ध्रुवबंधी नहीं कह सकते।

यहां हमने ज्ञानावरण का ५ प्रकृतियों का एक बंधस्थान देखा। दर्शनावरण के ९ का एक, ६ का एक और ४ का एक, ऐसे तीन बंधस्थान देखे। अभी और एक-एकवाली कौनसी प्रकृतियां हैं उनको हम देखेंगे। बाकी जो अधिकवाले उनकी चर्चा शाम को करेंगे हम। अंतराय का ५ प्रकृतियों का एक स्थान है, अंतरायकर्म भी ध्रुवबंधी है। अनादि से बंधती हैं, पांचों ही प्रकृतियां बंधती हैं। कहां तक बंधेगी ? *श्रोता: दसवें तक बंधेगी।* दसवें तक बंधेगी। वेदनीय का १ का एक स्थान है परंतु इसमें विशेषता क्या है ? पहले से छठे तक या तो सातावेदनीय बंधेगी या असातावेदनीय बंधेगी, एक ही, दो में से एक बंधेगी और सातवें से ऊपर अकेली साता ही बंधेगी। आयु का १ का ही एक स्थान है। आयु बंधती है, उसमें कोई अभी कुछ काल के लिये यह बंधी बाद में दूसरी बंधी ऐसा नहीं है। तो एक ही आयु बंधती है उसका एक स्थान है। गोत्र भी पहले और दूसरे गुणस्थान में दो में से एक बंधेगा और ऊपर जो बंध होगा तो एक मात्र उच्चगोत्र का ही होगा। तो बंधेगा तो एक ही बंधेगा। इसतरह से एक-एक के स्थान देखे। मोहनीय के और नाम के कुछ अलग एक्स्ट्रॉ स्थान हैं उनकी चर्चा हम शाम को करेंगे। अभी यहां रुकते हैं हम।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४१. आठ कर्मों के बंधस्थान

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड की रचना की है और पं. टोडरमलजी ने इसके ऊपर ढूंढ़ारी भाषा में भाषाटीका लिखी है, उसका नाम है सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड। उसका हिन्दी अनुवाद हम देख रहे हैं। अभी तक हमने बंध, उदय और सत्त्व के बारे में कुछ जानकारी हासिल की है। वहां नाना जीवों की अपेक्षा कितनी प्रकृतियों का कौनसे गुणस्थानों में कैसे-कैसे बंध, उदय और सत्त्व होता है उसकी चर्चा की और एक गतिमार्गणा में भी उसको लगाकर देखा।

अब हम स्थानों की चर्चा करने जा रहे हैं। इस अधिकार का नाम भी **स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार** है। पहली पुस्तक में जो पहला अधिकार था जहां प्रकृतियों का वर्णन था, उसका नाम था **प्रकृति समुत्कीर्तन।** समुत्कीर्तन का अर्थ होता है, कह देना बस कि कौन-कौनसी प्रकृतियां हैं, फिर उनके नाम घाति, अघाति भेद वगैरह-वगैरह उस पहले अधिकार में देखे थे और दूसरे अधिकार में बंध, उदय और सत्ता का निरूपण हमने देखा, **बंधोदयसत्ता** ऐसा उस अधिकार का नाम है।

अब यहां स्थानों की बात चलेगी। दूसरे भाग का पृष्ठ ४२७, नीचे लास्ट लाइन में लिखते हैं, स्थान किसे कहते हैं ? **तो एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियां पायी जाती हैं, उनके समूह का नाम स्थान है।** जब बंध के स्थानों की बात होगी तो एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियां बंधती हैं उसका नाम होगा **बंधस्थान**। अलग-अलग जीवों के अलग-अलग स्थान होंगे। एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियों का उदय पाया जाता है, उनको हम कहेंगे **उदयस्थान** और एक जीव के एक काल में जितना-जितना सत्त्व पाया जायेगा, अलग-अलग जीवों के अलग-अलग पाये जायेंगे, उनके जो व्हेरिएशन्स हैं उनको कहेंगे **सत्त्वस्थान**। यह विषय आपको पहले से और इंटरेस्टिंग और आसान लगेगा। कभी-कभी क्या होता है, हमारे यहां स्वाध्याय रोज चलता है वहां किसी दिन कोई बहुत कठिन विषय आता है, तो दूसरे दिन वह बहुत सरल लगता है, क्योंकि दूसरे दिन पहले दिन से भी ज्यादा कठिन विषय आ जाता है। तो लगता है कि नहीं-नहीं, पहले दिन की बात अच्छी थी।

हम अलग-अलग कर्मों में विभाजित करके उनके बंधस्थान देखेंगे। पहले मूलप्रकृतियों को देखकर फिर उत्तरप्रकृतियों की बात करेंगे। देखो, ४२८ पृष्ठ पर

लिखा है, सेकंड लाइन- **प्रथम मूलप्रकृतियों के बंध, उदय, उदीरणा और सत्त्व के भेद सहित उनका जो स्थानसमुत्कीर्तन है,** स्थानों की चर्चा गुणस्थानों में बतायी है। इसका अर्थ क्या है ? यह बताना चाहते हैं कि पहले गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों का उदय पाया जाता है। उत्तरप्रकृतियां १४८ हैं कि १२२ हैं कि १२० हैं ? उसकी बात छोड़ दो। अभी मूलप्रकृति जो आठ प्रकृतियां हैं, उनका विषय आसान है न !

मेरा प्रश्न है- पहले गुणस्थान में आठ प्रकृतियों में से कितनी प्रकृतियों का उदय है ? *श्रोता: आठ का।* आठों का उदय है कि नहीं ? और बंध कितने का है ? आठ का या सात का है ? कभी-कभी आयु का बंध होगा तो आठ का बंध होगा और जिस समय आयु नहीं बंध रही है तब सात का बंध होगा। यह कितना आसान है ! ये सात या आठ का बंध कौन-कौनसे गुणस्थान में होता है ? पहले में होता है, दूसरे में होता है, तीसरे में सात का ही बंध होता है, आयु का बंध नहीं होता। चौथे में सात या आठ का, पांचवें में सात या आठ का, छठे में सात का या आठ का, सातवें में सात या आठ का। आठवें में सिर्फ सात का। क्यों ? आयु के बंध की व्युच्छित्ति सातवें में हो जाती है। अभी ऊपर के गुणस्थानों में कोई आयु नहीं बंधेगी। आठवें गुणस्थान में मात्र सात प्रकृतियों का बंध होगा। नौवें में मोहनीय बंधती है कि नहीं बंधती है ? बंधती है तो ७ का बंध होगा। दसवें में मोह का बंध रुक गया है। *श्रोता: छह।* छह का होगा। ना आयु बंधती है ना मोह बंधता है परंतु अन्य सभी छह प्रकृतियां बंध रही हैं, तो छह का बंध हो रहा है। कहां-कहां ? दसवें में छह का है, ग्यारहवें में एक सातावेदनीय बंधती है यानी वेदनीय की - मूलप्रकृति की बात कर रहे हैं, अकेले वेदनीय बंधती है। ग्यारहवें में, बारहवें में और तेरहवें में एक ही प्रकृति बंधती है। यह बंध की बात थी।

ऐसे ही उदय में हम सोच सकते हैं, हमको मूलप्रकृतियों को सोचना है। आठ मूलप्रकृतियों का उदय चलता है तो वह कहां तक चलेगा ? *श्रोता: नौवें तक।* दसवें में क्या होगा ? मोहनीय है न ! उदय है, सूक्ष्मलोभ है, तो दसवें तक उदय रहेगा। ग्यारहवें में कौनसा उदय नहीं रहेगा ? *श्रोता: मोहनीय का।* ग्यारहवें में मोहनीय का उदय नहीं रहेगा क्योंकि उपशांत है न; मोहनीय उपशांत हो गया। बारहवें में ? मोहनीय का उदय रुक गया है, परंतु अन्य तीन घातिकर्म और चार अघातिकर्मों का उदय है। तेरहवें गुणस्थान में मूलप्रकृतियों में कितने का उदय है ? चार अघाति का है। अयोगी के ?

चार ही का है, बराबर है न कि उसमें कोई संदेह है ? कितना आसान है !

अभी ऐसे ही सत्ता की बात करेंगे। भले ही बंध हो या ना हो, उदय हो या कुछ भी हो, तीसरे गुणस्थान में सत्ता आठों कर्मों की पायी जायेगी, क्योंकि उनके एक भुज्यमान आयु तो है न और बंधी हुयी ऑलरेडि सत्ता में पड़ी हुयी होगी। आठों ही कर्मों की विद्यमानता-सत्ता कौनसे गुणस्थान तक होगी ? मूलप्रकृतियों की बात है। *श्रोता: दसवें तक।* ग्यारहवें में नहीं है ? उपशांत है परंतु है न ? उपशांत हो या उदय हो, ग्यारहवें गुणस्थान तक सभी कर्मों की सत्ता है। बारहवें गुणस्थान में कितने कर्मों की सत्ता है ? मोहनीय को छोड़कर सात की है। तेरहवें में ? *श्रोता: छह।* कौनसी ? आयु की सत्ता चौदहवें गुणस्थान तक है। बंध की बात नहीं हो रही, यहां सत्ता की बात चल रही है। बारहवें गुणस्थानवाले को मोहनीय की सत्ता नहीं है, तीन घातिकर्म हैं और चार अघातिकर्म हैं। तेरहवेंवाले को चार ही अघातिकर्म बाकी हैं, चौदहवेंवाले को भी उतनी ही है सत्ता। यह मूलप्रकृतियों में हमने बंध, उदय और सत्ता घटित की।

हमने उदीरणा भी देखी थी, कहां कौनसी उदीरणा होती है, उसकी बात की है। जिसका उदय है उसकी उदीरणा होती है। हमने देखा था असातावेदनीय की छठे गुणस्थान के आगे उदीरणा रुक जाती है; हमने चर्चा की थी जब उसकी व्युच्छित्ति की बात आयी थी। मूलप्रकृतियों की अपेक्षा देखेंगे तो वेदनीय की उदीरणा छठे तक है, आगे नहीं है। आयु की भी उदीरणा छठे तक है, आगे नहीं है। अब हम उत्तरप्रकृतियों पर बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान अलग-अलग करके देखेंगे। हमने पहले सभी इकट्ठा देखा- नाना जीवों की अपेक्षा बंध, उदय और सत्त्व कितना होता है उसकी बात की थी। अब एक जीव के एक काल में कितना हो सकता है उसकी बात करेंगे।

हमने बंधस्थान के चार्ट में देखा था, ज्ञानावरण कर्म की ५ प्रकृतियों का एक बंधस्थान होता है। ज्ञानावरण के ५ का बंध कौनसे गुणस्थानवाला करता है ? पहले कि दूसरे कि तीसरे कि दसवें गुणस्थानवाला ? हां, पहले से लेकर दसवें तक सभी। उसमें ऐसा कोई अन्य जीव नहीं, जो तीन का ही बंध करता है, चार का ही बंध करता है। ५ का एक ही बंधस्थान है। दर्शनावरण में हमने कौन-कौनसे स्थान देखे थे ? पहले और दूसरे गुणस्थानवाला ९ प्रकृतियों का बंध करता है। तीसरे से लेकर आठवें के पहले भाग तक ६ प्रकृतियों का बंध होता है। उसके आगे दसवें तक ४ प्रकृतियों का बंध

होता है। दर्शनावरण के बंध के ये तीन स्थान हुये- ९ प्रकृतिवाला, ६ प्रकृतिवाला और ४ प्रकृतिवाला। अंतराय का ५ का एक देखा था, पहले से लेकर दसवें गुणस्थान तक पांचों ही अंतराय का बंध होता है; तो ५ का एक ही स्थान देखा था। हमने उसके बाद एक-एक प्रकृतिवाले स्थान देखे थे। एक-एक प्रकृतिवाले स्थान कौन-कौनसे थे ?

वेदनीय में भी ॲट ए टाइम एक ही का बंध होता है। पहले गुणस्थान से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक एक ही वेदनीय बंधती है, परंतु उसमें यह बात है - पहले से छठे गुणस्थान तक दोनों में से एक बंधती है; किसीके साता बंधती है किसीके असाता बंधती है और सातवें गुणस्थान से आगे मात्र साता ही, एक ही बंधती है; बंधेगी तो एक ही। स्थान कौनसा है ? १ प्रकृति का ही है। परंतु छठे गुणस्थान तक उसमें दो भेद हो सकते हैं उसको भंग कहते है। भंग का अर्थ क्या है ? स्थान की संख्या कितनी है ? १ प्रकृति ही बंधती है परंतु किसीके साता बंधती है, किसीके असाता बंधती है, इसको भंग कहेंगे। दो भंग होते हैं - उसमें जो व्हेरिएशन होगा; संख्या एक ही रहेगी, स्थान १ ही का कहलायेगा परंतु प्रकृति बदलने से भंग होते हैं। स्थान की परिभाषा क्या देखी ? एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियों का बंध होता है उसको हम बंध का स्थान कहेंगे और प्रकृति बदलने से जो कुछ वहां पॉसिबिलिटिज् होंगी वह स्थान की संख्या उतनी ही रहेगी, परंतु अगर वहां प्रकृति चेंज करेंगे तो उसके भंग होंगे। हमने वेदनीय का १ का एक स्थान देखा। आयु कर्म का ? जहां बंधती है १ ही आयु बंधती है और उसका भी एक ही स्थान होता है। हमने गोत्र का भी १ का ही स्थान देखा था। पहले और दूसरे गुणस्थान में नीच या उच्च कोई एक बंधेगा और ऊपर के गुणस्थानों में कहां तक? दसवें तक एक उच्चगोत्र का ही बंध होगा तो हम कहेंगे १ प्रकृति का स्थान है।

हमने दो कर्म छोड़े थे। कौन-कौनसे याद हैं ? मोहनीय और नामकर्म। मोहनीयकर्म के बंधस्थान हैं वे गुणस्थानों के अनुसार हैं यानी बहुत आसान हैं। पहले गुणस्थानवाले मोहनीय की कितनी प्रकृतियों का बंध करते हैं ? हमने पहले ध्रुवबंधी प्रकृतियां देखी थी याद है ? मोहनीय में से ध्रुवबंधी कौनसी हैं किसको याद है ? *श्रोता: भय-जुगुप्सा। अन्य श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व। *श्रोता: सोलह कषाय।* सोलह कषाय और भय-जुगुप्सा। मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय-जुगुप्सा ये ध्रुवबंधी हैं यानी अनादि से इनका बंध होता ही है अपनी व्युच्छित्ति तक। मिथ्यात्व में १९ का बंध होगा ही होगा।

बाकी ऑप्शनल थी जिनको हमने सप्रतिपक्षी कहा था, तीन वेदों में से एक वेद का बंध होगा। दो युगल हैं- हास्य-रति या शोक-अरति, उनमें से एक बंधेगी। क्या कहा ? देखो, नोकषाय कितने हैं ? *श्रोता: नौ।* नौ, उनमें से भय और जुगुप्सा को हमने ध्रुवबंधी में ले लिया। कितने बचे ? *श्रोता: सात।* सात। सात में से कितनी बंधेगी ? तीन क्योंकि एक युगल, युगल यानी हास्य-रति या शोक-अरति और एक वेद। यानी १९ ध्रुवबंधी और ये तीन प्रकृतियां बंधती हैं, तो मिथ्यात्व गुणस्थान में २२ प्रकृतियों का बंध होगा।

कर्म	**बंधस्थान**	**संख्या**
ज्ञानावरण	५ का	एक
दर्शनावरण	९, ६, ४ के	तीन
मोहनीय	२२, २१, १७, १३, ९, ५, ४, ३, २, १ के	दस
अंतराय	५ का	एक
वेदनीय	१ का	एक
आयु	१ का	एक
नाम	२३, २५, २६, २८, २९, ३०, ३१, १ के	आठ
गोत्र	१ का	एक

यहां लिखा है पहले हम देखेंगे मोहनीय के बंधस्थान कौन-कौनसे हैं। मोहनीय यानी दर्शनमोहनीय, चारित्रमोहनीय मिलकर यह स्थान कितने का है ? मोहनीय की टोटल २८ प्रकृतियां हैं उनमें से बंध कितने का होगा ? किसी एक जीव को बंधयोग्य प्रकृतियां कितनी हैं ? २८ प्रकृतियों में से बंधयोग्य प्रकृतियां कितनी हैं ? २६ हैं। उनमें से एक जीव को कितने का बंध होता है हम देखेंगे। सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व बंधती नहीं हैं, अन्य तो बंधती हैं परंतु एक साथ तो सबकी सब नहीं बंधती। २६ की २६ एकसाथ एक जीव को नहीं बंधेगी, नाना जीवों को बंधेगी। हम यहां एक जीव के एक काल में बंधनेवाले की बात कर रहे हैं। यहां २२ का बंध होगा जिसको कहेंगे २२वाला एक स्थान हुआ। मोहनीय का एक बंधस्थान है २२ प्रकृतियों का। दुसरे गुणस्थान में मिथ्यात्व का बंध नहीं है परंतु अनंतानुबंधी वगैरह बाकी सब हैं तो वहां कहेंगे २१ का स्थान है- यह मोहनीय का दूसरा स्थान है। तीसरे और चौथे गुणस्थानवाले १७ प्रकृतियों का बंध करेंगे; तीसरे, चौथे गुणस्थानवाले अनंतानुबंधी को नहीं बांधेंगे। पांचवें

गुणस्थानवाले के १३ प्रकृतियों का बंधस्थान है क्योंकि पांचवेंवाले अप्रत्याख्यानावरण को भी नहीं बांधेंगे। उसके बाद ९ प्रकृतियों का बंधस्थान है - प्रत्याख्यानावरण भी चला गया। उसके आगे ५ प्रकृतियों का बंधस्थान है, नौ में से चार कौनसी चली गयी ? *श्रोता: संज्वलन।* संज्वलन को यहां निकालेंगे तो आगे क्या रहेगा ? हास्य-रति, भय-जुगुप्सा जायेगी तो पांच रह जायेगी - एक पुरुषवेद और चार संज्वलन रह जायेंगे। फिर पुरुषवेद चला जायेगा तो ४ संज्वलन, फिर ३ संज्वलन, २ संज्वलन, १ संज्वलन रह जायेगा। ये मोहनीय के बंधस्थान, उनकी चर्चा करेंगे हम।

हमने केवल संख्या देखी है, वे कौनसी हैं और कैसे उनको काउंट करना, उसको हम सीखेंगे। उनमें से कौन-कौनसी प्रकृति कहां बंधने से रुकती है ? एक जीव की अपेक्षा बात चल रही है न अपनी ! हमने मोहनीय के टोटल कितने बंधस्थान देखे ? *श्रोता: दस।* दस; २२वाला, २१वाला, १७वाला, १३वाला, ९वाला, फिर ५वाला, ४वाला, ३वाला, २वाला, १वाला तो मोहनीय के बंधस्थान कितने हुये ? १० बंधस्थान हुये। हम कहेंगे, आप रिपीट करना। २२, २१, १७, १३, ९। *श्रोता: २२, २१, १७, १३, ९।* फिर ५, ४, ३, २, १। *श्रोता: ५, ४, ३, २, १।* हर एक के आगे इतने प्रकृतिक या प्रकृतिवाला बंधस्थान कहेंगे। हमने याद करने के लिये एकसाथ बोल दिया परंतु २२ प्रकृतिक स्थान, २१ प्रकृतिक स्थान, १७ प्रकृतिक स्थान इसतरह से हमें समझना है। मोहनीय के स्थान समझना आसान है क्योंकि वे गुणस्थानों में फिक्स हैं। कौनसे गुणस्थान में मोहनीय की कितनी प्रकृतियां बंधती हैं उनके अनुसार उनका उदय और बंध भी निश्चित होते हैं।

अभी हम नामकर्म के बंधस्थान की बात करेंगे। वे कौनसे हैं, कैसे हैं उनकी चर्चा बाद में करेंगे। नामकर्म के बंध के स्थान यानी नामकर्म की ॲट ए टाइम एक जीव को युगपत् एक समय में कितनी प्रकृतियां बंध सकती हैं, उनके जो व्हेरिएशन्स हैं उनको यहां स्थानों के रूप में लिखे। नामकर्म के जो बंधस्थान हैं वे २३ प्रकृतिवाला है, २५ प्रकृतिवाला है, २६ प्रकृतिवाला है, २८वाला है, २९वाला, ३०वाला, ३१वाला और १वाला। टोटल कितने हैं ? *श्रोता: आठ स्थान।* आठ स्थान, मेरी भाषा में ये उनके पॅकेज होते हैं। पॅकेज क्यों ? देवगति बांधनेवाला जीव या नरकगति बांधनेवाला यह २८वाला बांधेगा। लब्धिअपर्याप्त, एकेन्द्रिय को बांधनेवाला यह २३वाला बांधेगा।

अभी एकेन्द्रिय संबंधी बंध करनेवाला मिथ्यात्व गुणस्थानवाला ही होगा कि नहीं

होगा ? मिथ्यादृष्टि कौन-कौनसे बंध कर सकता है उसकी बात यहां बतायेंगे। केवल टोटल बंधस्थान कौनसे हैं वे देखेंगे। हम गुणस्थानों की बात करेंगे तो मिथ्यादृष्टि के इसमें से कौनसा स्थान होगा ? ज्ञानावरण का एक ही है; उसमें कोई व्हेरिएशन नहीं। मिथ्यादृष्टि को दर्शनावरण का कौनसा स्थान होगा ? ९वाला होगा कि ६वाला कि ४वाला ? ९वाला होगा। मोहनीय का कौनसा बंधस्थान होगा ? २२वाला। अंतराय का ? ५वाला। वेदनीय का ? १वाला। आयु का ? १वाला। गोत्र का ? १वाला। मिथ्यादृष्टि जीव कौन-कौनसे बंध कर सकता है हमको मालूम नहीं है, ये बंधस्थानों में प्रकृतियों की संख्या हमने देखी है, उसमें क्या-क्या है हमें क्या मालूम ? मिथ्यादृष्टि नामकर्म की २३, २५, २६, २८, २९ या ३० प्रकृतियों का बंध करेगा।

देखो, पेज २२० पर एक टेबल-कोष्टक बना है जिसको यंत्र कहते हैं। यह कैसे पढ़ना है ? यह यंत्र हम नीचे से ऊपर पढ़ेंगे। उसको आड़ा पकड़ना है पढ़ने के लिये। नीचे का कॉलम हम पहले पढ़ेंगे। पहले कॉलम में लिखे हैं गुणस्थान; मिथ्यात्व का नाम नीचे है और अयोगी का ऊपर है यानी पहले गुणस्थान से ऊपर तक के गुणस्थान वहां लिखे हैं। उसके आगे ज्ञानावरण कर्म की बात है। ज्ञानावरण ५ का एक स्थान है, पहले से लेकर दसवें तक सर्वत्र पांच-पांच-पांच-पांच लिखे हैं। इसका अर्थ है ५ प्रकृतियों का बंध सर्वत्र हो रहा है; ५ का एक स्थान सर्वत्र है। उसके बाद दर्शनावरण, नीचे मि. और सा. यानी पहले और दूसरे गुणस्थान में ९ और ९ लिखा है। ऊपर ६-६-६-६ लिखे हैं, कहां तक ? अपूर्वकरण तक। अपूर्वकरण में ६ | ४ लिखा है क्योंकि पहले भाग में ६ का बंध है, दूसरे भाग से ४ का। उसके ऊपर नौवें और दसवें में ४-४ लिखे हैं। वेदनीय का १-१-१-१ सर्वत्र कहां तक ? तेरहवें तक।

मोहनीय का देखना। अब मोहनीय की टोटल बंधयोग्य प्रकृतियां कितनी हैं ? २६। परंतु एक जीव को एक काल में कहां कितनी बंधेगी ? पहले गुणस्थान में २२, दूसरे में २१, तीसरे-चौथे में १७, पांचवें में १३; छठे, सातवें और आठवें में ९ यानी हर एक में ९-९, नौवें गुणस्थान में वहां आते ही ५ फिर ४, ३, २, १ और ऊपर मोहनीय का बंध नहीं है, नौवें गुणस्थान तक ही है। उसके आगे आयु का बंध पहले में है, दूसरे में है, तीसरे में झिरो लिखा; चौथे, पांचवें, छठे, सातवें तक एक-एक लिखा; ऊपर कहीं भी आयु का बंध नहीं है। नामकर्म का बंध - यह बाद में देखेंगे। पहले गोत्र को देख लो, पहले से लेकर दसवें गुणस्थान तक एक-एक लिखा है, पहले और दूसरे में उच्च या

नीच में से एक बंधेगा परंतु बंधस्थान १ का है। अंतराय में पहले से लेकर सूक्ष्मसाम्पराय तक - दसवें तक ५-५ लिखे हैं। अब हम नामकर्म पर आते हैं।

श्रोता: यहां मोहनीय कर्म के दस स्थान लिखे हैं। यहां १७ लिखे हैं। २२, २१, १७, १३, ९ कितने हुये ? पांच और फिर ५, ४, ३, २, १; पांच और पांच कितने हुये ? दस हुये। यहां कुछ अलग लिखा है क्या ? मोहनीय में चार्ट में कितने लिखे ? मोहनीय के दस ही स्थान लिखे हैं न ! *श्रोता: यहां और यहां फर्क है।* क्या फर्क है ? पुस्तक में सबसे नीचे का कॉलम देखना मोहनीय में, २२, २१, १७, १३, ९, ५, ४, ३, २, १। *श्रोता: दो बार १७ लिखा है।* १७-१७ होते हुये स्थान तो एक ही है न ! २ बार १७ लिखा है या तीन बार ९ लिखा तो स्थान नहीं बदले है; स्थान तो वही है, स्थान उसीका नाम है। एक जीव को एक समय में एक काल में कितनी प्रकृतियां बंधती हैं ? हम कहेंगे वह ९ का स्थान - छठे में भी है, सातवें में भी है, आठवें में भी है; स्थान तो एक ही है। उसको अलग स्थान नहीं कह सकते, ९ संख्या है न तीनों जगह, उनका एक ही स्थान है।

अभी हम नामकर्म की बात देखते हैं। नामकर्म में पहले गुणस्थान में कौन-कौनसे नामकर्म बंध सकते हैं ? अलग-अलग जीव, अलग-अलग गतियां, अलग-अलग पर्याय संबंधी बंध कर रहे हैं। कोई एकेन्द्रिय पर्याय को यानी तिर्यंचगति बांध रहे हैं, कोई मनुष्यगति बांधेंगे, कोई देवगति बांधेंगे, कोई नरकगति बांधेंगे तो उनके अलग-अलग संख्या में नामकर्म बंधेंगे। हम केवल इसकी संख्या देख रहे हैं, इसके नाम और यह २३, २५ कैसे आये हैं उसकी बात बाद में करेंगे। २३वाला है, २५वाला है, २६वाला है, ये तीनों एकेन्द्रिय संबंधी बंध हैं और द्वीन्द्रियादि अपर्याप्त भी २५वाले में आ जायेंगे। २८वाला देव और नारकी संबंधी है। २९वाला मनुष्य, तिर्यंच संबंधी है और ३०वाला है जो तिर्यंच उद्योत सहितवाला हो सकता है। दूसरे गुणस्थान में एकेन्द्रिय का बंध नहीं होता है क्योंकि एकेन्द्रिय, स्थावर आदि संबंधी बंध पहले गुणस्थानवाले करते हैं, तो सासादन में मात्र २८, २९ और ३०वाला होगा। अपर्याप्त, साधारण, सूक्ष्म वगैरह संबंधी जो बंध हैं, वे पहले गुणस्थानवाले ही करते हैं, ऊपर उनके बंध की व्युच्छित्ति हो जाती है इसलिये वहां मात्र २८, २९ और ३०वाले ही रहेंगे। उसके ऊपर मिश्रवाला २८, २९ का करता है, उसके ऊपर २८, २९, ३० का है।

देखो ऊपर आना अप्रमत्त में- २८, २९, ३०, ३१ का है। वहां आहारकद्विक का

बंध होता है इसलिये वहां कोई प्रकृति बढ़ गयी है और ऊपर भी अपूर्वकरण में २८, २९, ३०, ३१ और १ - मात्र एक रह गयी। सबकी व्युच्छित्ति होने पर मात्र १ प्रकृति का बंध रह जाता है, उस नामकर्म की बात वहां रहेगी। ऊपर भी वही है; यशस्कीर्ति रह जाती है- १ ही प्रकृति का बंधस्थान रह जाता है। ये स्थानों की प्रकृतियां कौनसी हैं वह बाद में देखेंगे। अभी कौन-कौनसे गुणस्थान में कौनसे स्थान बंधते हैं हमें मालूम नहीं है। अगर हम टोटल करेंगे, देखो, हम राइट साइड में सभी प्रकृतियों के स्थान जोड़ेंगे तो ज्ञानावरण का ५ का, दर्शनावरण का ९ का, वेदनीय का १ का, मोहनीय के २२ का, आयु का १ का, गोत्र का १ का, अंतराय का ५ का। इनके साथ अगर नामकर्म की २३ प्रकृतियां लेते हैं तो टोटल सभी प्रकृतियों का मिलकर ६७वाला एक स्थान हो जायेगा, या नामकर्म का २५वाला लेंगे तो टोटल ६९ हो जायेंगे। इसकी हमें चर्चा नहीं करनी, इसका हिसाब अभी नहीं करना है। किसतरह से इसको देखना है इसकी बात है। हम मोहनीय के बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान अलग सीखेंगे; नामकर्म के बंधस्थान, उदयस्थान, सत्वस्थान अलग सीखेंगे। आपको बताने के लिये पेज बता दिया। हमने अभी जो बंधस्थान बोर्ड पर चार्ट में देखे, उसीका वहां इकट्ठा लिखा हुआ है; उसका अर्थ कैसा है और कैसे चार्ट पढ़े जाते हैं इसका हमने आपको थोड़ा अंदाजा दे दिया।

ये बंध के स्थान हमने देखे हैं, पहले मोहनीय की बात हम करेंगे। मोहनीय के बंधस्थान समझने के लिये मोहनीय के बंधकूट आपको दिखायेंगे। हम यात्रा में जाते हैं वहां कूट देखते हैं न ! कूट यानी क्या होता है ? शिखर होते हैं, पर्वत होते हैं। हम चार्ट में दिखायेंगे उनको। कौनसे गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों का बंध होता है यह हमें बहुत आसानी से पता चलेगा। हमने मूलप्रकृतियों में देखे थे, अभी उत्तरप्रकृतियों में देखने जा रहे हैं, हम मोहनीय की उत्तरप्रकृतियों के स्थान देखेंगे। हमने उनके स्थान देखे हैं, उन्हीं को बंध के कूट के हिसाब से देखेंगे। मिथ्यात्व गुणस्थान में मोहनीय कर्म की कौन-कौनसी प्रकृतियों का बंध होता है ? ध्रुवबंधी कितनी देखी थी ? १९। मोहनीय की ध्रुवबंधी प्रकृतियां कितनी हैं ? एक मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय-जुगुप्सा ये ध्रुवबंधी हैं, अनादि से अपनी व्युच्छित्ति तक बंधती ही बंधती हैं। १९ निश्चितरूप से हो गयी ध्रुवरूप से, अब बाकी बंधनेवाली कौनसी देखी ? तीन वेद में से कोई एक वेद बंधेगा और हास्य-रति या शोक-अरति इसमें से कोई एक युगल बंधेगा। उसकी बात बंध के कूट के स्वरूप में देखेंगे तो आपको अत्यंत सरल हो जायेगा। हर एक गुणस्थान में

कैसे सोचना, कैसे उसको काउंट करना। इसीके साथ इनके भंग भी ख्याल में आयेंगे।

मोहनीय के बंधकूट

मिथ्यात्व २ २ | २ १ | १ | १ १६ १	सासादन २ २ | २ १ | १ १६	मिश्र, असंयत २ २ | २ १ १२
देशसंयत २ २ | २ १ ८	प्रमत्त २ २ | २ १ ४	अप्रमत्त, अपूर्वकरण २ २ १ ४

अनिवृत्तिकरण (१) १ ४	अनिवृत्तिकरण (२) ४	अनिवृत्तिकरण (३) ३	अनिवृत्तिकरण (४) २	अनिवृत्तिकरण (५) १

भंग किसको कहते हैं और स्थान किसको कहते हैं ? एकसाथ कितनी प्रकृतियां बंधती हैं, उनकी संख्या को स्थान कहते हैं। अभी हमने देखा हैं २२ का एक स्थान होगा परंतु तीन वेद में से कोई एक वेद होगा, तो ये तीन भंग हो गये। हर एक वेद के साथ कोई भी युगल होगा हास्य-रति या शोक-अरति, तो तीन गुणा दो तो छह भंग हो जायेंगे। अब हम चार्ट देखेंगे, ये मोहनीय के बंध कूट हैं। मोहनीय यानी इसमें दर्शनमोहनीय, चारित्रमोहनीय सबको मिलकर यहां मोहनीय की बात है। उसके बंध के कूट; कूट क्यों ? यहां ऐसी कूट जैसी, शिखर जैसी रचना की है इसलिये कूट कहा।

हम देखते हैं १ है मिथ्यात्व, ये १६ कषाय हैं, १ | १ | १ लिखा है मगर वह ऑप्शनल है, तीन वेद में से कोई एक वेद का बंध होगा। ऊपर २ | २ लिखा है यानी दो युगल हैं - हास्य-रति या शोक-अरति। ऊपर दो तो फिक्स हैं - भय और जुगुप्सा हर एक को बंधेगी ही। एक मिथ्यात्व, सोलह कषाय और ऊपर की दो- ये १९ प्रकृतियां ध्रुवबंधी हैं। डिफरन्स कहां है ? तीन वेद में से एक वेद और दो युगल में से एक युगल। अभी एक साथ एक जीव को कितने का बंध होता है उसको काउंट करना है, तो ऐसे

साइड से उसको काउंट करना। क्योंकि हर एक कॉलम में से एक-एक को काउंट करना है। यहां १ | १ | १ लिखा है एक ही को काउंट करना है। तो १ और १६ = १७ + १ = १८ + २ = २० + २ = २२, कितना आसान है ! तो यह हुआ मिथ्यात्व का बंध का कूट। कितने का स्थान है वह ? २२ का स्थान है।

इनमें कौन-कौनसी प्रकृतियां बदल सकते हैं हम ? पुरुषवेद का बंध हो सकता है, स्त्रीवेद का बंध हो सकता है या नपुंसकवेद का बंध हो सकता है। पुरुषवेद के साथ हास्य-रति या शोक-अरति, स्त्रीवेद के साथ भी हास्य-रति या शोक-अरति, नपुंसकवेद के साथ भी हास्य-रति या शोक-अरति। तो उसके तीन दूना छह भंग होंगे। स्थान किसे कहना ? २२ प्रकृतिवाला एक स्थान है जो मिथ्यात्व गुणस्थान में होता है और वहां कौन-कौनसी प्रकृतियां बदलने से भंग होते हैं ? वेद की और युगल की। तो कितने भंग हुये ३ × २ = ६ क्योंकि यहां दो ऑप्शन्स हैं और यहां तीन ऑप्शन्स। यहां ये छह भंग हो सकते हैं। *श्रोता: किसमें कहेंगे ?* किसमें नहीं, वह कहेंगे २२ का स्थान है और भंग कितने हैं ? छह हैं, हां। अभी स्थानों की बात बढ़ायेंगे परंतु स्थान को सीखते-सीखते भंग समझना और आसान है इसलिये यहीं पर बता दिया। यह पूरा अधिकार क्या है ? स्थानसमुत्कीर्तन यानी स्थानों की बात है, उसके साथ उसके भंग भी कहीं-कहीं बताये हैं। यह भंग क्या होता है यह समझने के लिये बात की। स्थान टोटल प्रकृतियों की संख्या को कहते हैं और अलग-अलग प्रकृतियां बदलने से संख्या उतनी ही रहती है। परंतु प्रकृतियां बदलती हैं तो उनको हम भंग कहते हैं, भेद हो गये।

अब आगे बढ़ते हैं सासादन में। सासादन में किसका बंध रुक जायेगा ? मेरा प्रश्न है, पहले गुणस्थान में मोहनीय कर्मों में से कौन-कौनसे कर्मों के बंध की व्युच्छित्ति होती है ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व, एक ही गया ? सोलह के सोलह नाम काउंट करो तो आपको याद आयेगा। मिथ्यात्व, नपुंसकवेद; नपुंसकवेद कौनसी प्रकृति है ? *श्रोता: नोकषाय।* नोकषाय की है, नोकषाय किसका भेद है ? *श्रोता: चारित्रमोहनीय।* मोहनीय का है न, हमने पूछा था पहले गुणस्थान में मोहनीय कर्मों में से कितने कर्मों के बंध की व्युच्छित्ति होती हैं ? दो की होती हैं, परंतु भले नपुंसकवेद गया अभी दो वेदों में से एक बंधेगा। यहां बंध होगा, उसमें भंग कम हो जायेंगे। प्रकृति में एक मिथ्यात्व प्रकृति ही प्रकृति घटायेंगे। अभी कौन-कौनसी रह गयी ? सोलह कषाय। दो वेद में से, कौनसे दो वेद ? स्त्रीवेद का बंध होगा या पुरुषवेद का। दो युगल यहां पर भी हैं और भय-जुगुप्सा

ध्रुवबंधी हैं, तो उनका बंध रहेगा। तो यहां कितनी प्रकृतियां बंधती हैं ? १६+१ = १७+२ = १९+२ = २१। सासादन गुणस्थान में मोहनीय की २१ प्रकृतियोंवाला स्थान है।

अब तीसरे गुणस्थान में आगे बढ़ेंगे। दूसरे गुणस्थान में मोहनीय में से किसकी बंधव्युच्छित्ति हो गयी ? *श्रोता: अनंतानुबंधी चार।* अनंतानुबंधी चार की ही हो गयी ? स्त्रीवेद की बंधव्युच्छित्ति हो गयी कि नहीं ? वेद मोहनीय का भेद है कि नहीं ? नहीं समझे ? देखो-देखो, सोलह में से चार गयी बारह हैं। परंतु वेद के ये दो ऑप्शन्स में से एक ही ऑप्शन रहा न, क्यों रहा ? स्त्रीवेद के बंध की व्युच्छित्ति दूसरे में हुयी है, अभी तीसरे गुणस्थान से ऊपर मात्र एक पुरुषवेद का ही बंध होगा, अभी वेद में ऑप्शन नहीं रहेगा। ऑप्शन कहां रहेगा ? युगल में। क्यों ? हास्य-रति या शोक-अरति। कहां तक ऑप्शन रहेगा ? छठे तक, क्योंकि छठे में अरति-शोक की बंधव्युच्छित्ति होती है तो वहां तक ऑप्शन रहेगा। युगल में वहां तक ऑप्शन रहेगा, वहां तक ये दो भंग रहेंगे ही रहेंगे। तीसरे गुणस्थान में सोलह में से चार गयी, कौनसी चार गयी ? अनंतानुबंधी। अभी एक पुरुषवेद का ही बंध है, हास्य-रति या शोक-अरति और भय-जुगुप्सा का बंध तो ध्रुवबंधी है। हम काउंट करेंगे १२ + १ = १३ + ४ = १७। यहां १७ का बंध है।

चौथे गुणस्थान में आते हैं। इसमें यह लिखा है चौथे में भी वही है, बंधस्थान उतना ही है १७ का। अनंतानुबंधी तीसरेवाले को भी नहीं है, चौथेवाले को भी नहीं है, उसके भी पुरुषवेद बंध रहा है, ये सेम हैं उनमें कोई फर्क नहीं है, प्रकृतियों में भी कोई अंतर नहीं। अब पांचवें गुणस्थान की बात करते हैं देशसंयतवाले की। अभी तीसरे चौथे में बारह कषाय थे, पांचवें में आठ हो गये, कौनसी प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति हुयी ? अप्रत्याख्यानावरण, मोहनीय का और कुछ गया क्या ? चौथे गुणस्थान में मोहनीय का और कुछ कम हुआ कि नहीं ? नहीं हुआ, अच्छा ! यहां आठ कषाय, एक पुरुषवेद है, फिर २ युगल में से १ युगल यहां पर भी है और भय-जुगुप्सा का भी बंध है। तो पांचवें गुणस्थानवाले को ८ + १ = ९ + ४ = १३ का बंध है, तो १३ का एक बंधस्थान है।

अभी हम छठे-सातवें की बात करेंगे। पांचवें में आठ कषाय हैं तो प्रमत्त में कितने लिये ? *श्रोता: चार।* कौनसे चार कम किये ? प्रत्याख्यानावरण चार के बंध की व्युच्छित्ति हुयी, छठे के लिये चार संज्वलन, एक पुरुषवेद एक युगल और भय-जुगुप्सा इनका बंध है, तो ९ का बंध है। सातवेंवाले को भी, क्या डिफरन्स है इसमें और इसमें ?

वहां भी ९ कहा और यहां भी ९ कहा। छठे में दो युगल में से एक युगल का था और सातवें में मात्र हास्य और रति का ही बंध होगा। ये चार कषाय यहां सातवें में भी हैं, फिर एक पुरुषवेद, हास्य-रति का बंध है और भय-जुगुप्सा का बंध है। आठवें गुणस्थान में मोहनीय में से बंधव्युच्छित्ति किसकी होगी? हास्य-रति, भय और जुगुप्सा; अरति-शोक गये छठे में। हम सातवें-आठवें की बात कर रहे हैं। आठवें में कौन-कौनसा बंध हो रहा था ? संज्वलन चार, एक पुरुषवेद, हास्य-रति और भय-जुगुप्सा। आठवें के सातवें भाग में हास्य-रति, भय और जुगुप्सा चार की व्युच्छित्ति हुयी।

अब आते हैं नौवें गुणस्थान में, अनिवृत्तिकरण (१) यानी पहला भाग। आठवें से अनिवृत्तिकरण के पहले भाग में आये, हास्य-रति भी गयी और भय-जुगुप्सा भी गये; उनकी बंधव्युच्छित्ति हुयी। अभी नौवें में क्या बंध रहा है ? संज्वलन चार और एक पुरुषवेद। अब दूसरे भाग में चले जाते हैं, वेद का बंध भी रुका है, उदय भी रुका है। यहां मात्र चार संज्वलन का बंध है। अनिवृत्तिकरण के तीसरे भाग में क्रोध का बंध भी रुक गया; दूसरे भाग में क्रोध-मान-माया-लोभ चारों का बंध था। तीसरे भाग में मान-माया-लोभ का बंध है, उसके आगे चौथे भाग में माया और लोभ का बंध है, पांचवें भाग में मात्र लोभ का बंध है, नौवें गुणस्थान के अंत तक अकेले संज्वलन लोभ का बंध होगा और वह भी वहीं बंधने से रुक जायेगा। दसवें गुणस्थान में मोहनीय का बंध कौनसी प्रकृति का होगा ? *श्रोता: नौवें तक ही होता है।* नौवें तक ही होता है, दसवें गुणस्थान में मोहनीय का बंध नहीं होता। कितना आसान है देखो ! इंटरेस्टिंग है कि नहीं ? ईझी है।

यहां भंग देखते हैं। भंगों की बात हमने देखी, प्रकृति बदलने से भंग होते हैं। पहले गुणस्थान में बंधनेवाली प्रकृतियां २२ हैं, भंग कितने हैं ? तीन वेद हैं और दो युगल हैं। ३ दूनी ६ यहां छह भंग हो गये। सासादन गुणस्थान में देखते हैं- दो वेद हैं और दो युगल हैं तो २ दूनी ४; चार भंग हो गये। तीसरे, चौथे गुणस्थान में एक पुरुषवेद का ही बंध है, इनमें एक वेद के साथ दो ही भंग हो सकते हैं, हास्य-रति या शोक-अरति। तीसरे, चौथे गुणस्थान में भी दो; पांचवें गुणस्थान में भी दो; छठे गुणस्थान में भी दो भंग हैं। यहां सातवें, आठवें गुणस्थान में कोई भंग नहीं होंगे, बस एक ही स्थान है उसमें कोई डिफरन्स नहीं होगा, जो बंधती हैं वे सबको उतनी ही बंधेगी। आगे नौवें गुणस्थान में भी भेद का सवाल नहीं है, मोहनीय के जो बंधस्थान हैं उतने का ही वहां बंध होता है। ये बहुत आसान है- प्रकृति बदलने से उनके भंग हो जाते हैं। *श्रोता: चार्ट*

से बहुत सरल हो गया। चार्ट से बहुत सरल हो गया। स्टार्टिंग में नहीं बताया, इसलिये और ज्यादा सरल लगने लगा। पहले मेहनत की न ! अभी डायरेक्ट बता दिया।

हम आपको और भी कुछ अनोखी बात बताना चाहते हैं। हम अकेले मोहनीय की चर्चा करेंगे- ये बंध होते हैं न, कौनसे गुणस्थान में मोहनीय की कितनी प्रकृतियों का बंध हो रहा है। मोहनीय का पहले गुणस्थान में २२वाला बंध करनेवाला जीव चौथे गुणस्थान में पहुंच गया; कितने का बंध करेगा ? मिथ्यात्व में से डायरेक्ट चौथे में गया न, १७ का बंध करेगा। २२ में से १७ हुआ यानी अल्प हुआ न ? २२ प्रकृतियां बंधती थी अब जाकर १७ बंधेगी। कोई जीव पहले गुणस्थान से पांचवें में जायेगा तो ? २२ का बंध कर रहा था वहां १३ का बंध हो जायेगा। पहले गुणस्थान से और कहां जा सकता है ? सातवें में। पहले से डायरेक्ट सातवें में गया है, कितने का बंध करेगा ? ९ का बंध करेगा। यानी पहले अधिक का बंध था, बाद में अल्प का बंध करने लग गया तो उसको कहेंगे अल्पतर बंध। चार नाम आनेवाले हैं- भुजाकार, अल्पतर, अवक्तव्य और अवस्थित। कौनसे ? *श्रोता: भुजाकार, अल्पतर, अवक्तव्य, अवस्थित।*

अब अल्पतर हमने देखा। पहले अधिक प्रकृतियों का बंध था, गुणस्थान पलटा तो कम प्रकृतियों का बंध होने लगा तो हम कहेंगे यह अल्पतर बंध है। अब उलटा सोचते हैं, पहले कम प्रकृतियों का बंध होता था अब अधिक प्रकृतियों का होने लगा तो उसको हम क्या कहेंगे ? भुजाकार बंध कहेंगे। ऐसा हो सकता है क्या ? पहले अल्प था और बाद में ज्यादा हो गया - कैसे हो सकता है ? हां, गुणस्थान गिरे तो हो सकता है। कोई छठे गुणस्थान में है, छठे गुणस्थान में से पहले गुणस्थान में आ गया; वहां छठे में कितने का बंध था ? ९ का था। ९ से २२ का होने लगा उसको क्या कहेंगे ? भुजाकार बंध। अब कोई पांचवें में से पहले में आयेगा; पांचवें में कितने का बंध कर रहा था ? १३ का; १३ से २२ का करने लगा। इसको क्या कहेंगे ? भुजाकार बंध। हमने भुजाकार का अर्थ क्या देखा था ? पहले कम प्रकृतियां बंधती थी बाद में अधिक बंधेगी तो हम कहेंगे भुजाकार। पहले अधिक बंधती थी बाद में कम बंधने लगी तो हम कहेंगे अल्पतर।

पहले जितनी बंधती थी, गुणस्थान नहीं पलटा दूसरे समय में भी उतनी बंधती है तो हम क्या कहेंगे ? अवस्थित, अवस्थित यानी उतनी की उतनी। एक नाम और है अवक्तव्य, अवक्तव्य में पहले कोई बंध नहीं था, झिरो था और बाद में बंध होने लगा।

क्या ऐसा भी हो सकता है ? हां, मोहनीय की बात चल रही है। बंध था ही नहीं मोहनीय का; कहां नहीं होता है ? दसवें में मोहनीय का बंध नहीं है, ग्यारहवें में मोहनीय का बंध नहीं है और दुबारा होने लगा। वहां से नीचे-नीचे आता है न, दसवें में से नौवें में आयेगा तो एक का बंध होने लगा। झिरो में से जहां बंध शुरू होता है उसको कहेंगे अवक्तव्य बंध। पहले बंध नहीं हो रहा था, झिरो था; अब फिर वहां बंध होने लगा तो उसको हम क्या कहेंगे ? अवक्तव्य। जिसका पहले बंध नहीं था, बाद में वह ऐसे नीचे के गुणस्थानों में आया तो बंध शुरू हुआ तो वहां हम उसको अवक्तव्य बंध कहेंगे।

मोहनीय के बंधस्थानों में -

भुजाकार : १ → २, १ → १७ | २ → ३, २ → १७ | ३ → ४, ३ → १७ | ४ → ५, ४ → १७ | ५ → ९, ५ → १७ | ९ → १३, ९ → १७, ९ → २१, ९ → २२ | १३ → १७, १३ → २१, १३ → २२ | १७ → २१, १७ → २२ | २१ → २२ | - कुल २०

अल्पतर : २२ → १७, २२ → १३, २२ → ९ | १७ → १३, १७ → ९ | १३ → ९ | ९ → ५ | ५ → ४ | ४ → ३ | ३ → २ | २ → १ | - कुल ११

अवक्तव्य : ० → १ | ० → १७ | - कुल २

अवस्थित : जितना का उतना रहना | - कुल ३३

हम मोहनीय के बंधस्थानों में लगा रहे हैं। ऐसे अन्यत्र कहीं भी लगा सकते हैं, परंतु मोहनीय के बंधस्थानों में लगाना बहुत आसान है। पहले हम भुजाकार देखते हैं, इसे कहीं-कहीं भुजकार भी कहते हैं। जयधवला आदि में भुजकार शब्द आता है, कहीं भुजगार भी कहते हैं और यहां भुजाकार लिखा है, दोनों-तीनों शब्द आते हैं। हम आपको पूछेंगे भुजाकार- पहले एक का बंध था, एक में से दो का होने लगा यह बात कहां हो सकती है ? *श्रोता: नौवें गुणस्थान में।* नौवें गुणस्थान में एक यानी किसका बंध हो रहा था ? लोभ का। फिर नौवें गुणस्थान यानी उपशमश्रेणी से उतरते हुये, यह भी आपको बताना है। क्या हुआ ? पहले लोभ का बंध हो रहा था, अब लोभ और माया दोनों का बंध हो रहा तो १ से २ हो गये।

१ से १७ कब होगा भाई ? पहले १ का हो रहा था, फिर एकदम १७ का होने लगा तो १ में से १७ कैसे हुआ बताना है आपको। *श्रोता: नौवें में से चौथे में आ गया।* नौवें में से चौथे में आ गया, कैसे आया ? डायरेक्ट ? बहुत अच्छा ! नौवें गुणस्थान में

जब १ का बंध कर रहा था; १ का बंध कब होता है ? चढ़ते समय भी अंत में हो सकता है या उतरते समय स्टार्टिंग में होता है। जब १ संज्वलन लोभ का बंध कर रहा था उस समय मरण हुआ। कहां पहुंचे ? देव में। देव में चौथा गुणस्थान होगा, उपशमश्रेणी में मरे हैं तो देव में ही जायेंगे, चौथा गुणस्थान होगा। चौथे गुणस्थान में कितने का बंध है ? १७ का। १ में से डायरेक्ट १७ का होने लगा। उपशमश्रेणी में १ का बंध था, मरकर देव हुये तो १ प्रकृति के बंध में से १७ प्रकृति के बंध में पहुंचे। उसको कहेंगे भुजाकार बंध।

अब आगे देखते हैं, २ से ३ आसान है, कौन बतायेगा ? *श्रोता: नौवें से नौवें में।* नौवें से नौवें में ऐसा नहीं कहना। संज्वलन लोभ-माया का बंध हो रहा था; नीचे उतरा तो मान-माया-लोभ तीनों का बंध होने लगा तब २ से ३ में पहुंचा। अब २ से १७ बताओ, २ से १७ कैसे होगा ? मरण की अपेक्षा; जहां नौवें गुणस्थान में माया और लोभ का बंध हो रहा था, हो सकता है चढ़ते समय या उतरते समय वहीं पर मरण हुआ और देव में पहुंचे। पहले ही समय से, विग्रहगति से ही १७ का बंध होने लगा इसे भुजाकार कहेंगे। आगे ३ से ४ और ३ से १७। कितना आसान है ! ३ कौनसे बंध होते थे ? बोलो पाटनीजी। संज्वलन मान-माया-लोभ का बंध हो रहा था- नौवें गुणस्थान की बात है और वहां से क्रोध-मान-माया-लोभवाले पार्ट में आ गया है, उसके ३ से ४ हुआ। या जहां ३ का बंध हो रहा था उसमें से मरकर डायरेक्ट देव में गये, वहां १७ का बंध होने लगा तो ३ से १७ में आकर पहुंचा। अब ४ से ५ और ४ से १७ ऐसा ही है। जब अकेले संज्वलन ४ का बंध हो रहा था, नौवें गुणस्थान के नीचे में यानी सवेद भाग में आया तो पुरुषवेद का बंध प्रारंभ होगा। पुरुषवेद और ४ संज्वलन का बंध करने लगा तो ४ में से ५ में आया। या ४ का बंध करनेवाला मरकर देव में चला गया, वहां चौथा गुणस्थान है इसलिये १७ का बंध होने लगा। इसलिये इसका भी ४ से १७ भुजाकार कहेंगे।

आगे ५ से ९ और ५ से १७ कौन बतायेगा ? ५ का बंध हो रहा था अब ९ में आ गये। ५ का बंध कहां था ? नौवें गुणस्थान में सवेद भाग में था। वहां से आठवें में आया तो कौनसी प्रकृतियां बढ़ गयी ? हास्य-रति और भय-जुगुप्सा। बंध की बात है न ! तो ५ से ९ में आ गया। ५ से १७ में आनेवाला कौन है ? मरकर देव में चला गया तो डायरेक्ट वह १७वाला चालू हो गया। अब आगे देखते हैं हम, ९ से १३, ९ से १७, ९ से २१ और ९ से २२ अब यहां बहुत सारा है। देखो क्या कहते हैं ? क्या लिखा है वहां ? ९ से १३वाला,

९ का कहां हो रहा था ? आठवें में और कहीं होता है ? सातवें में और कहीं होता है ? छठे में होता है। तो ९ से १३ का अर्थ क्या होता है ? ९ से १३ में आया है यानी कहां से कहां आया है ? पांचवें से छठे में आया तो उलटा कम होगा। छठे से पांच में आया कि सातवें-आठवें से पांचवें में आया ? आठवें से पांचवें में लाना कि नहीं लाना ? *श्रोता: सातवें से पांचवें में।* सातवें से भी पांचवां हो सकता है ? बेन कहती हैं कि सातवें से भी पांचवां हो सकता है। ना आठवें से पांचवें में आ सकता है, ना सातवें से पांचवें में आ सकता है, छठे से ही पांचवें में आ सकता है। गिरते समय सातवें से कोई पांचवें में नहीं जायेगा। हमेशा सातवें में से छठे में जायेगा, मरेगा तो चौथे में जायेगा। मरण की अपेक्षा जा सकते हैं। ९ से १३ में जानेवाला कौनसा है ? छठे से पांचवें में आया है। ९ से १७ में जानेवाले ? चौथे में, यहां मरण की जरूरत नहीं है। छठे से चौथे में आ गया है।

अभी ९ से २१, हां २१वाला कौनसा है ? दूसरे गुणस्थानवाला है। छठे से- ९ से २१वाला होगा उसकी कंडिशन क्या होगी ? औपशमिक सम्यग्दृष्टि होना चाहिये तभी सासादन में आ सकता है। ९ से २१ में आया और ९ से २२ में ? मिथ्यात्व में चला गया तो ९ से २२। इन सबको क्या कह रहे हैं हम ? भुजाकार कह रहे हैं। अब १३ से १७ है न यहां पर, पांचवें गुणस्थान से चौथे या तीसरे गुणस्थान में आने पर होगा। १३ से २१ औपशमिक सम्यग्दृष्टि पांचवें गुणस्थान से दूसरे गुणस्थान में आने पर और १३ से २२ पांचवें गुणस्थान से पहले गुणस्थान में आने पर होता है, यह भी भुजाकार है। अब १७ से २१ चौथे गुणस्थान से दूसरा गुणस्थान। १७ से २२ चौथे गुणस्थान से पहला गुणस्थान; दूसरा कोई भंग होगा ? १७ से २२वाले में और कोई ऑप्शन होगा कि नहीं होगा ? चौथे गुणस्थान से पहले गुणस्थान में और तीसरे गुणस्थान से पहले गुणस्थान में आनेवाले के भी होगा क्योंकि तीसरे गुणस्थान में भी १७ का स्थान है। अब २१ से २२ - दूसरे गुणस्थान से पहला गुणस्थान, इन सबको क्या कहेंगे ? भुजाकार कहेंगे।

श्रोता: २२ से २१ में नहीं जायेगा ? २२ से २१ में कोई नहीं जायेगा, आप ही बताओ। कोई भी जीव पहले गुणस्थान में से दूसरे में जाता ही नहीं है यानी २२ में से २१वाला स्थान होगा ही नहीं। ये अल्पतरवाले बाद में देखेंगे, अभी यहीं रुकते हैं हम।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४२. मोहनीय के उदयस्थान

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है और उसीका हिंदी अनुवाद हमारे हाथ में है। अभी हम स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार देख रहे हैं। यहां स्थानों की - बंध के स्थान, उदय के स्थान, सत्त्व के स्थान, इन्हीं की चर्चा चलेगी। अभी हम मोहनीय के बंधस्थान देख रहे थे।

मोहनीय के बंधस्थान कितने हैं और कौन-कौनसे हैं ? मोहनीय के बंधस्थान कितने हैं ? *श्रोता: दस।* दस देखे, हां, कौन-कौनसे ? २२ का, २१ का, १७ का, १३ का, ९ का, ५ का, ४ का, ३ का, २ का, १ का। इसतरह से यह दस स्थान हमने देखे हैं। १३ का स्थान कहां होता है ? *श्रोता: पांचवें गुणस्थान में।* २१वाला ? दूसरे गुणस्थान में होता है। १७वाला ? तीसरे और चौथे दोनों गुणस्थान में होते हैं। ९ प्रकृतिवाला ? छठे, सातवें, आठवें तीनों गुणस्थान में होते हैं। नौवें गुणस्थान के बंधस्थान कौन-कौनसे हैं ? ५वाला, ४वाला, ३वाला, २वाला, १वाला। दसवें में ? *श्रोता: एक है।* एक है ? कौनसा ? बंध ही नहीं है। नौवें तक ही बंध है; हमने ५, ४, ३, २, १ सभी बंधस्थान नौवें में ही बताये हैं, दसवें में मोहनीय का कोई बंधस्थान नहीं है। हमने अभी भुजाकार, अल्पतर, अवस्थित और अवक्तव्य की बात देखी थी। भुजाकार किसको कहना ? पहले कम था और बाद में बढ़ा उसको भुजगार कहते हैं या भुजाकार कहते हैं- पहले कम प्रकृतियां बंधती थी, फिर अधिक बंधती हैं। उसमें कौन-कौनसी पॉसिबिलिटिज् होती हैं, कौन-कौनसे बंधस्थान हो सकते हैं उसकी चर्चा हमने की। अब अल्पतर बंध की बात करते हैं।

पहले मोहनीय में अधिक प्रकृतियां बंधती थी, पर फिर कम बंधेगी। ऐसा कब होगा ? जब नीचे के गुणस्थान से ऊपर जायेंगे तो अधिक प्रकृतियों का बंध था वह कम होगा। पहले गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों का बंध है ? २२। पहले गुणस्थान से ऊपर कहां-कहां जा सकता है ? पहले गुणस्थान से चौथे गुणस्थान में जा सकता है, तीसरे गुणस्थान में जा सकता है, पांचवें गुणस्थान में जा सकता है या सातवें गुणस्थान में जा सकता है। पहले २२ का था, २२ में से १७ यानी या तो तीसरे गुणस्थान में गया या तो चौथे गुणस्थान में गया। २२ में से १३ यानी पहले गुणस्थान से पांचवें गुणस्थान में गया। २२ में से ९ हुआ यानी पहले गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में चला गया। इसको क्या

कहेंगे ? अल्पतरबंध; प्रकृतियां कम बंधने लगी। नीचे के गुणस्थानों में मोहनीय की अधिक प्रकृतियां बंधती हैं, जैसे-जैसे ऊपर के गुणस्थानों में जायेगा बंधव्युच्छित्ति होती चली जाती है, तो ऊपर बंध कम हो जाता है। यहां १७ से १३ का बंध हुआ यानी चौथे गुणस्थान से पांचवां गुणस्थान हुआ। तीसरे गुणस्थान से पांचवां गुणस्थान होगा कि नहीं होगा ? तीसरे गुणस्थान से दो ही रास्ते हैं- चौथे गुणस्थान में जा सकता है या तो पहले गुणस्थान में जा सकता है। तीसरे गुणस्थान में से कोई ऊपर के गुणस्थानों में यानी पांचवें, छठे, सातवें में नहीं जा सकता। तीसरे गुणस्थान में से अल्पतर नहीं हो सकता।

१७ से १३ कहां से कहां जाने पर होता है ? चौथे गुणस्थान से पांचवें गुणस्थान में, १७ से ९ चौथे गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में, १३ से ९ पांचवें गुणस्थान से सातवें गुणस्थान में जाने पर होता है। ९ से ५ कब होगा ? आठवें गुणस्थान में से नौवें गुणस्थान में जायेगा तो ९ से ५ पर आ जायेगा। अब ५ से ४ ? यह नौवें गुणस्थान के पहले भाग में से दूसरे भाग में गया, फिर ४ से ३ दूसरे भाग से तीसरे भाग में गया, ३ से २ आगे-आगे चला गया तो ३ से २ और २ से १ हो जायेगा। इसको क्या कहेंगे ? अल्पतर। यह सब मिलकर कितने हुये ? कुल ११। भुजाकार कितने देखे थे ? २०।

अब अवक्तव्य देखेंगे। अवक्तव्य का अर्थ क्या है ? पहले बंध नहीं था, अब होने लगा। ० में से १ हुआ तो कहां से कहां जाने पर हुआ ? *श्रोता: ग्यारहवें गुणस्थान में से डायरेक्ट नौवें गुणस्थान में आ गया।* देखो, लगातार दो समयों की बात है- ग्यारहवें गुणस्थान में से कोई डायरेक्ट नौवें गुणस्थान में नहीं आता। दसवें गुणस्थान में भी झिरो था। दसवें गुणस्थान में से नौवें गुणस्थान में प्रवेश हुआ तब हम कहेंगे ० में से १ हुआ; ग्यारहवें गुणस्थान में से नहीं कह सकते। दूसरा भी बताया न ० से १७, तो कहां मरेगा- ग्यारहवें में या दसवें में ? *श्रोता: ग्यारहवें में।* दोनों में मर सकते हैं, क्योंकि ० कहा है। ग्यारहवें गुणस्थान में मरेगा तो भी देव में चौथे गुणस्थान में पहुंचेगा। दसवें गुणस्थान में मरेगा, वहां भी ० का बंध था, वह भी १७ का बंध करेगा। जब हम ० से १ में कहते हैं तो दसवें गुणस्थान में से नौवें गुणस्थान में लेना और जब ० में से १७ कहते हैं तो दसवें गुणस्थान में भी मरण हो सकता है- चढ़नेवाला दसवां या उतरनेवाला दसवां गुणस्थान; या ग्यारहवेंवाला। दोनों में उसका बंध ही नहीं था, मरकर देव में गया तो १७ का बंध होने लगा क्योंकि गुणस्थान चौथा हुआ है; इसको हम क्या कहेंगे? अवक्तव्य बंध। ये दो ही हैं- ० था बाद में १ हुआ, या ० था तो १७ हुआ। अवक्तव्य बंध कुल दो ही हैं।

टोटल बंधस्थानों में भुजाकार के २० हैं, अल्पतर के ११ हैं और अवक्तव्य के २ हैं।

अवस्थित कितने रहे ? जितना था उतना रहा यानी कुछ चेंज होने के बाद उतना का उतना रहा। भुजाकार के बाद यानी १७ से ९ हुआ और बाद में ९ का ९ रहा तो उसको हम कहेंगे अवस्थित। बढ़कर उतना का उतना रहा या कम होकर उतना का उतना रहा या ० में से कुछ हुआ फिर उतना का उतना रहा। इसलिये अवस्थित के लिये इसकी टोटल की- पहले २० फिर ११ और २। अवस्थित के कितने लिखे हैं ? ३३। सबकी टोटल करके देखो- भुजाकार के २० थे, अल्पतर के ११ थे, अवक्तव्य के दो थे। इनकी टोटल ३३ हो गयी, ये अवस्थितवाले बंध हो जायेंगे। अवस्थित का अर्थ है उतना का उतना रहा। उतना का उतना अंतर्मुहूर्त तक रहा उसकी बात नहीं है। पहले कम था, बढ़कर फिर उतना का उतना रहा; या पहले ज्यादा था फिर कम होकर फिर उतना का उतना रहा। इसलिये उसको हमने इसतरह से गिना है।

श्रोता: इसका मतलब जो पहले गुणस्थान में था, बढ़ता हुआ फिर वापस पहले गुणस्थान में आ गया ? नहीं, अभी हमने क्या देखा ? कोई दूसरे गुणस्थान में २१वाला था, अब वह पहले गुणस्थान में आकर २२वाला होगा। अब पहले गुणस्थान में जब तक रहेगा तब तक २२वाला ही रहेगा उसको हम अवस्थित कहेंगे। *आपका प्रश्न है- प्रमत्त से अप्रमत्त है, वहां ९ का ९ ही रह गया ?* वहां ९ के ९ है, केवल वहां भंगों की बात हो सकती है। हम कह सकते हैं अवस्थित का अवस्थित है। परंतु ऐसे कितने होंगे ? यहां हमने कौनसे लिये ? पहले नहीं थे, हुये उसको भी काउंट किया और बाद में अवस्थित हुआ है। या पहले ज्यादा थे, कम हुआ बाद में अवस्थित हुआ है। या पहले कम था, बढ़ गया बाद में अवस्थित हुआ उसकी यहां चर्चा है। इसलिये अवस्थित को ३३ कह दिया। देखो, पहले समय में १ से २ हुआ, फिर २ का २ रहा न ? अंतर्मुहूर्त तक उतना का उतना रहेगा उसको अवस्थित कहेंगे। १ से १७ हुआ; फिर १७ के बाद नेक्स्ट समय में भी १७ रहा; १ से १७ हुआ था, फिर १७ का होने के बाद नेक्स्ट समय में १७ ही रहा उसको अवस्थित कहा। इसलिये उसकी संख्या ३३ बतायी।

अपना बंधस्थानों का विषय इतना ही है, उसके और भी भंग हैं। वहां अनेक भंग हैं इससे भुजाकार बढ़ जाते हैं। भंगों की अपेक्षा उसमें भी बहुत भेद बताये हैं। हम अभी मोहनीय के उदय के बारे में देखेंगे। जैसे मोहनीय के बंधस्थान देखे थे, अब

उदयस्थान देखेंगे। हम नामकर्म के बंधस्थान, उदयस्थान, और सत्त्वस्थान एकसाथ अलग से पूरा टॉपिक पढ़ेंगे। अभी मोहनीय विचार करने के लिये सुलभ है, आसान है। इसलिये मोहनीय के उदयस्थानों की चर्चा पहले कर लेते हैं। उनके चार्ट देखेंगे, पुस्तक में उनके कूट भी हम देखेंगे। उदय के स्थान का अर्थ क्या है ? स्थान किसको कहा था, किसको याद है ? स्थान किसको कहेंगे ? *श्रोता: एक समय में जितनी प्रकृतियां बंधती हैं...* अभी बंध भूल जाओ, हम उदय के स्थान देखने जा रहे हैं। एक जीव के एक काल में युगपत् जितनी उदयरूप होती हैं; अभी मोहनीय की बात है न, मोहनीय की जितनी प्रकृतियों का उदय एकसाथ होगा, उसको हम उदय का स्थान कहेंगे।

मोहनीय की टोटल कितनी प्रकृतियां हैं ? २८। कोई ऐसा जीव होगा न कि जिसके २८ का एक साथ उदय है ? *श्रोता: सादि मिथ्यादृष्टि।* सादि मिथ्यादृष्टि - २८ की सत्ता है, हम उदय की बात कर रहे हैं यहां पर। *श्रोता: २५ की होगी।* २५ की होगी ? क्या सभी अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ सबका उदय एक साथ होगा ? अरे ! या तो क्रोध का उदय होगा या मान का होगा या माया का या लोभ का होगा। अनंतानुबंधी क्रोध, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण क्रोध, और संज्वलन क्रोध- इन चार क्रोधों का उदय मिथ्यात्व गुणस्थान में होगा ही, पर सोलह का उदय एक साथ नहीं होता। बंध सोलह का एक साथ था। हमने देखा था कि उदय एक साथ ४ का ही होगा। ४ प्रकार के क्रोध का उदय है तो मान, माया, लोभ का उदय नहीं है परंतु बंध १६ के १६ का है। हमने उनको ध्रुवबंधी देखा था न। अनादि से ही १६ का बंध हो रहा है परंतु जब तक मिथ्यात्व में है, उदय कितने का हो रहा है ? ४ ही कषायों का, चार क्रोध या चार मान या चार माया या चार लोभ।

तो मोहनीय के उदयस्थान कौन-कौनसे होंगे ? उदयस्थान यानी ॲट अ टाइम, एक समय में युगपत् किसी जीव को कितनी प्रकृतियों का उदय होगा ? मोहनीय की कितनी प्रकृतियों का एक साथ उदय हो सकता है उसको मोहनीय के उदयस्थान कहेंगे। ऐसे उदयस्थान कौन-कौनसे हैं ? ४४६ पृष्ठ पर ४७५ गाथा की टीका में लिखा है- **दस, नौ, आठ, सात, छह, पांच, चार, दो, एक प्रकृतिरूप मोहनीय के उदयस्थान नियम से नौ हैं।** कौन-कौनसे बताये ? पहले गुणस्थान में २२ का बंध देखा था, यहां उदय में व्हेरिएशन्स होंगे, हम देखेंगे क्या-क्या व्हेरिएशन्स होंगे। २२ का उदय किसीको नहीं होगा। अधिक से अधिक मोहनीय का उदय कितनी प्रकृतियों का

हो सकता है ? १० प्रकृतियों का हो सकता है। १० प्रकृति ही ॲट अ टाइम किसीके अधिक से अधिक उदयरूप हो सकती हैं। अभी हमने कौन-कौनसे स्थान देखे ? तीन का छोड़ दो और बाकी कितने ? नौ स्थान हैं। १० का, ९ का, ८ का, ७ का, ६ का, ५ का, ४ का, २ का और १ का ये उदयस्थान देखें।

मोहनीयकर्म के उदय के कूट

मिथ्यात्व में - अनंतानुबंधी सहित

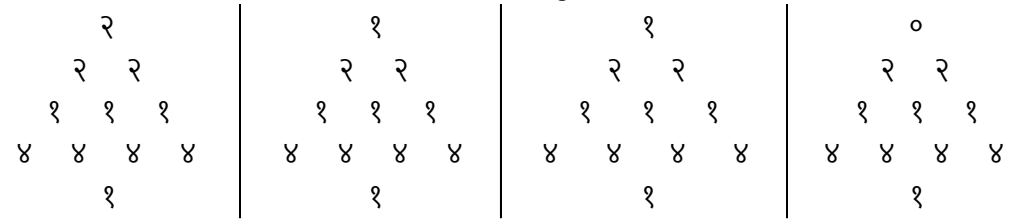

मिथ्यात्व में - अनंतानुबंधी रहित

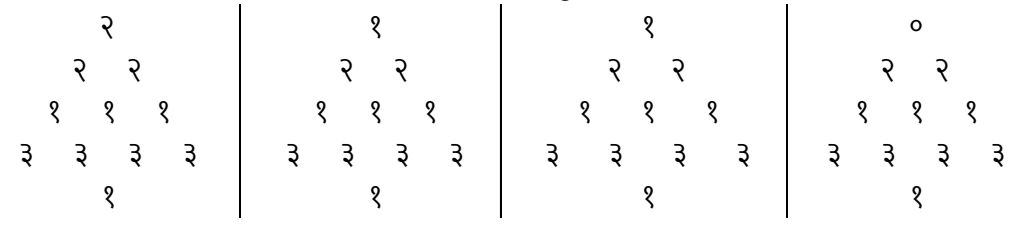

हम मात्र मिथ्यात्व गुणस्थान में थोड़ा सोचेंगे। इनको कहते हैं उदय के कूट, पहले हमने बंध के कूट देखे थे। हमारी आज कूटों की यात्रा चल रही है न ! यहां उदय के कूट देख रहे हैं। यहां उदयरूप प्रकृतियां ऐसी लिखनी हैं- १ मिथ्यात्व है। कषाय में ऑप्शन्स हैं- किसीके अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन चार प्रकार के क्रोध का उदय है या चार मान का या चार माया का या चार लोभ का। मिथ्यात्व गुणस्थान की बात है, इसलिये यहां ४ ४ ४ ४ लिये। अब उसके आगे बढ़ते हैं।

वेद में किसी एक वेद का उदय है। हास्य-रति का उदय होगा या शोक-अरति का उदय होगा। भय-जुगुप्सा बंधने में तो ध्रुवबंधी थी, परंतु उदय में उसका कुछ अलग ही चक्कर है। क्या हो सकता है ? देखो, युगल तक सर्वत्र इतना तो सेम है, है न। परंतु यह जो भय-जुगुप्सा है, ॲट अ टाइम या तो जीव के दोनों का उदय होता है या

अकेले भय का उदय होता है या अकेले जुगुप्सा का उदय होता है या दोनों का भी उदय नहीं होता। यह जो चक्कर है- दोनों का उदय होगा या एक का उदय होगा या झिरो का होगा, यह अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में पलटता रहता है। यानी मिथ्यादृष्टि जीव को उदय ॲट अ टाइम कितनी प्रकृतियों का हो सकता है ? यदि भय-जुगुप्सा दोनों का उदय होगा तो हम काउंट करेंगे १ + ४ + १ + २ + २ = १० यानी किसी जीव को १० का उदय है। एक जीव के एक काल में मिथ्यात्व गुणस्थान में किसीको मोहनीय की १० प्रकृतियों का उदय है। अभी दूसरा जीव लेते हैं जिसको अकेले भय का या अकेले जुगुप्सा का उदय है, उसको क्या कहते हैं ? १ + ४ + १ + २ + १ = ९ यानी एक १०वाला स्थान और यह ९वाला स्थान। यह तीसरे कॉलम में भी ९वाला स्थान है क्योंकि इसमें प्रकृति बदल गयी है। यहां चौथे कॉलम में दोनों ही नहीं है, १ + ४ + १ + २ = ८, यहां ८ प्रकृतिवाला स्थान है। ये सारे मिथ्यादृष्टि के हैं तो यहां १०वाला स्थान है, ९वाला स्थान है, ९वाला स्थान है और ८वाला स्थान है। तो हम यहां कैसे कहेंगे ? १०, ९, ९ और ८। यह समझने के लिये हमने अलग-अलग चार बताये।

अब यहां लिखा है अनंतानुबंधी सहित, मिथ्यात्व में अनंतानुबंधी सहित। आप कहेंगे उसमें क्या विशेषता है ? सारे मिथ्यादृष्टि अनंतानुबंधी सहित ही होंगे न ? आगे लिखा है- अनंतानुबंधी रहित। कौनसा जीव होगा अनंतानुबंधी रहितवाला ? जिसने सम्यक्त्व की अवस्था में अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है तो उसकी सत्ता में से ४ अनंतानुबंधी नष्ट हुये थे। ऐसा जीव गिरकर मिथ्यात्व में आया है और अनंतानुबंधी का बंध करता है। बंध में कोई व्हेरिएशन नहीं है कि ऊपर से आया तो अनंतानुबंधी का बंध नहीं करेगा- ऐसा कुछ नहीं देखा। बंध २२ का २२ है, परंतु उस जीव के बंध के बाद एक आवली तक अनंतानुबंधी का उदय नहीं रहेगा, उसको अनंतानुबंधी रहित कहना है यानी अनंतानुबंधी के उदय से रहित। सत्ता से रहित नहीं कहा, बंध से रहित नहीं कहा, यह हमारे उदय के कूट हैं तो यहां अनंतानुबंधी के उदय से रहित ऐसी यह अवस्था है वह एक आवली काल तक रहती है।

अनंतानुबंधी की विसंयोजना करके वह सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर मिथ्यात्व में आया है। चौथे गुणस्थान से आ सकता है, पांचवें, छठे गुणस्थान से भी आ सकता है। मिथ्यात्व में आया है, अनंतानुबंधी का बंध शुरू किया है; परंतु बंध के बाद एक आवली तक उसका उदय नहीं हो सकता, तब तक हमने उदय में यहां ३ ही पकड़े। १

मिथ्यात्व है, ३ क्रोध, ३ मान, ३ माया, या ३ लोभ। हां अनंतानुबंधी को छोड़कर ३ ३ ३ ३ की बात हैं। ३ वेद में से कोई एक वेद, दो युगल में से कोई एक युगल, यहां पहले कॉलम में दोनों लिये भय-जुगुप्सा। यहां बाकी वैसे ही रखे हैं और यहां दूसरे कॉलम में अकेले भय को लिया। तीसरे कॉलम में बाकी वैसे ही रखे हैं और अकेले जुगुप्सा को लिया है। चौथे कॉलम में भय और जुगुप्सा दोनों का ही उदय नहीं है ऐसी अवस्था ली। इसकी टोटल कितनी हुयी ? १ + ३ + १ + २ + २ यह मिथ्यात्व की ही बात है। यहां १०, ९, ९, ८ का उदय था और नीचे ९, ८, ८ और ७।

श्रोता: यह तीनवाला एक बार समझा दीजिये। तीनवाला ? अनंतानुबंधी रहित कहा है यानी अनंतानुबंधी के उदय से रहित, फिर भी जीव कौनसा है ? मिथ्यादृष्टि है। ऐसी तीन कषाय के उदय की बात हम तीसरे, चौथे गुणस्थान में जरूर करेंगे क्योंकि वहां अनंतानुबंधी का उदय ही नहीं है। परंतु पहला गुणस्थान होते हुये भी अनंतानुबंधी से रहित कहने का प्रयोजन क्या है ? यह जीव पहले सम्यग्दृष्टि था और सम्यग्दर्शन के साथ उसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की थी; अनंतानुबंधी सत्ता में नहीं थी, नष्ट हो गयी। अब वह जीव मिथ्यात्व में गिरकर यानी सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर मिथ्यात्व में आ गया है। मिथ्यात्व में आते ही अनंतानुबंधी का बंध शुरू किया है। उसकी सत्ता में भी अनंतानुबंधी आ गयी है परंतु बंध के बाद आवली काल तक बंधे हुये में से उदीरणा से उदय होना यह बात नहीं बनेगी। आप कहेंगे पहले अन्यरूप से संक्रमित हुआ था, वापस उलटा भी होगा कि नहीं होगा ? होगा परंतु संक्रमण के लिये भी कंडिशन है कि संक्रमण होने के पश्चात् एक आवली तक उसमें कोई अन्य चेंजेस् नहीं होंगे- उदीरणा नहीं होगी, उदय नहीं होगा। इसलिये वहां अनंतानुबंधी के परमाणु सत्ता में तो हैं, परंतु आवली तक उसका उदय नहीं होगा इसलिये अनंतानुबंधी के उदय से रहित है। यहां अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन का उदय है इसलिये ३ क्रोध या ३ मान या ३ माया या ३ लोभ इसको एक ही बार गिनना है। एक मिथ्यात्व को गिना, एक मिथ्यात्व तीन कषाय चार हुये, एक वेद पांच हुये, एक युगल के दो, पांच और दो सात हुये और भय, जुगुप्सा दो को अगर गिनेंगे तो कितने हो जायेंगे ? नौ हो जायेंगे।

अकेले भय को या अकेले जुगुप्सा को लेंगे तो ८ , ८ और दोनों ही नहीं हो तो ७। मिथ्यात्व गुणस्थान में मोहनीय कर्मों के उदयरूप प्रकृतियों को एक साथ लिखेंगे

तो कैसी पोझिशन होगी ? १०, ९, ९, ८ और ९, ८, ८, ७ यानी इतने व्हेरिएशन्स। उदय में भय और जुगुप्सा के कारण संख्या में व्हेरिएशन्स होते हैं। कभी भय-जुगुप्सा दोनों का उदय है, कभी अकेले भय का उदय है, कभी अकेले जुगुप्सा का उदय है और कभी दोनों का उदय नहीं है। किसीको ऐसा नहीं कहना, एक जीव को अन्य काल में भी यह हो सकता है। ऐसा नहीं कि जिसको भय का उदय नहीं है, उसे कायम भय का उदय नहीं है, ऐसा नहीं है। अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में भय-जुगुप्सा का उदय का चक्कर पलटता है। कभी अकेला भय का उदय है; अंतर्मुहूर्त पलटने के बाद अकेले जुगुप्सा का उदय हो सकता है; अंतर्मुहूर्त के बाद दोनों का भी उदय हो सकता है; अंतर्मुहूर्त के बाद दोनों का भी उदय नहीं है ऐसा भी हो सकता है; ये चारों ही बातें हर एक जीव में होगी, परंतु एक जीव के ॲट अ टाइम की हम बात कर रहे हैं। एक जीव के एक काल में युगपत् कितने का उदय हो सकता है ? १० का भी उदय हो सकता है, ९ का भी उदय हो सकता है, फिर प्रकृति बदलकर और ९ भी कहेंगे हम उसको या ८ कहेंगे। यह अनंतानुबंधी सहितवाले की बात हुयी।

अनंतानुबंधी रहित की बात करेंगे हम तो क्या होगा ? ९, ८, ८, और ७। मिथ्यात्व गुणस्थान में उदय के स्थान कितने हैं ? *श्रोता: आठ।* हम अलग-अलग गिनेंगे तो आठ हैं, परंतु हम ऐसा कहेंगे न १० का एक स्थान है, ९ के कितने हैं छोड़ दो; ९ का है, ८ का है और ७ का है। १०, ९, ८ और ७ हुआ न। मिथ्यात्व गुणस्थान में हमने मोहनीय के टोटल स्थान कितने देखे थे ? देखो यहां ४७५ गाथा की टीका में - १०वाला, ९वाला, ८वाला और ७वाला, यह स्थान आगे के गुणस्थान में भी पाये जायेंगे। परंतु वह १०वाला स्थान मात्र मिथ्यात्व में ही होगा। अभी तक मिथ्यात्व गुणस्थान में हमने १०वाला भी स्थान देखा, ९वाला भी देखा, ८वाला भी देखा, ७वाला देखा। अब हम आगे के गुणस्थानों में देखते हैं। आगे के चार्ट हैं वे पुस्तक में बहुत अच्छे बने हुये हैं।

अब हम ४४८ पृष्ठ पर सासादन के कूट देखेंगे। दूसरे गुणस्थान में क्या होगा ? पहले गुणस्थान में जो उदय के कूट लिखे हैं, उनसे दूसरे गुणस्थान में क्या विशेषता होगी ? उसमें से क्या नहीं होगा ? मिथ्यात्व को हम टाल देंगे, अब यह १ को मिटा देंगे, तो ऐसा वहां पर भी लिखेंगे ४, ४, ४, ४, फिर १, १, १ और फिर २, २ और फिर २। फिर १, फिर १ और फिर झिरो। अब पुस्तक में देखेंगे, सासादन के चार्ट्स कैसे हैं ? उसके कूट के नीचे १ नहीं लिखा है। कौनसा १ था वह उदय का ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व

का उदय नहीं है, तो डायरेक्ट अनंतानुबंधी आदि के जो चार हैं, ४ क्रोध या ४ मान या ४ माया या ४ लोभ लिये उसको ४ लिखा। ३ वेद में से कोई एक वेद है, फिर दो युगल में से और फिर ऊपर २। देखो बंध के कूट में हमने दूसरे गुणस्थान में १-१-१ नहीं लिखा था, १-१ लिखा था। वहां बंध की बात थी क्योंकि दूसरे गुणस्थान में पुरुषवेद और स्त्रीवेद दो में से एक का बंध हो रहा था क्योंकि नपुंसकवेद के बंध की व्युच्छित्ति पहले भी हुयी थी। पर यहां उदय की बात है। यहां तीनों में से एक का उदय रहेगा। कहां तक चलेगा ? नौवें गुणस्थान तक। ख्याल में आती है न बात यहां ?

यहां हमने सासादन के कूट देखे। अभी आप इनकी प्रकृतियां गिनो, कितनी हो गयी ? पहले कूट में कितनी हुयी ? ४ + १ + २ + २ = ९, दूसरे कूट में ८, तीसरे में ८ और चौथे में ७। दूसरे गुणस्थान के जो कुछ उदयस्थान हैं वे कैसे लिखेंगे ? ९, ८, ८, और ७। पहले गुणस्थान में ४ और ४ ऐसे ८ अलग लिखे थे क्योंकि उसमें दो पॉसिबिलिटिज् थी, अनंतानुबंधी के उदय सहित और अनंतानुबंधी के उदय रहित। सासादन में ऐसा कुछ नहीं है। सासादन में चार ही कूट बनेंगे, ९ का, ८ का, ८ का और ७ का। समझने के लिये हम चार अलग-अलग लिख रहे हैं; ९, ८, ७ ऐसा कहेंगे तो भी ठीक है। सासादन में कितने का उदय हो सकता है ? ९ का या ८ का या ७ का। वह ८वाले दो अलग भंग बताने के लिये हमने दो कूट बनाये- भयवाला और जुगुप्सावाला।

अब हम मिश्र के कूट देखेंगे। मिश्र में क्या विशेषता होती है ? अनंतानुबंधी का उदय नहीं होगा। अच्छा ! सम्यग्मिथ्यात्व का उदय हो जायेगा। यहां पुस्तक में देखो, हमें सासादन और मिश्र गुणस्थान में कम्पेअर करना है। ऊपर में हमने पहले लाइन में ४, ४, ४, ४ देखा था, उसमें नीचे १ नहीं था क्योंकि मिथ्यात्व का उदय नहीं था; वहां अन्य किसी दर्शनमोहनीय का उदय नहीं है, इसलिये किसीको भी नहीं लिया था। अब मिश्र में नीचे १ लिखा है उस १ का अर्थ क्या है ? सम्यग्मिथ्यात्व। सम्यक् प्रकृति तीसरे में उदयरूप नहीं होती। तीसरे गुणस्थान में किसका उदय है ? सम्यग्मिथ्यात्व जिसको मिश्र प्रकृति कहते हैं। १ का अर्थ है सम्यग्मिथ्यात्व, ऊपर ३ का मतलब क्या है ? अनंतानुबंधी के बिना ३ क्रोध, मान, माया या लोभ। उसके ऊपर १, १, १ यानी ३ वेद में से कोई एक; २, २ यानी दो युगल में से एक युगल और ऊपर भय-जुगुप्सा दोनों को लेंगे तो २ लिखेंगे; १ को लिखेंगे तो भय को; १ को लिखेंगे तो जुसुप्सा को और ० यानी

भय भी नहीं और जुगुप्सा भी नहीं। बंध में हर समय उनका बंध हो रहा है, परंतु उदय में अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में पलटता है; कभी भय का उदय है, कभी जुगुप्सा का है, कभी दोनों का नहीं, कभी दोनों का है। इसलिये इसके ४-४ कूट बनाये हैं।

तीसरे गुणस्थान में मोहनीय की उदयरूप प्रकृतियां कितनी हैं ? हमें टोटल करके बताना है। पहले में कितने लिये ? ९, ८, ८, और ७; उसमें भी दो ऑप्शन्स नहीं हैं, बस ४ ही कूट हैं। वहां प्रकृतियां कौनसी हैं ? ९ प्रकृतिवाला स्थान है, ८ प्रकृतिवाला स्थान है, और ७ प्रकृतिवाला स्थान है। सासादन में भी ९ थे और मिश्र में भी ९ थे परंतु वह अलग-अलग है, वह स्थान ही अलग कहेंगे। वहां ४ कषाय लिये थे, यहां ३ कषाय और एक सम्यग्मिथ्यात्व लिया। इसको भंग नहीं कहेंगे, इसको स्थान ही अलग कहेंगे, ९ का स्थान ही अलग कहेंगे। हम गिनते समय ९ के स्थान, अभी कितने क्या हैं उसकी वहां चर्चा नहीं की थी। मात्र वेदों को पलटेंगे तो हम उसी स्थान में भंग कहेंगे। परंतु यहां उसके ४ कषाय थे और इसको ३ ही कषाय, उसको सम्यग्मिथ्यात्व नहीं था इसको सम्यग्मिथ्यात्व है। यह कुछ अलग ही टाइप का स्थान है, स्थान की संख्या वही है परंतु यह ९ प्रकृतिवाला यह अलग ही स्थान यहां पर है। टोटल स्थान जब हमने गिने थे तो १०वाला है, ९वाला है, ८वाला है, ७वाला है, ऐसे बात की थी। परंतु १०वाला कहां होगा, ९वाला कहां होगा, वह बाद में फिर हम उसको ढूंढेंगे कहां-कहां है। अभी हर गुणस्थान में कूट कैसे बन रहे हैं इतनी बात चल रही है अपनी।

हम चौथे गुणस्थान में आते हैं, चौथे गुणस्थान में कोई औपशमिक सम्यग्दृष्टि है। सम्यक्त्व के भेद मालूम है ? चौथे गुणस्थान में अन्य-अन्य जीवों को अन्य-अन्य टाइप के सम्यक्त्व हो सकते हैं और वे कौन-कौनसे होंगे ? औपशमिक, क्षायोपशमिक और क्षायिक। इनमें उदय की अपेक्षा क्या अंतर है उसको देखेंगे। अभी ४४९ पृष्ठ पर कूट देखो- नीचे १ लिखा है, उसका अर्थ क्या है ? सम्यक् प्रकृति का उदय है। ऊपर ३-३ लिखे हैं यानी अनंतानुबंधी छोड़कर अन्य ३ कषायों का उदय है- क्रोध, मान, माया या लोभ। ऊपर वेद है- किसी १ वेद का उदय है। उसके ऊपर किसी एक युगल का उदय है। उसके ऊपर भय-जुगुप्सा दोनों को लिया; दूसरे नंबर के कूट में अकेले भय को लिया; तीसरे कूट में अकेले जुगुप्सा को लिया और चौथे कूट में ० लिखा यानी दोनों नहीं हैं। इनकी कितनी संख्या हुयी? ९, ८, ८ और ७।

चौथे गुणस्थान में क्या इतने ही हैं कूट ? आगे का पेज निकालना, पृष्ठ ४५२ पर वहां पहला ही टेबल है उसमें क्या लिखा है ? वेदक रहित, वेदक यानी जहां सम्यक् प्रकृति का उदय नहीं है। ये कौनसे जीव होंगे ? औपशमिक और क्षायिक दोनों लेना है। यहां उदय की बात चल रही है। हां, सत्ता में है कि नहीं उससे कुछ मतलब नहीं है। यहां १वाली प्रकृति नीचे नहीं लिखी है। पहलेवाला कूट देख लो ४४९ पृष्ठ पर, वेदक असंयत के कूट में नीचे पहली लाइन में १ लिखा था। फिर ३-३-३-३ लिखे थे, फिर १-१-१, फिर २-२ और फिर २। यहां क्या लिखा है ? १ नहीं लिखा क्योंकि सम्यक् प्रकृति का यहां उदय नहीं है। औपशमिक सम्यग्दृष्टि के उसका उदय नहीं है और क्षायिक के उसकी सत्ता ही नहीं है, उसका उदय भी नहीं है। हम यहां उदय से मतलब रखते हैं। ३-३-३-३ यानी अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन में से क्रोध या मान या माया या लोभ है। ३ वेद में से कोई एक वेद है, दो युगल में से कोई एक युगल है और भय-जुगुप्सा दोनों होगी तो संख्या कितनी होगी ? ३ + १ + ४ = ८। दूसरे कॉलम में ७, तीसरे कॉलम में ७ और चौथे कॉलम में ६। यदि हम पूछेंगे कि चौथे गुणस्थान में उदयरूप स्थान यानी उदय के स्थान कौन-कौनसे हैं ? दोनों मिलाकर आपको बताना है। अभी ८ को दो बार बताने की जरूरत नहीं है। ९ का है, ८ का है, ७ का है और ६ का है ये चार ही बता सकते हैं हम। ८ को दो बार लिया या ७ को दो बार लिया उसको बताने की जरूरत नहीं है। चौथे गुणस्थान में कौन-कौनसे स्थान हो सकते हैं ? ९ का होगा, ८ का होगा, ७ का होगा और ६ का भी हो सकता है, ख्याल में आयी यह बात ?

मेरा प्रश्न है- चौथे गुणस्थान में ६ का स्थान है वह कौनसी गतिवाले को होगा ? *श्रोता: मनुष्यगति को।* हां मनुष्यगति को और भी बताओ अपने पास बहुत सारी गतियां हैं। बोलो विरागजी, आप बोलेंगे हमें कुछ मदद करेंगे ? नहीं, मौन है आपका। आप बोलेंगे ? *श्रोता: चारों गति में हो सकते हैं।* चारों गति में हो सकते हैं, नहीं क्यों बोल रहे हैं ? चारों गति में होंगे की नहीं होंगे ? चारों गति में किसको होगा ? हां ६वाले स्थान की बात है, किसके होगी ? औपशमिक सम्यग्दृष्टि की और क्षायिक की। क्षायिक सम्यग्दृष्टि कहां-कहां है ? चारों गति में हैं कि नहीं हैं ? चौथे गुणस्थान में हैं, बिनधास्त कह दो न। चौथे गुणस्थानवाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि चारों ही गति में हैं तो उनके यह ६वाला स्थान होगा कि नहीं होगा ? जब उनके भय और जुगुप्सा दोनों का उदय नहीं चल रहा है,

उस समय उदय का ६ का ही स्थान होगा। और किसके होगा ? औपशमिक सम्यग्दृष्टि के होगा क्योंकि औपशमिक सम्यग्दृष्टि के भी कभी दोनों भय-जुगुप्सा का उदय होगा और कभी नहीं भी होगा, कभी एक का होगा। ६ का स्थान हो सकता है कि नहीं हो सकता यह बात है, इसतरह से हो सकता है। नारकी के भी होगा, सातवें नरक के नारकी में होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा ? उसके औपशमिक सम्यक्त्व नहीं हो सकता ? हो सकता है। प्रथमोपशम हो सकता है तो वहां भी ६ का स्थान हो सकता है। इसतरह हमें सोचना है। चौथे गुणस्थान जहां-जहां हो सकते हैं और जहां-जहां प्रथमोपशम सम्यक्त्व हो सकता है वहां यह स्थान पाया जायेगा।

अब ४४९ पृष्ठ पर वेदक देशसंयत देखेंगे। पांचवां गुणस्थान है और क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि यानी वेदक सम्यग्दृष्टि है। वेदक नाम क्यों पड़ा मालूम है ? जो उदय को भोगनेवाला है, उसको वेदक कहते हैं। किसके उदय को भोग रहा है ? सम्यक् प्रकृति के, इसलिये उसका नाम है वेदक। उसी जीव को क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि भी कहते हैं। वेदक सम्यग्दृष्टि नाम क्यों पड़ा ? सम्यक् प्रकृति का उदय है इसलिये उसी सम्यक्त्व का नाम है वेदक सम्यग्दृष्टि। मोक्षमार्गप्रकाशक में यह बात कितनी स्पष्ट लिखी है। उसी सम्यक्त्व का दूसरा नाम क्या है ? क्षयोपशम सम्यक्त्व। क्यों ? क्षयोपशम की परिभाषा किसको याद है ? वर्तमानकालीन सर्वघाति स्पर्धकों का उदयाभावी क्षय, भविष्यकालीन उन्हीं स्पर्धकों का सद्अवस्थारूप उपशम और देशघाति स्पर्धकों का उदय। अभी स्पर्धकों के बदले हम क्षयोपशम सम्यक्त्व की बात कर रहे हैं, तो वहां प्रकृति कह सकते हैं।

दर्शनमोहनीय की सर्वघाति और देशघाति प्रकृतियां कौनसी हैं ? दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृति हैं- मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति। इनमें से सर्वघाति कौनसी हैं ? मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व सर्वघाति हैं। किसका घात करती हैं ? सम्यक्त्व का, अपने प्रतिपक्ष का घात करती हैं यह हमने कहा था। सम्यक्त्व का पूरा घात, उसका उदय होवे तो सम्यक्त्व नहीं रहता- सम्यग्मिथ्यात्व का उदय हो जाय तो तीसरे में आ जाता है, सम्यक्त्व से भ्रष्ट हो जाता है और मिथ्यात्व के उदय में पहले गुणस्थान में आता है, वह भी सम्यक्त्व से भ्रष्ट हो जाता है। यानी अपने प्रतिपक्ष का घात कर लेता है। इन दोनों का, क्या कहा ? सर्वघाति है तो उनका उदयाभावी क्षय; उदयाभावी क्षय का अर्थ समझते हैं ? देखो, उदय होकर खिर ही जानेवाला है, फिर भी

कैसे होगा ? सम्यक् प्रकृति में टर्न होकर उदय में आकर खिर जायेगा। अपने स्वरूप से उदय में नहीं आयेगा उसको कहेंगे उदयाभावी क्षय। उदय के अभावरूप, परंतु क्षय कह दिया न यानी उसका उदय हो रहा है, परमाणु उदय में आकर निकल जा रहे हैं, परंतु मिथ्यात्वरूप से नहीं जा रहे हैं। मिथ्यात्वरूप से उदय होता तो पहले गुणस्थान में आ जाता। सम्यग्मिथ्यात्वरूप से उदय में आते तो तीसरे गुणस्थान में चले जाते। परंतु वे सारे ही एक समय में टर्न हो जाते हैं और सम्यक् प्रकृतिरूप से उदय में आते हैं, देशघाति होकर उदय में आते हैं। परमाणु खिर रहे हैं, उदय में आ रहे हैं, उनका निकलना चल रहा है। किस रूप से जा रहे हैं ? सम्यक् प्रकृतिरूप से उदय में आते हैं। यानी देशघातिरूप से उदय में आते हैं तो सम्यक्त्व का पूरा घात नहीं करते; सम्यक्त्व भी बना रहता है और इसका उदय भी चल रहा है। इसलिये इसका नाम है क्षयोपशम सम्यक्त्व। सम्यक् प्रकृति का उदय है इसलिये वेदक सम्यक्त्व कहा।

देखो क्या सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है ! कल भी मैंने अष्टपाहुड निकाला तो वही पेज निकला, अभी मोक्षमार्गप्रकाशक में भी यही पेज निकला है अपने आप। ३४६ पृष्ठ पर गुजराती है मेरे हाथ में, नौवां अधिकार है। एक क्षयोपशम सम्यक्त्वनुं ज नाम वेदक सम्यक्त्व छे। समझते हैं सब गुजराती ? क्षयोपशम सम्यक्त्व का ही नाम वेदक सम्यक्त्व है। ज्यां मिथ्यात्व अने मिश्र मोहनीयनी मुख्यताथी कहिअे त्यां क्षयोपशम नाम पामे छे। यानी जहां मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व की ओर से उसकी मुख्यता से कथन करेंगे तो हम कहेंगे न वह सर्वघाति है, उसका उदयाभावी क्षय है, भविष्य में वे पड़े हैं, वर्तमान में देशघातिरूप से यानी सम्यक् प्रकृतिरूप से उदय में आ रहे हैं। इसलिये इस सम्यक्त्व का नाम है क्षयोपशम सम्यक्त्व। अने ज्यां सम्यक्त्व मोहनीयनी मुख्यताथी कहिअे, सम्यक्त्व मोहनीय की क्या अवस्था है ? उसका उदय चल रहा है। उसकी ओर से कथन करेंगे तो हम उसीको कहेंगे यह वेदक सम्यक्त्व है। त्यां वेदक नाम पामे छे, पण कहेवा मात्र बे नाम छे। स्वरूपमां भेद नथी। जो क्षयोपशम सम्यक्त्व है, वही वेदक सम्यक्त्व है, उसमें स्वरूप में कोई भेद नहीं है। तथा क्षयोपशम सम्यक्त्व चौथाथी सातमां गुणस्थान सुधी होय छे। पं. टोडरमलजी ने इतनी गहराई की बात ऐसे छोटे-छोटे वाक्यों में बतायी है परंतु उसकी सूक्ष्मता अपने ख्याल में आवे तब न ? ये सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका के तीनों - जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार-

क्षपणासार आदि सब ग्रंथ इन्होंने ही लिखें थे पहले। बाद में मोक्षमार्गप्रकाशक लिखा जो अधूरा रह गया। अच्छा है कि करणानुयोग के उनके सारे ग्रंथ पूरे हो गये।

अभी हम पांचवें गुणस्थान वेदक देशसंयत के कूट देखेंगे। यहां क्या विशेषता होगी ? वेदक है यानी सम्यक् प्रकृति का उदय है इसलिये पहले नीचे १ लिखेंगे। यहां कितने कषाय मौजूद हैं ? दो कषाय चौकड़ी, चौकड़ी की बात करते हैं न ? दो कषाय चौकड़ी यानी दो क्रोध या दो मान दो लोभ या दो माया। नीचे एक लिखा उसका अर्थ क्या है ? सम्यक् प्रकृति। ऊपर २-२-२-२ लिखा उसका अर्थ क्या है ? प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन क्रोध या मान या माया या लोभ। तीन वेद में से कोई एक वेद इसलिये १-१-१ लिखा, फिर दो युगल में से एक युगल का उदय है और ऊपर भय-जुगुप्सा दोनों लिखें। दूसरे कॉलम में एक भय लिखा, तीसरे कॉलम में एक जुगुप्सा लिखा और चौथे कॉलम में ० लिखा। अब इसकी टोटल करेंगे। एक लाइन की संख्या एक ही बार ले लेना। १ + २ + १ + २ + २ = ८। इसके स्थान कैसे होंगे ? ८, ७, ७, और ६।

पांचवें गुणस्थान में और कोई सम्यक्त्व हो सकता है ? कौनसा हो सकता है ? औपशमिक भी हो सकता है और क्षायिक भी हो सकता है। वेदक रहितवाले का कूट ४५२ पृष्ठ पर निकालो। *श्रोता: १ नहीं रहेगा।* १ नहीं रहेगा। जो १ सम्यक् प्रकृति का उदय बताया था, वह उदय नहीं रहेगा क्योंकि क्षायिक को उसकी सत्ता नहीं है और औपशमिकवाले को उसका उदय नहीं है, उपशमित है। पांचवें गुणस्थान की बात है, वेदक रहित का अर्थ ही है कि या औपशमिक सम्यग्दृष्टि है या क्षायिक सम्यग्दृष्टि है। तो मेरा प्रश्न है- क्षायिक सम्यग्दृष्टि अगर पांचवां गुणस्थानवाला है तो कौनसे गतिवाला जीव होगा ? *श्रोता: तिर्यंच और मनुष्य।* तिर्यंच को पांचवें में क्षायिक सम्यक्त्व होगा ? पांचवें में क्षायिक मनुष्य ही होगा। अब प्रथमोपशमवाला तिर्यंच भी हो सकता है न, तिर्यंच को भी प्रथमोपशम के साथ पहले गुणस्थान से पांचवां गुणस्थान हो सकता है। तो दूसरा प्रश्न यह गर्भज होगा कि सम्मूर्च्छन होगा ? गर्भज ही होगा क्योंकि सम्मूर्च्छनों में वेदक सम्यक्त्व हो सकता है, प्रथमोपशम नहीं होगा। वेदक रहित है तो नीचे १ नहीं लिखा, डायरेक्ट २ लिखे- दो कषाय हैं न यहां पर, एक वेद लिखा, एक युगल लिखा और भय-जुगुप्सा लिखा। टोटल कितनी हुयी पहले कॉलम की ? २ + १ + २ + २ = ७। ७, ६, ६ और ५। पहले पृष्ठ ४४९ पर देखे थे वे वेदक सहितवाले के ? ८, ७, ७ और ६। हम इनके टोटल देखेंगे ८ का भी है, ७ का भी है, ६ का भी है और ५ का भी है।

अब हम छठे गुणस्थान की बात देखेंगे। उसमें भी वेदक सहित और वेदक रहित हैं। ऐसे कहां-कहां होंगे वेदक सहित और वेदक रहित ? कौन-कौनसे गुणस्थानों में वेदक सहित और वेदक रहित बनेगा ? चौथे में, पांचवें में, छठे में, और सातवें में। *श्रोता: छठे में कैसे ?* छठे गुणस्थानवाले क्षायिक सम्यग्दृष्टि या औपशमिक सम्यग्दृष्टि होंगे की नहीं होंगे ? देखो ,औपशमिक सम्यक्त्व होता है, पहले से पहुंचता है सातवें में; परंतु जो उपशम का काल है उसमें हजारों बार छठे-सातवें में जाता-आता है और हर एक का काल अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त है। उपशम सम्यक्त्व का काल बहुत बड़ा है, है न ? उसमें हजारों बार छठा-सातवां, छठा-सातवां होता है। छठे गुणस्थान का काल एक अंतर्मुहूर्त, सातवें का काल भी अंतर्मुहूर्त और ऐसे अंतर्मुहूर्त हजारों बार। वहां हजारों बार लिखते हैं, परंतु उसकी संख्या बहुत बड़ी है हजारों से बहुत ज्यादा है। हम घर पर अल्प-बहुत्व अधिकार पढ़ रहे थे, उसमें लिखा है उपशमश्रेणी का चढ़कर उतरने का पूरा काल बहुत छोटा - अल्पकाल है और उसमें भी हजारों बार, हजारों बार इतने अंतर्मुहूर्त होते हैं। जहां हजारों कहा है वहां कोड़ाकोड़ी समझना ऐसा स्वयं कहते हैं और ऐसे भी बहुत बार होते हैं; हजारों कोड़ाकोड़ी, संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी।

हम छठे की बात देखेंगे- छठे गुणस्थान में कौनसा कषाय बाकी है ? संज्वलन ही बाकी है। उदय में या तो क्रोध का उदय होगा या मान का या माया का या लोभ का- एक जीव की अपेक्षा एक काल में एक किसी कषाय का उदय होता है। वेदक सम्यग्दृष्टि है, छठा गुणस्थान है, नीचे १ लिखा उसका अर्थ क्या है ? सम्यक् प्रकृति। उसके ऊपर फिर १-१-१-१ लिखा उसका अर्थ क्या है ? संज्वलन क्रोध, मान, माया या लोभ। उसके ऊपर १-१-१ लिखा उसका अर्थ होता है वेद, उसके ऊपर २-२ का अर्थ होता है कोई एक युगल और उसके ऊपर २ यानी भय और जुगुप्सा दोनों का उदय है। इसकी टोटल संख्या कितनी हुयी? ७। आगे अकेले भय को लेंगे तो ६ हो जायेगी, अकेले जुगुप्सा को लेंगे तो भी ६ है और दोनों को नहीं लेंगे तो ५ हो जायेगी। यहां कैसे गिनेंगे हम ? ७, ६, ६, और ५। अब ४५२ पृष्ठ पर वेदक रहित प्रमत्त कूट। वहां सम्यक् प्रकृति का उदय ही नहीं है, डायरेक्ट १ संज्वलन को ले लिया। फिर १ वेद को लेना, एक युगल को लेना और भय-जुगुप्सा दोनों को लेंगे तो चार और दो ६ ही हो जायेंगे। तो ६, ५, ५ और ४। हम इसकी टोटल गिनेंगे तो कैसे होगा ? ७, ६, ५ और ४। चौथे में,

पांचवें में, छठे में और सातवें में, हम यहां के वेदक रहितवाले और वेदक सहितवाले चार और चार ऐसे आठ स्थानों का विचार करेंगे कि कितने का उदय हो सकता है।

अब अप्रमत्त में भी ऐसी ही बात है। अप्रमत्त में भी वे ही स्थान हैं, वैसे ही हैं जैसे प्रमत्त में थे। बंध में प्रमत्त-अप्रमत्त में वह २-२वाला युगल का बंध, हास्य-रति का बंध चल रहा था और शोक-अरति का रुक गया था। उदय में ऐसा कुछ नहीं है। उदय दोनों युगल का अभी भी चल रहा है। छठे में भी था और सातवें में भी वह युगल का डिफरन्स था। जैसे वेदक प्रमत्त के देखे, पृष्ठ ४४९ पर वेदक अप्रमत्त के वैसे के वैसे हैं। उसकी भी टोटल कितनी होती है ? ७, ६, ६ और ५। अब ४५२ पृष्ठ, वेदक रहित अप्रमत्त में पहले कॉलम में कितने हैं ? ६, दूसरे में ५, तीसरे में ५, चौथे में ४। ४वाला जीव सातवें गुणस्थानवाला कौनसा सम्यग्दृष्टि है ? क्षायिक और औपशमिक दोनों हो सकते हैं, उनके यह ४वाला उदयस्थान हो सकता है। वेदक सहित और रहितवाले ४-४ स्थान है। चौथे, पांचवें, छठे और सातवें गुणस्थान में वेदक सहित और वेदक रहित कूट देखे उनकी अपेक्षा अलग-अलग उदयस्थान होते हैं उसकी बात हमने देखी।

अब आठवां गुणस्थान यानी अपूर्वकरण के कूट देख लेते हैं। अपूर्वकरण में भी ४ बताये। अपूर्वकरण में सम्यक् प्रकृति का उदय होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* क्यों नहीं होगा ? हां यह श्रेणी चढ़ने का गुणस्थान हैं। श्रेणी कौनसे सम्यक्त्व के साथ चढ़ी जाती है ? उपशमश्रेणी, हां, द्वितीयोपशम या क्षायिक - उसमें भी वह उदय से मतलब रखते हैं। मोहनीय के कौनसी प्रकृतियों का उदय हो सकता है उसकी बात चल रही है। अपूर्वकरणवाले को १-१-१-१ लिखा है उसका अर्थ क्या है ? संज्वलन क्रोध, मान, माया या लोभ। उसके ऊपर १- १-१ यानी वेद का उदय हैं। एक युगल, आठवां गुणस्थान है तो अभी ६ नोकषायों का उदय चल रहा है इसलिये २-२ लिखे और भय-जुगुप्सा को भी लिखा। पहले कॉलम की टोटल कितनी होती है ? ६, दूसरे में ५, तीसरे में ५ और चौथे में ४। हमने सातवें गुणस्थान में वेदक रहितवाले में कितना देखा था ? ६, ५, ५, ४ और आठवें में भी ६, ५, ५, ४; हो सकता है न ! परंतु सातवें में क्षायिकवाला था और प्रथमोपशमवाला हो सकता था, आठवें में हमने लिया है यह कौनसा होगा ? हां द्वितीयोपशमवाला होगा या क्षायिकवाला भी हो सकता है।

अब हम अनिवृत्तिकरण में आते हैं। अपूर्वकरण में कितने का उदय था ? १

कषाय, १ वेद, हास्य-रति या शोक-अरति का उदय था और भय-जुगुप्सा में से दोनों का या एक-एक का उदय था या दोनों का अनुदय था। अनिवृत्तिकरणवाले नौवें गुणस्थान में अब प्रवेश करता है; आठवें में मोहनीय के किसके उदय की व्युच्छित्ति हुयी ? हास्य, रति, अरति, शोक, भय, जुगुप्सा, सभी छह नोकषाय सब चले गये; छह नोकषायों के उदय की व्युच्छित्ति हुयी। इसलिये नौवें में आने पर किस-किसका उदय है ? संज्वलन क्रोध, मान, माया या लोभ इसलिये १-१-१-१ चार बार लिखा। पहले भाग में वेद का उदय है; एक वेद है और कोई एक कषाय है यानी दो का ही उदय है। दूसरे भाग में जाने पर वेद का उदय मिट गया, अकेले किसी एक कषाय का- क्रोध का, मान का, माया का या लोभ का उदय चल रहा है इसलिये मात्र एक, परंतु वह चार में से एक है। देखो, चारों कॉलम में द्वितीय भाग, तृतीय भाग, चतुर्थ भाग और पंचम भाग, उदय १-१ ही प्रकृति का है; डिफरन्स क्या है ? दूसरे भाग में चार में से एक का है- क्रोध या मान या माया या लोभ। तीसरे भाग में क्रोध का उदय नहीं होगा; मान, माया या लोभ का होगा। चतुर्थ भाग में माया या लोभ में से किसी एक का उदय होगा और पांचवें भाग में मात्र लोभ का उदय है। नौवें गुणस्थान के अंत में बादरलोभ का उदय है।

सूक्ष्मसाम्पराय में क्या लिखा है ? १ लिखा है। मोहनीय का किसका उदय चल रहा है ? मात्र सूक्ष्मलोभ का, संज्वलन लोभ कहो या सूक्ष्मलोभ कहो। एक का ही वहां उदय है। मोहनीय के कूट दसवें तक ही बनाये हैं, क्यों ? उसका उदय दसवें तक ही है। उपशमश्रेणी में, ग्यारहवें गुणस्थान में सत्ता में होगी हो, पर अभी सारा उपशमित है और क्षपकश्रेणीवाले ने क्षय कर दिया है तो उसकी सत्ता का वहां कोई सवाल नहीं है। इसतरह से हमने कूटाकार की रचना की थी इसलिये इसको उदय कूट कहे थे। अभी हमने उसमें कोई १० का स्थान देखा, कोई ९ का देखा, कोई ८ का देखा, कल अलग पद्धति से टेबल बनाकर उसकी थोड़ी चर्चा करेंगे। हमने मोहनीय के बंधस्थान देखे, देखे न ! २२वाला, २१वाला, १७वाला, १३वाला, ९वाला, ५वाला, ४वाला, ३वाला, २वाला, १वाला। उदय के स्थान कौन-कौनसे देखे ? १०, ९, ८, ७, ६ ५, ४, २ और १। कल हम मोहनीय के सत्त्वस्थान देखेंगे। सत्ता कहां कितनी होती है उसकी बात हम कल करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४३. मोहनीय के उदयस्थान और भंग

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है, उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है, उसीका हिन्दी अनुवाद हम पढ़ रहे हैं। अभी तक हमने सभी कर्मों की अपेक्षा गुणस्थानों में बंध की व्युच्छित्ति देखी, उदय की व्युच्छित्ति देखी, सत्त्व की व्युच्छित्ति देखी। उसीके साथ बंध-अबंध, उदय-अनुदय, सत्त्व-असत्त्व की बातें देखी। हमने अनेक जीवों की अपेक्षा, जिसको शास्त्र में नाना जीवों की अपेक्षा ऐसा कथन आता है, उसकी बात की।

एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियों का बंध पाया जायेगा उसको कहेंगे स्थान, बंध का स्थान। एक जीव को एक साथ में जितनी प्रकृतियों का उदय पाया जायेगा उसको कहेंगे उदय का स्थान। हम बंध के स्थान रिपीट कर रहे हैं- हमने देखा था ज्ञानावरण का ५ प्रकृतियों का एक ही बंधस्थान है, जो पहले गुणस्थान से दसवें गुणस्थान तक बंधता है। दर्शनावरण के कितने होते हैं ? ९वाला, ६वाला और ४वाला ऐसे दर्शनावरण के ३ स्थान पाये जाते हैं। मोहनीय के ? दस स्थान हैं, २२वाला, २१वाला, १७वाला, १३वाला, ९वाला, ५वाला, ४वाला, ३वाला, २वाला, १वाला ये दस बंधस्थान हैं। अंतराय के ? ५ प्रकृतिवाला एक स्थान। ये हो गये घातिकर्म के बंधस्थान। वेदनीय का ? १ का एक ही स्थान है; छठे तक साता या असाता में से ऑप्शनल कोई एक बंधेगी और बाद में मात्र साता का ही बंध होगा। ऐसे गोत्र में भी १ का एक ही स्थान है। आयु भी १ का एक ही स्थान होता है। नामकर्म में अलग-अलग स्थान देखे थे याद है ? आठ होते हैं। २३वाला है, २५वाला है, २६वाला है, २८वाला है, २९वाला है, ३०वाला है, ३१वाला है और १वाला है। वे कहां पर हैं उसकी बात आयेगी।

हमने केवल मोहनीय के उदय के स्थान देखे हैं, अलग-अलग कर्मों के उदय के स्थान नहीं देखे। देखना है ? देख लेते हैं। ज्ञानावरण की कितनी प्रकृतियों का ॲट अ टाइम उदय होता है ? ५। कहां से कहां तक ? *श्रोता: एक से दस तक।* दस नहीं, दसवें गुणस्थान तक बंध है, उदय बारहवें तक है। ज्ञानावरण का ५ प्रकृतियों का उदयस्थान पहले गुणस्थान से लेकर बारहवें गुणस्थान तक है। दर्शनावरण का देखते हैं, दर्शनावरण का पहले गुणस्थान में कितनी प्रकृतियों का उदयस्थान है ? *श्रोता: ९।*

यानी हम दिनभर-रातभर सोते ही रहते हैं ? ९ का उदयस्थान नहीं, ९ का बंधस्थान है। जागृत अवस्था में ४ का उदय है और निद्रा में ५ का उदय है। क्या कहा ? ४ का उदय हर समय चल रहा है- जागृत अवस्था में या निद्रा में; ये चार कौनसे ? चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण और केवलदर्शनावरण। इन चार का उदय हर समय चल रहा है, परंतु पांच प्रकार की निद्रा है न, पांचों निद्रा का उदय ॲट अ टाइम नहीं होगा, किसी एक निद्रा का होगा, वह भी कब ? नींद में। नींद में अलग-अलग टाइप की निद्रा तो अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में पलटती भी है। नींद में दर्शनावरण के ५ का उदय है और जागृत अवस्था में ४ का उदय है; वह पहले गुणस्थान में हो या छठे गुणस्थान में। यानी ४वाला स्थान और ५वाला स्थान। ये ४वाला और ५वाला कब तक चलेगा ? बारहवें गुणस्थान में हमने देखा निद्रा, प्रचला का उदय उपांत्य समय तक है, वहां तक ४वाला या ५वाला ऐसा भेद होगा। वहां ऐसा नहीं समझना वह जाकर सो जाते हो और फिर थोड़ी श्रेणी मांड़ी, फिर थोड़ा सोकर आये। श्रेणी का काल बहुत छोटा है, अत्यंत छोटा होता है, सेकंड का भी कुछ हिस्सा।

अंतराय का कितने का उदय चल रहा है ? ५ का उदय है। कब तक चलेगा ? बारहवें गुणस्थान तक चलेगा। अब वेदनीय की बात देखते हैं। वेदनीय का ॲट अ टाइम कितनी प्रकृतियों का उदय होगा ? १ का, साता का होगा या असाता का होगा। कौनसे गुणस्थान तक वासंतीबेन ? *श्रोता: तेरहवें तक।* चौदहवें तक। चौदहवें तक वेदनीय का उदय किसी एक का है न, हम एक का स्थान देख रहे हैं; कितने में से है उसकी बात नहीं है। उदय साता का कहो या असाता का कहो, चौदहवें तक है और एक समय में किसी एक ही प्रकृति का उदय रहेगा। पहले छठे तक की बात की थी, वह बंध की बात थी। मुझे पता है, बार-बार बंध और उदय में बहुत घोटाला होता है। यह वेदनीय की देखी। चार में से कितनी आयु का एक साथ उदय रहता है ? *श्रोता: १ ही आयु का।* १ जो भुज्यमान आयु है उसीका उदय होता है। आयु का उदय चौदहवें तक है। गोत्र में ? *श्रोता: दो में से एक।* वह १ का ही है, दो में से है। पांचवें तक या तो नीचगोत्र का या उच्चगोत्र का उदय है। छठे से चौदहवें तक उच्चगोत्र का ही उदय है। *श्रोता: उच्चगोत्र जो है शुभआयु से बंधा है या भाव से ?* जिस भाव से जो गति बंधती है वैसा गोत्र का बंध और उदय होता है। देव के उच्चगोत्र है। मनुष्यों में उच्चगोत्र भी है,

नीचगोत्र भी है। तिर्यंचों के नीचगोत्र है और नारकियों के भी नीचगोत्र है।

नामकर्म के उदयस्थान कुछ अलग-अलग है। नामकर्म के उदयस्थान हैं वे गुणस्थानों के अनुसार नहीं हैं, उनके अलग-अलग काल होते हैं। विग्रहगति में कुछ प्रकृतियों का उदय है, वहां पहुंचने पर कुछ, फिर एक-एक पर्याप्ति पूरी होती है तो अलग-अलग प्रकृतियों का उदय शुरू हो जाता है। जब नामकर्म के उदयस्थान देखेंगे तब विस्तार से चर्चा होगी। कल हमने मोहनीय के उदयस्थानों में उदय के कूट देखे थे; मिथ्यात्व गुणस्थान में एक जीव के एक काल में कितनी प्रकृतियों का उदय हो सकता है, उसकी बात थी। बंधने में मिथ्यात्व, सोलह कषाय, भय-जुगुप्सा ध्रुवबंधी हैं और उसके साथ कोई एक वेद और एक युगल, उन्नीस और तीन, २२ का हमने बंध देखा था। उदय में मिथ्यात्व गुणस्थान में एक मिथ्यात्व का उदय है ही है, परंतु सभी कषायों का नहीं होगा। क्रोध का होगा तो अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन चारों ही क्रोध का यहां उदय है। जब हम अनंतानुबंधी का उदय है कहते हैं तो उसके आगेवाले सभी का उदय रहता है। हमें ऐसी आदत पड़ गयी है क्योंकि द्रव्यानुयोग में ऐसा ही कथन होता है- जो मुख्य है उसका नाम कहेंगे। चौथे गुणस्थान में किसका उदय है ? तो हम कहेंगे अप्रत्याख्यानावरण का है। परंतु वहां अप्रत्याख्यानावरण भी है, प्रत्याख्यानावरण भी है और संज्वलन भी है।

श्रोता: यह चारों जो अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन ये एक साथ हैं कि अंदर सब अलग-अलग हैं ? चारों अलग-अलग हैं, उनके अपने परमाणु हैं, उनका अपना अनुभाग है, उसका उदय चलता है। परंतु जब मिथ्यादृष्टि के इन चारों का उदय है तो तीनों का अनुभाग, कौनसे तीन ? अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन भी ऐसे अनुभाग में उदय आते हैं कि उनका कार्य अनंतानुबंधी जैसा होता है। करणानुयोग में एक जगह ऐसा लिखा है कि पहले गुणस्थान में संज्वलन का भी उदय होगा, वह कैसा उदय है ? सर्वघाति का उदय है। संज्वलन प्रकृति देशघाति है परंतु उसमें सर्वघाति परमाणु भी हैं जिसको सर्वघाति स्पर्धक कहते हैं और देशघाति स्पर्धक भी हैं। छठे-सातवें गुणस्थानवाले को संज्वलन का उदय है वह देशघातिवाला उदय है और पहले गुणस्थान में संज्वलन का उदय है वह सर्वघाति का उदय है। पहले गुणस्थान में अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन कैसा काम कर रहे हैं ? अनंतानुबंधी जैसा काम कर रहे हैं। वहां कहते हैं कि चारों ही कषाय सम्यक्त्व

नहीं होने दे रही हैं, अकेला अनंतानुबंधी नहीं। नहीं तो हम कहेंगे हम पहले गुणस्थान में हैं, हमारा मंद कषाय है इसलिये हमारा संज्वलन का उदय है - ऐसा नहीं चलेगा।

मैं हमेशा उदाहरण देती हूं, क्लास में बहुत बच्चे उधम मचा रहे हैं, तोफान कर रहे हैं। गुजराती में तोफान कहते हैं न ! गड़बड़ी कर रहे हैं। हमें पता है उसमें कोई एक बच्चा ज्यादा शरारती है, उसको हम क्लासरूम के बाहर करेंगे तो बाकी बच्चे थोड़े शांत हो जाते हैं। ऐसे अनंतानुबंधी के साथ में उदय आनेवाले अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन भी अनंतानुबंधी जैसा कार्य कर रहे हैं। क्या कार्य कर रहे हैं ? सम्यक्त्व को नहीं होने दे रहे हैं क्योंकि उनमें अनुभाग के बहुत सारे अलग-अलग प्रकार हैं, अत्यंत तीव्र अनुभाग का वहां उदय चलता है। चौथा गुणस्थान प्राप्त किया तो अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन का थोड़ा मंद उदय होगा, फिर भी वे अणुव्रत नहीं होने देते, इसतरह से उनका कार्य है। परंतु हम नाम किसका लेते हैं ? उनमें से जो मुख्य है उस अप्रत्याख्यानावरण का नाम लेंगे।

यहां उदय की बात चल रही है, हमने उदय के कूट भी देखे थे। मिथ्यात्व गुणस्थान में एक मिथ्यात्व का उदय है, कषायों में से चारों ही कषाय चौकड़ी का या तो क्रोध का या मान का या माया का या लोभ का उदय रहता है। तीन वेद में से किसी एक वेद का उदय है। हास्य-रति या शोक-अरति में से एक युगल कहते हैं हम, वह जोड़ी-जोड़ी एकसाथ रहती है इसलिये उसका उदय है। उदय में एक विशेषता है, भय और जुगुप्सा के बारे में- एक ही जीव को एक समय में दोनों का उदय है, किसी समय अकेले भय का उदय है, किसी समय अकेले जुगुप्सा का है और किसी समय दोनों का ही नहीं है। अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में यह पलटता रहता है। इसलिये भय-जुगुप्सा की अपेक्षा उदय के अलग-अलग चार कूट हमने देखे थे। जैसे पहले गुणस्थान में हमने १०वाला एक देखा, ९वाला एक देखा, ९वाला एक देखा, ८वाला एक देखा, याद है न ! मिथ्यात्व गुणस्थान में ये चार कूट किये १० , ९, ९ और ८वाले।

मिथ्यात्व गुणस्थान में ही और एक विशेषता होती है कि जीव ने सम्यग्दर्शन प्राप्त करने पर अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है, ऐसा जीव मिथ्यात्व में गिर जाता है तो वहां पर फिर दुबारा अनंतानुबंधी का बंध शुरू करता है। पहले सत्ता में से नष्ट हुआ था, अब फिर बंध होगा, परंतु आवली काल के पहले उदय शुरू नहीं हो सकता। यह

ऐसी अवस्था है कि मिथ्यात्व का उदय चल रहा है, अनंतानुबंधी का बंध भी है और सत्ता में भी है फिर भी आवली तक उदय नहीं है। तो उदय में से एक प्रकृति हम कम करेंगे। तीन-तीन कषाय चौकड़ी की बात उसमें से तीन क्रोध, तीन मान, तीन माया या तीन लोभ लेंगे। तो उदय कैसे होंगे ? ९, ८, ८, ७। वहां इसके भी चार कूट होंगे।

देखो, ४४७ पृष्ठ पर गाथा ४७७ की टीका में लिखते हैं- **एक जीव के एक काल में भय ही का उदय हो, अथवा जुगुप्सा ही का उदय हो अथवा दोनों का उदय हो अथवा दोनों का उदय न हो इसलिये इनकी अपेक्षा चार कूट करना।** मेरा प्रश्न है ऐसे चार-चार कूट कौनसे गुणस्थान तक रहेंगे ? हमें ऐसा सोचना है भय और जुगुप्सा का उदय कहां तक है ? हमने देखा है छह नोकषाय की उदयव्युच्छित्ति आठवें गुणस्थान में होती है, भय-जुगुप्सा का उदय आठवें तक है तो आठवें गुणस्थान तक ऐसे चार-चार कूट होंगे। मिथ्यात्व में अनंतानुबंधी सहित और रहित है, इसलिये सहितवाले के चार कूट, रहितवाले के चार कूट। सासादन में सहित रहितवाली कुछ बात नहीं, तो सासादन में चार ही कूट होंगे। मिश्र गुणस्थान में ? वहां भी चार कूट होंगे। अभी चौथे, पांचवें, छठे और सातवें में वेदक सहितवाले हैं और वेदक रहित यानी औपशमिक सम्यग्दृष्टि या क्षायिक सम्यग्दृष्टि हैं, उनकी अपेक्षा वेदक सहितवाले के चार कूट हैं और वेदक रहितवाले के चार कूट हैं। चौथे में चार और चार- आठ कूट होंगे। पांचवें में भी चार और चार होंगे, छठे में भी और सातवें में भी। आठवें गुणस्थान में कितने ? चार ही कूट होंगे। तो आठवें गुणस्थान तक चार-चार कूट होंगे।

अभी ४४७ पृष्ठ पर पहले गुणस्थानवाला अनंतानुबंधी का कूट आपके सामने है, इसमें भंग का विचार कैसे करना ? भंग किसको कहते हैं ? प्रकृति बदलने से। जहां ऑप्शनल लिखा है ४-४-४-४ यानी क्रोध या मान या माया या लोभ। कितने का ऑप्शन है ? चार का, यह ४ लेना। उसकी ऊपर की लाइन में १-१-१ यानी वेदों में तीन वेदों का ऑप्शन है। उसके ऊपर दो युगल है। यहां भंग कैसे होंगे ? ४×३×२=२४ तो २४ भंग एक-एक कूट में होंगे। हम ऐसा सोचते हैं- अनंतानुबंधी आदि ४ क्रोध का उदय है, १ पुरुषवेद का उदय है, फिर आगे चलकर हास्य-रति का उदय है और भय-जुगुप्सा दोनों का उदय है ऐसा भी कह सकते हैं। या वह क्रोध को कायम रखना, वेद पलटना फिर वेद पलटकर फिर ऊपर का हास्य-रति का कायम रखना, इसतरह से उनके कॉम्बिनेशन्स अगर करेंगे तो २४ कॉम्बिनेशन्स होते हैं। क्रोध के साथ अलग,

मान के, माया के, लोभ के साथ अलग। सबके मिलकर यानी चार कषाय, तीन वेद और दो युगल इनको आपस में गुणा करना तो डायरेक्ट हमें २४ भंग मिल जाते हैं।

हमने कूट की बात कल विस्तार से देख ली थी। मिथ्यात्व में हमने दो प्रकार के कूट किये थे, अनंतानुबंधी सहित और अनंतानुबंधी रहित। देखो पृष्ठ ४५१ पर गाथा ४७८ की टीका- **अनंतानुबंधी की जिसके विसंयोजना हुयी**, विसंयोजना का अर्थ ख्याल है न ? चारों ही गतियों में और चौथे से लेकर सातवें गुणस्थान तक किसी भी जीव के तीन करण परिणामों द्वारा; वहां विशुद्धि बढ़ती है उसके द्वारा; अनंतानुबंधी की जो सत्ता है वह एक अंतर्मुहूर्त में पूरी नष्ट हो जाती है इसको कहते हैं अनंतानुबंधी की विसंयोजना करना। **ऐसा वेदक सम्यग्दृष्टि जीव**, वेदक क्यों कहा ? *श्रोता: सम्यक् प्रकृति का उदय था।* सम्यक् प्रकृति का उदय था और अनंतानुबंधी नहीं थी, अब यह मिथ्यात्व में आया है। **वेदक सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्व कर्म के उदय से मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होता है, उसके आवली काल तक अनंतानुबंधी का उदय नहीं है, क्योंकि मिथ्यात्व को प्राप्त होकर पहले समय में जो समयप्रबद्ध बांधता है**; एक समय में बंधे हुये जो कर्म परमाणु हैं उनको समयप्रबद्ध कहते हैं। प्रबद्ध - बद्ध यानी बंधे हुये। **उसका एक आवली काल तक अपकर्षण द्वारा उदयावली में प्राप्त करने का सामर्थ्य नहीं है।** क्या कहना चाहते हैं, इससे क्या सिद्ध होता है ?

देखो उस समय अनंतानुबंधी की विसंयोजना करके मिथ्यात्व में आया है, अब यहां अनंतानुबंधी का बंध किया, कितना किया होगा ? एकदम तो ३० कोड़ाकोड़ी का, ४० कोड़ाकोड़ी का नहीं होगा। मान लेते हैं अंत:कोड़ाकोड़ी सागर का किया क्योंकि अभी-अभी मिथ्यात्व में आया है न, उसके बहुत ज्यादा संक्लेश नहीं है। आबाधा भी बहुत नहीं होगी। फिर भी अपकर्षण एक आवली के बाद होगा, आबाधाकाल में कोई निषेक रचना नहीं थी परंतु एक आवली के बाद उदीरणा होगी। अपकर्षण द्वारा उदीरणा हुयी और उन परमाणु का उदय भी शुरू होगा। उदीरणा की बात पहले हमने सीखी थी न ? कोई भी कर्म बंधता है, बंधते समय उसमें आबाधा पड़ती है। आबाधा में कोई निषेक रचना नहीं है फिर भी एक आवली के बाद ऊपर के सभी निषेकों में से थोड़े-थोड़े परमाणु नीचे आते हैं और उनका उदय शुरू होता है। उदीरणा के द्वारा उदय शुरू हो जाता है, यह नियम प्रत्येक कर्म में है। उदीरणा

उसीकी होगी जिसका उदय हो रहा है। नहीं तो आप कहेंगे जितने बंधते हैं उन सभी की उदीरणा होती है ? नहीं, जिसका उदय है उसीकी उदीरणा होती है। यहां क्या कहा ? आवली काल तक उसका उदय नहीं है, आवली के बाद उसका उदय शुरू हो जाता है। आयु में बंधते ही अपकर्षण नहीं होगा, क्योंकि उसका उदय नहीं है। बंधी हुयी आयु का उदय इस भव के मरण के बाद में होगा। परंतु जबसे उदय शुरू होगा, आयु कर्म में भी हर समय उदीरणा चलती है, मरण के एक आवली पूर्व तक।

अब हम आगे बढ़ेंगे। वहां आवली तक अनंतानुबंधी का उदय नहीं है, फिर भी वहां बंध चल रहा है। चार-चार लिये थे न ! चार क्रोध या चार मान या चार माया या चार लोभ; एक का उदय नहीं है तो उसके बदले हम क्या कहेंगे ? तीन क्रोध या तीन मान या तीन माया या तीन लोभ। **पहले अनंतानुबंधी थी, उसकी विसंयोजना की इसलिये उस जीव के आवली प्रमाण काल तक अनंतानुबंधी का उदय नहीं है, उसकी अपेक्षा मिथ्यात्व में अनंतानुबंधी रहित चार कूट और जानना।** प्रश्न है ?

श्रोता: अनंतानुबंधी की उद्वेलना हो सकती है कि नहीं ? अच्छा होता न उद्वेलना हो जाती ! मात्र १३ प्रकृतियों की ही उद्वेलना होती है। अनंतानुबंधी की या अन्य किसी भी प्रकृति की उद्वेलना नहीं होती। याद है कौनसी १३ प्रकृति हैं ? आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग, सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक् प्रकृति, फिर देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग, उच्चगोत्र, मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन १३ प्रकृतियों की उद्वेलना होती है। उद्वेलना होती है यानी मिथ्यात्व गुणस्थान में आने पर वे नष्ट हो जाती हैं। यहां तो उलटा अनंतानुबंधी मिथ्यात्व आने पर नया बंधता है। सम्यग्दृष्टि के विसंयोजना से अनंतानुबंधी का नाश होता है, उसको विसंयोजना स्पेशल नाम दिया है। क्यों ? यह रिव्हर्सिबल प्रोसेस है। विसंयोजना के बाद दर्शनमोहनीय की क्षपणा कर दे तो अनंतानुबंधी कायम के लिये नष्ट होता है। परंतु अनंतानुबंधी की विसंयोजना करके जीव रुक गया है, सामान्य सम्यग्दृष्टि रहा तो अगर वह वापस मिथ्यात्व में आता है तो फिर अनंतानुबंधी की सत्ता शुरू हो जायेगी। यदि सम्यग्दृष्टि ही रहा तो विसंयोजना के बाद उसके अनंतानुबंधी का सत्त्व रहता ही नहीं। बस २४ की सत्तावाला होकर रह जाता है।

श्रोता: सम्यग्दृष्टि जीव है, वह बाद में अगर मिथ्यात्व में आ गया तो अनंतानुबंधी

नवीन शुरू हो जाता है ? उसका नवीन बंध दुबारा शुरू हो जाता है। नया बंध फिर दुबारा होता है और उसमें संक्रमण; अभी नया बंध हो रहा है तो अन्य कषाय भी उसमें संक्रमित होते रहते हैं। संक्रमण का प्रकरण हम बाद में देखेंगे क्योंकि अभी ॲट अ टाइम बंध, उदय और सत्त्व ही पच नहीं रहा है, आगे की अन्य बातें गौण कर देंगे।

हमने दो-दो प्रकार से चार कूट क्यों किये उसका विस्तार करके स्पष्ट करके बताया है। हमने चौथे गुणस्थान में भी सम्यक् प्रकृति के उदय सहित और सम्यक् प्रकृति के उदय रहित यानी उनको वेदक सहित और वेदक रहित कहा था, ऐसे चार-चार कूट किये थे। हम ४५२ पृष्ठ पर, ४७९ गाथा की टीका देखते हैं- **उन पश्चात् कहे हुये कूटों में**, पहले तो पहले से लेकर दसवें तक के कूट बताये थे और बाद में एक्स्ट्रॉ जहां थे; कहां-कहां एक्स्ट्रॉ थे ? मिथ्यात्व गुणस्थान में चार एक्स्ट्रॉ थे, चौथे, पांचवें, छठे, सातवें गुणस्थान में चार एक्स्ट्रॉ थे। **पहले कहे हुये कूट मिलानेपर मिथ्यात्व में** टोटल कूट कितने हुये ? **आठ**, **सासादन-मिश्र में चार-चार**, **असंयतादि चार में** यानी चौथे, पांचवें, छठे, सातवें गुणस्थान में **आठ-आठ**, **अपूर्वकरण में चार, अनिवृत्तिकरण में दो और सूक्ष्मसाम्पराय में एक स्थान जानना।**

देखो, अनिवृत्तिकरण में दो स्थान क्यों कहे ? वहां दो प्रकृतियों का उदय है या एक प्रकृति का उदय है; उसमें केवल ऑप्शन में फर्क है। जब नौवें गुणस्थान में प्रवेश हुआ तो एक वेद का और एक कषाय का उदय था। बाद में क्या रहा ? एक कषाय का ही उदय रहा। परंतु शुरुआत में चार में से एक था, फिर तीन में से एक हुआ, फिर दो में से एक हुआ, फिर अकेला एक का एक रहा। कौनसा एक रहा आखिर में ? लोभ। यहां एक प्रश्न था *बादरलोभ और सूक्ष्मलोभ में क्या अंतर है ?* यहां नौवें गुणस्थान में जो लोभ रहा उसको क्या कहेंगे ? बादरलोभ और दसवें में ? सूक्ष्मलोभ। यानी क्या होता है उसमें ? देखो, पहले गुणस्थान से लेकर किसी भी कषाय का जो बंध होता है तो हम उसका अनुभाग नापते हैं। अनुभाग समझते हैं ? फल देने की शक्ति। किसी भी पर्याय की शक्ति नापना है तो अविभागप्रतिच्छेदों में नापते हैं; वह शक्ति का अंश है, यूनिट है। जैसे आपने कोई मशीनरी देखी, उसकी कितनी शक्ति है ? हॉर्स पॉवर में नापेंगे या अन्य कोई है तो उसके कोई यूनिट्स बतायेंगे।

यहां कर्मों की फल देने की शक्ति नापनी है तो अविभागप्रतिच्छेदों में नापेंगे।

एक-एक सिंगल परमाणु में अपनी-अपनी अविभागप्रतिच्छेदरूप शक्ति है। अविभागप्रतिच्छेद का जो समूह है यानी जो शक्ति के टोटल अंश हैं, नंबर ऑफ शक्ति के अंश, यूनिट्स हैं उसको वर्ग कहते हैं। यानी एक कर्म परमाणु को एक वर्ग कहा। अब मान लेते हैं मिनिमम अनुभाग १०० है, हम मानने के लिये लेते हैं, हैं तो अनंत। आपको समझाने के लिये हम १०० अनुभागवाला, मिनिमम अनुभागवाला कोई परमाणु लेते हैं। ऐसे १००-१००वाले टोटल कितने परमाणु हैं उस जीव के साथ ? उनका एक ग्रुप बनायेंगे; उन सभी समान अनुभागवाले परमाणु हैं उनको क्या कहेंगे ? वर्गणा। वर्गों के समूह को वर्गणा कहेंगे। वर्ग किसको कहा था ? एक-एक कर्म परमाणु को वर्ग कहा था। क्यों ? उसमें अपनी-अपनी अविभागप्रतिच्छेदरूप शक्ति है तो कर्म परमाणु को वर्ग कहा। समान अविभागवाले कर्म परमाणु यानी समान वर्ग जो हैं उनके समूह को वर्गणा कहा।

अभी हमने १०० मान लिया था; तो अन्य कितने ही परमाणुओं में १०१ शक्ति है। १०१वाला ग्रुप अलग हुआ, पहला ग्रुप हुआ १००वाला उसको हमने पहली वर्गणा कहा। दूसरा ग्रुप है १०१वाला उसको हमने दूसरी वर्गणा कहा, १०२वाला और एक ग्रुप है उसको तीसरी वर्गणा कहा, चौथी वर्गणा, पांचवी वर्गणा। अभी यहां हमने १०० से लिये हैं, मान लेते हैं हमने ऐसे १२० तक अलग-अलग वर्गणायें देखी। उसके बाद और ऊपर की कोई वर्गणा ऐसी है कि जिसमें डायरेक्ट २०० है तो वहां से दूसरा ग्रुप चालू करेंगे। २००, २०१, २०२, २०३...., २२० तक हम गिनेंगे। पहला जो ग्रुप है, वर्गणाओं का ग्रुप, उसको हम स्पर्धक कहेंगे। दूसरा वर्गणाओं का ग्रुप उसको दूसरा स्पर्धक, तीसरा स्पर्धक, चौथा स्पर्धक, ऐसे स्पर्धक भी अनंत होते हैं। कर्मों का जो अनुभाग है वह स्पर्धकों में ही बताने की पद्धति है। तो ये स्पर्धक हैं वे क्या बताते हैं ? अनुभाग बताते हैं। मिनिमम अनुभाग से लेकर मॅक्झिमम अनुभाग तक स्पर्धक सत्ता में पाये जाते हैं। वे सर्वत्र हैं, प्रत्येक निषेक में ये पाये जाते हैं। इनको कहेंगे बादर। बादर कषाय सभी में - क्रोध में, मान में, माया में, लोभ में, हर एक में हैं। इनको बादर कहेंगे क्योंकि मिनिमम स्पर्धक; जो हमने १०० मान लिया था; उससे नीचेवाला कोई एक भी परमाणु नहीं था कि उसका अनुभाग इतना हीन है।

जब जीव नौवें गुणस्थान में आता है तो इन स्पर्धकों के अनुभाग अत्यंत हीन यानी अनंतवें भाग, अनंतवें भाग होते चले जाते हैं। मिनिममवाला जो स्पर्धक है उससे

भी नीचे अत्यंत हीन अनुभागवाले नये स्पर्धक बनते हैं जो पहले कभी नहीं थे उनको अपूर्व स्पर्धक कहते हैं। और आगे विशुद्धि इतनी बढ़ती है कि इन सारे परमाणुओं का अनुभाग और हीन होता है, उनको कृष्टि कहते हैं। कृष्टि का अनुभाग और भी अत्यंत हीन हो जाता है उसको सूक्ष्मकृष्टि कहते हैं, बादरकृष्टि और सूक्ष्मकृष्टि। कृष्टि का अर्थ क्या है ? वर्गणा-वर्गणा प्रति एक-एक अविभागप्रतिच्छेद का डिफरन्स था १००, १०१, १०२, १०३। परंतु कृष्टि-कृष्टि प्रति अनंत गुणा का डिफरन्स है। नीचे की कृष्टि से ऊपर की एक कृष्टि उससे अनंत गुणा अविभागप्रतिच्छेदवाली है। नीचे से ऊपर देखेंगे तो अनुभाग ज्यादा है। ऊपर से नीचे की ओर देखेंगे तो यहां की कृष्टि में जितना अनुभाग है उसके अनंतवें भाग, उसके नीचे की कृष्टि में होता है। सहजरूप से जीव के विशुद्ध परिणामों द्वारा कर्म परमाणुओं की शक्ति अत्यंत हीन-हीन, अनंतवें-अनंतवें भाग होती जाती है उसको कहेंगे सूक्ष्म कषाय यानी सूक्ष्मकृष्टि, सूक्ष्मलोभ।

क्षपकश्रेणी में अन्य कषायों में भी ऐसी सूक्ष्मकृष्टि होती हैं परंतु पहले ही उनका क्षय हो जाता है। मात्र लोभ जो लास्ट में जानेवाला है, उसका कृष्टि का उदय यानी अत्यंत मंद लोभ का उदय दसवें गुणस्थान में पाया जाता है और वहां लास्ट में कृष्टिरूप से उसको क्षय कर दिया जाता है। इसको कहते हैं बादर और सूक्ष्म। *श्रोता: यह सब दसवें गुणस्थान के बाद ही होता है कि मिथ्यादृष्टि में भी होता है ?* मिथ्यादृष्टि में ऐसा कभी नहीं हो सकता। नौवें गुणस्थान में ही यह सूक्ष्मकृष्टि करने का कार्य होता है, वह भी क्षपकश्रेणी में ही सभी कषायों में होगा, उपशमश्रेणी में तो मात्र लोभ में ही होगा। वह तो बहुत विस्तार है जो क्षपणासार-लब्धिसार का विषय है इसलिये हम उस पर यहां अधिक चर्चा नहीं करेंगे।

प्रश्न: विसंयोजना और क्षय में क्या फर्क है ? विसंयोजना है उसमें भी अन्य प्रकृतिरूप होता है और क्षय में भी अन्य प्रकृतिरूप होकर क्षय होता है। क्षय का प्रोसेस हमें मालूम नहीं है, संज्वलनक्रोध का क्षय होता है तो सभी संज्वलनक्रोध के परमाणु संज्वलनमानरूप टर्न हो जाते हैं; मान का क्षय होता है तो मान के सारे ही मायारूप होते हैं; माया का क्षय होता है तो माया के सारे लोभरूप होते हैं; पूरा मोहनीय का द्रव्य लोभरूप में उपस्थित रहता है। फिर उसके जो कुछ सूक्ष्मकृष्टि वगैरह बात बनती है, फिर वह स्व रूप से उदय में आकर खिर जाता है। अब उदय में

आकर यानी अधिक मात्रा में उसकी उदीरणा होगी, अपकर्षण होगा। किसतरह से क्षय होता है तो क्षपणासार में पढ़ेंगे न आगे ? हां, अगले साल ! लब्धिसार-क्षपणासार ग्रंथ तैयार है अभी ! दो-तीन महीने में आपके हाथ में आ जायेगा !

विसंयोजना में भी अन्य प्रकृतिरूप यानी अनंतानुबंधी वह अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन और ५ नोकषायरूप परिणमित हो जाता है, संक्रमित हो जाता है। उसको क्षय इसलिये नहीं कहते क्योंकि वह पर्मनन्ट नहीं है, क्षय का अर्थ होता है सत्ता में से कायम के लिये नाश होना। चारित्रमोहनीय में मात्र अनंतानुबंधी की ही विसंयोजना होती है क्योंकि एक बार विसंयोजना होने पर उसके पश्चात् परिणामों के वश जीव मिथ्यात्व में भी आ सकता है; दुबारा अनंतानुबंधी का बंध होता है और पहले जो अन्य कषाय में संक्रमित हुये थे अब वापस उलटा संक्रमण करके अनंतानुबंधी में टर्न हो जाते हैं, उसका संक्रमण हो जाता है। *श्रोता: विसंयोजना मात्र अनंतानुबंधी में ही होती है ?* मात्र अनंतानुबंधी में ही विसंयोजना होती है। उसका वापस बंध होने पर संयोजना कहते हैं या संयुक्त होना ऐसा भी कहते हैं। यह अनंतानुबंधी की विशेषता है, अन्य किसी भी कर्म में ऐसी बातें नहीं होती इसलिये अलग से नाम देकर इसका कथन आता है। यह चारों गति में होती है, परंतु क्षपणा का कार्य- दर्शनमोहनीय की क्षपणा हो या चारित्रमोहनीय की क्षपणा हो वह मनुष्यगति में ही होती है, कर्मभूमि के मनुष्य में ही होती है। दर्शनमोहनीय की क्षपणा का प्रारंभ मनुष्य में ही होता है। क्षपणा पूर्ण होने में अंतर्मुहूर्त बाकी रहता है तो मरकर कृतकृत्य वेदकसम्यक्त्व के साथ अन्य गति में जा सकता है।

हम पढ़ेंगे ४५३ पृष्ठ पर गाथा ४८० की टीका- **मिथ्यात्व में दस प्रकृतिरूप आदि चार उदयस्थान हैं, वे** कौन कौनसे हैं ? **दस प्रकृतिरूप, नौ प्रकृतिरूप, आठ प्रकृतिरूप और सात प्रकृतिरूप हैं।** हमने १०, ९, ९, ८ देखे। मिथ्यात्व में दस प्रकृतिरूप आदि, आदि यानी दस, नौ वगैरह चार उदयस्थान हैं। यहां उदयस्थान कितने हैं तो चार बताये। कूट कितने बनाये थे ? आठ, सहितवाले चार और रहितवाले चार; टोटल आठ कूटों में रिपीटेड हैं उनको एक बार गिना। नौ-नौ था या आठ-आठ था उसको हमने एक बार गिना तो टोटल स्थान कितने हैं ? १० का एक, ९ का, ८ का और ७ का। चार उदयस्थान हैं- १० प्रकृतिरूप, ९ प्रकृतिरूप, ८ प्रकृतिरूप और ७ प्रकृतिरूप। **सासादन और मिश्र में ९ आदि तीन-तीन स्थान हैं।** सासादन के तीन

और मिश्र के तीन। कूट चार-चार हैं, परंतु स्थान कौनसे हैं ? ९वाला, ८वाला और ७वाला। **असंयत में नौ आदि चार स्थान हैं।** चौथे गुणस्थान में कौन-कौनसे हैं ? **नौ, आठ, सात और छह प्रकृतिरूप हैं**, देशसंयत में ? क्या चार ? *श्रोता: इसमें तो चार हैं। श्रोता: आठ।* जो दो बार है उसको एक ही बार गिनना। ८वाला है कि नहीं है ? ९वाला है, ८वाला है, ७वाला है। पहले ही हमने बताया जो रिपीटेड है उसको एक ही बार गिनना है। असंयत में हमने यह भी बताया कि आठ कूट हैं परंतु उसमें स्थान कितने हैं ? असंयत में ९वाला है, ८वाला है, ७वाला है और ६वाला है। **देशसंयत में आठ आदि चार स्थान हैं, वे आठ, सात, छह और पांच प्रकृतिरूप हैं। प्रमत्त और अप्रमत्त में सात आदि चार स्थान हैं, वे सात, छह, पांच और चार प्रकृतिरूप हैं।**

मोहनीय के उदयस्थान - गुणस्थानों में

मिथ्यात्व	१०	९	९	८	९	८	८	७
सासादन	९	८	८	७				
मिश्र	९	८	८	७				
असंयत	९	८	८	७	८	७	७	६
देशसंयत	८	७	७	६	७	६	६	५
प्रमत्तसंयत	७	६	६	५	६	५	५	४
अप्रमत्तसंयत	७	६	६	५	६	५	५	४
अपूर्वकरण	६	५	५	४				
अनिवृत्तिकरण	① २	② १	③ १	④ १	⑤ १	सूक्ष्मसाम्पराय १		

देखो, हर जगह है कहीं पर भी ले लो। यहां मिथ्यात्व में भले आठ कूट हैं, हमने १०वाला लिया, ९वाला लिया, ८वाला लिया और ७वाला लिया। यहां सासादन और मिश्र में भी चार कूट हैं परंतु ९वाला है, ८वाला है, ७वाला है। यह आठ कितनी बार आता है उसको बाद में गिनेंगे। हम देशसंयत गुणस्थान तक आये थे- ८वाला भी है, ७वाला भी है, ६वाला भी है और ५वाला भी है। प्रमत्त गुणस्थान में ७वाला है, ६वाला है, ५वाला है और ४वाला है। अप्रमत्त गुणस्थान में भी ऐसा ही है ७वाला, ६वाला, ५वाला, ४वाला। अपूर्वकरण गुणस्थान में ६, ५ और ४वाले तीन स्थान हैं। अभी यहां तक प्रत्येक में २४-

२४ भंग हैं। इसलिये हमने आपको २४ भंग पहले ही बताये थे। १०वाले स्थान में, ९वाले स्थान में, ८वाले स्थान में, कोई भी स्थान ले लो वहां प्रत्येक में २४-२४ भंग हैं। कैसे २४ भंग हुये ? चार कषाय, तीन वेद और दो युगल (४×३×२)। तो हर एक में २४-२४ भंग होते हैं। प्रकृति बदलने से भंग होते हैं, उसके भेद होते हैं।

इन मिथ्यात्वादि पांच गुणस्थानों में अपुनरुक्त स्थान कहे। क्या कहे हमने ? पुनरुक्त यानी रिपीटेड। इंग्लिश बोलेंगे तो अपनी भाषा लगती हैं, पुनरुक्त कहेंगे तो समझ में नहीं आता। पुनरुक्त यानी फिर से दुबारा बताया हुआ। यह दो बार बताया, यहां भी एक बार बताया तो उसको हमने एक बार गिना, क्योंकि यह पुनरुक्त है। तो १०वाला, ९वाला, ८वाला और ७वाला कह दिया। यह क्या है ? अपुनरुक्त है। यानी भले ही तीन बार आया हो उसको एक बार कहेंगे इसको कहेंगे अपुनरुक्त। पूरे द्वादशांग में अपुनरुक्त अक्षर कितने हैं ? हां, इकठ्ठी मायनस एक। यह इकठ्ठी क्या बला है ? हमारे यहां नये लोग बहुत हैं न ! हां कुकमा से बहुत सारे आये हैं हमारे नये-नये साथी।

देखो एक द्विरूपवर्गधारा होती है, २ अंक के वर्ग से शुरू होती है। जैसे हम वह पहाड़े बोलते हैं, बे एक बे, बे दूनी चार वैसे यहां क्या कहना है ? २ का वर्ग ४ वह पहला स्थान, ४ का वर्ग १६ दूसरा स्थान, १६ का वर्ग २५६ तीसरा स्थान, २५६ का वर्ग ६५५३६ चौथा स्थान, ६५५३६ को पणठ्ठी कहते हैं; ६५५३६ का वर्ग बादाल और बादाल का वर्ग है इकठ्ठी। तो इकठ्ठी मायनस वन इतने अपुनरुक्त अक्षर। अपुनरुक्त समझते हैं ? जैसे हमने कोई इंग्लिश नॉव्हेल पढ़ी तो उसमें A, B, C, D जो लेटर्स हैं, उसमें A कितनी भी बार आया हो उसको एक बार गिनेंगे। तो नॉव्हेल में टोटल कितने अपुनरुक्त अक्षर होंगे ? छब्बीस। इंग्लिश में छब्बीस ही हैं। ऐसे हमारे आगम में जो सारा जिनागम लिखा हुआ है, अपुनरुक्त अक्षर - उसमें सिंगल-सिंगल लेना, जोडाक्षर लेना यानी दो का कॉम्बिनेशन, तीन का कॉम्बिनेशन, चार का कॉम्बिनेशन, चौसठ के कॉम्बिनेशन तक चले जाना ऐसे अपुनरुक्त अक्षर कितने हैं ? तो इकठ्ठी मायनस वन। इकठ्ठी देखा न ? छठा वर्ग स्थान बीस डिजिट प्रमाण है, उसमें एक कम कर दो। इतने कॉम्बिनेशन्स होते हैं। तो आपने कैसे जाना इतने कॉम्बिनेशन्स होते हैं ?

हमें किसी भी चीज के कॉम्बिनेशन्स, अभी थोड़ा विषयांतर है, पर आपको जरा ट्रिक बता दूं न ! ऐसे हमारे पास बहुत सारी ट्रिक्स हैं। हमारे पास कोई भी तीन

संख्यायें हैं या दो संख्यायें हैं। देखो कोई दो अलग-अलग A और B हैं तो कॉम्बिनेशन्स कितने हो सकते हैं ? A को सिंगल रखो, B को सिंगल रखो यह दो हो गये और AB को ले लो तीन हो गये, तीन ही हो गये। हमारे पास A, B और C होंगे, तीन चीजें होगी तो कॉम्बिनेशन्स यानी उसके भंग कितने होंगे ? हर एक को एक-एक बार लिखो, सिंगल-सिंगल; इन दो AB को, इन दो BC को, इन दो CA को; और फिर तीनों को एक बार ABC ले लो। कितने होंगे ? सात - सप्तभंगी। जिनागम में बार-बार जो सप्तभंगी आती है, अस्ति-नास्ति पर घटित करो, एक-अनेक पर करो, नित्य-अनित्य पर करो कहीं भी हो तो तीन ही चीजें होती हैं। कौनसी तीन हैं जिनके कॉम्बिनेशन्स सप्तभंगी में हैं ? अस्ति, नास्ति, अवक्तव्य। अब इसके कॉम्बिनेशन करो; हमने उसीको A, B और C कहा। A को सिंगल रखो, B को सिंगल रखो और C को सिंगल रखो; A, B, C तीन हुये। AB, AC और BC मिलकर छह हुये; ABC तीनों का मिलाकर एक भंग, त्रिसंयोगी। कुल कितने हुये ? सात हुये न !

अब चार होंगे तो क्या होगा ? यह कैसे निकालना ? तीन था न तो तीन बार २, २, २ लिखो और आपस में गुणा करो। २ × २ × २ कितने हुये ? ८ । ८ – १ = ७, सात ही भंग होंगे। जहां A B C D चार होंगे २ × २ × २ × २ कितने होते हैं ? १६। तो १६ – १ = १५ भंग होंगे। अभी कितने ही गिनो, आपको जिसके कॉम्बिनेशन्स निकालना है निकाल सकते हैं। हमारे पास ६४ अक्षर हैं; स्वर, व्यंजन, ४ योगवाह सब मिलकर ६४ होते हैं। ६४ के लिये ६४ बार २-२ लिखो; आपस में गुणा करो तो इकठ्ठी प्रमाण संख्या आती है, उसमें १ मायनस करो इतने भंग हो जायेंगे। इतने अपुनरुक्त अक्षर होंगे जिनागम के। अभी वह पूरा विषय अलग है न, जीवकाण्ड में ज्ञानमार्गणा में देख लेना। अभी सब समझेंगे नहीं जब तक सामने चार्ट नहीं होगा, पुस्तक नहीं होगी। सारे व्यंजन हैं न कखगघङ, चछजझञ हमें मालूम हैं क्या ? कचटतपय। नहीं मालूम ? तो फिर केजी क्लास में जाकर मराठी या हिन्दी में पढ़ना पड़ेगा या गुजराती में। अभी अंग्रेजीवालों को क्या बतायें हम ! अपुनरुक्त से यह बात निकली। अपुनरुक्त यानी जो रिपीटेड हैं उसको एक बार गिना, उसको कहेंगे अपुनरुक्त।

देखो, अपुनरुक्त की बात यहां ४५३ पेज पर टीका का दूसरा पॅरेग्राफ- **इन मिथ्यात्वादि पांच गुणस्थानों में अपुनरुक्त स्थान कहे, उनमें किसीकी संख्या**

समान होने पर भी प्रकृतियों की अपेक्षा अपुनरुक्तता है। यहां मिथ्यात्व में भी ९ का स्थान है और यहां सासादन में भी ९ का स्थान है परंतु वे समान स्थान नहीं है क्योंकि यहां एक प्रकृति मिथ्यात्व है और सासादन में मिथ्यात्व प्रकृति है ही नहीं। भंग कब कह सकते हैं ? तीन वेदों में से पलटना होगा तो उसको भंगों में लेंगे, पर एक जगह मिथ्यात्व है दूसरी जगह मिथ्यात्व है ही नहीं उसको भंग नहीं कहेंगे, उनको अलग स्थान गिनेंगे। **नौ-नौ प्रकृतिरूप स्थान बहुत कहे, तथापि उनमें प्रकृति अन्य-अन्य पायी जाती है, इसलिये अपुनरुक्तता ही जानना।** क्योंकि मिथ्यात्व में स्थान हैं वे मिथ्यात्व सहित हैं। सासादन में मिथ्यात्व रहित हैं। मिश्र में सम्यग्मिथ्यात्व सहित हैं और असंयत में सम्यक्त्व मोहनीय सहित हैं। भले ही उनकी संख्या नौ-नौ है, परंतु प्रकृतियां टोटली अलग-अलग हैं। केवल प्रतिपक्षी-अप्रतिपक्षी ऐसी वे प्रकृतियां नहीं हैं, टोटली अलग-अलग हैं इसलिये उन स्थानों को भी अलग-अलग गिनेंगे।

हम इनकी संख्या देखते हैं पृष्ठ ४५४ पर - **सर्व गुणस्थानों में मिलकर दस प्रकृतिरूप तो एक स्थान है, वह मिथ्यात्व में ही है।** किसी भी जीव को अधिक से अधिक मोहनीय की कितनी प्रकृतियोंका उदय हो सकता है ? १० का हो सकता है। ऐसे १० का स्थान कहां-कहां पाया जायेगा ? पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे कौनसे गुणस्थान में ? मात्र पहले में ही होगा। यह १०वाले कितने स्थान हैं इस पूरे चार्ट में ? एक ही बार, १० का एक ही स्थान है। **नौ प्रकृतिरूप छह स्थान हैं।** कोई गिनेगा ? १, २, ३, ४, ५ और ६। और कहीं है क्या ९ ? नहीं। देखो ऐसा चार्ट लिखने से सारे स्थान हमारी आंखों के सामने आ जाते हैं। **नौ प्रकृतिरूप छह स्थान हैं। पहले के कूटों में दो**, मिथ्यात्व में पहले के कूटों में दो, **पश्चात् के कूटों में एक - ऐसे मिथ्यात्व में तीन** हम जो पढ़ रहे हैं उसका अर्थ ख्याल में आ रहा है ? पहले के कूटों में दो, अर्थात् यह मिथ्यात्व के पहले चार कूट और यह पश्चात् वाले चार कूट। पहले कूटों में ९ के दो स्थान हैं और पश्चात् वाले कूटों में ९ का एक स्थान है। तो मिथ्यात्व में ९वाले कितने स्थान हैं ? आप चार्ट देखकर बोलो। पहले चार कूटों में ९ के दो स्थान हैं और पश्चात् वाले चार कूटों में ९ का एक स्थान है तो मिथ्यात्व में तीन हैं।

सासादन, मिश्र और असंयत में पहले के कूटों में एक, एक और एक स्थान, हर एक गुणस्थान में ९वाला अपना एक, एक और एक; हर एक का अपना-अपना क्यों कहा ? सासादन में ९ का स्थान है परंतु यहां एकवाली प्रकृति नहीं है, ना

मिथ्यात्व का उदय है, ना सम्यग्मिथ्यात्व का है, ना सम्यक् प्रकृति का है। फिर भी यहां की संख्या ९ है। मिश्र में ९ है परंतु वहां तो एक कषाय कम है परंतु मिश्र मोहनीय का उदय है। असंयत में भी ९ है, यहां पर अनंतानुबंधी नहीं है, परंतु सम्यक् प्रकृति का उदय है। इसलिये अपना-अपना ९ का स्थान है। मिथ्यात्व में ९ के २ स्थान हुये; २ क्यों हुये ? यहां भय का उदय है, यहां जुगुप्सा का उदय है और यहां पर दोनों का उदय है, यह हमने पहले देखे थे। १०वाला केवल एक स्थान है और ९वाले ६ स्थान हैं, यह हमने देख लिया है। ९वाले स्थान कहां हो सकते हैं ? मिथ्यात्व में हो सकते हैं, सासादन में हो सकता है, मिश्र में हो सकता है और चौथे में भी हो सकता है। तो ९वाला स्थान यानी ९ के उदयरूप स्थान चौथे गुणस्थान तक ही होंगे, परंतु उनकी प्रकृतियां अलग-अलग होने से वे अपने-अपने अलग-अलग स्थान कहलायेंगे। ये ९ के भंग नहीं कहलायेंगे।

८ प्रकृतिरूप, ७ प्रकृतिरूप और ६ प्रकृतिरूप ग्यारह-ग्यारह स्थान हैं। ८ प्रकृतिरूप कहां-कहां मिलते हैं देखते हैं। मिथ्यात्व में पहलेवाले कूट में १, दूसरेवाले कूट में २, तीन हो गये न; सासादन में २, मिश्र में २, असंयत में २ ये छह; सब मिलकर ९ हो गये; असंयतके दूसरे कूटों में एक, देशसंयत में एक; तो ८वाले ११ हुये। अभी ७वाले ढूंढ़ेंगे। ७वाले ग्यारह स्थान, आसान है। हमारे सामने सब लिखा हुआ है, हमें केवल उसको गिनना है। हम मात्र पढ़ लेते तो कुछ समझ में नहीं आता यह क्या कह रहे हैं, हां, कहने दो न ! हम बैठे हैं, पांच दिन की छुट्टी लेकर आये हैं तो सुनना है। ८वाले, ७वाले और ६वाले भी ग्यारह-ग्यारह हैं। यहां ६ कहां से शुरू हुआ था ? चौथे गुणस्थान में। ६वाला चौथे गुणस्थानवाला स्थान कौनसा है ? कोई कहेगा छह प्रकृतियां कौनसी हैं ? क्षायिक या औपशमिकवाला है, कौन-कौनसी प्रकृतियों का उदय है ? अनंतानुबंधी है कि नहीं है ? नहीं है। यानी तीन क्रोध कहो न, अभी क्रोध ले लो यानी कषाय में से कोई तीन, वेद एक, चार हो गये; एक युगल, भय-जुगुप्सा नहीं है, छह गिनना है न आपको ! कैसे ६ गिने ? क्षायिक या औपशमिक सम्यग्दृष्टि है- तीन कषाय का उदय है, एक वेद का उदय है, और हास्य-रति का उदय ले लो न, कोई भी ले लो, तो यह छह हो गये और भय-जुगुप्सा दोनों का ही उदय नहीं है - यह ६वाला हुआ।

ऐसे ६वाले टोटल कितने स्थान हैं ? हमने चौथे गुणस्थान से शुरुआत की। चौथेवाले गुणस्थान में १ बार, पांचवें में ३ बार, छठे में ३ बार, सातवें में ३ बार, आठवें

यानी अपूर्वकरण में १ बार, तो कुल ११ बार हुये। चौथेवाले गुणस्थान में भी ६वाला स्थान है और अपूर्वकरण गुणस्थान में भी ६वाला स्थान है। अपूर्वकरण में कौनसे ६ होंगे ? आपको प्रकृतियां बतानी हैं। अपूर्वकरण गुणस्थान में ? संज्वलन की एक, वेद एक, हास्य-रति दो और भय-जुगुप्सा दोनों हैं। फिर से, अपूर्वकरण गुणस्थान में आया है- एक संज्वलन कषाय, एक वेद, एक युगल यानी हास्य-रति ले लो; चार हो गये और भय-जुगुप्सा दोनों का उदय तो ६ हो जायेंगे। कहीं पर भी ६ प्रकृतियां अलग-अलग जगह पर है, वह कौनसा स्थान है वह हमें पता होना चाहिये। यहां आठवें गुणस्थान में हमने बता दिया और यहां पर अगर छठे गुणस्थान में घटित करना है तो क्या होगा ? प्रमत्त गुणस्थान में भी यह दूसरेवाले कूट हैं। यहां पहलेवाले कूट लेंगे तो यहां सम्यक् प्रकृति का उदय कहना पड़ेगा और यहां दूसरेवाले कूटों में लेते हैं तो कोई भी नहीं है। औपशमिक या क्षायिक सम्यग्दृष्टि है तो डायरेक्ट कषाय से शुरुआत करेंगे। छठा-सातवां गुणस्थान है तो संज्वलन का एक, एक वेद, एक युगल, और भय-जुगुप्सा दोनों ले लो। जैसे अभी हमने आठवें गुणस्थान में देखा वैसे ही यहां पर होगा।

अब यहां बीचवाले में लेना है। प्रमत्त में पहलेवाले चार कूट में अगर लेना है तो सम्यक् प्रकृति को गिनो, एक कषाय को गिनो, फिर एक वेद को गिनो, एक युगल; पांच हुये और एक ही लेना- भय या जुगुप्सा। ख्याल में आया न कैसे विचार करना है ? हमारे सामने ऐसा लिखेंगे तो हम उसको अच्छी तरह से समझ सकते हैं। हमने कूट पहले देखे हैं तो हमें केवल उस संख्या में फिट करना है। हमें मालूम है कि कौनसे गुणस्थान में कितनी कषाय चौकड़ी का उदय है तो उसकी संख्या लेना। अगर सम्यक् प्रकृति का उदय है तो उसको गिनना, इसतरह सोचेंगे, वह संख्या पूरी करेंगे हम।

आठ प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान हैं। मिथ्यात्व में पश्चात् के कूटों में एक, सासादन मिश्र में एक-एक, असंयत में पहले कूटों में एक पश्चात् के कूटों में दो ऐसे तीन; देशसंयत में पहले के कूटों में दो पश्चात् के कूटों में एक ऐसे तीन; प्रमत्त-अप्रमत्त के पहले के कूटों में एक-एक ऐसे सात प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान जानना। ८ के ग्यारह स्थान देखे, ७ के ग्यारह स्थान देखे और ६ के ग्यारह स्थान देखे। अब पांच प्रकृतिरूप और अन्य प्रकृतिरूप हैं उसकी चर्चा थोड़ी देर के बाद करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४४. मोहनीय के उदयस्थान - संख्या और प्रकृतियां

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने इसकी भाषाटीका सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है। हमारे हाथ में उसीका हिंदी अनुवाद है, अभी हम स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार देख रहे हैं। यहां कर्म प्रकृतियों के स्थानों की चर्चा चल रही है। बंध के स्थान, उदय के स्थान और सत्त्व के स्थान - पहले ये क्या है उसको हम अलग-अलग प्रकृतियों में समझेंगे। फिर उनके आपस में भी कैसे-कैसे कॉम्बिनेशन्स हो सकते हैं, उसकी भी बात आगे चलकर करेंगे।

हमने अन्य प्रकृतियों की बात देखी थी। मोहनीय की बात हम देख रहे हैं। मोहनीय के बंधस्थान हमने गुणस्थान के अनुसार यथायोग्य देखे। अब मोहनीय के उदयस्थानों की चर्चा चल रही है। मोहनीय के बंधस्थानों में क्या विशेषता है ? प्रत्येक गुणस्थान में एक ही बंधस्थान है। जैसे पहले गुणस्थान में २२ का ही बंध है, दूसरे में २१ का ही बंध है, चौथे में १७ का है। परंतु उदय में कुछ विशेषता है। क्या विशेषता है ? एक ही जीव के एक काल में या तो भय-जुगुप्सा दोनों का उदय होता है या अकेले भय का या अकेले जुगुप्सा का होता है या दोनों का ही उदय नहीं है और यह अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में पलटता है। यदि दोनों का उदय नहीं है तो अंतर्मुहूर्त में किसी एक का उदय शुरू हो जायेगा। फिर हो सकता है दोनों का उदय शुरू हो जायेगा तो अलग-अलग कॉम्बिनेशन्स हो सकते हैं। इसलिये हर एक गुणस्थान में इसके चार-चार कूट, चार-चार अलग-अलग उदयस्थान बन सकते हैं। कहां से कहां तक ? जहां तक भय-जुगुप्सा का उदय हो सकता है वहां तक। इसलिये हमने पहले गुणस्थान से लेकर आठवें गुणस्थान तक प्रत्येक गुणस्थान में उदय के चार-चार कूट देखे थे।

मिथ्यात्व की विशेषता यह है कि उसमें अनंतानुबंधी सहित और रहित ऐसे चार और चार आठ कूट देखे। चौथे से सातवें गुणस्थान तक वेदक सहित और वेदक रहित ऐसे चार-चार कूट देखे, वहां हमने एक्स्ट्रा कूट भी देखे। अब उनमें से जो अपुनरुक्त स्थान हैं, पहले हमने गुणस्थानों में अपुनरुक्त स्थान देखे, बाद में टोटली अपुनरुक्त देखेंगे। गुणस्थानों में अपुनरुक्त का अर्थ क्या है ? पहले गुणस्थान के स्थानों की जब हमने चर्चा की थी; १०, ९, ९, ८ ऐसा लिखा था और यहां ९, ८, ८, ७ ऐसा लिखा था।

यहां पर कौन-कौनसे स्थान हैं ? १०वाला भी है, ९वाला भी है, ८वाला भी है और ७वाला भी है। ये हमने मिथ्यात्व गुणस्थान में अपुनरुक्त स्थान देखे। ऐसे सासादन गुणस्थान में अपुनरुक्त स्थान कौनसे हैं ? ९वाला है, ८वाला है, और ७वाला है। मिश्र गुणस्थान में अपुनरुक्त स्थान ९वाला है, ८वाला है और ७वाला है। असंयत गुणस्थान में ९वाला, ८वाला और ७वाला, ६वाला है। देशसंयत गुणस्थान में ८वाला, ७वाला, ६वाला और ५वाला है। प्रमत्त-अप्रमत्त गुणस्थान दोनों में समान हैं - ७वाला है, ६वाला है, ५वाला है और ४वाला है। यहां चार और चार, आठ कूट होने के कारण यहां चार-चार स्थान बने। अब अपूर्वकरण में तीन स्थान बनेंगे। अपूर्वकरण गुणस्थान में ६वाला है, ५वाला है और ४वाला है। अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में २वाला- १ वेद और १ कषायवाला एक स्थान होगा। फिर १ कषायवाले चार स्थान अलग-अलग क्यों लिखे हैं ? चार जगह पर १-१ लिखा है। यहां चार कषायों में से एक, यहां तीन में से एक, यहां दो में से एक और यहां अकेले लोभ ऐसे उदय के स्थान कहे हैं। सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में भी लोभ का ही उदय है। नौवें तक बादरलोभ का उदय है और दसवें में सूक्ष्मलोभ का उदय है। इनके कितने-कितने स्थान हैं उसकी चर्चा चार्ट के आधार से, पृष्ठ ४५४ पर कर रहे हैं।

अभी हमने अपुनरुक्त की बात की थी, वह हर एक गुणस्थान की अलग-अलग देखी। अब क्या हो रहा है ? सभी गुणस्थानों में मिलकर दस के कितने स्थान हैं ? एक स्थान है। ९ के कितने स्थान हैं ? हमने गिने थे ९ के छह स्थान हैं। आठ के कितने हैं ? ग्यारह। सात के कितने हैं ? ग्यारह। ६ के कितने हैं ? ग्यारह। हमने यहां तक देखे थे। यह सभी गुणस्थानों में मिलकर कह रहे हैं। इनमें से भी पुनरुक्त और अपुनरुक्त की बात बाद में करेंगे। पहले हमने एक-एक गुणस्थान में पुनरुक्त अलग-अलग घटित किये, कहीं चार और चार, आठ कूट बनाये थे और कहीं चार कूट बनाये थे। एक-एक गुणस्थान में अपने-अपने अपुनरुक्त उसमें भले वह चार बार होगा; यहां पर १०, ९, ८, ७ इतने ही कहे थे; यह एक-एक गुणस्थान में अलग-अलग हुये। अब सभी गुणस्थानों में मिलकर पहले स्थानों की संख्या कहेंगे और फिर उसमें पुनरुक्त-अपुनरुक्त देखेंगे। सभी गुणस्थानों में कहीं पर भी आप देखो, मोहनीय के १० के उदयरूप स्थान कितने हैं ? एक ही है और वह मिथ्यात्व में ही पाया जायेगा। ९ के उदयरूप स्थान कितने हैं ? छह हैं। मिथ्यात्व में यहां २ हैं, यहां १ है और दूसरे, तीसरे, चौथे गुणस्थान में प्रत्येक में १-१ है। ८वाले कितने हैं ? ग्यारह हैं। ७वाले भी ग्यारह हैं, और ६वाले भी ग्यारह हैं।

अभी हम आगे पढ़ेंगे, पृष्ठ ४५४ नीचे से तीसरा पॅरेग्राफ- **पांच प्रकृतिरूप नौ स्थान हैं वे इस प्रकार हैं।** अभी यहां ढूंढ़ना पांच कहां मिलता है। देशसंयत में मिल रहा है; यह ५ का स्थान कौनसावाला होगा और किसके होगा ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि या औपशमिक सम्यग्दृष्टि जो पांचवें गुणस्थानवाला है। वे ५ प्रकृतियां गिनकर बतायेंगे ? हां, दो कषाय, एक वेद, एक युगल। एक युगल होगा न और भय-जुगुप्सा से रहित ऐसा यह ५वाला स्थान होगा। तो पांचवें गुणस्थान में एक है। प्रमत्त-अप्रमत्त के पहले चार कूटों में यहां एक-एक बार है और दूसरे चार कूटों में यहां दो-दो बार है। यहां अपूर्वकरण में दो बार है तो ५ प्रकृति के नौ स्थान हैं टोटल।

फिर ४ प्रकृति के कितने हैं ? कहां-कहां हैं ? प्रमत्त और अप्रमत्त गुणस्थान में, औपशमिक और क्षायिकवाले के कूट में और अपूर्वकरण गुणस्थान में यहां एक है तो टोटल कितने हुये ? तीन हुये। क्या नौवें गुणस्थान में ४ का उदयस्थान होगा ? वहां एक वेद और एक कषाय इतने का ही उदय होता है। ४वाला स्थान है वह आठवें गुणस्थान तक ही हो सकता है। हमने देखा आठवें गुणस्थान में एक ४ का स्थान है। यह ४वाला कौन है ? औपशमिक है या क्षायिक है ? *श्रोता: दोनों हैं।* दोनों हैं क्योंकि यहां पर श्रेणी चढ़नेवाला जीव है। ६, ५, ५ और ४ ऐसा लिया है। ये ४वाले स्थान में कौनसी प्रकृतियां है ? संज्वलन एक कषाय, एक वेद और युगल; यहां पर भय-जुगुप्सावाला नहीं लिया है। भय-जुगुप्सा सहित लेंगे तो ६वाला हो जायेगा। हमने ४वाला पूछा था तो यह भय-जुगुप्सा रहितवाला हो गया। हमने चार प्रकृतिरूप तीन स्थान देखे। प्रमत्त-अप्रमत्त के पश्चात् के कूटों में एक-एक, और अपूर्वकरण में एक बार है। उसके दो बार कूट नहीं हैं, एक ही बार ४ कूट हैं, उसमें एक है। अब ये सभी स्थान हमने देखे।

सर्व स्थान हैं उनमें हमने २४-२४ भंग देखे। कैसे ? चार कषाय, तीन वेद और दो युगल। उनके कॉम्बिनेशन्स करेंगे, आपस में गुणा करेंगे ४ X ३ X २ कॉम्बिनेशन्स मिल जायेंगे। सभी स्थानों में, हर एक में २४-२४ भंग होंगे। देखो यह समझा रहे हैं- **दस प्रकृतिरूप स्थान में क्रोधादि चारों कषायों का उदय एक-एक वेद में होता है, ऐसे बारह भंग हुये।** पुरुषवेद के साथ क्रोध, पुरुषवेद के साथ मान, पुरुषवेद के साथ माया, पुरुषवेद के साथ लोभ; उसके चार हुये, अभी अन्य दोनों वेदों पर चार लगाओ तो चार त्रिक बारह हो गये। **वे बारह भंग हास्य-रति सहित और बारह भंग**

अरति-शोक सहित ऐसे चौबीस भंग हुये। इसको निकालने का तरीका क्या है ? जहां ऑप्शन्स हैं वहां उनको मल्टिप्लाय करना। कषायों में चार ऑप्शन्स थे, वेदों में तीन ऑप्शन्स थे और युगल में दो ऑप्शन्स थे तो चार गुणा तीन गुणा दो २४ हो गये न, तो २४ भंग हो जाते हैं। *श्रोता: उसमें जो भय और जुगुप्सा उसको नहीं लेना ?* उसकी बात नहीं लेना, एक ही स्थान की बात लेना। एक विशिष्ट स्थान में हमने कूट देखा था, एक ही कूट की बात चल रही है। हर एक स्थान में २४ भंग हैं- १०वाले में २४ हो गये, ९वाले में २४ हो गये। ८वाले में भी २४ भंग हैं, ७वाले में भी २४ भंग हैं। हर एक स्थान में २४ भंग हैं क्योंकि हर एक स्थान के कूट हमने अलग-अलग बनाये थे।

हम आते हैं पृष्ठ संख्या ४५९ पर। अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में वहां भंग बताये हैं क्योंकि वहां भी वेद हैं और कषाय हैं। कितने भंग होंगे वहां पर ? बारह होंगे क्योंकि वहां अन्य कुछ नहीं है न। अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में युगल का भी उदय रुक गया है; हास्य, रति, भय, जुगुप्सा का उदय कहां तक है ? आठवें गुणस्थान तक है। नौवें गुणस्थान में एक वेद का उदय है और एक कषाय का उदय है; कषाय में चार का ऑप्शन है और वेदों में तीन का ऑप्शन है इसलिये वहां पर बारह भंग हो जायेंगे। वह कौनसे वेद से चढ़ता है ? यहां दो मत हैं कि पहले यहां वेद का उदय है और उसका बंध मिट गया है उस अपेक्षा से उन्होंने बारह और बारह चौबीस भंग कहे हैं। परंतु उसके डीटेल में नहीं जायेंगे क्योंकि दो पक्षों के दो अलग-अलग मत हैं और एक समय का डिफरन्स है उसके कारण दो अलग-अलग भंग प्रस्तुत किये हैं। परंतु बारह भंग हो सकते हैं - चार कषाय हैं और तीन वेद हैं इतना हम यहां समझेंगे।

अनिवृत्तिकरण गुणस्थान के पहले भाग में २ प्रकृतियों का उदय है। यह दो में क्या ऑप्शन है ? ४५० पृष्ठ पर अनिवृत्तिकरण का कूट निकालना। अनिवृत्तिकरण के प्रथम भाग में क्या लिखा है ? नीचे १-१-१-१ चार बार लिखा यानी किसी एक संज्वलन का उदय है- क्रोध या मान या माया या लोभ। ऊपर १-१-१ लिखा उसका अर्थ क्या है ? तीन वेद में से किसी एक का उदय है। यहां भंग कितने होंगे ? बारह; चार गुणा तीन बारह होंगे। द्वितीय भाग में ? यहां वेद नहीं है, मात्र चार ही भंग हो जायेंगे। तृतीय भाग में ? तीन कषाय में से एक यानी अलग-अलग तीन भंग होंगे। चतुर्थ भाग में ? दो में से एक यानी दो भंग होंगे। लास्ट में एक प्रकृतिवाला एक भंग होगा। सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में भी १ प्रकृति का एक भंग होगा। यही बात यहां लिखी है, हम पढ़ेंगे।

देखो ४५७ पृष्ठ पर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान की बात है। पहले भाग में बारह भंग हो गये, अब दूसरे भाग में कितने होते हैं ? **क्रोध, मान, माया और लोभ के उदयरूप अनिवृत्तिकरण के चार भाग जिनमें चार, तीन, दो, एक प्रकृतियों का बंध पाया जाता है, उनमें** जहां बंध पाया जाता है, वहां कषायों के उदय कौन-कौनसे हो सकते हैं यह बता रहे हैं; **कषाय बदलने की अपेक्षा चार, तीन, दो और एक भंग हैं।** क्या कहना चाहते हैं ? दूसरे भाग में बंध है चार का और उदय क्रोध का भी हो सकता है, मान का भी हो सकता है, माया का भी हो सकता है और लोभ का भी हो सकता है। चार में से किसी एक का उदय है, बंध चार का है। पहले भाग में इसको छोड़ा क्योंकि वहां एक वेद का बंध है और चार कषाय का, यह हम देख चुके हैं। इसलिये यहां से बात आरंभ करते हैं। चार में से किसी एक का उदय है और बंध चार का है। तीसरे भाग में क्रोध का उदय नहीं रहेगा, तो मान, माया या लोभ में से किसी एक का उदय है और बंध तीन का है। चौथे भाग में माया और लोभ, दोनों में से किसी एक का उदय है और बंध दो का है। उसके बाद उदय भी लोभ का ही है, बादरलोभ का और बंध भी बादरलोभ का ही है। अब सूक्ष्मसाम्पराय में क्या है ? उदय कितना है और बंध कितना है ? मोहनीय का बंध नहीं है, उदय एक का है। क्यों बंध नहीं है? क्योंकि सूक्ष्मलोभ के उदय से फिर दुबारा मोहनीय का बंध नहीं होता। यही बात लिखी है, तीसरी लाइन- **सूक्ष्मसाम्पराय मोहनीय के बंध रहित है, वहां सूक्ष्मलोभ के उदयरूप स्थान में एक भंग है।** इसतरह भंगों की भी यहां हमने चर्चा की है।

हमने १० प्रकृतिरूप एक स्थान आदि देखे थे, हमने टोटल कितने हैं वह गिनाये थे। कितने-कितने थे ? १० प्रकृतिरूप कितने थे ? एक और ९ प्रकृतिरूप कितने थे ? छह। अब उसमें से पुनरुक्त और अपुनरुक्त की चर्चा करेंगे, पेज नंबर है ४५९। सभी स्थानों के जो टोटल गिने थे, उनमें से अपुनरुक्त कहेंगे। अपुनरुक्त किसको कहना ? जहां वही की वही प्रकृतियां हैं। यदि वे दो अलग-अलग गुणस्थानों में उसी स्थान की उन्हीं प्रकृतियों की बात करेंगे, तो उसको एक बार गिनेंगे; रिपीटेड हो तो एक बार गिनेंगे। **दस प्रकृतिरूप एक स्थान,** इसके लिये कोई दूसरा है ही नहीं, बस अकेला ही है १० प्रकृतिरूप। उसमें पुनरुक्त होने का कोई सवाल ही नहीं, वह एक ही स्थान है। **नौरूप छह स्थान,** ९ प्रकृतिरूप जो छह स्थान बताये, यहां तीन और यहां अलग-

अलग तीन, इसमें भी प्रकृतियां अलग-अलग ही हैं; या भय की है या जुगुप्सा की है या दोनों हैं। अब कहते हैं **आठरूप ग्यारह स्थान** और **सात प्रकृतिरूप** कितने हैं ? ग्यारह थे परंतु **दस ही स्थान** गिनेंगे। ७ के स्थान हम दस ही गिनेंगे। सेकंड लाइन में लिखा है- **पहले ग्यारह कहे थे उनमें से पहले के कूटों में सम्यक्त्व मोहनीय सहित वेदक सम्यक्त्ववाले के प्रमत्त, अप्रमत्त के सात प्रकृतिरूप यह दो स्थान कहे** थे।

हम पेज ४५९, गाथा ४८८ की टीका पढ़ रहे हैं। हमने १० प्रकृतिवाला एक स्थान देखा, ९ प्रकृति के छह स्थान देखे, ८ प्रकृति के ग्यारह स्थान देखे। ७ प्रकृतियों के हमने कितने गिने थे ? ग्यारह गिने थे। उनमें से प्रमत्त में ७वाला और अप्रमत्त में ७वाला स्थान, क्या इसमें कोई प्रकृति के भेद हैं ? वे ही के वे ही हैं। कौनसे सात हैं ? ये वेदक सहितवाले हैं, तो एक सम्यक् प्रकृति है, कषाय एक है, वेद एक है, युगल एक है और भय-जुगुप्सा दोनों हैं; ये ही प्रकृतियां प्रमत्तवाले में भी कही, अप्रमत्तवाले में भी कही। इसमें भय-जुगुप्सावाला भी डिफरन्स नहीं है, कोई डिफरन्स नहीं है। यहां हमने आठ और आठ अलग-अलग गिने क्योंकि यहां भय था, यहां जुगुप्सा थी। इसलिये उसको अलग ही स्थान कहा था। परंतु यहां वे ही की वे ही प्रकृतियां हैं, छठे में भी और सातवें में भी इसलिये उसको एक बार गिनेंगे। अभी सात प्रकृतियों के स्थान गिन रहे थे हम। पहले गुणस्थान से पांचवें गुणस्थान तक नौ और छठे-सातवें के इन दोनों को मिलाकर एक ऐसे दस। अलग-अलग गिने थे तब ग्यारह परंतु अभी अपुनरुक्त कह रहे हैं, इसलिये दस कहे क्योंकि यहां छठे-सातवें में कोई प्रकृतियां अलग-अलग नहीं हैं। बिलकुल वे ही की वे ही प्रकृतियां हैं, छठे में भी और सातवें में भी इसलिये उसको एक बार गिनेंगे। इसलिये ग्यारह के बदले वहां दस हो जायेंगे।

आगे पढ़ेंगे देखो चौथी लाइन। **दोनों समान हैं, इनमें एक स्थान पुनरुक्त हुआ**, पुनरुक्त यानी रिपीटेड हुआ। पुनरुक्त का अर्थ क्या है ? वे ही प्रकृतियां, उतनी ही संख्या, सब कुछ वैसा ही है। इसलिये यहां दो बार है, फिर भी उसको एक बार गिनेंगे। ६ प्रकृतिरूप स्थान पहले कितने गिने थे ? ग्यारह। अब कहते हैं वे सात ही हैं। गिनेंगे हम इसको; ६ प्रकृतिरूप कहां से शुरू होता है ? चौथे गुणस्थान में एक बार, पांचवें में तीन बार, छठे-सातवें में सम्यक् प्रकृति के उदय सहित में दो बार, छठे, सातवें, आठवें में सम्यक् प्रकृति के उदय रहित और भय-जुगुप्सा दोनों के उदय सहित ऐसा अपुनरुक्त एक बार, इसतरह ६ प्रकृतिवाले सात स्थान हैं। ६वाले छठे में, सातवें

में और आठवें में समान हैं। कैसे समान हैं ? सम्यक् प्रकृति का उदय नहीं है, एक कषाय है, एक वेद है एक युगल है, और भय-जुगुप्सा दोनों हैं। छठे-सातवें में भी सम्यक् प्रकृति नहीं थी, आठवें में भी नहीं है और बाकी सब समान है। इसलिये ६वाला तीनों जगह सेम है, इसलिये एक बार गिनना। इनको एक ही बार गिनना है, इसलिये इसको अपुनरुक्त स्थान कहेंगे। जहां प्रकृति वही की वही है, उनको एक बार गिनना।

देखो पांचवीं लाइन में लिखा है, **छह प्रकृतिरूप सात ही स्थान, पहले ग्यारह कहे थे, उनमें से वेदक सहित पहले के कूटों में छह प्रकृतिरूप दो कूट प्रमत्त के किये और दो अप्रमत्त के किये।** ये प्रमत्त के हुये और ये अप्रमत्त के हुये। ये दोनों समान हैं, **इनमें से दो ही गिने, दो पुनरुक्त कहे**; चार के बदले दो ही गिने। **तथा वेदक रहित पश्चात् के कूटों में छह प्रकृतिरूप स्थानयुक्त एक कूट प्रमत्त का किया, एक अप्रमत्त का किया। ये दोनों कूट अपूर्वकरण के छह प्रकृतिरूप कूट के समान है।** देखो केवल पढ़ते जाते तो यह समझ में नहीं आता। अभी हमारे सामने चार्ट है तो हम समझ सकते हैं। इसलिये दो कूट पुनरुक्त कहे थे। इसतरह चार कूटों के चार पुनरुक्त स्थान घटा दिये। पहले हमने ७ प्रकृति के ग्यारह स्थान कहे थे उसके बदले दस कर दिये। ६ प्रकृति के ग्यारह स्थान कहे थे उसके बदले सात कर दिये।

अभी ५ प्रकृति की बात करते हैं। **पांच प्रकृतिरूप चार ही स्थान हैं।** पहले गिन लो ५ प्रकृतिवाले कहां-कहां पर हैं ? पांचवें गुणस्थान में एक बार, छठे में तीन बार, सातवें में तीन बार, आठवें में दो बार इसतरह ५ प्रकृतिवाले नौ स्थान हैं। अभी इनमें से पुनरुक्त-अपुनरुक्त स्थान देखेंगे। **उनमें से वेदक सहित पहले कूटों में एक प्रमत्त का कहा था और एक अप्रमत्त का कहा था।** ये दोनों सेम हैं इसलिये उन दो के बदले एक गिनेंगे। **वेदक रहित कूटों में एक देशसंयत का, दो-दो प्रमत्त-अप्रमत्त के और दो अपूर्वकरण के, इन सात में से दो-दो प्रमत्त-अप्रमत्त के;** देखो, वेदक सहित प्रमत्त-अप्रमत्त का पहला गिना, वेदक रहित पांचवें में दूसरा गिना, छठे, सातवें, आठवें में वेदक रहित भयसहित तीसरा और जुगुप्सा सहित चौथा गिना। ५ प्रकृतिरूप चार ही स्थान अपुनरुक्त हैं, पहले नौ कहे थे, उसका हमने वर्णन पढ़ लिया।

चार प्रकृतिरूप एक ही स्थान है। पहले कितने गिने थे ? प्रमत्त में एक, अप्रमत्त में एक और अपूर्वकरण में एक, परंतु तीनों ही समान हैं। वहां सम्यक् प्रकृति

का उदय नहीं है। चार में क्या-क्या है ? एक कषाय है, एक वेद है और एक युगल है; भय-जुगुप्सा दोनों ही नहीं हैं। तीनों जगह वे ही की वे ही प्रकृतियां हैं, इसलिये तीन के बदले एक स्थान कहेंगे। अब उन सबका जोड़ देने पर ४० अपुनरुक्त हो जाते हैं यानी पुनरुक्त-अपुनरुक्त स्थानों की इसमें चर्चा की है। हमें इनमें पुनरुक्त कैसे घटा दिये, अपुनरुक्त कैसे गिने, इसको देखना है। उसके और डीटेल्स हैं हमें नहीं जाना है; इन सभी स्थानों में कौनसा योग है, कौनसा संयम है, कौनसा उपयोग है, कौनसी लेश्या है, उसमें बहुत सारे और भंग बता दिये हैं, जो अभी अपने लिये कोई कार्यकारी नहीं हैं।

इसतरह से हमने ये उदय के स्थान देखे हैं। इनमें भी हम भुजाकार, अल्पतर, अवक्तव्य वगैरह-वगैरह लगा सकते हैं। मोहनीय के उदय के स्थानों में अवक्तव्य लगेगा कि नहीं लगेगा ? अवक्तव्य किसको कहते हैं ? झिरो बंध में से कुछ अधिक का बंध हो जाना उसको हम अवक्तव्य कहेंगे। मोहनीय के बंधस्थानों में अवक्तव्य देखा था। उदयस्थानों में अवक्तव्य लगेगा कि नहीं लगेगा ? *श्रोता: उपशमश्रेणी की अपेक्षा से लगेगा।* बिलकुल ! उपशमश्रेणी में ग्यारहवें गुणस्थान में किसीका भी उदय नहीं है, झिरो था; अब वहां से सूक्ष्मसाम्पराय में आ गया तो कितना हो जायेगा ? एक का हो जायेगा और मरकर कोई देव में जायेगा तो कितने का हो जायेगा ? *श्रोता: १७ का।* १७ का तो बंध में आप सोच रहे हैं, हमें उदय में सोचना है। देखो ध्यान से सुनना, विचार करके उत्तर देना। उपशमश्रेणी में मरकर देव में गया है, उसके उपशमश्रेणी में झिरो का उदय था- हम ग्यारहवें गुणस्थान की बात कर रहे हैं। अब देव में चौथे में गया है तो चौथे गुणस्थान के उदय के स्थान कौनसे हैं ? ये सारे हैं। इसमें कौनसेवाला होगा ? *श्रोता: आठ, सात, सात, छह।* क्यों ? यह द्वितीयोपशमवाला है। उपशमश्रेणी में मरनेवाला द्वितीयोपशमवाला है या क्षायिकवाला है। उसके कितने का उदय होगा ? उसके ये पहले चार कूट नहीं होंगे क्योंकि यहां सम्यक् प्रकृति का उदय है। अभी द्वितीयोपशम में मरा है, जब तक द्वितीयोपशम चल रहा है, सम्यक् प्रकृति का उदय अंतर्मुहूर्त तक नहीं है; बाद में वेदक हो जायेगा। वहां उसके आठ भी हो सकता है, सात भी हो सकता है, छह भी हो सकता है, ख्याल में आया कैसे सोचना है ?

श्रोता: बाद में भुजगार भी होगा न ? देखो, बंध में भुजगार होने के लिये क्या होता है ? गुणस्थानों का पलटना आवश्यक है। बंध में जब भुजाकार होता था, पहले कम बंध और बाद में अधिक बंध, तो ऊपर के गुणस्थान से नीचे आया तो अधिक बंध

होने लगा; उसमें गुणस्थान पलटना आवश्यक था। परंतु किसी भी गुणस्थान की बात करो, उसी गुणस्थान में रहते हुये उदयस्थानों का भुजाकार हो सकता है कि नहीं हो सकता ? पहले भय-जुगुप्सा नहीं थी तो ८ का था और अब एक जुगुप्सा का उदय होने पर ८ से ९ का हो जायेगा, दोनों का उदय हो जायेगा तो १० का हो जायेगा या दस में से आठ में आ जायेगा, यह हो सकता है। उदय के भुजाकार या अल्पतर होने के लिये गुणस्थान पलटने की जरूरत नहीं है। गुणस्थान पलटने से तो हो ही सकता है, नहीं वह बात नहीं है, परंतु उसी गुणस्थान में रहते हुये, भय के बदले जुगुप्सा का उदय हो जाये तो भी अवस्थित ही कहेंगे हम उसको। प्रकृति बदल गयी फिर भी अवस्थित ९ का ९ ही रहा ऐसा हम कह सकते हैं। यहां गुणस्थान पलटने की जरूरत नहीं है।

अवक्तव्य के लिये ? हां, झिरो था यानी ग्यारहवें गुणस्थान में था क्योंकि हमने बंधस्थान में झिरो बंधस्थान दसवें, ग्यारहवें दोनों गुणस्थान में रखा था। पर उदय के लिये झिरोवाला कौनसा स्थान है ? अकेला ग्यारहवां गुणस्थान। अभी ग्यारहवें गुणस्थान में से या दसवें गुणस्थान में आ सकता है या ग्यारहवें गुणस्थान में से मरकर डायरेक्ट चौथे गुणस्थानवाला देव हो सकता है जो द्वितीयोपशमवाला है। हम उसकी अपेक्षा इसतरह से विचार कर सकते हैं। यहां हमने लिखा नहीं है, उसका चार्ट भी नहीं बनाया है। परंतु हम किसी भी पॉइंट पर इसीतरह से विचार कर सकते हैं। फिर आप सोचना कौनसे ऊपर के गुणस्थानों से नीचे में आयेगा तो क्या होगा। चौथे गुणस्थानवाला है यहां पर, वेदक सम्यग्दृष्टि और पहले गुणस्थान में आ गया तो यथायोग्य कितनी प्रकृति बदलेगी ? क्या बदलेगा ? इसतरह हमें उसको सोचना है। उसमें भय का उदय है कि नहीं है इस अपेक्षा से उनके प्रकृतियों की संख्या अलग-अलग हो सकती है। उतनी की उतनी भी रह सकती है। यहां ९वाला दोनों का उदय था और यहां आया तो एक ही का उदय है। परंतु यहां प्रकृतियां सारी बदल गयी। यहां सम्यक् प्रकृति का उदय था और यहां मिथ्यात्व का उदय हो रहा है। यहां अनंतानुबंधी का उदय नहीं था और वहां अनंतानुबंधी का उदय है। यहां भय-जुगुप्सा दोनों का उदय था, तो यहां एक ही का है।

इसतरह से हमें किस गुणस्थान में कौनसी प्रकृतियों का उदय हो सकता है, एक-एक को देखकर हम सोच सकते हैं कि यहां कौनसे हो सकते हैं। जब भी फुरसत से बैठें हैं, टाइमपास नहीं होता हो तो सोचना ! *श्रोता: एक एक अधिकार हो सकता है*

पूरा। होता ही है। हम घर पर स्वाध्याय में एक-एक छोटा पॉइंट लेकर हर एक को बताते हैं लगाओ इसमें। यह हमारी सुशीलाबेन आयी है, बाकी लोग वहीं बैठे हैं। सोचते होंगे हम क्यों जाये ? हमारा तो हो गया है सब। हम जितनी अपेक्षा लगाकर विचार करेंगे उसमें और नया विषय जानने में आता है, हमारी क्लॅरिटी और बढ़ती जाती है। हम शांति से पढ़ते हैं एक-एक पेज, जरूरी नहीं कि एक दिन में हमारे चार पेजेस होने चाहिये। कभी-कभी आधा पन्ना होता है, परंतु हम अच्छी तरह से समझकर फिर आगे बढ़ते हैं। अभी हम बंधस्थान, उदयस्थान से बाहर आयेंगे, सत्त्वस्थान की बात चलेगी।

ये मोहनीय के सत्त्वस्थान हैं, देखिये पृष्ठ ४७४, गाथा ५०८ से इसका वर्णन शुरू है और ग्यारह गाथाओं में सत्त्वस्थान समझनेवाले हैं। रोज के स्वाध्याय में हम गाथायें भी पढ़ते हैं और गाथाओं का डायरेक्ट अर्थ करते हैं। पढ़ते-पढ़ते हमें प्राकृत भी आने लगा, पढ़ते हैं न ! हम यहां डायरेक्ट टीका का हिंदी अर्थ पढ़ेंगे। यहां कैसे सोचना है ? सत्त्व का स्थान यानी सत्ता में मोहनीय की कितनी प्रकृतियां हैं ? पहले हम नक्की करते हैं- मोहनीयकर्म की दर्शनमोहनीय और चारित्रमोहनीय की मिलकर प्रकृतियां कितनी हैं ? २८ प्रकृतियां हैं। सत्ता की बात चल रही है; कोई अनादि मिथ्यादृष्टि होगा तो उसके कितने की सत्ता होगी ? हां, दो कम यानी २६। जब पहली बार सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तो २६ में से २८ होगी। कौनसी दो बढ़ेगी ? सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति बढ़ जायेगी। अब वह जीव मिथ्यात्व में चला जायेगा, तो क्या वे दो तत्काल नष्ट हो जायेगी ? नहीं, उनकी उद्वेलना होगी तब जाकर वे कम हो जायेगी। फिर हो सकता है २७ हो गयी और २७ में से फिर २६ पर आ गयी। स्टार्टिंग में कितनी प्रकृतियां थी किसी जीव की ? २६। जब सम्यग्दृष्टि हुआ तब कितनी हुयी ? २८ हुयी। फिर मिथ्यात्व में चला गया, दो की उद्वेलना चालू हो गयी। तो फिर २८ में से २७ हो जायेगी और २७ में से २६ हो जायेगी। अब हम दूसरा कोई जीव देखते हैं।

श्रोता: मिथ्यादृष्टि से सम्यग्दृष्टि हुआ तो बढ़ गयी। हां, तो अच्छा हुआ न, नहीं तो मिथ्यात्व को निकल जाने का कोई रास्ता नहीं है। दो प्रकृतियां नहीं बढ़ती तो मिथ्यात्व जब नष्ट होगा तब सम्यक् प्रकृतिरूप होकर नष्ट होनेवाला है यानी अधिक प्रकृति बढ़ने से उसका कोई नुकसान नहीं हुआ है। प्रकृति अधिक हो या परमाणु की संख्या अधिक हो, जीव का कुछ नहीं बिगड़ता। कौनसी प्रकृति और किस अनुभागरूप से

उदयरूप है उसका जीव को निमित्तपना बनता है। हां और वह जीव पराधीन भी नहीं है कि उसका कैसा भी अनुभाग आये और हम उसरूप से परिणमे। बिलकुल यह जीव की अपने हाथ की बात है कि वह किस तरह से परिणाम करता है, ॲकॉर्डिंगलि उसके अनुसार वहां कर्मों का अनुभाग अधिक या कम होकर उदय में आता है। जीव के फेवर में है, जीव के बहुत फायदे की बात है। कर्मों में ऐसी अवस्था सहज होती है।

हमने पहले भी एक बार बताया था कि कितनी ही प्रकृतियां ऐसी हैं कि जीव के परिणामों के अनुसार उनमें कुछ परिवर्तन नहीं होता। जैसे कौनसी गति का उदय है या कौनसे स्पर्श, रस का उदय है उसमें क्या परिवर्तन है ? वह जीव के परिणाम के अनुसार चेंज नहीं होंगे। परंतु मोहनीय की प्रकृतियां हैं, जब जीव तत्त्वविचार में लगता है तब उनका अनुभाग अत्यंत मंद होकर वे उदय में आयेगी। अभी हम कर्मों की बातें सीख रहे हैं; हमारा उपयोग इसमें इतना एकाग्र हुआ है तो हमें दुनिया की कोई राग-द्वेष की बातें यहां ख्याल में नहीं आ रही है। अपनी बुद्धि में नहीं आ रही हैं भले वे अबुद्धिपूर्वक में होती होगी, परंतु हमारा यहां उपयोग लग रहा है और कषाय इतने मंद हो गये हैं। तो उनके तीव्र अनुभाग वहां पड़े हैं वे सारे किसरूप से उदय में आयेंगे ? मंदरूप से उदय में आयेंगे। अब कहेंगे इसका क्या फायदा ? कुछ करेंगे तो कुछ होगा कि नहीं होगा ? क्या लगता है ? यह आत्मा-आत्मा की बात करने से क्या होगा ? कुछ करेंगे तो फल मिलेगा। क्या करना चाहते हैं हम ? शरीर की कुछ क्रिया करने से यह मेरा कुछ कार्य है और कुछ फ़ायदा होगा यह मान्यता सारा मिथ्यात्व है। इसकी चर्चा हम बार-बार समयसार, मोक्षमार्गप्रकाशक आदि ग्रंथों में करते ही हैं। यहां हम कर्मों की ओर से भी आपको वही बात बता रहे हैं। किसी भी अनुयोग में बात तो वही होगी, कहीं विषय अलग है, कहीं प्रमेय अलग है।

यहां हम देख रहे हैं, कोई जीव अनादि मिथ्यादृष्टि है तो उसके साथ मोहनीय की २६ प्रकृतियां हैं। पहली बार सम्यक्त्व हुआ तो २८ होगी। वह जीव मिथ्यात्व में गया और असंख्यात वर्षों तक मिथ्यात्व में ही रहा, तो उद्वेलना होकर पहले सम्यक् प्रकृति नष्ट हो जायेगी, तो २७ हो जायेगी। फिर उद्वेलना होकर वह सम्यग्मिथ्यात्व भी नष्ट हो जायेगा, फिर २६वाला हो जायेगा। अब हम दूसरे किसी जीव की बात करते हैं जो सम्यग्दृष्टि है; २८ की सत्ता हो गयी है। अनंतानुबंधी की विसंयोजना की तो उसके

कितने का सत्त्व होगा ? २४ का, कितना आसान है। २८ में से चार गयी, २४ का सत्त्व है। अभी कोई ऐसा पुरुषार्थी है कि विसंयोजना करने के बाद दर्शनमोहनीय की क्षपणा का कार्य चालू कर दिया। पहले किसका क्षय हो जाता है ? मिथ्यात्व का। मिथ्यात्व के सारे परमाणु सम्यग्मिथ्यात्वरूप और सम्यक् प्रकृतिरूप होकर नष्ट हो जाते हैं। अभी और एक प्रकृति चली गयी तो कितने का सत्त्व रहा ? २३ का रहा। सम्यग्मिथ्यात्व भी उसी पद्धति से नष्ट हुआ, कितना सत्त्व रहा ? २२ का। सम्यक् प्रकृति है, एक अंतर्मुहूर्त के लिये रहेगी। अंतर्मुहूर्त में वह भी नष्ट होगी और वह जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जायेगा। उसके मोहनीय का सत्त्व कितना रहेगा ? २१ प्रकृति का। कितना आसान है।

अभी तक हमने कौन-कौनसे स्थान देखे सत्त्व के ? २८ का देखा, २७ का देखा, २६ का देखा, २४ का देखा, २३ का देखा, २२ का देखा, २१ का देखा। उपशमश्रेणी चढ़कर उतरता है तो उसकी सत्ता में कोई परिवर्तन नहीं होता। उपशमित होता है परंतु सत्ता बनी रहती है इसलिये उपशमश्रेणी की बात ही नहीं करेंगे, हम क्षपकश्रेणी की बात करेंगे। हमें अन्य और सत्त्वस्थान देखने हैं। २१ की सत्तावाला जब क्षपकश्रेणी चढ़ता है, तो सबसे पहले कितने का क्षय करता है ? *श्रोता: आठ का।* आठ का की सोलह का ? हमने सभी प्रकृतियों में से सोलह देखी थी, यहां अकेले मोहनीय की बात है। बीचवाले आठ यानी अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण इन आठ कषायों का क्षय करने पर २१ में से कितने बाकी रह गये ? १३। फिर नपुंसकवेद का क्षय हो गया तो १२, स्त्रीवेद का क्षय हो गया तो ११। अभी उसमें भी कौनसे वेद से चढ़ता है उसमें अलग-अलग बात है, फिर भी हम यहां कॉमनलि देखते हैं। उसमें से छह नोकषाय और घटाओ। *श्रोता: पांच।* ६ नोकषाय घट गये, पुरुषवेद और लंबे टाइम तक रहता है। इसलिये ६ को पहले घटाया तो ५ रह गये। फिर पुरुषवेद का भी क्षय हो गया तो ४ रह गये। फिर क्रोध का क्षय हो गया तो ३ रह गये। मान का क्षय हो गया तो २ रह गये, माया का क्षय हो गया १ रह गया तो नौवें गुणस्थान के अंत में १ की ही सत्ता है यानी सत्ता में १ ही है। दसवें में गया; नौवें में बादरलोभ था, फिर सूक्ष्मलोभ हो गया; सत्ता तो १ की ही रहेगी। फिर कहां गया ? ग्यारहवें में की बारहवें में ? एक की सत्तावाला है, दसवें गुणस्थानवाला एक की सत्तावाला कौन ? क्षपकश्रेणीवाला है। उपशमश्रेणीवाले में कितने की सत्ता थी ? हो सकता है द्वितीयोपशमवाला २४ का होगा या क्षायिक सम्यग्दृष्टि २१ का होगा या २८ का भी कहते हैं। परंतु हम उसकी बात नहीं कर रहे हैं।

१ की सत्तावाला, क्षपकश्रेणीवाला, दसवें गुणस्थानवाला है, वह बारहवें गुणस्थान में गया है। अभी मोहनीय का सत्त्व नहीं रहा। अभी तक हमने कौन-कौनसी सत्ता देखी ? २१ तक तो देखी थी; दुबारा- २८ की देखी, २७ की देखी, २६ की देखी, २४, २३, २२, २१ है न ! फिर १३, १२, ११ फिर ५, ४, ३, २ और १।

हम सत्त्वस्थान पढ़ेंगे, देखो ५०८ गाथा की टीका- **आठ, सात, छह, चार, तीन, दो, एक से अधिक बीस**; आचार्यों की गाथा लिखने की कुछ अलग-अलग पद्धतियां हैं ! उनको २८, २७ आदि संख्यायें बार-बार लिखनी थी, उसके बदले क्या कहा ? बीस अधिक आठ, बीस अधिक सात, बीस अधिक छह, बीस अधिक तीन, बीस अधिक दो, बीस अधिक एक। देखो आठ, सात, छह, चार, तीन, दो, एक से अधिक बीस इसका अर्थ क्या है ? दो लाइन में उनको सब कुछ बताना है - २८ भी कहेंगे, २७ भी कहेंगे, कैसे ? देखो हम गाथा पढ़ेंगे, आपको ख्याल आयेगा।

अट्ठ य सत्त य छक्क य चदुतिदुगेगाधिगाणि वीसाणि।
तेरस बारेयारं पणादि एगूणयं सत्तं॥५०८॥

यानी **आठ, सात, छह, चार, तीन, दो, एक से अधिक बीस** यानी २८, २७, २६, २४, २३, २२ और २१ **और** उसके बाद **तेरह, बारह, ग्यारह** और उसके आगे क्या लिखा ? **पांच से लेकर एक-एक हीन प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान हैं।** पांच से लेकर एक-एक हीन यानी ५, ४, ३, २ और १। दो लाइन में उन्होंने पूरे सभी सत्त्वस्थान बता दिये हैं। देखो, आगे लिखे हैं संख्या में - **२८, २७, २६, २४, २३, २२, २१, १३, १२, ११, ५, ४, ३, २, १ वही कहते हैं।** अभी बतायेंगे यह केवल संख्या लिखी है, कैसे होता है वह बतायेंगे यहां पर। **तीन दर्शनमोहनीय और पच्चीस चारित्रमोहनीय ऐसी अट्ठाइस प्रकृतिरूप सत्त्व है।** सत्त्व है न हमने देखा था, जब पहली बार सम्यग्दर्शन हो जाता है तो मिथ्यात्व में से और दो - सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति तैयार होती हैं, मिथ्यात्व तो रहता ही है। दर्शनमोहनीय की तीन और चारित्रमोहनीय की पच्चीस; अनंतानुबंधी चार, अप्रत्याख्यानावरण चार, प्रत्याख्यानावरण चार, संज्वलन चार और नौ नोकषाय ये सब पच्चीस हुयी। ये टोटल २८ हैं। **उनमें से सम्यक्त्व मोहनीय की उद्वेलना होने पर सत्ताइस प्रकृतिरूप सत्त्व होता है।** कल हमने उद्वेलना की बात देखी थी, जो सम्यग्दृष्टि मिथ्यात्व में चला जाता है, उसकी उद्वेलना चालू हो जाती है और पल्य के

असंख्यातवें भागप्रमाण - जो असंख्यात वर्षों का काल है उतने काल यदि कंटिन्युअस वह मिथ्यात्व में रहा, तो जो सम्यक् प्रकृति है वह मिथ्यात्व में टर्न हो जाती है, संक्रमित होती है और नष्ट हो जाती है। तो सत्त्व २८ में से २७वाला हो जायेगा। **उनमें से मिश्रमोहनीय यानी सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना होने पर**; यानी उद्वेलना पूरी हो गयी, उसकी सत्ता नष्ट हो गयी; तो **छब्बीस प्रकृतिरूप सत्त्व होता है।** सम्यग्दृष्टि है, २८ की सत्ता थी; मिथ्यात्व में गया और बहुत लंबे काल तक - असंख्यात वर्षों तक मिथ्यात्व में ही रहा; तो ये जो दो प्रकृतियां तैयार हुयी थी, वे क्रम से एक-एक नष्ट हो जाती हैं। पहले सम्यक् प्रकृति पूर्ण नष्ट हो गयी और फिर सम्यग्मिथ्यात्व भी पूर्ण नष्ट हो गया। तो २८ में से २७वाला हो गया और २७ में से २६वाला हो गया।

श्रोता: २६वाला था वह २८ हुआ, फिर २८ से २७ फिर २६। हां, परंतु गुणस्थान याद रखना। २६ से २८ होने के लिये पहली बार सम्यक्त्व प्राप्त किया था, कोई चौथे गुणस्थान में गया, कोई पांचवें गुणस्थान में गया, कोई सातवें गुणस्थान में गया, वहां पर २८ की सत्ता तो होगी ही। फिर वापस वह मिथ्यात्व में आ गया। मिथ्यात्व में आते ही सत्ता नष्ट नहीं होती है या सम्यग्दर्शन होने पर मिथ्यात्व की सत्ता नष्ट नहीं होती; सत्ता तो बनी रहती है। हम कहते हैं न, सम्यग्दर्शन हुआ तो मिथ्यात्व का अभाव हुआ। यह अभाव हुआ यानी उदय का अभाव हुआ है, बंध का अभाव हुआ है; सत्ता का अभाव नहीं हुआ है। सत्ता का अभाव नहीं हुआ है तभी तो फिर दुबारा मिथ्यात्व में आ सकता है। सत्ता का अभाव कर दिया; जैसे क्षायिक सम्यक्त्वी ने किया, तो फिर दुबारा उसका बंध या उदय होना संभव नहीं था।

हमें आदत है न अभाव हुआ, अभाव हुआ कहने की। पहले-पहले जब हमने अभ्यास की शुरुआत की थी, इ.स. १९७५ में पं. बाबूभाई मेहता के धर्मचक्र यात्रा में थे न ! सीखकर आये वहां से कि सम्यग्दर्शन होता है तो मिथ्यात्वादि का अभाव हो जाता है। हम ऐसा ही कहते थे। दूसरे अन्य भी है जो हमारा बहुत विरोध करते थे कि अभाव कैसे कहते हो ? उनका अभाव मत कहना। तो हम कुछ नहीं समझते थे क्योंकि यह कुछ मालूम नहीं था न तभी। हम अभाव हो गया ऐसा ही समझते थे। उनका अभाव नहीं होता, वे कर्म वहां पड़े हैं, उनका उदय रुक गया है, उनका बंध रुक गया है। सत्ता में हैं और कभी भी उनका उदय आ सकता है। उनका उदय आया इसलिये जीव मिथ्यात्वी नहीं होता। जीव ने मिथ्यात्व परिणाम किये तो उनका उदय आता है।

आगे देखते हैं, २८ में से अनंतानुबंधी की विसंयोजना होने पर २४ प्रकृतिरूप सत्त्व होता है क्योंकि २८वाला था, उनमें से मात्र अनंतानुबंधी जो हैं वे अन्य प्रकृतिरूप परिणमित हो गये यानी उनकी सत्ता नष्ट हो गयी। अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया और लोभ सभी नष्ट हो गये तो २४ रह गये न ? २८ में से ४ कम होकर २४ रह गये। उनमें से मिथ्यात्व का क्षय होनेपर २३ प्रकृतिरूप सत्त्व होता है; जो क्षायिक सम्यग्दृष्टि होनेवाला है वह पहले क्या करता है ? अनंतानुबंधी की विसंयोजना करता है; बाद में मिथ्यात्व के सारे परमाणु सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृतिरूप परिणमित हो जाते हैं, मिथ्यात्व की सत्ता नष्ट हो जाती है, तो २३ प्रकृतिरूप हुआ। सम्यग्मिथ्यात्व का क्षय होनेपर २२ प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। जब क्षय कहते हैं- हमें पता नहीं क्षय होता है यानी क्या होता है। बहुत सारे कर्मों का संक्रमण से ही क्षय होता है। मिथ्यात्व के परमाणु अन्य दो रूप हो जायेंगे, फिर सम्यग्मिथ्यात्व के परमाणु सम्यक् प्रकृतिरूप टर्न हो जायेंगे और सम्यक् प्रकृति अधिक मात्रा में खिरकर नष्ट हो जायेगी। तो २२ का सत्त्व था, सम्यक्त्व मोहनीय का क्षय होने पर २१ प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। यह क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव है।

श्रोता: क्षायिक सम्यक्त्ववालों का तीन प्रकृतियों का अभाव हो जाता है ? क्षायिक कहते हैं जब क्षपणा पूरी हो गयी है। यह उसने क्षपणा शुरू की थी। मिथ्यात्व का क्षय हुआ है, परंतु अभी अन्य दो बाकी हैं तब तक क्षायिक सम्यग्दृष्टि नहीं कहेंगे हम। उसने क्षपणा की शुरुआत कर दी है, वह प्रारंभक है उसका, उसको अभी हम क्षायिक नाम नहीं देंगे क्योंकि सम्यक् प्रकृति का उदय है तब तक उस जीव को हम वेदक सम्यग्दृष्टि ही कहेंगे। भले मिथ्यात्व का क्षय हो गया है, सम्यग्मिथ्यात्व का भी क्षय हो गया है, परंतु जब तक सम्यक् प्रकृति यदि सत्ता में भी है और उदय में भी आ रही है, अंतर्मुहूर्त काल तक रहेगी, तब उसको हम वेदक सम्यग्दृष्टि कह रहे हैं। कृतकृत्य बाद में कहेंगे क्योंकि जब दोनों की सत्ता नष्ट हुयी तो सम्यक् प्रकृति की सत्ता ८ वर्ष की बाकी रहती है। अब ८ वर्ष के जो सारे निषेक हैं, उनमें बहुत सारे प्रोसेसेस होते हैं और जब अंतर्मुहूर्त प्रमाण निषेक बाकी रहते हैं तब जाकर उसको कृतकृत्य वेदक कहेंगे। उस अवस्था में उस जीव का मरण हो सकता है और पहले जो कोई आयु बांधी हो, किसीने नरकायु बांधी है, किसीने तिर्यंचायु, किसीने मनुष्यायु, किसीने देवायु तो वहां जाकर वह क्षपणा का कार्य पूरा होगा। वहां एक-एक समय में सम्यक् प्रकृति

एक-एक निषेक उदय में आकर नष्ट होगा, उसको कृतकृत्य वेदक कहते हैं। कृतकृत्य वेदक क्षायिक होने जा रहा है, कृतकृत्य वेदक के अभी सम्यक् प्रकृति के अंतर्मुहूर्त प्रमाण निषेक बाकी हैं। वह एक-एक निषेक गलेगा और जब अंतिम निषेक खिर जायेगा तब उसको हम क्षायिक सम्यग्दृष्टि कहेंगे। *श्रोता: २३ और २२ किस प्रकार समझाये ?* अभी बताया न, २३ फिर २२ हो गयी और फिर जब सम्यक् प्रकृति पूर्णरूप से नष्ट हो गयी है तब उसको हम २१ प्रकृतिवाला कहेंगे और तब उसको क्षायिक नाम मिलेगा। नहीं तो उसके पहले वेदक सम्यग्दृष्टि कहेंगे।

श्रोता: उपशम सम्यक्त्व में से क्षायिक सम्यक्त्व हो सकता है ? उपशम सम्यक्त्व में से डायरेक्ट क्षायिक सम्यक्त्व किसीके भी नहीं होता। उपशम सम्यक्त्व में से क्षयोपशम सम्यक्त्व होता है उसके लिये कोई अन्य प्रोसेस नहीं है; फिर से करण परिणाम मांडता है ऐसा कुछ नहीं है। उपशम में से सहजरूप से क्षयोपशम सम्यक्त्व होता है और क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि के विशिष्ट विशुद्धि के कारण क्षायिक सम्यग्दर्शन की प्राप्ति होती है। क्षायिक सम्यग्दर्शन प्राप्त करने का कार्य मात्र कर्मभूमि के मनुष्यों में ही होता है और वह भी केवली या श्रुतकेवली के पादमूल में ही होता है। अन्यत्र भोगभूमिवाले को नहीं होगा, देवों के नहीं होगा। हां कृतकृत्य होने के बाद उस अवस्था में मरण संभव है और वह किसी भी गति में गया है- नरक में भी गया है या देव में गया है तो वहां अंतर्मुहूर्त में से जितने निषेक बाकी हैं; हो सकता है कि दो निषेक बाकी हैं और मरकर वहां गया है, दो समय में क्षायिक होगा। विग्रहगति में भी हो जायेगा- जाते-जाते एक समय का निषेक बाकी था और अभी विग्रहगति में है; विग्रहगति में वह कार्य पूरा होगा तो वहां पर वह क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जायेगा। यह कार्य पूर्णता की बात चारों ही गति में कहीं पर भी होती है, परंतु प्रारंभक जीव मनुष्यगति में ही है और वह भी कर्मभूमि का मनुष्य ही क्षायिक सम्यग्दृष्टि होता है। वह तो सब उसमें लगाना - आर्यखण्ड का है, कर्मभूमि का है और वह केवली के पादमूल में है।

हमने देखा सम्यक्त्व मोहनीय का क्षय होने पर २१ का सत्त्व हो गया। सत्ता में से यह और घटना कब हो सकता है ? कुछ प्रकृतियों का क्षय होगा तो ही होगा। क्षय कहां होगा ? क्षपकश्रेणी में। मोहनीय में से सबसे पहले क्षय होनेवाली प्रकृतियां कौनसी हैं ? तो कहते हैं आठ हैं। प्रत्याख्यानावरण चार और अप्रत्याख्यानावरण चार। कहां पर क्षय होता है ? नौवें गुणस्थान में। आठवें गुणस्थान में नहीं, नौवें गुणस्थान में होता है;

आठवें गुणस्थान में कोई क्षपणा का कार्य नहीं होता, आठवें गुणस्थान में कोई उपशमना का कार्य नहीं होता। हां, उसकी विशुद्धि विशिष्ट बढ़ती है बस उतना ही कार्य वहां होता है। अपूर्वकरण को कहेंगे उपशमश्रेणी का गुणस्थान या क्षपकश्रेणी का गुणस्थान, परंतु आठवें गुणस्थान में किसी भी प्रकृति का उपशम या क्षय होता ही नहीं। उसकी जो कुछ पूर्व भूमिका है विशुद्धि बढ़ने की, उतना वहां कार्य होता है।

नौवें गुणस्थान में ही बहुत सारी-मेजॉरिटी प्रकृतियों का क्षय होने का कार्य होता है। पहले आठ कषाय का क्षय होता है तो २१ में से ८ मायनस कर दो, १३ रह गये। अब १३ में से; हम मान लेते हैं जीव पुरुषवेद से ही क्षपकश्रेणी चढ़ रहा है तो वह पहले नपुंसकवेद की क्षपणा करेगा, १२ रह गये। फिर स्त्रीवेद की क्षपणा करेगा, ११ रह गये और फिर एक साथ ६ नोकषाय और पुरुषवेद की क्षपणा चालू करता है। ६ नोकषायों की क्षपणा पहले पूरी हो जाती है तो ग्यारह में से ६ गये, ५ रह गये। क्योंकि लास्ट-लास्ट में बंधे हुये जिसको नवकबंध कहते हैं उसकी क्षपणा करने के लिये उसको और टाइम लगता है। जब तक पुरुषवेद का उदय है तब तक बंध हो रहा था। पहले ऑलरेडि पूर्व में बंधे हुये उसका क्षय हो गया है, परंतु अभी-अभी बंधे हैं, आवली या दो आवली काल पहले, जिसको हम नवकबंध कहते हैं, उसके क्षपणा का कार्य संज्वलनक्रोध के क्षपणा के साथ चलेगा। इसलिये पुरुषवेद को अलग गिनाया है। पहले ६ को बाद किया, ११ में से ६ गये तो ५ रह गये; पुरुषवेद का क्षय हो गया तो ४ रह गये; संज्वलनक्रोध का क्षय हो गया तो ३ रह गये; संज्वलनमान गया तो २ रह गये, संज्वलनमाया गयी तो १ लोभ रह गया। नौवें गुणस्थान में एक बादरलोभ ही रह गया है। नौवें गुणस्थान में बादरलोभ का उदय है; परंतु सत्ता में जितना बाकी है वह सारा सूक्ष्मरूप हो जाता है, कृष्टिरूप हो जाता है। दसवें गुणस्थान में सूक्ष्मलोभ का उदय है और दसवें गुणस्थान के अंत में उसका क्षय हो जाता है। तो मोहनीय का पूरा सत्त्व का नाश हो जाता है, मोहनीय से रहित हो जाता है।

अन्य घातिकर्म हमने देखे, बारहवें गुणस्थान में उनका क्षय हो जाता है। हमने पहले चर्चा की थी, दोपहर में हम पुस्तक के आधार से और अधिक विस्तार से देखेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४५. मोहनीय के सत्त्वस्थान - गुणस्थानों में

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका की भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है और उसका हिंदी अनुवाद आपके हाथ में है। इसी ग्रंथ के आधार से हमने मोहनीय कर्म के बंधस्थान देखे, उदयस्थान देखे हैं, अभी सत्त्वस्थान देख रहे हैं। अभी तक गुणस्थानों में उदय और बंध की बात चली। अब बंध और उदय रुकने पर भी कहां तक कितनी प्रकृतियों का सत्त्व पाया जाता है, इसकी चर्चा चलेगी।

एक प्रश्न है- *क्षपकश्रेणी में नौवें गुणस्थान में बादरकृष्टि और दसवें गुणस्थान में सूक्ष्मकृष्टिरूप क्रिया कर्म की प्रकृति में कैसे होती है ?* यह सूक्ष्मकृष्टि करने की क्रिया दसवें गुणस्थान में नहीं होती, नौवें गुणस्थान में ही होती है। उसके उदयरूप क्रिया दसवें में होती है और वह अकेली एक क्रिया नहीं होती है, ऐसी सैकड़ों क्रियायें होती हैं। *प्रश्न: प्रथमोपशम सम्यक्त्व के पहले करणलब्धि में कोई स्पेशल प्रक्रिया होती है ?* अनेक होती हैं, जो लब्धिसार का विषय है। पुस्तक आयेगी थोड़े दिन में उसमें से पढ़ लेना। केवल उपशम सम्यक्त्व, क्षायिक सम्यक्त्व, प्रथमोपशम सम्यक्त्व है या देशसंयत गुणस्थान है या संयम प्राप्ति है या उसमें क्षपणा है, उपशमश्रेणी है, इसीका उसमें वर्णन है। एक-दो प्रक्रियायें नहीं, बहुत सारी प्रक्रियायें होती रहती हैं। हम मूल-बेसिक बातें देख रहे हैं; इसमें कहां स्पेशल क्रियायें होती हैं, वह अलग विषय है। हमें बेसिक विषय समझ में आये तो आगे की प्रक्रिया कैसे होती है वह बात समझ में आ सकती है।

अभी हम यहां सत्त्वस्थानों की बात देख रहे हैं। हमने मोहनीय के कौन-कौनसे सत्त्वस्थान देखे थे याद है ? २८वाला, २७वाला, २६वाला, २४, २३, २२, २१, फिर १३, १२, ११, ५, ४, ३, २ और १। हमने यह भी देखा था कि वे कहां-कहां होते हैं ? पहले हमने देखा था अनादि मिथ्यादृष्टि है उसको २६ का स्थान है। जब वह सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो उसके २८ का हो जाता है क्योंकि सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति तैयार होती हैं। मिथ्यात्व का अनुभाग घटकर ये दो प्रकृतियां तैयार होती हैं। वही जीव मिथ्यात्व में आता है तो २८ की सत्ता असंख्यात वर्षों तक बनी रहती है। दुबारा वह उस काल में वेदक सम्यक्त्व भी प्राप्त कर सकता है और वह सत्ता नष्ट होती है तो फिर प्रथमोपशम सम्यक्त्व दुबारा प्राप्त करेगा। २८ की सत्ता है सम्यक् प्रकृति की उद्वेलना होने पर २७

की सत्ता हो जाती है। सम्यग्मिथ्यात्व की भी उद्वेलना होने पर २६ की सत्ता हो जाती है। जो कोई सम्यग्दृष्टि है, २८ की सत्तावाला है, अनंतानुबंधी की विसंयोजना करता है तब चार कम होती हैं यानी उसकी २४ की सत्ता हो जाती है। उसके बाद मिथ्यात्व का क्षय होने पर २३ की सत्ता होती है। सम्यग्मिथ्यात्व का क्षय होने पर २२ हो जाती है और सम्यक् प्रकृति का भी क्षय होने पर २१ की सत्ता हो जाती है।

ऐसा जीव जब क्षपकश्रेणी चढ़ता है तो सबसे पहले आठ कषायों का क्षय कर देता है अप्रत्याख्यानावरण की चार और प्रत्याख्यानावरण की चार; तब २१ में से ८ कम हो गयी। कितनी रह गयी ? १३ प्रकृतियां रह जाती हैं। फिर उसमें एक वेद का पहले क्षय होता है; नपुंसकवेद का क्षय हो जाता है तो १२, फिर स्त्रीवेद का क्षय हो जाता है तो ११ रहती हैं। छह नोकषायों का क्षय हो जाता है तो ५ रहती हैं। पुरुषवेद का क्षय हो जाता है तो ४ रहती हैं। यह क्रम से संज्वलन क्रोध, फिर मान और फिर माया का क्षय होने पर सत्ता में ३ फिर २ फिर रहती है। फिर लोभ दसवें तक है। सूक्ष्मलोभ का भी दसवें में क्षय हो जाता है तो मोहनीय की सत्ता पूरी की पूरी नष्ट हो जाती है। यह मोहनीय के सत्त्व के स्थान २१ में से १३ हुये, १३ में से १२, १२ में से ११, ६ कम होने पर ५, फिर ४, फिर ३, फिर २ और १ हुये।

हम १३ प्रकृति तक आये थे, २१ में से ८ का क्षय होने पर १३ प्रकृति तक हम पहुंच गये थे। पृष्ठ ४७४ पर दूसरा पॅरेग्राफ पढ़ेंगे- **पुनश्च स्त्रीवेद और नपुंसकवेद में से एक का क्षय होने पर बारह-प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। तथा स्त्रीवेद और नपुंसकवेद में से अवशेष एक वेद का क्षय होने पर ग्यारह- प्रकृतिरूप सत्त्व होता है।** एक चला गया तो १३ में से १२ हुआ और दूसरा भी चला गया तो १२ में से ११ हो जाता है। **हास्यादि छह नोकषायों का क्षय होने पर** देखो इनका उदय आठवें में ही मिटा था परंतु सत्ता में है और यहां पर आकर उसका क्षय हो जाता है। सत्त्व अभी तक था, जब तक क्षय नहीं होता है, तब तक उन प्रकृतियों का सत्त्व बना रहता है। **हास्यादि छह नोकषायों का क्षय होने पर पांच प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। पुरुषवेद का क्षय होने पर चार प्रकृतिरूप सत्त्व होता है।** अभी ये चार प्रकृतियां कौनसी रहेगी ? *श्रोता: संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ।* संज्वलन क्रोध-मान-माया-लोभ। **संज्वलनक्रोध का क्षय होने पर तीन-प्रकृतिरूप सत्त्व होता है।**

संज्वलनमान का क्षय होने पर दो-प्रकृतिरूप सत्त्व होता है। संज्वलनमाया का क्षय होने पर एक बादरलोभरूप सत्त्व होता है। बादरलोभ का क्षय होने पर सूक्ष्मलोभरूप सत्त्व होता है। यहां बादर और सूक्ष्म, एक लोभप्रकृति ही है, लोभ के ही दो भेद बताये **इसलिये दोनों का एक ही स्थान कहा।** लोभ का एक स्थान कह दिया, एक प्रकृति के दो अलग-अलग स्थान नहीं गिने हैं। **ऐसे पंद्रह सत्त्वस्थान हैं।**

हमने देखा न २८, २७, २६, २४, २३, २२, २१, १३, १२, ११, ५, ४, ३, २, १ सब मिलकर कितने हुये ? *श्रोता: पंद्रह।* पंद्रह - इसको कहेंगे मोहनीय के सत्त्वस्थान। यह स्थान कौनसे गुणस्थानों में कैसे पाये जाते हैं ? वह कहेंगे। ४७५ पृष्ठ, ५०९ की टीका में देखते हैं- **मिथ्यात्व में तीन,** इसका अर्थ है मिथ्यात्व में तीन स्थान हैं, कौनसे वह हम देखेंगे। **सासादन में एक, मिश्र में दो, असंयतादि चार में पांच-पांच यानी हर एक में पांच-पांच; चौथे में भी पांच, पांचवें में भी पांच छठे में भी पांच और सातवें गुणस्थान में भी पांच स्थान होते हैं सत्ता के; अपूर्वकरण में तीन, अनिवृत्तिकरण में ग्यारह, सूक्ष्मसाम्पराय में चार, उपशांतमोह में तीन सत्त्वस्थान पाये जाते हैं।** वे कौनसे हैं उनको कहेंगे, ५१० की टीका- **मिथ्यात्व में तीन सत्त्वस्थान अट्ठाइस, सत्ताइस और छब्बीस,** यहां लिखा है न बोर्ड पर, मिथ्यात्व के तीन स्थान हैं - २८वाला स्थान, २७ प्रकृतिवाला स्थान और २६ प्रकृतिवाला स्थान। इसका कारण हमने देखा था, यहां भी पढ़ेंगे- सम्यक्त्वमोहनीय और सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना, उद्वेलना का अर्थ याद है न ? उलटा संक्रमण चल रहा है; अभी वे सारे मिथ्यात्वरूप परिणमित हो रहे हैं। मिथ्यात्व गुणस्थान में चारों गति के जीव इनकी उद्वेलना करते हैं; देव हो, नारकी हो, मनुष्य हो, तिर्यंच हो - कोई भी हो किसी भी पर्याय में चला जाय, लंबे काल तक मिथ्यात्व में है तो इनकी उद्वेलना चलती रहती है।

देखो, मैं एक इंटरेस्टिंग बात बताना चाहती हूं जो सत्त्व से कुछ नहीं लगता है। जो एक बार सम्यक्त्व प्राप्त करके मिथ्यात्व में गया है, उसकी सत्ता में २८ प्रकृतियां हैं- दर्शनमोहनीय की तीन प्रकृतियां हैं। जब सम्यक्त्व प्राप्त हुआ था तो ये जो तीन प्रकृतियां तैयार हुई थी, उनकी स्थिति कितनी बनी थी ? अंतःकोड़ाकोड़ी सागर बनी, मिथ्यात्व की भी। स्थिति समझते हैं ? सत्ता में जो स्थिति हो गयी उनकी स्थिति कितनी लंबी है ? कितने समयों के निषेक पड़े हैं ? अंतःकोड़ाकोड़ी सागर के। *श्रोता: मिथ्यात्व की या सभी कर्मों की ?* सभी कर्मों की। मिथ्यात्व हो, ज्ञानावरण हो,

दर्शनावरण हो, चारित्रमोहनीय हो; सभी कर्मों की स्थिति प्रायोग्यलब्धि के काल में ही अंतःकोड़ाकोड़ी सागर हो जाती है। करोड़ गुणा करोड़ को कोड़ाकोड़ी कहते हैं; अंतःकोड़ाकोड़ी यानी उससे कम जिसको हम कहेंगे लेस दॅन कोड़ाकोड़ी सागर। करोड़ गुणा करोड़ को कोड़ाकोड़ी कहते हैं और आगे सागर लगाना हां, नहीं तो भूल जायेंगे। प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करनेवाले के उससे अधिक स्थिति नहीं होती है; प्रथमोपशम कह रही हूं मैं। यह जीव जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करनेवाला है, उसके सभी सात कर्मों की स्थिति अंतःकोड़ाकोड़ी सागर हो जाती है। मिथ्यात्व की भी स्थिति अंतःकोड़ाकोड़ी सागर होती है। मिथ्यात्व में से जो अन्य दो प्रकृतियां तैयार होगी उनकी भी स्थिति उतनी होगी, तीनों की समान होगी। आयु की स्थिति में कोई बदल नहीं होता।

अब यह जीव सम्यक्त्व में से मिथ्यात्व में आ गया, आते ही शुरू में तीनों की स्थिति समान थी। आते ही पहले ही समय में उसने मिथ्यात्व का बंध प्रारंभ किया, अन्य दो का बंध होगा नहीं। मिथ्यात्व का बंध चालू कर दिया, तो उसका यथायोग्य कभी कम कभी ज्यादा बंध होगा। अभी अंतर्मुहूर्त के बाद उसका स्थितिबंध बढ़ता चला जायेगा तो अधिक से अधिक ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक कितना भी हो सकता है यानी अंतःकोड़ाकोड़ी सागर के ऊपर कितना भी बंध करेगा। परंतु ये अन्य दो प्रकृतियां हैं, उनकी स्थिति कितनी रहेगी ? अंतःकोड़ाकोड़ी सागर। वह अभी बढ़ने का कोई चान्स नहीं है, वह घटती चली जायेगी। उसमें कैसे बढ़ेगी ? अभी मिथ्यात्व में से उनरूप संक्रमण नहीं होता है। मिथ्यात्व में से अन्य दोरूप होने का कार्य सम्यग्दृष्टि ही करता है। मिथ्यात्व में आने पर मिथ्यात्व की प्रकृति अन्य दोरूप संक्रमित नहीं होती। अभी उनकी स्थिति कितनी बाकी है सत्ता में ? अंतःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है। अब उनकी उद्वेलना चालू हो जाती है, उनकी स्थिति घटती चली जाती है। घटकर सम्यक् प्रकृति नष्ट होने के लिये कितना काल लगता है ? पल्य के असंख्यातवें भाग काल लगता है यानी असंख्यात वर्ष। उसकी स्थिति घटते-घटते-घटते कितनी हो जाती है ? अंतःकोड़ाकोड़ी सागर से घटते-घटते कुछ सागर हो जाती है और फिर एक सागर हो जाती है। फिर बाद में नष्ट हो जायेगी। जब तक करीबन एक सागर जितनी नहीं हुयी है तब तक वह जीव यदि सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो वेदक सम्यक्त्व ही प्राप्त करेगा।

एकेन्द्रिय के लिये एक सागर कहा है और द्वीन्द्रिय आदिक त्रस जो हैं उनके लिये पृथक्त्व सागर कहा है यानी कुछ सागर क्योंकि इतनी स्थिति घटाये बिना फिर दुबारा उपशम करना इतना उसका सामर्थ्य नहीं है। दुबारा उसे उपशम सम्यक्त्व प्राप्त करना है तो इतने असंख्यात वर्ष जाने पर उपशम सम्यक्त्व हो सकता है और इतने असंख्यात वर्ष तक उसको सम्यक्त्व होगा तो कौनसा हो सकता है ? क्षयोपशम सम्यक्त्व हो सकता है। इसको कहते हैं वेदकयोग्य काल। उद्वेलना होते-होते उन दोनों की स्थिति भी घटती चली जाती है; अंतःकोड़ाकोड़ी सागर से भी घटते-घटते कुछ सागर हो जायेगी, फिर एक सागर हो जायेगी, ऐसी उद्वेलना होती रहेगी तो उनकी बिलकुल मिट जायेगी। परंतु इस बीच अगर सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो वह क्षयोपशम सम्यक्त्व ही होगा क्योंकि एक बार उपशम सम्यक्त्व होकर जीव गिर जाता है तो दुबारा, दूसरी बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने के लिये उसको बीच में कम से कम काल पल्य के असंख्यातवें भाग इतना लगता है, जो असंख्यात वर्षों का काल है।

क्या कहा ? एक बार प्रथमोपशम हुआ और दूसरी बार प्रथमोपशम हुआ; आप कहेंगे दूसरी बार हुआ तो द्वितीयोपशम कहो न ? ऐसा नहीं है। द्वितीयोपशम कब कहते हैं जब क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि जीव उपशमश्रेणी चढ़ने के पहले दुबारा तीनों ही दर्शनमोहनीय का उपशम कर देता है तब उसको द्वितीयोपशम कहेंगे। जब मिथ्यात्व में से जीव को औपशमिक सम्यक्त्व होता है तब उसको प्रथमोपशम सम्यक्त्व ही कहेंगे। वह एक बार हो जाये, दो बार हो जाये या असंख्यात बार हो जाये, फिर भी उसका नाम है प्रथमोपशम सम्यक्त्व। *श्रोताः प्रथमोपशम सम्यक्त्व दूसरी बार हो जायेगा तो क्या ये दो सत्ता में रहेगी उसके ?* सत्ता में यदि यह एक सागर के करीबन है तो सत्ता में भी रह सकती है। सत्ता में होते हुये उसने फिर दुबारा तीनों का ही उपशम किया क्योंकि हमने जब प्रथमोपशम की परिभाषा देखी थी तो पांच या सात प्रकृतियों का उपशम करता है ऐसा देखा था। पांच यानी मिथ्यात्व की एक और अनंतानुबंधी की चार; और सात लेंगे तो कौनसी है ? ये दर्शनमोहनीय की तीन और अनंतानुबंधी की चार। मैं तो कहूंगी पांच, छह या सात।

जिसकी २८ की सत्ता है और अन्य दो प्रकृति करीबन सागर जितनी हो गई है, तो तीनों प्रकृतियों का एक साथ उपशम करता है। सम्यक् प्रकृति की उद्वेलना हो चुकी है, अब सत्ता में सम्यग्मिथ्यात्व और मिथ्यात्व बाकी है तब कौनसा सम्यक्त्व प्राप्त

करेगा ? प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त करेगा। छह प्रकृतियों को- अनंतानुबंधी की चार और दर्शनमोहनीय की दो- छह को उपशमाता है और यदि दोनों की उद्वेलना पूरी हो गयी है तो जैसे अनादि का अकेले मिथ्यात्व को उपशमाता है वैसे वह भी करेगा। यहां सत्ता कितनी है, उसकी बात चल रही है। हमारा सत्ता का प्रकरण है, परंतु वेदकयोग्य काल किसको कहते हैं यह बात हमें इससे पता चलती है। मिथ्यात्व में आने के बाद असंख्यात वर्षों तक दुबारा उसको सम्यक्त्व होगा तो क्षयोपशम सम्यक्त्व ही होगा। प्रथमोपशम सम्यक्त्व इतना जल्दी नहीं हो सकता। कौनसा सम्यक्त्व होता है, इतनी बात बतानी है। उसमें जीव के परिणामों की अपेक्षा उसमें कोई खास बात नहीं है।

हम देख रहे थे कि मिथ्यात्व में तीन सत्त्वस्थान हैं, कौनसे तीन हैं ? २८ का है, २७ का है और २६ का है। दूसरा सासादन गुणस्थान कब प्राप्त होता है ? *श्रोता: ऊपर से नीचे।* ऊपर से नीचे कहां से ? नीचे दसवें से ? बारहवें से ? कहां से ? *श्रोता: चौथे से। अन्य श्रोता: चौथे से, पांचवें से, छठे से।* चौथे से या पांचवें से या छठे से, उसके लिये एक आवश्यक कंडिशन है। औपशमिक सम्यग्दृष्टि जीव उपशम सम्यक्त्व के काल में से एक समय से लेकर छह आवली काल बाकी है; इतने काल में अनंतानुबंधी का उदय होने से सासादन गुणस्थान में आता है। कौन आता है ? प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टि। प्रथमोपशम प्राप्त किया तभी सत्ता में कितने का सत्त्व हुआ था ? *श्रोता: २८।* २८ का क्योंकि प्रथमोपशम सम्यक्त्व के काल में २८ प्रकृतियां हुई थी। वही जीव सासादन में आया है तो सत्ता कितनी रहेगी उसकी ? २८ की २८ हैं, उसमें दूसरा कोई सत्त्वस्थान नहीं है। कोई भी सासादन सम्यग्दृष्टि है तो उसके २८ का सत्त्व है ही है। सासादन में एक ही सत्त्वस्थान है और वह कौनसा है ? यह २८वाला है। मिश्र यानी तीसरे गुणस्थान में २८वाला है। यह २८वाला जो है वह चौथे से तीसरे में आता है कि पहले से तीसरे में जाता है ? *श्रोता: दोनों हो सकते हैं।* हां, दोनों हो सकते हैं क्योंकि तीनों की सत्ता है न। पहले से तीसरे में जायेगा जो सादि मिथ्यादृष्टि है जिसके मिथ्यात्व भी है; सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक् प्रकृति भी सत्ता में पड़ी हैं वह जीव सम्यग्मिथ्यात्व के उदय से तीसरे में चला जायेगा; या जो कोई सम्यग्दृष्टि है वह सम्यग्मिथ्यात्व के उदय से तीसरे में आयेगा, परंतु सत्ता में कितनी है उसके ? २८।

<table>
<tr><td colspan="4">मोहनीय के सत्त्वस्थान: २८, २७, २६, २४, २३, २२, २१, १३, १२, ११, ५, ४, ३, २, १</td></tr>
<tr><td colspan="2">मिथ्यात्व २८, २७, २६</td><td>सासादन २८</td><td>मिश्र २८, २४</td></tr>
<tr><td colspan="3">असंयत, देशसंयत, प्रमत्त, अप्रमत्त २८, २४, २३, २२, २१</td><td>उपशमश्रेणी २८, २४, २१</td></tr>
<tr><td colspan="4">क्षपकश्रेणी:</td></tr>
<tr><td></td><td>अपूर्वकरण २१</td><td colspan="2">अनिवृत्तिकरण २१, १३, १२, ११, ५, ४, ३, २, १</td></tr>
<tr><td></td><td colspan="3">नपुंसकवेद सहित चढ़नेवाला १३, ११, ४
स्त्रीवेद सहित चढ़नेवाला १३, १२, ११, ४
पुरुषवेद सहित चढ़नेवाला १३, १२, ११, ५, ४</td></tr>
</table>

दूसरा लिया २४वाला, यह कौनसा जीव है ? जिस सम्यग्दृष्टि ने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है, सत्ता में अनंतानुबंधी है ही नहीं, क्या वह जीव तीसरे गुणस्थान में आ सकता है ? आ सकता है। हां, यह आवलीवाली बात मिथ्यात्व के लिये है। तीसरे गुणस्थान में अनंतानुबंधी का उदय नहीं है, ना बंध है तो उसमें आने में कोई रुकावट नहीं है। यहां सत्त्वस्थान २४ का लिखा है न, इसका अर्थ क्या है ? आ सकता है। *श्रोता: चौथेवाला।* चौथेवाला जिसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है, वह जीव गिरकर तीसरे गुणस्थान में आ सकता है। वहां अनंतानुबंधी का बंध है ही नहीं और ना ही उदय है और इसका काल एक अंतर्मुहूर्त है। तो यहां रहेगा, दुबारा ऊपर जायेगा या मिथ्यात्व में चला जायेगा। *श्रोता: पहलेवाले को २४ का स्थान है ?* पहले गुणस्थानवाले को २४ का स्थान ही नहीं है। पहले गुणस्थान में जाने पर २८ का स्थान होता है क्योंकि जो जीव अनंतानुबंधी की विसंयोजना करने के बाद पहले गुणस्थान में जाता है, पहले ही समय से अनंतानुबंधी का सत्त्व हो जाता है। सत्त्व कहा; उदय भले नहीं होगा आवली तक; परंतु बंध शुरू हुआ, बंध हुआ यानी सत्त्व हुआ कि नहीं हुआ उसका ? हां। उदय के लिये भले आवली लगे परंतु सत्त्व तो तत्काल हो जाता है। पहले गुणस्थान से कोई तीसरे गुणस्थान में आनेवाले को २४ का सत्त्व ही नहीं होगा, तो २४ का सत्त्व किसके होगा ? *श्रोता: जिसने विसंयोजना की।* जिसने अनंतानुबंधी की विसंयोजना की है। वह कौनसे गुणस्थान से आयेगा तीसरे गुणस्थान में ? *श्रोता: चौथे गुणस्थान से।* अकेले चौथे गुणस्थान से आयेगा ? चौथे गुणस्थान से भी आ सकता है, पांचवें गुणस्थान से भी आ सकता है, छठे गुणस्थान से भी आ सकता है; आने में कोई रुकावट नहीं है।

तीसरे गुणस्थान से जाता कहां है ? चौथे गुणस्थान में या पहले गुणस्थान में जाता है।

अब सासादन में एक और मिश्र में दो। पहले से तीसरे में जानेवाला जीव कौन है ? इसमें से कौन-कौन जा सकता है ? पहलेवाला २६वाला जायेगा कि नहीं जायेगा ? कैसे जायेगा ? उसमें सम्यग्मिथ्यात्व की सत्ता ही नहीं है। *श्रोता: २८वाला।* हां, २८वाला जायेगा सम्यग्मिथ्यात्व के उदय से २८ की सत्तावाला तीसरे गुणस्थान में चला जायेगा। *श्रोता: सादि मिथ्यादृष्टि।* सादि मिथ्यादृष्टि है तभी तो २८ की सत्ता होगी और जहां दर्शनमोहनीय की तीनों प्रकृतियों की सत्ता है, वह तीसरे गुणस्थान में जाता है। उदय किसका है वहां ? सम्यग्मिथ्यात्व का उदय है और जीव तीसरे गुणस्थान में जाता है। *श्रोता: २७वाला।* २७वाला नहीं जायेगा मगर इसकी सूक्ष्म चर्चा अभी हम छोड़ देंगे।

असंयत आदि चार में यानी चौथे, पांचवें, छठे और सातवें गुणस्थान की बात है। पांच स्थान हैं अलग-अलग, उनके नाम आगे पढ़ेंगे हम। पहले इनकी संख्या देखते हैं- २८, २४, २३, २२ और २१ की सत्तावाले। असंयत में भी, देशसंयत में भी, प्रमत्तसंयत में भी और अप्रमत्तसंयत में भी। इन चार के इनिशियल्स लिखे हैं यहां पर। अपूर्वकरण में तीन स्थान हैं- उपशमश्रेणी की अपेक्षा तीन स्थान कहे। २१वाला स्थान क्षपकश्रेणी में भी है। वह इसमें इन्क्लूड है, इसलिये दोनों श्रेणी की अपेक्षा आठवें गुणस्थान में स्थान कितने होंगें ? २८वाला, २४वाला और २१वाला; २१वाला यहां पर भी है तो हम इसे दो बार नहीं गिनेंगे। २८ का, २४ का और २१ का तीन स्थान हैं; अपूर्वकरण में तीन हैं। अनिवृत्तिकरण में ग्यारह हैं। अनिवृत्तिकरण में कैसे हैं ? यहां कितने लिखे हैं ? यहां क्षपक अनिवृत्तिकरण के लिखे हैं। देखो २१वाला, १३वाला, १२वाला, ११वाला, ५वाला, ४वाला, ३वाला, २वाला, १वाला - कितने हुये ? नौ स्थान हुये। यहां क्षपक की बात नहीं पूछी थी, उन्होंने क्या कहा था ? अनिवृत्तिकरण में कितने हैं ? अनिवृत्तिकरण कहेंगे तो उपशमश्रेणीवाला भी लेंगे और क्षपकश्रेणीवाला भी लेंगे। क्षपक के नौ स्थान यहां पर हो गये। २१वाला उपशमश्रेणी में भी है और कौनसे बचे हैं ? २४वाला और २८वाला ये दो और क्षपक के नौ मिलकर ग्यारह हो गये न ? ग्यारह लिखे हैं न यहां पर ? ये अनिवृत्तिकरण के ग्यारह सत्त्वस्थान हैं।

सूक्ष्मसाम्पराय में चार; क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय में कौनसा स्थान है ? आप कह सकते हैं क्षपक सूक्ष्मसाम्पराय, कितना सत्त्व बाकी है ? *श्रोता: १ लोभ का।* १ लोभ का।

यहां कितने लिखे हुये हैं ? चार स्थान लिखे हैं। क्यों ? देखो, सूक्ष्मसाम्पराय कहा, क्षपक नाम नहीं डाला है। जब सूक्ष्मसाम्पराय कहेंगे तो हमें उपशमश्रेणीवाला भी सोचना है और क्षपकश्रेणीवाला भी सोचना है। क्षपक में कौनसा स्थान है ? १वाला है और वह उपशामक के सूक्ष्मसाम्परायवाले को २८वाला, २४वाला और २१वाला है। उपशमश्रेणी में स्थान उतने ही रहेंगे क्योंकि वहां कर्मों का उपशम होता है, किसी भी कर्म का नाश नहीं होता। शुरुआत से २८वाला, २४वाला, २१वाला तीनों ही स्थान हम कहेंगे। जब दसवें गुणस्थान की बात है तो उपशमश्रेणी में २८, २४ और २१ है और क्षपकश्रेणी में कौनसा स्थान है ? *श्रोता: १ लोभ।* १ लोभवाला स्थान। उपशांतमोह में तीन सत्त्वस्थान पाये जाते हैं। उपशांतमोह के तीन कौनसे हैं ? *श्रोता: २८, २४ और २१ उपशम में।* उपशामक में २८, २४ और २१ और क्षपक में ? क्षपक में होता है उपशांतमोह गुणस्थान ? *श्रोता: नहीं।* मैंने पूछा क्षपक उपशांतमोह में कितने होगें ? *श्रोता: एक भी नहीं।* क्षपकश्रेणी में उपशांतमोह होता ही नहीं है, हां, हम आपको ऐसे सीधे क्वेश्चन थोड़े ही पूछेंगे ? आगे के सत्त्वस्थान यहां नहीं लिखे हैं पर हम समझ सकते हैं।

यह स्थान बताये, अब उनकी संख्यायें बतायी वे कौनसे हैं। देखो, पेज ४७५, गाथा ५१० की टीका- **मिथ्यात्व में तीन सत्त्वस्थान अट्ठाइस, सत्ताइस और छब्बीस क्योंकि सम्यक्त्वमोहनीय, सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना मिथ्यात्व गुणस्थान में चारों गति के जीव करते हैं। सासादन में अट्ठाइस-प्रकृतिरूप एक ही स्थान है। मिश्र में अट्ठाइस और चौबीसरूप दो हैं क्योंकि अनंतानुबंधी के विसंयोजनावाले भी सम्यग्मिथ्यात्व के उदय से मिश्र गुणस्थान में आते हैं।** सर्वत्र निमित्त से कथन होता है - इसका उदय आने से तीसरे में आता है ऐसा कथन होगा परंतु जीव उस परिणामरूप परिणमित होता है तब कहेंगे उसका उदय आता है। यह निमित्त की भाषा होने से हमें ऐसा ही लगता है, क्या करे बिचारे का उदय आया तो उसको नीचे गिरना पड़ा। ऐसा नहीं है। यह निमित्त की ओर से कथन किया जा रहा है। **असंयत आदि चार गुणस्थानों में पांच-पांच स्थान** कौन-कौनसे हैं ? **अट्ठाइस, चौबीस, तेइस, बाइस और इक्कीस हैं क्योंकि अनंतानुबंधी की विसंयोजना और तीन दर्शनमोहनीय का क्रम से क्षय इन गुणस्थानों में पाया जाता है।** २८वाला कौनसा है ? औपशमिक या क्षायोपशमिक सम्यग्दृष्टि। क्षयोपशम सम्यग्दृष्टि विसंयोजना करने पर २४वाला हो जाता है। फिर दर्शनमोहनीय में से क्रम से एक-एक का क्षय होता है;

पहले मिथ्यात्व का क्षय हो जाता है तो २३वाला होता है। सम्यग्मिथ्यात्व का क्षय होने पर २२वाला होता है और सम्यक् प्रकृति का भी क्षय होता है तो २१वाला हो जाता है। यह कार्य कहां होता है? चौथे में, पांचवें में, छठे में, सातवें में कहीं पर भी हो सकता है, इसलिये चारों ही गुणस्थानों में ये सभी स्थान पाये जाते हैं। दर्शनमोहनीय की क्षपणा करने का कार्य चौथे गुणस्थानवाला भी कर सकता है, पांचवेंवाला भी कर सकता है, छठे-सातवेंवाला भी कर सकता है। इसलिये इन सभी गुणस्थानों में सत्ता के ये सभी स्थान पाये जाते हैं। अब हम आगे बढ़ेंगे।

देखो, हर छह महीने और आठ समय में ६०८ जीव मोक्ष जाते हैं। सुना है कि नहीं सुना ? ऐसे ही हर छह महीने और आठ समय में ६०८ जीव दर्शनमोहनीय की क्षपणा करते हैं, हां, यह नियम है। हर छह महीने और आठ समय में ६०८ क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो जाते हैं। *श्रोता: मोक्ष जाते हैं ?* मोक्ष चारित्रमोह की क्षपणा करके जायेंगे। यह दर्शनमोह की क्षपणा का नियम है। ऐसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि इस विश्व में कितने हैं ? हर छह महीने और आठ समय में ६०८ जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टि होते हैं और क्षायिक होने का कार्य कौनसी गति में चलता है ? *श्रोता: मनुष्य में।* मनुष्य में। मैंने पूछा, इस विश्व में ऐसे क्षायिक सम्यग्दृष्टि जीव कौन-कौनसी गति में हैं और कितने हैं ? *श्रोता: चारो गति में हैं। असंख्यात हैं।* हां, चारो गति में हैं। क्षायिक सम्यग्दृष्टि नारकी कितने हैं जो पहले नरक में हैं ? *श्रोता: संख्यात। अन्य श्रोता: असंख्यात।* असंख्यात हैं क्योंकि वहां की इतनी लंबी आयु है और यहां से जीव हर छह महीने आठ समय में ६०८ में से थोड़े जायेंगे। सभी थोड़े ही नरक में जायेंगे, गिने चुने जायेंगे। फिर भी वह सागर का काल इतना बड़ा है कि उतने काल में वहां असंख्यात क्षायिक सम्यग्दृष्टि जन्मते हैं। भोगभूमि के तिर्यंच जीव जो यहां से क्षायिक लेकर वहां उत्पन्न होते हैं वे तीन पल्य तक की आयु में उत्पन्न होते हैं। तीन पल्यवाला भी इतना लंबा काल है तो हर छह महीने आठ समय में कुछ-कुछ तिर्यंच जीव वहां क्षायिक होकर चले जायेंगे, वे भी असंख्यात हैं वहां पर। देव में भी असंख्यात क्षायिक सम्यग्दृष्टि हैं। सौधर्म-ईशान से लेकर ऊपर सर्वार्थसिद्धि तक सर्वत्र क्षायिक सम्यग्दृष्टि पाये जाते हैं वे भी असंख्यात हैं।

मेरा सवाल है, मनुष्यों में क्षायिक सम्यग्दृष्टि कितने होंगे ? *श्रोता: संख्यात।* और भोगभूमि में ? *श्रोता: संख्यात।* संख्यात क्योंकि ढाईद्वीप में टोटल पर्याप्त मनुष्य ही

संख्यात हैं। भोगभूमि के ले लो, कर्मभूमि के ले लो, आर्यखण्ड के ले लो, म्लेंच्छखण्ड के ले लो; लब्धिअपर्याप्त को छोड़कर सब टोटल मिलकर कितने हैं ? संख्यात ही हैं। लब्धिअपर्याप्त मनुष्य असंख्यात हैं, परंतु उनमें सम्यक्त्व होने का सवाल नहीं है। क्षायिक सम्यग्दृष्टि मनुष्य केवल संख्यात हैं, और बाकी तीनों ही गतियों में असंख्यात क्षायिक सम्यग्दृष्टि हैं। मोक्ष में उनका नंबर पहले लगेगा कि हमारा लगेगा ? देखो, मात्र क्षायिक सम्यक्त्व की बात नहीं है, तीर्थंकर प्रकृति बांधनेवाले जीव कितने हैं ? नरक में कितने और स्वर्ग में कितने हैं ? *श्रोता: असंख्यात हैं।* वे भी असंख्यात हैं। असंख्यात जीव तीर्थंकर प्रकृति बांध रहे हैं और वे आगे नियम से तीर्थंकर होकर यहां आकर मोक्ष ही जानेवाले हैं। देव में इतनी लंबी आयु है वहां पर; सागरों की आयु होती है तो वहां से यहां कुछ जीव आयेंगे और वे क्रम से तीर्थंकर होकर मोक्ष चले जायेंगे और हम उसमें नंबर लगाना चाहते हैं न ? *श्रोता: महाविदेह।* हां, महाविदेह जाना चाहते हैं !

हम ४७४ पृष्ठ पर आये हैं। उपशमश्रेणी में अपूर्वकरणादि चारों गुणस्थानों में यानी कौन-कौनसे ? उपशमश्रेणी के अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण, सूक्ष्मसाम्पराय और उपशांतमोह में २८, २४ और २१ प्रकृतिरूप तीन-तीन स्थान हैं क्योंकि अनंतानुबंधी की विसंयोजनावाले और तीन दर्शनमोहनीय, चार अनंतानुबंधी का जिनके क्षय हुआ है वे क्षायिक सम्यग्दृष्टि भी वहां चढ़ते हैं। जिसने विसंयोजना की है उनका २४ का स्थान है। जिन्होंने दर्शनमोहनीय और अनंतानुबंधी का क्षय किया है उनका २१ का स्थान है। क्षपकश्रेणी में अपूर्वकरण में तथा अनिवृत्तिकरण में आठ कषायें नष्ट होने के पहले २१ प्रकृतिरूप एक-एक स्थान है यानी अपूर्वकरण में २१वाला है क्योंकि हमने देखा है क्षपक अपूर्वकरण में कौन आता है ? क्षायिक सम्यग्दृष्टि। आठवें गुणस्थान में कुछ क्षय की बात नहीं होती है। नौवें गुणस्थान में आते ही वही उतनी ही २१ प्रकृति लेकर आया है और जब आठ कषाय का पहले नाश करेगा तो १३वाला हो जायेगा। इसलिये अपूर्वकरण में भी २१वाला स्थान है और अनिवृत्तिकरण में आते ही २१वाला स्थान है।

आगे देखते हैं- क्षपकश्रेणी में एक २१वाला, उसके ऊपर पुरुषवेद के उदय से ही श्रेणी चढ़नेवाले के जहां पुरुषवेद और चार संज्वलन इन पांच प्रकृतियों का बंध होता है, ऐसे अनिवृत्तिकरण में १३ प्रकृतिरूप, १२ प्रकृतिरूप और ११ प्रकृतिरूप तीन स्थान हैं। अपनी भाषा में समझेंगे; हमने देखा अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में बहुत सारा क्षपणा का कार्य होता है। आते ही वहां २१ की सत्ता थी, जब आठ कषायों का क्षय हो

गया तब १३ की हो गयी। हम ऐसे जीव की बात कर रहे हैं जो पुरुषवेद सहित श्रेणी चढ़ रहा है। वह पहले क्या करता है ? नपुंसकवेद का क्षय करता है। एक प्रकृति घट गयी न, कितनी रह गयी ? *श्रेता: १२/१२*; फिर स्त्रीवेद की क्षपणा पूरी करता है, ११ हो जायेगी। उसके बाद पुरुषवेद और छह नोकषायों की एक साथ क्षपणा चालू करता है। परंतु छह नोकषायों की क्षपणा पहले पूर्ण हो जाती है तो ग्यारह में से छह गये, ५ रह गये। अब यहां पुरुषवेद का उदय मिट जाता है परंतु जो लास्ट-लास्ट में बंधे हुये हैं न, उनकी क्षपणा करने के लिये और थोड़ा वक्त लगता है। आवली, दो आवली इतना थोड़ा समय और लगेगा तो उसके बाद उसका क्षय हुआ कहेंगे। इसलिये पांच का स्थान है, ग्यारह में से पहले छह घटाये। अभी भी पुरुषवेद सत्ता में बाकी है, एक समय कम दो आवली में वह भी नष्ट हो जायेगा तो उसके बाद हम कहेंगे एक और क्षय हो गया। पहले ग्यारह में से छह मायनस किये थे, पांच का स्थान हुआ। पांच में से पुरुषवेद घटाया तो ४ रह गये; उसमें से क्रोध को घटाया तो ३ रह गये; फिर मान को घटाया तो २ रह गये; माया को घटाने पर १ रह गया। नौवें गुणस्थान के अंत में लोभ है यहां पर। दसवें में भी सूक्ष्मरूप लोभ है। यह लोभ रह जाता है तो १ का स्थान नौवें गुणस्थान में भी है और दसवें गुणस्थान में भी है।

इसको मैंने पुस्तक में से पढ़ना इसलिये छोड़ दिया क्योंकि नपुंसकवेद सहित क्षपकश्रेणी चढ़ता है तो पहले किसका क्षय करता है, बाद में किसका करता है ? स्त्रीवेद सहित चढ़नेवाला क्या करता है ? पुरुषवेद सहित चढ़नेवाला क्या करता है उसमें बहुत कॉम्प्लिकेशन्स हैं। आपको सीधा सरल देखना है तो यहां लिखा है- नपुंसकवेद सहित जो कोई चढ़ता है तो पहले नपुंसकवेद की क्षपणा प्रारंभ करता है और स्त्रीवेद की भी साथ-साथ कर देता है तो दोनों का एक साथ क्षय करके वह ११वाला हो जाता है और इनका उदय जल्दी मिटता है। इसलिये जो पुरुषवेद सहित चढ़ते हैं उसके जैसे यहां नवकबंध नहीं होता है क्योंकि उसका उदय जल्दी मिट गया है। इसलिये उसके उदय में यहां बंधे थे वे छह नोकषाय और पुरुषवेद एक साथ क्षय हो जाते हैं। इसलिये ग्यारह में से वहां डायरेक्ट हम सात घटायेंगे तो चार पर आ जाता है यानी नपुंसकवेद सहित चढ़नेवाला १३ में से ११ पर आता है, ११ में से ४ पर चला जाता है। स्त्रीवेद सहित चढ़नेवाला १३ की सत्तावाला है। वह पहले नपुंसकवेद का क्षय

करता है तो १२ पर आ गया। स्त्रीवेद की क्षपणा करता है तो ११ पर आ गया है। इसके भी पुरुषवेद और छह नोकषाय की एक साथ क्षपणा पूर्ण हो जाती है। इनके कारण में अभी नहीं जायेंगे क्योंकि उससे कन्फ्यूजन बहुत बढ़ेगा, यह सिम्प्लेस्ट इतना है। १३ में से १२ आता है, १२ में से ११ और ११ में से सात कम होकर डायरेक्ट ४ का हो जाता है। मात्र पुरुषवेद सहित जो श्रेणी चढ़ता है तो १३ में से १२ नपुंसकवेद का क्षय किया। १२ में से ११ क्योंकि स्त्रीवेद का क्षय किया। फिर छह नोकषाय गये तो ५ का स्थान आया, फिर बाद में एक- एक कम हुआ तो ४ का, ३ का, २ का, १ का होगा। ५वाला जो स्थान है वह पुरुषवेद से श्रेणी चढ़नेवालों के ही होगा। यहां इतना सिम्पल समझना।

कौनसे कषाय सहित चढ़ता है और कौनसे वेद सहित चढ़ता है सबकी अलग-अलग प्रक्रिया होती है जो यहां का विषय नहीं है। यहां लिखा है पंडितजी ने देखो- पेज ४७८ पर भावार्थ में नीचे लिखा है- **वेदक्षपणाकाल में** यानी वेदों की क्षपणा होती है, उसका जो सत्ता में से नाश हो जाता है; **पुरुषवेद के नवकसमयप्रबद्ध का सत्त्व**; नवकसमयप्रबद्ध का अर्थ ऐसा है- जब तक किसी भी वेद का उदय है; पुरुषवेद का उदय हो नपुंसकवेद का उदय हो या स्त्रीवेद का उदय हो; उसके उदय के अंतिम समय तक पुरुषवेद का बंध हो रहा है। नपुंसकवेदवाले को किसका बंध होगा ? *श्रोता: पुरुष का ही होगा।* पुरुषवेद का ही होगा, क्यों ? नपुंसकवेद की बंधव्युच्छित्ति कहां हुई थी ? *श्रोता: पहले गुणस्थान में।* पहले गुणस्थान में और स्त्रीवेद की बंधव्युच्छित्ति ? *श्रोता: दूसरे गुणस्थान में।* दूसरे गुणस्थान में। यानी यहां बंध किसका हो रहा है ? पुरुषवेद का ही हो रहा है। परंतु नपुंसकवेद और स्त्रीवेद का उदय जल्दी मिट जाता है इसलिये वहां तक ही पुरुषवेद का बंध होगा। जो पुरुषवेद सहित चढ़ता है उसका उदय अधिक काल तक चलता है, इसलिये उसका बंध भी अधिक काल तक चलता है। इसलिये जब छह नोकषायों की क्षपणा होती है तो नपुंसकवेदवाले और स्त्रीवेदवाले जो जीव हैं उनके पुरुषवेद की क्षपणा छह नोकषाय के साथ पूर्ण हो जाती है।

देखो पढ़ेंगे हम- **पुरुषवेद के नवकसमयप्रबद्ध का सत्त्व अवशेष रहता है** यानी जब वेदक्षपणा पूरी हो जाती है, छह नोकषाय के साथ पुरुषवेद की क्षपणा भी पूरी होती है जो पूर्व में बंधे थे। क्या बाकी रहता है ? पुरुषवेद के नवकसमयप्रबद्ध बाकी रहते हैं। उसका सत्त्व **क्रोधक्षपणाकाल में क्रोधरूप परिणमित होकर विनष्ट होता है, इसलिये वहां पांच का भी सत्त्व जानना।** नीचे के पॅरेग्राफ में दूसरी लाइन -

इनका विशेष वर्णन यहां भाषाटीका में आगे क्षपणासार अनुसार कथन लिखेंगे वहां जानना। लब्धिसार-क्षपणासार ग्रंथ में जानना कहते हैं यानी पंडितजी का निश्चित था कि इसके बाद लब्धिसार-क्षपणासार लिखनेवाले थे। बहुत जगह ऐसा लिखा है; आगे वहां इस प्रकरण में मैं लिखूंगा या वहां से जान लेना। बहुत जगह ऐसी बातें लिखी हैं यानी इनका कितना पूर्वनिश्चित-सुनियोजित था कहां क्या लिखनेवाले हैं ! *श्रोता: मोक्षमार्गप्रकाशक में भी।* मोक्षमार्गप्रकाशक में भी उन्होंने बहुत बार लिखा है कि आगे इसका कथन आयेगा। हमारा दुर्भाग्य है कि मोक्षमार्गप्रकाशक पूरा नहीं हो सका। अब कहते हैं **अनिवृत्तिकरण में सत्त्वस्थानों का विशेष**। यह अलग-अलग वेदों सहित चढ़नेवालों की अपेक्षा जो विशेषता होती है उसके डीटेल में हम नहीं जायेंगे। उसके डीटेल में यही है जो एकदम सिम्प्लेस्ट फॉर्म में लिखा है। कौनसे वेद से चढ़ता है और उसके कौन-कौनसे सत्त्व के स्थान होते हैं। बस इतना हम जानेंगे तो बहुत है।

हमें गुणस्थानों के बंधस्थान मालूम हैं, थोड़ा याद करते हैं। पहले गुणस्थान का मोहनीय का बंधस्थान कौनसा है ? आप चार्ट्स निकालो। *श्रोता: २२।* हां, २२वाला है। बंध के कूट भी थे और बंध के स्थान भी थे, दसवें पृष्ठ पर उसके टोटल लिख दिये हैं; २२, २१, १७, १३ वगैरह तो कहां कौनसा है यह याद है कि नहीं है ? पहले गुणस्थान में कौनसा स्थान है ? *श्रोता: २२ का।* दूसरे में है २१ का। बंध के कूट देखो आपको ख्याल आयेगा। १ फिर ४, ४, ४, ४ फिर १, १, १ फिर २, २ फिर २ कितनी हुयी ? *श्रोता: २२।* २२ हो गयी कि नहीं ? पहले गुणस्थान में २२ का बंधस्थान है। दूसरे में २१ का; तीसरे और चौथे में १७ का; पांचवें में १३ का; छठे, सातवें, आठवें में ९ का और नौवें में ५ का, ४ का, ३ का, २ का, १ का। दसवें में झिरो, बंध नहीं है; उदय है, सत्त्व है।

अब हम देखते हैं कौनसे बंधस्थान में कौनसा सत्त्वस्थान है ? यह बहुत आसान है। हमने गुणस्थानों में सत्त्वस्थान लिखा, अभी गुणस्थान में बंधस्थान फीड कर दो। नहीं समझे ? मिथ्यात्व गुणस्थान में २८, २७ और २६ के सत्त्वस्थान हैं। हम पूछेंगे कि २२के बंधस्थान में सत्त्वस्थान कौनसे हैं ? अभी कितना आसान है २२का बंधस्थान कहां है ? *श्रोता: मिथ्यात्व में।* मिथ्यात्व में है। २२के बंधस्थान में २८, २७ और २६ के सत्त्वस्थान हैं। हमने भाषा बदल दी, गुणस्थान के बदले हमने २२वाला बंधस्थान कह दिया। मिथ्यात्व गुणस्थान में २८, २७, २६ कहो या २२ के बंधस्थान में २८, २७, २६

कहो- कुछ फर्क हुआ क्या ? हां, हमने बंधस्थान कहे। हम पढ़ेंगे, ४८१ पृष्ठ निकालना- **मोहनीय का जहां बाइस-बंधरूप स्थान है** जहां २२ बंधरूप है, अभी सोचना कहां है ? *श्रोता: पहले गुणस्थान में।* पहले गुणस्थान में। **वहां कर्मांश अर्थात् सत्त्वस्थान** यानी मोहनीय के कौन-कौनसे सत्त्व हैं वहां ? सत्त्व **अट्ठाइस, सत्ताइस और छब्बीस प्रकृतिरूप तीन हैं।** तीन सत्त्वस्थान हैं, तीन अलग-अलग सत्त्व वहां पाये जाते हैं। **जहां इक्कीस का बंध है** २१ का बंध कहां है ? *श्रोता: सासादन में ?* सासादन - दूसरे गुणस्थान में। जहां २१ का बंध है, वहां कितने का सत्त्वरूप स्थान है ? **अट्ठाइस का ही है।** यहां गुणस्थानों के नाम लिये हैं, उनके बदले हम बंधस्थान कह रहे हैं। २१ के बंधस्थान में सत्त्वस्थान कौनसा है ? *श्रोता: २८ का।* अब आगे बढ़ते हैं।

सत्रह, तेरह और नौ के बंधस्थानों में अट्ठाइस, चौबीस, तेइस, बाइस, इक्कीसरूप पांच-पांच सत्त्वस्थान हैं। अब हम कहेंगे यहां पर १७ का, १३ का ९-९ का है न ? दोनों में ९-९ का है। असंयत यानी १७ का बंधस्थान, देशसंयत यानी १३ का बंधस्थान, प्रमत्त-अप्रमत्त यानी ९ का बंधस्थान। इनमें सत्त्व के स्थान कौन-कौनसे हैं ? २८, २४, २३, २२ और २१ क्योंकि यहां क्षपणा का कार्य होता है, विसंयोजना का कार्य होता है। दर्शनमोहनीय की बात है न यहां पर। गुणस्थान के बदले हम बंधस्थान यहां पढ़ रहे हैं। *श्रोता: फिर से समझाइये।* अच्छा। यहां क्या लिखा है ? मिथ्यात्व। उसमें सत्त्वस्थान कितने हैं ? *श्रोता: तीन हैं।* कौनसे तीन ? *श्रोता: २८, २७ और २६।* २८, २७ और २६। मिथ्यात्व में बंधस्थान कौनसा है ? *श्रोता: २२।* २२वाला। हमने पूछा २२ के बंधस्थान में सत्त्वस्थान कितने हैं ? *श्रोता: तीन हैं, २८, २७ और २६।* आप ही बोल रहे हो ! २१ के बंधस्थान में सत्त्वस्थान कितना है ? पहले सोचना, २१ का बंधस्थान कौनसा है ? सासादनवाला है; वहां सत्त्व कितना है ? २८ का है। यही बताया यहां पर।

जहां १७ का बंधस्थान कहते ही हमें तीसरा, चौथा गुणस्थान समझना है परंतु तीसरे गुणस्थान में ये सभी स्थान नहीं होंगे तो यहां १७ से चौथा गुणस्थान समझना। १३वाले यानी पांचवां गुणस्थान। ९ का बंधस्थान यानी अभी यहां के लिये छठा-सातवां गुणस्थान। इनमें कौन-कौनसे से सत्त्वस्थान हैं ? २८ का है; २४ का है विसंयोजना करनेवाले का; २३ का है, २२ का है और २१ का है ये पांच-पांच सत्त्वस्थान हैं। यहां चौथे में १७ कहो, यहां पांचवें में १३ कहो, यहां छठे-सातवें में ९ कहो। दोनों में अपना-अपना ९ का बंधस्थान है और वहां सत्त्वस्थान भी बताये कितने हैं। *श्रोता: १७ का स्थान*

तीसरे में नहीं है ? तीसरे में है, परंतु तीसरे में सत्त्वस्थान कौनसे हैं ? २८ का और २४ का ये दो ही सत्त्वस्थान हैं। २८, २४, २३, २२ और २१ के ये सभी सत्त्वस्थान कौनसे बंधस्थान में हैं ? १७वाले में हैं, १३वाले में हैं और ९वाले में हैं। ऐसा नहीं कहा कि १७वाले सभी बंधस्थानों में ये सभी पाये जाते हैं। १७वाला बंधस्थान कहां है ? तीसरे और चौथे गुणस्थान में है, तो ये सभी स्थान कहां होंगे ? *श्रोता: चौथे गुणस्थान में।* चौथे गुणस्थानवाले को। तीसरे गुणस्थानवाले को तो २८ और २४ ये दो ही सत्त्वस्थान हैं। तीसरे गुणस्थानवाले का भी बंधस्थान १७ है, पर उसमें ये सत्त्वस्थान दो ही हैं।

हमने गुणस्थानों में देख लिये, अभी हम बंधस्थान में बात कर रहे हैं। बंधस्थान में ९ के बाद डायरेक्ट ५ का बंधस्थान है, कहां पर होता है ? *श्रोता: आठवें में।* आठवें गुणस्थान में ५ का बंध है कि ९ का है ? नौवें गुणस्थान के पहले भाग में ५ का बंध है, ५ कौनसे बंधते हैं ? चार संज्वलन और एक पुरुषवेद। अब देखो **पांच के बंधस्थान में अट्ठाइस, चौबीस, इक्कीस** यह कौनसी श्रेणीवाला होगा ? *श्रोता: उपशमश्रेणी।* २१वाला सत्त्वस्थान दोनों श्रेणियों में ले सकते हैं। **तेरह, बारह, ग्यारह प्रकृतिरूप छह सत्त्वस्थान हैं।** नौवें गुणस्थानवाला जहां पांच का बंध है वहां की बात है, उसमें क्षपणा का कार्य हो रहा है। जब तक वेद का उदय है, तब तक वेद का बंध भी है इसलिये पांच का बंध कहा। नहीं समझे ? पुरुषवेद का बंध कब तक है ? जब तक पुरुषवेद का उदय होगा, बाय दॅट टाइम उसने कौन-कौनसी क्षपणा की ? पहले आठ कषाय की क्षपणा की तो प्रकृतियां २१ में से १३ हो गयी। यहां लिखा है न २१ के बाद १३ हो गयी। नपुंसकवेद की क्षपणा की तब १२ हो गयी। स्त्रीवेद की क्षपणा हो गयी तब ११ हो गयी। २८, २४, २१, १३, १२ और ११ प्रकृतिरूप छह सत्त्वस्थान हुये। ५ के बंधस्थान में ये छह सत्त्वस्थान हैं क्योंकि जो नया बंध किया था उसकी क्षपणा होने में टाइम है।

चार के बंधस्थान में पूर्वोक्त छह स्थान और चार प्रकृतिरूप एक स्थान ऐसे सात सत्त्वस्थान हैं। यहां पांच प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान नहीं कहा क्योंकि नवकबंधरूप समयप्रबद्ध और उच्छिष्टावली की यहां विवक्षा नहीं है। इसका अर्थ देखते हैं। उच्छिष्टावली का अर्थ मालूम है ? उच्छिष्ट को तो समझते हैं। छोड़ते हैं न रोज, खाने के बाद झूठा रह जाता है, थाली में कुछ चिपका हुआ रहता है। नौवें के प्रथम भाग में पुरुषवेद और संज्वलनक्रोध कषाय का उदय है। जब वेद का उदय रुक

जाता है तब अंतिम एक आवलीप्रमाण निषेक बाकी रहते हैं उनका अपनेरूप से उदय न होकर एक-एक निषेक संज्वलनक्रोधरूप होकर उदय में आता है। इन अंतिम आवलीप्रमाण निषेकों को कहते हैं उच्छिष्टावली।

वैसे जब क्षपणा होती है, कैसे होती है ? कौनसा प्रोसेस है ? पुरुषवेद के सभी परमाणु संज्वलनक्रोधरूप परिणमित होकर नष्ट हो जाते हैं; क्रोधरूप हो जाते हैं, पुरुषवेदरूप में नहीं रहते हैं। जब पुरुषवेद की क्षपणा हुयी ऐसा हम कहते हैं तो ये उच्छिष्टावलीवाले निषेक अभी बाकी हैं और सत्ता में अभी-अभी नये बंधे हैं, जिसको नवकबंध कहते हैं, वे भी बाकी हैं; उनकी सत्ता पड़ी है, एक आवली में क्या होगा ? आवली काल तक उच्छिष्टावलीके सारे निषेक क्रोधरूप होकर उदय में आयेंगे। उसके बाद कितने बचेंगे ? *श्रोता: नवकबंध।* नवकबंध है उसमें से भी आवली काल तक के निकल गये। कितने बाकी रहे ? एक समय कम एक आवली जितने बाकी रहे। अब उनका क्या होगा ? वे क्रोधरूप होकर नष्ट हो जायेंगे। उसकी विवक्षा यहां नहीं है यह बात कहना चाहती हूं। उसकी अपेक्षा लेते तो पुरुषवेद में पांच का, चार का डिफरन्स हो जाता है; उसकी अपेक्षा बात करेंगे तो सूक्ष्म कथन होता है। इसलिये उसकी अपेक्षा छोड़कर बात की है। ११ में से डायरेक्ट चार के सत्त्वस्थान पर आ गये हैं।

श्रोता: वेद क्रोधरूप कैसे होता है ? जाति एक ही है ? चारित्रमोहनीय है, जाति एक ही है, संक्रमण कहते हैं न; चारित्रमोहनीय की प्रकृतियां कितनी हैं ? *श्रोता: पच्चीस हैं।* पच्चीस हैं, मिथ्यादृष्टि के भी वे पच्चीस की पच्चीस आपस में संक्रमित होती रहती हैं हर समय, परंतु जिसका बंध है उसमें संक्रमित होती हैं यह नियम है। क्षपणा का पूरा प्रोसेस ऐसा ही है। यह आगे का विषय है, प्रश्न है इसलिये मैं बताती हूं। नपुंसकवेद की क्षपणा हुयी यानी क्या हुआ ? *श्रोता: स्त्रीवेदरूप होगा।* स्त्रीवेदरूप नहीं होगा क्योंकि संक्रमण का नियम है, जिसका बंध है उसमें संक्रमित होता है। यहां पुरुषवेद का बंध है तो पुरुषवेद में चला जायेगा, नपुंसकवेद पुरुषवेद में चला जायेगा। स्त्रीवेद भी पुरुषवेद में ट्रान्स्फर होकर नष्ट हो जायेगा। जितना पुरुषवेद अभी का और पहले का ट्रान्स्फर हुआ वह सब मिलकर क्रोधरूप संक्रमित होकर नष्ट हो जायेगा। क्रोध है वह पूरा का पूरा मानरूप होगा। मान है वह पूरा का पूरा मायारूप होगा और माया है वह लोभरूप होगा। पूरा मोहनीय का द्रव्य लोभरूप हो जायेगा। *श्रोता: बादरलोभ ?* हां, वह सूक्ष्म होने की क्रिया नौवें में चलती है क्योंकि क्षपकश्रेणी की सारी क्रियायें अलग हैं, उपशमश्रेणी की अलग हैं। साथ-साथ यथायोग्य अनुभाग का घटना भी चलता है और फिर नौवें में और दसवें में भी बहुत सारी निर्जरा होकर वह नष्ट हो जाता है।

कर्म की क्षपणा का अर्थ है वह संक्रमित होकर नष्ट हो जाता है। क्षपकश्रेणी चढ़ता है तब विशिष्ट क्रम से ही संक्रमित होता है। जब क्षपकश्रेणी नहीं चढ़ी थी; तो सत्ता में जो परमाणु पड़े हैं वे सारे क्रोध हैं वे मान, माया, लोभरूप; मान हैं वे माया, लोभ, क्रोधरूप; माया हैं वे क्रोध, मान, लोभरूप; लोभ है वे क्रोधादिरूप या कषाय हैं वे नोकषायरूप और नोकषाय हैं वे कषायरूप आपस में संक्रमित होते ही रहते हैं। यह पुरुषार्थ से होता है ऐसा कुछ नहीं है। उनकी जाति एक है- चारित्रमोहनीय की है, वहां अनंतानुबंधी भी अन्यरूप होते हैं। थोड़ा-थोड़ा संक्रमण चलता रहता है, पूरे के पूरे संक्रमित नहीं होते हैं, थोड़े परमाणु उसरूप हो जाते हैं और क्षपणा में सब के सब अन्यरूप हो जाते हैं। अपनेरूप से नष्ट हो जाते हैं उसको कहेंगे उसकी क्षपणा हुयी।

पांच के बंधस्थान में ११ में से कितने का सत्त्व होता है, उसकी अधिक चर्चा नहीं करते हुये बस स्थूलरूप से कथन कर रहे हैं। पांच का बंध कब तक है ? जब तक वेद का उदय है, तब तक पांच का बंध है। वहां २८, २४, २१, १३, १२, ११ ये छह सत्त्वस्थान हैं। चार के बंधस्थान में पहलेवाले और चार प्रकृतिवाला एक स्थान हो जाता है। डायरेक्ट उन्होंने ग्यारह में से सात घटाये हैं। पुरुषवेद की बाद में क्षपणा होती है न, नवकबंध की बात नहीं उठायी है, यह कहना चाहते हैं। जैसे यहां पर ग्यारह में से चार हुये, स्त्रीवेद के भी ग्यारह में से चार हुये। पुरुषवेद के लिये ग्यारह, पांच और चार हुये तो इसकी अपेक्षा छोड़ दी है। अभी यहां जो कथन कर रहे हैं- जब तक सत्त्व ग्यारह का था, तब तक पांच का बंध हो रहा था और डायरेक्ट चार की सत्ता में आ गया।

तीन के बंधस्थान में कितने का सत्त्वस्थान है ? तीन का बंधस्थान क्षपकश्रेणी में होगा की उपशमश्रेणी में होगा ? चार का बंधस्थान क्षपकश्रेणी में होगा की उपशमश्रेणी में होगा ? दोनों में होगा; और सत्त्वस्थान ? उपशमश्रेणी के २८, २४, २१ प्रकृतिवाले सत्त्वस्थान सर्वत्र होंगे। उपशमश्रेणी के आठवें, नौवें, दसवें और ग्यारहवें में ये तीन सत्त्वस्थान हैं। क्षपकश्रेणी में ये अलग हैं- पांच का, चार का, तीन का, दो का, एक का। तो इसको लेते हुये कितने का बंध है और वहां कितने का सत्त्व है ? उपशमश्रेणी की अपेक्षा सत्त्व कहेंगे तो तीन कायम हैं- २८, २४ और २१। क्षपकश्रेणी में जितना सत्त्व है उसको बतायेंगे- ४ का सत्त्व है, ३ का सत्त्व है, २ का सत्त्व है, १ का सत्त्व है। यही बातें पूरे पॅरेग्राफ में बतायी गयी हैं। हम यहीं रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४६. नामकर्म के स्थानों के आधारभूत पद

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने कर्मकाण्ड की भाषाटीका सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है। पढ़ा है न ढूंढ़ारी भाषा में कि नहीं ? नहीं पढ़ा ? पढ़ा है ! यह उसका ही हिन्दी अनुवाद है- आसान है, रेग्युलर हिन्दी जैसा है, थोड़ा-थोड़ा कहीं डिफरन्स है। हम तो ढूंढ़ारी भाषा कहीं सीखने नहीं गये थे, पढ़कर सहज ख्याल में आ गयी। उसीके आधार से अभी हम स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार की चर्चा कर रहे हैं। स्थानसमुत्कीर्तन यानी स्थानों का यहां वर्णन चल रहा है।

कौनसे-कौनसे स्थान ? पहले में पहले हमने कर्मों में आठों ही मूलप्रकृतियों के स्थान देखे थे, ज्ञानावरणादि की चर्चा की थी। जहां एक से अधिक स्थान हैं ऐसे कौन-कौनसे कर्म हैं ? हमने देखे दर्शनावरण के तीन हैं, मोहनीय के बंधस्थान अलग होते हैं, नामकर्म के अलग होते हैं; उदयस्थान भी अनेक होते हैं। मोहनीय में गुणस्थानों की अपेक्षा से बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान घटित किये; उनमें बंध और उदयस्थान की अपेक्षा ही गुणस्थान होते हैं। नामकर्म में गुणस्थानों की अपेक्षा उनके आधारभूत स्थान नहीं हैं; गुणस्थान के आधार से नामकर्म के बंधस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थान नक्की नहीं कर सकते। नामकर्मों में बंधस्थान कौनसे होते हैं, उदयस्थान कौनसे होते हैं, सत्त्वस्थान कहां कितने होते हैं ये हमें देखना है। नामकर्म के बंध, उदय के स्थान के आधारभूत क्या है ? उसको कहते हैं ४१ जीवपद हैं। यह जीवपद क्या है ? उसके ४१ भेद हैं इनकी हम चर्चा करेंगे। कहां कौनसे हो सकते हैं उसकी चर्चा बाद में करेंगे।

मैंने पहले ही लेक्चर में बताया था कि चामुण्डराय ने आचार्य नेमिचन्द्रजी को प्रश्न पूछा था। क्या प्रश्न पूछा था ? 'सूक्ष्म, अपर्याप्त, पृथ्वीकायिक आदि जो ४१ जीवपद हैं उनमें नामकर्म के सत्त्व का निरूपण कीजिये।' आचार्य उनको डायरेक्ट उत्तर दे सकते थे। उसके उत्तररूप उन्होंने क्या किया ? पूरा जीवकाण्ड जिसमें बीस प्ररूपणा हैं- गुणस्थान, मार्गणास्थान सब कुछ लिख दिया। फिर बाद में कर्मकाण्ड भी विस्तार से लिखा- कितनी प्रकृतियां होती हैं; उनके कौनसे भेद होते हैं; उनके बंध क्या, उदय क्या, सत्ता क्या; उनके स्थान क्या; ये सभी बातें बता दी। उसमें एक विषय यह भी आ गया है। देखो, आचार्यों की कैसी करुणा होती है ! उन्हें यही इष्ट था कि सभी रुचिवान

जीव इसको समझे। जो तत्त्वज्ञानी हैं, अभ्यासी हैं उनको चर्चा से समाधान हो जाता है। परंतु हम-आप जैसे लोग शुरू से सब कुछ सीखेंगे तो ही ये बातें ख्याल में आती हैं।

श्रोता: यहां जो बात चल रही है, वह करणानुयोग का विषय है या जीव का विषय है ? यह सारा जीव का, द्रव्यानुयोग का ही विषय है। लोग कहते हैं अप्रयोजनभूत है; मुझे बताइये प्रयोजनभूत सात तत्त्वों के नाम क्या-क्या हैं ? *श्रोता: जीवादि प्रयोजनभूत तत्त्व।* बोलिये। *श्रोता: जीव, अजीव, आस्रव।* जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व, आस्रवतत्त्व, बंधतत्त्व, संवरतत्त्व, निर्जरातत्त्व और मोक्षतत्त्व। जीवतत्त्व, अजीवतत्त्व समझे। आगे का कौनसा है ? आस्रवतत्त्व। आस्रवतत्त्व के दो भेद मालूम हैं ? *श्रोता: द्रव्यास्रव और भावास्रव।* द्रव्यास्रव और भावास्रव। बंध के ? *श्रोता: द्रव्यबंध और भावबंध।* द्रव्यबंध और भावबंध। संवर के ? *श्रोता: द्रव्यसंवर, भावसंवर।* द्रव्यसंवर, भावसंवर। निर्जरा के ? *श्रोता: द्रव्यनिर्जरा, भावनिर्जरा।* द्रव्यनिर्जरा, भावनिर्जरा और मोक्ष के ? *श्रोता: द्रव्यमोक्ष, भावमोक्ष।* द्रव्यमोक्ष, भावमोक्ष। तो द्रव्य में किसको रखेंगे ? द्रव्यआस्रव, द्रव्यबंध, द्रव्यसंवर, द्रव्यनिर्जरा, द्रव्यमोक्ष में किसको रखेंगे ? पूरे कर्मकाण्ड को रखेंगे और हम इसको अप्रयोजनभूत कह रहे हैं। यह प्रयोजनभूत तत्त्व है, द्रव्यानुयोग का विषय है। वैसा देखा जाये तो, जीव की और कर्मों की अवस्थायें सब सात तत्त्वों में आती हैं, नहीं समझे ? खाली आत्मा-आत्मा कहना वह द्रव्यानुयोग ऐसा है क्या ? क्या कर्म का नाम लेते ही करणानुयोग हो गया ? ऐसा नहीं है। भगवान की वाणी में कोई भी बात अप्रयोजनभूत निकलती ही नहीं है। नेमिचन्द्र आचार्य को टाइम पास नहीं हो रहा था इसलिये अप्रयोजनभूत बातें नहीं लिखी हैं। ये सारी बातें हमारे लिये अत्यंत प्रयोजनभूत हैं। इससे भेदज्ञान को अत्यंत पुष्टि मिलती हैं। सभी अनुयोगों से होती है, परंतु करणानुयोग से और ज्यादा-अधिक दृढ़ता हो जाती है।

श्रोता: करणानुयोग का विषय क्या है ? वैसे तो यह जो कर्म की बातें हैं किसीने इसको करणानुयोग कहा है, परंतु कहीं-कहीं जीवकाण्ड व कर्मकाण्ड को द्रव्यानुयोग का विषय कहा और त्रिलोकसार को करणानुयोग का विषय कहा। तीनलोक की जो रचना है भूगोल, उसको करणानुयोग कहा है। हम इसको करणानुयोग कहेंगे उसमें कुछ दोष नहीं है क्योंकि स्वयं पं. टोडरमलजी ने लिखा है इसमें; उन्होंने पीठिका में लिखा है इसलिये हमने पीठिका जीवकाण्ड में भी छापी और कर्मकाण्ड में भी छापी।

उसमें बारंबार लिखते हैं कि किसी एक अनुयोग का पक्षपाती हो जाता है और करणानुयोग का कोई निषेध करता है तो उसके कैसे-कैसे दोष लगते हैं वे बातें उन्होंने बतायी। उन्होंने यहां तक बात बतायी, क्या लिखा था उसमें ? थोड़ीसी बात भी समझ जाओ तो आप भाग्यवान हो। हमारी आरतीबेन का फोन आया था, आप धवला भी सुन रही हैं हमारी सी. डी. से। कहती हैं पं. फूलचंदजी शास्त्री ने धवला शास्त्र में प्रस्तावना में लिखा है कि इन बातों में से इतनासा भी समझो, थोड़ा भी आपको ख्याल में आये तो भी आपका कल्याण हो जायेगा। पं. टोडरमलजी साहब ने लिखा है- दो प्रतिशत यानी २%, १% इतना भी आपको विषय ख्याल में आये तो भी बहुत अधिक कार्यकारी होगा, आप बहुत भाग्यवान हैं और इसको जरूर पढ़ना चाहिये, सुनना चाहिये।

श्रोता: ईझी है आप समझायेंगे तो। ऐसी बात नहीं है, आप यह सब समझ रहे हैं अपनी ज्ञान की योग्यता से समझ रहे हैं। यह आरोप करो हमारे ऊपर, जो निमित्त पर आरोप करते हो कि आपने समझाया इसलिये हम समझ गये हां। हम भी सुनेंगे, आप कहेंगे तो हम सुन रहे हैं, क्यों ! अच्छा लगता है न ? *श्रोता: हमारे पास इतना दिमाग नहीं है न !* हमारे पास केवलज्ञान उत्पन्न करने की शक्ति पड़ी है अंदर, हां ! यह हमारी बुद्धि थोड़ी है ऐसा कब याद आता है ? करणानुयोग पढ़ते समय; जब व्यापार धंधा करता है तब कभी ऐसा याद नहीं आता है कि मेरी बुद्धि थोड़ी है और मैं थोड़ा ही पैसा कमाऊंगा। मुझे ज्यादा हिसाब नहीं आता है तो मैं थोड़ा-थोड़ा ही पैसा कमाऊंगा तो उसका हिसाब-किताब अच्छा रख सकता हूं, ऐसा कोई नहीं कहता है। वहां लाखों की और करोड़ों की कमाई भी कम लगती है। जिसको संख्या की क्रेझ है न; करोड़ों में, अब्जों में जो डील करना चाहते हैं, हमारे यहां तो हम असंख्यात व अनंतों में डील करते हैं ! जिनको संख्या की क्रेझ है उनको जरूर करणानुयोग पढ़ना चाहिये।

अभी हम आगे बढ़ेंगे। यह जीवपद क्या है ? नामकर्म के आधारभूत जीवपद कहे हैं यानी हमारी भाषा में हम जीवों के भेद कहेंगे। कोई नारकी हैं, कोई मनुष्य हैं, कोई देव हैं; परंतु यहां ये केवल मार्गणायें नहीं हैं, इसको जीवपद अलग नाम दिया है और इसके ४१ भेद किये हैं। हम ग्रंथ के आधार से देखेंगे, पृष्ठ ४८२, गाथा ५१९ और ५२० के ऊपर- **प्रथम ही नामकर्म के स्थानों के आधारभूत** स्थानों के आधारभूत- यानी बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान जिस बेस पर समझायेंगे उसको आधारभूत कहा। ये कौनसे हैं ? **इकतालीस पद** यानी जो डिफरन्शिएशन हम करेंगे, यहां जीवों

का विभाजन कर रहे हैं इन ४१ पदों में। उन पर हम नामकर्म के बंधस्थान घटित कर सकते हैं, उदयस्थान घटित कर सकते हैं। जैसे जीवसमास कहते हैं तो जीवों के चौदह भेद करते हैं, उन्हें चौदह में विभाजित करते हैं; एकेन्द्रिय के दो - सूक्ष्म और बादर; फिर द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय; सभी के पर्याप्त-अपर्याप्त कितने हो गये ? चौदह। यहां कितने भेद करने जा रहे हैं ? ४१। वह कैसे करेंगे, क्या-क्या नाम होंगे अभी बतायेंगे। पहले दोनों ही गाथायें पढ़ेंगे।

णिरया पुण्णा पण्हं बादरसुहुमा तहेव पत्तेया।
वियलाऽसण्णी सण्णी मणुवा पुण्णा अपुण्णा य॥५१९॥
सामण्णतित्थकेवलि उहयसमुग्घादगा य आहारा।
देवावि य पज्जत्ता इदि जीवपदा हु इगिदाला॥५२०॥

इगिदाला यानी ४१, इगिदाला। हमने सुबह बादाल शब्द सुना था न ? बादाल संख्या ४२ से शुरुआत होती है। उसको बादाल कहा था। सुबह आयी थी न बादाल की बात ? पण्णठ्ठी, बादाल और इकठ्ठी ऐसे हमने तीन नाम देखे थे। देखो, कौन-कौनसे भेद करने जा रहे हैं ? टीका पढ़ेंगे- **नारकी सर्व पर्याप्त ही हैं** यानी नारकी यह एक जीवपद हुआ। आगे- पृथ्वी, अप्, अप् यानी जलकायिक, तेज यानी अग्निकायिक। **पृथ्वी, अप्, तेज, वायु और साधारण वनस्पति ये बादर और सूक्ष्म उनकी दस**। देखो, पृथ्वीकायिक सूक्ष्म भी है, पृथ्वीकायिक बादर भी है। हर एक में लगाना - सूक्ष्म अप्कायिक और बादर अप्कायिक, फिर सूक्ष्म तेजस्कायिक और बादर तेजस्कायिक, सूक्ष्म वायुकायिक और बादर वायुकायिक, सूक्ष्म साधारण वनस्पतिकायिक का अर्थ होता है सूक्ष्म निगोद और बादर निगोद सब मिलकर दस। कौनसे ५ लिये ? पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और साधारण वनस्पति; हर एक के सूक्ष्म और बादर दस हो गये। **प्रत्येक वनस्पति** प्रत्येक वनस्पति बादर ही होती है, सूक्ष्म नहीं होती है इसलिये इसको अलग निकाला। **प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय** यह तिर्यंचों में हो गये **और मनुष्य ऐसे सत्रह**। पहले हमने कितने देखे थे ? दस। कौनसे ? पृथ्वी, अप् यानी जल, अग्नि, वायु और निगोद। इनके बादर और सूक्ष्म दस हो गये। अब हमने कौनसे गिने ? प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय ये तो तिर्यंच हुये और फिर मनुष्य। पहले

दस और ये सात कितने हुये टोटल ? *श्रोता: सत्रह।* सत्रह। **इन सबके पर्याप्त और अपर्याप्त** १७ दूनी **चौंतीस हो गये**, यहां तक बात समझ में आयी ? *श्रोता: हां।*

४१ जीवपद - नामकर्म के उदय, सत्त्व की अपेक्षा

नारकी		पर्याप्त ही हैं	१
पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, निगोद के सूक्ष्म-बादर	१०	पर्याप्त	३४
प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी, संज्ञी, मनुष्य	७	अपर्याप्त	
सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली-स्वस्थान, समुद्घातगत		पर्याप्त ही हैं	४
आहारक		पर्याप्त ही हैं	१
देव		पर्याप्त ही हैं	१
नामकर्म के स्थानों के आधारभूत पद			४१

नारकियों में पर्याप्त-अपर्याप्त भेद नहीं है। यहां पर्याप्त-अपर्याप्त कह रहे हैं वह लब्धिअपर्याप्त की अपेक्षा बता रहे हैं, यहां निर्वृत्तिअपर्याप्त की चर्चा नहीं है। *श्रोता: नारकी के चौदह भेद बताते हैं तो सात पर्याप्त और सात अपर्याप्त ऐसा है ?* नारकी के चौदह भेद नहीं बताते हैं। नारकी तो पहले नरक के नारकी या दूसरे या तीसरे या सातवें नरक तक के ऐसा है। उनमें चौदह भेद नहीं हैं। हमने जीवों के चौदह भेद गिनाये थे - एकेन्द्रिय के सूक्ष्म-बादर; द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय; पंचेन्द्रिय के संज्ञी-असंज्ञी और सबके पर्याप्त-अपर्याप्त ये चौदह भेद हैं उनको जीवसमास कहा था, उसकी बात यहां नहीं है। यहां वर्गीकरण-क्लासिफिकेशन अलग पद्धति से कर रहे हैं। *श्रोता: अपर्याप्त कह रहे वह लब्धिअपर्याप्त होगा ?* अभी अपर्याप्त कह रहे हैं वह लब्धिअपर्याप्त की बात है। नारकी सारे पर्याप्त नामकर्मवाले हैं। देव सारे पर्याप्त नामकर्मवाले होते हैं। मनुष्य ? *श्रोता: दोनों होते हैं।* दोनों होते हैं; पर्याप्त नामकर्मवाले होते हैं और अपर्याप्त नामकर्मवाले जिनको हम सम्मूर्च्छन मनुष्य या लब्धिअपर्याप्त मनुष्य कहते हैं।

देखो, हम टोटल ४१ जीवपद गिन रहे हैं। हमने बोर्ड पर भी लिखा है - नारकी पर्याप्त ही है उसका १ जीवपद। उसके बाद पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, निगोद कहा; इनके बादर और सूक्ष्म, हर एक में बादर-सूक्ष्म लगाना। पांचों में बादर लगाओ और पांचों में सूक्ष्म लगाओ, ये १० हो गये। फिर प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय,

असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय ये सारे तिर्यंच के भेद हुये और मनुष्य; कितने हुये ? ये ७ भेद हुये। ऊपर के १० और ये ७ मिलकर १७ हुये; इन १७ में हर एक में पर्याप्त भी हैं और अपर्याप्त भी हैं। १७ में पर्याप्त और १७ में अपर्याप्त मिलकर ३४ जीवपद हो गये। यहां तक की बात ख्याल में आयी ? ३४ कैसे हुये ? हमने पहले ५ अलग निकाले जिनके बादर और सूक्ष्म दोनों भेद होते हैं। ऐसे कौन–कौनसे हैं ? *श्रोता: पृथ्वीकायिक।* पृथ्वीकायिक। *श्रोता: अप्कायिक।* अप्कायिक। *श्रोता: तेजस्कायिक।* तेजस्कायिक। *श्रोता: वायुकायिक।* वायुकायिक और साधारण वनस्पति यानी निगोद। इनके बादर भी हैं और सूक्ष्म भी हैं, १० हो गये। प्रत्येक वनस्पति का एक ही भेद है। द्वीन्द्रिय आदि भी एक-एक हैं क्योंकि उनमें बादर-सूक्ष्म ऐसे भेद नहीं होते हैं। आगे सारे बादर ही होंगे इसलिये उनमें बादर-सूक्ष्म ऐसे दो भेद नहीं करेंगे। प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय। *श्रोता: और मनुष्य।* मनुष्य को भी लेंगे। यह ७ देखे और पहले १० देखे थे, कुल १७ हुये। १७ में हर एक में पर्याप्त है और अपर्याप्त है, मिलकर ३४ जीवपद हो गये।

आगे बढ़ेंगे- सामान्य केवली और तीर्थंकर केवली यानी जो तीर्थंकर हैं, वे भी केवली ही हैं और तीर्थंकर नहीं हैं ऐसे जो केवली हैं उनको हम सामान्य केवली कहेंगे। केवली के कौनसे दो भेद ? *श्रोता: सामान्य केवली और तीर्थंकर केवली।* सामान्य केवली और तीर्थंकर केवली, उनको स्वस्थान कहेंगे। सामान्य केवली भी समुद्घात कर सकते हैं और तीर्थंकर केवली भी समुद्घात करते हैं। केवली के चार भेद हो गये, कौनसे ? स्वस्थान सामान्य केवली, स्वस्थान तीर्थंकर केवली, समुद्घातगत सामान्य केवली और समुद्घातगत तीर्थंकर केवली। पढ़ेंगे- **सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली, समुद्घात को प्राप्त सामान्य केवली और तीर्थंकर केवली ये चार** हुये न ? ये चार। अभी इनमें पर्याप्त और अपर्याप्त का भेद नहीं है, ये सभी पर्याप्त ही हैं। सामान्य और तीर्थंकर केवली को स्वस्थान कहा जो समुद्घात नहीं करनेवाले हैं, इसलिये लिख दिया है और जो समुद्घात कर रहे हैं उसकी अपेक्षा यहां लिखा।

आगे बढ़ेंगे **तथा आहारक और देव** आहारक यानी कौन ? छठे गुणस्थानवर्ती मुनिराज जिन्होंने आहारकशरीर बनाया है, उनको विशेष मनुष्य भी कहते हैं। वे पर्याप्त ही हैं और देव भी पर्याप्त हैं। यहां जो छह लिखा है **ये** सारे **पर्याप्त ही हैं।** यहां

नारकी भी पर्याप्त ही होते हैं और यहां बीचवाले जो हमने १७ देखे थे वे पर्याप्त भी होते हैं और अपर्याप्त भी होते हैं, इसलिये उनमें दो-दो भेद किये थे। पहले नारकी का १ भेद; बीच में हमने १७ के पर्याप्त-अपर्याप्त देखे, वे सारे ३४ हो गये; १+३४=३५ हो गये; केवली के ४ मिलकर कितने हो गये ? ३९; आहारक का १; ४० हुये और देव का १; ४१ हुये हैं; इनको कहते हैं ४१ जीवपद।

फिर दुबारा, ये नामकर्म के स्थानों के आधारभूत पद हैं। इन पदों के आधार से नामकर्मों की बातें चलेगी। हम कहेंगे - नारकियों में कौन-कौनसे बंधस्थान होते हैं ? पृथ्वीकायिक में कौन-कौनसे बंधस्थान होते हैं ? अग्निकायिक में कौनसे होते हैं ? बंधस्थान कहो, उदयस्थान कहो या सत्त्वस्थान कहो, केवली में कितने होते हैं इसतरह हम चर्चा करेंगे। जब हमने मोहनीय की या अन्य कर्मों की बात की थी तो गुणस्थानों को आधार किया था, मार्गणास्थानों पर भी समझाया था। परंतु यहां कौनसा आधार है ? ये ४१ जीवपद। इनके आधार से नामकर्मों के स्थानों को हम समझेंगे। नामकर्मों के स्थान हमारे लिये बिलकुल नया विषय है। हमने कभी उनके बंधस्थान को नहीं देखा है, उदयस्थानों को नहीं देखा है। इनमें कुछ अटपटी ही बातें हैं सारी, हैं तो इंटरेस्टिंग ! कभी हमने सुनी नहीं हैं इसलिये नयी लगती हैं, अटपटी लगती हैं परंतु हम देखेंगे। हमारे लिये तो लिखा है पं. टोडरमलजी ने, हम नहीं पढ़ेंगे तो क्या होगा ?

हम पृष्ठ ४८२ पर टीका फिर पढ़ेंगे- **नारकी सर्व पर्याप्त ही हैं। पृथ्वी,अप्, तेज, वायु, साधारण वनस्पति ये बादर और सूक्ष्म - उनकी दस और प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय और मनुष्य ऐसे सत्रह** यानी ये सात और पहले दस टोटल सत्रह; **इनके पर्याप्त और अपर्याप्त चौंतीस हुये। पुनश्च सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली और समुद्घात को प्राप्त सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली - ये चार तथा आहारक और देव - ये छह पर्याप्त ही हैं - ऐसे इकतालीस जीवपद हैं। वहां नामकर्म के बंधस्थानों की विवक्षा से कर्मपद हैं क्योंकि इन प्रकृतिरूप नामकर्म का बंध होता है।** जीवपद ४१ हैं; कर्मपद ३६ हैं उसकी चर्चा हम बाद में करेंगे। **उदय और सत्त्व की विवक्षा से जीवपद हैं, क्योंकि इनका उदय और सत्त्व जीव के पाया जाता है वही कहते हैं-**

आगे बढ़ते हैं **नरकगति नामकर्म** यह **१** नाम दिया। अभी पृथ्वीकायिक आदि

भेद देखे थे, हमने उसको पृथ्वी इतना ही लिखा था। फिर उसके बादर-सूक्ष्म भेद देखे थे। फिर उसके पर्याप्त-अपर्याप्त भेद देखे थे। अब एक-एक का नाम अलग-अलग लेकर बता रहे हैं। **पृथ्वीकाय स्थावर विशेषरूप** यानी ये सारे स्थावर नामकर्मवाले हैं परंतु उसमें विशेषता क्या है ? ये पृथ्वीकायवाले स्थावर हैं। षट्कायिक कहते हैं तो षट्कायिक में किसको लेना ? *श्रोता: पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय।* पृथ्वीकाय, अप्काय, वायुकाय। *श्रोता: वनस्पतिकाय।* वनस्पतिकाय और तेजस्काय। *श्रोता: त्रस।* त्रस छठा हुआ, पहले पांच एकेन्द्रिय के हुये। *श्रोता: पांच स्थावरकाय और एक त्रस।* पांच स्थावरकाय- पृथ्वी, अप्, तेज, वायु, वनस्पति और एक त्रसकाय ये षट्काय जीव कहलाते हैं। उनमें से स्थावरकायिकों की बात ले रहे हैं।

देखो, **पृथ्वीकाय स्थावर विशेषरूप बादर एकेन्द्रिय** यह लंबा-चौड़ा नाम है यानी क्या है ? यहां पर बादर पृथ्वीकायिक की बात है। उसमें कौन-कौनसे नामकर्म आये उन सबकी चर्चा कर रहे हैं। पृथ्वीकाय स्थावर इतना ही हम देखते हैं। त्रस है या स्थावर है ? नामकर्म का भेद कौनसा देखा था ? त्रस नामकर्म और स्थावर नामकर्म। परंतु स्थावर नामकर्म के और भी बहुत विशेषतायें होंगी कि नहीं ? उसमें भी भेद होंगे। हमने नामकर्म के केवल ९३ भेद देखे हैं, केवलज्ञानी ने कितने जाने हैं ? असंख्यात लोकप्रमाण, उसमें से थोड़ा तो डीटेल बतायेंगे न ! मात्र स्थावर नामकर्म नहीं है। उसमें पृथ्वीकाय भेदवाला स्थावर नामकर्म है यह बताना चाहते हैं। **पृथ्वीकाय स्थावर विशेषरूप बादर एकेन्द्रिय**, **पृथ्वीकाय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेन्द्रिय** अपनी भाषा में बादर पृथ्वीकाय और सूक्ष्म पृथ्वीकाय। फिर **अप्काय स्थावर विशेषरूप बादर एकेन्द्रिय** और **अप्काय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेन्द्रिय**। इसमें किसको लेना ? *श्रोता: अप्काय।* हां, हमने अप्काय बादर और सूक्ष्म ऐसे दो लिये। **तेजस्काय स्थावर विशेषरूप बादर एकेन्द्रिय** और **तेजस्काय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेन्द्रिय**। **वायुकाय स्थावर विशेषरूप बादर एकेन्द्रिय** और **वायुकाय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेन्द्रिय**। यहां एकेन्द्रियों के भेद बता रहे हैं।

साधारण स्थावर विशेषरूप बादर एकेन्द्रिय, यह कौनसे हैं ? बादर निगोद। और **साधारण स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेन्द्रिय** - सूक्ष्म निगोद। अब **स्थावर बादर विशेषरूप प्रत्येक वनस्पति**, देखो, पहले हमने विभाजन किया था तो यहां

पांच के बादर और सूक्ष्म ऐसे भेद किये थे प्रत्येक वनस्पति को अलग रखा था। अब यहां एकेन्द्रिय यानी स्थावर और त्रस के अलग-अलग भेद बता रहे हैं, इसलिये यहां दस बतायेंगे और प्रत्येक वनस्पतिवाला भेद इन्क्लूड करके ग्यारह बतायेंगे। एकेन्द्रियों के ग्यारह बतायेंगे, ख्याल में आयी बात ? नहीं आयी ? प्रत्येक वनस्पति वह स्थावर है कि त्रस है ? *श्रोता: स्थावर है।* स्थावर है। यहां स्थावर एकेन्द्रियों के भेद अलग बता रहे हैं। पहले हमने अलग अपेक्षा से भेद किये थे- ये सारे बादर ही हैं। इसलिये यहां बादर लिखे थे और यहां ऐसे लिये थे जो सूक्ष्म भी हैं और बादर भी हैं। अब अलग पद्धति से नामकर्म की अपेक्षा से भेद बता रहे हैं- सभी स्थावर एकेन्द्रियों को अलग बता रहे हैं। ये सब स्थावर ही हैं, एकेन्द्रिय ही हैं परंतु इनमें पांच बादर और पांच सूक्ष्म देख लिये। प्रत्येक वनस्पति भी बादर एकेन्द्रिय है उसको भी हम ऊपर ही देखेंगे। एकेन्द्रिय के कितने हो जायेंगे ? *श्रोता: ग्यारह।* यही तो यहां लिखा है।

श्रोता: प्रत्येक वनस्पति, बादर वनस्पति क्या होती है ? प्रत्येक वनस्पति बादर ही होती है। परंतु सभी बादर वनस्पतिकायिक मात्र प्रत्येक वनस्पति नहीं होते, बादर निगोद भी होते हैं। नहीं समझे ? वनस्पतिकायिक के दो भेद हैं- साधारण और प्रत्येक। प्रत्येक वनस्पति बादर ही है, प्रत्येक वनस्पति सूक्ष्म नहीं होती। साधारण वनस्पति में बादर भी होते हैं और सूक्ष्म भी होते हैं, जिनको हम बादर निगोद और सूक्ष्म निगोद कहेंगे। वनस्पति के हम सूक्ष्म और बादर भेद करेंगे तो सूक्ष्म निगोद ही होते हैं; बादर में निगोद भी होते हैं और प्रत्येक वनस्पति भी होती है। *श्रोता: सूक्ष्म क्या होता है और बादर क्या होता है, यह समझेंगे तो थोड़ा जल्दी समझ में आयेगा।* अच्छा ! सूक्ष्म-बादर अपना जीवकाण्ड में हुआ था इसलिये यहां नहीं लिया फिर भी ले लेते हैं।

सूक्ष्म और बादर ये नामकर्मों के नाम हैं, इनके उदय में सूक्ष्म जीव किसको कहना और बादर किसको कहना ? सूक्ष्म नामकर्म के उदय से जीवों के ऐसा शरीर प्राप्त होता है कि वे जीव किसीके आधार से नहीं रहते एक बात। वे किसीके द्वारा घाते नहीं जा सकते, ना ही अग्नि से जलते हैं, ना वायु से हिल सकते हैं, ना उनको कोई ऐसे मसल सकता है। क्यों ? क्योंकि उनका शरीर सूक्ष्म परिणमनवाला है - सूक्ष्म पुद्गल; अलग टाइप के पुद्गल होते हैं। सूक्ष्म पुद्गल कैसे होते हैं ? जैसे कोई बड़ी कांच है; यहां यह कांचवाली विंडो है तो उसमें से क्या आप आरपार जा सकते हैं ? नहीं जा सकते, टर्न होकर जाना पड़ता है; तो क्या प्रकाश भी टर्न होकर आता है अंदर ? *श्रोता: नहीं।*

वह डायरेक्ट आता है थ्रू अँड थ्रू। वह प्रकाश कैसा है ? कांच की अपेक्षा वह सूक्ष्म है, है न ? एक्स-रे वगैरह हैं वे कांच में से आयेंगे कि नहीं आयेंगे ? वे भी उसके अंदर से पास हो जाते हैं दूसरी ओर जाते हैं तो वह कैसा है ? सूक्ष्म परिणमन है। ऐसे सूक्ष्म नामकर्म के उदय से जीवों के ऐसा शरीर मिलता है कि सूक्ष्म पुद्गल परमाणुओं से बना है, ये सूक्ष्म जीव हैं वे थ्रू अँड थ्रू सर्वत्र रहेंगे।

पांचों ही सूक्ष्मकायिक जीव पूरे लोकाकाश में ठसाठस भरे हुये हैं। यहां हमें बीच में कुछ नहीं दिखता है। ये सर्वत्र सूक्ष्म पृथ्वीकायिक का पूरा एक अखंड ऐसा महास्कंध है। महास्कंध किससे बनता है मालूम है ? पूरे लोकाकाश प्रमाण एक अखंड स्कंध है वह पृथ्वीकायिक से बना है। बादर पृथ्वियां हैं ही, आठ पृथ्वियां बादर पृथ्वीकायिक हैं और उनके बीच में सर्वत्र सूक्ष्म पृथ्वीकायिक सभी जीवों के शरीर एक साथ जुड़े हुये हैं। लोकाकाश प्रमाण पुद्गल का एक अखंड स्कंध है उसको कहेंगे महास्कंध। उसमें हम रहते हैं, हम घूमते हैं, क्या हमें कुछ पता लगता है ?

सूक्ष्म जीवों का शरीर किसीको रोकता नहीं है यानी प्रतिघातयुक्त नहीं होता। यह एक शरीर है, यह दूसरा है; इसको यह अड़ता-अटकता है तो इसको कहेंगे प्रतिघातयुक्त है। बादर शरीर होते हैं वे स्वयं दूसरों के द्वारा रोके जाते हैं और उनका शरीर दूसरों को रोकता है। बादर जीव कैसे हैं ? किसी न किसीके आधार से रहते हैं। सूक्ष्म जीव पूरे लोकाकाश में रहते हैं, किसीके आधार से नहीं रहते हैं। जब हम निगोद की बात करते हैं, सूक्ष्म निगोद बिना आधारवाले हैं। जब हम आलू-प्याज आदि की बात करते हैं, वे कौनसे निगोद हैं ? *श्रोता: बादर निगोद।* बादर निगोद हैं। किसके आधार से रहते हैं ? आलूवाली प्रत्येक वनस्पति है, उसके आधार से वे निगोद के शरीर रहते हैं। उस एक-एक निगोद शरीर में अनंत जीव रहते हैं। वे बादर हैं जिनकी हिंसा हम टालना चाहते हैं। सूक्ष्म की हिंसा तो होती नहीं है। उनके शरीर ऐसे सूक्ष्म हैं, हम ऐसा हाथ करेंगे तो वे थ्रू अँड थ्रू चले जायेंगे। *श्रोता: नीचे निगोद है वह कैसा है नित्य है या इतर है ?* हां वे तो दोनों ही होंगे वहां पर, निगोद तो सर्वत्र पूरे ही ठसाठस भरे हैं।

यह नामकर्म है, यहां चर्चा चल रही है सूक्ष्म और बादर वगैरह की, यह जीवों की ही बात है। उनके विशिष्ट नामकर्म का उदय पाया जाता है इसलिये उन जीवों को हम वह नाम देकर उनको पुकारते हैं। पृथ्वीकायिक जीव को हम पृथ्वीकायिक जीव

ही क्यों कह रहे हैं ? उनको पृथ्वीकाय स्थावर नामकर्म का उदय है और उस पर्याय में वह उत्पन्न हुआ है। उस नामकर्म के कारण उनके वैसे-वैसे शरीर की रचना भी स्वयमेव हो जाती है। हम भी जीव को उसी नाम से पहचानते हैं। हमने एकेन्द्रियों के भेद कितने देखे ? *श्रोता: ग्यारह भेद।* ग्यारह भेद देखे। पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और साधारण वनस्पतिकायिक इनमें बादर भी होते हैं और सूक्ष्म भी होते हैं; ये दस हो गये। प्रत्येक वनस्पति बादर ही होती है वह ग्यारहवां भेद हुआ। ऐसे एकेन्द्रियों के ग्यारह भेद हो गये। यहां स्थावर और त्रस की अपेक्षा अलग-अलग भेद बता रहे हैं। वहां दस लिये थे, अकेले बादर को अलग निकाला था। यहां त्रस अलग निकालेंगे, स्थावरों को अलग बता रहे हैं। स्थावर और एकेन्द्रिय नामकर्मवाले हैं, ऐसे ग्यारह अलग पद हैं कहो या अलग टाइप के जीव हैं।

आगे बढ़ते हैं ४८३ पृष्ठ पर नया पॅरेग्राफ- अब त्रस के विशेष यानी ये सारे त्रस नामकर्मवाले हैं परंतु द्वीन्द्रियादि के त्रस नामकर्म तो है ही है, द्वीन्द्रियजाति नामकर्म भी वहां है। **पुनश्च त्रस विशेषरूप द्वीन्द्रिय, त्रस विशेषरूप त्रीन्द्रिय, त्रस विशेषरूप चतुरिन्द्रिय, त्रस विशेषरूप असंज्ञी पंचेन्द्रिय, त्रस विशेषरूप संज्ञी पंचेन्द्रिय और मनुष्यगतिनाम**, मनुष्यगति नाम अलग दिया, क्योंकि ऊपर ये सारे तिर्यंचगतिवाले हैं, मनुष्यगतिवालों को अलग बताया। **ये सत्रह पर्याप्त नामकर्म के विशेष के धारक पर्याप्त पद जानना।** यहां हमने दस और सात लिये थे। हमने एकेन्द्रिय यानी स्थावर और त्रस अलग-अलग किये तो स्थावर एकेन्द्रियों के ग्यारह बताये। ये बाकी जो हैं द्वीन्द्रिय आदि यानी द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय और मनुष्य ये छह हुये। पहलेवाले ग्यारह और ये छह, सत्रह। इन १७ के... *श्रोता: पर्याप्त नामकर्म ?* हां, **पर्याप्त नामकर्म के विशेष के धारक पर्याप्तपद जानना और अपर्याप्त नामकर्म के विशेष के धारक अपर्याप्त जानना।** जिनके अपर्याप्त नामकर्म बंधा है इन प्रकृतियों के साथ वे जीव लब्धिअपर्याप्त में उत्पन्न होंगे। जिन्होंने पर्याप्त नामकर्म बांधा है वे जीव पर्याप्त हो जायेंगे, उन जीवों को ही हम पर्याप्त कहेंगे।

पुनश्च चार केवली केवल जीवपद ही हैं कर्मपद हमने अभी सीखे नहीं हैं, परंतु ये तो मात्र जीवपद ही हैं **इनमें कर्मपद नहीं है क्योंकि केवलीपना जीव का स्वभाव है।** कर्मपद नहीं हैं यानी उनमें बंध की बात नहीं आती है। केवलज्ञान हुआ है वह किसी नामकर्म के उदय में नहीं हुआ है। किसी बंध के कारण केवलीपद नहीं

प्राप्त हुआ है। जैसे त्रस नामकर्म बंधा था तब यह त्रस पर्याय उत्पन्न हुयी थी परंतु केवलीपद हुआ है, कौनसे कर्म के कारण मिला है ? *श्रोता: स्वभाव है।* वह स्वभाव है ! यही बात कहते हैं कि सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली, समुद्घातगत सामान्य केवली और समुद्घातगत तीर्थंकर केवली ये केवली के चार पद हैं वे कर्मपद नहीं हैं। इनको कर्मपद में नहीं लेना है, जीवपद में लेना है क्योंकि केवलीपना जीव का स्वभाव है।

पुनश्च आहारकपद भी केवल जीवपद ही है क्योंकि देवगति को छोड़कर अन्य गतिसहित आहारक का बंध नहीं है। इसको देखते हैं- आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग का बंध कौनसे गुणस्थान में होता है ? *श्रोता: सातवें और आठवें गुणस्थान।* सातवें और आठवें गुणस्थान में होता है। उस समय कौनसी गति बंध रही है ? *श्रोता: देवगति।* देवगति। क्यों ? *श्रोता: सम्यक्त्व सहित है।* हां, बाकी गतियों की बंधव्युच्छित्ति पहले हो चुकी है। नरकगति की बंधव्युच्छित्ति पहले में हुयी, तिर्यंचगति की बंधव्युच्छित्ति दूसरे में हुयी, मनुष्यगति की बंधव्युच्छित्ति चौथे में हुयी और यहां देवगति का बंध हो रहा है। यहां लिखा न, आहारकपद केवल जीवपद ही है क्योंकि देवगति को छोड़कर अन्य गति सहित इसका बंध नहीं है। अन्य गति सहित यानी जब अन्य गति का बंध हो रहा है, तब आहारक का बंध होता है ? *श्रोता: नहीं होता है।* नहीं होता है। अन्य गति सहित आहारक का बंध नहीं है इसलिये देवगति में आहारकपद को गर्भित किया है। यहां कर्मपदों की बात कर रहे हैं- किसको किसमें गर्भित करके उसको नहीं लिया है इसकी बात चल रही है। **पुनश्च पर्याप्त विशेषरूप देवगति नामकर्म** है। इसतरह नरकगति, देवगतिरूप २ पद और तिर्यंचगति, मनुष्यगति के ३४ पद। अकेले मनुष्यगति में कितने पद है ? पर्याप्त, अपर्याप्त २ पद हैं। यहां केवली के पद को नहीं लिया है। देखो, नरकगति, देवगतिरूप २ पद और तिर्यंचगति, मनुष्यगति के ३४ पद मिलकर चार केवली और आहारक बिना कर्मपद ३६ ही जानना और जीवपद सर्व ४१ जानना।

देखो, चार्ट में क्या लिखा है ? ये जीवपद हैं- ४१ जीवपद। अभी हमने कर्मपद की बात देखी जो ३६ होते हैं, उसका भी चार्ट देखेंगे। हमने देखा नारकी का १ पद है। यहां विस्तार से १० और ७ देखे थे, उनके पर्याप्त-अपर्याप्त मिलकर ३४ हुये थे। केवली के ४ पद लिये थे, आहारक का १ पद, देव का १ पद- नामकर्म के स्थानों के आधारभूत

जीवपद ४१ हुये थे। हम कर्मपद की भी बात देखेंगे, १७ नंबर का चार्ट है। ३६ कर्मपद की बात अभी हमने विस्तार से पढ़ी थी। देखो इनको कर्मपद क्यों कहते हैं ? कर्मों के बंधस्थानों की अपेक्षा - नामकर्म के जो बंधस्थान हैं उनकी अपेक्षा इसमें लगती है। हमने कौन-कौनसे पद देखे थे ? एकेन्द्रिय स्थावर के कितने देखे थे ? *श्रोता: ग्यारह।* ग्यारह और त्रस के ? *श्रोता: छह।* जिसमें पर्याप्त-अपर्याप्त भेद करनेवाले थे ऐसे छह देखे थे क्योंकि नारकी भी त्रस हैं और देव भी त्रस हैं उनको अलग निकाला। जिनके पर्याप्त-अपर्याप्त ऐसे भेद करते हैं ऐसे त्रस को अलग निकाला यानी तिर्यंच और मनुष्यगतिवालों को लिया। देवगति को अलग निकाला, नरकगति को अलग निकाला, वे दो अलग हो गये। अब मनुष्यगति को तिर्यंचगति के साथ यहां लिया, तो वहां स्थावर के ११ पद लिये और त्रस के मनुष्य सहित ६ पद लिये। ग्यारह और छह १७ हुये और हर एक के पर्याप्त-अपर्याप्त लिये। देखो इनकी टोटल ३६ हो जाती है। ३६ कर्मपद कैसे ? नामकर्म के बंधस्थानों की अपेक्षा ये पद हैं।

३६ कर्मपद - नामकर्म के बंधस्थानों की अपेक्षा

नरकगति नामकर्म		पर्याप्त	१
११ प्रकार के स्थावर एकेन्द्रियजाति नामकर्म	}	पर्याप्त	} ३४
६ प्रकार के त्रसविशेषरूप नामकर्म		अपर्याप्त	
देवगति नामकर्म		पर्याप्त	१
			३६

देवगति - १ मनुष्यगति - २
नरकगति - १ तिर्यंचगति - ३२ = ३६

पहले हमने जीवपद देखे थे जो नामकर्मों के स्थानों के आधारभूत पद हैं। उनके आधार से ये कर्मपद बताये जायेंगे। नामकर्मों के भेदों की अपेक्षा इसकी बात कर रहे हैं - नरकगति नामकर्म एक है, नीचे देवगति नामकर्म भी एक कहा। अब बीच में सारे जो हैं एक मनुष्य को छोड़ेंगे तो ये सारे तिर्यंचगति के ही भेद हैं। उनमें स्थावर और त्रस ऐसे दो भेद किये हमने, तो ११ प्रकार के स्थावर एकेन्द्रियजाति नामकर्म। एकेन्द्रियजाति नामकर्म है, परंतु उसके साथ अलग-अलग ११ भेद बताये। ६ प्रकार के

त्रस विशेषरूप नामकर्म कौनसे देखे थे हमने ? त्रस विशेषरूप द्वीन्द्रिय, त्रस विशेषरूप त्रीन्द्रिय, इसीतरह चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय और मनुष्य को भी लिया था अलग से। ये ६ लिये थे और ये ११ = १७ हुये। सबके पर्याप्त और अपर्याप्त नामकर्म के भेद देखे हैं वे ३४ हो गये।

श्रोता: विशेषरूप ? विशेषरूप यानी उसका भेद है। वैसे द्वीन्द्रिय भी त्रस है तो त्रस का विशेष भेद हुआ द्वीन्द्रिय। द्वीन्द्रिय भी त्रस है, त्रीन्द्रिय भी त्रस है, चतुरिन्द्रिय भी त्रस है, असंज्ञी भी त्रस है, संज्ञी भी त्रस है, मनुष्य भी त्रस है। इसके भेद किये न हमने - त्रस के भेद किये, विशेष किये। जैसे स्थावरों के हमने अलग-अलग भेद किये थे वैसे त्रस के भी अलग-अलग विशेष किये यानी भेद किये। ये सारे नामकर्म अलग-अलग हैं, द्वीन्द्रियजाति नामकर्म अलग है, त्रीन्द्रियजाति नामकर्म अलग है, है न ! ये किसके भेद हैं ? तिर्यंचगति के भेद। मनुष्यगति में अकेले मनुष्यगति को रखेंगे। यह त्रस के विशेष यानी भेद हो गये। ये ६ प्रकार के त्रस, ये ३४ हो गये। पहले हमने दस और सात किये थे उनमें स्थावर और त्रस ऐसा भेद नहीं किया था, उसमें बादर-सूक्ष्म और बादर ऐसा भेद किया था। यहां स्थावर के ११ और त्रस के ६ लिये, इनमें पर्याप्त-अपर्याप्त दोनों हैं। देवगति और नरकगति नामकर्म को अलग निकाला, ये पर्याप्त नामकर्मवाले ही हैं। इनमें १-१ रखा और बीचवाले ३४ हो गये तो टोटल कर्मपद कितने हैं ? ३६ हैं।

श्रोता: तीर्थंकर किसमें लिया ? तीर्थंकर को जीवपद में लिया। केवली के चार भेद किये थे, कर्म के कारण केवली नहीं होते हैं, वह जीव का स्वभाव है। केवली हैं वह जीव का स्वभाव है। आहारक जब बंधता है उस समय देवगति बंध रही है, तो उसमें उसको इन्क्लूड कर दिया। आहारक का बंध कब होता है ? *श्रोता: सातवें और आठवें गुणस्थान में।* सातवें और आठवें गुणस्थान में। उस समय कौनसी गति बंध रही है ? *श्रोता: देवगति।* देवगति। इसलिये उसमें इन्क्लूड कर दिया, आहारक का कर्मपद अलग से नहीं बताया है। फिर से पढ़ेंगे पृष्ठ ४८३, तीसरा पॅरेग्राफ - **चार केवली केवल जीवपद ही हैं, इनमें कर्मपद नहीं हैं क्योंकि केवलीपना जीव का स्वभाव है। आहारक पद भी केवल जीवपद ही है।** ४१ जीवपद में हमने उसको गिना था परंतु कर्मपद में नहीं गिना है। केवली के चार और आहारक का एक – पांच नहीं गिने हैं।

श्रोता: ५ जीवपद होंगे क्या ? ४१ जीवपद हैं, उनमें से इन ५ को बाद करके ३६

रह गये; इन ३६ को हमने कर्मपद कह दिया। जीवपद ४१ होते हैं और कर्मपद ३६ ही होते हैं। आहारकपद भी केवल जीवपद ही है क्योंकि देवगति को छोड़कर अन्य गति सहित आहारक का बंध नहीं है। कब बंधता है ? *श्रोता: देवगति सहित।* देवगति बांध रहा है उसके साथ किसीको आहारक का बंध हो सकता है, सबको होगा यह बात नहीं है। जो आहारक का बंध करता है, ऐसे सातवें-आठवें गुणस्थानवर्ती जीव उस समय देवगति का ही बंध कर रहे हैं। इसलिये देवगति में उसको इन्क्लूड कर दिया।

इसतरह नरकगति-देवगतिरूप दो पद, तिर्यंचगति, मनुष्यगति के चौंतीस पद। देखा जाये तो मनुष्यगति के दो ही पद हैं - मनुष्य पर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्त। बाकी ग्यारह प्रकार के स्थावर और द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय। ग्यारह और पांच सोलह हो जायेंगे और सोलह के दो-दो हो गये - पर्याप्त और अपर्याप्त। यह कितने हुये ? बत्तीस पद तिर्यंचगति के हो गये। मनुष्यगति के पर्याप्त-अपर्याप्त दो पद होंगे। नीचे चार्ट में अलग से लिखा है, पुस्तक में ऐसा नहीं लिखा है। देवगति का एक है, पर्याप्त ही होता है; नरकगति का एक है, पर्याप्त ही होता है; मनुष्य में दो लिखे हैं- पर्याप्त और अपर्याप्त; तिर्यंचगति के बत्तीस लिखे हैं, सोलह भेदों के पर्याप्त और अपर्याप्त। सोलह कैसे हुये ? स्थावर के ग्यारह और त्रस के पांच। द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय और संज्ञी पंचेन्द्रिय इनके दो-दो भेद हर एक के किये हैं। इसतरह से ये जीवपद और कर्मपद हो गये।

हम कहेंगे किसको बंधती हैं ? कौनसी गति बंध रही है ? हम कहेंगे देवगति का बंध हो रहा है, हम कहेंगे नरकगति का बंध हो रहा है तो उसके साथ और कितनी प्रकृतियां बंधती हैं ? इसको आधार बनाकर हम फिर चर्चा करेंगे इसलिये यहां इसका इतना क्लासिफिकेशन कर दिया। दुबारा बंधस्थानों में इसको नहीं गिनना है। कर्मपद ३६ हैं और जीवपद ४१ हैं। इनके नाम हमने सीख लिये हैं। अब इनमें बंधस्थानों की, उदयस्थानों की और सत्त्वस्थानों की कुछ चर्चा चलेगी। इसमें कुछ प्रश्न हैं ?

श्रोता: जैसे हमने केवली का सिद्धान्त लगाया केवली केवल जीवपद में है, इसमें कर्मपद नहीं है, कर्म की अपेक्षा नहीं है। हां, केवलज्ञान है वह स्वभाव है। *श्रोता: जो आहारक है वह देवगति के कारण बंधता है।* देवगति सहित बंधता है। *श्रोता: वह कर्म से बंधता है।* बंधने दो न, परंतु उसका अलग से पद नहीं है। जब आहारक का

बंध हो रहा है तो देवगति ही बंध रही है। जो देवगति बांधता है वह कितनी प्रकृतियों को बांधता है वह हम आपको आगे चलकर बतायेंगे। देवगति सहित २८ प्रकृति बांध रहा है या फिर उसके साथ आहारक बांध रहा है ? उसकी बात अलग करेंगे। तीर्थंकर प्रकृति बांध रहा है उसकी बात अलग करेंगे। बंध कितने का होता है उसकी चर्चा हम तभी करेंगे। अभी हमने बंधस्थानों की बात नहीं उठायी है। इनका बंध जरूर होता है, उसको अलग पद नहीं दिया है; कर्मपद में अलग से पद नहीं गिनाया है इतनी बात है।

जो इनका बंध करता है उस समय वह कौनसी गति को बांध रहा है ? नामकर्म का बंध होता है तो पहले कहेंगे कि कौनसी गतियुत बंध हो रहा है ? मनुष्यगतियुत, फिर कितने का बंध कर रहा है ? देवगतियुत कितने का बंध कर रहा है ? कौनसा जीव बांध रहा है वह बात नहीं करेंगे, कौनसी गति बांध रहा है और उस गति का बंध करते हुये नामकर्म की टोटल कितनी प्रकृतियां बंध रही है ? कितने का पॅकेज है। युत यानी सहित ऐसा शब्द आयेगा, जो जीव देवगति बांधता है उसकी टोटल नामकर्म की कितनी प्रकृतियां एक साथ बंध रही हैं यह बात है। हम अभी तक इतना ही कह रहे थे कि सुबह से शाम तक मिथ्यादृष्टि को कभी देवगति बंधती है, कभी नरकगति बंधती है, कभी तिर्यंचगति बंधती है। जिस समय देवगति बांध रहा है तो टोटल नामकर्म कितने बांधता है ? जिस समय नरकगति बांध रहा है तो टोटल नामकर्म कितने बांधता है ? जिस समय तिर्यंचगति बांधता है तो टोटल नामकर्म कितने बांधता है ? उसमें भी पर्याप्त का बंध कर रहा है कि अपर्याप्त का कर रहा है ? एकेन्द्रिय का कर रहा है कि द्वीन्द्रिय का कर रहा है ? आतपवाला कर रहा है कि उद्योतवाला कर रहा है ? उसके बंधस्थान अलग-अलग बतायेंगे। टोटल कितनी प्रकृतियां एक साथ बंधती हैं, उसको हम कहेंगे बंध के स्थान। कौन बांधता है इसकी बात नहीं है।

हम बाद में डिराइव्ह कर सकते हैं कि एकेन्द्रिय संबंधी बंध कौन कर सकता है ? कौनसे गतिवाले एकेन्द्रिय संबंधी बंध करेंगे ? *श्रोता: मनुष्य करेंगे।* मनुष्य करेंगे, तिर्यंच करेंगे, देव करेंगे - सौधर्म ईशान तक के देव करेंगे, नारकी नहीं करेंगे। *श्रोता: तीन गति के करेंगे।* हां, तीन गति के करेंगे। अब एकेन्द्रिय अपर्याप्त का बंध कौन कर सकते हैं ? *श्रोता: दो गतिवाले।* दो गतिवाले क्योंकि देव हैं वे अपर्याप्त नामकर्म बांधते ही नहीं हैं। वे निगोद संबंधी यानी साधारण नामकर्म बांधते ही नहीं है, सूक्ष्म नामकर्म

भी नहीं बांधते। इसकी चर्चा इटरेस्टिंग है ! आपको थोड़ा कठिन लग रहा है क्योंकि हमने उस विषय में प्रवेश नहीं किया। यह क्या होगा, क्या होगा ऐसी शंका होती है, है न ! कभी तो पहली बार सीखना है कि नहीं सीखना है ? यह विषय कभी हुआ नहीं है यहां पर। हमने पहले करणानुयोग में बहुत बार मार्गणायें ली हैं, अन्य-अन्य बातें ली हैं, पर नामकर्म के बंधस्थान और उदयस्थान की चर्चा कभी हुयी ही नहीं है। उदयस्थान में और अधिक इटरेस्टिंग बातें हैं। हम आपको याद करने को कहां बोल रहे हैं ? जब कोई बात हम पढ़ते हैं, उसका अर्थ भासित होता है या नहीं ? बस इतना समझ लो।

४१ जीवपद किसको कहना है ? ये जीवों के क्लासिफिकेशन हैं, चार गति की बात है; उनमें एकेन्द्रिय आदि के भेद किये हैं; त्रस के भेद किये हैं; मनुष्य, देव, नारकी ऐसे भेद किये हैं। ये जीवपद हो गये - उनमें केवली के चार पद आ गये, आहारक का एक पद आ गया है। कर्मपद में केवली के चार और आहारक का एक, इन पांच बिना बाकी सारे छत्तीस कर्मपद हैं। इतनी सिम्पल बात है ! ४१ जीवपद हैं, केवली के चार और आहारक का एक मायनस कर दो तो ३६ कर्मपद हैं। इन पर्याय संबंधी कर्म का बंध होगा - जहां यथायोग्य, कितनी प्रकृतियों का बंध होता है, उसकी बात करेंगे।

४८३ पृष्ठ पर गाथा ५२१ में बताया कितने-कितने बंध के स्थान हैं। नामकर्म का बंध होता है- कभी देवगति का होता है, कभी नरकगति का होता है, कभी तिर्यंच संबंधी, कभी एकेन्द्रिय संबंधी है। कितनी-कितनी प्रकृतियों के अलग-अलग स्थान होते हैं उसकी बात बतायेंगे। मोहनीय में बंधस्थानों में गुणस्थानों की विवक्षा लगती है; यहां पहले नामकर्मों के बंधस्थान देखेंगे, बाद में गुणस्थानों की चर्चा करेंगे। देखो, ५२१ की टीका- **नामकर्म के बंधस्थान तेइस** यानी २३वाला एक स्थान है। नामकर्म की २३ प्रकृतियां ॲट अ टाइम बंधेगी ऐसा एक स्थान है इसको कहेंगे २३ का स्थान। **पच्चीस, छब्बीस, अट्ठाइस, उनतीस, तीस, इकतीस और एक प्रकृतिरूप आठ हैं**। आठ अलग-अलग स्थान हैं- कोई जीव २३ प्रकृति का स्थान बांध रहा है, कोई २५वाला बांध रहा है, कोई २६वाला बांधता है, कोई २८ का बांधता है, कोई २९ का बांधता है, कोई ३० का बांधता है, कोई ३१ का बांधता है और कोई १ ही प्रकृति बांधता है।

नामकर्म की १ ही प्रकृति बंधती है, वह कौनसी मालूम है ? *श्रोता: तीर्थंकर।* तीर्थंकर ? तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है तब अन्य कितनी प्रकृति बंधती हैं ? *श्रोता:*

सातावेदनीय। सातावेदनीय नामकर्म की प्रकृति है ? *श्रोता: यशस्कीर्ति।* यशस्कीर्ति। आठवें गुणस्थान में बहुत सारी बंधव्युच्छित्ति हो जाने के बाद नामकर्म में एक यशस्कीर्ति बंधती है उसको कहेंगे १ का बंधस्थान। आठवें गुणस्थान में बंध की व्युच्छित्ति याद है न ? पहले भाग में दो, छठे भाग में तीस और सातवें भाग में हास्य, रति, भय, जुगुप्सा। पहला भाग, छठा भाग और सातवां भाग इसतरह से हमने तीन भेद किये थे। उसमें नामकर्म की बहुत सारी प्रकृतियां बंधना रुक गयी थी, एक बची थी जिसका बंध आगे तक था। वह कौनसी थी ? *श्रोता: यशस्कीर्ति।* यशस्कीर्ति। वह कहां तक बंधेगी ? *श्रोता: दसवें तक।* दसवें तक बंधेगी, उसको यहां पर १ का बंधस्थान कहा है। हम देखेंगे, अभी हमने कहां देखा है कौन-कौनसी हैं ! हमने केवल इनकी संख्या देखी- २३वाला एक स्थान है, २५वाला है, २६वाला है, २८वाला है, २९वाला है, ३०वाला है, ३१वाला है और १वाला है। १वाला यानी १ प्रकृतिरूप या १ प्रकृतिक स्थान। इसका पूरा नाम कहना है तो नामकर्म का २३ प्रकृतिकस्थान यानी २३ प्रकृतिवाला बंधस्थान, २५ प्रकृतिवाला बंधस्थान, २६ प्रकृतिवाला बंधस्थान ऐसा अर्थ समझना।

अब कहते हैं यथा समय **उनमें से आदि के सात स्थान**, आदि के सात स्थान यानी १वाला छोड़कर; आदि के यानी पहले २३वाला, २५वाला, २६वाला वगैरह जो सात स्थान हैं; **अपूर्वकरण के छठे भाग तक यथासंभव पाये जाते हैं**। यथासंभव यानी जिसको जो होगा वहां वह पाया जायेगा। कहां-कहां कौनसे पाये जायेंगे वह बाद में कहेंगे। १ प्रकृतिरूप बंधस्थान जहां एक ही प्रकृति बंधती है नामकर्म की- यशस्कीर्ति, दोनों श्रेणियों में; कौनसी दो श्रेणियां होती हैं ? उपशमश्रेणी और क्षपकश्रेणी में अपूर्वकरण के छठे भाग में ३० प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति होती है। सातवें भाग के प्रथम समय से लेकर नामकर्म की १ ही प्रकृति बंधती है वह है यशस्कीर्ति। कहां तक बंधेगी ? सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान के अंतिम समय तक बंधती है। १ प्रकृति का बंधस्थान कहां है ? आठवें गुणस्थान के सातवें भाग से लेकर दसवें गुणस्थान के अंतिम समय तक १ प्रकृति का बंध होता है उसको कहेंगे १ प्रकृतिवाला बंधस्थान। १ की बात उन्होंने बता दी है और बाकी प्रकृतियों की बात भी बतायेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४७. नामकर्म के बंधस्थान

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है और पं. टोडरमलजी ने उसकी भाषाटीका सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका लिखी है, जो ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है और उसका हिंदी अनुवाद हम यहां देख रहे हैं। नामकर्म के बारे में विशेष चर्चा चलेगी। हमने नामकर्म के आधार से जीवपद और कर्मपद देखे।

प्रश्न ऐसा हुआ था कि *जीवपद में किसको लेना और कर्मपद में किसको लेना ?* जीवपद में तो नामकर्म के उदय की अपेक्षा लेना है। हम जीवों के अलग-अलग भेद बता सकते हैं तो नामकर्म का कौनसा उदय है उसकी अपेक्षा हम कहेंगे - यह नारकी है, यह देव है, यह मनुष्य है, यह पृथ्वीकायिक है आदि - उसको हम उदय की अपेक्षा कहेंगे। यह कर्मपद किसको कहना ? इन कर्मपद के साथ और भी कुछ प्रकृतियां बंधती हैं। कर्मपद हमने छत्तीस देखे हैं। जैसे नरकगति एक कर्मपद बताया है तो नरकगतियुत यानी नरकगति सहित जिन-जिन कर्मों का ग्रुप बंधेगा। इसलिये यह सारे कर्मपद ऐसे बताये हैं कि इन सहितवाला बंध का एक ग्रुप वे बतायेंगे।

जैसे नरकगति जब बंधती है तो नरकगतियुत यानी नरकगति उसमें से एक प्रकृति है। नरकगति जो बांध रहा है वह जीव नरकगति संबंधी कितनी प्रकृतियों का बंध करता है ? आगे वे बतायेंगे २८ का बंध करता है। इसको हम कहेंगे नरकगतियुत। यह बंध के स्थान बताते हैं उसमें से एक प्रकृति बतायेंगे और उसके साथ अन्य कौन-कौनसी प्रकृति बंधती हैं ? टोटल कितनी बंधेगी ? जैसे हमने कहा २३ प्रकृतिवाला स्थान है तो कौनसे कर्मपद सहित बंधेगा ? कहेंगे एकेन्द्रिय है, अपर्याप्त है उस सहित यह स्थान बंधेगा। उसमें से एक प्रकृति का नाम लेकर उस सहित बंधनेवाला ग्रुप है, बंधस्थान है, उसको हम बताते हैं। उसमें से एक प्रकृति का नाम लेंगे। ये सारे कर्मपद जो बतायें हैं वे उसकी अपेक्षा बताये हैं। इन कर्मपद सहितवाले बंधस्थान होते हैं।

हमने नामकर्म के कौन-कौनसे बंधस्थान देखे ? बोर्ड पर लिखे हैं- २३वाला स्थान है, २५वाला है, २६वाला है, २८वाला है, २९वाला, ३०वाला, ३१वाला और १वाला। हमने देखा था १वाला स्थान है वहां अकेली यशस्कीर्ति बंधती है। १वाला स्थान किसी गति के साथ नहीं बंधता है, परंतु यहां तक के सभी स्थान किसी न किसी गति सहित बंधनेवाले हैं। आठवें गुणस्थान तक देवगति बंधती है यानी गति का बंध यथायोग्य

विशिष्ट गुणस्थान तक होता है। कहां कौनसी बंधव्युच्छित्ति होती है वह हमें पता है। जब हम स्थान कहेंगे यह कौनसी गति बांध रहा है; अब तिर्यंचगति बांध रहा है। परंतु किस पर्याय संबंधी बंध हो रहा है ? हम कहेंगे एकेन्द्रिय पर्याय संबंधी बंध हो रहा है। परंतु इसकी और कौनसी विशेषता है ? यह एकेन्द्रिय अपर्याप्त है, लब्धिअपर्याप्त। बांधनेवाला मात्र लब्धिअपर्याप्त नहीं है, बांधनेवाला जीव कौन है ? कोई मनुष्य हो सकता है, तिर्यंच हो सकता है; वह कौनसा बंध कर रहा है ? लब्धिअपर्याप्त एकेन्द्रिय में जाने के लिये बंधयोग्य प्रकृतियां हैं वैसा बंध कर रहा है। उसको कहेंगे बंधस्थान।

नामकर्म के बंधस्थान - २३, २५, २६, २८, २९, ३०, ३१, १

सामान्य २३ प्रकृतियों का बंध सभी के -

९ ध्रुवबंधी -	तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्णादि ४
९ युगल में से -	त्रसादि ४, स्थिरादि (स्वर बिना) ५
५ अन्य -	गति, जाति, शरीर, संस्थान, आनुपूर्वी

+

त्रस पर्याप्त/अपर्याप्तयुत -	संहनन, अंगोपांग
त्रस/स्थावर पर्याप्तयुत -	परघात, उच्छ्वास
त्रस पर्याप्तयुत -	स्वर, विहायोगति
अन्य यथास्थान -	आतप, उद्योत, तीर्थंकर, आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग

कर्मपद का अर्थ क्या है ? कर्मपद ऐसी प्रकृति है उस सहित यह बंधस्थान होंगे। जैसे देवगति सहितवाला बंधस्थान जो मनुष्य या तिर्यंच बांध रहा है। मनुष्यगति कौन बांधते हैं ? चारों गति के जीव बांध सकते हैं। वे जब मनुष्यगति बांध रहे हैं तो कितनी-कितनी प्रकृतियां उस सहित बांधते हैं ? उसमें एक प्रकृति मनुष्यगति को गिनना है; फिर दो, तीन, चार ऐसे हम गिनेंगे तो इसको कहेंगे वह कर्मपद है। जीवपद में नामकर्मों के उदय की अपेक्षा लगायी थी, वे कौन-कौनसे जीव हैं उसकी बात की थी। कर्मपद में यह जो नामकर्म बांध रहा है उसमें से एक मुख्य प्रकृति का नाम हम ले रहे हैं उस सहितवाला बंध है। जब हम २३ कहेंगे तो उसमें से एक प्रकृति नामकर्म की ले रहे हैं जिसको हमने कर्मपद कहा था उसके साथवाला यह २३वाला बंध है। यह

२५वाला है, यह २६वाला है - यह कौनसा स्थान किस बंध सहित है उसकी जब हम चर्चा करेंगे तो यह बात हम फिर दोहरायेंगे। आपको और ख्याल में आ जायेगी बात।

हमने जीवपद में उदय की बात देखी, कर्मपद में इन पदों सहितवाला नामकर्म का बंधस्थान होगा। तब हम कहेंगे यह २३वाला है, यह २५वाला है, यह २६वाला है। हमने नामकर्म के बंधस्थान देखे - २३वाला है, २५वाला है, २६वाला है, २८वाला है, २९वाला है, ३०वाला है, ३१वाला है और १वाला है। कितने हुये टोटल ? *श्रोता: आठ।* आठ हो गये। कर्मपद किसको कहा ? जिन सहित ये बंधस्थान हैं। यह जो है २३वाला बंधस्थान, कौनसे कर्मपद सहित बंध रहा है इसको बतायेंगे। २५वाला बंधस्थान कौनसे कर्मपद सहित बंध रहा है ? यानी कौन-कौनसी प्रकृतियां वह बांध रहा है उसमें से एक मुख्य प्रकृति का नाम लेंगे जिसको हम कर्मपद कह रहे हैं। आगे देखते हैं, पेज ४८४- **वह दो सूत्रों द्वारा कहते हैं।** हम इसको पढ़ेंगे टीका में।

तेइस प्रकृतिरूप स्थान अपर्याप्त प्रकृति सहित बंधता है। इसमें विशेषता नहीं लिखी है कि द्वीन्द्रिय अपर्याप्त है या एकेन्द्रिय; वह आगे जाकर बतायेंगे। वैसे यह है तो एकेन्द्रिय अपर्याप्त संबंधी स्थान। **पच्चीसरूप स्थान** यानी जहां नामकर्म की एक साथ पच्चीस प्रकृतियां बंधती हैं वहां **पर्याप्त प्रकृति सहित बंधता है, चकार से अपर्याप्त प्रकृति सहित भी बंधता है।** हम कैसे समझेंगे ? एकेन्द्रिय संबंधी पर्याप्त प्रकृति बांधेगा तो पच्चीस का स्थान हो सकता है और द्वीन्द्रियादि अपर्याप्तों का बंध भी पच्चीस संबंधी हो सकता है। जब हम प्रकृतियों के नाम देखेंगे तो कन्फ्यूजन थोड़ा दूर होगा। *श्रोता: चकार यानी ?* चकार ? च का अर्थ होता है 'और'; गाथा में जहां च अक्षर लिखा जाता है अन्य बातें भी वहां गर्भित हैं। देखो, गाथा पढ़ेंगे, उसका अर्थ देखते हैं। प्राकृत में 'च' के बदले 'य' आयेगा, संस्कृत में 'च' आता है। हम प्राकृत पढ़ेंगे देखो।

ठाणमपुण्णेण जुदं पुण्णेण य उवरि पुण्णगेणेव।
तावदुगाणण्णदरेणण्णदरेणमरणिरयाणं॥५२२॥
णिरयेण विणा तिण्हं एक्कदरेणेवमेव सुरगइणा।
बंधंति विणा गइणा जीवा तज्जोगपरिणामा॥५२३॥ जुम्मं

यहां संस्कृत में देखो **स्थानमपूर्णेन युतं** अपूर्ण यानी अपर्याप्त सहितवाला स्थान, **पूर्णेन चोपरि**, 'च' आया न ! **पूर्णेन च** यानी पर्याप्त और; और लिख दिया यानी

अपर्याप्त भी वहां गर्भित है। 'च' का अर्थ समझ में आया ? 'च' का अर्थ होता है 'और'। हम गाथा की टीका पढ़ेंगे- **तेइस प्रकृतिरूप स्थान अपर्याप्त प्रकृति सहित बंधता है।** जब २३ का स्थान कह रहे हैं तो उसमें लब्धिअपर्याप्त संबंधी कुछ बंध हो रहे हैं। वे कौन-कौनसी प्रकृतियां हैं उनको हम देखेंगे। २५वाला है वह पर्याप्त प्रकृति सहित बंध हो रहा है, चकार यानी 'और' अपर्याप्त संबंधी भी हो रहा है। उनमें भी पच्चीस प्रकृति का स्थान हो सकता है, कैसे घटित होगा वह बतायेंगे। **छब्बीस आदि स्थान पर्याप्त प्रकृति सहित ही बंधते हैं,** आदि यानी ऊपर के २६वाला, २८वाला और आगेवाले सभी, **वहां भी छब्बीस प्रकृतिरूप स्थान** यह २६वाला एकेन्द्रिय संबंधी है वह हम देखेंगे तभी आपको पता चलेगा। **आतप, उद्योत में से किसी एक प्रकृति सहित बंधता है।** तभी उसकी २६ प्रकृतियां होंगी।

अट्ठाइस प्रकृतिरूप स्थान देवगति और नरकगति में से एक गतिप्रकृति सहित बंधता है। यह सहितवाली बात की न ! बांधनेवाला नारकी नहीं है। जब नरकगति सहित बंध कहेंगे, जो नरकगति का बंध कर रहा है वह कितनी प्रकृतियों को बांध रहा है ? तो कहेंगे २८ प्रकृतियों को, उसको कहेंगे नरकगति सहित बंधस्थान। उसको नरकगति सहित २८ का बंध कहेंगे। जो मनुष्य या पंचेन्द्रिय तिर्यंच नरकगति का बंध कर रहा है वह उस समय नामकर्म की कितनी प्रकृतियां बांध रहा है ? तो हम कहेंगे नरकगति सहित २८ प्रकृतियां बांध रहा है। इसका अर्थ होता है सहित। बांधनेवाले की बात नहीं है, जो प्रकृतियां बंध रही हैं उनमें से एक प्रकृति का नाम है नरकगति। जब वह नरकगति बांध रहा है तब उसके साथ कौन-कौनसी प्रकृतियां बांधेगा उसकी बात है। आगे देखते हैं- **उनतीसरूप स्थान और तीसरूप स्थान तिर्यंचादि तीन में से एक गतिप्रकृति सहित बंधता है।** तिर्यंचादि तीन यानी नरक को छोड़ देना। जब नरकगति बंध रही है तब २८ का ही बंध होगा, उनतीस का नहीं होगा। जो देवगति बांध रहा है उसके देवगति सहित २८ का भी हो सकता है, २९ का, ३० का या ३१ का भी हो सकता है- आदि में उसको ले लेना। तिर्यंचगति बांध रहा है उसके तिर्यंचगति सहित भी उनतीस का और तीस का स्थान होगा। कैसे होगा ? देवगति के बांधनेवाले के सहित कैसे होगा ? उसकी चर्चा उनके नाम देखकर करेंगे।

अब आगे विशेषार्थ में बताते हैं- **नरकगति सहित मात्र अट्ठाइस को ही**

बांधता है। और देवगति सहित कोई २९ को भी बांधेगा, कोई ३० को भी बांधेगा, कोई ३१ को भी बांधेगा। **इकतीस प्रकृतिरूप स्थान देवगति प्रकृति सहित बांधता है।** ३१वाला एक ही स्थान है। जो सामान्य से देवगति बांधते हैं, मात्र देवगति और विशेष स्पेशल प्रकृति नहीं होगी तो २८ प्रकृतियां बंधती हैं। देवगति सहित तीर्थंकर प्रकृति का बंध करेगा तो २९ बंधती हैं, देवगति सहित आहारकद्विक बांधेगा तो ३० बंधेगी और देवगति सहित तीर्थंकर और आहारकद्विक दोनों का बंध करेगा तो ३१ बंधेगी। इसलिये कहा, ३१वाला स्थान मात्र देवगति सहित ही बंधेगा, अन्य किसी भी यानी मनुष्यगति या तिर्यंचगति बंधते हुये यह स्थान नहीं होगा।

एक प्रकृतिरूप स्थान किसी गतिप्रकृति सहित नहीं बंधता। इसका अर्थ क्या है ? एक प्रकृति का कौनसा स्थान हमने देखा था ? *श्रोता: यशस्कीर्ति।* अकेला-मात्र यशस्कीर्ति का बंध कहां होता है ? *श्रोता: आठवें के सातवें भाग से लेकर।* आठवें के सातवें भाग से लेकर यानी वहां देवगति वगैरह की बंधव्युच्छित्ति हो गयी। अब अकेली यशस्कीर्ति ही बंध रही है, कोई भी गति उसके साथ नहीं बंध रही है। यानी किसी गतिप्रकृति के साथ यह १वाला स्थान नहीं है। यशस्कीर्ति गति के साथ नहीं बंधता ऐसा नहीं कहा, अकेला यशस्कीर्ति बंधनेवाला जो १ प्रकृति का स्थान है वहां कोई भी गति नहीं बंध रही है। क्योंकि एक ही प्रकृति बंध रही न ! अन्य कोई प्रकृति बंधने का सवाल कहां है ? एक मात्र - अकेली बंध रही है उसकी चर्चा है।

ऐसे इन स्थानों को जो जीव उन-उन स्थानयोग्य परिणामों से युक्त होने पर बांधते हैं। क्या कहा ? हमें ऐसा लगता है यह बेचारा, यहां क्यों जन्म लिया ? कहेंगे वैसे उसने नामकर्म बांधे हैं न ! ऐसे नामकर्म बांधे, क्यों बांधे ? उस-उस परिणाम से युक्त होकर बांधे। ऐसा है न, हमने भी मनुष्यपर्याय इतनी दुर्लभ है सुना, तो हमने क्या किया ? पूरी मनुष्यपर्याय किसमें लगा दी ? सबको मालूम है किसमें लगा दी। बचपन से तो जब से अक्ल नहीं थी तब से तो स्कूल में दाखिल हो गये और फिर पढ़ाई की। पढ़ाई की, इतनी पढ़ाई की फिर पढ़कर बाहर निकले तो क्या किया ? अभी इतनी पढ़ाई की, काहे को की ? तो पैसा कमाने के लिये, पैसा इक्कट्ठा करने के लिये, तो फिर कमाने में लग गये और ऐसे ही जिंदगी चली गयी। वह भोगने को भी समय मिलेगा कि नहीं मिलेगा किसको पता ? सात पीढ़ी बैठकर खाये तो भी चले इतनी संपत्ति है, फिर भी क्या कर रहे हैं ? पेट भरने के लिये नहीं, हम पेटी भरने के लिये

कमाते हैं। परंतु इसके पीछे हमारा जो एक-एक परिणाम है उससे कर्म का बंध होता है क्योंकि शुद्धभाव से तो कर्मों की कमाई नहीं कर रहे हैं, जो कुछ कर रहे हैं ! हमारे दिनभर का एक-एक समय का जो परिणाम है उस परिणाम से युक्त होकर इन कर्मों का बंध कर रहे हैं। इतना ख्याल में रखना कि जिनका बंध करोगे वहां जाना पड़ेगा।

यह अपर्याप्त का बंध कर रहे हैं कि पर्याप्त का कर रहे हैं कि एकेन्द्रिय संबंधी कर रहे हैं कि द्वीन्द्रिय संबंधी कर रहे हैं, तिर्यंचगति का कर रहे हैं कि नरकगति का कर रहे हैं ? तो फल भुगतने के लिये तैयार रहना, इतना ही है क्योंकि बंध के समय तो उसका फल दिखायी नहीं दे रहा है। ये परिणामों से क्या दिखायी दे रहा है ? आमदनी दिखायी देती है। परंतु उन परिणामों से जो कर्म बंधते हैं उसका कुछ ख्याल नहीं आता है। जब उसका उदय होगा और उस पर्याय में जाना पड़ेगा तब कुछ भी सोचने से उसमें कुछ परिवर्तन नहीं होनेवाला, वह तो भोगना ही पड़ेगा। यह मनुष्यपर्याय इतनी दुर्लभता से मिलती है, फिर भी इस पर्याय में हम अपना स्वरूप पहचानना छोड़कर अन्य किसी न किसी बातों में उलझे रहते हैं और यह हमारा मनुष्यभव ऐसा ही फोकट चला जाता है, क्योंकि इस आयु में एक समय भी बढ़ोतरी होनेवाली नहीं है फिर भी हम इसको कहां खो दे रहे हैं ! अभी हम आगे बढ़ेंगे।

हमने २३वाला, २५वाला, २६वाला ये स्थान देखे हैं, इन स्थानों को जीव क्यों बांधता है ? उन स्थानों के योग्य परिणामों को करके बांधता है, उससे युक्त होने पर बांधता है। **आतप, उद्योत प्रकृतियां प्रशस्त हैं वे किस पद सहित बंधती हैं ?** प्रशस्त समझते हैं ? *श्रोता: शुभ प्रकृति।* प्रशस्त यानी शुभ। आतप किसके होती है ? *श्रोता: एकेन्द्रियों को।* एकेन्द्रियों में भी शुभ प्रकृति होती है, हो सकती है। उनके उसका उदय पाया जाता है, बंध किया होगा तो उसका उदय भी पाया जायेगा। उद्योत भी प्रशस्त प्रकृति है, किसके होती है ? *श्रोता: एकेन्द्रिय।* एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक के तिर्यंचों के होती है। ये शुभ प्रकृतियां होने से अग्निकायिक, वायुकायिक में नहीं होंगी। आतप मात्र एकेन्द्रियों के होती है, वह पृथ्वीकायिक के ही होती है। यह किसके होती है, किसके बंधती है उसकी बात चलेगी। हम आगे ४८५ पृष्ठ पर पढ़ेंगे।

देखो, आपके यहां एक पेज चिपका हुआ है। आप ऐसे सोचते होंगे कि यह ऐसा क्यों हुआ ? इसकी थोड़ी स्टोरी बतायेंगे आपको। जब गत साल हम अमेरिका

निकले तब यह पुस्तक छापने को हमने प्रेस में दी। इसका फायनल प्रूफ सब पढ़कर दिया था, उसकी जो ट्रेसिंग होती है वह सब निकालकर एक भाई को बताया था यह सब फायनल है, इसको अभी प्रेस में दे दो। आने के बाद जब पुस्तक छपकर हाथ में आ गयी तो भाग्य की बात है कि हमारे यहां आनेवाले एक स्वाध्यायी हैं जे. पी. दोशी, वे रिलायंस में बड़े ऑफिसर हैं, करणानुयोग के बहुत रुचिवान हैं। उन्होंने कहा इसमें कुछ गड़बड़ है। यहां ५२३ गाथा के बाद डायरेक्ट ५२६ गाथा आयी है, बीचवाली आधी आयी। हमने कहा यह हो नहीं सकता। हमने अपना पुराना प्रूफ भी निकालकर देखा- दूसरा और तीसरा प्रूफ। तो दोनों में बिलकुल सही का सही था। परंतु वह ट्रेसिंग निकालने में ऐसी कुछ गड़बड़ी हो गयी वह एक पेज ही गायब हो गया, उसका मॅटर ही गायब हो गया और ऐसे ही यह पुस्तक छप गयी। अब १६०० पुस्तकें छप गयी और उसमें एक पेज नहीं था तो हमने हमारे प्रूफ रीडिंग किये हुये पेपर जो हमारे पास पड़े हुये थे वे निकाले। वहां दो अलग-अलग पेजेस पर इसकी सेटिंग की। उसके झेरॉक्स निकाले, उसको काटकर एक के नीचे एक चिपकाया, उसके १६०० झेरॉक्स पेजेस बनाकर लाये और एक-एक पुस्तक के अंदर यह चिपका दिया। हमने दोनों ने मिलकर सब मेहनत की है, हमारे कुछ स्वाध्यायी भी थे ये सुशीलाबहन, अन्य भी और सबने हमको मदद की। पुस्तक छापना और लोगों के हाथ पहुंचाना यह बहुत झंझट का काम है। लोगों को लगता है कि हमने पैसे दिये हैं लो छाप दो। इसके पीछे बहुत मेहनत होती है, जो सेटिंग होती है वह अपने आप कैसे भी चेंज हो जाती है। कहीं-कहीं बाद में भूलें निकलती हैं, उसमें भी ऐसी बहुत सारी बातें कारणभूत हो जाती हैं।

श्रोता: पुद्गल का परिणमन है। हां, पुद्गल का परिणमन है हमने थोड़े ही किया है। अच्छा ! किया है वह हमने किया है और जो भूलें हुयी न वे पुद्गल का परिणमन है ! ऐसा नहीं चलेगा। यह पेज हर एक पुस्तक में चिपकाकर हमने दिया है ताकि पढ़ते समय कोई रुकावट नहीं आये कि यह बीच का मॅटर निकल गया इसमें क्या होगा। ऐसी तो फिर आकुलता रहती है न। केवल फलटणवाली पुस्तकें निकल गयी थी। कहां है हमारे फलटणवाले भाई ? हां, फिर उनके पास हमने बाद में ये पेजेस भेजे थे। जितनी पुस्तकें उनको पहुंचायी गयी थी उतने पेजेस उनके पास पंहुचाये गये और कहा कि यह आपकी पुस्तकों में चिपका दो जितनी आप लेकर गये हैं। बाकी सबके पास यह मिल गयी है। हमने स्वयं इसको चिपकाकर भेजा है। अभी जाने दो स्टोरी

बहुत लंबी है। गलत चीज लोगों के हाथ में नहीं जाये यही हमारी भावना होती है। बाद में भी, इसके उपरांत भी कितनी ही अशुद्धियां निकलती हैं। हमारे रोज के स्वाध्याय में ऐसी कुछ अशुद्धियां नज़र में आती हैं, तो हम उनको लिखकर रखते हैं पीछे के पेज पर और दूसरी आवृत्ति में सुधार देते हैं। जहां कहीं बात आती है वहां हम आपको बतायेंगे ही। हम देख रहे हैं ५२४ की टीका जो चिपकाये हुये पेज पर है। उसमें कहीं-कहीं करेक्शन किया हुआ दिखायी देगा क्योंकि वह सेकंड प्रूफ रीडिंगवाला पेज था।

पृथ्वीकायिक बादरपर्याप्त सहित ही आतप प्रकृति बंधयोग्य है। सहित ही क्यों कहा ? इसका अर्थ क्या है ? जो जीव पृथ्वीकायिक बादर पर्याप्त यानी बादर नामकर्म बांध रहा है, पर्याप्त नामकर्म बांध रहा है; और स्थावर संबंधी कौनसा विशेष है ? पृथ्वीकायिक संबंधी नामकर्म बांध रहा है। उस सहित यह आतप बंधने योग्य है। **अन्य सहित बंधती नहीं।** यानी अन्य कौनसे हैं ? अग्निकायिक हो, वायुकायिक हो, जलकायिक हो, अन्य कुछ भी हो। परंतु वे सूक्ष्म पृथ्वीकायिक होंगे या पृथ्वीकायिक होंगे परंतु अपर्याप्त होंगे उसके साथ यह नहीं बंधेगी। जो जीव बादर पृथ्वीकायिक पर्याप्त नामकर्म बांध रहा है, हो सकता है उसके साथ आतप का भी बंध हो। अन्य किसी प्रकृति के सहित वह नहीं बंधती। यह सहितवाली बात है न, तो जो ग्रुप बांध रहे हैं नामकर्मों का उसमें से एक नाम हम ले रहे हैं जिनके साथ अन्य प्रकृतियां बंध रही हैं। इसको कर्मपद कहा था। यहां आतप प्रकृति कौनसे अन्य प्रकृति के सहित बंध रही है ? बादर पर्याप्त पृथ्वीकायिक सहित यह बंध रही है।

आगे देखते हैं- **तेजस्काय, वायुकाय, साधारण वनस्पति संबंधी** यानी जो तेजस्कायिक यानी अग्निकायिक, वायुकायिक, साधारण वनस्पति यानी निगोद, कैसे हैं वे ? **बादर और सूक्ष्म तथा अन्य स्थावर संबंधी सूक्ष्म**, अन्य स्थावर संबंधी सूक्ष्म का अर्थ - अन्य कौनसे स्थावर रह गये ? पृथ्वीकायिक सूक्ष्म, जलकायिक सूक्ष्म, निगोद; निगोद ले लिया यहां पर। **ये अप्रशस्त प्रकृतियां हैं इसलिये इनको छोड़कर अवशेष तिर्यंच संबंधी बादर पर्याप्त आदि प्रशस्त प्रकृतियों में से किसी प्रकृति सहित उद्योत प्रकृति बंधयोग्य है।** यह अटपटा कुछ नहीं समझा ! नहीं समझा ? समझेगें न अपनी भाषा में। उद्योत प्रकृति का बंध कब हो रहा है ? जब तेजस्कायिक का बंध हो रहा है तब यह नहीं बंधेगी। अग्निकायिक जीवों के उद्योत का या आतप का

उदय नहीं है क्योंकि जब अग्निकायिक प्रकृति बंधती है तब उद्योत का बंध नहीं हो रहा। जब वायुकायिक प्रकृति बंध रही है तब उद्योत का बंध नहीं हो रहा है। जब निगोद संबंधी प्रकृतियां बंध रही हैं तब उद्योत का बंध नहीं हो रहा है। क्यों ? क्योंकि ये सारी अप्रशस्त प्रकृतियां हैं और उद्योत प्रशस्त प्रकृति है। जिस परिणाम से निगोद का बंध हो रहा है उसी परिणाम से उद्योत का बंध नहीं होगा।

उद्योत का बंध अग्निकायिक, वायुकायिक बादर के साथ भी नहीं, अग्निकायिक, वायुकायिक सूक्ष्म के साथ भी नहीं। अन्य कौन रह गये ? पृथ्वीकायिक; पृथ्वीकायिक सूक्ष्म के साथ बंध नहीं होगा; पृथ्वीकायिक बादर के साथ हो सकता है। जलकायिक सूक्ष्म के साथ नहीं होगा; जलकायिक बादर के साथ होगा। निगोद के साथ नहीं, साधारण के साथ नहीं होगा; प्रत्येक वनस्पति के साथ इसका बंध हो सकता है। उद्योत का बंध द्वीन्द्रिय पर्याप्त के साथ हो सकता है, त्रीन्द्रिय पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय पर्याप्त, असंज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त, तिर्यंचगतिवाले संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त सहित उद्योत प्रकृति का बंध हो सकता है क्योंकि उद्योत प्रकृति कैसी प्रकृति है ? तो प्रशस्त प्रकृति है।

श्रोता: उद्योत का कार्य क्या है ? हां, उद्योत का कार्य क्या है ऐसा प्रश्न है। पता है उद्योत ? *श्रोता: चन्द्रमा।* चन्द्रमा क्या ? चन्द्रमा क्या है ? चन्द्रमा का विमान, चन्द्रमा मत कहना। चन्द्रमा का जो विमान है वह पृथ्वीकायिक है, उसमें यह उद्योत नामकर्म बंधा होगा तो उसका उदय हो सकता है। और कहां है ? द्वीन्द्रियों के भी होगा, त्रीन्द्रिय के भी होगा, पंचेन्द्रियों के भी होगा, तिर्यंचों के। उद्योत से क्या होता है ? वह शरीर जो है वह चमकीला जैसा होता है। आपने वह फॉस्फरसवाली मछलियां वगैरह देखी होंगी। जुगुनू है हां, आगियो कहते हैं न गुजराती में, क्या कहते हैं ? *श्रोता: आगियो।* आगियो और मराठी में काजवा। *श्रोता: उद्योत पृथ्वीकायिक में होता है ?* पृथ्वीकायिक में जो चमकीले पदार्थ होते हैं उनको यह उद्योत नामकर्म का उदय होता है। यहां तो बंध की बात है। इनका बंध किसके साथ होगा ? कुछ बादर पर्याप्तों के साथ होगा या द्वीन्द्रिय आदि के साथ होगा। परंतु जो अपर्याप्त नामकर्म बांध रहे हैं द्वीन्द्रिय सहित हो या त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय या पंचेन्द्रिय सहित हो तो उसके साथ उद्योत का बंध नहीं होगा इतनी बात है। आगे पढ़ते हैं, यहां केवल नियम बता रहे हैं। जब हम बंधस्थान में प्रकृतियों के नाम देखेंगे तो फिर से हम इसको याद करेंगे तो ज्यादा ख्याल में आयेगा।

इसलिये पृथ्वीकायिक बादरपर्याप्त सहित आतप, उद्योत में से एक प्रकृति संयुक्त छब्बीस प्रकृतिरूप बंधस्थान होता है। २३वाला कौनसा देखा था ? एकेन्द्रिय संबंधी बंध कर रहा है परंतु अपर्याप्त नामकर्म बांध रहा है। वह २३ क्यों हुआ और इसका २५ या २६ क्यों हुआ, वह जब हम गिनेंगे तब ख्याल में आयेगा। अभी पढ़ लेते हैं, इसका अर्थ हम आगे क्लिअर करेंगे। **अथवा बादर अप्कायिक** अप्कायिक किसे कहते हैं ? *श्रोता: जलकायिक।* जलकायिक; **पर्याप्त या प्रत्येक वनस्पति पर्याप्त** ये सारे कैसे हैं ? एकेन्द्रिय जीव हैं। **बादर अप्कायिक पर्याप्त या प्रत्येक वनस्पति पर्याप्त में से किसी प्रकृति सहित उद्योत प्रकृति संयुक्त,** संयुक्त यानी युक्त, युक्त यानी सहित **छब्बीस प्रकृतिरूप बंधस्थान होता है।** अभी कहां कितने हुये उसे हम यहां छोड़ देते हैं। देखो, उद्योत और किसको बंधती है ? द्वीन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच तक किसी एक प्रकृति सहित उद्योत प्रकृति यदि उसकी बंधती है तो ३० प्रकृतिवाला स्थान होगा। *श्रोता: यहां काट दिया है।* काट नहीं दिया है, ये दो पेजेस का मॅटर चिपकाया है। मैंने आपको बताया था। लाइन के ऊपर का मॅटर पहले पेज पर था, लाइन के नीचे का मॅटर दूसरे पेज पर था। वहां से हमने दोनों की अलग-अलग झेरॉक्स की। फिर काटकर उसके नीचे चिपकाया है। वह चिपकाने के कारण लाइन दिख रही है। अब क्या करें ? हां, अभी और देखते हैं।

तीर्थंकर और आहारक प्रकृति जो बंधती हैं वे कैसी हैं प्रशस्त हैं कि अप्रशस्त हैं ? *श्रोता: प्रशस्त हैं।* **विशेष प्रशस्त प्रकृतियां हैं, इसलिये तीर्थंकर प्रकृति को** तीर्थंकर प्रकृति को बांधनेवाले जीव कौन-कौनसे हैं उसको हम पहले नक्की करते हैं। तीर्थंकर प्रकृति को कौनसी गतिवाले जीव बांधते हैं ? *श्रोता: मनुष्यगति।* मनुष्यगतिवाले बांध सकते हैं और ? *श्रोता: नारकी बांध सकते हैं।* नारकी बांध सकते हैं। शुरुआत कौन करते हैं यह नहीं पूछा, कौन-कौन उसका बंध कर सकते हैं ? *श्रोता: देव भी बांधते हैं।* देव भी बांधते हैं। तिर्यंच नहीं बांधते। जो मनुष्य तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहा है उस समय वह कौनसी गति का बंध कर रहा है ? *श्रोता: देवगति का।* देवगति का क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य है तभी तीर्थंकर प्रकृति को बांध रहा है। वह देवगति को बांध रहा है। नारकी; हमारे श्रेणिक राजा अभी हैं न नरक में, तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे हैं वे कौनसी गति को बांध रहे हैं उसके साथ ? *श्रोता: मनुष्यगति।* मनुष्यगति

को ही बांध रहे हैं क्योंकि वे भी सारे सम्यग्दृष्टि हैं। सम्यग्दृष्टि नारकी मनुष्यगति बांध रहे हैं और उसके साथ तीर्थंकर प्रकृति को बांध रहे हैं। जो देव तीर्थंकर प्रकृति बांध रहे हैं वे कौनसी गति बांध रहे हैं ? *श्रोता: मनुष्यगति।* मनुष्यगति, तो वे मनुष्यगति सहित तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे हैं। आहारक का बंध कौन करते हैं ? *श्रोता: मुनिराज।* करनेवाले तो मात्र मुनिराज हैं। जब वे आहारक का बंध करते हैं, सातवें गुणस्थानवर्ती करेंगे; उस समय वे कौनसी गति बांध रहे हैं ? *श्रोता: देवगति।* देवगति, तो देवगति सहित आहारक का बंध करेंगे। मनुष्य जब बंध करते हैं तीर्थंकर का, तो देवगति सहित तीर्थंकर का करेंगे। अब इस वाक्य को पढ़ेंगे।

तीर्थंकर, आहारक ये विशेष प्रशस्त प्रकृतियां हैं। विशेष कहा न ! इसलिये स्पेशल हैं क्योंकि विशिष्ट जगह बंधती हैं। कौन बांधनेवाले हैं ? कहां नहीं बंधती हैं ये बातें होती हैं उसमें। **इसलिये तीर्थंकर प्रकृति को देवअसंयत और नारकअसंयत तो मनुष्यगति सहित ही बांधते हैं।** अभी हमने देखा था न, सम्यग्दृष्टि देव तीर्थंकर प्रकृति का बंध करते हैं तब मनुष्यगति को ही बांध रहे हैं, मनुष्यगति सहित तीर्थंकर प्रकृति को बांधते हैं। और नारकी-असंयत ? तीर्थंकर प्रकृति को बांधनेवाले मनुष्यगति सहित तीर्थंकर प्रकृति को बांधते हैं। **और मनुष्य असंयतादि चार गुणस्थानवर्ती देवगति सहित ही बांधते हैं। पुनश्च आहारकद्विक अथवा तीर्थंकर-आहारकद्विक** अकेले आहारकद्विक यानी आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग; दूसरा ऑप्शन क्या है ? आहारकद्विक का भी बंध कर रहे हैं और तीर्थंकर का भी बंध कर रहे हैं। तो किस सहित बंधेंगे ? *श्रोता: देवगति सहित।* **देवगति सहित**। बांधनेवाले देव हैं ऐसा नहीं कह रहे हैं, बांधनेवाले मनुष्य हैं परंतु कौनसी गति सहित बांध रहे हैं ? **देवगति सहित ही बांधते हैं क्योंकि संयत के योग्य जो बंधस्थान हैं** यानी संयत यानी संयमी - मुनिराज, जो बंधस्थान में नामकर्म बांधते हैं **वे देवगति बिना अन्य गति सहित नहीं बांधते।**

इसी सूत्र द्वारा देव, नारकी तो मनुष्यगति संयुक्त संयुक्त कहो, युत कहो, सहित कहो एक ही बात है; **तीस प्रकृतिरूप स्थान को तीर्थंकर सहित बांधते हैं और मनुष्य हैं**, **वे देवगति संयुक्त उनतीस प्रकृतिरूप स्थान को तीर्थंकर सहित बांधते हैं।** देखो, मनुष्य, ऑर्डिनरि देवगति बांधता है तो २८ प्रकृतियों को बांधता है। वे २८ प्रकृतियां देवगति सहित बंधेगी, परंतु उसमें एक ॲडिशनल कौनसी बंधेगी ? तीर्थंकर। तो कितनी हो जायेगी ? २९ हो जायेगी, यह २९ का स्थान है। **पुनश्च अप्रमत्त**

और अपूर्वकरण के छठवें भाग तक देवगति संयुक्त आहारकद्विक सहित तीस प्रकृतिरूप स्थान को और तीर्थंकर -आहारकद्विक सहित इकतीस प्रकृतिरूप स्थान को बांधते हैं - ऐसा कहा। फिर से, जो जीव तीर्थंकर को भी नहीं बांध रहा है, आहारक को भी नहीं बांध रहा है और देवगति को बांध रहा है वह देवगति सहित कितनी प्रकृतियां बांध रहा है ? २८ बांध रहा है। अब देवगति सहित २८ को बांधनेवाला जीव यदि उसके साथ तीर्थंकर का बंध करेगा तो कितनी हो जायेगी ? *श्रोता: उनतीस।* २९ हो जायेगी। अब तीर्थंकर प्रकृति को नहीं बांध रहा है अकेले आहारकद्विक को बांध रहा है तो क्या होगा ? २८ ओरिजिनल और आहारकद्विक तो देवगति सहित ३० को बांध रहा है। अब कोई जीव तीर्थंकर प्रकृति का भी बंध कर रहे हैं, आहारकद्विक का भी बंध कर रहे हैं और देवगति के २८ ओरिजिनल हैं ही हैं। २८ में और ३ मिल गये तो ३१ का होगा, यह देवगतियुत ३१वाला स्थान हो जायेगा।

हमने केवल संख्या ही संख्या देखी। अब ॲक्चुअल प्रकृतियां देखेंगे तो आसान हो जायेगा। अब वह बतानेवाले हैं। **आगे तेइस आदि स्थानों में**, तेइस आदि यानी २३ का देखा हमने, २५ का देखा, २६ का देखा, २८ का इन स्थानों में **प्रकृतियां जानने के लिये पाठ का अनुक्रम तीन गाथाओं द्वारा कहते हैं।** यह बंध होता है तो नामकर्म की कुछ प्रकृतियां ऐसी हैं जो ध्रुवबंधी हैं। हमने टोटल ध्रुवबंधी देखी थी। कितनी देखी थी याद है ? *श्रोता: ४७ देखी थी।* ४७ देखी थी। उनमें ज्ञानावरण देखा था, दर्शनावरण देखा था, अंतराय देखा था, मिथ्यात्व देखा था, सोलह कषाय देखे थे, भय-जुगुप्सा देखी थी; ये ३८ हुयी थी। नामकर्म में से कितनी देखी थी ? ९ थी। नामकर्म की ध्रुवबंधी कौनसी थी ? *श्रोता: तेजस, कार्माण।* तेजसशरीर, कार्माणशरीर। *श्रोता: अगुरुलघु, उपघात।* अगुरुलघु, उपघात। निर्माण और वर्णादि चार यानी वर्ण, गंध, रस, स्पर्श।

आपको याद होगा पहली पुस्तक में हमने टोटल प्रकृतियों में से ध्रुवबंधी प्रकृतियां देखी थी। पहले नंबर का चार्ट निकालो। यह अच्छा किया, कहां गये हमारे ? सबके हाथ में झेरॉक्स दे दी। हम नहीं करनेवाले थे। मैं जब चार्ट बना रही थी तो हमारे एक भाई आये दूर देश से और कहने लगे इसकी झेरॉक्स करके सबको बांट दो। तो फिर ? उन सबकी फोटोग्राफी करनी पड़ी, फिर उसकी सीडी बनानी पड़ी, उस पर से प्रिंट निकालकर उसकी झेरॉक्स बनायी, उसके करने में और दो दिन बढ़ गये, हां।

देखो यहां, ध्रुवबंधी कितनी लिखी हैं ? *श्रोता: ४७।* ४७, ४७ में नामकर्म की कितनी हैं ? *श्रोता: ९ हैं।* हां, ९ हैं। ये कौनसी ९ हैं ? यहां बोर्ड पर लिखा है, ४८६ पृष्ठ पर नीचे का पॅरेग्राफ- ध्रुवबंधी ९ प्रकृतियों के नाम यहां लिखे हैं। **नामकर्म की तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और वर्णादि चार।** सब टोटल कितनी हुयी ? *श्रोता: नौ।* नौ। ये कैसी हैं ? **ये नौ तो ध्रुवबंधी हैं, इनका तो निरंतर सर्व जीवों के बंध है।**

जब हम २३ का स्थान गिनेंगे या २५ का या २८ का जो कुछ गिनेंगे, उनमें ये ९ गिननी ही पड़ेगी। *श्रोता: जब तक व्युच्छित्ति नहीं हुयी।* जब तक व्युच्छित्ति नहीं होती तब तक। *श्रोता: जो भी प्रकृतियां बंधेगी उसमें ९ इन्क्लूडेड हैं ?* हां ये ९ इन्क्लूडेड हैं। जब २३ का कहेंगे तो बेसिक ये ९ तो रहेंगी ही रहेंगी। आगे और भी बता रहे हैं क्योंकि २३ मिनिमम बंधेंगी ही सबको। और कौनसी हैं ? **स्वर बिना नौ युगल**- देखो, युगल कैसे हैं ? हमने नामकर्म की प्रकृतियां गिनी थी युगलवाली यानी जोड़ी-जोड़ीवाली; जोड़ी यानी ऑप्शनल, जो हमने प्रतिपक्षवाली में भी देखी थी। त्रस या स्थावर, बादर या सूक्ष्म, पर्याप्त या अपर्याप्त, प्रत्येक या साधारण तो हर एक युगल में से किसी एक का बंध होगा ही होगा; ये चार हो गयी। आगे कौनसी हैं ? सुस्वर को नहीं लेना है; स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, आदेय-अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति। **स्वर बिना नौ युगल त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक**। प्रत्येक को लेना पड़ेगा, यहां भले ही नहीं लिखा है, लिखना पड़ेगा। नौ युगल हैं न ! मैंने बोला न, ऐसी कितनी गलतियां बाद में मिल जाती हैं। अपनी पुस्तक में त्रस, बादर, पर्याप्त के बाद प्रत्येक लिख लेना। क्योंकि केवल स्वरवाली बात नहीं है यहां। बाकी तो सभी कोई न कोई बंधेगी।

मैं आगे पढ़ती हूं। **स्थिर, शुभ, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति तथा इनके प्रतिपक्षी स्थावर आदि नौ** हम युगल में से एक-एक का नाम ले रहे हैं - त्रस बंधेगी या स्थावर बंधेगी, बादर या सूक्ष्म, पर्याप्त या अपर्याप्त, प्रत्येकशरीर या साधारणशरीर में से - कोई नामकर्म बंधेगा कि नहीं बंधेगा ? स्थिर या अस्थिर, शुभ या अशुभ, सुभग या दुर्भग, आदेय या अनादेय, यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति। हमने बता दिये इनके प्रतिपक्षी कौन हैं। **इनसे संयुक्त जो नौ युगल हैं उनमें से एक-एक युगल में से एक प्रकृति का बंध होता है - ऐसी नौ प्रकृतियां ये हुयी।** बेसिक प्रकृतियों की बात चल रही है। इसमें स्वर नामकर्म इसलिये नहीं लिया, उसका बंध किसके साथ होगा ? *श्रोता: त्रस के साथ होगा।* हां, त्रस के साथ होगा, एकेन्द्रियों के साथ नहीं होगा। हम

ऐसी बेसिक प्रकृतियां ले रहे हैं जो सबके बंधेंगी ही बंधेंगी; ध्रुवबंधी, बिना ऑप्शन सब बंधेंगी ही बंधेंगी। ये नौ जोड़ी ऐसी ली हैं, प्रत्येक जोड़ी में से कोई न कोई एक बंधेगी। ये नौ और नौ अठारह बेसिक हो गयी। पहले नौ सबको बंधेंगी ही बंधेंगी, बाकी नौ युगल लिये हैं; त्रस आदि चार लिये हैं, स्थिर आदि छह के बदले पांच लिये, स्वर को नहीं लिया।

आगे बढ़ते हैं- **पुनश्च** अन्य पांच हैं। कोई न कोई गति अवश्य बंधेगी ही बंधेगी तो एक गति का बंध होगा। परंतु इसको ऊपर क्यों नहीं लिया ? क्योंकि यह पिंडवाली प्रकृति है इसलिये इसमें से एक लेंगे। कोई एक गति का बंध होगा। **पांच जाति** में से किसी एक जाति का बंध होगा। जाति समझते हैं ? *श्रोता: एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रियजाति, पंचेन्द्रियजाति।* एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रियजाति और पंचेन्द्रियजाति इनको जाति नामकर्म कहेंगे। **दो शरीर** में से कोई एक शरीर का बंध होगा। कौनसे दो शरीर ? *श्रोता: औदारिकशरीर, या वैक्रियिकशरीर।* तेजसशरीर, कार्माणशरीर को ध्रुवबंधी में लिया है; वैक्रियिकशरीर या औदारिकशरीर जो प्रतिपक्षी हैं। आहारकशरीर संबंधी जब बंध होगा तब उसको भी ले लेंगे वैक्रियिकशरीर के साथ। **छह संस्थान** कोई न कोई संस्थान का बंध होगा ही होगा। **चार आनुपूर्वी** यानी नियम से बंधनेवाली पिंड में से कुछ एक-एक बंधेगी। एक गति बंधेगी, एक जाति बंधेगी, एक शरीर बंधेगा, एक संस्थान बंधेगा और आनुपूर्वी बंधेगी। जैसे गति बंधती है तो उसकी आनुपूर्वी भी बंधती ही बंधती है। बेसिक में संहनन को नहीं लिया; जो नरकगति, देवगति बांध रहा है वह संहनन का बंध नहीं करता। जो एकेन्द्रिय का बंध कर रहा है, एकेन्द्रियों में संहनन होता ही नहीं तो उसके साथ संहनन का बंध नहीं होगा। ये बेसिक ऐसी प्रकृतियां हैं जो सबमें बंधेगी।

हमने नौ ध्रुवबंधी देखी। इन्द्रजीतजी आप रिपीट करेंगे नौ ध्रुवबंधी प्रकृतियों को ? *श्रोता: तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और वर्ण, गंध, रस, स्पर्श।* तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और वर्ण, गंध, रस, स्पर्श; हां, वर्णादि चार। कितने हुये ? *श्रोता: नौ।* नौ हो गये। अब हम नौ युगल देखेंगे। त्रस आदि चार और स्थिर आदि पांच, किसको नहीं लिया ? *श्रोता: स्वर को।* स्वर को नहीं लिया। त्रस, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक या उसका जोड़ीवाला; स्थिर, शुभ, सुभग, आदेय और

यशस्कीर्ति या उसका ऑपोझिट जो प्रतिपक्षी है इनमें से यथायोग्य प्रकृतियां बंधेंगी। यथायोग्य क्यों कहा ? जब त्रस नामकर्म बांध रहा है तो त्रस के साथ पर्याप्त-अपर्याप्त बंध सकती है, परंतु त्रस के साथ सूक्ष्म और साधारण प्रकृति नहीं बंधेगी क्योंकि त्रस सारे बादर और प्रत्येक ही हैं। उसके पूरकवाली प्रकृतियां बंधेंगी यानी उसके साथ अविरोधवाली प्रकृतियां बंधेंगी। जहां जो ऑप्शन योग्य है वहां उसका बंध होगा।

ये बेसिक प्रकृतियां इतनी बंधती ही बंधती हैं। पहले ९ ध्रुवबंधी ली। अब ये जोड़ी-जोड़ी में से एक-एक लेना हैं, ये ९ हो गयी और ५ अन्य कैसी हैं ? पिंड प्रकृतियों में से ले रहे हैं। पिंड यानी चार गतियों में से कोई एक गति बंध रही है, पांच जाति में से कोई एक जाति बंध रही है, दो शरीर में से एक शरीर बंध रहा है, छह संस्थान में से एक संस्थान बंध रहा है और आनुपूर्वी जिस गति का बंध हो रहा है उसी आनुपूर्वी का भी बंध होगा। पहले ९ फिर ९, १८ और ५ ये, २३ इतना बेसिक बंध तो हर गति के सहित होगा। किसी भी गति का बंध हो रहा है, किसी भी पर्याय संबंधी बंध हो रहा है तो ये २३ बेसिक बंधेंगी ही बंधेंगी। इसमें कोई प्रश्न है ? *श्रोता: जो अट्ठाइस का बंध करेगा उसमें २३ + ५ = २८ होंगी ?* हां, जो २८ का बंध कर रहा है तो वह बेसिक २३ तो बंधेंगी ही बंधेंगी इन ॲडिशन उसके और ५ बंधेंगी। ये कौनसी बंधेंगी देखेंगे हम। *श्रोता: जहां आहारक लिखा है वहां उसका अर्थ आहारकद्विक ही लेना है न ?* आहारक यानी आहारकद्विक ही लेना है। यहां कहां आहारक की बात है ? *श्रोता: नीचे जो आहारक लिया है।* अभी की बात कर रहे कि आप पहलेवाली बात कर रहे हैं ? *श्रोता: पहलेवाली।* पहलेवाली जहां आहारक लिखा है वहां आहारकद्विक समझना; आहारकशरीर और आहारकअंगोपांग, तभी तो उसकी संख्या दो आती है।

अभी हम २३ आदि जो स्थान देखने जा रहे हैं वह १वाला स्थान भूल जाओ क्योंकि किसी गति सहित नहीं बंध रहा है। परंतु ३१ तक के स्थान सब गति सहित ही बंध रहे हैं। २३ का स्थान हो या २५ का हो या २६ का हो या २८ का हो या २९, ३०, ३१ का कोई भी हो वहां ये २३ प्रकृतियां बंधेंगी ही बंधेंगी। उसमें से ९ ध्रुवबंधी हैं। कौनसी ९ ध्रुवबंधी हैं ? *श्रोता: तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्णादि चार।* तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्णादि चार ये ९ हो गयी।आगे की ९ कौनसी युगल में से ? त्रस आदि चार और स्थिर आदि पांच स्वर बिना ये ९ युगल लिये, उनमें से यथायोग्य प्रकृति - अविरोधपूर्वक जो जहां होगी इतने का बंध है। ये नौ और नौ

अठारह हैं और पांच अन्य प्रकृति एक गति है, एक जाति है, दो शरीर में से एक शरीर है, छह संस्थान में से एक संस्थान है और आनुपूर्वी है। ९ + ९ = १८, + ५ = २३ तेइस का बंध होगा ही होगा। इतना हमने समझ लिया न, आगे का बहुत आसान है।

श्रोता: जिस समय जीव आहारकशरीर बांध रहा है क्या उस समय देवगति के साथ वैक्रियिकशरीर भी बांधेगा ? हां, बांधेगा। अभी उसकी बात आयेगी। जब वह आहारकशरीर बांध रहा है उस समय क्या बांध रहा है ? देवगति, वहां वैक्रियिकशरीर बांधेगा। अभी वहां जितना चाहिये इतना योग्य जो एक्स्ट्रा होगा वह बंध हो जायेगा। जब हम आहारक की बात करेंगे, ३१ का स्थान देखेंगे तब उसकी चर्चा दुबारा करेंगे। *श्रोता: यहां लिखा है स्वर बिना नौ ?* स्वर बिना क्योंकि स्वर नामकर्म किसको होगा ? जिसको भाषा होनेवाली है। जैसे एकेन्द्रिय का बंध जो कर रहा है उसके स्वर नामकर्म नहीं बंधेगा। स्वर नामकर्म किसके साथ बंधेगा ? त्रस के साथ बंधेगा। सभी त्रस के स्वर यानी भाषा होती है। द्वीन्द्रिय का जो बंध कर रहा है उसकी बात है। बंध कौन कर रहा है उसकी बात नहीं हो रही है, किस प्रकृति सहित बंध रहे हैं उसकी बात चल रही है।

हमने बेसिक २३ प्रकृतियां देखी, इनका बंध तो सभी के होगा ही होगा। अब हम थोड़ा आगे बढ़ते हैं। इन ॲडिशन और कौन-कौनसी प्रकृतियां बंध सकती हैं ? जो अपर्याप्त होंगे न, एकेन्द्रिय अपर्याप्तों के २३ का ही बंध होगा। अब जो एकेन्द्रिय में या त्रस में पर्याप्त होंगे तो पर्याप्त नामकर्म के साथ और कौनसी प्रकृतियां बंधती हैं ? तो कहते हैं परघात और उच्छ्वास क्योंकि उनकी पर्याप्ति पूरी होनेवाली हैं, इसलिये इनका भी बंध होगा। जब बंध रही हैं तो इनका बंध उसके साथ होगा, यथास्थान जाकर उदय होगा। यानी जो पर्याप्त संबंधी बंध कर रहे हैं; हमने देखा न, त्रस या स्थावर, पर्याप्त या अपर्याप्त; त्रस हो या स्थावर हो, जो पर्याप्त का बंध कर रहा है, पर्याप्त जीव यानी उसकी पर्याप्ति पूरी होनेवाली हैं और उसको परघात का उदय भी होगा और उच्छ्वास का भी उदय होगा। उदय होगा यानी बांधेगा तभी होगा न !

जो पर्याप्त नामकर्म बांध रहा है उसके साथ-साथ परघात और उच्छ्वास का भी बंध होता है। अब त्रस पर्याप्त या अपर्याप्त जो हैं; जो त्रस में उत्पन्न होनेवाले हैं, त्रस का जो बंध कर रहे हैं इसमें भी त्रस यानी तिर्यंच और मनुष्य को लेना है, उसके साथ संहनन का भी बंध होगा। जो देवगति बांध रहे हैं, जो नरकगति बांध रहे हैं उसके

साथ, उस सहितवाले को संहनन का बंध नहीं होगा क्योंकि ना देवों के संहनन होते हैं, ना नारकियों के होते हैं, ना एकेन्द्रियों के होते हैं। इसलिये ये किसमें होते हैं ? त्रस में होते हैं। त्रस पर्याप्तवाला बंध हो या त्रस अपर्याप्तवाला बंध हो, उस सहितवाले में संहनन का भी बंध होगा और अंगोपांग का भी बंध होगा। अन्य जो हैं न, वैक्रियिकशरीर बांध रहे हैं उनके वैक्रियिकअंगोपांग का भी बंध होगा। जो एकेन्द्रिय को छोड़कर द्वीन्द्रियादि का बंध कर रहे हैं, औदारिकशरीर का बंध कर रहे हैं वे औदारिकअंगोपांग का भी बंध करेंगे। औदारिकअंगोपांग का या वैक्रियिकअंगोपांग का क्यों ? क्योंकि वे त्रस हैं इसलिये उनको इसका बंध होगा।

अब स्वर नामकर्म का बंध किस सहित होगा ? जो त्रस संबंधी पर्याप्त प्रकृति बांध रहा है, उसीके स्वर नामकर्म बंध सकता है। जो द्वीन्द्रिय अपर्याप्त ही रहनेवाला है, लब्धिअपर्याप्त क्योंकि वह एक भी पर्याप्ति पूर्ण होने के पहले ही मर जायेगा तो उसके स्वर नामकर्म का उदय होने का सवाल ही नहीं है। यह जीव अपर्याप्त ही है, तो अपर्याप्त के साथ ना परघात, उच्छ्वास प्रकृति बंधेगी, ना स्वर प्रकृति बंधेगी। तो कहते हैं, त्रस पर्याप्तवालों के साथ ही, उस सहित ही स्वर का भी बंध होगा और विहायोगति भी क्योंकि गमन का कार्य तो त्रस करते हैं, एकेन्द्रिय नहीं करते। किनमें ? पर्याप्तों में। अपर्याप्त का बंध करनेवाले को यह नहीं बंधेगी। अन्य कौन-कौनसी प्रकृतियां हैं जो किसीके बंधती हैं ? किसी एकेन्द्रिय सहितवाले के आतप बंध सकती है, पर्याप्त एकेन्द्रिय सहित आतप बंध सकती है। उद्योत कहां बंधती है उसे अभी हमने डीटेल में पढ़ा था। तीर्थंकर प्रकृति का बंध कहां हो सकता है ? देवगति सहित भी बंध सकती है और देव-नारकी उसको मनुष्यगति सहित बांध सकते हैं। आहारकद्विक का बंध कौन करते हैं ? करनेवाले तो मनुष्य हैं; कौनसी प्रकृति सहित बंध कर रहे हैं ? *श्रोता: देवगति सहित।* देवगति सहित।

जहां हमने कर्मपद सहितवाले बंधस्थानों की बात की न, इसके सहितवाले जो ग्रुप्स हैं इसीलिये हमने कर्मपद की बात सीखी थी। वह बंध कौनसे जीव कर रहे हैं ? उसके लिये हम जीवपद की बात करेंगे। अब हमने जो नामकर्म के बंधस्थान देखे, अभी यहां पुस्तक में हम देखते हैं। हां, देखो यहां हम आते हैं ४८८ पृष्ठ पर। **नामकर्म के एक जीव के एक समय में जो बंध पाये जाते हैं उसे बंधस्थान कहते हैं।** हमने पहले स्थान की परिभाषा सीखी थी। स्थान किसको कहते हैं ? एक जीव के युगपत्

एक समय में जितनी प्रकृतियां पायी जायेंगी, यहां बंध की बात है इसलिये हमने उसको बंधस्थान कहा। एक जीव एक समय में नामकर्म की कितनी प्रकृतियां बांधता है ? तो कोई २३ बांधता है, कोई २५ बांधता है, कोई २६ बांधता है तो उनको उसके बंधस्थान कहेंगे। **वहां पूर्वोक्त नौ ध्रुवबंधी से लेकर आनुपूर्वी तक तेइस** यह आनुपूर्वी तक क्यों कहा ? आपका चार्ट देखना। नौ ध्रुवबंधी से लेकर आनुपूर्वी तक देखना है आपको, समझ में आयी बात ? *श्रोता: आनुपूर्वी तक कितनी हुयी ?* हमने २३ गिनी न ! नौ तो ध्रुवबंधी देखी, नौ युगल में से नौ देखी और यहां पांच अन्य लास्ट में हमने आनुपूर्वी को गिना था इसलिये आनुपूर्वी तक बताया। नौ ध्रुवबंधी से लेकर आनुपूर्वी तक २३ प्रकृतियों में से अभी कुछ विशेष बात बता रहे हैं।

अब ये कौनसा-कौनसा बंध हो रहा है ? स्थावर का बंध कर रहे हैं। हमने देखा था न, युगल में से क्या है ? त्रस या स्थावर ? यह स्थावर संबंधी चर्चा है। पर्याप्त या अपर्याप्त ? अपर्याप्त का बंध कर रहे हैं। तिर्यंचगति का बंध हो रहा है, एकेन्द्रियजाति का बंध कर रहे हैं, ऐसा जो बंध है उसको क्या कहेंगे ? एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत यानी सहित २३ का बंध है। यदि पर्याप्त होता, तो उसको उच्छ्वास और परघात का भी बंध कराना पड़ता उसके साथ। २३ का ही बंध करना था तो कौनसा लिया ? एकेन्द्रिय अपर्याप्त जीव लिया। ख्याल में आयी बात ? तो यह २३वाला एक ही स्थान हो सकता है, एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला यह बंधस्थान होगा। फिर वह भले सूक्ष्म का हो या बादर का हो, पृथ्वीकायिक हो या अप्कायिक हो या जलकायिक हो, कोई भी हो। कौनसा है यह ? एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित २३वाला स्थान है।

इसको कैसे लिखते हैं ? देखो, वहां कैसे लिखा है ? २३ के आगे एअ लिखा और नीचे १ लिखा। यह लिखने की पद्धति, संदृष्टि क्या है ? इसको कैसे पढ़ना ? ए यानी एकेन्द्रिय, अ का अर्थ होता है अपर्याप्त। २३ तो प्रकृतियों की संख्या लिखी है और १ तो स्थान लिखा है। २३ प्रकृति का एक स्थान हां। २३ एअ यानी २३वाला एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला एक स्थान है। यह बात यहां हमने अभी सीख ली। आगे के भी जो स्थान हैं उसको कैसे देखना है ? उसमें कौन-कौनसी प्रकृतियां होती हैं ? उसकी भी बात हम आगे बढ़कर थोड़ी देर में करेंगे। अभी यहीं रुकते हैं हम।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४८. गति-आगति

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है और उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने ढूंढ़ारी भाषा में सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका लिखी है। उसीका हिंदी अनुवाद हम देख रहे थे और अपना अभी स्थानसमुत्कीर्तनाधिकार चल रहा है। विषय शुरू करने के पहले थोड़े प्रश्न देखते हैं।

प्रश्नः औपशमिक सम्यक्त्व के बाद दर्शनमोहनीय के तीन भाग हैं, उनकी जो तीन प्रकृतियां हैं, क्या उनके अस्तित्व में भी जीव फिर से औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है या सिर्फ वेदक सम्यक्त्व ? इसकी हमने बात की थी कि वह मिथ्यात्व में आया है, तीन टुकड़े हैं तो असंख्यात वर्षों तक सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना चलती रहती है। असंख्यात वर्षों तक उसको अगर सम्यक्त्व होगा तो वेदक सम्यक्त्व ही होगा। जब उन दो कर्मों की स्थिति घटते-घटते-घटते सागर या उससे कम हो जायेगी, हो सकता है कि एक निषेक भी बाकी रहा तब उस जीव को अगर सम्यक्त्व हुआ तो कौनसा होगा ? तो कहते हैं उसको औपशमिक सम्यक्त्व होगा। एक सागर जितनी स्थिति होने तक वेदक सम्यक्त्व होगा और एक सागर या उससे कम कितनी भी स्थिति हो जाये तब उसको औपशमिक सम्यक्त्व होगा। भले तीनों की सत्ता है या ऐसा भी हो सकता है कि एक की सत्ता मिट गयी है तब और दूसरे की भी मिट गयी है और अकेला मिथ्यात्व रहा तब तो औपशमिक ही होता है।

दूसरा एक प्रश्न है, अच्छा प्रश्न है। हमने ध्रुवबंधी प्रकृतियां देखी। कौन-कौनसी देखी ? तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और वर्णादि चार। वर्णादि चार में किसको-किसको लिया ? *श्रोताः स्पर्श, रस, गंध, वर्ण।* स्पर्श, रस, गंध, वर्ण। तो आपका प्रश्न है *ये वर्णादि चार ये ध्रुवबंधी हैं।* ध्रुवबंधी का अर्थ है किसी भी पर्याय का बंध होता होगा तो इनका तो बंध होगा ही होगा। *तो एकेन्द्रिय सहित ये कैसे बंधेगी ? प्रश्न ऐसा है कि उनके तो स्पर्शनेन्द्रिय नहीं, रसनेन्द्रिय नहीं तो वह कैसे बंधेगी ?* प्रश्न में ही उसका कन्फ्यूजन ख्याल में आया, उनको स्वयं को भी ख्याल में आ गया। केवल प्रश्न पूछने से उनको ख्याल में आ गया है। ये जो वर्णादि चार यानी स्पर्श, रस, गंध, वर्ण नामकर्म की प्रकृतियां हैं वे क्या कार्य करती हैं ? शरीर का वर्ण, शरीर का रस, शरीर की गंध, शरीर का स्पर्श इसके बारे में उनका कार्य होता है।

जैसे एकेन्द्रियों के शरीर हैं; शरीर है कि नहीं है ? पहले यह नक्की करते हैं। हां, एकेन्द्रियों के शरीर हैं। एकेन्द्रियों के कितने वर्ण पाये जाते हैं ? कितनी वनस्पति हैं, देखो, कोई लाल हैं, पीली हैं, नीली हैं, गुलाबी हैं, कितने ही वर्ण हैं उनमें। यह वर्ण नामकर्म के कारण वे अनेक अलग-अलग वर्णवाली होती हैं। वनस्पतियों के वर्ण देखने के लिये जाते हैं न ! लोग अमेरिका में फॉल के सीझन में जाते हैं। क्या देखने के लिये जाते हैं ? वनस्पतियों के पत्ते भी सारे विविध कलरवाले हो जाते हैं। अमेरिका में दो फॉल होते हैं; एक फॉल सीझन होता है और एक है नायगारा फॉल। दोनों एकेन्द्रियों के ही फॉल हैं। फॉल यानी पतन, क्यों ? हम फॉल किसको कहते हैं ? गिरने को। एक तो पानी गिरता है उसको देखते हैं और दूसरी बात, इतनी कड़ाके की ठंड हो जाती है कि वनस्पतियों के पत्ते हरे रंग के तो रहते नहीं, अन्य-अन्य कलरवाले - पीले होते हैं, गुलाबी होते हैं और क्या-क्या होते हैं। एकेन्द्रियों में इतनी तकलीफ होती है वह देखने के लिये हम जाते हैं और हम आनंद मानते हैं। दूसरों का पतन देख-देखकर हम हर्षित हो जाते हैं। क्यों ? क्यों भाई ? अमेरिकावाले इसलिये छोड़कर आ गये यहां पर। क्या कहते हैं ? छोड़ो उसे। तो यह एकेन्द्रियों के अनेक वर्ण पाये जाते हैं।

उनके विविध रस पाये जाते है कि नहीं पाये जाते ? गन्ना मीठा है; करेला कड़वा है तो अलग-अलग रसवाले भी शरीर उनके पाये जाते हैं। यह जो पृथ्वीकायिक सैंधा है वह कैसा है ? खारा है न ! नमक है। फिर गंध; गुलाब का फूल है या अन्य कोई फूल है उसका अपना-अपना गंध होगा। रस देख लो, इसतरह से एकेन्द्रिय का शरीर हो या अन्य किसी का हो सबमें उस शरीर का स्पर्श, रस, गंध, वर्ण कैसे होता है ? तो उन-उन कर्मों के उदय से होता है। तो यह जो प्रश्न था उसका उत्तर है।

अब हम बंध के स्थान का विषय छोड़कर थोड़ा अलग विषय निकालेंगे। बहुत थक गये हैं न नामकर्म को बांध-बांधकर ! ये बांधकर कौन जीव कहां उत्पन्न होता है उसकी बात करेंगे। जैसे बच्चों को ट्रीट देते हैं, वैसे हम भी ट्रीट ले लेंगे एकाध। देखो, पेज ४९५ पर गाथा ५३८ के ऊपर लिखा है **आगे पर्याय को छोड़ना या पर्याय में उपजना।** पर्याय को छोड़ना इसका अर्थ होता है वह किसी भव में है, मनुष्यपर्याय या देवपर्याय, नरकपर्याय उस पर्याय को छोड़ना। पर्याय यानी वह एक समयवाली पर्याय की बात यहां नहीं है, गुणों के पर्याय की बात नहीं है, मनुष्य, देव, नारकी आदि पर्याय

की बात है। पर्याय को छोड़ना यानी मरण होना और पर्याय में उत्पन्न होना यानी अन्य किसी गति में, अन्य किसी पर्याय में उत्पन्न होना। उसकी बात गाथा टीका में देखेंगे।

गमन अर्थात् मरकर उपजना। यानी जीव का गमन कहां होता है ऐसा जब पूछेंगे तो हम यहां से गमन करके बम्बई जानेवाले हैं उसकी बात नहीं हो रही है; मरकर कहां जाते हैं ? उसकी बात यहां चलेगी। पूरा वाक्य पढ़ेंगे, फिर उसका अर्थ देखेंगे। **नारकी घर्मादि तीन पृथ्वीवालों के तो गर्भज-पंचेन्द्रिय-पर्याप्त-संज्ञी-कर्मभूमियां तिर्यंच वा मनुष्यों में ही गमन है। क्योंकि अर्धचक्री, सकलचक्री और बलभद्र बिना पंद्रह-कर्मभूमि के मनुष्यों-तिर्यंचों में, लवणसमुद्र, कालोदधि, स्वयंप्रभाचल पर्वत के बाहर आधे स्वयंभूरमणद्वीप में, सम्पूर्ण स्वयंभूरमण समुद्र में, स्वयंभूरमण समुद्र के बाहर चारों कोणों में - क्योंकि स्वयंभूरमण समुद्र गोल है और त्रसनाली चौकोर है इसलिये चारों कोणों में भी - पंचेन्द्रिय तिर्यंच हैं - इनमें आदि के तीन नरकों से निकलकर जीव जलचर, स्थलचर, नभचर, तिर्यंचों में उपजते हैं।** लंबा वाक्य है न ! अब हम देखेंगे।

यहां यह बात कह रहे हैं कि नारकी मरकर कहां उत्पन्न हो सकते हैं। अपनी भाषा में, कहां उत्पन्न होंगे ? नरक से निकलकर तो संज्ञी पंचेन्द्रिय में ही उत्पन्न होंगे, या तो मनुष्य होंगे या तिर्यंच होंगे यह बात यहां बतायी है। *श्रोता: यह घर्मापृथ्वी के बारे में ?* घर्मादि ये नरकों के नाम हैं। पहले नरक का नाम क्या है ? *श्रोता: घर्मा।* निकालो पृष्ठ ४९६, विशेषार्थ में देखेंगे वहां नरकों के नाम भी बताये हैं। हमने अभी वाक्य पढ़ा उसका अर्थ देखते हैं। देखो जहां-जहां विशेषार्थ लिखा है या जहां-जहां तिरछे लेटर में लिखा है न, यह मैंने अपनी ओर से डाला है। मूल पुस्तक की बात सीधी सरल लेटर में लिखी है और तिरछे-इटॅलिक लेटर में बीच में लिखा हुआ जो कोई मॅटर है, उसको मैंने अपनी ओर से डाला है। **नरक से निकलकर जीव अर्धचक्री, चक्रवर्ती, बलभद्र नहीं हो सकता,** अर्धचक्री किसको कहते हैं ? *श्रोता: नारायण और प्रतिनारायण।* हां, नारायण और प्रतिनारायण को अर्धचक्री कहते हैं। सकलचक्री यानी छह खण्डों पर और यह अर्धचक्री तीन खण्डों पर राज करनेवाले होते हैं। नरक से निकलकर जीव अर्धचक्री नहीं होता, चक्रवर्ती नहीं होता, बलभद्र नहीं होता।

हमने देखा है नारायण और प्रतिनारायण मरकर नियम से नरक में जाते हैं,

परंतु नरक से निकलनेवाले जीव ना नारायण होते हैं, ना प्रतिनारायण। बलभद्र भी नहीं हो सकते। अभी ऐसे कुछ नियम हैं। बलभद्र मालूम है कोई ? *श्रोता: रामचन्द्र।* अकेले राम ? यहां देवलाली में हम रोज आठ बलभद्रों के दर्शन करते हैं। किसको नाम याद हैं ? *श्रोता: विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदि, नंदिमित्र और रामचन्द्र।* विजय, अचल, सुधर्म, सुप्रभ, सुदर्शन, नंदि (नंदिषेण), नंदिमित्र, पद्म (रामचन्द्र)। बलराम नौवें स्वर्ग गये, बहुत अच्छा। यहां देखो, नरक से निकलनेवाले बलभद्र नहीं हो सकते, ना अर्धचक्री होते हैं, ना चक्रवर्ती होते हैं। नरक से निकलकर कोई भी जीव भोगभूमि में नहीं जा सकता - ना भोगभूमि का मनुष्य होता है, ना तिर्यंच होता है। तो कहां उपजता है ? कर्मभूमि के मनुष्य या तिर्यंच में ही, 'ही' लगाया, उत्पन्न होते हैं। अब पहले हमने पढ़ा था देखो फिर निकालते हैं। वहां लिखा था, तीसरी लाइन में-

अर्धचक्री, सकलचक्री और बलभद्र बिना पंद्रह कर्मभूमि के मनुष्यों में और तिर्यंचों में। पंद्रह कर्मभूमियां लिखी हैं उसकी बात यहां बताते हैं - प्रत्येक मेरु संबंधी भरतक्षेत्र, ऐरावतक्षेत्र और विदेहक्षेत्र इसतरह से पांच मेरु संबंधी पंद्रह कर्मभूमि हैं। एक मेरु संबंधी एक भरत है, एक ऐरावत है और एक विदेहक्षेत्र है; विदेह में बहुत सारे भेद हैं उसकी बात अभी नहीं कर रहे हैं। अभी हमने घर्मादि देखा था वहां नरकों के नाम दिये हैं। **नरकों के नाम अनुक्रम से इसतरह हैं।** अनुक्रम यानी पहले नरक का नाम है **घर्मा** फिर दूसरा है **वंशा,** तीसरे नरक का नाम है **मेघा,** चौथा है **अंजना,** पांचवां है **अरिष्टा,** छठा **मघवी** और सातवां **माघवी।** इन नरकों के नाम से बतायेंगे, कहीं रत्नप्रभा, शर्कराप्रभा नाम लेंगे। अब भोगभूमि कहां कौनसी होती है यह विषय भूगोल का है, इसे हमने विस्तार से पढ़ा है, फिर भी विशेषार्थ पढ़ लेते हैं।

अभी पांच मेरु संबंधी बात बतायी न ! पांच मेरु कहां-कहां है ? **जम्बूद्वीप** में एक। अब जो धातकीखण्ड है उसके पूर्व धातकी और पश्चिम धातकी ऐसे दो भाग हैं। **पूर्व धातकीखण्ड** और **पश्चिम धातकीखण्ड, पूर्व पुष्करार्ध** और **पश्चिम पुष्करार्ध** वह एक-एक हो गया, ऐसे पांच हो गये। जम्बूद्वीप का एक, धातकीखण्ड के पूर्व की ओर और पश्चिम की ओर एक-एक और पुष्करार्ध में भी पूर्व का और पश्चिम का एक-एक ऐसे पांच हो गये। **प्रत्येक में एक-एक मेरु** है, **छह-छह कुलाचल** पर्वत हैं और **सात-सात क्षेत्र हैं।** एक गोल निकालो, उसमें छह आड़ी लाइन खींचो तो सात भाग हो

जायेंगे; ऐसे छह कुलाचल हैं तो सात क्षेत्र हो जाते हैं। **इनमें प्रत्येक में एक-एक भरतक्षेत्र, एक-एक ऐरावतक्षेत्र, एक-एक विदेहक्षेत्र, दो-दो जघन्य भोगभूमि**; एक दक्षिण की ओर है, एक उत्तर की ओर है; **दो-दो मध्यम भोगभूमि** और **दो-दो उत्तम भोगभूमि** हैं। इसतरह **छह-छह भोगभूमि हैं। प्रत्येक मेरु संबंधी विदेह में पूर्व विदेह, पश्चिम विदेह उसमें भी दक्षिण के** और **उत्तर के आठ-आठ ऐसे बत्तीस-बत्तीस क्षेत्र हैं।** एक मेरु संबंधी एक भरत है, एक ऐरावत है और बत्तीस विदेह हैं। ऐसे पांच मेरु संबंधी कितने हो जायेंगे ? *श्रोता: एक सौ साठ।* विदेह देखने हैं तो एक सौ साठ और उसमें पांच भारत, पांच ऐरावत मिलायेंगे तो एक सौ सत्तर हो जायेंगे।

कुभोगभूमि की बात देखी थी। भोगभूमि में और कुभोगभूमि में नारकी उत्पन्न नहीं होते। कुभोगभूमि क्या होती है ? **लवणसमुद्र और कालोदधि समुद्र में ४८-४८ कुभोगभूमियां हैं।** बीच समुद्र में आयलंड-टापू होते हैं इसको द्वीप कहा, अन्तर्द्वीप कहते हैं। यहां कुभोगभूमि पायी जाती है उसको हमने विस्तार से देखा था। वहां कोई एक टांगवाले हैं, कोई बड़े-बड़े कानवाले हैं, किसीका मुख सिंह जैसा है, किसीका शूकर जैसा है, अलग-अलग ऐसे बहुत सारे प्रकार हैं, मिट्टी आदि खाते हैं। ये सारे कुपात्र दान के फलस्वरूप वहां जाकर उत्पन्न होते हैं। ये मरकर नियम से भवनत्रिक में, नीचेवाले देवों में जाते हैं। नारकी भोगभूमि या कुभोगभूमि में उत्पन्न नहीं होते।

पूर्वोक्त नारकी जीव तीस भोगभूमि, तीस भोगभूमि अभी हमने देखी थी - एक-एक मेरु संबंधी दो जघन्य, दो मध्यम और दो उत्तम - छह हो गयी, टोटल कितनी हुयी ? *श्रोता: तीस।* तीस भोगभूमि। **छानबे कुभोगभूमि** अड़तालीस और अड़तालीस छानबे हो गये, उन**के तिर्यंच** और **मनुष्यों में नहीं उपजते।** नारकी वहां नहीं उपजते। **तथा मानुषोत्तर पर्वत और स्वयंप्रभाचल के बीच** देखो, मानुषोत्तर पर्वत तक कैसे ? ढाईद्वीप के बाहर मानुषोत्तर पर्वत है और उसके बाहर असंख्यात द्वीप और समुद्र हैं। ढाईद्वीप में तिर्यंच भी हैं, मनुष्य भी हैं और ढाईद्वीप के बाहर क्या है ? असंख्यात द्वीप, समुद्र हैं। समुद्रों में कोई जलचर नहीं रहते, द्वीपों में सर्वत्र तिर्यंच हैं। स्वयंप्रभाचल पर्वत तक जघन्य भोगभूमि है। स्वयंप्रभाचल कहां है ? लास्टवाला स्वयंभूरमण समुद्र है उसके पहले स्वयंभूरमण द्वीप है, उसके आधे में यह स्वयंप्रभाचल पर्वत है। उसके बाहरी ओर कर्मभूमि है और स्वयंभूरमण समुद्र में भी कर्मभूमि है।

ये समुद्र कैसे हैं ? गोल हैं। कोई चौकोर कागज है और उसमें हम बड़ा गोल बनायेंगे तो बाजू में चार कोण रह जायेंगे। वैसे यह त्रसनाली एक राजू बाय एक राजू है और उसमें स्वयंभूरमण समुद्र का आऊटर किनारा पूरा सर्वत्र टच करता है। चार कोणों में जो भूमि रह जाती है उसको चतुष्कोण भूमि कहते हैं, वहां पर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच पाये जाते हैं जो कर्मभूमि के कहलाते हैं। स्वयंभूरमण के अंदर की तरफ स्वयंप्रभाचल के बाहर का स्वयंभूरमण द्वीप है, उसमें पंचेन्द्रिय तिर्यंच आदि सभी पाये जाते हैं। वहां द्वीन्द्रिय आदि भी हैं क्योंकि वह कर्मभूमि है। बीचवाले असंख्यात द्वीप हैं वहां मात्र तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि है। वहां सारे संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच ही होंगे। वे सभी मरकर देव में जायेंगे, मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक में और सम्यग्दृष्टि सौधर्म-ईशान में।

यहां नारकी मरकर कहां जाते हैं यह बताया है, नारकी मरकर उनमें उत्पन्न नहीं होंगे। *श्रोता: जघन्य भोगभूमि में ?* जघन्य भोगभूमिवालों में भी वे उत्पन्न नहीं होंगे यह बात बता रहे हैं। *श्रोता: क्या स्वयंभूरमण द्वीप में गर्भज ही होंगे ?* वहां दोनों होंगे, गर्भज भी होंगे और सम्मूर्छन भी होंगे। हम आगे देखते हैं- वहां हमने देखा था तीन नरकों में से निकलकर जीव जलचर होते हैं। जलचर यानी जल में रहनेवाले। जलचर और जलकायिक में फर्क समझते हो ? जलकायिक एकेन्द्रिय जीव हैं। पानी यानी जल इटसेल्फ; जल जिनकी काया है वे जलकायिक जीव वे एकेन्द्रिय हैं और जलचर यानी जल में रहनेवाले जीव। मेंढक होंगे, कछुवे होंगे, साप होंगे, अन्य-अन्य जो कोई हैं वे जलचर कहलाते हैं। स्थलचर यानी ? *श्रोता: जो भूमि पर चलते हैं।* हां, भूमि पर जो रहते हैं। हम जो तिर्यंच देखते हैं वे सारे कैसे हैं ? स्थलचर हैं और नभचर यानी ? *श्रोता: जो आकाश में रहते हैं।* पंछी को नभचर कहते हैं। चर यानी चरनेवाले, रहनेवाले। *श्रोता: तिर्यंच की कर्मभूमि है वहां तिर्यंच को पांचवां गुणस्थान हो सकता है ?* तिर्यंच की कर्मभूमि है वहां तिर्यंचों को पांचवां गुणस्थान हो सकता है।

देखो, हम आते हैं ४९६ पृष्ठ पर, बीचवाला विशेषार्थ है वहां लिखा है - **वहां मात्र द्वीपों में ही तिर्यंच रहते हैं, समुद्रों में जलचर नहीं पाये जाते।** हां, कोई देव उठाकर उनको समुद्र में पटक दे तो हो सकता है, परंतु वे वहां रहते नहीं हैं। अब **अंजना पृथ्वीवाले** ऊपर देखो, अंजना नाम कौनसे नरक का था ? चौथे नरक का था। **तीर्थंकर बिना** इसका अर्थ है तीसरे नरक तक के जीव निकलकर तीर्थंकर हो सकते

हैं, जो वहां पर तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे हैं। परंतु चौथे नरक से निकलकर केवली हो सकते हैं, तीर्थंकर नहीं हो सकते। अपनी भाषा में तीर्थंकर बिना यानी तीर्थंकर नहीं होते परंतु केवली हो सकते हैं; चौथे नरक तक के जीव निकलकर केवली हो सकते हैं। **और अरिष्टावाले चरमशरीरी बिना** अरिष्टा यानी पांचवें नरक से निकलकर चरमशरीरी नहीं होंगे यानी उस भव में वे मोक्ष नहीं जायेंगे, परंतु मुनि अवस्था प्राप्त कर सकते हैं। **और मघवीवाले** यानी छठे नरक से निकलकर **सकलसंयमी बिना** यानी वे सकलसंयम प्राप्त नहीं कर सकते। छठे नरक का नारकी वहां से जो मनुष्य में आयेगा तो वहां सकलसंयम प्राप्त नहीं कर सकता। हां, वे पांचवें गुणस्थान तक जा सकते हैं। **...पूर्वोक्त मनुष्य और तिर्यंचों में उपजते हैं। माघवीवाले** यानी सातवें नरकवाले **देशसंयत, असंयत, मिश्र और सासादन बिना पूर्वोक्त मिथ्यादृष्टि तिर्यंचों में ही उपजते हैं।** यानी वे नियम से मिथ्यात्व में ही मरकर इन कर्मभूमि के तिर्यंचों में मिथ्यात्व गुणस्थान में ही जन्म लेते हैं।

देखो ऐसा है, नरक में जाने के पश्चात् वहां जाकर भी जीव सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है, सातों ही नरकों में कहीं पर भी। पहले नरक में ही सम्यक्त्व के साथ जा सकता है, नीचेवाले नरकों में मिथ्यात्व अवस्था में ही जाता है और वहां जाने के बाद वहां सम्यक्त्व प्राप्त करनेवाले ऐसे प्रत्येक नरक में असंख्यात सम्यग्दृष्टि जीव हैं। नियम क्या है ? छठे नरक तक के जीव सम्यक्त्व के साथ मनुष्य में उत्पन्न हो सकते हैं, हां सम्यग्दर्शन के साथ। सातवें नरक में ऐसी बात है - कोई जीव वहां जाता है, कोई अंतर्मुहूर्त में ही सम्यक्त्व प्राप्त करता है और करीबन ३३ सागर तक सम्यग्दृष्टि रहता है; मरण के अंतर्मुहूर्त के पहले वह मिथ्यात्व में जायेगा फिर तिर्यंचायु का बंध करेगा और फिर मरेगा। यानी पहला अंतर्मुहूर्त छोड़ दो जब तक सम्यक्त्व नहीं प्राप्त किया था। अंतिम अंतर्मुहूर्त छोड़ दो जब मिथ्यात्व में जाकर आयुबंध करनेवाला है। बीच का लगभग ३३ सागर का काल सम्यग्दृष्टि है, फिर भी नियम से मिथ्यात्व में जाकर मरेगा और नियम से हिंस्र श्वापद में जन्म लेगा और उस पर्याय में उसको सम्यक्त्व हो नहीं सकता। तिर्यंच में जायेगा; सातवें नरक से निकलकर जिस पर्याय में जाता है जिस तिर्यंच में, वहां उसको सम्यक्त्व नहीं हो सकता। वह सम्यक्त्व का अधिकारी नहीं है जो सातवें नरक में ३३ सागर तक सम्यग्दृष्टि रहा था। ये ऐसे ही सहज परिणामों के निमित्त-नैमित्तिक संबंध होते हैं।

श्रोता: सातवें नरक से निकलकर वापस सातवें नरक में जा सकता है कि नहीं ? सातवें नरक से निकलकर वह सिंह आदि हिंस्र श्वापद की पर्याय में जन्म लेगा और सिंह मरकर सातवें नरक में नहीं जा सकता। मरकर सातवें में जानेवाला या मत्स्य होगा या मनुष्य होगा; मत्स्य ही जा सकता है और मनुष्य ही जा सकता है; अन्य कोई सातवें नरक में नहीं जा सकता - वह भी वज्रवृषभनाराचसंहननवाला होना चाहिये।

आपने तंदुलमत्स्य की स्टोरी सुनी होगी। इसका अर्थ है तंदुलमत्स्य सातवें नरक में जाता है न, उसके भी वज्रवृषभनाराचसंहनन होना चाहिये। वह क्या करता है मालूम है कि नहीं मालूम ? नये बच्चों को नहीं मालूम। बड़े-बड़े असंख्यात महामत्स्य होते हैं, लंबे-चौड़े होते हैं बहुत सारे, हजार-हजार योजन के। साढ़े बारह करोड़ घन योजनवाली उनकी अवगाहना है- हजार योजन लंबे, पांच सौ योजन चौड़े और ढाई सौ योजन ऊंचेवाले। वे मुंह खोलकर सो जाते हैं, तो क्या होता है ? मछलियां अंदर आती हैं, कितनी ? हजारों करोड़ों मछलियां अंदर आती हैं और वह पानी के साथ बाहर बह जाती हैं, आती हैं चली जाती हैं, आती हैं चली जाती हैं। वह तंदुलमत्स्य उस महामत्स्य के शरीर के आधार से आंख के बाजू में या कहीं वे जो गिल्स होते हैं, उसके बाजू में वहां कहीं रहता है। वह देखता है इतनी मछलियां आ रही हैं और जा रही हैं, आ रही हैं और जा रही हैं। क्या सोचता है वह ? मैं होता तो मुंह बंद कर देता। कितनी मछली खायी उसने ? *श्रोता: एक भी नहीं।* परिणाम क्या किया ? मैं होता तो ऐसा करता। परिणामों का फल है। *श्रोता: क्रिया का नहीं है ?* क्रिया का नहीं है।

जैसे हम टीव्ही देखते हैं। देखते हैं कि नहीं देखते ? वहां कोई सीरियल चलती है। वहां हीरो के हाथ में पिस्तौल है और फिर भी वह मार खा रहा है। हम बैठे-बैठे उस हीरो को क्या ॲडव्हाइस देते हैं ? अरे मार तो सही। उस हीरो को मारनेवाले को पाप नहीं लगनेवाला है, उसने ॲक्टिंग करने के पैसे लिये हैं और उसके कोई मारने के परिणाम नहीं हैं। परंतु हम बैठे-बैठे उसको ॲडव्हाइस दे रहे हैं, कृत-कारित और अनुमोदना का फल समान है। वह मारे नहीं मारे, परंतु हम बैठे-बैठे उसको कहें, अरे मार तो सही, क्यों ? या भाग तो सही, कि ये जो कोई वहां परिणाम हो रहे हैं या जो हम उसको ॲडव्हाइस करते हैं तो मारने का पाप हमें लगता है। वहां ॲक्टर्स तो वैसी चीजें करने के या नहीं करने के पैसे ले रहे हैं। उनके वहां कोई वैसे परिणाम नहीं हो

रहे। उनको तो बस पैसा दिखायी दे रहा है उसके लिये वे ॲक्टिंग कर रहे हैं और उस ॲक्टिंग को सच मानकर हम यहां परिणाम करते हैं। हम भी रोते रहते हैं उनके साथ और हम भी क्या-क्या करते रहते हैं। अभी नहीं रोते ? अभी हंसते हैं। यानी देखते हैं अभी भी।

इसको क्या कहते हैं मालूम है ? अनर्थदण्ड। अनर्थ यानी बेकार का। उसमें आपको क्या मिल रहा है ? अरे उनको तो पैसों की कमाई हो रही है, हमें कुछ नहीं मिल रहा है। हमारा टाइम बर्बाद हो रहा है टीव्ही के सामने बैठकर। ये जो एक-एक परिणाम हो रहे हैं वह पाप की कमाई हो रही है, उसको भुगतना तो पड़ेगा। उनको देख-देखकर या तो हम दुखी होते हैं सुखी होते हैं या उनको ॲडव्हाइस देते हैं। जो कोई परिणाम होते हैं वहां पर राग-द्वेष के, हिंसा के जो कुछ है क्योंकि देखकर हम ऐसे तो बिलकुल निर्लिप्त नहीं रहते हैं। है न ! उसमें इन्व्हॉल्व्ह होते हैं और उन सारे परिणामों का तो यहां कर्म का बंध होगा। हम कहते हैं हम जैनी हैं हमने कुछ पाप नहीं किया, कुछ नहीं किया और यह सब फल मिल रहा है। अपना कितना समय बर्बाद होता है वह तो बात ही छोड़ो ऊपर से यह कर्म का बंध भी हो जाता है। यह ऐसी बात चल रही है और हम सोचते हैं कि हम कुछ पाप नहीं करते। सुबह-शाम हम स्वाध्याय करते हैं और बीच-बीच में टीव्ही सीरियल देखते रहते हैं। यहां पुण्य कमाते हैं और वहां बेकार का पाप कमाते हैं। अभी हम आगे देखते हैं कौन कहां जानेवाले हैं। मत्स्य का देख रहे थे, तंदुलमत्स्य परिणामों के कारण मरकर सातवें नरक में पहुंच जाता है। उसने एक भी मछली नहीं खायी, पर सबको खाने का उसका परिणाम था - अरे मैं होता तो ऐसा कर देता ! हम भी ऐसे ही कितने परिणाम करते हैं देख-देखकर। मैं उसकी जगह होता तो उसको सबक सिखाता बराबर। होता है कि नहीं ऐसा ?

आगे हम यहां पढ़ेंगे देखो ये सातवें नरक के जो जीव हैं, नारकी हैं उनके तो तिर्यंचायु का ही बंध होगा। वहां के जो सम्यग्दृष्टि हैं वे सम्यक्त्व की अवस्था में आयु का बंध कभी नहीं करेंगे। नियम से मिथ्यात्व में जायेंगे, बाद में ही आयु का बंध करेंगे और मरकर तिर्यंच में ही उत्पन्न होंगे ऐसा ही सहज निमित्त-नैमित्तिक संबंध है। देखो, इसीका विशेषार्थ पूरा बताया। **चौथे नरक से निकलकर जीव तीर्थंकर नहीं हो सकता।** सामान्य केवली तो हो सकता है। **पहले तीन नरकों में से निकलकर जीव तीर्थंकर हो सकता है।** कौन होगा ? जिसने तीर्थंकर प्रकृति पहले से ही बांधनी चालू

की थी वह वहां भी बांधेगा। **चौथे नरक से निकलकर मनुष्य होकर उसी भव में मोक्ष पा सकता है। पांचवें नरक से निकलकर जीव चरमशरीरी नहीं हो सकता है, संयमी हो सकता है। छठवें नरक से निकलकर जीव संयमी नहीं हो सकता - देशसंयम तक ही प्राप्त कर सकता है। छठवें नरक तक के जीव मनुष्य या तिर्यंच में उत्पन्न होते हैं। परंतु सातवें नरक के नारकी मात्र तिर्यंच - संज्ञी पंचेन्द्रिय पर्याप्त हिंस्र श्वापद में ही जन्म लेते हैं। उस तिर्यंच के भव में उन्हें एकमात्र मिथ्यात्व गुणस्थान ही रहता है, अन्य कोई नहीं। सातवें नरक का नारकी अंतर्मुहूर्त में सम्यक्त्व प्राप्त कर** यानी वहां जन्म लेने के पश्चात् अंतर्मुहूर्त में सम्यक्त्व प्राप्त कर **मरण के अंतर्मुहूर्त पूर्व तक तैंतीस सागर में कुछ अंतर्मुहूर्त काल कम तक चौथे गुणस्थान में रह सकता है परंतु वह नियम से मिथ्यात्व में जाकर तिर्यंच का आयुबंध करके मरता है।** यह हमने पढ़ा था उसका अपनी भाषा में पूरा अर्थ आ गया है। *श्रोता: श्वापद का अर्थ ?* श्वापद यानी पशु, हिंस्र यानी भयानक। बाघ, सिंह आदि। हमें लगा कि वह हिंदी शब्द है, कि मराठी है ? *श्रोता: मराठी।* श्वापद नहीं कहते ? अच्छा, ठीक है अभी समझ लो।

हम आगे की गाथा की टीका देखेंगे। **सातवें माघवी नरक में उत्पन्न जीव**, यानी सातवें नरक के नारकी **जब असंयत** या **मिश्र गुणस्थान में आता है** यानी वह जब सम्यक्त्व प्राप्त करता है या सम्यक्त्व से भ्रष्ट होकर तीसरे में आता है **तब अपने-अपने गुणस्थान में मनुष्यगति-मनुष्यानुपूर्वी और उच्चगोत्र नियम से बांधता है।** देखो, आयु की बात नहीं चल रही है, गति की बात चल रही है। सातवें नरक का नारकी यदि मिथ्यात्व गुणस्थान में है, सासादन गुणस्थान में है तो तिर्यंचगति को ही बांधेगा। क्या कहा ? पहले से छठे नरकों के जो मिथ्यादृष्टि नारकी हैं वे मनुष्यगति को भी बांध सकते हैं। सातवें नरक का मिथ्यादृष्टि है वह तिर्यंचगति को ही बांधेगा। सातवें नरक का नारकी सम्यग्दर्शन प्राप्त करता है तो जब तक वह सम्यग्दृष्टि है, उतने काल तक मनुष्यगति को बांधेगा। मनुष्यगति बांधता है तो उसके साथ उच्चगोत्र को बांधेगा। **वहां उत्पन्न होनेपर सासादन, मिश्र** और **असंयत गुणस्थान को प्राप्त हुये जीव जिस काल में मरते हैं** यानी सातवें नरक में जाने के बाद कोई सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है और उससे भ्रष्ट होकर दूसरे गुणस्थान में आ सकता है या वेदक सम्यग्दृष्टि

होकर उससे भ्रष्ट होकर तीसरे गुणस्थान में आ सकता है। परंतु वह दूसरे में हो, तीसरे में हो या चौथे गुणस्थान में हो, तो कहते हैं - जिस काल में मरते हैं, **उस काल में मिथ्यात्व गुणस्थान को प्राप्त होकर ही मरते हैं।** मरने के पहले आयु का बंध भी मिथ्यात्व में आकर ही होता है और वहां नियम से तिर्यंचायु का ही बंध होता है।

कौनसे जीव मरकर कहां उत्पन्न होते हैं ? इसलिये ये बंध के नियमों में से कुछ नियम हम यहां देख रहे हैं। यहां हमें याद नहीं करना है कि बंधस्थान २३ का है कि कितने का है। आगे देखेंगे - **तिर्यंचगति में बादर और सूक्ष्म, पर्याप्त और अपर्याप्त तेजस्कायिक और वायुकायिक** - ये जो नियम हैं वे तेजस्कायिक यानी अग्निकायिक और वायुकायिक के बारे में हैं। अग्निकायिक और वायुकायिक जीव भले वे बादर हो या सूक्ष्म हो, पर्याप्त हो या अपर्याप्त हो- **मरकर** कहां जायेंगे ? मनुष्य में जायेंगे कि तिर्यंच में जायेंगे ? कहते हैं **नियम से तिर्यंच में** जायेंगे। हमने देखा था अग्निकायिक, वायुकायिक जीव मनुष्यगति की उद्वेलना कर लेते हैं, मनुष्यायु को वे बांध ही नहीं सकते। वे नियम से कहां उत्पन्न होंगे ? तो तिर्यंच में। कौनसे तिर्यंच में ? एकेन्द्रिय से संज्ञी पंचेन्द्रिय तक कहीं पर भी उत्पन्न हो सकते हैं परंतु वे भोगभूमि में नहीं जायेंगे। **क्योंकि सर्व भोगभूमियां पंचेन्द्रिय तिर्यंच को छोड़कर अन्य सर्व त्रिलोकवर्ती बादर-सूक्ष्म,** त्रिलोकवर्ती का अर्थ क्या है ? पूरे लोकाकाश में कहीं पर भी जाकर उत्पन्न हो सकते हैं क्योंकि सूक्ष्म जीव तो सर्वत्र भरे हैं, बादर भी जहां-वहां अपने-अपने योग्यस्थान में पड़े हैं तो कहीं भी उत्पन्न हो सकते हैं। **पर्याप्त-अपर्याप्त पृथ्वी** यानी कहां-कहां उत्पन्न हो सकते हैं ? पृथ्वीकायिक में, अप्कायिक में, तेजस्कायिक में, वायुकायिक में, साधारण वनस्पति यानी निगोद में जा सकते हैं। **पर्याप्त-अपर्याप्त प्रतिष्ठित, अप्रतिष्ठित प्रत्येक वनस्पति** में जा सकते हैं। **द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी, संज्ञी पंचेन्द्रिय इन सर्व तिर्यंचों में तेजस्कायिक, वायुकायिक जीव उपजते हैं।** परंतु मनुष्यों में नहीं उपजते।

एकेन्द्रिय हैं इसलिये देव में या नरक में उपजने का कोई सवाल ही नहीं है। परंतु अग्नि और वायु को छोड़कर अन्य जो एकेन्द्रिय जीव हैं – पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, वनस्पतिकायिक हैं, ईव्हन निगोद हैं - वे मरकर डायरेक्ट मनुष्य में आ सकते हैं। बादर निगोद जीव डायरेक्ट निगोद पर्याय में से मनुष्य होकर उसी भव में मोक्ष जा सकता है। परंतु अग्निकायिक जीव को इमीजिएट डायरेक्ट मनुष्य पर्याय नहीं

मिलेगी। हां एक भव तिर्यंच का करके फिर आ सकता है यानी अवशेष सारे मरकर मनुष्य में आ सकते हैं, परंतु ६३ शलाका पुरुष नहीं होते। क्या कहा ? अन्य जो एकेन्द्रिय हैं, अन्य एकेन्द्रिय - अग्निकायिक, वायुकायिक के बिना अन्य एकेन्द्रिय, उनके उन्होंने सूक्ष्म-बादर, पर्याप्त-अपर्याप्त भेद बहुत बताये हैं। या अन्य भी द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय आदि जो जीव हैं वे वहां से मरकर अन्य तिर्यंचों में भी उत्पन्न हो सकते हैं, मनुष्यों में भी उत्पन्न हो सकते हैं परंतु ६३ शलाका पुरुष नहीं होंगे।

ये ६३ शलाका पुरुष कौनसे होते हैं ? कौन बतायेगा ? बोलो प्रज्ञाजी, तीर्थंकर कितने ? *श्रोता: २४।* और ? *श्रोता: १२ चक्रवर्ती। १२* चक्रवर्ती। *श्रोता: ९ बलभद्र।* ९ बलभद्र। *श्रोता: ९ नारायण।* ९ नारायण। *श्रोता: ९ प्रतिनारायण।* ९ प्रतिनारायण। ९ बलभद्र, ९ नारायण, ९ प्रतिनारायण - ९ x ३ = २७ हो गये; *१२* चक्रवर्ती, २७ + १२ = ३९ हुये और २४ तीर्थंकर, कितने हुये ? ६३। अभी वर्तमान का अवसर्पिणी काल है, इस काल में कितने हुये थे ? हर अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी में ६३ शलाका पुरुष होते हैं। अभी इस काल में कितने हुये थे ? *श्रोता: साठ हुये थे।* साठ हुये थे ? क्या यह सही है ? यानी किसीने डबल रोल किया था। कौनसा डबल रोल हुआ था ? सुनो-सुनो, तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती भी थे तो तीन संख्या कम हुयी। तीन तीर्थंकर चक्रवर्ती भी थे, हमने तिरसठ गिने थे उसके बदले अभी साठ हुये। और कोई डबल रोलवाला है ? *श्रोता: महावीर का जीव।* महावीर का जीव तीर्थंकर था और वही नारायण भी हुआ था। कब हुआ था ? *श्रोता: त्रिपृष्ठ नारायण।* त्रिपृष्ठ नारायण। कब हुआ था ? श्रेयांसनाथ तीर्थंकर के काल में त्रिपृष्ठ नारायण हुआ था, वही जीव कालांतर में महावीर हुआ। नारायण का एक पद और तीर्थंकर का एक पद, वह रिपीट हुआ कि नहीं ? डबल रोल हुआ। *श्रोता: त्रिपृष्ठ तो नारायण ही था न उस भव में।* था न नारायण, परंतु वह पूर्व का नारायण हुआ। बाद में वही जीव तीर्थंकर हुआ। कितने जीवों की बात है ? अलग-अलग जीव ने वह नहीं किया था एक ही जीव ने ये दो पद पाये थे इतनी बात बतानी है।

देखो, हमने ४९८ पृष्ठ पर यह बात पढ़ी कि जो एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय तक के जीव निकलकर मनुष्य में उत्पन्न होंगे तो वे ६३ शलाका पुरुष नहीं होंगे। **इतना विशेष है कि नित्य और चतुर्गति सूक्ष्म निगोद से आये हुये मनुष्य सम्यक्त्व और देशसंयम को ग्रहण कर सकते हैं परंतु सकलसंयम को नहीं ग्रहण करते**।

सूक्ष्म निगोद में से आये हुये; हमने जो मोक्ष जाने की बात की वह बादर निगोद की बात की थी। अभी असंज्ञी की; जो असंज्ञी पंचेन्द्रिय हैं वे मरकर कहां-कहां जा सकते हैं ? **असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर पृथ्वीकायिकवत् तिर्यंच, मनुष्यों में; प्रथम नरक में तथा भवनवासी, व्यंतर देवों में उत्पन्न होते हैं।** असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर कहां-कहां जाते हैं ? एकेन्द्रिय आदि सभी तिर्यंचों में जा सकते हैं। असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर मनुष्य हो सकते हैं; असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर नरक में जा सकते हैं, परंतु मात्र पहले नरक में जा सकते हैं; असंज्ञी पंचेन्द्रिय मरकर देव में जा सकते हैं, मात्र भवनत्रिक नहीं कहा, भवनद्विक कहा, क्यों ? भवनवासी और व्यंतर में ही जाते हैं; **अन्य देवों में** यानी **ज्योतिषी** में उत्पन्न नहीं होते **और वैमानिकों में** उत्पन्न नहीं होते। **अन्य नरकों में** यानी **दूसरे से सातवें नरक में** भी **नहीं उपजते।**

असंज्ञी पंचेन्द्रिय जो आयु का बंध करता है; नरकायु का कहो या देवायु का कहो; तो उसका स्थितिबंध मिनिमम दस हजार वर्ष का करेगा और अधिक से अधिक आयु का बंध करेगा तो पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण आयु का बंध करेगा। ज्योतिषी में क्यों नहीं उत्पन्न हो सकता ? क्योंकि ज्योतिषी की कम से कम आयु है पल्य के आठवें भागप्रमाण और असंज्ञी आयु बांधेगा पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण तो ज्योतिषी में उत्पन्न नहीं हो सकता। नीचे के नरकों में क्यों नहीं जाता ? क्योंकि वहां सागर से भी ज्यादा आयु है इसलिये नीचे के नरकों में भी नहीं जायेगा। जायेगा तो पहले नरक में, यह पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण अधिक से अधिक आयु का बंध करके जा सकता है। उसका कारण अभी यहां विशेषार्थ में वही बताया है। अभी संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच मरकर कहां-कहां जा सकते हैं ? सभी तिर्यंचों में उत्पन्न हो सकते हैं; मनुष्यों में उत्पन्न हो सकते हैं; सभी नरकों में उत्पन्न हो सकते हैं, भोगभूमि में भी उत्पन्न हो सकते हैं। या कहां तक के देवों में ? अच्युत स्वर्ग तक के देवों में भी उपज सकते हैं। अच्युत यानी कितने नंबर का हुआ ? *श्रोता: सोलह नंबर का।* सोलहवां, आनत, प्राणत, आरण और अच्युत, सोलहवें नंबर का स्वर्ग है।

कर्मभूमियां पर्याप्त मनुष्य संज्ञीवत् यानी कर्मभूमि के पर्याप्त मनुष्य संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच के समान **सर्व जीवों में** यानी एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक के सभी तिर्यंचों में, मनुष्यों में, नरकों में या भोगभूमियों में उत्पन्न हो सकते हैं **और कल्पातीत अहमिन्द्र देवों में उपजते हैं।** कल्पातीत समझते हैं ? एक होते हैं

कल्पवासी और एक होते हैं कल्पातीत। पहले से सोलहवें स्वर्ग तक कहेंगे कल्पवासी क्योंकि वहां इन्द्र, प्रतीन्द्र, सामानिक, त्रायस्त्रिंश, लोकपाल आदि जो भेद होते हैं, वे भेद कल्पातीत में नहीं होते हैं तो उनको कल्पातीत कहेंगे। ऊपर ग्रैवेयक, अनुदिश, अनुत्तर वगैरह वे कैसे हैं ? पहले से सोलहवें स्वर्ग तक के कल्पवासी हैं और ऊपर के वे कल्पातीत हैं, वहां तो सभी समान हैं - कोई स्वामी और सेवक ऐसा भेद नहीं है। हम हमेशा कहते हैं न आप लोगों को, जैसे अमेरिकावाले कैसे हैं ? स्वामी और नौकर कोई भेद नहीं है। हर एक अपना-अपना स्वामी है, हर एक अपना-अपना नौकर है। वैसे वहां हर एक जीव इन्द्र है इसको कहेंगे अहमिन्द्र और उनको कहेंगे कल्पातीत। *श्रोता: कल्पोत्तर कहेंगे ?* कल्पोत्तर नहीं कल्पातीत।

देखो ४९९ पेज पर, **अपर्याप्त मनुष्य** कहां-कहां उत्पन्न होता है ? यानी लब्धिअपर्याप्त मनुष्य। तो कहते हैं **कर्मभूमियां तिर्यंचों में और तीर्थंकरादि विशेष पद रहित ऐसे सामान्य मनुष्यों में उपजते हैं।** लब्धिअपर्याप्त मनुष्य देव में नहीं जा सकते क्योंकि देवगति का बंध नहीं कर सकते। लब्धिअपर्याप्त मनुष्य मरकर नरक में नहीं जायेंगे क्योंकि नरकगति का बंध नहीं कर सकते। परंतु तिर्यंचगति का बंध करेंगे। मनुष्यों में भी उत्पन्न हो सकते हैं। फिर भी क्या कहा ? विशेष पदवाले मनुष्य नहीं होंगे। **तीस भोगभूमि के तिर्यंच**, हमने तीस भोगभूमि देखी थी न ? पांच मेरु संबंधी, हर एक की छह-छह। **तीस भोगभूमि के तिर्यंच और मनुष्य तथा असंख्यात द्वीपसमुद्रों संबंधी तिर्यंच संबंधी जघन्य भोगभूमि के तिर्यंच,** यहां द्वीपसमुद्र कहा है परंतु मात्र द्वीप ही समझना चाहिये क्योंकि द्वीपों में ही ये जघन्य भोगभूमि होती हैं। बीचवाले समुद्रों में कोई तिर्यंच नहीं पाये जाते। **मरकर उनमें से सम्यग्दृष्टि तो सौधर्म-ईशान में ही उपजते हैं और मिथ्यादृष्टि, सासादन और कुभोगभूमियां मनुष्य भवनत्रिक देवों में उपजते हैं।** क्या कहा ? ये भोगभूमिवाले जीव कहां उत्पन्न होते हैं ? भोगभूमि यानी रेग्युलर भोगभूमि है तो उसमें गुणस्थान पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा; तीसरे में तो कोई मरता ही नहीं है। चौथे गुणस्थानवाले मरकर कहां जायेंगे ? नियम से सौधर्म और ईशान में जायेंगे। पहले और दूसरे गुणस्थान में मरेंगे तो नियम से भवनत्रिक में जन्म लेंगे। भोगभूमि से बस एक ही रास्ता है, वे सभी देवगति, देवायु को बांधकर वहीं पर चले जायेंगे। मिथ्यादृष्टि हो या सम्यग्दृष्टि हो देव ही होंगे। सम्यग्दृष्टि

सौधर्म-ईशान में जायेंगे और मिथ्यादृष्टि, सासादनवाले भवनत्रिक में जायेंगे।

श्रोता: भोगभूमि और कहां है ? बीचवाले जो असंख्यात समुद्र और द्वीप हैं उनमें से जो द्वीप हैं, उनमें तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि हैं। वहां के सारे ही - अभी कितने ? असंख्यात द्वीप हैं, उनमें से सारे ही तिर्यंच हैं मरकर देव में जायेंगे। मिथ्यादृष्टि हैं वे सारे भवनत्रिक में और सम्यग्दृष्टि हैं सारे सौधर्म-ईशान स्वर्ग में जायेंगे। वही लिखा है यहां। *श्रोता: कुभोगभूमिके जीव ?* वे कुभोगभूमिवाले हैं, सारे भवनत्रिक में उपजते हैं ऐसा लिखा है। कुभोगभूमि के जीव कहां ? भवनत्रिक में उत्पन्न होते हैं। *श्रोता: आपने सम्यग्दृष्टि सारे सौधर्म-ईशान में जाते हैं कहा था ?* सम्यग्दृष्टि तो हमने भोगभूमि के लिये कहा। देखो, यहां क्या लिखा ? पहले जो तीस भोगभूमि हैं और असंख्यात द्वीपों की जो जघन्य भोगभूमि है वहां के सम्यग्दृष्टि सौधर्म-ईशान स्वर्ग में और वहां के मिथ्यादृष्टि, सासादन भवनत्रिक में और कुभोगभूमि के जीव भवनत्रिक में स्पष्ट लिखा है न यहां। यह जो गुणस्थानों का डिफरन्स किया है वह मात्र अन्य रेग्युलर भोगभूमि के लिये किया है, कुभोगभूमि के लिये नहीं किया है वहां सब मिथ्यादृष्टि ही होते हैं।

अब देखते हैं **चरमशरीरी मनुष्य स्वात्मोपलब्धिरूप सिद्धिस्थान को प्राप्त होते हैं।** मनुष्य कहां जाते हैं ? क्या शब्द आया वहां ? चरमशरीरी, चरमशरीरी किसको कहते हैं ? *श्रोता: जो उसी भव से मोक्ष जायेंगे।* आखिरी शरीर जिन्होंने धारण किया है। क्यों ? क्योंकि उसी भव में वे मोक्ष जानेवाले हैं इसलिये उनको चरमशरीरी कहते हैं। तो स्वात्मोपलब्धि - अपनी आत्मा की उपलब्धि से यानी अपनी आत्मा में स्थिर होकर सिद्धिस्थान यानी सिद्ध अवस्था को प्राप्त करेंगे। आगे भी बहुत सारी बातें हैं देखो, पढ़ेंगे **आहारक देह सहित मरनेवाले प्रमत्तसंयमी** छठे गुणस्थानवर्ती जीव जिन्होंने आहारकशरीर बनाया और उसी अवस्था में जिनका मरण हुआ है उन**का गमन वैमानिक देवों में ही होता है। सर्वार्थसिद्धि तक के देव पंद्रह कर्मभूमि के मनुष्यों में ही गमन करते हैं** यानी **उपजते हैं,अन्यत्र नहीं। सहस्रार तक के** यानी **बारहवें स्वर्ग तक के देवों का उन मनुष्यों में अथवा** यानी यहां कहना क्या चाहते हैं कि देव मरकर कर्मभूमि का मनुष्य होगा, भोगभूमि में नहीं जायेगा। भोगभूमि के मनुष्य, तिर्यंच मरकर देव ही होंगे। परंतु कोई भी देव मरकर भोगभूमि में नहीं जायेगा, वह कर्मभूमि का ही मनुष्य होगा। यह बात बताना चाहते हैं।

श्रोता: पंद्रह कर्मभूमि में क्या-क्या बताया था ? अभी हमने बताया था न पंद्रह कर्मभूमि ? प्रत्येक मेरु संबंधी एक भरत, एक ऐरावत, एक विदेह। अभी विदेह के भेद छोड़कर ये तीन-तीन हो गये तो पांच मेरु संबंधी पंद्रह कर्मभूमि। **सहस्रार तक के देवों का उन मनुष्यों में अथवा** सहस्रार तक के देव यानी भवनत्रिक से लेकर बारहवें स्वर्ग तक के देव या तो तिर्यंचों में उत्पन्न होंगे या मनुष्यों में उत्पन्न होंगे। इसलिये सहस्रार तक कहा। वे कहां के तिर्यंच हो सकते हैं ? उनका उन मनुष्यों में यानी ऊपर बताये हुये पंद्रह कर्मभूमि के मनुष्यों में अथवा अभी तिर्यंचों की बात कर रहे हैं वह। कहां के तिर्यंच ? **पंद्रह कर्मभूमि के तिर्यंच अथवा लवणोद, कालोद समुद्र,** और **स्वयंभूरमण द्वीप का अपरार्ध** यानी **बाहरी आधा, स्वयंभूरमण समुद्रवर्ती संज्ञी पर्याप्त जलचर, स्थलचर, नभचर तिर्यंचों में उपजना होता है।** यानी ढाईद्वीपवाले जो बीचवाले दो समुद्र हैं वहां उपजेंगे या स्वयंभूरमण समुद्र में उपजेंगे या स्वयंभूरमण द्वीप का आऊटर हाफ, बाहरी आधा वहां उत्पन्न होंगे। तिर्यंचों में उत्पन्न होनेवालों की बात है। *श्रोता: भरतक्षेत्र में ?* आ गये न उसमें, पंद्रह कर्मभूमि में सब आ गये। भरतक्षेत्र को लिया कि नहीं लिया यहां पर ? ले लिया अभी, भरत-ऐरावत सबको लिया।

अब **ईशान तक के देवों का उन पूर्वोक्त मनुष्यों में, तिर्यंचों में या बादर पर्याप्त पृथ्वी, अप्, प्रत्येक वनस्पतिरूप एकेन्द्रिय में उपजना होता है।** क्या कहना चाहते हैं ? ऊपर से उन्होंने बताना शुरू किया था। अब हम नीचे की ओर से देखेंगे। भवनत्रिक और सौधर्म-ईशान के देव मरकर कहां जा सकते हैं ? अभी जो कर्मभूमि के मनुष्य बताये, उनमें जाते हैं; कर्मभूमि के तिर्यंचों में उत्पन्न हो सकते हैं या एकेन्द्रियों में भी उत्पन्न हो सकते हैं, परंतु कौनसे एकेन्द्रिय ? बादर पर्याप्त पृथ्वीकायिक, जलकायिक या प्रत्येक वनस्पतिकायिक इनमें उत्पन्न हो सकते हैं। और सहस्रार तक के देव ? कर्मभूमि के मनुष्य, तिर्यंचों में और उसके ऊपर के सारे मिथ्यादृष्टि हो या सम्यग्दृष्टि हो मनुष्य में ही उत्पन्न होते हैं। **भवनत्रिक का भी ऐसा ही है। इतना विशेष है कि मनुष्यों में तीर्थंकरादि तिरसठ शलाका पुरुषों में वे नहीं उपजते।** कौन ? भवनत्रिक यानी भवनत्रिक से मरकर। अभी हमने जो ६३ शलाका पुरुष देखे तीर्थंकर, चक्रवर्ती, नारायण, प्रतिनारायण, बलभद्र; भवनत्रिक से मरकर कोई यहां आकर ६३ शलाका पुरुष नहीं होते। यानी वे ६३ शलाका पुरुष वैमानिक से

आकर ही होंगे, भवनत्रिक से आकर नहीं हो सकते। हमने देखा था, नरक से निकलकर कोई तीर्थंकर हो सकता है। *श्रोता: तीसरे नरक तक से।* तीसरे नरक तक से निकलकर तीर्थंकर हो सकता है। परंतु भवनत्रिक से मरकर आनेवाला कोई ६३ शलाका पुरुष में से कोई नहीं होगा। नरक से निकलकर कोई नारायण, प्रतिनारायण, बलभद्र नहीं होगा, तीर्थंकर हो सकता है। कैसे नियम हैं अटपटे !

आप कहेंगे हमको याद नहीं रहता, हम क्या करे ? तो नारकियों को कहां उपजना है, कहां नहीं उपजना है, याद करना पड़ता है क्या ? परिणाम सहज होते हैं, वैसे-वैसे वहां का बंध होता है। क्या होता है ? यह अपने ज्ञान का विषय है। इन सबको देखकर-सुनकर ऐसा मत सोचना कि अभी हम कैसा परिणाम करें, तो कहां उत्पन्न हो सकते हैं ? मुझे पूछो मैं आपको बताऊंगी, आपको कहां उत्पन्न होना है ? चान्स है यहां पर, किसीको कुछ पूछना है ? हां बेटा, आपको कहां जाना है ? मैं आपको ट्रिक बताऊंगी। कहां जाना है ? विदेहक्षेत्र में जाना है ? हम कहीं जन्म लेना चाहते हैं तो एक भव की भी चाह है; तो उसके अभिप्राय में अनंत भवों की चाह पड़ी है। हमें भव का अभाव ही करना है, कोई बंध-वंध नहीं करना। जब आयु के बंध की बात चलती है न, तो लोग पूछते हैं कब बंधती है ? कौनसी बंधती है ? कैसे त्रिभाग में बंधती है ? तो पूछते हैं अभी हम परिणाम कैसे रखें ? अच्छे परिणाम कैसे रखना ? हमारी आयु कब बंधेगी ? यानी हम बांधना चाहते हैं कुछ न कुछ। इस संबंधी कोई प्रश्न है तो पूछना।

श्रोता: आतप नामकर्म प्रकृति में और अग्नि की उष्णता में क्या अंतर है ? हां ? आतप नामकर्म और अग्नि की उष्णता में क्या अंतर है ? हमने पहले देखा था कि अग्निकायिक जीवों के आतप नामकर्म का उदय होता ही नहीं क्योंकि अग्निकायिक में उनके अतिशय अप्रशस्त ऐसे कर्मों का उदय होता है। आतप नामकर्म का उदय मात्र सूर्यबिम्ब के पर्याप्त पृथ्वीकायिक जीव हैं उन्हींके होता है, उनके उष्णता सहित प्रभा होती है। अग्नि में भी इतनी उष्णता होती है। उनका जो शरीर है, शरीर के स्पर्श नामकर्म के उदय में उसका जो स्पर्श है वह गरम यानी अतिशय उष्ण ऐसा स्पर्श वहां चल रहा है। उनके वह स्पर्श नामकर्म की पर्याय है, आतप नामकर्म के कारण वह नहीं है। *श्रोता: प्रकाश तो दोनों में है।* वह होने दो परंतु उसका वह कार्य नहीं, वह वर्ण में आ जायेगा। *श्रोता: प्रभा का अर्थ ?* प्रभा यानी उसका तेज, हम कहते हैं न प्रकाश। प्रकाश है परंतु वह उस नामकर्म का काम नहीं है, आतप का काम नहीं है। भले हम

अग्नि का भी प्रकाश देखते हैं परंतु आतप नामकर्म का वह कार्य नहीं है। *श्रोता: दोनों के फंक्शन एक जैसे हैं।* फंक्शन एक जैसा है परंतु हम उसको एक नहीं कहेंगे। एक जैसा है, एक तो नहीं है।

श्रोता: क्या प्रथमोपशम सम्यक्त्व के बाद जीव नियम से मिथ्यात्व में जाता है ? आपका प्रश्न ऐसा है कि ऐसा कोई नियम है कि प्रथमोपशम सम्यक्त्व के बाद जीव नियम से मिथ्यात्व में जाता है ? ऐसा बिलकुल नहीं है। *श्रोता: प्रथम बार ऐसी बात आयी है।* प्रथम बार की अलग बात है। प्रथम बार सम्यक्त्व - प्रथमोपशम प्राप्त करता है तो अनेक ग्रंथों में यह बात आयी है कि वह नियम से मिथ्यात्व में जाता है क्योंकि अनादि का मिथ्यादृष्टि है और सबसे पहली बार प्रथमोपशम किया। मात्र प्रथमोपशम किया ऐसा कहेंगे तो उसके लिये बहुत रास्ते हैं। यह भी कई ग्रंथों में उसको स्वीकार किया गया - जब पहली बार प्रथमोपशम हुआ, अनादि से जो मिथ्यादृष्टि है और पहली बार प्रथमोपशम प्राप्त करता है तो वह मिथ्यात्व में जाता है - यह लाठीसंहिता, जयधवला आदि बहुत सारे ग्रंथों में ऐसा लिखा हुआ है कि पूर्व संस्कारवश वह तो मिथ्यात्व में जाता है। वह अंतर्मुहूर्त में फिर सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। परंतु ऐसा कथन कुछ ग्रंथों में है। *श्रोता: यह बात यहां भी कही गयी है ?* यहां कुछ बात नहीं, यह उसकी बात ही नहीं है। यहां उस संबंधी कुछ चर्चा ही नहीं है। यह तो विषय अलग है, यहां का नहीं है। यहां तो केवल बंध की और उदय की और सत्ता की बात चल रही है। यह किसी कर्म के वश होता है ऐसा भी नहीं है। वह तो बस अनादि का मिथ्यादृष्टि था इसलिये प्रथम बार सम्यक्त्व होने पर वह मिथ्यात्व में चला जाता है ऐसी बात है। अभी समय हो गया। *श्रोता: सातवें नरक का नारकी तिर्यंच होकर सम्यग्दर्शन प्राप्त कर सकता है या नहीं ?* अभी बताया, नहीं कर सकता है। *श्रोता: शेर को सम्यग्दर्शन हुआ है।* शेर को सम्यग्दर्शन हुआ है। वह कहां से मरकर आया था ? सातवें नरक से नहीं आया था। अभी यहीं रुकते हैं हम। अपना यह विषय यहीं समाप्त होता है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

४९. नामकर्म के बंधस्थानों में प्रकृतियां

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांतचकवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी हुयी है और अभी हम उसका हिंदी अनुवाद देख रहे हैं। स्थानसमुत्कीर्तन का प्रकरण चल रहा है। स्थान का अर्थ हमने देखा था, एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियों का बंध पाया जाता है उसको बंधस्थान कहेंगे। एक जीव को एक काल में जितनी प्रकृतियों का उदय पाया जाता है उसको उदयस्थान कहेंगे। एक जीव को एक काल में जितनी प्रकृतियों का सत्त्व यानी सत्ता पायी जायेगी उसको सत्त्वस्थान कहेंगे।

पहले जब हमने बंध, उदय और सत्ता की बात देखी थी वहां अन्य-अन्य अनेक यानी नाना जीवों की अपेक्षा बात की थी और यहां एक जीव को एक काल में कोई एक बंधस्थान होगा। अलग-अलग जीवों के अलग-अलग बंधस्थान होंगे, व्हेरिएशन्स होंगे। ऐसे कितने व्हेरिएशन्स हो सकते हैं ? उसकी बात चलेगी। हमने मोहनीय के बंधस्थान भी देखे, उदयस्थान भी देखे और सत्त्वस्थान भी देखे। अभी नामकर्म के देखेंगे। यह विषय बिलकुल नया है। हमने कभी सुना हुआ नहीं है। मोहनीय के बारे में चर्चा आती है और गुणस्थानों के अभ्यास में हमें पता चलता है कि मोहनीय के कौनसे कर्मों का कहां बंध है, कहां उदय है। परंतु यह विषय नया है इसलिये इसको हम बिलकुल शांति से, धीरे से समझेंगे। हमें इसमें कोई जल्दी नहीं है कि इतना पोर्शन कम्प्लीट करना है। पूरे कर्मकाण्ड पर पांच शिबिर हुये तो भी कम हैं क्योंकि विषय बहुत बड़ा है।

नामकर्म के बंधस्थान यहां बोर्ड पर लिखे हैं, हमने कौन-कौनसे देखे थे ? टोटल कितने हैं ? *श्रोता: आठ हैं।* आठ हैं। कौन-कौनसे ? २३ लिखा है उसका अर्थ है २३ प्रकृतिक या २३ प्रकृतिवाला एक स्थान यानी एक जीव एक काल में या एक समय में २३ प्रकृतियों का बंध करता है। अब कोई जीव वह बंध कौनसी गति संबंधी कर रहा है, कौनसी पर्याय संबंधी कर रहा है उसकी बात हम देखेंगे। कोई जीव ॲट अ टाइम नामकर्म की २५ प्रकृतियां बांधता है वह बंध कौनसी पर्याय संबंधी हो सकता है उसकी भी बात देखेंगे। कोई ऐसा है कि २६ प्रकृतियों का बंध कर रहा है, कोई २८ का, कोई २९ का, कोई ३० का, कोई ३१ का, कोई १ प्रकृति का बंध कर रहा है। इसको हम कहेंगे नामकर्म के बंधस्थान। किसी एक जीव के एक काल में कितनी प्रकृतियां बंध

सकती हैं उसकी बात यहां चल रही है। हमने देखा नामकर्म हर समय बंधता है तो हर समय कितनी प्रकृतियां बंध रही हैं ? अपने परिणामों के अनुसार; मिथ्यादृष्टि की बात करेंगे हम - मिथ्यादृष्टि कभी २३ का बंध करेगा, कभी २५ का करेगा, कभी २६ का, कभी २८, २९, ३० का करेगा। मिथ्यादृष्टि ३१वाला और १वाला नहीं करेगा क्योंकि वे देवगति सहित तीर्थंकर, आहारकद्विक वगैरह बांधनेवाले जीव हैं, उनकी बात नहीं है यहां पर। वह तो आठवें गुणस्थानवाला जब वहां बंध करेगा उसकी बात है।

हम देखेंगे कौनसे गुणस्थानवाले कौनसा बंध कर सकते हैं। पहले अगर देखेंगे ये प्रकृतियां कौनसी हैं तो हमें उसका उत्तर पता चलेगा। हम पढ़ेंगे, परंतु ऐसा क्यों है ? २३वाला यही स्थान क्यों है ? इसकी बात जब देखेंगे तो आपको पता चलेगा कि कौनसे गुणस्थानवाला यह बांध सकता है। इसके लिये पहले हमने ४१ जीवपद देखे थे और ३६ कर्मपद देखे थे, फिर उसको दोहराते हैं। उसके आधार से अपनी बात चलेगी। सोलह नंबर के चार्ट में नामकर्म के ४१ जीवपद लिखे हैं वहां आगे क्या लिखा है ? उदय और सत्त्व की अपेक्षा ये बातें हैं। जिसके नामकर्म का विशिष्ट उदय चल रहा है, जैसे नरकगति का उदय चल रहा है उसको नारकी कहेंगे। यहां ४१ जीवपद बताये हैं तो नारकी पर्याप्त ही हैं, उसमें पर्याप्त और अपर्याप्त ऐसे भेद नहीं हैं। उसका एक पद, फिर तिर्यंच को, मनुष्य को बाजू में रखते हैं क्योंकि उनके बहुत सारे भेद हैं। केवली के चार पद बताये थे याद हैं ? सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली, समुद्घातवाले सामान्य केवली और समुद्घातवाले तीर्थंकर केवली - केवली के चार पद हुये। आहारक का एक पद और देवगति का एक पद हमने देखा था।

अब तिर्यंच और मनुष्यों की बात करते हैं। जीवपद में हमने दो विभाजन किये थे। ऐसे जीव जिनमें बादर और सूक्ष्म ऐसे दो-दो भेद होते हैं, ऐसे जीव कौनसे हैं ? तो कहते हैं स्थावर हैं। परंतु प्रत्येक वनस्पति में सूक्ष्मवाला भेद नहीं होता, इसलिये उसको हमने अलग ग्रुप में डाल दिया। बाकी कौन बचे ? पृथ्वीकायिक, जलकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक और वनस्पतिकायिक, यहां वनस्पतिकायिक में हम साधारण वनस्पति को ले लेंगे। अब हर एक के बादर और सूक्ष्म, ऐसे दस भेद हो जायेंगे। अब अन्य मात्र बादर जीव हैं वे कौन-कौनसे हैं ? प्रत्येक वनस्पति हैं, द्वीन्द्रिय हैं, त्रीन्द्रिय हैं, चतुरिन्द्रिय हैं, असंज्ञी पंचेन्द्रिय हैं और संज्ञी पंचेन्द्रिय हैं। संज्ञी पंचेन्द्रिय

और मनुष्य को अलग लेंगे क्योंकि बाकी जो हैं तिर्यंचगतिवाले लिये। आप कहेंगे संज्ञी में मनुष्य आया न ? नहीं, परंतु वह तिर्यंचगतिवाला संज्ञी था यह मनुष्य को अलग रखा तो कितने हुये ? प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच और मनुष्य ये सात हुये, पहले हमने दस देखे थे। इन सभी भेदों में पर्याप्त जीव भी होते हैं और अपर्याप्त जीव भी होते हैं। जिनके पर्याप्त नामकर्म का उदय है वे पर्याप्त जीव हैं, जिनके अपर्याप्त का उदय है वे अपर्याप्त जीव हैं। टोटल कितने ? सत्रह हुये। सत्रह के पर्याप्त और सत्रह के अपर्याप्त चौंतीस हो गये।

पहले हमने नारकी का एक देखा था, अभी हमने चौंतीस देखे, केवली के हमने चार पद देखे थे, आहारक का एक पद देखा था और देवगति का एक पद देखा था, टोटल ४१ थे। कौनसा जीव है ऐसा अगर हम कहेंगे तो उसमे ये जीवपद लगायेंगे और किस पद सहित कर्म का बंध होता है, किस पद सहित यानी नामकर्म का जो ग्रुप बताया जायेगा। यह २३वाला जो बंध है वह कौनसे पर्याय सहित होता है ? पर्यायवाले को होता है ऐसा नहीं कहा, २३ का बंध किसके होगा ? मनुष्यों के भी हो सकता है, तिर्यंचों के भी हो सकता है, संज्ञी-असंज्ञी के भी हो सकता है; परंतु २३ का बंध हो रहा है वह किस पर्याय संबंधी हो रहा है ? वहां जिस पर्याय सहित उसमें से एक कर्मप्रकृति हम लेंगे और उस सहित यह २३वाला ग्रुप है ऐसा कहेंगे। २३ प्रकृतियां बंध रही हैं वे किस प्रकृति सहित बंध रही हैं, पॅकेज अपना, पॅकेज में एक का नाम लेंगे और उस सहित पूरा पॅकेज है उसको हम कर्मपद कहेंगे।

जैसे २३वाला पद कौनसा है तो किस पर्याय संबंधी यह बंध हो रहा है ? हम कहेंगे एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित। तो एकेन्द्रिय अपर्याप्त - यह कर्मपद हो गया। उसमें हम डिटेल्स बतायेंगे, एकेन्द्रिय तो सब हैं। क्या पृथ्वीकायिक एकेन्द्रिय अपर्याप्त है ? क्या अप्कायिक एकेन्द्रिय अपर्याप्त है ? उसमें भी बादर का अपर्याप्त है ? क्या सूक्ष्म का अपर्याप्त है ? उसमें ऐसे भेद हम और बता सकते हैं। इसलिये उस पद सहित अन्य भी जो प्रकृतियां वहां बंध रही हैं उनका नाम बताने के लिये यहां इसको कर्मपद कहते हैं। ऐसे ये जो बंधस्थान हैं वे कौन-कौनसे हैं उसकी बात हम सीखेंगे। हमने बेसिक २३ प्रकृतियों का बंध सबको होता ही है यह बात देखी थी, अब होता ही है जब कहेंगे तो १वाला स्थान यहां पर याद नहीं करना। जब तक गति का बंध हो रहा है तब तक ये २३ प्रकृतियां बंधेंगी ही बंधेंगी। गति का बंध कब तक होता है ? *श्रोता: सातवें*

गुणस्थान तक। सातवें तक आयु का बंध होता है। आठवें गुणस्थान के छठे भाग तक देवगति का बंध है, वहां देवगति के बंध की व्युच्छित्ति देखी थी। गति सहितवाले बंध कहां तक हैं ? आठवें गुणस्थान तक हैं और बाकी ऊपर गति से रहित ऐसा बंध है।

यहां नामकर्म के बंधस्थान में हमने देखे थे कि सामान्य से २३ प्रकृतियों का बंध सबके होता ही है। ये २३ प्रकृतियां कौनसी हैं ? उनमें हमने नामकर्म की ९ प्रकृतियां ध्रुवबंधी देखी थी। वैसे टोटल सभी कर्मों में से हमने ध्रुवबंधी ४७ देखी थी उसकी अभी चर्चा नहीं करेंगे। वह विषय हमारा हो गया। अभी हम मात्र नामकर्म की बात चलायेंगे। नामकर्म में भी ध्रुवबंधी यानी अनादि से जो हर समय बंधती चली आ रही हैं ऐसी ९ प्रकृतियां जो सबको बंधती हैं वे कौन-कौनसी हैं ? हां देखो आपके पास पुस्तक है न ! तेजस, कार्माण, यानी तेजसशरीर नामकर्म, कार्माणशरीर नामकर्म इनका बंध हर समय चल रहा है। फिर अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और वर्ण, गंध, रस, स्पर्श ये ९ जो प्रकृतियां हैं वे सबके बंधती ही बंधती हैं। मुझे कोई इन प्रकृतियों के नाम सुनायेगा ? बिना देखे कौन बताना चाहता है ये ध्रुवबंधी ९ प्रकृतियां कौनसी हैं ? *श्रोता: तेजस, कार्माण।* हां, *श्रोता: अगुरुलघु, उपघात, निर्माण, वर्णादि चार।* हां, वर्णादि चार और कौन बतायेगा यहां पुरुषों में से ? *श्रोता: तेजस, कार्माण।* हां, *श्रोता: अगुरुलघु।* हां, *श्रोता: उपघात।* हां, *श्रोता: निर्माण, चार वर्ण।* वर्णादि चार; चार वर्ण नहीं, वर्णादि चार।

आप स्पर्शादि भी कह सकते हो। वर्णादि इसलिये कहे यहां जो आर्डर है; कर्मकाण्ड में जिस क्रम से प्रकृतियों के नाम लिखे जाते हैं उसके पीछे कोई रहस्य है। जब कर्म का बंध होता है और उसका डिस्ट्रिब्यूशन होता है तो प्रत्येक प्रकृति में ईक्वल डिस्ट्रिब्यूशन नहीं होता। किसीमें परमाणु ज्यादा जाते हैं किसीमें कम जाते हैं। उनका क्रम बताने के लिये ऐसा क्रम से याद रखते हैं। हमने गत साल कर्मकाण्ड के शिबिर में प्रदेशों का बटवारा बहुत विस्तार से देखा था और इसलिये उसी क्रम से हम प्रकृतियों को याद रखते हैं। यह क्रम उलटा पुलटा ऐसे ही नहीं लिखा है, आचार्य हर एक जो कोई बात बताते हैं, हर एक वाक्य में उसकी कुछ गहरायी होती है जो हमें पता नहीं। जब तक हम बहुत अभ्यास नहीं करते, सूक्ष्म अभ्यास नहीं होता तो उसका पता नहीं चलता। इसलिये करणानुयोग के जो कोई नियम हैं, जो कोई बातें हैं, हमेशा वैसे ही हमें याद रखनी हैं, अपनी ओर से कोई डेफिनिशन्स नहीं बनानी हैं।

जैसे कल यहां प्रश्न पूछा था न, हमने बताया था कि सातवें नरक से मरकर जो सिंह हो जायेगा उसको उस पर्याय में सम्यग्दर्शन नहीं होगा। किसीने पूछा था कि हमने तो सुना है महावीर भगवान को सिंह की पर्याय में सम्यग्दर्शन हुआ था। यह जरूरी नहीं कि सभी सिंह सातवें नरक से मरकर आते होंगे, तो कहां से आया होगा ? बोलो कहां से आया होगा ? ऊपर के नरकों में से आया होगा; तिर्यंच में से आया होगा; एकेन्द्रिय में से आया होगा; निगोद में से आया होगा; अग्निकायिक या अन्य कायिकों में से आया होगा, मनुष्य में से आया होगा; मनुष्य लब्धिअपर्याप्त में से आया होगा; देव में से आया होगा कहीं से भी आया होगा उसमें कुछ फर्क नहीं पड़ता। सातवें नरक से आया नहीं था इतनी बात निश्चित होती है। यानी सातवें नरक से निकलकर सिंह होता है पर सभी सिंह सातवें नरक से नहीं आते। हां, यानी उलटा नियम हम नहीं बनायेंगे। *श्रोता: देव से आ सकता है ?* हां, देव से भी आ सकता है। भोगभूमि में सिंह होते हैं की नहीं होते ? पहले के भोगभूमि में भी थे कि नहीं थे ये सारे प्राणी ? वे तभी मांसाहारी नहीं थे, हमारे जैसे शाकाहारी होंगे। यहां भोगभूमि में ये तिर्यंच थे कि नहीं ? यहां पहली, दूसरी और तीसरी भोगभूमि भरतक्षेत्र में हुयी थी। उत्तम भोगभूमि यहां पर ही हुयी थी, यहीं पर फिर मध्यम भोगभूमि हुयी, फिर यहीं पर जघन्य भोगभूमि हुयी। तो उस ज़माने के तिर्यंच थे कि नहीं थे ? तो वे भी वैसे सारे शुभ लेश्यावाले तिर्यंच थे।

श्रोता: यह बात जो चल रही है, देवगति से जीव तिर्यंचगति में सिंह की पर्याय में आ सकता है ? और कौनसे स्वर्ग से आ सकता है ? ॲक्चुअलि सिंह का नाम लेकर नहीं कह सकते; मैं वही बता रही हूं। सिंह में अगर उत्पन्न होता है ऐसा हम लेते हैं तो भोगभूमि में देव से नहीं आयेंगे, है न और मिथ्यात्व अवस्था में कर्मभूमि के किसी भी तिर्यंच में जा सकते हैं, उसका ऐसा कोई निषेध नहीं है। संक्लेश परिणाम से देव एकेन्द्रिय में जा सकते हैं तो संज्ञी पंचेन्द्रिय सिंह में जाने में कोई रुकावट नहीं है। इतनी बात है कि सहस्रार तक के जीव तिर्यंच में जाते हैं। *श्रोता: बारहवें स्वर्ग तक ?* हां, वहां तक ही तिर्यंचायु, तिर्यंचगति आदि का बंध होता है। उसके ऊपर के देवों को उन प्रकृतियों का बंध ही नहीं होता है। ऊपर सारे शुक्ल लेश्यावाले देव हैं। इसलिये नीचे जो कोई पीत, पद्म लेश्यावाले होंगे उनमें से बहुतांश जा सकते हैं उसका कोई निषेध नहीं है। तिर्यंचगति, तिर्यंचायु का बंध सहस्रार तक होता है। उनमें एक-एक का नाम इसमें आता है कि नहीं ? कौवे का आता है कि नहीं ? सिंह का आता है कि नहीं ?

ये बातें तो हम नहीं कह सकते न !

हमने ९ ध्रुवबंधी देखी। अभी सबको याद हो गयी न ९ ? याद नहीं भी होगी तो आपके सामने चार्ट है। फिर ९ युगल में से कोई एक बंधेगी ही बंधेगी। हमने ९ युगल कौन-कौनसे देखे थे ? त्रस आदि चार; त्रस आदि चार जब कहते हैं त्रस, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक इनको त्रस आदि चार कहते हैं। इनके युगल समझना यानी त्रस या स्थावर का बंध होगा ही होगा; उसमें पर्याप्त या अपर्याप्त का होगा, बादर या सूक्ष्म का होगा, प्रत्येक शरीर या साधारण शरीर का होगा। अब ऐसा समझना कि जब त्रस नामकर्म बंध रहा है उसके साथ सूक्ष्म नहीं बंध सकता, उसके साथ साधारण नहीं बंध सकता। क्यों नहीं बंध सकता ? त्रस बंधेगा इसलिये उसके साथ साधारण कैसे बंधेगा ? क्योंकि साधारण नामकर्म यानी निगोदवाली पर्याय। किसमें होती है ? स्थावर में ही होती है और वह भी वनस्पतिकायिक में ही होती है। यानी ऐसी प्रकृतियां लेना जो विरोधवाली नहीं हो - उसके साथ जिनको हम पूरक कहते हैं, त्रस नामकर्म जो बांध रहा है वह बादर ही बांधेगा, स्थावर के साथ बादर या सूक्ष्म जो कोई ऑप्शन है जैसा जहां परिणाम वैसे उसको बांधेगा। समझ में आती है बात ? सारे ही त्रस जीव बादर ही होते हैं। सूक्ष्मवाला भेद है वह किसमें होता है ? एकेन्द्रियों में होता है, सभी एकेन्द्रियों में होता है। पृथ्वीकायिक बादर भी है सूक्ष्म भी है, अग्निकायिक बादर भी है सूक्ष्म भी है, ऐसा हर एक में लगा लो। साधारण जो वनस्पति वह बादर भी है सूक्ष्म भी है।

यह त्रस आदि चार कहा; त्रस या स्थावर, बादर या सूक्ष्म, पर्याप्त या अपर्याप्त और प्रत्येक या साधारण; एक वनस्पतिकायिक को छोड़ो तो साधारण नामकर्म अन्य किसीके साथ नहीं होगा क्योंकि वनस्पति में ही साधारण और प्रत्येक भेद हैं। उसको छोड़ दो तो पृथ्वीकायिक, अग्निकायिक, वायुकायिक, जलकायिक और बाकी सारे त्रस - ये कैसे हैं ? प्रत्येक शरीरवाले ही हैं। प्रत्येक शरीर का अर्थ क्या है ? एक जीव उसका एक शरीर यानी एक शरीर का स्वामी एक जीव। आप कहेंगे यहां एक शरीर है न ! इसमें बहुत सारे निगोद भी रहते हैं, अन्य वर्म्स वगैरह भी रहते हैं। उनका अपना शरीर अलग है। यह मनुष्यशरीर उनका नहीं कहलायेगा। यह मनुष्यशरीर उनके उत्पन्न होने का स्थान हो सकता है, परंतु इस मनुष्यशरीर का स्वामी मनुष्यजीव है। किसको यहां मनुष्य कह रहे हैं ? हमें कह रहे हैं। क्यों ? नामकर्म का उदय है वैसे

शरीर की रचना हुयी है। हम कहेंगे न हम उस शरीर को देखकर उस जीव को बुलाते हैं, उसका नाम रखते हैं। इस शरीर के आधार से जो कीड़े मकोड़े जो कोई निगोद आदि रहते हैं उनका यह मनुष्यशरीर नहीं कहलायेगा। यह उनका उत्पत्तिस्थान है, उसको योनि कहेंगे। सचित्त योनि है कि इसके आधार से इतने सारे जीव पैदा हो सकते हैं। परंतु उनका अपना अलग शरीर है। जैसे कोई वर्म्स हैं, पेट में कीड़े होते हैं, उनका अपना औदारिकशरीर अलग है। उनका शरीर, उनके नामकर्म अलग हैं।

एक निगोद शरीर में अनंत जीव रहते हैं तो उनका हर एक का अपना-अपना नामकर्म अलग-अलग, अपने-अपने आठों कर्म अलग हैं। *श्रोता: शरीर एक है ?* शरीर एक है, आहार एक है, उनकी आयु सामान है। श्वासोच्छ्वास एक ही है। एक समय में जन्मते हैं वे सभी एक साथ एक समय में मरते हैं फिर भी प्रत्येक समय में हर एक का परिणाम अलग है और प्रत्येक समय में हर एक जीव अलग-अलग बंध कर रहा है। निगोद की पर्याय में रहते हुये कोई २३ का बंध कर रहा है, कोई २५ का बंध कर रहा है, कोई २६ का बंध कर रहा है। अभी २८ का नहीं कहूंगी क्योंकि वहां कोई देवगति नहीं बांधता है, नरकगति नहीं बांधता है। इतने अनंत जीव उनका अपना-अपना परिणाम अलग, उनका अपना-अपना कर्म का बंध वहां अलग-अलग हो रहा है और अनंत जीव मरकर अनंत अलग-अलग जगह चले जायेंगे। कोई उसी शरीर में भी उत्पन्न हो सकते हैं, कोई लोकाकाश के दूसरे एण्ड तक भी चले जायेंगे। बात ख्याल में आती है ? कोई मनुष्यों में आयेगा। हर एक के अपने-अपने परिणाम के अनुसार कर्म का बंध होता है और यह ऑटोमॅटिक व्यवस्था बन जाती है।

ऐसा हम नक्की करते हैं न कि अभी मुझे वहां जन्म लेना है, कहां ? महाविदेह में। देखिये हमें भगवान के प्रति बहुमान आता है ! हमने देखा है कि कुन्दकुन्द आचार्य वहां जाकर आये और हमारे जो विद्यागुरु हैं – कानजीस्वामी; हम उनको स्वामीजी कहते हैं, गुरुदेवश्री कहते हैं; वे वहां से आये हैं और हमें उनसे उपदेश मिला तो हमें क्या भावना होती है ? हम भी महाविदेह में चले जायेंगे। परंतु अभिप्राय में हमने किसी एक को ही निमित्त बनाया है और वहां नहीं गये इसलिये हमें सम्यग्दर्शन नहीं हो रहा है ऐसा अगर मानते हैं तो यह हमारा मिथ्यात्व है। हमने निमित्त निश्चित कर दिया न ? हम वहां नहीं जायेंगे तो हमें सम्यग्दर्शन भी नहीं होगा, क्यों ? *श्रोता: वहां जानेवाला तो मिथ्यात्वी ही होता है।* वहां जानेवाला मिथ्यात्व के साथ ही जायेगा क्योंकि यहां जो

सम्यग्दृष्टि है वह तो स्वर्ग में जायेगा। सम्यग्दर्शन के बाद यदि आयु का बंध करेगा तो देवायु को बांधेगा। यदि किसीने पहले मनुष्यायु बांधी हो और बाद में सम्यग्दर्शन हुआ है तो सम्यक्त्व के साथ भोगभूमि में भी नहीं जायेगा क्योंकि क्षायिक सम्यग्दर्शन होना आवश्यक है। जिस किसीने ऑलरेडि मनुष्यायु बांधी है और बाद में सम्यग्दर्शन प्राप्त किया, तो मरण के पूर्व वह मिथ्यादृष्टि हो जायेगा। फिर जाने की छूट है महाविदेह में। परंतु गॅरंटी नहीं कि वहीं जायेगा क्योंकि परिणाम किसके कैसे बदल जाये !

हमने देखा न कितनी बार सम्यग्दर्शन हो जाता है। सभी पर्यायों में- एकेन्द्रियों में, निगोद में सर्वत्र सभी जीवसमासों में, ऐसे इतने जीव पड़े हैं कि जिन्होंने कभी संयम भी प्राप्त किया था, कभी उपशमश्रेणी भी चढ़ी थी। हमने देखा था आहारक का बंध भी किया था और अभी ऐसी-ऐसी पर्यायों में वहां पड़े हैं। गुमान नहीं करना कि हमने इतना स्वाध्याय किया है, हमने सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है और अभी हम देव में चले जायेंगे - कुछ नहीं कह सकते। कोई जीव है, भावलिंगी संत है - करोड़ पूर्व की आयु लेकर आये हैं तो अर्लिएस्ट आठवें साल के बाद संयम प्राप्त कर सकते हैं। करीबन पूरी जिंदगी वे भावलिंगी संतपने में विराजमान थे, आयु का बंध नहीं किया था अंत में मिथ्यात्व में जा सकते हैं और तिर्यंचगति बांध सकते हैं - ऐसा हो सकता है। ये सारे रुद्र कैसे होते हैं ? रुद्र सुना है ? जैसे हमने नारायण देखा, प्रतिनारायण देखा, वैसे रुद्र होते हैं। वे क्या हैं ? भावलिंगी संत थे, बाद में भ्रष्ट हो गये, मिथ्यात्व में चले गये और मरकर नरक में गये। ये कौनसे जीव के परिणाम कैसे होंगे वह तो हम कह नहीं सकते। पं. टोडरमलजी साहब बार-बार कहते हैं, 'अपने परिणामों की संभाल रखना' हां, यह भी उपदेश की भाषा है। फिर भी, नहीं तो चलो हमने इतना पढ़ लिया तो हम तो जैनी हैं तो हम इसमें जा ही नहीं सकते ऐसा कुछ नहीं है।

हम देखेंगे, हर समय जीव परिणाम करता है और नामकर्म का बंध हर समय हो रहा है। या तो २३ का बंध करेगा या २५ का या २६ का या जो कुछ यथायोग्य अपने परिणाम के अनुसार बंध चलता ही है। आयु कभी-कभी बंधती है परंतु ये बाकी कर्म हर समय बंध रहे हैं। कैसे बंधते हैं ? हम २३ की बात करेंगे। ९ ध्रुवबंधी हैं; तेजस है, कार्माण है, अगुरुलघु है, उपघात है, निर्माण है और वर्णादि चार हैं तो ये ९ प्रकृतियां सबको बंधेंगी ही बंधेंगी। अब बाकी ९ युगल में से एक-एक बंधेगी। त्रस आदि चार

यानी त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक या उसका ऑपोझिट जो कोई यथायोग्य, एक दूसरे की जो पूरक प्रकृतियां होंगी और जिस गति संबंधी बंध होना है वैसे उसके होगी। उसके बाद पांच अन्य हैं। पांच अन्य यानी वह जोड़ी-जोड़ी नहीं, युगल नहीं हैं परंतु वे पिंड प्रकृतियां हैं। जैसे चार गति में से एक बंधेगी, एकेन्द्रिय आदि पांच जाति में से किसी एक का बंध होगा। गति, जाति, शरीर; दो शरीर में से क्योंकि तेजस, कार्माण हर समय बंध रही है। औदारिक या वैक्रियिक शरीर में से किसी एक शरीर नामकर्म का बंध हो रहा है और संस्थान; छह संस्थान में से कोई एक और आनुपूर्वी चार में से कोई एक। तो ये पांच प्रकृतियां। पहले ९ ध्रुवबंधी, युगल में से कोई एक-एक वह ९ + ९ = १८ हुयी और ये ५ इसतरह २३ प्रकृति का बंध तो हर समय जीव को होता ही है।

अब हमें सोचना है कि २३वाला स्थान कौनसा होगा ? उसके मात्र २३ बंधती हैं, ज्यादा नहीं बंधती। हम थोड़ा विचार करते हैं, सुनना - यदि एकेन्द्रिय सहित पर्याप्त का बंध होता; तो उसमें कौनसी प्रकृतियां बंधती हैं ? पहले ९ बंधती हैं कि नहीं ? हम एकेन्द्रिय पर्याप्त की बात कर रहे हैं। ९ ध्रुवबंधी बंधेंगी, युगल में से कौनसी होंगी ? *श्रोता: स्थावर।* स्थावर बंधेगी। बादर होगा या सूक्ष्म होगा ? एकेन्द्रिय तो दोनों हो सकते हैं, सूक्ष्म या बादर। तीसरा पर्याप्त भी होगा, अपर्याप्त भी होगा और प्रत्येक भी होगा या साधारण भी होगा। एकेन्द्रिय है तो हम कह नहीं सकते। ये तो चार हो गये। आगे ? उसमें से एक-एक ले लेना। स्थिर - स्थिर होगा या अस्थिर होगा ? कुछ भी हो सकता है। तो यह स्थिर आदि स्वर बिना जो हमने देखे थे तो उनमें से किसी ना किसी का बंध होगा। अब यदि हम पर्याप्त लेते हैं, यदि एकेन्द्रिय के साथ पर्याप्त का बंध होता, तो गति में से कौनसी गति बांधते ? *श्रोता: तिर्यंच।* तिर्यंच। जाति ? *श्रोता: एकेन्द्रिय।* एकेन्द्रिय। शरीर ? *श्रोता: औदारिक।* औदारिक और संस्थान ? *श्रोता: हुण्डकसंस्थान।* हुण्डकसंस्थान। आनुपूर्वी ? *श्रोता: तिर्यंचानुपूर्वी।* तिर्यंचानुपूर्वी।

अब यदि वह पर्याप्त होता यानी हमने स्थावर, बादर कहो या सूक्ष्म कहो और पर्याप्त लेते, तो पर्याप्त स्थावर के साथ और कोई कर्मप्रकृति बंधनी चाहिये जो आपके टेबल में नीचे लिखा है ? यहां लिखा है त्रस हो या स्थावर हो पर्याप्तयुत होंगे यानी पर्याप्त नामकर्म बांध रहे होंगे। इसको कहते हैं पर्याप्तयुत कहो या सहित कहो एक ही बात है। स्थावर भी होता और पर्याप्त भी होता तो उसके परघात और उच्छ्वास भी बांधनी चाहिये थी। यदि पर्याप्त नामकर्म २३ में गिन लिया हमने और २३ में हम उसको

स्थावर पर्याप्त कहते, उसका विचार करते तो उसके परघात और उच्छ्वास भी बंध जाता तो २५ हो जाते। मात्र २३ का ही चाहिये और एक्स्ट्रॉ नहीं चाहिये तो पर्याप्त के बदले अपर्याप्त रखो यहां पर। यदि हम यहां अपर्याप्त सोचते हैं तो इसमें से एक्स्ट्रॉ और कोई भी प्रकृति वहां नहीं बंधती। इसलिये २३वाला स्थान कौनसा होगा ? जो एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला बंध कर रहा है। ये बंध कौन कर रहा है उसकी बात नहीं है। यहां बहुत लोगों को कन्फ्यूजन होता है। ये बंध मनुष्य कर रहे होंगे या संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच कर रहे होंगे परंतु कौनसा बंध कर रहे हैं ? २३वाला जहां एकेन्द्रिय अपर्याप्त का बंध कर रहे हैं तो उसको कहेंगे एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित बंध है।

फिर से, हमें मिनिमम २३वाला ही चाहिये, एक्स्ट्रॉ नहीं चाहिये। यदि हम वहां स्थावर और पर्याप्त भी लेते तो उसमें और दो प्रकृतियां जोड़नी पड़ती। कौनसी ? परघात और उच्छ्वास क्योंकि पर्याप्तों के इन प्रकृतियों का उदय रहेगा तो इनका बंध तो रहेगा ही रहेगा। यह २३वाला स्थान किस प्रकृति सहित होगा ? एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहित होगा। फिर वह पृथ्वीकायिक हो या अन्य कुछ भी हो। *श्रोता: यह त्रस भी हो सकता है क्या ?* त्रस नहीं हो सकता। हम त्रस की बात देखते हैं - त्रस भले अपर्याप्त होगा; अभी हम त्रस अपर्याप्त की बात करते हैं। हमने कहा न अपर्याप्त होता तो और कर्म बांधने चाहिये थे। अभी त्रस होता, त्रस भले पर्याप्त हो या अपर्याप्त हो, उसके साथ संहनन और अंगोपांग बंध जाता। *श्रोता: आपने एकेन्द्रिय लिया था। एकेन्द्रिय स्थावर होता है ?* स्थावर ही होता है। हमने वहां स्थावर ही कहा था। हमने स्थावर एकेन्द्रिय अपर्याप्त की बात, स्थावर लिया तभी तो एकेन्द्रिय कह सकते हैं यानी स्थावर अपर्याप्त का लिया तभी वह २३ का हो सकता है।

यदि त्रस अपर्याप्त लेते, त्रस अपर्याप्त का अर्थ क्या है ? त्रस लब्धिअपर्याप्त कौन हो सकते हैं ? द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय या मनुष्य लब्धिअपर्याप्त। उनमें संहनन और अंगोपांग बंधेगा ही बंधेगा। मात्र अपर्याप्त है इसलिये २३ का नहीं है। स्थावर में अपर्याप्त होगा तो २३ का बंध है यानी हम कहेंगे स्थावर है, एकेन्द्रिय है, अपर्याप्त है तो वहां बंध २३ का है। यदि त्रस अपर्याप्त को बांधते तो संहनन और अंगोपांग और बंध जाता, वह हम देखेंगे आगे २५ के स्थान में। मिनिमम २३वाला कौनसा होगा ? स्थावर एकेन्द्रिय अपर्याप्तवाला ही २३ का हो सकता

है क्योंकि उसको इन २३ के अलावा और कोई प्रकृतियां नहीं बंधती।

हम पृष्ठ ४८८ पर देखेंगे- **नामकर्म के एक जीव के एक समय में जो बंध पाये जाते हैं** यानी जितनी प्रकृतियों का बंध पाया जाता है **उसे बंधस्थान कहते हैं**। ये अलग-अलग जीवों में अलग-अलग समयों में अलग-अलग बंध होते हैं वे कौन-कौनसे पॉसिबल बंध होते हैं ? उसकी यहां चर्चा है। यहां पहला स्थान देखते हैं - **वहां पूर्वोक्त नौ ध्रुवबंधी से लेकर आनुपूर्वी तक**, आनुपूर्वी तक कैसे समझना ? देखो चार्ट में, ये नौ ध्रुवबंधी तेजस से लेकर ये सारे युगल और पांच अन्य आनुपूर्वी तक- कितने हुये ? *श्रोता: तेइस।* ध्रुवबंधी से लेकर आनुपूर्वी तक २३ हो गये। कहते हैं **आनुपूर्वी तक तेइस प्रकृतियों में से स्थावर, अपर्याप्त, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति संयुक्त जो बंध है।** उसमें से मुख्य; त्रस-स्थावर में से स्थावर का बंध लिया; पर्याप्त-अपर्याप्त में से अपर्याप्त को लिया; गति में तिर्यंचगति और जाति में एकेन्द्रियजाति; ऐसा जो पर्टिक्युलर बंध है उसके संयुक्त लिया। उसको होता है ऐसा नहीं कहा, उस सहित बंध हो रहा है यानी उस सहित और भी जो सारी प्रकृतियां बंध रही हैं न। हमने कहां से लिये ? ध्रुवबंधी से लेकर आनुपूर्वी तक, उसीमें किन प्रकृतियों को लिया ? ये २३वाली, २३ में से कुछ प्रकृतियां बता रहे हैं। ये प्रकृतियां २३ में ही इनक्लूडेड हैं, हमने विशिष्ट कौनसी ली ? वह स्थावर है। स्थावर है तो पर्याप्त है क्या अपर्याप्त है ? अपर्याप्त है। कौनसी गति बांध रहा है ? तिर्यंचगति है और कौनसी जाति है ? एकेन्द्रियजाति है।

इन प्रकृतियों सहितवाला जो २३वाला पॅकेज है अपनी भाषा में, वह एकेन्द्रिय-अपर्याप्तयुत २३ का बंधस्थान है। उसको क्या कहेंगे हम ? एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत। इतना कहने से एकेन्द्रिय तो स्थावर है वह समझ में आ रहा है, एकेन्द्रिय तो तिर्यंचगति वह भी समझ में आ रही है। हम उसको केवल एकेन्द्रिय स्थावर इतना कहेंगे तो चलेगा परंतु आगे अपर्याप्त शब्द लगाया क्योंकि एकेन्द्रियजाति बांध रहा है और वह अपर्याप्त नामकर्म भी बांध रहा है। ऐसे जीव को टोटल कितने नामकर्म बंध रहे हैं ? २३ बंध रहे हैं। उसको कैसे लिखेंगे ? ये बंध प्रकृतियां कितनी हैं ? २३ हैं। एअ यानी एकेन्द्रिय अपर्याप्त, उसका एक स्थान। २३ एअ और नीचे १ यह लिखने की पद्धति है। आचार्य हर बार पूरा नहीं लिखेंगे, यह शॉर्ट फॉर्म है। उनके पास भी शॉर्ट हँड सब था।

श्रोता: इसमें उनके संहनन और संस्थान का नाम नहीं आया एकेन्द्रियजाति

और तिर्यंचगति उसके साथ ? अभी जो हमने नक्की किया २३ का; कौनसा लिया ? *श्रोता: एकेन्द्रिय अपर्याप्त।* एकेन्द्रिय अपर्याप्त, अब ९ ध्रुवबंधी होंगी कि नहीं होंगी ? *श्रोता: होंगी।* होंगी; अब युगल में से देखते हैं। त्रस है कि स्थावर है ? *श्रोता: स्थावर है।* स्थावर है; बादर है या सूक्ष्म है ? *श्रोता: बादर है।* कुछ भी हो सकता है। पर्याप्त है या अपर्याप्त है ? *श्रोता: अपर्याप्त है।* अपर्याप्त है और प्रत्येक है कि साधारण है ? *श्रोता: प्रत्येक है।* कुछ भी हो सकता है, कोई भी हो सकता है। आगे स्थिर आदि कुछ भी हो सकता है उसमें स्थिर-अस्थिर वगैरह-वगैरह जो कुछ भी यथायोग्य हम कहेंगे और गति कौनसी बंध रही है ? *श्रोता: तिर्यंचगति।* तिर्यंचगति; जाति ? *श्रोता: एकेन्द्रियजाति।* एकेन्द्रिय; शरीर ? *श्रोता: औदारिकशरीर।* औदारिकशरीर; संस्थान ? हुण्डकसंस्थान और आनुपूर्वी ? *श्रोता: तिर्यंचानुपूर्वी।* तिर्यंचानुपूर्वी, आयी न सब या रही कोई प्रकृति ? २३ हो गयी न ! संभालो अपनी-अपनी प्रकृतियां कोई रह न जाये। यह हमने २३ का देख लिया। ये २३वाला मिनिमम बंधस्थान होगा एकेन्द्रिय अपर्याप्त संबंधी।

आगे के जितने स्थान हम सीखेंगे उतनी ये बातें और सरल लगेगी। **इनमें से अपर्याप्त प्रकृति घटाकर** यदि अपर्याप्त घटायी और पर्याप्त मिलायी तो नंबर कितना रहा ? २३ का २३ रहा, पर्याप्त है तो और कुछ जोड़नी पड़ेगी। क्या जोड़नी पड़ेगी ? *श्रोता: उच्छ्वास और परघात।* परघात और उच्छ्वास क्योंकि स्थावर पर्याप्त हो या त्रस पर्याप्त हो, उसके साथ उच्छ्वास और परघात तो बंधेंगी ही बंधेंगी। पर्याप्त जीवों के उच्छ्वास होता है तो उच्छ्वास नामकर्म भी होगा न वहां पर ? यानी अपर्याप्त निकाला २३ में से, अपर्याप्त को हटाया और पर्याप्त को मिलाया। २३ में पर्याप्त होगा या अपर्याप्त होगा, पर्याप्त को जोड़ दिया तो २३ का २३ रहा। परंतु पर्याप्त है तो उसके साथ परघात और उच्छ्वास दो प्रकृतियां और जोड़नी। कितनी हो गयी ? *श्रोता: पच्चीस।* २५ हो गयी। अब यहां देखते हैं। **इनमें से अपर्याप्त प्रकृति घटाकर पर्याप्त, उच्छ्वास और परघात ये तीन मिलाने पर एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत**, युत कहो या सहित कहो **पच्चीस का बंधस्थान होता है।** किसी भी जीव को २५ का बंधस्थान कौनसा होगा ? तो एकेन्द्रिय पर्याप्त संबंधी है। त्रस पर्याप्त संबंधी नहीं कहा। किसका कहा ? *श्रोता: एकेन्द्रिय पर्याप्त संबंधी।* एकेन्द्रिय पर्याप्त संबंधी कहा है। ये कौनसा है ? २५वाला।

उनके भेद हम कर्मपद में देख सकते हैं। टोटल बताना है तो स्थावर के विशेष

कहा था उनको। हमने जब कर्मपद पढ़े थे तो उनको स्थावर के विशेषरूप कहा था तो वह उनमें लगा लो। उनमें सबमें वह २५वाला ही होगा। एकेन्द्रिय संबंधी जो पर्याप्त संबंधी बंध कर रहा है वह कौनसा स्थान होगा ? २५ संबंधी होगा, पर्याप्तों के। **इनमें से स्थावर, पर्याप्त, एकेन्द्रियजाति, उच्छ्वास, परघात इन पांच को घटाकर** अभी हम कौनसा ले रहे हैं ? त्रस का अपर्याप्त ले रहे हैं। **त्रस, अपर्याप्त, द्वीन्द्रियजाति, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, औदारिक अंगोपांग ये पांच मिलाने पर द्वीन्द्रिय-अपर्याप्तयुत पच्चीस का स्थान होता है।** फिर से, २५ का स्थान कहां हो सकता है ? एकेन्द्रियों में जो हमने अपर्याप्तों में वहां २३ का स्थान देखा था। अपर्याप्त के बदले एकेन्द्रिय का ही पर्याप्त ले लो। पर्याप्त लेते हैं तो परघात और उच्छ्वास दो डालने पड़ेंगे इसलिये वह २५वाला स्थान हो जायेगा।

अभी २५वाला कॉम्बिनेशन और कौनसा हो सकता है ? इसको हम देखेंगे। वह पहलेवाले २३ ले लिये हमने और त्रस को अपर्याप्तवाला ले लिया। त्रस अपर्याप्तवाला क्योंकि त्रस पर्याप्त लेते तो उनमें ये दो परघात और उच्छ्वास भी और जोड़ने पड़ते। त्रस पर्याप्त लेते तो उसमें परघात भी जोड़ना पड़ता, उच्छ्वास भी, संहनन भी, अंगोपांग भी जोड़ना पड़ता। हमने त्रस अपर्याप्त का लिया तो त्रस अपर्याप्त इतना ही कहने पर २३ आ गयी उसमें और त्रस है इसलिये संहनन और अंगोपांग और जोड़ दो। २३ और २ मिलाकर २५ हो गयी। २५ का स्थान कैसे होगा ? एकेन्द्रिय पर्याप्त सहितवाला होगा या त्रस द्वीन्द्रिय आदि अपर्याप्त सहितवाला होगा। त्रस द्वीन्द्रिय अपर्याप्त में द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी, असंज्ञी और मनुष्य अपर्याप्त के लिये- उनके अपर्याप्त के लिये अभी हम स्थान यहां देखेंगे क्योंकि उनमें इतनी ही प्रकृति होंगी इस २५ के स्थान में। मनुष्य लब्धिअपर्याप्त युत भी हो सकता है वहां पर।

दुबारा देखते हैं। २३ का स्थान मात्र एकेन्द्रिय अपर्याप्तों को होगा क्योंकि इन ॲडिशन उनके कुछ नहीं जोड़ना है। एकेन्द्रिय अपर्याप्त के बदले एकेन्द्रिय पर्याप्त अगर हम कहते तो वह २३ के २३ तो हैं ही हैं, उसमें परघात और उच्छ्वास और जोड़ने पड़ते तो ये २५ हो गये। अब २५वाला और कहां हो सकता है ? तो ऊपर २३ में हमने स्थावर के बदले त्रस कर दिया और अपर्याप्त तो है ही। त्रस भले अपर्याप्त हो उसमें दो प्रकृतियां और जोड़नी पड़ेंगी, कौनसी ? संहनन और अंगोपांग। पर्याप्त होते तो परघात, उच्छ्वास, विहायोगति, स्वर ॲड करने पडते उनको हमने ॲड ही नहीं किया।

कुछ घटाने की बात नहीं है। यहां स्थावर के बदले त्रस लिया, पर्याप्त के बदले अपर्याप्त लिया है और त्रस पर्याप्त हो या अपर्याप्त हो उसके साथ संहनन और अंगोपांग तो होगा ही होगा। इसलिये द्वीन्द्रिय आदि अपर्याप्त जो लब्धिअपर्याप्त द्वीन्द्रिय, लब्धिअपर्याप्त त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, संज्ञी, असंज्ञी, मनुष्य लब्धिअपर्याप्त हैं उन संबंधी जीव बंध कर रहा है उस समय कितनी प्रकृतियां बांध रहा है ? २५ बांध रहा है।

हम मनुष्य लब्धिअपर्याप्त की बात देख रहे हैं। मनुष्य लब्धिअपर्याप्त संबंधी बंध कौन कर रहा है ? कोई तिर्यंच, मनुष्य कर रहा होगा क्योंकि देव अपर्याप्त का बंध नहीं करते, ना नारकी करते हैं। मनुष्य और तिर्यंच कौनसा बंध कर रहा है ? मनुष्य लब्धिअपर्याप्त संबंधी। जिस समय बंध कर रहा है तो कौन-कौनसी प्रकृतियां बंध रही हैं ? टोटल देखेंगे - ९ ध्रुवबंधी हैं। अब युगल में से हम देखेंगे। मनुष्यगतियुत स्थान है; त्रस है कि स्थावर है ? *श्रोता: त्रस है।* त्रस है; बादर है कि सूक्ष्म है ? बादर है; पर्याप्त है कि अपर्याप्त है ? *श्रोता: अपर्याप्त है।* अपर्याप्त है। प्रत्येक है कि साधारण है ? *श्रोता: प्रत्येक है।* मनुष्य है न ? प्रत्येक है। जब अपर्याप्त का बंध कर रहा है तो मोस्टलि सब अप्रशस्तवाली बंधेगी। हम कहेंगे उसे अस्थिर है, अशुभ है, दुर्भग है, फिर अनादेय, अयशकीर्ति वगैरह पांच गिनेंगे तो ये ९ हो गये। ९ ध्रुवबंधी, युगल में से ९। गति कौनसी बंधेगी ? *श्रोता: मनुष्यगति।* मनुष्यगति; जाति ? *श्रोता: पंचेन्द्रियजाति।* पंचेन्द्रियजाति; शरीर ? *श्रोता: औदारिकशरीर।* औदारिकशरीर; संस्थान ? *श्रोता: हुण्डकसंस्थान।* हुण्डकसंस्थान; आनुपूर्वी ? *श्रोता: मनुष्यानुपूर्वी।* मनुष्यानुपूर्वी। उनके साथ ये मनुष्य अपर्याप्त है, लब्धिअपर्याप्त तो और कौनसी बंधेगी उसके ? *श्रोता: संहनन।* कौनसा संहनन बंधेगा ? असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन बंधेगा और अंगोपांग कौनसा बंधेगा ? औदारिकअंगोपांग। कितनी हो गयी टोटल ? *श्रोता: पच्चीस।* २५ हो गयी। ये मनुष्य लब्धिअपर्याप्त हो या द्वीन्द्रिय अपर्याप्त हो, त्रीन्द्रिय अपर्याप्त हो, चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त, असंज्ञी अपर्याप्त या संज्ञी अपर्याप्त पंचेन्द्रिय तिर्यंच हो उसका बंध जब हो रहा है तब ये २५वाला ग्रुप बंधेगा। एकेन्द्रिय पर्याप्त सहितवाले को भी २५ का देखा। संख्या सेम है परंतु प्रकृतियां अलग हैं। यह कौनसा कर्मपद लिया ? यानी द्वीन्द्रिय अपर्याप्त से लेकर मनुष्य अपर्याप्त तक यह २५वाला बंध होगा।

श्रोता: त्रस अपर्याप्त सब इसमें आयेंगे ? हां, त्रस अपर्याप्त सब इसमें आयेंगे।

त्रस अपर्याप्त कहने से लब्धिअपर्याप्त होते हैं। देव त्रस हैं परंतु उनमें लब्धिअपर्याप्त नहीं होते। हमने क्या देखा था कर्मपद में और जीवपद में ? देव सभी पर्याप्त ही हैं, नारकी भी पर्याप्त ही हैं, उनमें यह अपर्याप्तवाला भेद नहीं होगा। *श्रोता: अपर्याप्त के अंगोपांग का बंध हो सकता है ?* अपर्याप्त जीव को अंगोपांग कैसे है ? क्योंकि त्रस है न तो पहले समय से अंगोपांग का उदय चालू हो जाता है। अभी उसकी रचना पूर्ण नहीं होती है, परंतु उदय तो शुरू हुआ था पहले ही समय से। *श्रोता: उदय भी ?* हां, उदय क्योंकि अभी हमने नामकर्म के उदयस्थान नहीं देखे न ! अभी इन नामों से थोड़े परिचित होंगे न, प्रकृतियों के नाम बार-बार सुनने से, बोलने से याद हो जायेंगे।

श्रोता: पर्याप्त जीव पहले ही समय से अंगोपांग का बंध करते हैं ? त्रस पर्याप्तों को पहले ही समय से अंगोपांग का उदय है, हां जब शरीर के परमाणु ग्रहण करना शुरू करता है। *श्रोता: अपर्याप्त भी ?* अपर्याप्त भी, अपर्याप्त की भी आयु कितनी है ? *श्रोता: श्वास का अठारहवां भाग।* श्वास का अठारहवां भाग; श्वास का अठारहवां भाग यानी कितना ? ये कौनसा श्वास है ? पहले मैंने आपको बताया था न ! ४८ मिनट में ३७७३ उच्छ्वास होते हैं। कौनसे उच्छ्वास ? ये वाले नाड़ी के ठोके, हेल्दी मनुष्य के। नहीं तो बीमार पड़े तो नाड़ी फ़ास्ट हो जावे और बच्चे की बहुत फ़ास्ट होती है। एक मिनट में तो १४० हो जाते हैं गर्भ के बालक की। उनको नहीं लेना, युवान लेना। तो हम लेते हैं उसका उत्तर ७८ आता है। ३७७३ उच्छ्वास ४८ मिनट में होते हैं तो एक मिनट में कितने होंगे ? तो ७८.६ ऐसा कुछ उसका उत्तर आता है। इतने ७८ उच्छ्वास के लिये के लिये एक मिनट यानी ६० सेकंड इतना काल लगता है, तो एक उच्छ्वास के लिये कितना लगता है ? करीबन पौना सेकंड उत्तर आता है। अब यह पौने सेकंड का अठारहवां भाग कर दो, थ्री फोर्थ मल्टिप्लाइड बाय वन अपॉन एटीन। कर रहे क्या ? हां, कर लो। २४वां भाग कुछ आयेगा यानी समझ लो न ! वन ट्वेंटी फोर्थ या वन ट्वेंटी फिफ्थ ऑफ़ ए सेकंड जो कुछ यथायोग्य, इतनी है उसकी एक आयु। फिर भी उसमें कितनी आवली हैं ? देखो, जघन्ययुक्तासंख्यात समयों की एक आवली है और ये जो क्षुद्रभव है, क्षुद्रभव किसको कहना ? ये जो हमने वन ट्वेंटी फोर्थ ऑफ़ ए सेकंड देखा। उसमें संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवली होती हैं। एक आवली और एक समय को हम अंतर्मुहूर्त कह सकते हैं। ये कितना बड़ा अंतर्मुहूर्त हुआ क्योंकि लब्धिअपर्याप्त के भी आयु के $\frac{२}{३}$ यानी दो तृतीयांश बीत गये, वन थर्ड बाकी है तब उसका आयु का बंध

होगा और आयु का बंध हमेशा अंतर्मुहूर्त में ही होता है, कभी एक-दो समय में नहीं होता। बंध होते ही या बंध होते-होते मरण नहीं होता। आयु का बंध पूर्ण होने पर और एक अंतर्मुहूर्त बीत जाता है फिर मरण आता है यानी अंतर्मुहूर्त भी कितने छोटे होंगे ! उनकी पूरी आयु में कितने सारे अंतर्मुहूर्त बीत जाते हैं और ये केवलज्ञानगम्य बातें हैं। *श्रोता: पर्याप्ति पूरी नहीं होती उनकी ?* पर्याप्ति पूरी नहीं होती उनकी। अपर्याप्त अवस्था में ही मरण है, एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं होती। सभी पर्याप्ति चालू तो हो गयी हैं परंतु एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती है ऐसी बात है।

यह संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी की बात हमने अभी-अभी जयधवला में पढ़ी १४वें भाग में। पहले हम भी समझते थे कि एक सेकंड में कुछ सैंकड़ों आवली होती होंगी, हां, सैंकड़ों कहो, हजारों कहो आवली और ऐसी कितनी आवली होती हैं ? एक सेकंड में कितनी होती होंगी ? अभी हमने देखा न एक सेकंड में संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवली और अभी तो सायन्स ने इतनी तरक्की कर दी कि नॅनो सेकंड निकाला। *श्रोता: पीको।* पीको, वह कितना - संख्यात है कि असंख्यात है ? अरे वह संख्यात है, काउंटेबल है न ! संख्यात है, हां, काउंटेबल है और हमें ऐसा लगता है सायन्स ने तरक्की की। सायन्स प्रूव्ह करेगा तो हम मानेंगे।

हमारे पास एक पुस्तक आयी कहीं नार्थ हिंदुस्तान से कहीं से आयी है होशंगाबाद से आत्मसंशय नाम की। एक बाजू सभी करणानुयोग की बातें लिखी और एक बाजू सारी सायन्स की बातें लिखी हैं - यह ऐसा है, यह ऐसा है, यह ऐसा है। आपकी राय लिखो, हमने कहा हमारे पास समय नहीं है। इसे शास्त्र भी हम नहीं कहेंगे - ऐसे कुशास्त्र पढ़ने के लिये हमारे पास समय भी नहीं है। उन्होंने और भी किसी-किसीके मत उसमें लिखे हैं किसका क्या मत है। पहले पेज में लिखा था, मेरे पत्नी और मेरे लड़के कहते हैं कि आप कौनसे नरक का बंध कर रहे हैं आपको पता है क्या ! सच में लिखकर भेजता है और लिखता है ये पूरी पुस्तक पढ़ो। ऐसी कचरा पट्टी हम नहीं पढ़ते। जिसको सर्वज्ञ पर विश्वास नहीं है उसकी बातें पढ़ने से क्या फायदा है ? अपना समय बर्बाद करने से क्या फायदा है ?

सबसे पहली बात है, जिनागम पढ़ने के पहले सर्वज्ञ के स्वरूप का निश्चय करना, निर्णय करना। उसके बिना इस बात पर भरोसा नहीं होगा और बस प्रश्नचिन्ह

और उलझनें पैदा होंगी। अपना समय भी बर्बाद और दूसरे का समय भी बर्बाद। यह ऐसी ही भ्रान्ति चलती है तो अभी क्या करें ? एक तो अभ्यास करना चाहिये, शुरू से आद्योपांत अभ्यास और सभी अनुयोगों का होना चाहिये। सर्वज्ञ के निर्णय सहित हम बात पढ़ेंगे तो बिलकुल सब समझ में आवे ऐसी बात है। कहीं पर भी सायन्स के साथ विरोध नहीं है। सर्वज्ञ भगवान नहीं जानते थे क्या यह सब सायन्स ? कौनसा सायंटिस्ट, कब, कौनसा इन्व्हेन्शन करनेवाला है ? उनके ज्ञान में नहीं आया था क्या ? हजार साल पहले भी सायंटिस्ट थे, आज के सायंटिस्ट उनकी सब बातें मान रहे हैं क्या ? वे कहेंगे वह झूठ है जो आज हम कह रहे हैं वह सत्य है। आज से १०० साल के बाद, १००० साल रहने की भी जरूरत नहीं, पचास साल के बाद कहेंगे वह सारा झूठ था। आज हम कह रहे, यह हमने प्रूव्ह कर दिया न, यह सत्य है। सर्वज्ञ का केवलज्ञान है और हमारा क्षयोपशमज्ञान है - इतनासा ज्ञान और फिर भी उस ज्ञान के आधार से हम सर्वज्ञ को प्रूव्ह करना चाहते हैं। जो क्षायिकज्ञानी है, केवलज्ञानी हैं उनके ज्ञान की क्या महिमा है ! हमारा इतनासा ज्ञान है और वह भी किसी क्षेत्र का कुछ ज्ञान है, सब क्षेत्र का नहीं है। अपने-अपने विषय में थोड़ा अधिक जान रहे हैं और उसका आधार लेकर सर्वज्ञ को जांचना चाहते हैं, डिसप्रूव्ह करना चाहते हैं, प्रूव्ह नहीं करना चाहते।

श्रोता: तुच्छ ज्ञान से केवलज्ञान को नापना चाहते हैं। नापना चाहते हैं। हमेशा दिनेशजी बताते हैं न, बचपन में वे पिताजी के साथ उनके ऑफिस जाते थे। हमारे ससुरजी का चौपाटी सी फेस के सामने ऑफिस था। पिताजी बच्चे को लेकर जाते थे तो दिनभर क्या करे ! भेल खानी है न शाम को तो मैं क्या करूं अभी ? पिताजी भी होशियार थे, उन्होंने इतनीसी कुछ बकेट दे दी, कहा जाओ समुद्र का पानी नापों शाम तक कितना होता है ! कितनी बकेट हो जाता है ? जरा नाप लो। एक बड़ी बकेट और एक छोटा मग दे दिया और कहा उससे पानी नापो। ऐसी हमारी परिस्थिति है। हमारे इतनेसे ज्ञान से- वह भी अपना ज्ञान नहीं है; किसी सायंटिस्ट ने कुछ लिखा है वह सायन्स भी पूरा नहीं जानते। कुछ-कुछ सुना हुआ, कहीं-कहीं पढ़ा हुआ, टीव्ही पर देखा हुआ इतनी बात हमें मालूम है। पूरा सायन्स भी हमें मालूम नहीं है, उसके आधार से हम सर्वज्ञ को प्रूव्ह करना चाहते हैं। क्या यह हमारी बुद्धि का दिवाला नहीं है ?

देखो, जो सरल परिणामी हैं, ये सम्यक्त्व के भेद बतायें हैं न - आज्ञा सम्यक्त्व; ऐसे सरल परिणामी हैं कि सर्वज्ञ हैं ऐसा उन्हें बिलकुल विश्वास है। केवलज्ञानी सब कुछ

जानते हैं और जो कुछ सर्वज्ञ का उपदेश है उसे वे लोग सरल बुद्धि से, सरल मति से ग्रहण करते हैं और उनको सम्यग्दर्शन हो जाता है। जरूरी नहीं कि सब इतना आगम पढ़े चालीस-चालीस साल तक। उनके तो सम्यग्दर्शन हो जाता है और कोई पूरा ग्यारह अंग नौ पूर्व पढ़े और सम्यग्दर्शन नहीं होता है। क्यों नहीं होता ? कहीं न कहीं अंदर तो संशय पड़ा है। यह कैसे हो सकता है ? यह कैसे हो सकता है ? पंचमकाल का टेढ़ा जीव है, वक्र परिणामी है। वह क्या कहते हैं ? यह कैसे हो सकता है ? यह क्यों इतना गला फाड़-फाड़कर पांच-पांच दिन में तीस-तीस घंटे क्यों बोल रही हैं ? इनमें इनका कुछ फायदा होना चाहिये। यह हमारे अनंतभाई १०० रुपये में गुरुदेवश्री के नौ हजार, साढ़े नौ हजार प्रवचन दे रहे हैं इनमें इनका तो कुछ फायदा होना चाहिये। जो वक्र परिणामी है तो वह दूसरे की भी वक्रता ही ढूंढ़ता है, वह भले नहीं है तो भी अपने दिमाग से सोचता रहता है।

हां, बिभीषण की कथा याद दिला रहे हैं। पता है न, रामायण तो सबको पता है। राम रावण की कथा मालूम है कि नहीं ? रावण के भाइयों ने उसे बहुत समझाया था कि तू यह जो कर रहा है बहुत गलत कर रहा है। रावण को समझाया कि यह बात सही नहीं कर रहा है। बिभीषण ने उसका पक्ष छोड़ दिया और राम के पास चला गया। आज मैं आपके पक्ष में आना चाहता हूं। अपने यहां चलता हैं न पॉलिटिक्स में हां। आज तो स्वार्थ के लिये करते हैं, परंतु वह बिभीषण तो सिन्सिअर था। उसने राम से कहा कि मैं तो रावण का पक्ष नहीं लेना चाहता, अभी मैं आपके पक्ष में आ जांऊगा। तो लक्ष्मण ने क्या बोला ? अरे, इसमें इसका कुछ दाव है, यह अंदर की अपनी कोई गुप्त इन्फॉर्मेशन लेना चाहता है। हम आपको नहीं लेंगे हमारे पक्ष में, तो बिभीषण कहते हैं कि मैं अगर झूठ बोल रहा हूं और मैं अगर ऐसा सोच रहा हूं तो मरकर मैं पंचमकाल का मनुष्य हो जाऊंगा। देखो, हम अभी पंचमकाल के हैं, हम भोगभूमि की बातें करते हैं यहां पर, चतुर्थकाल की बातें करते हैं। वैसे वहां चतुर्थकाल के जीव भी पंचमकाल के जीव कैसे होंगे ऐसा वे भी सुनते थे और वह सुनकर उनको सम्यग्दर्शन होता था। मालूम है क्यों ? अरे ! ऐसे-ऐसे वक्र परिणामी जीव होते हैं, कैसी यह दुर्दशा हो जायेगी। चलो अभी अपना काम कर लो, हां।

हमने अभी २५वाला स्थान कहां देखा ? दोरूप से देखा। एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत,

युत कहो या सहित कहो २५ का हो सकता है। पर्याप्त है इसलिये दो कौनसी ज्यादा बांधी उसने ? परघात और उच्छ्वास। अब हमको दो अधिक चाहिये परंतु त्रस में घटित करना है तो क्या करेंगे ? उसको अपर्याप्त कर देंगे। त्रस अपर्याप्त सहितवाला कौनसे दो एक्स्ट्रॉ बांधेगा ? *श्रोता: संहनन और अंगोपांग।* संहनन और अंगोपांग। २३वाला भी स्थान हमने जान लिया और २५वाला भी जान लिया। पुस्तक में देखना नीचे से तीसरा पॅरेग्राफ- **इनमें से द्वीन्द्रियजाति घटाकर त्रीन्द्रियजाति मिलाने पर त्रीन्द्रिय-अपर्याप्तयुत पच्चीस का स्थान होता है।** अभी द्वीन्द्रिय के बदले त्रीन्द्रिय कहो, त्रीन्द्रिय के बदले चतुरिन्द्रिय कहो, चतुरिन्द्रिय के बदले पंचेन्द्रिय कहो, क्योंकि जाति असंज्ञी नहीं होती, जाति पंचेन्द्रिय कहलायेगी। वहां तिर्यंचगति के बदले पंचेन्द्रियजाति कह कर मनुष्यगति कह दो। तो **इनमें से त्रीन्द्रियजाति घटाकर चतुरिन्द्रियजाति मिलाने पर चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्तयुत** कितने का होगा ? **पच्चीस का**, वही चल रहा है केवल जाति बदल दी है।

इनमें से चतुरिन्द्रियजाति घटाकर पंचेन्द्रियजाति मिलाने पर पंचेन्द्रिय-अपर्याप्तयुत पच्चीस का स्थान होता है। इनमें से तिर्यंचगति घटाकर और **मनुष्यगति मिलाने पर**, अपर्याप्त वैसे का वैसे रखा। तो **मनुष्य-अपर्याप्तयुत पच्चीस का स्थान होता है।** ऐसे ये २५ प्रकृतिरूप बंधस्थान छह हुये। ये यहां ब्रॅकेट में लिखे हैं कोष्टक में। अपने मूल ग्रंथों में ऐसे लिखने की पद्धति थी वह ऐसा बताया है। ऊपर हमने एअ लिखा था और यहां एप और ये सारे ही २५वाले स्थान हैं। एकेन्द्रिय पर्याप्त, उसका एक, द्वी अब यह ये सबके लिये अ लास्ट में लिखा यानी द्वीन्द्रिय-अपर्याप्त अ, त्रीन्द्रिय-अपर्याप्त अ, चतुरिन्द्रिय-अपर्याप्त अ, पंचेन्द्रिय-अपर्याप्त अ और मनुष्यगति के साथ अपर्याप्त अ। ये सारे ही २५वाले स्थान हैं। २५ का बंधस्थान है तो ये कौन-कौनसे हैं ? एकेन्द्रिय का पर्याप्त संबंधी होगा या बाक़ी सारे द्वीन्द्रिय आदि तिर्यंच, मनुष्य अपर्याप्त सहित के भी २५ के बंधस्थान होंगे। अभी तक हमने २३ का कौनसा है और २५ का कौनसा है उसकी बात देखी। इसके बाद २६, २८, २९ की बात हम आगे बढ़ायेंगे। अभी हम यहीं रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५०. नामकर्म के बंधस्थान

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड की रचना की है और पं. टोडरमलजी ने उसीकी भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है उसका नाम है सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कर्मकाण्ड। उसका हिंदी अनुवाद हम पढ़ रहे हैं और नामकर्मों के बंधस्थानों की अपनी चर्चा चल रही है।

एक जीव एक काल में नामकर्म की जितनी प्रकृतियां बांधता है, उसकी संख्या कितनी है उसको हम कहेंगे उतनी प्रकृतिवाला बंधस्थान। ऐसे कितने बंधस्थान हैं ? कोई २३वाला, कोई २५वाला, कोई २६वाला, कोई २८वाला, कोई २९वाला, कोई ३०वाला, कोई ३१वाला, कोई १वाला बंध करता है। उसमें २३ का बंध कौन करता है उसकी बात नहीं, २३ का बंध किस कर्मपद के सहित बंधता है उसकी बात है। हमने देखा था एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला २३ प्रकृति का बंधस्थान है। कम से कम २३ प्रकृति का बंध होता ही है हमने देखा था। उसमें ९ ध्रुवबंधी हैं, कौनसी हैं ध्रुवबंधी ? तेजस, कार्माण, अगुरुलघु, उपघात, निर्माण और वर्णादि चार ये ९ ध्रुवबंधी, हर समय बंधनेवाली हैं। ९ युगल में से हैं जैसे त्रसादि चार और आगे स्थिर आदि छह युगल हैं, उनमें से स्वर को नहीं लेना क्योंकि स्वर नामकर्म त्रस को बंधेगा, वह भी पर्याप्त को बंधेगा इसलिये उसको नहीं लेना। ये ९+९=१८ हो गये और अन्य ५ जो पिंड प्रकृतियों में से बंधती हैं - एक है गति, एक है जाति, एक है शरीर, एक है संस्थान और एक है आनुपूर्वी। ९+९+५=२३ इतना बंध कम से कम होगा ही होगा।

इसमें यथायोग्य एकेन्द्रिय का यानी उसके साथ स्थावर भी होगा, तिर्यंचगति भी बंधेगी। परंतु अपर्याप्त हम रखेंगे तो उसमें और कोई ॲडिशनल, कोई एक्स्ट्रॉ, कोई अधिक प्रकृतियां नहीं बंधेंगी। एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला, सहित की बात क्यों कह रहे हैं ? क्योंकि एकेन्द्रियजाति बंध ही रही है, अपर्याप्त कर्म बंध ही रहा है और उसके साथ-साथ सब मिलकर कितनी प्रकृतियां बंधती हैं ? २३ बंधती हैं। एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत कहो या सहितवाला, यह २३ प्रकृति का बंधस्थान है। एकेन्द्रिय की यह बात ख्याल में आयी ? अब आगे बढ़ते हैं - इसमें अगर हम एकेन्द्रिय पर्याप्तवाला लेते हैं, तो पहले भी एकेन्द्रिय था; पहले अपर्याप्त था उसके बदले हमने पर्याप्त कर लिया। तो क्या वह भी २३ का होगा ? तो कहते हैं, नहीं क्योंकि एकेन्द्रिय यानी स्थावर पर्याप्त

सहित के और कौनसी प्रकृति बंधेंगी ? परघात और उच्छ्वास। एकेन्द्रिय पर्याप्त के साथ परघात और उच्छ्वास और बंधेंगी। पहले तो २३ थी ही थी, उसके साथ परघात और उच्छ्वास और बंधेंगी। तो एकेन्द्रिय पर्याप्त सहितवाला यह २५ का बंधस्थान होगा।

क्या यह २५ का बंधस्थान और किसीके हो सकता है ? त्रसों में हो सकता है तो उसको हम सोचेंगे। स्थावर के बदले हमने त्रस कर दिया। २३ की ही प्रकृति हम देख रहे हैं, बेसिक २३ लेंगे, तो स्थावर के बदले त्रस कर दिया और अभी हमने २५ का जो देखा था पर्याप्त का, उसके बदले अपर्याप्त रखेंगे तो त्रस अपर्याप्त रखा। अपर्याप्त रखा है तो अपर्याप्त में तो हमें परघात, उच्छ्वास नहीं लेना है, परंतु त्रस है वह पर्याप्त हो या अपर्याप्त हो, उसमें कौनसे दो होंगे ? संहनन और अंगोपांग क्योंकि त्रस अपर्याप्त लिया है। त्रस पर्याप्त लेते तो संहनन लेना की नहीं लेना वह सोचना पड़ता। क्यों ? देव भी त्रस पर्याप्त है परंतु देवगति सहित संहनन नहीं बंधेगा। हम अपर्याप्तों की बात देख रहे हैं। त्रस अपर्याप्त जो लब्धिअपर्याप्त हैं वे कौन-कौनसी पर्यायों में होते हैं ? द्वीन्द्रिय हैं, त्रीन्द्रिय हैं, चतुरिन्द्रिय हैं, संज्ञी या असंज्ञी पंचेन्द्रिय हैं, मनुष्य हैं - इनमें अपर्याप्तवाला जो भेद है वह पाया जाता है। अपर्याप्त यानी यहां लब्धिअपर्याप्त की बात कर रहे हैं क्योंकि अपर्याप्त नामकर्म सहित जो होते हैं उन लब्धिअपर्याप्त की ही बात है। हमने त्रस लिया, उसके साथ अपर्याप्त प्रकृति ली, तो उसमें और दो कोई प्रकृतियां जोड़नी हैं। कौनसी हैं वे ? संहनन है और अंगोपांग है।

यह लब्धिअपर्याप्त है, छठे नंबर का संहनन इसके साथ ले लेना। कौनसा है छठे नंबर का संहनन ? असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन। और अंगोपांग ? लब्धिअपर्याप्त के लिये कौनसा अंगोपांग होगा ? औदारिकअंगोपांग। इसतरह से हमने देखा यह २५ का स्थान है वह द्वीन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला भी होगा, त्रीन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला भी होगा, चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त सहित, पंचेन्द्रिय अपर्याप्त सहित यानी वह संज्ञी-असंज्ञी दोनों में समझना, परंतु जाति पंचेन्द्रिय ही कहलायेगी और मनुष्य अपर्याप्त सहित भी यह स्थान होगा। तो यह २५ के स्थान इतने अलग-अलग प्रकृतियों सहितवाले बंधते हैं। इनको बांधनेवाले कौन हैं ? मनुष्य और तिर्यंच यथायोग्य कोई भी बांधेंगे। परंतु जब बंधस्थान कहते हैं और किसी कर्मपद का नाम लिया है हमने - त्रस अपर्याप्त सहित, तो ये सब मिलकर प्रकृतियां कितनी हैं ? २५ हैं। तो अभी तक हमने २३ का भी स्थान देखा और २५ का भी देखा। अब थोड़ा और आगे बढ़ेंगे - २६ का देखना है।

२६ का देखना है तो त्रस सहित में २६ का नहीं हो सकता, फिर एकेन्द्रिय की बात देखेंगे। २५वाला हमने एकेन्द्रियवाला देखा था। कौनसा था एकेन्द्रिय २५वाला ? पर्याप्तवाला। एकेन्द्रिय पर्याप्त में और कोई एक प्रकृति हम ॲड करेंगे तो २६ का हो सकता है। तो ऐसी कौनसी प्रकृति हो सकती है ? आतप। एकेन्द्रिय पर्याप्त में हमने जो अन्य प्रकृति देखी उसके साथ आतप को भी एक्स्ट्रॉ जोड़ दो तो २६ का होगा या आतप के बदले उद्योत को रखो। एकेन्द्रिय पर्याप्त आतप सहित २६ का होगा या एकेन्द्रिय पर्याप्त उद्योत सहित २६ का होगा। यह २६ का स्थान ख्याल में आया ?

एकेन्द्रिय पर्याप्त है इसलिये उसमें हमने परघात और उच्छ्वास जोड़े तो २३ + २ = २५ हुये। किसीके आतप या उद्योत का भी बंध हो सकता है, इसलिये उसको भी हमने उसमें ॲड कर दिया। तो २६वाले ये दो स्थान हो जायेंगे - आतपयुतवाला एक और उद्योतयुतवाला एक। यह २६ की बात समझ में आयी ? अभी तक २३ का देखा, २५ का देखा, २६ का देखा। एकेन्द्रियों में कौन-कौनसे स्थान हो सकते हैं ? एकेन्द्रियों में का अर्थ होता है एकेन्द्रिय प्रकृति सहित। एकेन्द्रिय सहितवाले कौन-कौनसे स्थान हो सकते हैं ? २३, २५ और २६। २३वाला कौनसा है ? एकेन्द्रिय अपर्याप्त सहितवाला; २५वाला ? एकेन्द्रिय पर्याप्त सहितवाला और २६वाला ? एकेन्द्रिय पर्याप्त और आतप सहित या एकेन्द्रिय पर्याप्त उद्योत सहित। यह २६वाला त्रस प्रकृति सहित नहीं बंधेगा, २६वाला स्थान अपर्याप्त सहित भी नहीं होगा। अब आगे बढ़ते हैं हम।

४८८ पृष्ठ पर, नीचे के पॅरेग्राफ में नीचे से दूसरी लाइन- २५ प्रकृतिरूप छह स्थान एकेन्द्रिय पर्याप्त, द्वीन्द्रिय अपर्याप्त, त्रीन्द्रिय अपर्याप्त, चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त और पंचेन्द्रिय अपर्याप्त और मनुष्य अपर्याप्तयुत होते हैं। हमने देखे थे, याद है न ! **पुनश्च उस मनुष्य-अपर्याप्तयुत पच्चीस के स्थान में से त्रस, अपर्याप्त, मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन और औदारिकअंगोपांग ये छह प्रकृतियां घटाकर**, अब उसके बदले कौनसे डालेंगे ? **स्थावर, पर्याप्त, तिर्यंचगति, एकेन्द्रियजाति, उच्छ्वास, परघात ये छह और आतप इन सात प्रकृतियों को मिलाने पर एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत छब्बीस का बंधस्थान होता है।** या यह घटाओ, यह मिलाओ, इस झंझट को छोड़कर डायरेक्ट निकालते हैं। पहले हमने एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत २६ का स्थान देखा था- २३ बेसिक ली थी, पर्याप्त लिया था इसलिये उसमें

परघात और उच्छ्वास मिलाया था। अब केवल उसमें एक आतप डाल दिया। कितने हो जायेंगे ? २६। अब आतप को निकाला और उद्योत को मिलाना, तो **आतप घटाकर, उद्योत मिलाने पर भी एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत छब्बीस का ही बंधस्थान होता है।** यह उद्योत प्रकृति एकेन्द्रिय सहित भी बंधती है क्योंकि एकेन्द्रियों के उसका उदय पाया जाता है। उस पर्याय सहितवाली बंधनेवाली है, उसका उदय वहां पाया जाता है। पहले हमने आतप सहित २६ देखा, अब आतप को निकाला और उद्योत रखा तो उद्योत सहित २६ का हो जायेगा। **ये छब्बीस प्रकृतिरूप दो स्थान हुये।** अब आगे देखते हैं।

२३, २५ और २६ के बाद २७वाला कोई स्थान नहीं है क्योंकि २७ प्रकृतिवाला ऐसा कोई ग्रुप नहीं बंध सकता। अब २८वाला होगा, २८ प्रकृति के स्थान अब देखेंगे। यह २८ गिनने हैं हमें, अभी हमें ये सब याद हो गये न ? २३ में ९ ध्रुवबंधी हैं और युगल में से ९ हैं और ५ अन्य हैं। तो **नौ ध्रुवबंधी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक,** ये चार ले लिये। **स्थिर-अस्थिर में से एक, शुभ-अशुभ में से एक** यानी या तो स्थिर बंधेगी या अस्थिर बंधेगी; दोनों में से एक का ही बंध हो सकता है। शुभ या अशुभ में से एक। शुभ ही बंधेगी क्योंकि अभी हम देवगति के साथ बंधनेवाली बातें देख रहे हैं। ये सारे प्रकृतियों के नाम ऐसे हैं, जब जीव देवगति बांध रहा है तब ये बंधती हैं। किसीके स्थिर बंधेगी या एक ही जीव को कभी स्थिर बंधेगी, कभी अस्थिर बंधेगी। कहते हैं स्थिर या अस्थिर, शुभ या अशुभ में से एक; परंतु देवगति बांध रहा है वह **सुभग** को ही बांधेगा, **आदेय** को ही बांधेगा। **यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में से एक,** यहां ऑप्शन है। **देवगति, पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, प्रथम संस्थान** यानी **समचतुरस्रसंस्थान**, **देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकअंगोपांग, सुस्वर, प्रशस्त विहायोगति, उच्छ्वास और परघात, इन अट्ठाइस प्रकृतिरूप देवगतियुत अट्ठाइस का स्थान होता है।**

फिर से, हमारे सामने जो चार्ट है उसके आधार से देखेंगे। २३ बेसिक हैं, २३ में ९ ध्रुवबंधी हैं और ९ युगल में से हैं। अब युगल की बात देखते हैं - पहले त्रसादि चार हैं, देवगति के साथ तो ये चार ही बंधेंगी - त्रस है, बादर है, पर्याप्त है और प्रत्येक है। आगे की जो ६ हैं, छहों की छहों हो जायेगी। पहले हम ये पांच की बात करेंगे क्योंकि स्वर को हमने २३ में इन्क्लूड नहीं किया था, फिर भी यह त्रस पर्याप्त है इसलिये बाद में हम उसमें मिला देंगे। यहां स्थिर होगा या अस्थिर, शुभ होगा या अशुभ वहां ऑप्शन है। परंतु देवगति सहित बंधनेवाले में सुभग का ही बंध होगा, आदेय का ही बंध होगा, परंतु

यशस्कीर्ति भी बंध सकती है या अयशस्कीर्ति भी बंध सकती है फिर वहां ऑप्शन है। अन्य पांच हैं उनमें से कौनसी बंध रही है ? देवगति बांध रहा है तो कौनसी जाति बंधेगी उसके साथ ? पंचेन्द्रियजाति। देवगति बांध रहा है, तो देवों के कौनसा शरीर होता है ? वैक्रियिक। जिस समय बांध रहा है उस समय वैक्रियिक शरीरनामकर्म का बंध है। देवों के कौनसा संस्थान होता हैं ? समचतुरस्रसंस्थान। देवगति सहित समचतुरस्रसंस्थान का ही बंध होता है और उनके आनुपूर्वी कौनसी होगी ? देवगत्यानुपूर्वी। ये २३ प्रकृतियां तो हमने सोच ली।

अब आगे की - यह त्रस पर्याप्त है इसलिये परघात और उच्छ्वास भी बंधेंगी, २५ हो गये। अभी त्रसों में यह संहनन और अंगोपांग हैं, परंतु देवगति है, वैक्रियिकशरीर में संहनन नहीं होता तो अकेला वैक्रियिकअंगोपांग इसमें मिला दो, २६ हो गये। अब जो त्रस पर्याप्त होते हैं उनके स्वर नामकर्म और विहायोगति भी होते हैं। कितने हो गये ? २८ हो गये। अब मात्र देवगति बांध रहा है, तो देवगति के साथ आतप और उद्योत नहीं बंधेगी, वह तिर्यंचगति के साथ बंधती है। तीर्थंकर बंधेगी तो बंधेगी, आहारक बंधेगी तो बंधेगी उसकी बात बाद में करेंगे। अपना २८ का बंधस्थान चल रहा है, हां, देवगति जो बांधता है वह मिनिमम २८ बांधता है। देवगति बांधते हुये तीर्थंकर, आहारकद्विक बंधेंगी तो उसकी चर्चा बाद में आयेगी अलग। वह बंधस्थान बदलेगा। यहां तो देवगति बांधनेवाले जीवों की बात चल रही है।

मेरा प्रश्न है - कौनसी गति के जीव देवगति का बंध करते हैं ? दो गति - मनुष्य और तिर्यंच; नारकी भी नहीं करते और स्वयं देव भी देवगति का बंध नहीं करते हैं। हमने देखा था देवगति का बंध कौनसे गुणस्थान तक होता है ? आठवें गुणस्थान तक। मिथ्यादृष्टि जीव देवगति का बंध करेंगे या नहीं करेंगे ? करेंगे न, जो मिथ्यादृष्टि हैं मनुष्य और तिर्यंच, देवगति का बंध करेंगे। सम्यग्दृष्टियों को ही भेजेंगे तो कैसे पूरा होगा कोटा उनका ! नीचे के स्वर्गों में मेजॉरिटी मिथ्यादृष्टि हैं। ऊपर-ऊपर जाओ, ग्रैवेयक में तो मेजॉरिटी सम्यग्दृष्टियों की हो जायेगी परंतु नीचे मिथ्यादृष्टि ही ज्यादा हैं। हमने देखा था अज्ञानपूर्वक तप करनेवाले भी जाते हैं, हां, तो तप करो। ये सारी जघन्य भोगभूमि हमने देखी तिर्यंचों की, इतने सभी असंख्यात द्वीपों के तिर्यंच - वे कहां जायेंगे सारे ? देव में चले जाते हैं, वे तो देवगति का ही बंध करते हैं।

अब हमने देवगति का २८वाला बंध देखा। और क्या हो सकता है उसको भी देखेंगे। देखो हम फिर पढ़ेंगे - **नौ ध्रुवबंधी,** यह हमने देख ली। अब नौ युगल में से बात चलेगी। **त्रस, बादर,पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर-अस्थिर में से एक, शुभ-अशुभ में से एक, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में से एक,** अब अन्य पांच में से **देवगति, पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, प्रथम संस्थान यानी समचतुरस्रसंस्थान,** छह में से पहला है, **देवगत्यानुपूर्वी,** यह कौनसा स्थान है ? त्रस पर्याप्तयुत है इसलिये वहां अंगोपांग भी लिया, कौनसा लेना है ? वैक्रियिकअंगोपांग। अभी पर्याप्तों में स्वर नामकर्म का भी उदय आगे चलकर होगा, इनके बंध भी होगा। देव है इसलिये सुस्वर लेना, नारकी होंगे तो हम दुस्वर ले लेंगे। यहां वैक्रियिकअंगोपांग, सुस्वर नामकर्म, विहायोगति में भी प्रशस्त विहायोगति होगी, उच्छ्वास का बंध होगा और परघात का होगा। आपके चार्ट में भी देखना - जो त्रस है, पर्याप्त हो या अपर्याप्त हो, अंगोपांग का तो बंध होगा ही होगा। अभी देव है इसलिये संहनन का बंध नहीं हुआ है इसमें, नीचे की जो लिस्ट है इसमें से संहनन का बंध नहीं हुआ है। परघात का बंध है, उच्छ्वास का है, अंगोपांग का है, स्वर का है और विहायोगति का है। पहले २३ और ५ = २८ हो गये। इसके साथ हमने आहारक और तीर्थंकर को नहीं लिया है अभी इस पोझिशन पर। केवल २८ का बंधस्थान हम देख रहे हैं इसलिये। अब आगे बढ़ेंगे।

२८ का बंध देवगति सहितवाला और नरकगति सहितवाला है, उसको भी बता रहे हैं। २८ का और भी एक स्थान है, जो नरकगति का बंध कर रहा है, उसके भी २८वाला स्थान होगा। देखो **नौ ध्रुवबंधी**, अब जो नरकगति बांध रहा है उसका पॅकेज कौनसा होगा उसको देख रहे हैं न हम। **त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक** यह उसमें भी होगा जैसे देव में देखा था। अब इसमें नियम से अस्थिर लिया है; स्थिर या अस्थिर नहीं लिया है क्योंकि जिस परिणाम से नरकगति का बंध हो रहा है, उस परिणाम से उस काल में अस्थिर नामकर्म बंध रहा है। तो **अस्थिर है, अशुभ है, दुर्भग है, अनादेय है और अयशस्कीर्ति है।** देव में ऑप्शन था- स्थिर या अस्थिर; शुभ या अशुभ और यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति था, परंतु इसमें कोई ऑप्शन नहीं है। नरकगति जिस परिणाम से बंधती है, हमने देखा न मिथ्यादृष्टि के ही बंधती है और वह भी पंचेन्द्रिय तिर्यंच या मनुष्य उसका बंध करेंगे। इनका बंध करनेवाले के जिस समय नरकगति के योग्य परिणाम हैं, उस समय ये सारी अशुभ प्रकृतियां बंध रही हैं। कौनसी अशुभ ?

अस्थिर, अशुभ, दुर्भग, अनादेय, और अयशस्कीर्ति। अब आगे हमने पांच अन्य प्रकृतियां देखी थी उनमें से **नरकगति, पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर**। कौनसा संस्थान लिया ? **हुंडकसंस्थान,** देवों के कौनसा लिया था? समचतुरस्रसंस्थान, देवों के पहले नंबर का और इनके छठे नंबर का, **नरकगत्यानुपूर्वी** ये अन्य पांच में से लिये हैं। अब इनके और क्या-क्या होगा ? **वैक्रियिकअंगोपांग**, अब स्वर नामकर्म में से **दुस्वर** लिया है यहां पर, विहायोगति में से **अप्रशस्त विहायोगति** ली, **उच्छ्वास और परघात** यह इनके भी होंगे। **इन अट्ठाइस प्रकृतिरूप नरकगतियुत अट्ठाइस का स्थान होता है। ये दो अट्ठाइस के बंधरूप स्थान हुये।**

अब तक हमने २३ का देखा एकेन्द्रिय अपर्याप्त में होता है। २५वाला किस-किसमें होता है ? एकेन्द्रिय पर्याप्त या द्वीन्द्रिय अपर्याप्त, त्रीन्द्रिय अपर्याप्त, चतुरिन्द्रिय अपर्याप्त या पंचेन्द्रिय अपर्याप्त या मनुष्य अपर्याप्त। २६वाला ? एकेन्द्रिय पर्याप्त प्लस आतप या एकेन्द्रिय पर्याप्त प्लस उद्योत ये २६ के दो देखे थे। हमने २८ के दो देखे- देवगति सहित २८वाला और नरकगति सहित २८वाला। देवगति सहित प्रकृतियां देखी थी वहां ९ युगल में से ३ जगह ऑप्शन था; स्थिर या अस्थिर, शुभ या अशुभ, यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति। बाकी उनकी शुभ प्रकृतियां ही बंधेगी और नरक में ? कोई ऑप्शन नहीं था, सारी अशुभ प्रकृतियां ही बंधती हैं। यानी स्वर में दुस्वर लिया, विहायोगति में अप्रशस्त विहायोगति ली और ऊपर भी अस्थिर लिया, अशुभ लिया, दुर्भग लिया, अनादेय लिया, अयशस्कीर्ति लिया। २८ प्रकृतिवाले दो स्थान हैं देवगति सहित और नरकगति सहित। जिस नाम के सहित हमने लगाया न, देवगति सहित, उसको हमने कर्मपद कहा था। किसके सहित ? यह जो ३६ कर्मपद हमने पहले सीखे थे वह एक-एक प्रकृति है, उस सहित बंधनेवाले ये बाकी सब मिलकर २८वाला है। एक का नाम लिया या दो-तीन नाम पर्याप्त-अपर्याप्त का भेद करने के लिये। फिर उस सहित सब मिलकर कितनी प्रकृतियां बंधती हैं उसके लिये हमने कर्मपद सीखे थे।

अब २९ प्रकृतिरूप बंधस्थान कहते हैं। अब कौनसा विषय आनेवाला है यह समझने के लिये ब्रॅकेट में डाल दिया। अभी जो हम पॅरेग्राफ पढ़ेंगे, यह २९वाला स्थान होगा। यह २९वाला स्थान कौनसा होगा ? अलग-अलग हो सकते हैं। अलग-अलग कौन-कौनसे २९ के स्थान होते हैं ? वह पढ़कर हम सीखेंगे। देखो **पुनश्च नौ ध्रुवबंधी,**

यह २३ सब के साथ लेना है न, हम पहले बेसिक देखेंगे। **त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक,** यानी त्रस पर्याप्त के बारे में यह कोई है। **स्थिर-अस्थिर में से कोई एक, शुभ-अशुभ में से कोई एक, दुर्भग, अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में से कोई एक, तिर्यंचगति, द्वीन्द्रियजाति,** अभी समझ में आया होगा कि द्वीन्द्रिय पर्याप्त सहितवाले की बात चल रही है। **औदारिकशरीर, हुंडकसंस्थान, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी**। अब इनके संहनन होगा कि नहीं होगा ? द्वीन्द्रिय से लेकर होता है। इनके कौनसा संहनन बंधेगा ? **असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन, औदारिकअंगोपांग, दुस्वर, अप्रशस्तविहायोगति, उच्छ्वास और परघात इनरूप पर्याप्तयुत उनतीस का स्थान होता है।**

द्वीन्द्रिय अपर्याप्तयुत कौनसा स्थान देखा था ? द्वीन्द्रिय अपर्याप्त ? हां, द्वीन्द्रिय अपर्याप्त २५वाला स्थान था। अब हम द्वीन्द्रिय पर्याप्त सहितवाला देख रहे हैं। द्वीन्द्रिय पर्याप्त में उन २५ में और क्या-क्या बढ़ा ? वहां अपर्याप्त में अंगोपांग था, संहनन भी था, तो पर्याप्तों में क्या-क्या बढ़ा ? परघात बढ़ा, उच्छ्वास बढ़ा, स्वर और विहायोगति। देखो, फिर से - हमने द्वीन्द्रिय अपर्याप्त का २५वाला स्थान देखा था। उसमें २३ बेसिक लिये थे और २३ में और दो कौनसे डाले थे ? संहनन और अंगोपांग डाले थे। अपर्याप्त था न, त्रस अपर्याप्त थे; त्रस था, द्वीन्द्रिय अपर्याप्त था इसलिये संहनन और अंगोपांग वहां हमने मिला दिये थे। पर्याप्तों में संहनन और अंगोपांग तो हैं ही हैं। इन ॲडिशन और क्या होगा ? परघात है, उच्छ्वास है, फिर स्वर है और विहायोगति है। वह २५ + ४ = २९ का स्थान हो गया। परंतु जहां ऑप्शनल है, जो युगल में से हमने देखे थे तो उसमें स्थिर या अस्थिर लिया, शुभ या अशुभ लिया, वह यश और अयश है वह भी ले लिया परंतु अन्य हैं वह अशुभ लिये, कौनसे ? दुर्भग और अनादेय। यह कौनसा हुआ ? २९वाला द्वीन्द्रिय पर्याप्त सहितवाला स्थान हुआ। हमने २९वाला एक स्थान देखा।

आगे पढ़ेंगे नीचे का पॅरेग्राफ - **इनमें से द्वीन्द्रियजाति घटाकर, त्रीन्द्रियजाति मिलाने पर, त्रीन्द्रिय पर्याप्तयुत उनतीस का स्थान होता है।** अब कौन बतायेगा कौन-कौनसी प्रकृति होगी ? ऊपर के पॅरेग्राफ में द्वीन्द्रिय के बदले त्रीन्द्रिय डालना है। पुस्तक में अभी हमने पढ़ा न, देखो मैं पढ़ती हूं आप सुनना - **नौ ध्रुवबंधी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर-अस्थिर में से एक, शुभ-अशुभ में से एक, दुर्भग, अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में से एक, तिर्यंचगति, त्रीन्द्रियजाति;** पहले हमने द्वीन्द्रियजाति कहा था, अब वहां केवल त्रीन्द्रियजाति; **औदारिकशरीर, हुंडकसंस्थान,**

तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, असंप्राप्तासृपाटिका संहनन, औदारिकअंगोपांग, दुस्वर, अप्रशस्तविहायोगति, उच्छ्वास और परघात इनरूप क्या होगा ? **त्रीन्द्रिय पर्याप्तयुत उनतीस का स्थान होता है**। यह २९ का दूसरा स्थान हुआ।

अभी किस पर घटित करेंगे ? चतुरिन्द्रिय पर। देखो नीचे लिखा है - **इनमें से त्रीन्द्रियजाति घटाकर चतुरिन्द्रियजाति मिलाने पर चतुरिन्द्रिय पर्याप्तयुत उनतीस का स्थान हो जाता है।** देखो नौ ध्रुवबंधी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक, स्थिर-अस्थिर में से एक, शुभ-अशुभ में से एक, दुर्भग, अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में से एक, तिर्यंचगति, चतुरिन्द्रियजाति, औदारिकशरीर, हुंडकसंस्थान, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन, औदारिकअंगोपांग, दुस्वर, अप्रशस्त विहायोगति, उच्छ्वास, परघात इनरूप चतुरिन्द्रिय पर्याप्तयुत उनतीस का स्थान होता है। अभी तक हमने २९ के स्थान कौन-कौनसे देखे ? द्वीन्द्रिय पर्याप्तयुत, त्रीन्द्रिय पर्याप्तयुत और चतुरिन्द्रिय पर्याप्तयुत। तीन हो गये, अभी आगे और देखेंगे। इनमें से चतुरिन्द्रियजाति घटाकर, पंचेन्द्रियजाति मिलाना। यहां पंचेन्द्रियों में क्या डिफरन्स है ? स्थिर या अस्थिर, शुभ या अशुभ; यहां सुभग भी आया, पंचेन्द्रिय सहितवाला है इसलिये सुभग या दुर्भग; आदेय या अनादेय, यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति। संस्थान में भी छह संस्थान में से किसी एक का बंध होगा, छह संहनन में से कोई एक संहनन बंधेगा, सुस्वर या दुस्वर, प्रशस्त या अप्रशस्त विहायोगति, इनमें से किसी एक-एक प्रकृति का ग्रहण करना तब पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत २९ का स्थान होता है। हमने तिर्यंचगति ही रखी थी, तिर्यंचगति सहितवाला ही यह चल रहा था यानी तिर्यंचगति और पंचेन्द्रिय जाति की यह बात हुयी।

फिर दुबारा देखते हैं। युगल प्रकृतियों में हमने शुभ-अशुभ प्रकृतियों का ऑप्शन देखा है, ऐसा ऑप्शन द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय को नहीं था। किसमें नहीं था ? स्थिर-अस्थिर में था, शुभ-अशुभ में था और यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में था; परंतु दुर्भग-अनादेय तो वही के वही थे, अप्रशस्त विहायोगति भी वही थी, दुस्वर भी वही था। उनमें कोई प्रशस्त प्रकृतियों का ऑप्शन नहीं था। जिस समय पंचेन्द्रियजाति नामकर्म का बंध कर रहा है, तब परिणाम कषायों की अधिक मंदता की ओर के हैं। इनमें से दोनों का ही ऑप्शन हो सकता है। किसीके इसके साथ स्थिर या अस्थिर, शुभ या अशुभ, सुभग या दुर्भग, आदेय या अनादेय, यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति; फिर संस्थान

में छह संस्थान में से कोई एक संस्थान, संहनन में छह संहनन में से कोई एक संहनन, सुस्वर-दुस्वर, प्रशस्त या अप्रशस्त विहायोगति इतनी ऑप्शनल हैं। हम भंगों की चर्चा नहीं करेंगे, जब हम भंग गिनेंगे तो इनके इतने भंग हो जायेंगे। इनमें से किसी एक-एक प्रकृति का ग्रहण करना तब पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत २९ का स्थान होता है। कितने हुये २९ के स्थान ? द्वीन्द्रिय पर्याप्तयुत, त्रीन्द्रिय पर्याप्तयुत, चतुरिन्द्रिय पर्याप्तयुत और पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत। ये सब तिर्यंचगति सहितवाले स्थान थे।

आगे देखते हैं - इनमें से तिर्यंचगति और तिर्यंचगत्यानुपूर्वी घटाकर, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी मिलाने पर मनुष्य पर्याप्तयुत २९ का स्थान होता है। इसका अर्थ ये जो हमने ऑप्शनल प्रकृतियां देखी शुभ-अशुभ की सभी, मनुष्य में भी उनका बंध होगा। मनुष्य सहितवाला; मनुष्यगति बांधनेवाले को ऐसा ही ऑप्शन - जो पंचेन्द्रिय तिर्यंच संबंधी बंध कर रहा है - ऐसा ही बंध मनुष्यगति सहितवाला भी होगा। वहां भी पंचेन्द्रियजाति कहेंगे, डिफरन्स कहां ? वहां तिर्यंचगति कही थी, यहां मनुष्यगति कहेंगे; वहां तिर्यंचगत्यानुपूर्वी कही थी और यहां मनुष्यगत्यानुपूर्वी कहेंगे। बाकी सभी प्रकृतियां वैसी की वैसी, वही की वही होगी। अब चार्ट देखकर कोई कहेंगे मनुष्य पर्याप्त संबंधी जो बंध चल रहा है, कौन-कौनसी प्रकृतियां होगी ? ९ ध्रुवबंधी हैं और ९ युगल हैं। उनमें त्रसादि ४ कौनसी होगी ? त्रस, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक। मनुष्य अपर्याप्त का यदि बंध करेगा तो वह कितनेवाला स्थान होगा? हां, २५वाला।

हम २९ का देख रहे हैं- यहां हमें पर्याप्त को ही लेना है तो त्रस, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक। आगे युगल हैं उनमें हर एक में ऑप्शन लगा लो; स्थिर या अस्थिर, शुभ या अशुभ, सुभग या दुर्भग, आदेय या अनादेय, यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति - ये उनमें हो गये। अन्य जो पांच देखे थे - गति में मनुष्यगति, जाति में पंचेन्द्रियजाति, शरीर में औदारिकशरीर, संस्थान - छहों संस्थान और आनुपूर्वी - मनुष्यानुपूर्वी। इन ॲडिशन, अभी पर्याप्त है तो क्या-क्या लेना है यहां ? परघात लेना, उच्छ्वास लेना और यह त्रस है इसलिये संहनन लेना, अंगोपांग लेना। स्वर में भी दोनों ऑप्शन होंगे सुस्वर-दुस्वर और विहायोगति में भी दोनों ऑप्शन होंगे। इसतरह से यह मनुष्यगति या मनुष्य पर्याप्त सहितवाला २९ का बंधस्थान होगा। कितने हुये ? द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय का ये तिर्यंच के चार हुये, मनुष्यगतिवाला पांचवां हुआ।

देखो, देवगति सहितवाला भी २९ का स्थान होगा। क्यों ? जो देवगति बांध रहा है और उसके साथ तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहा है, उसके वह देवगति सहित २८ प्लस तीर्थंकर प्रकृति तो कितने का होगा ? २९ का। उसीकी बात हम पढ़ेंगे। अब यह देवगति बांध रहा है तो कौन-कौनसी प्रकृति होती हैं ? ९ ध्रुवबंधी, त्रस, बादर, पर्याप्त और प्रत्येक, स्थिर-अस्थिर में से एक, शुभ-अशुभ में से एक, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में से एक, देवगति, पंचेन्द्रियजाति, वैक्रियिकशरीर, प्रथम संस्थान यानी समचतुरस्रसंस्थान, देवगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकअंगोपांग, सुस्वर, प्रशस्त विहायोगति, उच्छ्वास, परघात - यहां तक हमने २८वाले में देखा था। अब एक ही इसमें अधिक लिया - तीर्थंकर। इनरूप देवगतियुत २९ का स्थान होता है। इसको बांधनेवाले कौन हैं ? असंयतादि चार गुणस्थानवर्ती मनुष्य ही बांधता है। तो मेरा प्रश्न है सम्यग्दृष्टि तिर्यंच इसको बांधेगा कि नहीं बांधेगा ? *श्रोता: नहीं।* क्यों नहीं बांधेगा ? तीर्थंकर प्रकृति तिर्यंचों के नहीं बंधती। कोई सम्यग्दृष्टि देव देवगतियुत २९ का बंध करेगा या नहीं करेगा ? *श्रोता: नहीं करेगा।* क्यों नहीं करेगा ? सम्यग्दृष्टि देव मनुष्यगति को बांधते हैं, ख्याल में आयी बात ! मनुष्यगति सहित कौनसा बंध करता है वह बाद में देखेंगे।

अभी हमने २९वाले स्थान देखे। कितने देखे टोटल ? *श्रोता: छह।* फिर गिनते हैं - द्वीन्द्रिय पर्याप्त, त्रीन्द्रिय पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय पर्याप्त, संज्ञी यानी पंचेन्द्रिय पर्याप्त - ये तिर्यंचगति के हो गये। मनुष्यगति पर्याप्त सहितवाला बंध और देवगति प्लस तीर्थंकर। देवगति तीर्थंकर सहितवाला यह स्थान है। हमने ये २९ प्रकृतिरूप अलग-अलग छह बंधस्थान देखे। यहां लिखते हैं **इसतरह उनतीस प्रकृतिरूप छह स्थान कहे। पुनश्च द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत उनतीस के चार स्थान कहे थे।** कौन-कौनसे ? तिर्यंचगति सहितवाले द्वीन्द्रिय पर्याप्त, त्रीन्द्रिय पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय पर्याप्त, और पंचेन्द्रिय पर्याप्त। जो जीव इनका बंध कर रहे हैं - कितने का है यह ? २९ का। इन तिर्यंचगतिवाले जीवों के साथ और एक प्रकृति बंध सकती है। कहते हैं उनमें उद्योत प्रकृति मिला लेना, हां, यह द्वीन्द्रिय सहित भी बंधती है, त्रीन्द्रिय सहित भी बंध सकती है, चतुरिन्द्रिय सहित भी। हमने एकेन्द्रिय सहित भी देखा था परंतु बंधती है तिर्यंचगति सहित इसलिये २९ के स्थानवाले मनुष्य को यहां नहीं लिया है। तिर्यंचों को लिया; द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगति सहितवाले जो स्थान थे,

उन हर एक में उद्योत प्रकृति अगर मिलायेंगे तो उन सभी में २९वाला जो स्थान था उसके बदले ३०वाला स्थान होगा। *श्रोता: उद्योत प्रकृति जो है वह किसी-किसी तिर्यंच को होती है ?* हां किसी-किसी तिर्यंच को होती है यानी कभी-कभी उसका बंध होता है। यदि बंध हुआ तो उसका उदय होगा। द्वीन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय पर्याप्त सहितवाले जो तिर्यंच हैं, वहां २९ का बंध होता है। अब उस सहित यदि उद्योत का भी बंध होगा तो कितने का स्थान होगा ? ३० का हो जायेगा।

यहां द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत २९ के चार स्थान कहे थे। **उनमें उद्योत प्रकृति मिलाने पर पर्याप्त द्वीन्द्रिययुत तीस का, पर्याप्त त्रीन्द्रिययुत तीस का, पर्याप्त चतुरिन्द्रिययुत तीस का और पर्याप्त पंचेन्द्रिययुत तीस का ऐसे चार बंधस्थान होते हैं।** उद्योत प्रकृति बंध रही है न, तो एक एक्स्ट्रॉ ॲडिशनल हो गयी। तो २९ के बदले ३० का स्थान हो गया। अब कहते हैं **पर्याप्त मनुष्ययुत उनतीसरूप स्थान में** मनुष्यगति बांधता है, तो मनुष्यगति बांधनेवाले जीव के कितनी प्रकृति बंधती हैं ? २९ बंधती हैं। यह मनुष्यगति को बांधनेवाले कौन-कौनसे जीव हैं ? यानी बांधनेवाले कौनसी पर्याय के जीव हैं ? चारों गति के जीव मनुष्यगति का बंध कर सकते हैं, पर अब उसमें और एक स्पेशल बात बता रहे हैं, क्योंकि हमें ३० का स्थान देखना है।

पुनश्च मनुष्य पर्याप्तयुत उनतीसरूप स्थान में तीर्थंकर प्रकृति मिलाने पर अब मनुष्यगति भी बांध रहे हैं और तीर्थंकर प्रकृति भी बांध रहे हैं ऐसे कौनसे जीव होंगे ? देव और नारकी। सम्यग्दृष्टि देव, सम्यग्दृष्टि नारकी जो ऑलरेडि तीर्थंकर प्रकृति का बंध प्रारंभ करके मनुष्यगति से वहां गये हैं, वे वहां जाने पर मनुष्यगति और तीर्थंकर ऐसा बंध करेंगे। तो कितने का बंध होगा वह ? ३० का होगा। **असंयत देव और नारकी के बंधयोग्य मनुष्यगतियुत तीस का स्थान होता है। विशेष इतना है कि यहां स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति में से किसी एक-एक प्रकृतियुत स्थान जानना।** तीर्थंकर प्रकृति हर समय बंधती है तो उन जीवों के परिणामों में भी तारतम्यता होगी न। कभी संक्लेशरूप परिणाम होंगे, कभी विशुद्धिरूप भी होंगे तो ये स्थिर-अस्थिर वगैरह सबका बंध होगा।

अभी तक ३० के कौन-कौनसे स्थान देखे ? द्वीन्द्रिय पर्याप्त उद्योत सहित,

त्रीन्द्रिय पर्याप्त उद्योत सहित, चतुरिन्द्रिय पर्याप्त उद्योत सहित, पंचेन्द्रिय पर्याप्त उद्योत सहित, फिर मनुष्यगतियुत और तीर्थंकर - ये पांच देखे अभी तक। अब ३० का और एक स्थान देखेंगे। **देवगतियुत उनतीस के स्थान में तीर्थंकर प्रकृति घटाकर** यानी ऑर्डिनरि देवगति का २८ का ले लो न, अपनी भाषा में जो जीव देवगति बांधता है तो २८ का बंध करता है। अब उसके सहित **आहारकद्विक मिलाने पर** यानी ऑर्डिनरि जो देवगति बांधता था उसके साथ-साथ आहारकद्विक का भी बंध कर रहा है; तीर्थंकर प्रकृति नहीं बांध रहा है, आहारकद्विक बांध रहा है। तो पहली २८ + २ = ३० हो गये। **देवगतियुत तीस का स्थान होता है।** इसको बांधनेवाले कौन हैं ? तो **अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती बांधता है।** मनुष्य ही बांधेगा, क्योंकि अप्रमत्त गुणस्थान मनुष्य के ही होता है, मनुष्य ही बांधेगा। अप्रमत्त कहा है पर हमने देखा है अपूर्वकरण तक उसका बंध चलता है। **इसतरह तीस प्रकृतिरूप छह बंधस्थान हुये।**

पहले हमने २३वाला देखा था एकेन्द्रिय अपर्याप्त, फिर २५वाले देखे थे एकेन्द्रिय पर्याप्त या द्वीन्द्रियादि अपर्याप्त, मनुष्य तक को लिया। फिर २६ का स्थान लिया था एकेन्द्रिय पर्याप्त प्लस आतप या उद्योत। फिर २८ के दो स्थान देखे थे - देवगति सहित और नरकगति सहित। फिर २९ के स्थान में द्वीन्द्रियादि पर्याप्त देखे थे यानी द्वीन्द्रिय पर्याप्त, त्रीन्द्रिय पर्याप्त, चतुरिन्द्रिय पर्याप्त, पंचेन्द्रिय पर्याप्त, मनुष्य पर्याप्त, ये २९वाले देखे थे और देवगति सहित तीर्थंकर भी देखा था। २९वाले भी ६ स्थान देखे थे। अब ३०वाले देख रहे हैं। हमने जो २९वाले देखे थे द्वीन्द्रियादि पर्याप्त, उसके साथ उद्योत जोड़ दो तो द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय प्लस उद्योत चार स्थान तो ये हो गये। ३०वाले देख रहे हैं - अब जो मनुष्यगतियुत २९ का स्थान था उसके साथ तीर्थंकर प्रकृति जोड़ दो तो वह भी ३०वाला स्थान होगा जो देव और नारकी बांध रहे हैं। फिर और एक कौनसा लिया ? जो देवगति का बंध कर रहा है और उसके साथ आहारकद्विक का भी बंध कर रहा है। ऐसे करनेवाला कौन है ? सातवें-आठवें गुणस्थानवाला मनुष्य है, तो उसके यह देवगति सहितवाला स्थान ३० का स्थान होगा। ३० के भी हमने छह स्थान देखे। यहां तक की बात ख्याल में आती है ?

पुनःश्च देवगति तीर्थंकरयुत उनतीस के स्थान में आहारकद्विक मिला देना। यानी ऐसे जीव लिये हैं जो तीर्थंकर प्रकृति भी बांध रहे हैं और जो आहारकद्विक का भी

बंध कर रहे हैं। यह तो ऊपर सातवें-आठवें में होगा। **देवगति तीर्थंकरयुत उनतीस के स्थान में आहारकद्विक मिलाने पर अप्रमत्त के बंधयोग्य देवगतियुत इकतीस का स्थान होता है।** यहां अपूर्वकरण को इसलिये नहीं लिया कि उसके छठे भाग में बंधव्युच्छित्ति होती है। यह लिखा ही है आगे, **इसतरह अपूर्वकरण के छठे भाग तक**, क्योंकि वहां बंधव्युच्छित्ति होगी ही इन सबकी, **बंधयोग्य इकतीस प्रकृतिरूप एक स्थान है।** यहां तक ३१ प्रकृतियां बंधती हैं उनमें से कौनसी आगे बंधेगी ? यशस्कीर्ति बंधेगी बाकी सबकी यहीं बंधव्युच्छित्ति हो जायेगी। देवगति सहितवाला जो बंधस्थान है, कौनसा है ? देखो देवगतिवाले बेसिक २८, प्लस तीर्थंकर और आहारकद्विक। २८+३ = ३१वाला होता है। यह ३१वाला एक ही स्थान होगा। **पुनःश्च अपूर्वकरण के सातवें भाग से सूक्ष्मसाम्पराय तक यशस्कीर्ति प्रकृतिरूप एक का स्थान है।** यहां हम मात्र नामकर्म को देख रहे हैं, नहीं तो आप कहेंगे एक ही का बंध है क्या ! हमने तो बहुत सारे देखे थे। ये यहां ज्ञानावरणादि की बातें नहीं हो रही है, मात्र नामकर्म की बात हो रही है यहां पर। ऐसे नामकर्म के बंधस्थान कहे।

अभी यहां नामकर्म के बंधस्थानों का यंत्र; यंत्र यानी कोष्टक की बात हम पढ़ेंगे। हम पढ़कर आये हैं तो यह आसान हो गया। यह टेबल देखेंगे, तो हमें बिलकुल ख्याल आयेगा कि कौन-कौनसी प्रकृति हमने देखी थी। २३ का एक ही स्थान देखा था, वह कौनसा है ? एकेन्द्रिय अपर्याप्तयुत २३ का स्थान। २५ के छह स्थान देखे थे; एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत २५ का, द्वीन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५ का, त्रीन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५ का, चतुरिन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५ का, पंचेन्द्रिय अपर्याप्तयुत २५ का और मनुष्य अपर्याप्तयुत २५ का; कितने हुये २५ के ? छह। *श्रोता: पंचेन्द्रिय अपर्याप्त मतलब संज्ञी-असंज्ञी दोनों ही हैं पंचेन्द्रिय में ?* पंचेन्द्रिय अपर्याप्त कहा तो दोनों हैं परंतु यहां पंचेन्द्रिय क्यों कहा ? यहां जाति नामकर्म बताना था, कर्मपद बताने थे इसलिये असंज्ञी संबंधी होगा तो उसके उत्तरभेद और करेंगे उनमें वह आ जायेगा। २६ के स्थान दो हैं; एकेन्द्रिय पर्याप्त के साथ आतप प्रकृति जोड़ दो तो यह २६ का होगा या एकेन्द्रिय पर्याप्त के साथ उद्योत है यानी उद्योतयुत एकेन्द्रिय पर्याप्त लिया वह भी २६ का है।

अब २८ के दो स्थान देखते हैं। देवगतियुत २८ का है या नरकगतियुत २८ का है। इन २८ में कौन-कौनसी प्रकृतियां हैं वह हमने देख ली; कहीं शुभ है, कहीं अशुभ है, कहीं दोनों में से कोई एक हो सकती है। *श्रोता: देवगति सहित अशुभ कैसे बंध रही*

हैं ? देवगति का बंध कर रहा है तो उसके अस्थिर आदि भी बंध सकती हैं। आप कहेंगे उसके अशुभ कैसे बंधेगी ? हमने देखा था अस्थिर नामकर्म की बंध की व्युच्छित्ति किस गुणस्थान में होती है ? छठे गुणस्थान तक बंधती है न, तो छठे गुणस्थानवर्ती देवगति का ही बंध करता है तो उसके कभी अस्थिर भी बंधेगी कि नहीं बंधेगी ? है न ? *श्रोता: तो कार्यरूप में नहीं होगी ?* कार्यरूप तो हर समय होती है। आपका प्रश्न ऐसा है - देवगति में अस्थिर नामकर्म का कार्यरूप यानी उदय होगा कि नहीं होगा ? तो स्थिर और अस्थिर नामकर्म की उदयव्युच्छित्ति हमने कहां देखी थी, तेरहवें में देखी थी।

स्थिर-अस्थिर का कार्य क्या है ? शरीर के जो कुछ धातु वगैरह हैं या जो कुछ अलग-अलग ऑर्गन्स हैं उनमें जो परिणमन चलता है वह उनका कार्य है। जैसे स्थिर के उदय में यह धातु का परिणमन अपनेरूप से रहता है, फिर उसका चेंज होता है। जैसे रस, रुधिर वगैरह जो बताये हैं, एक धातु अन्य धातुरूप परिवर्तित होता है वह अस्थिर का कार्य है और कितने ही काल के बाद वह नष्ट होता है। स्थिर और अस्थिर प्रकृति ऐसी हैं, बंधती तो ॲट अ टाइम एक और उदय होता है दोनों का एक साथ। हमारा उदय का प्रकरण नहीं हुआ है, उनको ध्रुवोदयी कहेंगे। ध्रुव उदयवाली प्रकृति में उनको गिनेंगे। हमने अभी नहीं देखा उनको क्योंकि हमने नामकर्म के उदय के बारे में कुछ नहीं सीखा है। जैसे हमने बेसिक ध्रुवबंधी देखी थी वैसे बेसिक ध्रुवउदयी प्रकृति भी देखेंगे हम। स्थिर-अस्थिर नामकर्म का उदय, दोनों का उदय ॲट अ टाइम चलता ही चलता है। स्थिर-अस्थिर और शुभ-अशुभ प्रकृतियां ऐसी हैं कि दोनों का उदय ॲट अ टाइम चलता है और तेरहवें तक चलता है। बंध ॲट अ टाइम एक का होगा, कभी स्थिर का बंध होगा कभी अस्थिर का होगा। हमने कौनसे गुणस्थान तक अस्थिर और अशुभ का बंध देखा ? छठे तक बंधती हैं। ऑप्शनली बंधती हैं, बंधते समय ऑप्शन है। स्थिर-अस्थिर और शुभ-अशुभ के लिये उदय के समय ऑप्शन नहीं है। अन्य जो हमने देखे यशस्कीर्ति है या अयशस्कीर्ति है, उनमें उदय में ऑप्शन है।

श्रोता: नामकर्म की ९३ प्रकृतियां हैं और मॅक्झिमम पॉसिबिलिटि यहां आठ हैं ? आठ बंधस्थान हुये, बंधस्थान आठ हैं। अभी हमने ९३ को अलग-अलग नहीं गिना है। हमने उनका ग्रुप करके गिना है - जैसे आहारकद्विक गिना है, आहारकचतुष्क नहीं गिना था और वर्णादि चार ही कहते हैं, वहां वर्णादि बीस कहने पडेंगे। इसतरह से

अगर उसके भेद करके कहेंगे; तो भी स्थानों की संख्या नहीं बढ़ेगी, स्थानों की संख्या तो इतनी ही रहेगी। इतने ही अलग-अलग स्थान हो सकते हैं। बंधवाली १२० प्रकृतियां होती हैं, उनमें से नामकर्म की बंधवाली कितनी होगी ? अभी ९३ के बदले हमने क्या-क्या कम किया? वर्णादि बीस के बदले हमने वर्णादि चार कही, १६ कम हो गयी और शरीर, बंधन और संघात के बदले में हमने पांच ही ले लिये। बंधन और संघात को उसीमें इन्क्लूड किया, तो २६ कम हुये। नामकर्म की ९३ में से २६ घटा दो तो कितनी रह गयी ? ६७ रह गयी। फिर भी स्थान तो इतने ही रहेंगे, केवल उनकी संख्या कुछ चेंज हो जायेगी। हमने बेसिक १२० का हिसाब करके यह संख्या लिखी है। हां, परंतु उनके ग्रुप करेंगे तो भी स्थानों की संख्या चेंज नहीं होगी। एकेन्द्रिय अपर्याप्तवाला एक ही स्थान होगा। यह २५ के जो हमने स्थान बताये, वैसे ही रहेंगे सबके।

श्रोता: २९ के स्थान में नारकी तीर्थंकर नामयुत क्यों नहीं होता ? अच्छा प्रश्न है, कोई बताना चाहता है इस प्रश्न का उत्तर ? देखो नारकी जीव तीर्थंकर प्रकृति बांधता है, उस समय वह कौनसी गति बांध रहा है ? मनुष्यगति। अब कोई मनुष्य मरकर नरक में जाता है; पहले उसने तीर्थंकर प्रकृति बांधी है और नरक में भी जाकर बांधेगा तो उस समय वह नरकगति बांध रहा है क्या ? जो जीव नरकगति बांधता है, कौनसे गुणस्थान में बांधता है ? नरकगति के बंध की व्युच्छित्ति कहां हुयी? पहले में हुयी, उसने पहले नरकायु बांधी थी इसलिये बाद में सम्यग्दर्शन प्राप्त करके उसने तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया था। जैसे हम श्रेणिक राजा को बुलाते हैं। जब उन्होंने नरकगति, नरकायु बांधी थी उस समय कितने का बंध कर रहे हैं ? २८ का कर रहे थे। बाद में सम्यग्दृष्टि हुये और तीर्थंकर प्रकृति भी बांधने लगे। पहले हम लेते हैं मात्र सम्यग्दृष्टि हुये; अब वे कौनसी गति बांध रहे हैं ? मनुष्य है, सम्यग्दृष्टि है तो देवगति २८वाला बंध कर रहे हैं। बाद में तीर्थंकर प्रकृति का बंध करने लगे। तो कौनसी गति बांध रहे हैं ? देवगति और तीर्थंकर प्रकृति; कितने का बंध होगा ? २९ का। अब ऑलरेडि नरकगति बांधी थी, फिर क्षायिक सम्यग्दृष्टि हुये इसलिये फिर दुबारा मिथ्यात्व में जाने का कोई सवाल नहीं है। तो नरकगति के साथ तीर्थंकर प्रकृति का बंध तीन काल में नहीं होता। नरकगति बंधी हुयी सत्ता में पड़ी है, पर जिस समय तीर्थंकर प्रकृति बांध रहे हैं उसी समय नरकगति का बंध होता ही नहीं। तीर्थंकर प्रकृति का बंध सम्यग्दृष्टि करते हैं और उस समय नरकगति का बंध नहीं होता। नरकगति, नरकायु बंधी पड़ी हैं सत्ता में,

उससे कुछ नहीं; सत्ता की बात नहीं चल रही है। ॲट अ टाइम कितने का बंध होता है उसकी बात चल रही है। देवगति बांधनेवाले के साथ तीर्थंकर प्रकृति का बंध होता है, इसलिये देवगतियुत २९ का कहा। वैसे नरकगतियुत कोई २९ का नहीं हो सकता है क्योंकि जिस समय नरकगति बांध रहा है उस समय तीर्थंकर प्रकृति का बंध तीन काल में हो ही नहीं सकता क्योंकि कोई मिथ्यादृष्टि जीव तीर्थंकर प्रकृति नहीं बांधता।

दूसरा क्या प्रश्न है ? *भुज्यमान मनुष्यायु में मनुष्य पर्याप्तयुत भी तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर सकता है ?* यानी मनुष्य पर्याययुत २९ + तीर्थंकर यह स्थान बन सकता है ? *फिर उसका उल्लेख क्यों नहीं किया ?* भुज्यमान आयु में जो मनुष्य तीर्थंकर प्रकृति को बांध रहा है, वह देवगति को बांध रहा है क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य, मनुष्यगति का बंध नहीं करते। मनुष्यों के लिये मनुष्यगति की बंधव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में हुयी। सम्यग्दृष्टि देव चौथे गुणस्थान तक मनुष्यगति का बंध करते हैं। हमने जो मनुष्ययुत तीर्थंकर प्रकृति का बंध देखा, वह मात्र देव और नारकी ही करेंगे, भुज्यमान मनुष्यायुवाले करेंगे ही नहीं। मनुष्यगति सहितवाला अभी हमने ३० का स्थान देखा न ? पर्याप्त मनुष्ययुत २९वाला स्थान, उसमें तीर्थंकर प्रकृति मिलायी थी तो ३० का स्थान हुआ था परंतु वहां भुज्यमान मनुष्यायु नहीं थी; वह देव, नारकी बांध रहे थे। सम्यग्दृष्टि देव, नारकी तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे थे उस समय मनुष्यगतियुत ३० का बंध हो रहा था। भुज्यमान मनुष्यायुवाले को वह होता ही नहीं क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य कभी भी मनुष्यगति नहीं बांधता, मनुष्यायु नहीं बांधता। उस अवस्था में रहते हुये, वह देवगति का ही बंध करता है। प्रश्न पूछा था - *उसका उल्लेख क्यों नहीं किया है ?* क्योंकि वह स्थान ही नहीं होता।

मनुष्यगतियुतवाला तीर्थंकर सहितवाला ३० का स्थान होता है, परंतु भुज्यमान मनुष्यायुवाले को नहीं होता, देवों और नारकियों को ही होता है; वे बंध करते हैं। अभी जो श्रेणिकराजा बंध कर रहे हैं, वह कौनसा कर रहे हैं ? मनुष्यगति का कर रहे हैं और मनुष्यगति सहित तीर्थंकर का बंध कर रहे हैं। उनके अभी वहां ३० का स्थान बंध रहा है। अभी कोई देव हैं, तीर्थंकर प्रकृति का बंध कर रहे हैं उनके भी ३० का स्थान है। बाकी चर्चा थोड़ी देर के बाद करेंगे हम।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५१. नामकर्म के बंधस्थानों में भंग

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की हुयी है और उसके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है। उसीका हिंदी अनुवाद देखते हुये अभी हम नामकर्म के बंधस्थानों की चर्चा कर रहे थे।

यहां किसीका यह प्रश्न है कि हमने ४९० पृष्ठ पर *देवगतियुत जो स्थान देखा कि देवगतियुत २९ के स्थान में तीर्थंकर प्रकृति के बदले आहारकद्विक मिलायेंगे हम तो देवगतियुत ३० का स्थान होता है।* कन्फ्यूजन ऐसा चल रहा है यह मनुष्यगतियुत क्यों नहीं कह रहे हैं क्योंकि इसका बंध भावलिंगी संत कर रहे हैं। कौन कर रहे हैं ? उससे युत नहीं कहते हैं, कौनसी गति के सहित इसका बंध हो रहा है उसकी बात चल रही है। बांधनेवाले भावलिंगी संत हैं नो डाउट, परंतु किसकी बात चल रही है ? वे कौनसा बंध कर रहे हैं ? देवगति बांध रहे हैं और देवगति के साथ-साथ आहारक का भी बंध कर रहे हैं तो उनकी टोटल कितनी प्रकृति होती हैं ? तो कहते हैं कोई भी देवगति बांधता है तो देवगति सहितवाला २८ का स्थान है और उसमें आहारकद्विक और मिला दो तो ३०वाला हो जायेगा। आपका कहना था ऊपर भी सर्वत्र ऐसा ही कन्फ्यूजन है। परंतु यह कन्फ्यूजन अपने मन में है। कौन बांध रहा है उसकी यहां चर्चा नहीं है। कौन बांध रहा है उसकी चर्चा अभी थोड़ी देर में करेंगे। हां, उलटा कन्फ्यूजन होगा। यह कौनसी गति बांध रहा है यानी कौनसा गति नामकर्म बांध रहा है और उस गति नामकर्म के सहितवाला यह बंधस्थान कौनसा है इसीको हमने कर्मपद कहा था।

देवगति नामकर्म सहितवाला यह बंध चल रहा है, हमने देवगति सहित का अर्थ क्या देखा है ? देवगति नामकर्म सहित कौन-कौनसी प्रकृतियां बंध रही हैं ? तो उनकी टोटल हमने २८ देखी। उसके साथ तीर्थंकर का बंध करेगा तो २९ हो जायेंगी। तीर्थंकर के बदले अकेले आहारक का बंध करेगा तो ३० का हो जायेगा। कोई जीव तीर्थंकर का भी बंध करेगा, आहारक का भी करेगा तो २८ और ३ मिलकर ३१ हो जायेंगी। ख्याल में आयी बात ? अभी हर जगह यही प्रश्न पूछा था न ? नरकगति संबंधी वह भी ऐसा ही था। नरकगतिवाला तीर्थंकर प्रकृति का बंध करता है, परंतु मनुष्यगति का बंध करता है तो उसको मनुष्यगति सहित तीर्थंकरवाला ३० का स्थान होगा। कौनसा जीव इसका

बंध कर रहा है इसकी चर्चा अभी हमने नहीं की। कौनसी प्रकृतियां बंध रही हैं उसकी चर्चा है। जब गतियुत या गति सहित कह रहे हैं तो उसका अर्थ है - देवगति नामकर्म सहित के बंध चल रहे हैं। मनुष्ययुत का अर्थ क्या है ? मनुष्यगति नामकर्म सहित टोटल कितनी प्रकृतियां बंध रही हैं उसकी बात है। यहां तक बात क्लिअर हो गयी ?

अभी तक हमने जो देखा था कहीं-कहीं शुभ या अशुभ और स्थिर या अस्थिर बंधती हैं यानी उनमें और यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति में ऑप्शनल भी बंध सकती हैं। कहीं-कहीं कहा है छह संस्थान में से कोई एक संस्थान बांधता है। बंधनेवाली प्रकृतियों की संख्या तो उतनी ही रहती है यानी स्थान नहीं बदल रहा है; परंतु कोई जीव स्थिर प्रकृति बांधता है, कोई अस्थिर बांधता है; कोई छह संहनन में से कोई एक बांधता है, कोई दूसरा जीव दूसरा संहनन बांधता है, कोई तीसरा संहनन बांधता है। एक ही स्थान में अलग-अलग जीव अलग-अलग प्रकृतियों का बंध कर सकते हैं अगर हम उनके कॉम्बिनेशन्स देखेंगे तो उनको भंग कहेंगे। स्थान यानी एक जीव एक काल में जितनी प्रकृतियां बांधता है उस संख्या को हम उतनी प्रकृतिवाला स्थान कहेंगे। अब वह नंबर ऑफ़ प्रकृतियां उतनी ही होने पर यानी प्रकृतियों की संख्या उतनी ही होने पर भी प्रकृतियां बदलने से भंग कहलायेंगे।

यदि हम संस्थान की अपेक्षा देखेंगे तो छह अलग-अलग भंग होंगे। हमने देखा था न, मनुष्यगति का बंध कर रहा है तो उसमें सभी ऑप्शन्स होंगे - छह संहनन में से कोई एक संहनन बांध रहा है; छह संस्थान में से कोई एक संस्थान बांध रहा है; स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग आदि सभी ऑप्शन्स हैं। उसके कितने भंग होंगे ? जितने अलग-अलग ऑप्शन्स हैं उनको एक साथ रखो और उनको आपस में गुणित करो। हम देखेंगे ४९१ पृष्ठ ५३२ की टीका, नीचे का पॅरेग्राफ- **छह संस्थान** यानी ऑप्शन्स कहां-कहां हैं उसकी बात देख रहे हैं। **छह संहनन, विहायोगति युगल, स्थिर, शुभ, सुभग, सुस्वर, आदेय, यशस्कीर्ति और इनके प्रतिपक्षीरूप छह युगल इनमें एक-एक का बंध पाया जाता है इसलिये इनको ऊपर-ऊपर स्थापित करके अविरुद्ध एक-एक का ग्रहण करने पर**, अविरुद्ध एक-एक का अर्थ क्या है? अविरुद्ध यानी जहां जितनी पॉसिबिलिटिज् होंगी; अभी पढ़कर आये न हम इसका बंध होगा या उसका बंध होगा, इसलिये कहा अविरुद्ध। उसका ग्रहण करने पर **प्रकृतियों**

के बदलने से भंग होते हैं। अब सबको, छह संस्थान हैं, छह संहनन हैं, विहायोगति है वगैरह-वगैरह सबको एक साथ रखेंगे और आपस में गुणा करेंगे तो ४६०८ भंग होते हैं। ६ x ६ x २ x २ x २ x २ x २ x २ x २ यह उन्होंने जनरल बात की। इसमें किसी नरकगति सहितवाला या देवगति सहितवाला उसकी चर्चा नहीं थी।

अब हमने जो-जो देखे हैं न उनकी चर्चा करेंगे। पुस्तक में पढ़ेंगे तो कुछ ख्याल में नहीं आयेगा। हमने जो बंधस्थान देखे हैं उसकी दुबारा चर्चा करते हैं। हमने २३वाला स्थान देखा था, २३वाले स्थान में तो एक ही भंग होगा क्योंकि वह २३वाला कौनसा है ? एकेन्द्रिय अपर्याप्त संबंधी है। उसमें जो कुछ प्रकृतियां वहां बंध रही हैं उसका एक ही भंग होगा। जो अपर्याप्त का बंध करते हैं उसके साथ दुर्भग, अनादेय आदि अप्रशस्त प्रकृतियों का ही बंध होता है। इसलिये वहां भंग अलग-अलग नहीं होंगे एक ही भंग होगा। द्वीन्द्रिय आदि अपर्याप्त में भी एक-एक भंग है। अब आगे हमने जहां कहीं पर ऑप्शन देखा था उसकी बात करेंगे। समझने के लिये यहां ४८९ पृष्ठ पर, २८ प्रकृतिरूप स्थान में हम घटित करके देखेंगे।

देवगतिवाला २८ प्रकृतिरूप स्थान है, उसकी बात करेंगे। हम देखेंगे कहां-कहां ऑप्शन्स दिये हैं। देखो ९ ध्रुवबंधी, त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक – इनमें तो कोई ऑप्शन नहीं है। ऑप्शन कहां था ? स्थिर या अस्थिर - यहां एक हुआ यानी दो प्रकृति यहां हुयी; शुभ या अशुभ यहां दो हो गयी; फिर सुभग, आदेय लिया; यशस्कीर्ति और अयशस्कीर्ति में से एक; और बाकी आगे कोई ऑप्शन नहीं था क्योंकि संस्थान में और कहीं ऑप्शन नहीं था। तो कितनी हुयी ? २, २ और २ - तीन बार हुआ न ? तो उनको आपस में गुणा करो। कितने कॉम्बिनेशन्स हो गये उनके ? ८ हो गये यानी उसमें आठ भंग हो सकते हैं। अब नारकी की बात देखते हैं - उसमें ९ ध्रुवबंधी; त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक कोई ऑप्शन नहीं है; स्थिर-अस्थिरवाला ऑप्शन भी नहीं है; अस्थिर ही लिया, अशुभ ही लिया, दुर्भग ही लिया, अनादेय ही लिया और अयशस्कीर्ति ही लिया। कहीं पर ऑप्शन नहीं था। आगे भी दुस्वर और अप्रशस्त विहायोगति ही ली, कहीं पर कोई ऑप्शन नहीं है। तो उसमें कितने भंग होंगे ? एक ही भंग होगा। भंग यानी भेद नहीं होंगे, एक जो स्थान है वह एक अकेला ही होगा उसमें कोई भेद नहीं होंगे।

अब हम उसके आगे का एक लेते हैं- द्वीन्द्रिय पर्याप्तयुत २९ का हमने देखा था

नीचे के पॅरेग्राफ में। द्वीन्द्रिय पर्याप्त २९वाला उसमें कितने भंग होंगे ? ९ ध्रुवबंधी; त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येक; उसके बाद स्थिर-अस्थिरवाला लिया था; शुभ-अशुभवाला लिया था और यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति लिया था और बाकी आगे जो दुस्वर, अप्रशस्त विहायोगति के साथ कोई ऑप्शन नहीं था। तो यहां कितने भंग होंगे ? *श्रोता: आठ।* आठ होंगे। ख्याल में आया न भंगों को कैसे डिराइव्ह करना ? जहां ऑप्शनल होंगे वहां उनको गुणा करके भंग कितने हैं हम निकाल सकते हैं।

अब हम और नीचे आते हैं, लास्ट लाइन। चतुरिन्द्रियजाति घटाकर पंचेन्द्रियजाति जहां ली थी, तिर्यंचगति में पंचेन्द्रियजाति ली थी। देखो, वहां क्या-क्या ऑप्शन्स थे ? स्थिर-अस्थिर दो, फिर शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, आदेय-अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति यानी पांच बार तो दो लिखना। कॅल्क्युलेशन करना अपनी-अपनी नोटबुक में। दो संख्या पांच बार लिखो, फिर छह संस्थान यानी एक बार छह लिखो। फिर छह संहनन छह एक बार और लिखो। सुस्वर-दुस्वर दो और प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति दो। दो संख्या ७ बार आयी है, तो कितनी होगी ? २ X २ X २ X २....सात बार लेना यानी सात जिसका अर्धच्छेद है ऐसी संख्या निकालनी है, १२८ आयेगी। नहीं समझे ? दो संख्या ७ बार लिखकर आपस में गुणा करना तो १२८ आयी न ! १२८ X ६ X ६ यानी १२८ X ३६ कितने हुये ? यह मोबाइल सुनने के लिये वापरते हैं न, इसके लिये वापरो, चलेगा - ४६०८। जब हमने पढ़ना शुरू किया था देखो ४९१ पेज पर उसमें हमने क्या देखा था ? वहां दो संख्या सात बार ही ली है। छह संस्थान, छह संहनन, विहायोगति युगल, वहां प्रत्येक लिखा है परंतु वह स्वर युगल लेना पड़ेगा। स्थिर, शुभ, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति और उनके प्रतिस्पर्धी ऐसे यह पांच युगल हुये। इसतरह सात युगल के १२८, संस्थान के ६ और संहनन के ६ इनके भंग १२८ X ३६ =४६०८ हो जायेंगे। *श्रोता: ४६०८ भंग हो जायेंगे ?* हां वहां लिख दिया।

अब किस तरह से उसको कॅल्क्युलेट करना वह ४९४ पृष्ठ पर लिखा है देखो। **तिर्यंचगति-पर्याप्तयुत संज्ञी के २९ के स्थान में और उद्योतयुत ३० के स्थान में तथा मनुष्यगति-पर्याप्तयुत २९ के स्थान में** जो अभी हमने कॅल्क्युलेट किये थे **सामान्य छह संस्थान, छह संहनन और विहायोगति आदि सात युगल -इनमें एक-एक करके सर्व प्रकृतियों का बंध पाया जाता है।** तो **उनको बदलने से**

४६०८ भंग होते हैं। *श्रोता: सात युगल लिये ?* सात युगल लिये, विहायोगति आदि सात युगल लिये। अभी किस-किसको लिया था ? स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, आदेय-अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति, सुस्वर-दुस्वर, प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति सात हैं। फिर दुबारा - स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, सुभग-दुर्भग, आदेय-अनादेय, यशस्कीर्ति-अयशस्कीर्ति, सुस्वर-दुस्वर ये जो छह हम हमेशा देखते हैं और प्रशस्त-अप्रशस्त विहायोगति ये सात लिये इन्होंने। *श्रोता: फिर दो सात बार लें ?* दो संख्या सात बार लेना और वे छह और छह लेना यानी १२८ X ३६ भंग हो जायेंगे।

अभी हमने ४९४ पृष्ठ पर यह बात पढ़ी थी देखो, आगे पढ़ेंगे। यहां उन्होंने डिराइव्ह किया है मिथ्यादृष्टि के कितने स्थान होते हैं ? कौन-कौनसे बंध होते हैं ? उसमें कितने भंग हैं ? यह बहुत विस्तार से भंगों की चर्चा की है, हमें यहां इसके विस्तार में नहीं जाना है। भंग कैसे कॅल्क्युलेट करते हैं इतना ही देखना था। तो हमने उसको दो तीन स्थानों में देख लिया। यहां इसकी बात है कि मिथ्यादृष्टि के कौन-कौनसे बंधस्थान हो सकते हैं ? कौनसे नहीं होंगे आप कह सकते हैं ? अभी हमारे पास बंधस्थान कौनसे हैं ? २३ का है, २५ का है, २६ का है, २८ का है, २९ का है, ३० का है, ३१ का है और १ का है। कितने टोटल ? *श्रोता: आठ।* आठ। तो मिथ्यादृष्टि के इसमें से कितने बंध के स्थान होंगे यह मेरा प्रश्न है। कौनसा नहीं होगा उसको भी जरा देख लो।

आपके पास बंधस्थानों का टेबल है वह निकालो। मिथ्यादृष्टि इसमें से कौनसा बंध नहीं करेगा ? यह हमको देखना है, बाकी के करेगा। *श्रोता: २९, ३० नहीं करेगा ?* २९, ३० नहीं करेगा, देख लेते हैं थोड़ा। २९ का देख लो, २९ के छह स्थान हैं। द्वीन्द्रिय पर्याप्त - मिथ्यादृष्टि जीव इसको बांधेगा कि नहीं बांधेगा ? अकेला देव तीर्थयुत है ? अकेले देव तीर्थयुत है २९ में ? सुनो बराबर। २९ का स्थान किसको ? २९ के स्थान कौन-कौनसे हैं ? द्वीन्द्रिय पर्याप्तयुत, त्रीन्द्रिय पर्याप्तयुत, मनुष्य पर्याप्तयुत तक इनका बंध मिथ्यादृष्टि करेगा कि नहीं करेगा ? *श्रोता: करेगा।* यानी मिथ्यादृष्टि के २९ का बंध होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: होगा।* यह देवगति तीर्थंकरयुत २९वाला है उसकी बात नहीं चल रही है यहां। वह छोड़कर बाकी करेगा कि नहीं करेगा ? हां करेगा।

अब ३० की बात करते हैं, ३० में द्वीन्द्रिय पर्याप्त और उद्योत। मिथ्यादृष्टि को यह बंध होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: होगा।* मिथ्यादृष्टि ३० का भी बंध करेगा कि नहीं

करेगा ? कर सकता है न ! हां, परंतु देवगतियुत आहारकद्विकवाला नहीं करेगा। देवगति, आहारक और तीर्थंकर ३१वाला वह भी मिथ्यादृष्टि नहीं करेगा और १वाला भी नहीं करेगा, सर्वथा नहीं होगा। ३० का होगा परंतु उसमें कौनसे हो सकते हैं उसको देखना पड़ेगा; वह द्वीन्द्रिय पर्याप्त से पंचेन्द्रिय पर्याप्त तक उद्योतसहित होंगे। मनुष्यगति तीर्थंकरयुत और देवगति आहारकयुत नहीं होगा। परंतु जो हो सकते हैं उसको सोचना। मिथ्यादृष्टि को २३ का, २५ का, २६ का, २८ का, २९ का और ३० का ये छह बंधस्थान होंगे। उसमें कौनसा है वह हमें नक्की करना है। ३० का है जब कहते हैं तो उसमें मनुष्यगति तीर्थंकरयुत नहीं गिनेंगे, परंतु अन्य ३०वाले हैं न। ३० का होता है कि नहीं होता है इतना ही सवाल है।

तो ऐसा पूछेंगे कि मिथ्यात्व गुणस्थान में कौन-कौनसे बंधस्थान हैं ? तो क्या कहेंगे हम ? *श्रोता: छह हैं।* छह हैं। हां, देखो यहां कहीं लिखा होगा तो हम देखते हैं। इसमें से भी हम डिराइव्ह कर सकते हैं न - कौन-कौनसे स्थान हो सकते हैं, कौन-कौनसे नहीं हो सकते हैं। यहां तो भंगों की ही चर्चा है, हम इसमें से डिराइव्ह करेंगे। सासादनवाला कौन-कौनसी गति का बंध करेगा ? देखो, इसमें कहीं नहीं लिखा है। नरकगति का बंध करेगा कि नहीं करेगा ? *श्रोता: नहीं करेगा।* नहीं करेगा। तो सासादनवाले जीव को कौन-कौनसी गति का बंध होगा ? देवगति का हो सकता है, तिर्यंचगति का हो सकता है, मनुष्यगति का हो सकता है। बात सही है न ? *श्रोता: हां जी।* हां ? नहीं ? देवगति ही बंधेगी ? देवगति ही क्यों बांध रहे हम ? तिर्यंचगति की बंधव्युच्छित्ति कहां होती है ? सासादन में होती है, वहां उसका बंध है। सासादनवाले को मनुष्यगति का भी बंध है, देवगति का भी बंध है, तिर्यंचगति का भी बंध है। तीन गति का है। बांधनेवाला कौन है ? उसकी हम चर्चा नहीं कर रहे हैं। उसकी चर्चा बाद में करेंगे। अभी सासादनवाला २३वाला बंध करेगा कि नहीं करेगा ? *श्रोता: करेगा।* करेगा ? क्यों करेगा ? अपर्याप्त नामकर्म की बंध की व्युच्छित्ति अभी मैंने पहले ही बोला था, बंधव्युच्छित्ति, उदयव्युच्छित्ति अभी तो उदय की बात छोड़ दो। अपर्याप्त नामकर्म का बंध कब तक होता है ? पहले गुणस्थान में बंध की व्युच्छित्ति हो गयी है।

जरा याद कर लेते हैं पहले गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति। सोलह की थी। हां, बोलो ? *श्रोता:मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व। *श्रोता: हुण्डकसंस्थान।* हुण्डक संस्थान। *श्रोता:*

नपुंसकवेद। नपुंसकवेद, असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप, सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्त, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, नरकायु। अब पहले गुणस्थानवाला यह द्वीन्द्रिय आदि संबंधी बंध करेगा, एकेन्द्रिय संबंधी बंध करेगा। अब सासादनवाला इन संबंधी बंध ही नहीं करेगा। तो सासादनवाले को २३ का स्थान होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, ख्याल में आया न, कैसे सोचना है ? सासादनवाले को २५ का स्थान होगा कि नहीं होगा ? अपर्याप्तवाले हैं न सारे, तो नहीं होगा। *श्रोता: एकेन्द्रिय पर्याप्त ?* एकेन्द्रिय पर्याप्त, परंतु एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप इनकी बंधव्युच्छित्ति पहले गुणस्थान में हुयी है। *श्रोता: दूसरी मान्यता के अनुसार।* दूसरी मान्यता के अनुसार उदय में डिफरन्स था, बंध में नहीं। ख्याल में आयी बात ? जो दूसरी मान्यता देखी थी हमने हां, पांच और नौ हैं कि दस और चार हैं वह हमने उदय में देखी थी। अच्छा आपने याद रखा परंतु वह बंध में नहीं ले सकते। बंध की जो सोलह की व्युच्छित्ति उसमें कोई दो मत नहीं हैं। अब आगे बढ़ते हैं। इसमें से देखो, मैंने भी पढ़ा नहीं है, मैं भी अभी पढ़ रही हूं। तो सासादनवाले को कौनसा बंधस्थान होगा ? जिनकी पहले गुणस्थान में बंधव्युच्छित्ति हुयी है वे कोई भी प्रकृतियां यहां नहीं बंधेंगी। तो नरकगति को हमने आउट कर दिया। अब तिर्यंचगति पंचेन्द्रिय पर्याप्त सहित का बंध तो हो सकता है परंतु एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय का- स्थावर, आतप, सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्त का बंध नहीं होगा।

अब आगे बढ़ते हैं २६ के स्थान पर आते हैं। वह एकेन्द्रियवाला है, वह भी नहीं बंध सकता। अब २८ के स्थान में आते हैं, देवगतिवाला है, नरकगतिवाला है। नरकगति का बंध होगा क्या ? *श्रोता: नहीं।* तो देवगतिवाला २८ का बंध हो सकता है कि नहीं हो सकता है ? *श्रोता: हो सकता है।* हो सकता है, तो देवगतिवाला २८ का बंध हो सकता है। उसको २८ का एक स्थान बंधयोग्य है, बंध की बात चल रही है। आगे देखते हैं २९ के स्थान। २९ में द्वीन्द्रिय का, त्रीन्द्रिय का, चतुरिन्द्रिय का बंध करेगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं।* नहीं करेगा परंतु पंचेन्द्रिय पर्याप्तवाला कर सकता है ? *श्रोता: कर सकता है।* हां, कर सकता है। तो २९ का ही होगा। वह मनुष्यगति पर्याप्तवाला २९ का कर सकता है ? *श्रोता: कर सकता है।* हां, कर सकता है यानी २९ का भी उसको स्थान होगा। देवगति तीर्थंकरयुत २९वाला करेगा ? *श्रोता: नहीं करेगा।* नहीं करेगा, तीर्थंकर प्रकृति का बंध दूसरेवाले को नहीं होगा। सासादनवाला ३० का बंध करेगा कि नहीं करेगा ?

पंचेन्द्रिय पर्याप्त का उद्योत सहितवाला कर सकता है, बाकी तो नहीं करेगा। उद्योत प्रकृति दूसरे गुणस्थान में बंधेगी कि नहीं बंधेगी ? अभी दूसरे गुणस्थान की बंधव्युच्छित्ति याद करो। *श्रोता: बंधेगी।* बंधेगी न, उसकी व्युच्छित्ति बाद में होती है।

दूसरे गुणस्थान की २५ प्रकृतियां बतानी हैं आपको। हां, पच्चीस में जो है परंतु वहां बंध है, दूसरे गुणस्थानवाले को बंध है। २५ प्रकृति याद हैं सुशीला ? भूल गयी अभी। यहां के कषाय कौनसे हैं ? अनंतानुबंधी क्रोध-मान-माया-लोभ, स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, दुर्भग, दुस्वर और अनादेय लिया है; न्यग्रोधपरिमंडल, स्वाति, कुब्जक, वामन संस्थान और बीचवाले चार संहनन- वज्रनाराच, नाराच, अर्धनाराच और कीलित हो गये; फिर स्त्रीवेद, नीचगोत्र, अप्रशस्त विहायोगति; फिर तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, तिर्यंचायु और उद्योत यानी यहां उद्योत बंध रहा है, इसके आगे नहीं बंधेगा। तो पंचेन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत ३०वाला बंध सासादनवाले को हो सकता है। मनुष्यगति तीर्थंकरयुत ३०वाला तो नहीं होगा। देवगति आहारकयुत ३०वाला भी नहीं होगा। अब वह ३१ और १ के स्थान उनके हैं ही नहीं। *श्रोता: संभव ही नहीं है।* हां, वह तो संभव ही नहीं है। ख्याल में आयी बात कैसे सोचना ?

अभी तीसरे गुणस्थानवाला इनमें से कोई बंध करेगा कि नहीं करेगा ? नहीं करेगा ? तो अच्छा है तीसरे गुणस्थान में रहो, अबंध हो जाओ, मुक्त हो जाओ ! तीसरे गुणस्थानवाला आयु का बंध नहीं करता है, अरे नामकर्म तो हर समय बांध रहा है। हां, व्युच्छित्ति नहीं होती, परंतु जो पहले, दूसरे गुणस्थान में व्युच्छित्ति कर दी है वे प्रकृतियां इसके नहीं बंधेगी। अभी तीसरे गुणस्थानवाला है वह तिर्यंचगति संबंधी बंध नहीं करेगा, नरकगति पहले ही व्युच्छित्ति हो गयी। अब तिर्यंचगति का भी बंध नहीं करेगा। तो कौनसी रही ? मनुष्यगति और देवगति। परंतु एक बात याद में रखना, तीसरे गुणस्थान की बात चल रही है; तीसरे गुणस्थानवाले नारकी और देव ही मनुष्यगति को बांधेंगे। तीसरे गुणस्थानवाले मनुष्य और तिर्यंच मनुष्यगति को नहीं बांध सकते क्योंकि तिर्यंच और मनुष्य के लिये मनुष्यगति की बंधव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में हो जाती है। हमने चौथे गुणस्थान में दस प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति देखी थी, याद है न ! उनमें से छह कौनसी हैं ? वज्रवृषभनाराचसंहनन, औदारिकशरीर, औदारिकअंगोपांग, मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी और मनुष्यायु इनके बंध की व्युच्छित्ति मनुष्य और तिर्यंच के लिये

दूसरे गुणस्थान में ही हो जाती है। यानी वे २५+६=३१ और पहली १६ इन सबकी बंधव्युच्छित्ति मनुष्य और तिर्यंच के लिये होती है। मनुष्य जो तीसरे गुणस्थानवाले हैं वे मनुष्यगति नहीं बांधेंगे, परंतु देव-नारकी बांधेंगे इसलिये यहां हम जनरल बात कर रहे हैं। इसलिये तीसरे गुणस्थानवाले यदि बंध करते हैं; गति की बात चल रही है, यहां नामकर्म की बात चल रही है; आयु का बंध वे नहीं करते हैं। गति तो बांध रहे हैं।

अभी हम तीसरे गुणस्थानवाले देव-नारकी जीव की अपेक्षा बात करेंगे। मनुष्यगति बांध सकते हैं कि नहीं बांध सकते ? *श्रोता: बांध सकते हैं।* बांध सकते हैं और तीसरे गुणस्थानवाले मनुष्य और तिर्यंच को देवगति का बंध होगा कि नहीं ? देवगति का बंध होगा, हां, यानी अभी दो गति संबंधी प्रकृति रह गयी हैं। तो तीसरे गुणस्थानवालों को २३ का बंधस्थान होगा क्या ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, २५ का ? *श्रोता: नहीं।* नहीं, २६ का ? *श्रोता: नहीं।* नहीं होगा, २८ का ? *श्रोता: होगा।* कौनसा होगा ? *श्रोता: देवगतिवाला।* देवगतियुत २८वाला होगा। २९वाला ? मनुष्यगति पर्याप्तयुत २९वाला एक ही होगा। *श्रोता: देवगति तीर्थंकरवाला २९ का होगा न ?* तीर्थंकरवाला नहीं होगा। तीसरे गुणस्थानवाले को तिर्यंचगति बंधेगी नहीं, ख्याल में आती है बात ? हमने बंधव्युच्छित्ति देखी थी, तिर्यंचगति के बंध की व्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में हो गयी है। अभी किसी भी गतिवाला कोई भी जीव तिर्यंचगति को दूसरे गुणस्थान के ऊपर कहीं भी नहीं बांधेगा। जो तीसरे गुणस्थान में देव और नारकी हैं, वे मनुष्यगति को बांधेंगे। तीसरे गुणस्थानवाले मनुष्य और तिर्यंच देवगति को बांधेंगे। तो यहां देवगतियुत २८ का एक स्थान होगा और मनुष्यगति पर्याप्तयुत २९ का स्थान होगा। आगे, ३० का स्थान होगा क्या ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, क्योंकि वे उद्योतवाले तिर्यंचगति सहितवाले हैं और मनुष्यगतियुत ३०वाला स्थान तीर्थंकर सहित होता हैं वह तो संभव नहीं है। ये उसके स्थान होंगे। ख्याल में आती है बात ?

हम गुणस्थानों में बंधस्थान घटित कर रहे हैं। हमारे सामने चार्ट है, उसको देख-देखकर यहां सीख रहे हैं। चौथे गुणस्थान की बात करते हैं। चौथे गुणस्थानवाले के लिये अभी भी किसका बंध हो रहा है ? मनुष्यगति का भी और देवगति का भी। सम्यग्दृष्टि मनुष्य के लिये देवगति का बंध हो रहा है, सम्यग्दृष्टि देव-नारकी के लिये मनुष्यगति का बंध हो रहा है। उनकी अपेक्षा से हम दोनों को सोचेंगे। परंतु उनको २३ का स्थान नहीं होगा, २५वाला नहीं होगा, २६वाला होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं*

होगा। नहीं होगा, सम्यग्दृष्टि की बात चल रही है। देवों के होता है कि नहीं होता है उसकी बात नहीं चल रही है, सम्यग्दृष्टि की बात चल रही है। हम गुणस्थानों की बात कर रहे हैं। कौनसी गतिवाला बंध कर रहा है इसकी बात नहीं कर रहे, कौनसा गुणस्थानवाला बंध करता है उसकी बात चल रही है। चौथे गुणस्थानवाला बंध करेगा तो उसके ना २३ का होगा, ना २५ का होगा, ना २६ का होगा। २८ का स्थान सम्यग्दृष्टि के होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: होगा।* होगा न ! कौनसे सम्यग्दृष्टि को होगा ? तिर्यंच और मनुष्य सम्यग्दृष्टि के लिये देवगतियुत २८वाला स्थान होगा। सम्यग्दृष्टि को २९वाला स्थान बंधेगा कि नहीं बंधेगा ? २९ में से कौनसा बंधेगा ? *श्रोता: मनुष्यगति पर्याप्तयुत २९वाला।* मनुष्यगति पर्याप्तयुत २९वाला स्थान बंधेगा। सम्यग्दृष्टि देव-नारकी मनुष्यगति पर्याप्तयुत २९ का स्थान बांध सकते हैं। देवगति तीर्थंकरयुत २९वाला बंधेगा कि नहीं बंधेगा ? हां, जो मनुष्य हैं, सम्यग्दृष्टि हैं वे देवगति तीर्थंकरयुत २९वाला स्थान बांधेंगे। ख्याल में आती है बात यह ? चौथे गुणस्थान में अभी हमने घटित किया।

पांचवें गुणस्थान में भी देवगति तीर्थंकरयुत २९वाला होगा। उनके देवगतियुत २८वाला स्थान भी होगा। परंतु पांचवें गुणस्थानवाले को यह मनुष्यगति पर्याप्तयुत २९ का स्थान होगा कि नहीं होगा ? मेरा क्या सवाल है ? पांचवें गुणस्थानवर्ती कौनसी गति में होते हैं ? *श्रोता: तिर्यंच और मनुष्यों में।* तिर्यंच और मनुष्यों में, वे कौनसी गति बांध रहे हैं ? *श्रोता: देवगति।* देवगति बांध रहे हैं तो कौनसा स्थान होगा ? देवगतियुत २८ का होगा या देवगति तीर्थंकरयुत २९ का होगा। पांचवें गुणस्थान की बात चल रही है, हां। देवगति के साथ तीर्थंकर प्रकृति बंधती हो तो वह देवगति तीर्थंकरयुत २९ का होगा। अभी मुनिराज कौनसा बंध करेंगे ? ऑर्डिनरि बंध कर रहे हैं तो देवगतियुत २८वाला बंध करेंगे, देवगतियुत २८ का बंध हो रहा है उनके। पांचवें गुणस्थान में तिर्यंच हो या मनुष्य हो, देवगतियुत २८वाला बंध करेंगे कि नहीं करेंगे ? देवगतियुत २८ का बंध करेंगे। अब कोई पांचवें गुणस्थानवर्ती मनुष्य है वह तीर्थंकर प्रकृति भी बांध रहा है तो उसके देवगति और तीर्थंकरयुत २९वाला स्थान हो रहा है। उनको और कोई स्थान होगा ? मनुष्यगति तीर्थंकरयुत ३०वाला स्थान होगा क्या ? *श्रोता: नहीं।* नहीं, क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य मनुष्यगति को नहीं बांधते। *श्रोता: तिर्यंच सम्यग्दृष्टि ?* तिर्यंच सम्यग्दृष्टि तो तीर्थंकर प्रकृति को बांधते ही नहीं हैं, वे तो देवगति ही बांध रहे हैं।

श्रोता: यह ३०वाला होगा क्या देवगति आहारकद्विकयुतवाला ? देवगति आहारकद्विकयुत किसके होगा ? मुनि के होगा; पांचवें गुणस्थानवाले को नहीं होगा, सातवेंवाले को होगा, आठवेंवाले को होगा। यह देवगति आहारकद्विकयुतवाला है वह किसके होगा ? सातवें, आठवें गुणस्थानवर्ती को होगा, छठे को नहीं हो सकता। हां, छठे को नहीं है, छठे को वह देवगति तीर्थंकरयुत २९वाला हो सकता है। अब सातवें की बात की, छठे-सातवें की। आठवें गुणस्थान में जब तक यह बंध की व्युच्छित्ति नहीं हुयी है तब तक सातवें आठवेंवाले को यह भी होगा देवगति आहारकद्विक और तीर्थंकरवाला। तीनों का मिलकर ३१ का जो स्थान है वह सातवें गुणस्थानवाले को भी हो सकता है और आठवें के छठे भाग तक हो सकता है क्योंकि वहां हमने बंध की व्युच्छित्ति देखी थी। बहुत सारी प्रकृतियों की बंधव्युच्छित्ति होती है। अब यह १ का स्थान किसके होगा ? आठवें का सातवां भाग, नौवां गुणस्थान, दसवां गुणस्थान वहां तक १ प्रकृतिवाला स्थान होगा। यह हमने गुणस्थानों में बंधस्थान घटित किये। यह हम स्वयं ही सोच सकते हैं और चर्चा कर सकते हैं, उस पर लगा सकते हैं।

अभी हमने कौनसे गुणस्थानवाले इनका बंध करते हैं ऐसा देखा। अब हम देखेंगे कौनसे गतिवाला इनका बंध करते हैं ? हम सभी मार्गणाओं पर घटित नहीं कर रहे हैं। केवल गति में तो घटित कर सकते हैं। पहले में पहले नरकगति की बात देखते हैं। नरकगतिवाला यहां पर २३ का बंध करेगा कि नहीं करेगा ? पीछे कोई बतायेंगे ? *श्रोता: नहीं करेगा।* क्यों नहीं करेगा ? *श्रोता: नारकी जीव एकेन्द्रिय का बंध नहीं करते।* नारकी जीव एकेन्द्रिय का बंध ही नहीं करते। क्या कहा ? देवों के एकेन्द्रिय का बंध हो सकता है, देवों के एकेन्द्रिय पर्याप्त का बंध हो सकता है परंतु नारकी एकेन्द्रिय संबंधी बंध ही नहीं करते। नारकी जीवों को २३ का स्थान होगा कि नहीं ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, २५वाला होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा। अन्य श्रोता: होगा।* एक मिनट, कौनसा हो सकता है ? *श्रोता: पंचेन्द्रिय पर्याप्त।* २५वाला स्थान पंचेन्द्रिय पर्याप्त का नहीं है, अपर्याप्तवाला है। नारकियों के अपर्याप्त प्रकृति नहीं बंधेगी; सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्त नारकी को नहीं बंधेगी, यानी नारकी को मनुष्यगति अपर्याप्तयुत २५वाला भी नहीं होगा। २६वाला बांध सकते हैं ? *श्रोता: नहीं बांध सकते हैं।* नहीं, क्योंकि वह एकेन्द्रिय पर्याप्तयुत है। नारकी को २८ का बंध होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं, क्योंकि नारकी स्वयं देवगति भी नहीं बांधते, नरकगति भी नहीं बांधते।

अब नारकी को २९ का स्थान होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: होगा।* होगा, २९वाले छह बताये हैं उनमें से कौनसा २९वाला हो सकता है ? *श्रोता: पंचेन्द्रिय पर्याप्त।* हां, पंचेन्द्रिय पर्याप्त यानी तिर्यंचगति संबंधी २९वाला और मनुष्यगति पर्याप्तयुत यह मनुष्यगति संबंधी २९वाला स्थान होगा। यह नारकी को २९ का होगा। नारकी को और कौनसा हो सकता है ? देखो, तिर्यंचगति बांधनेवाले नारकी को उद्योत का बंध हो सकता है। तो पंचेन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत ३०वाला बंध नारकी को हो सकता है। मनुष्यगति तीर्थंकरयुत ३०वाला स्थान भी होगा। हां, पहले हम इसकी बात करते हैं। पंचेन्द्रिय पर्याप्त उद्योतयुत का भी होगा नारकी के और मनुष्यगति तीर्थंकरयुत वह सम्यग्दृष्टि नारकी के भी हो सकता है। तो यह ३० का भी होगा। कौनसे नरक तक होगा मनुष्यगति तीर्थंकरयुत ३० ? *श्रोता: तीसरे तक।* तीसरे तक। हमने देखा नारकियों के कौन-कौनसे बंधस्थान हो सकते हैं ? २९वाला और ३०वाला।

यही बात हम देख लेते हैं पेज नंबर ५०० निकालना। फिर हम घटित करके दुबारा आयेंगे टेबल पर, वह टेबल कार्यकारी है अपने लिये। देखो गाथा ५४४ की टीका में यहां लिखा है - **गतिमार्गणा में**, गतिमार्गणा यानी अभी चार गति की यहां बात है। अब कौनसा बंध कर रहे हैं, उन जीवों को कौन-कौनसे बंधस्थान हैं इसकी चर्चा कर रहे हैं। किस गति सहित बांधता है उसकी चर्चा की, ये सारे बंधस्थान देखे। अब ये बंधस्थान कौनसे गतिवाले जीवों के होते हैं यानी कौनसी गतिवाले जीव कौन-कौनसे बंध कर सकते हैं इसकी चर्चा चलेगी। अभी हमने देख लिया है नारकी जीवों के कौन-कौनसे स्थान होते हैं - २९ का एक है और ३० का एक है। अब वही बात हम यहां पढ़ेंगे। पहले पढ़ लेते तो हम सोचते ही नहीं न उसके बारे में ! तो क्या लिखा है ?

गतिमार्गणा में नामकर्म के बंधस्थान नरकादि गति में कहा है गतियुत नहीं कहा है। पहले जो हमने बंधस्थान देखे वे गतियुतवाले देखे। यानी उस पूरे स्थान में वह गति नामकर्म का एक भेद था, पार्ट था। अब यहां कहते हैं **नरकादि गति में** आदि यानी चारों गतियों में हम देखनेवाले हैं; **क्रम से नरकगति में तो उनतीस और तीस के दो स्थान बंधते हैं।** जो अभी हमने देखा था। तो २९वाला कौनसा है ? **पंचेन्द्रिय पर्याप्त तिर्यंचगतियुत और मनुष्यगतियुत उनतीस के स्थान को** कौनसे नारकी बांधते हैं ? तो कहते हैं **छठे नरक तक के जीव बांधते हैं और पंचेन्द्रिय पर्याप्त**

तिर्यंचगतियुत उनतीस के या उद्योतयुत तीस के स्थान को माघवी यानी सातवें नरक के जीव बांधते हैं। यानी पहले से सातवें नरक तक के जीव इसको बांधते हैं। यानी २९वाला ऑर्डिनरि तिर्यंच या मनुष्य और ३०वाला उद्योत सहितवाला तिर्यंच। **तथा मनुष्यगति पर्याप्त तीर्थंकरयुत तीस के स्थान को मेघा पृथ्वी यानी तीसरे नरक तक के जीव ही बांधते हैं।** ये तीनों ही बातें हमने देखी थी।

सातवें नरकवाला नारकी मनुष्यगतियुतवाला स्थान बांधेगा कि नहीं बांधेगा ? *श्रोता: नहीं बांधेगा।* सम्यग्दृष्टि होगा तो बांधेगा, क्यों नहीं बांधेगा ? मनुष्यायु नहीं बंधती; आप गति में कन्फ्यूजन कर रहे हैं। देखिये छठे नरक तक के नारकी मिथ्यादृष्टि हो या सम्यग्दृष्टि हो, मनुष्यगति तो बांध सकते हैं। परंतु सातवें नरक के नारकी जो मिथ्यादृष्टि और सासादनवाले हैं वे तो नियम से तिर्यंचगति ही बांधेंगे। परंतु सातवें नरक के नारकी जो तीसरे और चौथे गुणस्थानवाले हैं, जिन्होंने सम्यक्त्व प्राप्त किया है या जो तीसरे में आये हैं तो वे कौनसी गति बांधेंगे ? *श्रोता: मनुष्यगति।* क्योंकि उनके लिये भी तिर्यंचगति की बंधव्युच्छित्ति दूसरे में हुयी है; तो उनके लिये भी एक मनुष्यगति ही रह गयी क्योंकि वे नरकगति बांधते नहीं हैं, देवगति बांधते नहीं हैं। यहां तीसरे और चौथे गुणस्थानवाले सातवें नरक के नारकी मनुष्यगति को ही बांधते हैं, अन्य नारकी भी बांधेंगे। परंतु सातवें नरक के मिथ्यादृष्टि नारकी मात्र तिर्यंचगति को ही बांधते हैं। नहीं समझे ? छठे नरक तक मिथ्यादृष्टि को भी दो ऑप्शन्स हैं; तिर्यंचगति भी बांध सकते हैं, मनुष्यगति भी बांध सकते हैं। सातवें नरक के मिथ्यादृष्टियों को ऐसे दो ऑप्शन्स नहीं हैं। गति तो हर समय बंध रही है, यहां आयु की चर्चा नहीं चल रही है। आयु तो वह नियम से मिथ्यात्व में जायेंगे और तिर्यंचायु का ही बंध करेंगे उसकी बात यहां नहीं हो रही है। यहां नामकर्म के बंधस्थानों की चर्चा चल रही है। तो यह हमने देखा।

श्रोता: सातवें नरक के नारकी ? बतायी न अभी सातवें नरक की बात ? *श्रोता: आपने बताया कि वहां का सम्यग्दृष्टि हो तो वह मिथ्यात्व में जाकर ही बांधता है ?* वह आयु की बात चल रही थी। सातवें नरक का नारकी जब तक सम्यक्त्व में है तब तक मनुष्यगति का ही बंध करता है, परंतु जब आयु बंध का अवसर आता है तो वह नियम से मिथ्यात्व में जाता है और तिर्यंचायु का ही बंध करता है; आयु की बात है। देखो, गति का बंध करता है तो उसके भोगने की बात नहीं है। जिस आयु का बंध करेगा उस आयु का और फिर उस गति का भी उसके साथ उदय हो जायेगा जो बंधी पड़ी है न

हमारे पास ! सभी स्टॉक है; चारों ही गति नामकर्म और सभी पर्याप्त, अपर्याप्त, सूक्ष्म, साधारण सभी कर्म पड़े हैं अंदर नामकर्म में, क्योंकि कभी किसीका बंध किया, कभी किसीका बंध; पर जो आयु बंधेगी और उस समय जैसी जो कुछ गति और जो पर्याय बंधनेवाली है उस पर्याय में हम जायेंगे। परंतु यह नामकर्म का बंध तो हर समय चल रहा है। जीव का परिणाम और उसका गुणस्थान जैसा होगा वैसा उसको बंध होगा।

पहले गुणस्थान में होंगे तो ये चारों गतियों सहितवाले, ये सभी बंधस्थान की छूट है। दूसरे गुणस्थान में ? अभी दूसरे गुणस्थान में ज्यादा टिकता नहीं है। अभी डायरेक्ट चौथे गुणस्थान की बात करेंगे। चौथे गुणस्थान में हो; मनुष्य हैं हम, चौथे गुणस्थान में हो तो देवगति हर समय बंध रही है। अभी तो तीर्थंकर प्रकृति वगैरह बांधने का दूसरा कोई ऑप्शन नहीं है तो २८वाला बंध हर समय चल रहा है सम्यग्दृष्टि मनुष्य के लिये। अभी हम देखते हैं, यह तो नारकी को क्या-क्या होता है उसको हमने देखा था।

अब तिर्यंचगति में हम देख लेते हैं, चार्ट निकालना। कौनसी बात है अभी ? तिर्यंच; तिर्यंच स्वयं किसका बंध करते हैं ? तो तिर्यंचों के एकेन्द्रियों का भी बंध होगा, द्वीन्द्रिय का भी होगा, पर्याप्त का भी होगा, अपर्याप्त का भी होगा, तिर्यंचों के देवगति का भी होगा, तिर्यंचों के नरकगति का भी बंध होगा। तिर्यंच, हां मनुष्य का भी वह २९वाला करेगा। देवगति तीर्थंकरयुत २९वाला बंध करेंगे कि नहीं करेंगे ? *श्रोता: नहीं करेंगे।* नहीं करेंगे परंतु तिर्यंच तिर्यंचगति बांध कर उद्योत का ३०वाला बंध करेंगे कि नहीं करेंगे ? तिर्यंचों के तिर्यंचगति बंध रही है, उसके साथ उद्योत का बंध कर सकते हैं कि नहीं कर सकते हैं ? हां, नहीं मालूम ? *श्रोता: कर सकते हैं।* कर सकते हैं न उसमें क्या है। तो तिर्यंचों के कौन-कौनसे बंधस्थान होंगे ? कौन-कौनसे नहीं होंगे ? ३१ का नहीं होगा और १ का नहीं होगा। तो तिर्यंचों के २३ का हो सकता है, २५ का हो सकता है, २६ का हो सकता है। २८ का हो सकता है, २९ का हो सकेगा कि नहीं ? *श्रोता: हो सकता है।* हो सकता है क्योंकि तिर्यंच स्वयं तिर्यंचगति को बांधेंगे, मनुष्यगति भी बांधेंगे तो उनके २९ का होगा। ३० का होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: होगा।* होगा, परंतु ३० में किसको लेना ? उद्योत सहितवाले द्वीन्द्रियादि ले लेंगे सारे, लास्ट दो ३०वाले देवगति आहारकद्विकयुत और मनुष्यगति तीर्थंकरयुत उनके नहीं होंगे। तो उनके ये छह स्थान होंगे। तिर्यंचगतिवालों के यानी बंध करनेवाले जीव कौन हैं ? स्वयं तिर्यंच हैं।

उनके कौन-कौनसे बंधस्थान हो सकते हैं ? ये छह हो सकते हैं।

अभी पेज नंबर ५०० निकालना, नीचे का पॅरेग्राफ। **तिर्यंचगति में आदि के छह स्थान हैं।** इसका अर्थ क्या है ? **विशेषार्थ** में लिखा है **तिर्यंच जीव इन छह स्थानों का बंध करते हैं।** कौन-कौनसे ? **२३वाला, २५वाला, २६वाला, २८वाला, २९वाला और ३०वाला।** अभी हमने देखा न कौन-कौनसे हो सकते हैं ? ३०वाला देखा था, तिर्यंचगति सहित वह उद्योतवाला बंध करेंगे तो उनको यह स्थान हो सकेगा। हम आगे देखते हैं, हमने नारकी और तिर्यंच में देखा था, अब मनुष्यगतिवालों को कौन-कौनसे बंधस्थान हो सकते हैं ? कौन बतायेगा ? *श्रोता: पच्चीस।* हां २५, अकेला २५ ? हां-हां बताने दो, अरे सब हो सकते हैं। हमने पूछा मनुष्यों के कितने हो सकते हैं ? मनुष्य एकेन्द्रिय में जायेगा कि नहीं ? अपर्याप्त में जायेगा तो उस संबंधी बंध भी करेगा तो २३ का भी होगा, मनुष्य २५ का भी कर सकता है, २६ का भी कर सकता है, नरकगति-देवगति संबंधी २८ का भी कर सकता है, मनुष्य है वह २९ का भी करेगा, है न ! यानी मिथ्यादृष्टि मनुष्य मनुष्यगति का भी बंध करेगा तो उसके २९ का होगा। सम्यग्दृष्टि मनुष्य देवगति तीर्थंकरयुत २९ का करेगा वह भी उसके होगा। आगे ३० के सभी स्थान उसके हो सकते हैं। परंतु मनुष्य स्वयं मनुष्यगति तीर्थंकरयुतवाला स्थान नहीं बांधेगा, हां, क्योंकि सम्यग्दृष्टि मनुष्य तीर्थंकर प्रकृति बांधता है उस समय वह देवगति बांधता है। ३१ का स्थान होगा न, मनुष्य में ही होगा अन्य किसीके होता नहीं है और १वाला स्थान भी मनुष्यों के ही होता है। तो मनुष्यों के लिये सब छूट है, हां, सब छूट है। ऑप्शन्स बहुत हैं। इसलिये हम ऑप्शन्स लेते हैं बहुत सारे। एक-एक समय के परिणाम से ये अलग-अलग जो बंधस्थान हैं वे बंधते रहते हैं। अब जो मिथ्यादृष्टि मनुष्य है तो उसके लिये कितने दरवाजे खुले हैं देख लो अभी, बहुत सारे हैं।

अब देवगति की बात रह गयी। देवगति में देवों के एकेन्द्रिय का बंध होगा कि नहीं होगा ? हो सकता है। हो सकता है तो कौनसे देवों के हो सकता है ? भवनत्रिक और सौधर्म-ईशान के देवों के एकेन्द्रिय संबंधी बंध हो सकता है। २३वाला बंध होगा कि नहीं देवों के ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, क्यों नहीं होगा ? यह अपर्याप्तवाला है। देव यदि बंध करते हैं तो एकेन्द्रिय स्थावर और आतप इतना ही बंध कर सकते हैं यानी वे पर्याप्त संबंधी बंध करेंगे। उनके कौन-कौनसे हो सकते हैं ? एकेन्द्रिय पर्याप्तवाला २५ का हो सकता है और २६ का भी हो सकता है। आतप या उद्योत प्रकृति उनके बंध

सकती है; जब एकेन्द्रिय पर्याय का बंध कर रहे हैं तो उसके साथ यह प्रकृति भी बंध सकती है। देवों के २५ का भी स्थान हो सकता है, २६ का भी हो सकता है। देवों के २८ का होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा क्योंकि देव देवगति या नरकगति नहीं बांधते। उनके २९ का होगा कि नहीं होगा ? देवों के द्वीन्द्रिय का, त्रीन्द्रिय का, चतुरिन्द्रिय का बंध होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय का बंध ना देव को होता है, ना नारकी के होता है। हां, देव या तो एकेन्द्रिय का करेंगे या पंचेन्द्रिय का करेंगे। पंचेन्द्रिय तिर्यंच - पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुतवाला २९ का बंध देवों के हो सकता है। देव मनुष्य का बंध भी करते हैं, मनुष्यगति पर्याप्तयुतवाला २९ का हो सकता है यानी २९ का बंध उनके है। देव ३० का बंध करेंगे कि नहीं करेंगे ? *श्रोता: नहीं करेंगे।* नहीं करेंगे ? पंचेन्द्रिय पर्याप्तयुत उद्योत सहित ३० का और मनुष्यगति तीर्थंकरयुत ३० का करेंगे। बाकी ३१ और १ उनके नहीं होंगे।

इसतरह से हमें सोचना है। अभी तो हमने गतिमार्गणा में सोचा, सब मार्गणा में सोच लो। हमें क्या ? अभी यहां से जाने के बाद क्या काम है ? एक-एक मार्गणा खोलो। देखो, कैसे सोचना हम देखेंगे। इन्द्रियमार्गणा की अपेक्षा कितने भेद हैं ? एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय इतने भेद हैं। अब एकेन्द्रियों के इनमें से कौनसे बंध हो सकते हैं ? हम देखेंगे। एकेन्द्रियों के, बांधनेवाले एकेन्द्रिय जीव हैं। उनके २३ का स्थान होगा ? *श्रोता: होगा।* होगा, २५ का ? *श्रोता: होगा।* २६ का ? *श्रोता: होगा।* २८ का ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा। एकेन्द्रिय जीव नरकगति या देवगति का बंध नहीं कर सकते। फिर २९वाला ? *श्रोता: होगा।* होगा, ३०वाला ? *श्रोता: होगा।* होगा न, उसके वह सारे द्वीन्द्रिय पर्याप्त उद्योत सहित ये सभी होंगे, बाकी आगे के ३१वाला और १वाला नहीं होंगे। इसतरह हमें सोचना है। द्वीन्द्रिय के बारे में, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय ऐसा ही है। अब पंचेन्द्रिय, यहां अपेक्षा मात्र पंचेन्द्रिय की है। अब यह नहीं कह रहे कि देव है कि नारकी है कि मनुष्य है। पंचेन्द्रिय है इतना ही कहा, इन्द्रियमार्गणा में गति की अपेक्षा नहीं लगती। बस पंचेन्द्रिय जीव है न, कौनसे बंध कर सकते हैं ? सभी करेंगे। ख्याल में आयी बात ?

कायमार्गणा में भी ऐसे ही - अभी हर एक काय पर लगाओ। पृथ्वीकाय आदि सारे पांच स्थावरकाय हैं जो हमने एकेन्द्रिय में देखा वह स्थावरकाय में लागू करो।

त्रसकायिक के कौन-कौनसे स्थान होंगे ? सभी होंगे। त्रसकाय में पंचेन्द्रिय आया कि नहीं आया ? *श्रोता: आया।* त्रसकायिक में मनुष्य आया कि नहीं आया ? *श्रोता: आया।* हमने देखा मनुष्यों के सभी स्थान होते हैं, तो त्रस जीव के कौनसे स्थान होते हैं ? तो सभी होते हैं। यह हम कौनसी मार्गणा में लगा रहे हैं उस पर है। ऐसे एक-एक मार्गणा में लगा लो; गति, इन्द्रिय, काय, योग में अभी एक-एक योगवाले पर लगाओ, एक-एक वेदवाले पर लगाओ। हां, तो इसतरह से लगाने से हम उसके बारे में सोचते हैं तो एक अपेक्षा लेते हैं, दूसरी छूट जाती है तो हम भी चौकन्ना रहते हैं। हमें आदत लग जाती है कि सभी ओर से, सभी अँगल से विचार करने की क्योंकि इतना इंटरेस्टिंग विषय है यह। *श्रोता: ज्ञानमार्गणा में कैसे लगायेंगे ?* देखो, आप कहते हैं ज्ञानमार्गणा में कैसे लगायेंगे ? मति-श्रुतज्ञानवाले के अभी कुमति-कुश्रुत पर लगाओ। तो मिथ्यादृष्टि के जो हमने देखे वे उनके होंगे और सम्यग्दृष्टि को देखना है यानी सुज्ञान के ऊपर लगाना है तो उसके गुणस्थान हमने देख लिये। उनके अनुसार हम लगा सकते हैं। ख्याल में आयी यह बात ? केवलज्ञानी पर लगाओ न ! कौनसे बंधस्थान होंगे ? १वाला होगा ? वे तो सातावेदनीय का बंध करते हैं, हम यहां नामकर्म की बात देख रहे हैं। नामकर्म की बात चल रही है, उसका बंध तो दसवें तक ही है। हां, ख्याल में आयी बात ?

इसतरह से हम सोच सकते हैं अलग-अलग मार्गणाओं में हम सोच सकते हैं। हमने अभी यहां गतियों में देख लिया। ऐसे ही हर एक मार्गणा में लगा सकते हैं। इसके लिये मार्गणा का थोड़ा अभ्यास चाहिये। हमने जीवकाण्ड में गुणस्थान और मार्गणा स्थान की विशेषता देखी थी। बीस प्ररूपणा - चौदह मार्गणा और बाकी अन्य प्ररूपणा देखी थी न ! गुणस्थान है, जीवसमास है, पर्याप्ति है, प्राण है, संज्ञा है, उपयोग है और चौदह मार्गणा हैं। ये बीस प्ररूपणायें हैं, उनका यदि हमारा अभ्यास होगा तो सोचेंगे, हमें उनके संबंधी पता ही नहीं होगा तो हम यहां कैसे सोच सकेंगे ? आप कोई भी करणानुयोग के ग्रंथ निकालो- धवला है, जयधवला है, कोई भी हो- तो उनमें सभी बातें गुणस्थानों में और मार्गणास्थानों में ही चलती हैं। हां, हर बात इनमें अप्लाय करेंगे, हमें उस संबंधी ज्ञान नहीं होगा तो हम उसके ऊपर कैसे सोचेंगे ? ख्याल में आती है बात ?

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५२. नामकर्म के उदयस्थानों के काल

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। पं. टोडरमलजी ने उसी ग्रंथ के आधार से सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी हुयी है। इसीका यह हिंदी अनुवाद है जिसमें अभी हम नामकर्म के बंधस्थान देख रहे थे। यह बंधस्थान जब हम कहते हैं २३ का, २५ का, २६ का, २८, २९, ३०, ३१ और १ का, देखे न हमने विस्तार से, तब कौनसे गति सहित, युत का अर्थ किस गति सहित है उसकी बात वहां चलती है।

अकेला १वाला स्थान है वह किसी भी गति सहितवाला स्थान नहीं है क्योंकि जो १वाला स्थान है- अकेले यशस्कीर्ति का बंध आठवें गुणस्थान के सातवें भाग से ऊपर होता है, तब उसके साथ कोई गति नहीं बंध रही है। परंतु वह बांधनेवाले जीव कौन हैं उसकी हमने मार्गणा के आधार से चर्चा की है। नरकगतिवाले जीवों के कौन-कौनसे बंधस्थान हैं ? उनके किस-किसका बंध होता है ? कोई जीव मरकर कहां जाता है यह कौन नक्की करता है ? उसके बंधयोग्य प्रकृतियां कौनसी हैं, कौनसी प्रकृतियां वह बांध सकता है इस पर से नक्की होता है कि वह मरकर कहां चला जायेगा। नारकी जीव एकेन्द्रिय संबंधी प्रकृतियां नहीं बांधेगा तो वह मरकर एकेन्द्रिय में नहीं जायेगा। इसतरह से हम सोच सकते हैं और उसीके आधार से कौनसा जीव मरकर कहां जाता है उस संबंधी थोड़ी बातें कल हमने देखी थी। कौनसी गतिवाले जीव कौनसे कर्मों का बंध करते हैं या नहीं करते उस पर से ये बातें हम बता सकते हैं। हमने गतिमार्गणा में और इन्द्रियमार्गणा में आपको बताने की कोशिश की है। हम आगे बढ़ेंगे। उदयस्थानों की तरफ देखेंगे, हम नामकर्म के उदयस्थानों के काल को पहले देखेंगे।

मैंने एक बार बताया था मिथ्यादृष्टि जीव को चारों ही कषाय चौकड़ी का - अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन का- चारों क्रोध का उदय होता है तो अन्य तीन भी अनंतानुबंधी जैसा कार्य करते हैं। यह बात आयी थी न ? वह मैं आपको आगम में बताना चाहती हूं। इसी बंधस्थान के प्रकरण में कषायमार्गणा की बात चल रही है वहां हम देखते हैं पेज ५०३- कषायमार्गणा में जहां बीच में बोल्ड में लिखा है। **कषायमार्गणा में क्रोधादि कषायों के अनंतानुबंधी आदि भेदों के द्वारा चार भेद होते हैं।** तथापि कषायमार्गणा में जब भेद करेंगे तो मात्र क्रोधवाले, मानवाले,

मायावाले और लोभवाले इतना ही कहेंगे। कषायमार्गणा की अपेक्षा ये अन्य-अन्य चार कषाय चौकड़ी के अलग-अलग भेद नहीं किये जाते। **तथापि जाति के आश्रय से एकत्वपने का ही ग्रहण किया जाता है।** जाति की अपेक्षा यानी क्रोधवाली जाति, मान की जाति। सभी क्रोध को यानी अनंतानुबंधी क्रोध, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध, प्रत्याख्यानावरण सबको एक ग्रुप में डाला है वहां पर। **क्योंकि यहां शक्ति की प्रधानता से भेद कहने की इच्छा नहीं है।** ये क्या कहना चाहते हैं वह आगे समझा रहे हैं। **बारह कषायों के यानी अनंतानुबंधी चार, अप्रत्याख्यानावरण चार और प्रत्याख्यानावरण चार के स्पर्धक तो सर्वघाति ही हैं, देशघाति नहीं हैं और संज्वलन के स्पर्धक सर्वघाति और देशघाति दोनों हैं।**

कल हमने स्पर्धक क्या है देखा था। अनुभाग को बतानेवाले उसको कहेंगे स्पर्धक। स्पर्धक किससे बने हैं तो एक-एक स्पर्धक में अनंत वर्गणा होती हैं और एक-एक वर्गणा में अनंत वर्ग होते हैं। यहां कर्मपरमाणु को ही वर्ग कहा था। उसके स्पर्धक सर्वघाति हैं इसका अर्थ है उनका जब उदय होता है तो अपने प्रतिपक्ष का पूरा घात करते हैं। **इसलिये अनंतानुबंधी क्रोध, मान, माया, लोभ में से एक का उदय होते हुये अप्रत्याख्यानादि तीनों का भी उदय होता ही है।** संज्वलन प्रकृति कौनसी प्रकृति है ? देशघाति प्रकृति है और बाकी तीन कैसी प्रकृति हैं ? सर्वघाति प्रकृति हैं। तो संज्वलन के स्पर्धक कैसे हैं ? देशघाति भी हैं और सर्वघाति भी हैं।

यहां कहना क्या चाहते हैं ? जब हम कहेंगे अनंतानुबंधी का उदय है उसका अर्थ वहां अन्य तीनों - अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन का उदय है ही **क्योंकि अनंतानुबंधी के उदय सहित अन्य के उदय के भी सम्यक्त्व और संयम-गुण का घातकपना है।** अनंतानुबंधी का कार्य क्या है ? वह संयम और सम्यक्त्व का घात करता है। जहां अनंतानुबंधी का उदय है वहां ना संयम है और ना ही सम्यक्त्व है। जहां अनंतानुबंधी का उदय है वहां अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन का भी उदय है। तो कहते हैं अनंतानुबंधी सहित अन्य तीन का उदय है तो अन्य तीन कर्म भी किसका घात कर रहे हैं ? सम्यक्त्व का और संयम का घात कर रहे हैं। हम संज्वलन को संयम का घातक नहीं कहते, परंतु जो संज्वलन पहले गुणस्थान में उदयरूप है वह संयम का घात कर रहा है यह कहना चाहते हैं। है न यहां, उस दिन यही बात निकली थी, आगे भी पढ़ेंगे। **उसी प्रकार अप्रत्याख्यान क्रोधादिक में से**

एक का उदय होते हुये यानी अप्रत्याख्यानावरण क्रोध या मान या माया या लोभ का उदय होता है तब **प्रत्याख्यानादि दो** यानी प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन उन दो **का भी उदय है ही क्योंकि अप्रत्याख्यान के उदय के साथ उन दोनों का उदय भी देशसंयम का घात करता है।** यानी अप्रत्याख्यानावरण कषाय की क्या विशेषता है ? वे देशसंयम का घात करते हैं। परंतु जहां अप्रत्याख्यानावरण का उदय है उसके साथ प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन का भी उदय है और उसके साथ जब उनका उदय है तो अन्य दो भी देशसंयम का घात कर रहे हैं।

हमने अभी तक ऐसा कभी नहीं पढ़ा था, हमने तो चारों को अलग-अलग कार्य सौंपा था, है न ! परंतु उनमें शक्ति के अलग-अलग स्पर्धक हैं तो किस अनुभागरूप से उनका उदय हो रहा है ? जब अनंतानुबंधी सहित उदय करेंगे तो सम्यक्त्व और संयम का घात करेंगे और जब अप्रत्याख्यानावरण सहित उदय हो रहा है तो देशसंयम का घात कर रहे हैं। अब **प्रत्याख्यान क्रोधादि में से एक का उदय होते हुये संज्वलन का भी उदय है ही क्योंकि प्रत्याख्यान के उदय के साथ संज्वलन का उदय होने पर प्रत्याख्यानवत् संज्वलन भी सकलसंयम का घात करता है।** यदि हम पूछेंगे संज्वलन का क्या कार्य है ? वह संयम को होने देता है परंतु जब प्रत्याख्यानावरण सहित उसका उदय हो रहा है तब वह संयम नहीं होने दे रहा है क्योंकि वहां पर भी सर्वघाति का उदय हो रहा है। संज्वलन के जो सर्वघाति स्पर्धक हैं उनका उदय हो रहा है। मात्र छठे-सातवें गुणस्थान में अकेले संज्वलन का जब उदय है तब उनके देशघाति स्पर्धकों का उदय होगा, तब वह संयम का घात नहीं करेंगे। अन्य के साथ जब उदय था तो अधिक तीव्र अनुभाग का उदय था तब वह संयम का भी घात कर रहे थे।

पहले गुणस्थान में जब संज्वलन का उदय है तो वे सम्यक्त्व का और संयम का भी घात कर रहे हैं। चौथे गुणस्थान में जो संज्वलन का उदय है और अन्य दो का है तो वे देशसंयम का घात कर रहे हैं। क्योंकि उनमें भी अन्य-अन्य अनुभागवाले परमाणु वहां हैं। पृष्ठ ५०४ - **केवल संज्वलन का उदय हो तो प्रत्याख्यानादि तीन का उदय नहीं होता** यानी अकेले मात्र संज्वलन का उदय है, छठे और ऊपर के गुणस्थानों में, वहां अन्य तीन प्रत्याख्यानावरण, अप्रत्याख्यानावरण और अनंतानुबंधी का उदय नहीं है; **क्योंकि अन्य कषायों के स्पर्धक सकलसंयम के विरोधी हैं।** अकेले संज्वलन

का उदय है तभी तो संयम चल रहा है, हो रहा है। ऐसे अन्य में भी उन्होंने घटित किया है। अब दो पॅरेग्राफ छोड़ेंगे क्योंकि यही बात फिर दुबारा बतायी है। तीसरा पॅरेग्राफ- **इसप्रकार अनंतानुबंधी के और उसके उदय के साथ अप्रत्याख्यानादिकों के चारित्रमोहपना होने पर भी सम्यक्त्व और संयम का घातकपना कहा। अनंतानुबंधी के उदय रहित अप्रत्याख्यानादि के उदय देशसंयम का घात करते हैं। अप्रत्याख्यान के उदय रहित प्रत्याख्यान, संज्वलन का उदय सकलसंयम का घात करता है। प्रत्याख्यान के उदय रहित केवल** यानी मात्र **संज्वलन-देशघाति स्पर्धकों का उदय** - उसके देशघाति का उदय कब होगा ? जब जीव संयम को प्राप्त करता है तब होगा यानी छठे-सातवें गुणस्थान और ऊपर के गुणस्थानों में, संयम का घात यानी **यथाख्यातसंयम का घात करता है।** परंतु सकलसंयम होने देता है।

एक पॅरेग्राफ छोड़कर नीचे प्रश्न है, **अनंतानुबंधी की शक्ति से अन्य कषायों की शक्ति समान कैसे कहते हैं ?** अनंतानुबंधी के साथ जब अन्य तीन का उदय है तो वे भी अनंतानुबंधी जैसे कार्य कर रहे हैं। क्या कार्य कर रहे हैं ? सम्यक्त्व और संयम नहीं होने दे रहे हैं। तो प्रश्न है, अनंतानुबंधी की शक्ति अलग है, अन्य तीन की अलग है तो उनकी शक्ति अनंतानुबंधी जैसी क्यों कह रहे हैं ? पहले ये बातें बतायी थी कि जो देशघाति प्रकृतियां हैं वे चारों प्रकार के अनुभागरूप प्रवर्तती हैं, परिणमती हैं। अब आगे पृष्ठ ५०५ पर उसकी बात पढ़ेंगे- **अवशेष सम्यग्मिथ्यात्व को छोड़कर केवलज्ञानावरणादि बीस सर्वघाति प्रकृतियां आठ नोकषाय और पचहत्तर अघातिया ये तीन अनुभागरूप परिणमती हैं।** उसके आगे-

अनुभाग शक्ति के विशेष से यानी अनुभाग शक्ति अलग-अलग होने से; विशेष से यानी अलग-अलग डिग्री में, डिग्री कहते हैं न, उसकी कितनी डिग्री है ? तो अनुभाग का अलग-अलग डिग्री में उदय होने से अनंतानुबंधी के समान यानी **अनंतानुबंधीवत् अन्य कषायों के भी सम्यक्त्वादि का घात करने से सादृश्यपना पाया जाता है।** इसके आगे लिखा है- **मिथ्यात्व सहित उदय हो, वे कषाय सम्यक्त्व का घात करते हैं।** यानी मिथ्यात्व सहित अनंतानुबंधी भी, अप्रत्याख्यानावरण भी, प्रत्याख्यानावरण भी और संज्वलन भी चारों प्रकार के कषाय जब मिथ्यात्व सहित उदय में आ रहे हो तब वे सम्यक्त्व का घात करते हैं। अनंतानुबंधी सहित उदय हो, वे सम्यक्त्व और संयम का घात करते हैं। वही बात है फिर - **अप्रत्याख्यान सहित उदय**

हो, वे देशसंयम और सकलसंयम का घात करते हैं। यानी चौथे गुणस्थान की बात बतायी। **प्रत्याख्यान सहित उदय हो, वे सकलसंयम का घात करते हैं।** पांचवें गुणस्थान की बात बतायी है। **संज्वलन के देशघाति स्पर्धकों का उदय है,** छठे-सातवें गुणस्थान की बात है। **वह यथाख्यातसंयम का घात करता है।** यानी दसवें तक। **इसतरह बारह कषाय और सर्वघाति संज्वलन के स्पर्धकों में किसी प्रकार से भेद है, तथापि शक्ति की समानता से समान कार्य को करते हैं।**

यहां यह बात हमें सिद्ध होती है- ये चार अलग-अलग प्रकार बताये हैं और कौनसे गुणस्थानों में कौनसे कषाय के उदयवश क्या कार्य होता है यह देखा था। परंतु जैसे अनंतानुबंधी का कार्य क्या है ? तो सम्यक्त्व नहीं होने देता, संयम नहीं होने देता। परंतु पहले गुणस्थान में अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन का जितना उदय है वहां इतना तीव्र अनुभाग का उदय है वह बिलकुल अनंतानुबंधी जैसा ही वहां कार्य कर रहे हैं। चौथे गुणस्थान में अप्रत्याख्यानावरण का उदय है, मुखिया वह है। उस समय वहां जो प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन के अनुभाग का उदय है, भले पहले से थोड़ा मंद अनुभाग का उदय है फिर भी ऐसा उदय है कि वह देशसंयम नहीं होने दे रहे। पांचवें गुणस्थान में प्रत्याख्यानावरण का उदय है, वहां संज्वलन का भी उदय है। उस पांचवें गुणस्थान में जो संज्वलन का उदय है वहां जितना अनुभाग है वह क्या कर रहा है ? सकलसंयम नहीं होने देता और जहां मात्र अकेले संज्वलन का उदय है छठे-सातवें या हम दसवें तक देखते हैं तो उसका देशघातिरूप उदय सकलसंयम तो होने देता है, यथाख्यातसंयम नहीं होने देता, पूर्ण वीतरागता नहीं होने देता।

श्रोता: कोई क्षायिक सम्यग्दृष्टि हो और अपना-अपना कार्य करते हैं तो क्या दोष आयेगा ? अपना-अपना कार्य करते हैं तो क्या दोष आयेगा ? कोई अकेला संयम नहीं होने दे, परंतु सम्यक्त्व होने दे रहा है ऐसा नहीं है क्योंकि प्रत्येक कषाय में प्रत्येक कर्म में अनुभाग की तीव्रता और मंदता के अनुसार बहुत सारे भेद हैं। अपना यहां अनुभाग संबंधी प्रकरण नहीं चल रहा है, अनुभाग संबंधी भी जयधवला में तीन-तीन पुस्तकें हैं। अभी हमें मालूम ही नहीं कर्मों की कैसी-कैसी अवस्थायें पायी जाती हैं। अकेले संयम, संक्रमण के ऊपर कितनी सारी पुस्तकें हैं। परमाणुओं की संख्या कितनी होती है ? उसके भेद कितने ? उसमें कितना संक्रमण होता है ? उसमें दो-दो,

तीन-तीन पुस्तकें हैं। संक्रमण के ऊपर यानी प्रकृति का संक्रमण अलग, प्रदेश का संक्रमण अलग, अनुभाग का संक्रमण अलग, स्थिति का संक्रमण अलग। यानी हमें तो पता ही नहीं है कि क्या-क्या अवस्थायें बनती हैं ? कैसी कैसी और क्या-क्या होती हैं ?

श्रोता: संज्वलन में कैसे सर्वघाति हैं जब कि संज्वलन प्रकृति देशघाति है ? संज्वलन में सर्वघाति कैसे हैं यह आपका प्रश्न है। अनुभाग की अपेक्षा घातिकर्मों में दो प्रकार के कर्म पाये जाते हैं - कोई प्रकृति देशघाति है और कोई प्रकृति सर्वघाति है। सर्वघाति प्रकृति में सभी स्पर्धक सर्वघाति ही होते हैं। क्या कहा ? सर्वघाति प्रकृतियों के सभी स्पर्धक सर्वघाति ही होते हैं और देशघाति प्रकृतियों के स्पर्धक सर्वघाति भी होते हैं, देशघाति भी होते हैं। जिसरूप से उदय हो उसरूप उसका फल मिलेगा। अभी हम संज्वलन को अलग रखते हैं, पहले मतिज्ञानावरण पर घटित करते हैं। मतिज्ञानावरण सर्वघाति प्रकृति है कि देशघाति है ? *श्रोता: देशघाति है।* देशघाति प्रकृति है। मतिज्ञानावरण प्रकृति देशघाति प्रकृति है यानी उस प्रकृति का उदय भी होता रहता है और हमारा मतिज्ञान भी उघाड़रूप है। उघाड़रूप है न ? उसके उदय में भी हमारा मतिज्ञान चल रहा है। देशघाति प्रकृति है परंतु उसमें सर्वघाति के स्पर्धक हैं, उनका उदय नहीं होगा वह बात अलग है। मतिज्ञानावरण के सर्वघाति का कभी भी उदय नहीं होगा। उदय का समय आता है तो वे देशघातिरूप होकर उदय में आते हैं।

हम अवधिज्ञानावरण की बात करते हैं। अवधिज्ञानावरण कैसी प्रकृति है ? *श्रोता: देशघाति प्रकृति है।* देशघाति प्रकृति है। अभी आपको अवधिज्ञान है क्या ? नहीं है। होगा तो बताना मत, लाइन लग जायेगी। अवधिज्ञान आपको नहीं है, अरे अवधिज्ञानावरण का उदय तो सबको चल रहा है। हमारे पांचों ही ज्ञानावरण का उदय चल रहा है; मतिज्ञानावरण का उदय है फिर भी हमारा मतिज्ञान चल रहा है; श्रुतज्ञानावरण का उदय चल रहा है, हमारा श्रुतज्ञान उघाड़रूप चल रहा है; अवधिज्ञानावरण का उदय है फिर भी अवधिज्ञान नहीं हो रहा है। क्यों नहीं हो रहा है ? वह तो देशघाति प्रकृति है न ! क्यों नहीं होता ? उसके सर्वघाति स्पर्धकों का उदय हो रहा है। हमें मन:पर्ययज्ञान नहीं है, मन:पर्ययज्ञानावरण देशघाति प्रकृति है फिर भी अभी उसके सर्वघाति स्पर्धकों का उदय है। अभी हम संज्वलन पर घटित करते हैं।

संज्वलन चौकड़ी- क्रोध-मान-माया-लोभ ये कैसी प्रकृति हैं ? *श्रोता: देशघाति*

हैं। देशघाति हैं, उनमें स्पर्धक कैसे हैं ? सर्वघाति भी हैं, देशघाति भी हैं। पहले, दूसरे, तीसरे, चौथे, पांचवें गुणस्थान तक संज्वलन का कैसा उदय चलेगा ? *श्रोता: सर्वघाति का।* सर्वघाति का क्योंकि वे सकलसंयम नहीं होने दे रहे हैं। छठे-सातवें और ऊपर के गुणस्थानों में कैसा उदय होगा उनका ? देशघातिरूप से। *श्रोता: वहां संज्वलन में देशघाति प्रकृति ही लिखेंगे ?* प्रकृति में देशघाति लिखेंगे। हमने जब उसका विभाजन देखा था; हमने देखा था कि प्रदेश में जब बटवारा होता है तो परमाणु में ही कुछ परमाणु सर्वघाति हैं और कुछ देशघाति हैं। पूरे एक समयप्रबद्ध में से अनंत परमाणु मोहनीय के खाते में आते हैं, उसमें अनंतवां भाग सर्वघाति प्रकृतियों में जाता है यानी सर्वघाति स्पर्धकरूप से बंध रहे हैं और अनंत बहुभाग देशघाति में चले जाते हैं।

सर्वघाति प्रकृति कौन-कौनसी हैं ? मिथ्यात्व, अनंतानुबंधी, अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण ये सब सर्वघाति हैं। उनमें बिलकुल थोड़ा माल, अनंतवां भाग जाता है। प्रदेश कितने आते हैं बटवारे में ? कितने परमाणु का उदय है इसके ऊपर उसका फल नहीं मिलता। वह देशघाति है कि सर्वघाति है, किस अनुभागरूप में उसका उदय चल रहा है उसका वैसा फल मिलता है। परमाणु अधिक उदय में आये इसलिये जीव को अधिक फल मिलता है ऐसा बिलकुल नहीं है, परंतु किस अनुभागरूप से उसका उदय चलता है उसरूप उसका फल मिलता है। संज्वलन देशघाति प्रकृति होने पर भी नीचे के गुणस्थानों में उसके सर्वघाति स्पर्धकों का उदय है इसलिये वह वैसा-वैसा कार्य करती है। संज्वलन के सर्वघाति का उदय पहले में भी है और सर्वघाति का उदय चौथे में भी है। फिर भी पहले में इतना तीव्र अनुभाग है तो सम्यक्त्व भी नहीं होने देता और चौथे में इतना मंद अनुभाग है कि सम्यक्त्व होने देता है, परंतु संयम या देशसंयम नहीं होने देता। यानी उस गुणस्थान के जो मुख्य कषाय हैं वैसा उनका कार्य है। संज्वलन कषाय पहले गुणस्थान में अनंतानुबंधी जैसा कार्य कर रहे हैं, चौथे गुणस्थान में वे अप्रत्याख्यानावरण जैसा कार्य कर रहे हैं, पांचवें गुणस्थान में वे प्रत्याख्यानावरण जैसा कार्य कर रहे हैं। मुनि अवस्था में जब अकेले संज्वलन का उदय है तब वे देशघातिवाला कार्य कर रहे हैं कि सकलसंयम होने देते हैं, परंतु यथाख्यातसंयम नहीं होने देते यानी अनुभाग के अनुसार उसका कार्य है।

श्रोता: क्या सम्यक् प्रकृति का अनुभाग नियम से सर्वघाति ही रहेगा ? सम्यक्

प्रकृति सर्वघाति कभी नहीं होती। हमने न्याय क्या लगाया था ? देशघाति प्रकृति में सर्वघाति स्पर्धक भी हैं। परंतु यह बंधनेवाली प्रकृति नहीं है। मिथ्यात्व प्रकृति सर्वघाति है यानी सम्यक्त्व का पूरा घात करनेवाली प्रकृति है, उसका अनुभाग अनंतगुणा हीन होकर -अनंतवें भाग होकर सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति बनती है वह भी सर्वघाति है। उससे भी अनुभाग बहुत कम होकर सम्यक् प्रकृति बनती है, वह मात्र-प्युअरलि देशघाति स्पर्धकवाली ही है, उसमें सर्वघाति नहीं है। वह नियम वहां लागू नहीं होता क्योंकि वह सर्वघाति या देशघातिरूप से बंधी हुयी प्रकृति नहीं है। अन्यत्र जहां-जहां हम देशघाति प्रकृति देखते हैं वहां उसके स्पर्धक सर्वघाति भी होते हैं और देशघाति भी होते हैं।

ये सभी मार्गणाओं में बहुत सारी चर्चा है फिर भी हमें कुछ अन्य विषय अभी लेना है न ! क्योंकि हम अभी नामकर्म के बंधस्थानों से भी परिचित हो गये हैं यानी हम कौन-कौनसे बंध करते रहते हैं दिनभर, वह तो पता चला। अभी उसके उदय के बारे में कुछ विशेष बातें हम देखेंगे। हमने नामकर्म का बंध देखा, जो हर समय चलता ही रहता है। विग्रहगति में भी होगा और पूरी जिंदगी भर उसका बंध चलता रहेगा। परंतु नामकर्म के उदय हैं उसमें विशिष्ट नामकर्मों का उदय विशिष्ट काल में होता है, उनके कुछ नियम हैं। किस काल में नामकर्म की कितनी प्रकृतियां उदयरूप होती हैं ? कहां कितनी होती हैं ? कौन-कौनसी होती हैं ? इसके बारे में हम कुछ बातें देखेंगे, सीखेंगे। हम पृष्ठ ५६४ पर गाथा ५८३ देखेंगे, यहां उदयस्थानों बतानेवाले हैं। पहले गाथा पढ़ेंगे।

विग्गहकम्मसरीरे सरीरमिस्से सरीरपज्जत्ते।
आणावचिपज्जत्ते कमेण पंचोदये काला ॥५८३॥

हम नीचे टीका में इसका अर्थ देखते हैं। **नामकर्म के उदयस्थान**, उदयस्थान का अर्थ क्या करेंगे हम ? एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियां उदयरूप होंगी उसको नामकर्म का उदयस्थान कहेंगे। बंधस्थान में हमने क्या देखा था ? एक जीव के एक काल में जितनी प्रकृतियां बंधती हैं उसको हमने बंधस्थान कहा था। यहां पर एक जीव के एक काल में नामकर्म की जितनी प्रकृतियां उदयरूप होती हैं उसको हम नामकर्म के उदयस्थान कहेंगे। हमने पहले मोहनीय के देखे थे, अभी यहां नामकर्म की बात देख रहे हैं। मोहनीय कर्मों को हमने गुणस्थान में घटित किया था। अब यहां इसके काल कुछ अलग हैं। वह कौनसे-कौनसे काल हैं उनको देखेंगे। **नामकर्म के**

उदयस्थान जिस-जिस काल में उदययोग्य हैं वहां ही होते हैं। वहीं पर उनका उदय होगा। विशिष्ट प्रकृतियों का उदय विशिष्ट काल में ही होगा **इसलिये नियतकाल है।** नामकर्म के जो उदयस्थान हैं वे नियतकाल है, नियतकाल यानी निश्चित काल है। **वे काल अनुक्रम से पांच हैं।** ये नामकर्म के उदयस्थानों की अपेक्षा पांच काल कहने में आते हैं। **पहला है विग्रहगति और कार्माणशरीर में** यानी कहां-कहां उदयरूप होते हैं ? इसको ऐसा भी कहेंगे विग्रहगतिकाल या कार्माणशरीरकाल। **दूसरा है मिश्रशरीर में, तीसरा है शरीरपर्याप्ति में, चौथा है श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति में, जिसको आनपान भी कहते हैं और पांचवां है भाषापर्याप्ति में।**

ऊपर लिखा था गाथा में **आणावचिपज्जत्ते** यानी **आन** यानी आनपान और **वच्च: पर्याप्ते** यानी भाषापर्याप्ति ली थी। फिर से देखते हैं- कौनसे अलग-अलग पांच काल हमने देखे थे जहां अलग-अलग उदयस्थान होते हैं ? पहला है विग्रहगति का, उसीको कार्माणशरीर ऐसा कहने में आया है। केवल मात्र विग्रहगति कह देते हैं न ! उसको कार्माणकाल क्यों कहा ? क्योंकि कार्माणकाल विग्रहगति में भी होता है और केवली समुद्घात अवस्था में भी होता है। तेरहवें गुणस्थान में केवली भगवान जब समुद्घात करते हैं तब प्रतर, लोकपूरण और प्रतर समुद्घात में तीन समय तक उनके कार्माणकाययोग होता है। वहां भी कुछ विशेषता होगी, यह कितने कर्मों का उदय है इसलिये उसको भी यहां ले लिया, इसलिये इसका नाम कार्माणकाल लिखा। इसको विग्रहगतिकाल या कार्माणकाल कहेंगे। तो **विग्रहगति और कार्माणशरीर में,** दूसरा कौनसा कहा ? **मिश्रशरीर में,** इसीको शरीरमिश्रकाल भी कहते हैं। तीसरी बात **शरीरपर्याप्ति में** यानी शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने के समय से लेकर उसको शरीरपर्याप्ति काल कहते हैं। चौथा है उच्छ्वासपर्याप्ति या **श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति में**, उसीको आनपान भी कहते हैं। उसको हम नाम देंगे उच्छ्वासपर्याप्तिकाल। पांचवां है **भाषापर्याप्ति में** भाषापर्याप्तिकाल यानी जिस समय भाषापर्याप्ति पूर्ण होती है उस समय से लेकर। ये नामकर्मों के विशिष्ट उदय चलेंगे अभी। कब तक चलेंगे ? तो मरण समय तक चलेंगे।

जीव एक गति से मरकर अन्य गति में यानी एक भव से मरकर अन्य भव में उत्पन्न होता है तो पहले में पहले विग्रहगति में आता है, वहां नामकर्म की कुछ प्रकृतियों का उदय है। जहां जन्म लेना है वहां पहुंचता है तो वहां कुछ कर्मों का उदय

चालू हो जाता है। उसमें नामकर्म की और कुछ कर्म प्रकृतियों का उदय शुरू हो जाता है तो उसको कहा शरीरमिश्रकाल। वहां आहारपर्याप्ति आदि छहों पर्याप्ति शुरू हो गयी हैं। **जब तक शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं हुयी है तब तक हम उसको कहेंगे शरीरमिश्रकाल।** शरीरपर्याप्ति पूरी होते ही उसको शरीरपर्याप्तिकाल कहेंगे। कब तक ? जब तक आगे की पर्याप्ति पूरी नहीं होती है। आगे की यानी इन्द्रियपर्याप्ति नहीं समझना, यहां हमें श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति तक का काल लेना है। शरीरपर्याप्ति पूरी हुयी तो हम उसको शरीरपर्याप्तिकाल कहेंगे। जब श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति पूरी हो जायेगी तो हम उसको श्वासोच्छ्वास या उच्छ्वासपर्याप्तिकाल शुरू हुआ कहेंगे। उस काल से लेकर जब भाषापर्याप्ति पूर्ण होती है तब तक के काल को हम उच्छ्वासपर्याप्तिकाल कहते हैं। जब भाषापर्याप्ति पूर्ण होती है उसी समय से लेकर मरण समय तक पूरा जो काल है उसको भाषापर्याप्तिकाल कहेंगे। आप कहेंगे मन:पर्याप्ति का क्या है ? उसमें नामकर्म के कोई नये उदय आकर जुड़ते नहीं हैं। नामकर्म के उदय की अपेक्षा ये पांच ही काल हैं। मन:पर्याप्ति पूर्ण होती है, होने दो, परंतु वहां कोई नये कर्म का उदय नहीं शुरू होता है। जितने नामकर्म के उदय हैं वहां भाषापर्याप्तिकाल में उदयरूप हो गये हैं। क्रम से इन कालों में कुछ न कुछ प्रकृतियां नये-नये उदयरूप होती हैं; वे कौनसी होती हैं, कहां कितनी होती हैं वह हम देखेंगे।

नामकर्म के उदयस्थानों के काल

१) कार्माणकाल	१ से ३ समय
२) शरीरमिश्रकाल	अंतर्मुहूर्त
३) शरीरपर्याप्तिकाल	अंतर्मुहूर्त
४) उच्छ्वासपर्याप्तिकाल	अंतर्मुहूर्त
५) भाषापर्याप्तिकाल	शेष आयुप्रमाण

लब्धिअपर्याप्त: १, २ एकेन्द्रिय: १, २, ३, ४
आहारक: २, ३, ४, ५ केवलीसमुद्घात: ३, २, १, २, ३, ४, ५

हमने नामकर्म के उदय के अनुसार पांच काल देखे। कौन-कौनसे काल हैं उसको हम दुबारा देखेंगे। ये उदयस्थानों के काल कहा है, उदयस्थान नहीं कहा।

उदयस्थानों में हम संख्यायें देखेंगे, कितनी प्रकृतियों का उदय ॲट अ टाइम होता है। यहां पहला है कार्माणकाल। कितना है ? एक से तीन समय। यह कब होता है ? *श्रोता: विग्रहगति में।* विग्रहगति में। एक समय किसको लगता है मालूम है ? *श्रोता: बिना मोड़वाले को।* बिना मोड़वाला तो तत्काल पहुंचता है उसके कार्माणकाययोग होता ही नहीं। एक मोड़वाले के एक समय के लिये यानी मोड़ के पहले कार्माणकाययोग पाया जाता है तब उसको लेना। जो डायरेक्ट पहुंचता है जिसको हम ऋजुगति या इषुगति कहते हैं, उसके तो जो शरीरमिश्रकाल में उदयरूप प्रकृतियां हैं वे डायरेक्ट उदयरूप हो जाती हैं, उसके कार्माणकाल नहीं होगा।

जो मरकर डायरेक्ट एक ही समय में जहां जन्म लेना है वहां पहुंच जाता है, उसी समय में उसकी सभी पर्याप्ति शुरू होती हैं; पर्याप्ति मालूम है कि नहीं मालूम ? जीव एक भव से मरकर अन्यत्र चला गया तो, उस शरीर के योग्य वहां परमाणुओं का ग्रहण शुरू होता है और आहारपर्याप्ति में उनको रसरूप-खलरूप परिणमाना चालू कर देता है। फिर शरीरपर्याप्ति होती है। सभी पर्याप्ति एक साथ शुरू होती हैं, उनकी पूर्णता क्रम से होती है। आहारपर्याप्ति पूर्ण हुयी, फिर शरीरपर्याप्ति पूर्ण होगी, फिर इन्द्रियपर्याप्ति पूर्ण होगी, फिर श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति पूर्ण होगी, फिर भाषापर्याप्ति पूर्ण होगी और फिर मन:पर्याप्ति; संज्ञी पंचेन्द्रिय के लिये छह पर्याप्ति होती हैं। जो संज्ञी नहीं है तो द्वीन्द्रिय से लेकर असंज्ञी तक पांच पर्याप्ति होंगी। जो एकेन्द्रिय जीव है उनके ? *श्रोता: चार।* चार ही पर्याप्ति होंगी। बात ख्याल में आती है ? जो लब्धिअपर्याप्त हैं उनके जितनी हैं उतनी शुरू तो होती हैं, परंतु एक भी पूर्ण नहीं होती।

यहां नामकर्म के अलग-अलग उदयस्थान में पहले कार्माणकाल देखा। वह विग्रहगति में है कि कोई जीव एक मोड़ सहित जाता है, कोई दो मोड़ सहित जाता है, कोई तीन मोड़ सहित। तीन मोड़ तो एकेन्द्रियों में ही लगते हैं क्योंकि अगर वह नीचे लोकाकाश के किसी एक कोने में है, तो ऊपर डायरेक्ट लोकाकाश के बाहर से तो नहीं जा सकता इसलिये उसको एक मोड़ और लेना पड़ता है। बाकी यह द्वीन्द्रियादि को तीन मोड़ नहीं लगते। कार्माणकाल कितना है ? एक से लेकर तीन समय तक का। दूसरा है शरीरमिश्रकाल; पर्याप्ति शुरू होने के समय से लेकर दूसरी जो शरीरपर्याप्ति है; वह पूर्ण होने के एक समय पूर्व तक शरीरमिश्रकाल कहने में आता है जहां

मिश्रकाययोग होता है। औदारिकमिश्र है या वैक्रियिकमिश्र है यह शरीरमिश्रकाल है, वह भी अंतर्मुहूर्त है। तीसरा है शरीरपर्याप्तिकाल; शरीरपर्याप्ति पूर्ण हो चुकी है, आगे की पर्याप्ति अभी चल रही है तो वह भी अंतर्मुहूर्त है। उच्छ्वासपर्याप्ति पूर्ण होते ही उच्छ्वासपर्याप्तिकाल शुरू हो जायेगा और वह भी अंतर्मुहूर्त तक रहेगा क्योंकि एक-एक पर्याप्ति पूर्ण होते-होते अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त बीत जाता है। भाषापर्याप्तिकाल कितना है ? शेष आयुप्रमाण - भाषापर्याप्ति पूर्ण होने पर जितनी आयु बांधकर आया है उसमें से जितनी आयु अभी बाकी है। भाषापर्याप्ति पूर्ण हो चुकी अब जितनी आयु बाकी है करोड़पूर्व की हो या नारकी में ३३ सागर की हो, उस सबको क्या कहेंगे ? भाषापर्याप्तिकाल। ये अलग-अलग काल जो हैं, किस काल में कौनसी प्रकृतियों का उदय होता है ? वह इसके आधार से हम बतायेंगे।

श्रोता: लब्धिअपर्याप्तों के लिये ? लब्धिअपर्याप्तों के लिये हां, बहुत अच्छा प्रश्न किया। लब्धिअपर्याप्तों में इनकी पर्याप्ति शुरू होती हैं कि नहीं होती हैं ? होती हैं। उनके विग्रहगति में या एक या दो तीन समय लगेंगे कि नहीं लगेंगे ? हां लग सकते हैं। तो उनके कार्माणकाल होगा और शरीरमिश्रकाल भी होगा। शरीरमिश्रकाल में इनका मरण हो जाता है। इनके एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती। तो इनके शरीरपर्याप्तिकाल होने का सवाल ही नहीं है। लब्धिअपर्याप्तों के लिये दो ही काल हैं एक है कार्माणकाल यानी विग्रहगति का काल और दूसरा है शरीरमिश्रकाल।

श्रोता: शरीरमिश्रकाल का माने आहार ? शरीरमिश्रकाल का अर्थ होता है अभी शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं हुयी है। उनकी सभी पर्याप्ति चालू हो गयी थी, एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं हुयी है। आहारपर्याप्ति भी पूरी होने का सवाल ही नहीं है। लब्धिअपर्याप्तों के एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती। एक भी नहीं होती तो दूसरी होने का सवाल कहां है ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल ?* शरीरमिश्रकाल है। सभी पर्याप्ति शुरू हो गयी हैं और शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं हुयी। *श्रोता: शरीरमिश्र शब्द क्यों आया ?* यहां मिश्रकाययोग होता है; यहां पर औदारिक मिश्रकाययोग होगा। जब पर्याप्ति शुरू हो जाती हैं और जब तक शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं हुयी है तब कौनसे योग होते हैं ? विग्रहगति में कार्माणकाययोग था और यहां औदारिकमिश्रकाययोग होगा, इस काल को शरीरमिश्रकाल कह दिया है। यहां शरीर कितना डेव्हलप हुआ उसकी बात नहीं है।

श्रोता: आहारपर्याप्ति पूरी नहीं होगी न ? नहीं होने दो, शरीरमिश्रकाल होने में क्या बाधा है ? शरीरमिश्रकाल में आहारपर्याप्ति पूरी नहीं होती है। हमने कब कहा ? आहारपर्याप्ति की यहां बात ही नहीं उठायी। आहारपर्याप्ति, शरीरपर्याप्ति आदि सभी पर्याप्ति शुरू हो गयी हैं परंतु एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं होनी है। अभी आप बोलो लब्धिअपर्याप्तों के कितनी पर्याप्ति हैं ? क्या एक भी नहीं है ? *श्रोता: जिस प्रकार के जीव होंगे उस प्रकार से पर्याप्ति होंगी।* एकेन्द्रिय लब्धिअपर्याप्त की बात करते हैं। अभी आप बोलो - *श्रोता: चार।* चार होंगी। लब्धिअपर्याप्तों के श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति होगी कि नहीं ? *श्रोता: शुरू होती हैं।* शुरू होती हैं अच्छा, पूर्ण नहीं होती है। प्राण नहीं है पर्याप्ति है ऐसा हम कहेंगे। उसकी पूर्ण नहीं होनेवाली; तो एक भी पूर्ण नहीं हुयी परंतु सभी चालू तो गयी कि नहीं हो गयी ? चालू हुयी है परंतु पूर्ण नहीं हुयी तो उसको क्या कहेंगे हम ? शरीरमिश्रकाल क्योंकि औदारिक मिश्रकाययोग में ही उनका मरण है।

उनकी पर्याप्ति - शरीरपर्याप्ति क्या आहारपर्याप्ति भी पूरी नहीं होनेवाली है। लब्धिअपर्याप्तों के एक भी पर्याप्ति पूरी नहीं होती है। अब इसमें क्या संदेह है ? शरीरपर्याप्तिकाल कब शुरू होगा ? जिसका होगा उसकी बात है। जब शरीरपर्याप्ति पूरी होगी तो जिनकी शरीरपर्याप्ति पूरी होगी उसके पहले आहारपर्याप्ति पूरी होगी ही होगी। उसके बिना तो उसकी पूर्णता होनी नहीं है और वह किसके होगी ? जो पर्याप्त जीव हैं उनके पूर्ण होगी। लब्धिअपर्याप्त है उनके एक भी पूर्ण नहीं होगी तो आगे बढ़ने का सवाल ही नहीं है। उनका मिश्रकाल में ही मरण है। इसलिये लब्धिअपर्याप्त में एक और दो काल, कार्माणकाल है और शरीरमिश्रकाल है। एक और दो का अर्थ क्या है ? उनके लिये कार्माणकाल है और शरीरमिश्रकाल है। शरीरपर्याप्तिकाल नहीं है क्योंकि उनकी शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं होती। ये बात ख्याल में आयी सबके ? आगे देखते हैं।

एकेन्द्रिय लिया है - एकेन्द्रिय में अभी पर्याप्त ले लो। उसको कार्माणकाल है। शरीरमिश्रकाल है, कब तक ? जब तक शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं होती तब तक। उस काल में उसके आहारपर्याप्ति पूरी होकर शरीरपर्याप्ति पूरी हुयी। हमारा यह विषय पर्याप्ति संबंधी नहीं है तो जो हमारे इस विषय में काम की नहीं उन पर्याप्तियों का हम नाम नहीं ले रहे। ना हमने आहारपर्याप्ति का नाम लिया है, ना इन्द्रियपर्याप्ति का नाम लिया है और ना ही मन:पर्याप्ति का नाम लिया है। जिससे हम कन्सर्न है उसीका नाम

लेंगे। तो एकेन्द्रिय के शरीरमिश्रकाल है कि नहीं ? *श्रोता: है।* पहला कार्माणकाल है, शरीरमिश्रकाल है, शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने पर शरीरपर्याप्तिकाल कहेंगे। एकेन्द्रिय के उच्छ्वास है कि नहीं है ? *श्रोता: नहीं है।* पर्याप्तों के तो है, उनके उच्छ्वासपर्याप्तिकाल चलेगा। कब तक चलेगा ? *श्रोता: आयु के अंत तक।* आयु के अंत तक। उनके भाषा है ही नहीं तो हम उनको भाषापर्याप्तिकाल नहीं कहेंगे। एकेन्द्रिय के लिये भाषा ही नहीं है, उनकी भाषापर्याप्ति ही नहीं है। उनके तो चार ही पर्याप्ति हैं। तो एकेन्द्रिय के लिये उच्छ्वासपर्याप्ति का काल कितना होगा ? *श्रोता: आयुप्रमाण।* अधिक से अधिक कितना होगा, बोलो ? किसी एकेन्द्रिय के मॅक्झिमम आयु कितनी हो सकती है ? *श्रोता: २२००० वर्ष।* हां, २२००० वर्ष तो उसको क्या कहेंगे ? उच्छ्वासपर्याप्तिकाल। पहला अंतर्मुहूर्त घटा दो और बाकी उर्वरित काल क्या है ? उच्छ्वासपर्याप्ति का काल कहने में आयेगा। ये काल के नाम क्यों दिये ऐसे ? क्योंकि कुछ नामकर्म की प्रकृतियों का वहां उदय पाया जायेगा। यहां केवल हम कर्मों की अपेक्षा से ये काल हैं उनके नाम देख रहे हैं।

श्रोता: यहां काल जो है, टाइम फॅक्टर तो नहीं है न ? काल है, टाइम फॅक्टर तो केवल यहां है। शरीरमिश्रकाल भी अंतर्मुहूर्त का है, शरीरपर्याप्तिकाल भी अंतर्मुहूर्त का है, अन्य जो द्वीन्द्रिय आदि हैं उनके लिये उच्छ्वासपर्याप्तिकाल भी अंतर्मुहूर्त का होगा। परंतु जो एकेन्द्रिय जीव हैं उनकी उच्छ्वासपर्याप्ति तक ही डेव्हलपमेंट है। एक बार उनका उच्छ्वास नामकर्म का उदय शुरू हो गया है उसके बाद नामकर्म की और कोई प्रकृतियों का उदय होनेवाला नहीं है, मरण तक उनके उच्छ्वासपर्याप्तिकाल चलेगा, एकेन्द्रिय के लिये। द्वीन्द्रिय आदि ऊपर के जीवों के लिये नहीं, उनके भाषापर्याप्ति है न ! उनका मरण तक भाषापर्याप्ति काल चलेगा। इसलिये अन्य की बात की है यहां।

आहारक के लिये बात करेंगे - जो आहारकशरीरवाले हैं उनके क्या होता है ? उनके भी छह पर्याप्ति होती हैं। जब आहारकशरीर बनता है किसके होता है वह ? *श्रोता: मुनिराज के।* मुनिराज के; तो क्या मुनिराज विग्रहगति में से जाकर फिर आहारकशरीर बनाते हैं ? क्या होता है ? नहीं। तो इसलिये उनके कार्माणकाल होगा ही नहीं। जब आहारकशरीर बनता है तो कार्माणकाल होने का कोई सवाल ही नहीं। विग्रहगति में से जाने का कोई सवाल नहीं है। वे तो मुनिराज हैं। कौनसे मुनिराज हैं ? जिनका भाषापर्याप्तिकाल शेष चल रहा है। नामकर्म की अपेक्षा उनका कौनसा काल चल रहा है ? हां, उनके तो भाषापर्याप्तिकाल मरण तक रहता है। मुनिराज का

औदारिकशरीर की अपेक्षा भाषापर्याप्तिकाल चल रहा है। वे जब आहारकशरीर की रचना करेंगे तो उनके कार्माणकाल की कोई बात नहीं है, फिर यहां शरीरमिश्रकाल यानी आहारकशरीरमिश्रकाल होगा। उनका यहां पर आहारकमिश्रकाययोग होगा। जब आहारकशरीर संबंधी शरीरपर्याप्ति पूरी हो जायेगी तब उनके शरीरपर्याप्तिकाल चालू होगा। आहारकशरीर संबंधी उच्छ्वासपर्याप्ति पूरी होगी तो उच्छ्वासपर्याप्तिकाल कहलायेगा। आहारकशरीर संबंधी भाषापर्याप्ति पूर्ण होगी तब भाषापर्याप्तिकाल कहलायेगा, परंतु उनके लिये वह अंतर्मुहूर्त का रहेगा क्योंकि पूरा आहारकशरीर ही अंतर्मुहूर्त प्रमाण रहता है। उसका छठे गुणस्थान से भी छोटा काल है, वहां पर उसको हम अंतर्मुहूर्त कहेंगे। *श्रोता: वहां पर दो-दो काल हुये तो ?* एक भाषापर्याप्तिकाल ओरिजिनल चल रहा है और आहारकशरीर संबंधी अभी नया काल चल रहा है। क्या नया चल रहा है ? वहां कौनसे कर्मों का उदय है उसकी बात करेंगे हम।

अब केवली समुद्घात में यह कैसा अटपटा लिखा ? ३, २, १, २, ३, ४, ५। केवली समुद्घात करते हैं, कौन करते हैं ? सयोगकेवली करते हैं। केवली समुद्घात करने के पहले उनका कौनसा काल चल रहा है ? *श्रोता: भाषापर्याप्तिकाल चल रहा है*/ भाषापर्याप्तिकाल चल रहा है, है न ! तेरहवां गुणस्थान है, भाषापर्याप्तिकाल है। अब समुद्घात चालू किया; दंड समुद्घात के समय शरीरपर्याप्तिकाल चलता है। बाद में कपाट समुद्घात हुआ तो वहां पर शरीरमिश्रकाल है। पहले शरीरपर्याप्तिकाल हो, फिर उससे मिश्रकाययोग हो जाता है और फिर कार्माणकाययोग होता है तो कार्माणकाल हो जायेगा। फिर दुबारा कपाट समुद्घात के समय मिश्रकाल होगा, बाद में शरीरपर्याप्तिकाल होगा, फिर उच्छ्वासपर्याप्तिकाल होगा, फिर भाषापर्याप्तिकाल होगा। जब लोकपूरण से फिर समेटते हैं तब की बात है। तब उनके भी अलग-अलग काल होंगे। अब इन कालों के केवल हम नाम ही सीखेंगे कि यहां कुछ विशेषता होती है उसको भी देखेंगे ? हमने इनके नाम तो अभी जान लिये। अब इनमें क्या-क्या बातें होती हैं यानी कौनसे कर्मों का उदय होता है उसकी बात हम पढ़ेंगे ५६४ पृष्ठ पर।

श्रोता: लब्धिअपर्याप्त के ? लब्धिअपर्याप्त की क्या बात है ? *श्रोता: उसकी एक भी पर्याप्ति पूर्ण नहीं होती तब तक फिर उसकी अगली आयु कैसे बांधेगा ? उधर ही बांधेगा ?* हां लब्धिअपर्याप्त की हमने आयु कितनी देखी थी ? हमने श्वास के अठारहवें

भागप्रमाण मिनिमम आयु देखी थी। तो श्वास के अठारहवें भागप्रमाण जो कोई आयु है तो उसके त्रिभाग करेंगे, जब १/३ बाकी है तब अंतर्मुहूर्त तक आयु का बंध होगा। यह बात हमने सुबह देखी थी, और यह भी आयु कितनी है ? संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवलीप्रमाण है और आवली प्लस एक समय वह मिनिमम अंतर्मुहूर्त है। *श्रोता: फिर इसका प्रोसेस किधर होता है ? यहीं इसी समय में ?* नहीं वह तो कार्माणकाल है। लब्धिअपर्याप्त कहां तक है ? तो कहते हैं विग्रहगति में कार्माणकाल है और बाद में मरण तक उसका शरीरमिश्रकाल है। *श्रोता: आपने जो नंबर दिये १, २ वह समय गिन रहे हैं ?* ये समय नहीं हैं, ये कालों के क्रमांक-नंबर हैं। कौनसे-कौनसे काल हैं ? १ नंबर का कार्माणकाल, २ नंबर का शरीरमिश्रकाल इस तरह ५ नंबर तक समझना। समय की बात नहीं है यहां पर। यहां ये समय उसके आगे लिखे थे। परंतु लब्धिअपर्याप्त में इनमें से कौनसे काल हैं ? इनके कार्माणकाल है और इनका शरीरमिश्रकाल है। इनके लिये कार्माणकाल १, २ या ३ समय होगा और शरीरमिश्रकाल उनके लिये भी अंतर्मुहूर्त होगा। ख्याल में आया ?

श्रोता: १, २, ३ समय के बाद कितने टाइम में फिर अगली आयु बांधेगा ? ये सब आयु का बंधना वगैरह यह सब कुछ निश्चित है क्योंकि लब्धिअपर्याप्त हमने देखा था। एक बड़े अंतर्मुहूर्त में यानी अड़तालीस मिनट मायनस एक समय इतने काल में यदि कोई बार-बार मरकर लब्धिअपर्याप्त मरकर लब्धिअपर्याप्त, लब्धिअपर्याप्त मरकर लब्धिअपर्याप्त होवे तो कितने भव होते हैं ? ६६३३६ भव होते हैं, है न ! तो उनमें हमने एकेन्द्रियों के ११ भेद देखे थे उनके मिलकर ६६१३२ भव हो जाते हैं। द्वीन्द्रिय के उनमें ८० होते हैं, त्रीन्द्रिय के ६० होते हैं, चतुरिन्द्रिय के ४० होते हैं, असंज्ञी पंचेन्द्रिय के ८ होते हैं, संज्ञी पंचेन्द्रिय के ८ होते हैं। मनुष्य लब्धिअपर्याप्त के ८ होते हैं। आजकल तो दो-ढाई घंटे तक डेथ सर्टिफिकेट भी नहीं मिलता ! तब तक मान लेते हैं कोई लब्धिअपर्याप्त में जावे तो कितने भव घूमकर आयेगा ? आयेगा नहीं घूमता रहेगा। तो हमें यह काल की जो सूक्ष्मता है न कितना छोटा काल है उसका पता ही नहीं। यह तो केवलज्ञानी के ज्ञान का विषय है। हम तो आगम से इसको जान सकते हैं।

यह हमारी बुद्धि में सीधा जानने में आवे ऐसी बात नहीं हो सकती। हां, हम उसको इमॅजिन कर सकते हैं। परंतु जो आगम की बात है जो सूत्र में लिखी हुयी है वह इटसेल्फ प्रमाण है। उसके लिये अन्य प्रूफ ढूंढ़ने की जरूरत नहीं है। धवला-

जयधवला में बार-बार आता है कि इसके लिये क्या प्रमाण है ? प्रमाण यानी इसका प्रूफ क्या है ? तो कहते हैं भगवान की वाणी जो सूत्ररूप रचना हुयी है वह इटसेल्फ प्रूफ है। उसके लिये अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं है। मेरी भाषा में, सूरज उगा है कि नहीं उगा यह देखने के लिये आपके गांव में कौनसी टॉर्च लेकर देखते हो ? नहीं ? नहीं देखना पड़ता ? अरे वह तो प्रकाश है न ! उसको देखने के लिये अन्य प्रकाश की जरूरत नहीं है। भगवान की वाणी के लिये, सर्वज्ञ भगवान की जो वाणी है वह परम सत्य है। उसको सिद्ध करने के लिये, हमें किसी अन्य प्रूफ की जरूरत है ही नहीं। बिलकुल कोई कर ही नहीं सकता है। यह सायन्स ने प्रूव्ह किया तो हम उसको मानेंगे, मानते रहो। अभी अपना संसार का किनारा नहीं आया है ऐसा समझो क्योंकि अभी हमारा सर्वज्ञ पर विश्वास नहीं हो रहा है, बाकी क्षयोपशम ज्ञानियों पर विश्वास हो रहा है। इसका अर्थ है कि अपने मोक्षमार्ग के लिये अभी दिल्ली बहुत दूर है।

जब तक सर्वज्ञ के ऊपर विश्वास नहीं है, सर्वज्ञ का स्वरूप निश्चित नहीं होता है तब तक कुछ भी बातें पल्ले पड़नेवाली नहीं हैं। केवल मनोरंजन के लिये बातें नहीं चल रही यहां की। हमारा मनुष्यभव इतना अमूल्य है उसका एक-एक समय भी इतना दुर्लभ है और ये बातें ऐसे ही फिजूल के लिये हम नहीं कर रहे हैं। इसका अगर एहसास हो जाये कि हम कैसे-कैसे कर्म बांधकर कौन-कौनसी पर्यायों में घूम चुके हैं और अगर अभी भी हम इससे नहीं डरते हैं तो हमारा भविष्य क्या होगा ? यह ऐसा अमूल्य भव है और यहां जो अमूल्य वाणी हमें मिली है ऐसा अवसर खोने जैसा नहीं है। यह जरूरी नहीं कि कर्मों की पूरी थिअरी आपको याद हो जाये। यह आपको कुछ याद नहीं करना है, इसके बिना भी होगा परंतु मूलधारा है ये द्रव्यानुयोग के सिद्धांत; अभी तो हम सब द्रव्यानुयोग के तो अभ्यासी हैं, करना तो उसीको है। कर्मों की थिअरी के द्वारा तो भेदज्ञान में बहुत बल मिलेगा। हम जो यहां नामकर्म की बातें देख रहे हैं, उनके उदय में जो कुछ मिलनेवाला है वह कर्म के खाते में डाल दो। हमने शरीर मैं हूं मान लिया है, अब शरीर का वर्ण, वर्ण नामकर्म के कारण हो रहा है; उसके स्पर्श, रस, गंध, वर्ण कैसे हैं ? उसकी हाइट कितनी है; उसमें बालों का रंग काला होगा या सफेद, आँखें कैसी होंगी, अवयवों की रचना कैसी होगी यह सब नामकर्म के उदय में निश्चित होता है। उनका स्थान निश्चित है, उनका साइझ निश्चित है, सब कुछ निश्चित है।

कर्म के उदय में होनेवाली सारी बातें कर्म की हैं, वे कर्म के मेहमान हैं। हमारा कुछ नहीं लगता उससे। हमने कोई खोटे परिणाम किये थे, नामकर्म बांधे थे, अभी उनके उदय का फल मिल रहा है। फिर भी हम इसी शरीर को यही मैं हूं मानते हैं। जब तक मानते रहेंगे तब तक नये-नये कर्मों का बंध होता ही रहेगा और उनके फलस्वरूप जन्म-मरण करते रहेंगे। हमें यहां अपना स्वरूप नक्की करना है। नहीं तो कर्मों में उथल-पुथल चलती रहेगी। कभी एकेन्द्रिय पर्याय बांधते हैं, कभी कौनसी बांधते हैं, वहां जन्म-मरण करते रहते हैं। फिर भी हम वही के वही रहे हैं ! हम स्वयं जो हैं उसमें कुछ अंतर नहीं हुआ है, हम तो स्वयं ज्ञान मात्र ही रहे हैं। आत्मा में यानी हमारे में कुछ परिवर्तन नहीं हुआ है। परंतु हम उसको तो देखते नहीं, उसको समझते ही नहीं हैं और बाहरी जो कुछ शरीर की रचना होती है उसरूप ही मैं हूं इतना ही मान रहे हैं और यह जो संयोग है न, उसे मेरा है ऐसा मान रहे हैं ! फिर हम पूरी जिंदगी किसमें लगाते हैं ? संयोगों में हेराफेरी करने में, जो हमारे से होती नहीं है। फिर भी हम माथा मारते रहते हैं। बाय चान्स हो जाये तो ! यह देखो, हमने कितना कुछ कर दिया, है न ! यदि नहीं होता है तो, क्या करें ? हमने तो बहुत कोशिश की - मेहनत की, परंतु जो क्रमबद्ध में होना है वही होगा न ! तब याद आता है क्रमबद्ध ! पहले कभी नहीं आता है याद। बहुत सिरिअसलि लेने जैसी बात है।

यह पढ़ते हैं तो ऐसे लगता है कि हम कहां-कहां भटककर आज यहां आये हैं, हमने कितनी-कितनी पर्यायों में जन्म-मरण किया है, हमारा अनादि का जीवन जो अभी तक का है वह कहां बर्बाद किया हुआ है और अब भी अगर हम नहीं चेतते हैं तो यह और बर्बाद होनेवाला है। इतने निकृष्ट काल में, मैं तो कहूंगी यह पंचमकाल जैसा निकृष्ट काल है और ऐसे काल में हमें उत्कृष्ट उपदेश गुरुदेवश्री के द्वारा प्राप्त हुआ है। गुरुदेवश्री कानजीस्वामी ने इतना सरल करके हाथ में आपको आत्मा प्रस्तुत कर दिया - बस जानो इतनी ही देर है। फिर भी हम बस कुटुंब में और व्यापार धंधे में और किसी न किसी में उलझे रहते हैं। यह जरूरी नहीं कि सब कुछ बंद कर दो और इसको सीखो, यह जरूरी नहीं। परंतु स्वाध्याय हमारा जीवन का अंग बनकर हम अपने को पहचानें इतनी बात करनी है। यह जरूरी नहीं कि उसको बहुत घंटे देंगे तो ही कार्य होगा और थोड़ा कम समय दिया तो नहीं होगा यह बात नहीं। अंदर की रुचि इसकी होनी चाहिये, रुचि ही सब कुछ काम करेगी। तो यह क्यों पढ़ना ? क्योंकि करणानुयोग

के अभ्यास से इसमें बहुत बल मिलता है।

कहां-कहां हमने कितना जीवन बिताया है इस बात का इससे पता चलता है। करणानुयोग को पढ़ेंगे तो ऐसा हो जाता है; अंदर से भय लगता है और संसार का जब तक भय नहीं लगता है तब तक हम संसार में ही रचे-पचे रहते हैं। सुबह से शाम तक हम क्या-क्या करते हैं और हमें प्रायॉरिटी किसकी होती है ? *श्रोता: स्वाध्याय की।* यह स्वाध्याय का तो लास्ट नंबर आता है। फिर भी वह कर लेते हैं क्योंकि हमने नियम लिया न स्वाध्याय करने का। फिर स्वाध्याय करके आत्मस्थिरता का प्रयत्न करने के लिये कितना समय देते हैं ? वह तो, चलो अभी कल पर डालो। यह ऐसी बात है। अरे किसी भी विषय के द्वारा यानी किसी भी अनुयोग के द्वारा हमें करना तो वही है अर्थात् अपने को पहचानना है और उसीसे हमारा कल्याण होनेवाला है क्योंकि ऐसे खोटे काल में ऐसा महान उपदेश हमें मिला है तो उसको बिलकुल सिरिअसलि लेना ही चाहिये। हमारे संयोग तो बिलकुल कैसे भी हो, संयोगों से हमारा कुछ भी लेना देना नहीं है। हमें तो इन संयोग से हम पृथक् हैं यह पहले में पहले समझना है। संयोग अनुकूल होंगे तो भी क्या होनेवाला है ? उसरूप हम नहीं हैं। शरीर सुंदर होगा तो भी क्या होनेवाला है ? काले शरीरवालों को भेदज्ञान नहीं होता है क्या ? हां, पहले उसको गोरा करें, उसको कुछ ठीक-ठाक करे, फिर उससे भेदज्ञान करना है ?

अरे ! जैसा शरीर है यह नामकर्म के उदय के फलस्वरूप है। ये सारे कर्म के उदय के फल वे मेरे से भिन्न ही हैं। इसकी बात हमें बारंबार सोचनी है। सभी अनुयोग हम पढ़ेंगे और सभी अनुयोगों के द्वारा यह बात करेंगे। हम एक अनुयोग का अभ्यास करते हैं इसका अर्थ यह नहीं कि दूसरे का हमें निषेध है। निषेध बिलकुल नहीं होना चाहिये। किसी भी अनुयोग का निषेध होगा तो सर्वज्ञ की वाणी का निषेध होगा, सर्वज्ञ का निषेध होगा, सर्वज्ञस्वभाव का निषेध होगा। उसका निषेध होगा तो आत्मानुभूति कैसे होगी ? हो ही नहीं सकती। तो हमें किसी में, किसी अनुयोग के विषय में रुचि है, उसमें समझ पड़ती है तो ठीक है उसका अभ्यास करो। परंतु किसी भी अनुयोग का निषेध नहीं करना क्योंकि यह सर्वज्ञ भगवान की वाणी है। आचार्यों ने भी बार-बार कहा है कि ऐसा सर्वज्ञ भगवान कहते हैं। किसीने भी अपने मन से इसकी रचना नहीं की है। सर्वज्ञ भगवान की दिव्यध्वनि में भी चारों ही अनुयोगों का कथन आया है। ऐसा

नहीं कि उन्होंने एक ही अनुयोग का कथन किया और बाकी के अनुयोगों का नहीं किया है। आज की तारीख में हमें तो यह उसका बहुत छोटा भाग उपलब्ध है। जितनी पहले द्वादशांग की रचना हुयी थी उसका कितना छोटा अंश आज उपलब्ध है।

देखो, हमने अलग-अलग पांच काल देखे। हम पॅरेग्राफ पढ़ेंगे, चौथी लाइन- **जहां कार्माणशरीर पाया जाता है वह कार्माणकाल,** कार्माणशरीर पाया जाता है वह विग्रहगति की बात यहां बतायी है। **जब तक शरीरपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती, तब तक शरीरमिश्रकाल,** उस काल में आहारपर्याप्ति पूर्ण हो या ना हो उससे कुछ लेना-देना नहीं है। जब तक शरीरपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती; लब्धिअपर्याप्त के लिये एक भी पूर्ण नहीं होती; तो उसका शरीरमिश्रकाल ही चल रहा है और उसी काल में उसका मरण होगा। **शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने पर जब तक श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती, तब तक शरीरपर्याप्तिकाल**। इसलिये इसको अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त बताया है। **श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति पूर्ण होने पर जब तक भाषापर्याप्ति पूर्ण नहीं होती, तब तक श्वासोच्छ्वासपर्याप्तिकाल इसीको आनपानपर्याप्तिकाल कहा**। **भाषापर्याप्ति पूर्ण होने के पश्चात् सर्व अवशेष आयुप्रमाण यानी मरण तक भाषापर्याप्तिकाल कहते हैं।** यहां विग्रहगति और कार्माण ये दो विशेषण कहे हैं, वे समुद्घात केवली के कार्माण के ग्रहण निमित्त कहे हैं। अन्य जीवों में विग्रहगति में कार्माणकाल घटित होगा और केवली के लिये समुद्घात अवस्था में घटित होगा।

इसतरह से हमने पांच नाम देखे। पहले का नाम क्या है ? *श्रोता: कार्माणकाल।* कार्माणकाल और दूसरे का नाम ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल।* हां, तीसरे का नाम ? *श्रोता: शरीरपर्याप्तिकाल।* चौथे का नाम ? *श्रोता: श्वासोच्छ्वासपर्याप्तिकाल।* और पांचवां ? *श्रोता: भाषापर्याप्तिकाल।* यथायोग्य किसके कितने काल होते हैं वह हमने चर्चा की ही है। अब इस काल में कहां कितने कर्मों का उदय होता है, कैसे होता है उसकी बातें हम अभी थोड़ी देर के बाद देखेंगे। अभी हम यहीं रुकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५३. नामकर्म उदयकालों में प्रकृतियां

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है और पं. टोडरमलजी ने इसीके आधार से सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है। उसीका हिंदी अनुवाद हम देख रहे हैं। अभी हम नामकर्म के उदयस्थानों की बात देख रहे हैं। नामकर्मों के उदयस्थानों में उसके विशिष्ट कालों में विशिष्ट कर्मों का उदय होता है। हमने नामकर्म के उदय की अपेक्षा अलग-अलग पांच काल होते हैं उनके नाम देखे। क्या नाम देखे ? उनको कार्माणकाल, शरीरमिश्रकाल, शरीरपर्याप्तिकाल, उच्छ्वासपर्याप्तिकाल और भाषापर्याप्तिकाल कहा।

एकेन्द्रियों में भाषापर्याप्तिकाल होगा ही नहीं; उनमें चार ही काल होंगे, आयु के अंत तक उनका उच्छ्वासपर्याप्तिकाल चलेगा। द्वीन्द्रियों से आगे भाषापर्याप्तिकाल भी होगा। कब तक होता है ? आयु के अंत तक। एक प्रश्न ऐसा था कि *संज्ञी पंचेन्द्रिय जीवों में भाषापर्याप्ति पूर्ण होने के बाद मन:पर्याप्ति पूर्ण होने तक क्या नया नामकर्म का उदय नहीं होता ?* कहते हैं नहीं होता। *तो द्रव्यमन की रचना कैसे होती है ?* वह शुरू से ही होना चालू हो गयी थी। द्रव्यमन की रचना शरीर की रचना का कार्य है, मन भी उसका एक पार्ट ॲण्ड पार्सल है न ! सभी की रचना हो रही है वह शरीरपर्याप्तिकाल में ही सब शुरू हो जाती है। मन संबंधी जो ज्ञान की बात है, जिसको कहते हैं नोइन्द्रिय आवरण, उसके जो कर्मों का क्षयोपशम है वह तो शुरू से ही है। यानी ना ही कर्मों के क्षयोपशम में कोई फर्क पड़ता है और ना ही वहां किसी नामकर्म का नया उदय शुरू हो जाता है। इसलिये यहां मन:पर्याप्तिकाल नहीं कहा। तो ये पांच ही काल होंगे।

अब इन अलग-अलग कालों में कौन-कौनसे कर्मों के उदय होते हैं ? ये काल कितने समयवाले हैं ? ५६४ पृष्ठ पर गाथा ५८४ की टीका देखेंगे- **उन पांच कालों का प्रमाण क्रम से विग्रहगति के कार्माणशरीर में एक, दो या तीन समय हैं;** एक मोड़वाली गति हो तो एक समय का काल है, दो मोड़वाली गति है तो दो समय का है, विग्रहगति तीन मोड़वाली हो तो तीन समय का है। यदि कोई बिना मोड़ के अन्य भव में जाता है तो डायरेक्ट दूसरा काल चालू हो जाता है, उसको पहला कार्माणकाल नहीं होगा। जो ऋजुगति से अन्य भव में जाता है यानी बिना मोड़ से जाता है उसके कौनसा काल चालू हो जायेगा ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल।* शरीरमिश्रकाल डायरेक्ट चालू हो

जायेगा यानी उन प्रकृतियों का उदय भी डायरेक्ट चालू हो जायेगा। उसके लिये बीच में एक या दो समय उनका उदय जो नहीं हो रहा था वह बात नहीं रहेगी। क्योंकि कार्माणकाल यानी विग्रहगति का काल उसके लिये नहीं होगा।

नीचे से तीसरी लाइन, **अपर्याप्तिरूप मिश्रशरीर में,** मिश्रशरीर यानी मिश्रकाययोग भी है न वहां पर, **शरीरपर्याप्ति में, श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति में अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त काल है।** हर एक का काल है वह अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। नामकर्म के उदय की अपेक्षा दूसरा काल है उसका नाम क्या है ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल।* शरीरमिश्रकाल का काल कितना है ? अंतर्मुहूर्त। उसके बाद शरीरपर्याप्तिकाल का काल भी अंतर्मुहूर्त है और श्वासोच्छ्वासपर्याप्तिकाल का काल भी अंतर्मुहूर्त है। अंतर्मुहूर्त किसके लिये ? जिसके भाषापर्याप्ति होनेवाली है उसके लिये। एकेन्द्रियों में शेष आयुप्रमाण उसका काल कहने में आयेगा। **भाषापर्याप्ति में पूर्वोक्त चार काल का प्रमाण घटाने पर अवशेष सर्व भुज्यमान आयुप्रमाण काल जानना।** अभी तक जितना अंतर्मुहूर्त गया है उसको मायनस करना, बाकी शेष बची आयु तक भाषापर्याप्तिकाल है ऐसा कहेंगे।

अब जीवसमास में हमने देखा - लब्धिअपर्याप्तों में कौन-कौनसे काल होते हैं ? लब्धिअपर्याप्तों में कौनसा होगा ? विग्रहगति से जाता होगा तो पहला काल होगा और फिर बाद में दूसरा काल। यदि लब्धिअपर्याप्त सीधीगति से जाता है तो उसके मात्र शरीरमिश्रकाल ही होगा, दो नंबर का। पर्याप्त एकेन्द्रियों में आदि के चार काल होंगे- कार्माणकाल, शरीरमिश्रकाल, शरीरपर्याप्तिकाल और उच्छ्वासपर्याप्तिकाल। हमने देखा था आहारकशरीर में भी विग्रहगतिवाला कार्माणकाल नहीं होता है, बाकी चार काल होते हैं। गाथा ५८६ की टीका देखते हैं- **समुद्घात केवली में कार्माणकाल**, **औदारिकमिश्रकाल**, **औदारिकशरीरपर्याप्तिकाल**, **श्वासोच्छ्वासपर्याप्तिकाल** और **भाषापर्याप्तिकाल है।** कब होंगे ? **लोकपूरण से जब वे समेटते हैं तब ये क्रम से होंगे और फैलते समय तीन ही काल हैं। दंड के करने और समेटनेरूप युगल में** यानी जब दंड समुद्घात है, करते समय भी और समेटते समय भी।

दंड समुद्घात समझते हो ? जब केवली समुद्घात करते हैं तब पहले समय में, एक समय के लिये लोकाकाश के नीचे से ऊपर तक दंडाकार यानी एक स्तंभ जैसे, खंबे जैसे आत्मप्रदेश फैलते हैं। किसे छोड़कर ? लोकाकाश के ऊपर के और नीचे के

वातवलय को छोड़कर। वातवलय को छोड़कर ऊपर से नीचे तक सर्वत्र फैलते हैं तो उसको कहेंगे दंड। दूसरे समय में कपाट - आड़े फैलते हैं। कहां तक ? वातवलय बिना लोकाकाश के अंत तक। जितनी उसकी ऐसी आगे पीछे की विड्थ है उतनी ऐसे आड़ी फैले। तीसरे समय में, आगे पीछे भी लोकाकाश के एण्ड तक पहुंचेंगे वातवलय को छोड़कर। दूसरे समय में उसे क्या कहते हैं ? उसको कपाट कहते हैं। तीसरे समय में ? उसको प्रतर कहते हैं। चौथे समय में वातवलय में भी सर्वत्र फैलते हैं तो उसको कहेंगे लोकपूरण। एक जीव के प्रदेश पूरे लोकप्रमाण फैलते हैं, केवली जब समुद्घात करते हैं तब पूरे लोकाकाश में उनके आत्मप्रदेश फ़ैल जाते हैं। हमें कितना आनंद होता होगा तब ? जहां हम बैठे हैं वहां भी उनके आत्मप्रदेश फैलेंगे कि नहीं फैलेंगे ?

जहां हम हैं वहां उनके भी आत्मप्रदेश होंगे तो उनमें से हमें कोई व्हायब्रेशन्स आयेंगे कि नहीं आयेंगे ? *श्रोता: ऑरा आ जायेगा।* ऑरा आ जायेगा, व्हायब्रेशन्स आ जायेंगे। हमारा कल्याण होगा न ? क्योंकि ऐसा हमने बहुत सुना है हम फलां क्षेत्र में जाते हैं, क्यों ? वहां के व्हायब्रेशन्स आते हैं कुछ, हमारा कार्य हो जाता है ! आपने सुना कि नहीं सुना ? हमें सुनानेवाले बहुत मिलते हैं आपको कोई नहीं मिलता ? हमने माना है कि पर से हमारे में कुछ आता है, किसी क्षेत्र से कुछ आता होगा या घर से कुछ आता होगा। घर को क्यों तोड़-मरोड़ कर देते हैं ? तोड़ते हैं कि नहीं तोड़ते ? वास्तुशास्त्र है न ! फिर आगे ऐसा भी कहते हैं देखो, जैनियों में यह वास्तुशास्त्र बताया है। जैनियों में संगीतशास्त्र भी बताया है। जैनियों में वह मैलीविद्या क्या-क्या होती है उसका भी वर्णन है। तो उसको सीखने को कहा है ? दसवें पूर्व में तो यही बात है सारी। विद्यानुवादपूर्व क्या है ? वह पढ़कर तो कितने ही सारे मुनिराज भ्रष्ट भी होते हैं ! उसको जानना था, फॉलो करो ऐसा किसने बताया है ? अभी इतना ही नहीं, वह करने से हमारा कल्याण होगा, हमें कुछ सुख होगा ऐसा मानते हैं। यह मान्यता की बात है, मिथ्यात्व की, हां, जैसे कोई इंजिनिअर है, बिल्ड़िंग कैसे बांधना ? उसका कोई सायन्स है उनका, वैसे वह भी शास्त्र होगा कैसे घर बांधना है ? क्या है ?

परंतु अभी हमारा घर ऐसा है। अभी ऐसा छप्पर है उसका अभी ऐसा कर दो तो तुम्हारा कल्याण होगा। आप नहीं करोगे तो आपके बच्चे बीमार हो जायेंगे। हर एक के घर में कोई न कोई बीमारी कुछ न कुछ होती ही रहती है और यदि किसीने आपके

मन में डाला है कि आपने ऐसा नहीं किया तो आपके ऊपर बहुत संकट आयेंगे। तो हम चले जाते हैं उसके पीछे। मेरी भाषा में मिथ्यात्व भी नये-नये फॅशन लेकर आता है। हमारे कपड़े के फॅशन चलते हैं, हेअर स्टाइल के फॅशन चलते हैं और क्या-क्या फॅशन चलते हैं ऐसे मिथ्यात्व के भी फॅशन चलते हैं नये-नये ! उसके पीछे-पीछे हम अपना सारा उपयोग उसीमें लगाते रहते हैं, भ्रमित हो जाते हैं और वह करने से कल्याण होगा ऐसा मानते हैं। हम कहीं गये थे वे कह रहे थे हमारा गल्ला है न, गल्ला समझते हैं ? पैसा जहां रखते हैं दुकान में। इधर मुंह था, हमने उधर किया तो अभी बहुत पैसा आने लगा। हमने बोला फिर सुख भी बढ़ा है ? तो कहते हैं नहीं, पहले खाने को समय मिलता था अभी नहीं मिलता है। क्या करें ? पैसा अधिक होगा तो मैं अधिक सुखी हो जाऊंगा यह मान्यता है हमारी। मिथ्यामान्यता है ! हमारे स्वाध्याय से हम और दूर हो जायेंगे और हम मान लेते हैं कि हमारे पुण्य का उदय है। पुण्य का सच्चा उदय तो यह स्वाध्याय सुनने को और करने को मिलना यह है। बोलते हैं न कि महाभाग्य के बिना यह जिनवाणी की बात कानों में भी नहीं पड़ सकती। ऐसा कोई अलौकिक पुण्य का उदय है कि ऐसी बातें इस काल में भी हमें देखने को मिलती हैं, सुनने को मिलती हैं। देखो, हमारे पास कितनी सीडीज़, टेप सब कुछ उपलब्ध हैं कि नहीं ? गुरुदेवश्री की बात हम आज भी सुनते हैं जैसे उनको साक्षात् सुन रहे हैं। हां !

देखो, अभी हम आगे बढ़ते हैं। *श्रोता: समुद्घात।* समुद्घात हां, लोकपूरण की बात थी, पूरे लोक में फैलते हैं। पूरे लोक में फैलते हैं तो ॲट अ टाइम कितने केवली समुद्घात कर सकते हैं ? *श्रोता: चालीस।* बीस फैलनेवाले और बीस समटनेवाले - चालीस। हो सकता हैं न चालीस केवली के प्रदेश फैले हैं तो हमें उसमें से कुछ सुख, कुछ ज्ञान मिलता होगा? उनसे कुछ नहीं मिलनेवाला है। क्योंकि यह हमारी भ्रमणा है कि दूसरे के कारण मेरा कुछ कल्याण होगा। *श्रोता: केवली समुद्घात में तो जीव के प्रदेश फैलते हैं तो उसमें नामकर्म का कुछ होता है क्या ?* हां, केवली समुद्घात में जीव के प्रदेश फैलते हैं तो उसमें नामकर्म का कुछ नहीं है, परंतु उसमें नामकर्म के उदय की कुछ बातें बनती हैं क्योंकि जब मूलशरीर में प्रवेश करता है तब फिर पर्याप्ति होती हैं। हां, इसलिये उसके भी ये काल बताये हैं। केवली के भी ये काल बताने का यही प्रयोजन है। कार्माणकाययोग हुआ था, फिर जब वापस लौटते हैं तो औदारिकमिश्र हो जाता है। कपाट अवस्था में औदारिकमिश्र होता है, फिर दंड होता है

औदारिक काययोग हो जायेगा। योग भी पलटते हैं और उनके ये पर्याप्ति भी दुबारा होती हैं। *श्रोता: पहले के नामकर्म ?* हैं न वे, नामकर्म सत्ता में पड़े हैं। किसका उदय कहां शुरू होता है उसकी बात है। जितने काल तक उदय मिटा था, उतने काल तक औदारिकशरीर के परमाणु ग्रहण नहीं कर रहा था। अभी उदय शुरू हो जायेगा तो उनका ग्रहण फिर शुरू हो जायेगा।

अब हम आगे बढ़ते हैं। नीचे से दूसरी लाइन- **दंड करने और समटनेरूप** समझते हैं न ! जब समुद्घात कर रहे हैं तब उसको हम कहेंगे फ़ैल रहे हैं, फिर वापस मूलशरीर में प्रवेश करते हैं उसको हम कहेंगे समेटना; **युगल में** यानी दोनों बार दंड करते समय **औदारिकशरीरपर्याप्तिकाल है। कपाट के करने और समटनेरूप युगल में औदारिकशरीरमिश्रकाल है। प्रतर के करने और समेटने तथा लोकपूर्ण में कार्माणकाल है। इसतरह फैलते समय तीन ही काल हैं और समेटते हुये मूलशरीर में प्रवेश करने के प्रथम समय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रियवत् अनुक्रम से पर्याप्ति पूर्ण करता है।** है न ! ये पर्याप्ति फिर शुरू हो जाती हैं, फिर ये पर्याप्ति पूर्ण होती हैं। **इसलिये पांचों ही काल पाये जाते हैं।** अब यहां कौन-कौनसी प्रकृतियों का उदय रहता है ? उसकी बात अब हम गाथा के आधार से देखेंगे, हम गाथा ५८८ पढ़ेंगे।

णामधुवोदयबारस गइजाईणं च तसतिजुम्माणं।
सुभगादेज्जजसाणं जुम्मेक्कं विग्गहे वाणू॥५८८॥

नाम ध्रुवोदय जैसे हमने ध्रुवबंधी देखी थी नामकर्म की, वैसे यहां नामकर्म की ध्रुवोदयी प्रकृतियां हैं। लगातार अनादि से जिनका बंध होता रहा था उनको हमने ध्रुवबंधी कहा था। अब जिसका लगातार उदय होता ही है हर समय, हर काल में, उसको ध्रुवोदयी कहा है। ध्रुव उदयी ध्रुवोदयी, ध्रुव उदय है इनका। जब तक उदय से मिट नहीं जायेंगी, उदय की व्युच्छित्ति नहीं होगी तब तक हम उनको ध्रुवोदयी कहेंगे। अनादि से उनका हर समय उदय पाया जाता है। नामध्रुवोदय कितनी हैं ? द्वादश यानी बारह। हमने ध्रुवबंधी कितनी देखी थी ? ९। ये नामकर्म की ध्रुवोदयी हैं १२। वे कौनसी हैं ? टीका में लिखा है देखो - **तेजसशरीर, कार्माणशरीर, वर्णादि चार** ये वहां पर भी देखी थी। **स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ** ये ऍडिशनल ली हमने, **अगुरुलघु और निर्माण - ये बारह प्रकृतियां ध्रुवोदयी हैं।** अभी ध्रुवबंधी की बात छोड़ देते हैं,

ध्रुवोदयी कौन-कौनसी हैं ? उसकी बात देखते हैं। फिर पढ़ेंगे हम।

तेजस, कार्माणशरीर, वर्णादि चार यानी वर्ण, गंध, रस, स्पर्श, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अगुरुलघु और निर्माण ये बारह प्रकृतियां ध्रुवोदयी हैं। सब जीवों के इनका निरंतर उदय पाया जाता है। कब तक पाया जायेगा ? जब तक उदय की व्युच्छित्ति नहीं होगी। तेजस, कार्माण की बंधव्युच्छित्ति आठवें में हुयी थी, उदयव्युच्छित्ति कहां हुयी थी ? *श्रोता: तेरहवें में।* हां, तेरहवें में हुयी थी। वर्णादि चार की उदयव्युच्छित्ति ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ की ? श्रोता: तेरहवें में। तेरहवें में। अगुरुलघु की ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में और निर्माण की ? *श्रोता: तेरहवें में।* वह भी तेरहवें में; शरीर संबंधी हैं न ये सारी। ध्रुवोदयी कौन-कौनसी हैं ? तेजसशरीर, कार्माणशरीर, वर्णादि चार, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अगुरुलघु और निर्माण। ये कैसी हैं ? ध्रुवोदयी। इनको हम कहेंगे ध्रुवोदयी बारह प्रकृति।

अब आगे की देखते हैं। **पुनश्च चार गति में से** यानी विग्रहगति में जिनका उदय है १२ और ९ मिलकर २१ होंगी तो ये कौन-कौनसी अन्य ९ हैं उसको हम देख रहे हैं। अभी पहले ध्रुवोदयी में कोई कॉम्पिटिशन नहीं थी, कोई प्रतिपक्षी नहीं था। उन सबका उदय होता ही होता है। अब यहां चार गति में से किसी एक गति का उदय हर समय रहेगा कि नहीं ? विग्रहगति से गति का उदय चालू हो जाता है। **पांच जाति में से** किसी एक जाति का उदय विग्रहगति के पहले समय से निरंतर चलता है। त्रस या स्थावर का उदय, बादर या सूक्ष्म का उदय, पर्याप्त या अपर्याप्त का उदय; परंतु यहां उदय में प्रत्येक का नाम नहीं लिया है, बंध में लिया था। जब जीव जहां शरीर धारण करनेवाला है वहां पहुंचता है तब प्रत्येक शरीरनामकर्म या साधारण शरीरनामकर्म का उदय होगा यानी शरीरमिश्रकाल में उसका उदय होगा। विग्रहगति में प्रत्येकशरीर नामकर्म या साधारण नामकर्म का उदय नहीं पाया जाता। जिस समय शरीर ग्रहण करना है उस समय उसका उदय होता है। अब हम देखते हैं।

चार गति, पांच जाति, त्रस-स्थावर में से एक, बादर-सूक्ष्म में से एक, पर्याप्त-अपर्याप्त में से; और कौन-कौन है ? **सुभग या दुर्भग, आदेय या अनादेय, यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति में से कोई एक-एक है और फिर चार आनुपूर्वी में से एक**। आनुपूर्वी का उदय मात्र विग्रहगति में ही होगा, वह भी मोड़वाली गति में ही

होगा। आनुपूर्वी का उदय बाद में मिटनेवाला है। मात्र कार्माणकाल में ही इस आनुपूर्वी का उदय है, बाद में उदय मिटनेवाला है, फिर पूरी लाइफ टाइम तक इसका उदय कहीं पर भी नहीं होगा। मात्र मोड़वाली गति में ही इसका उदय होता है। उसका हमने क्या कार्य देखा था याद है न ! *श्रोता: पूर्व पर्याय का आकार।* पूर्व पर्याय का आकार चल रहा है। आत्मा तेजस, कार्माणशरीर सहित अन्य गति में जा रहा है, उसने अभी नया शरीर धारण नहीं किया है। संस्थान नामकर्म का उदय वहां पहुंचने पर होगा।

देखो, यह एक का अर्थ होता है पहला काल - काल नंबर एक, विग्रहगतिकाल या कार्माणकाल। यह काल नंबर दो, कौनसा है यह ? शरीरमिश्रकाल। यानी वहां पहुंचा है और शरीर के परमाणु ग्रहण करना शुरू किये हैं उसी समय शरीर नामकर्म का उदय होगा, संस्थान नामकर्म का उदय होगा, प्रत्येक या साधारण नामकर्म का उदय शुरू हो जायेगा, उपघात नामकर्म का उदय शुरू हो जायेगा। यह संस्थान मैं बता रही थी; संस्थान यानी आकार। नया आकार - उसका उदय कब शुरू होगा ? जहां शरीर धारण करना है वहां पहुंचने पर। विग्रहगति में जब जा रहा है तब उसको कोई न कोई आकार होगा कि नहीं ? हां, उसमें कौन निमित्त है ? गत्यानुपूर्वी।

पूर्वभव का आकार वहां कायम है। अब कोई मनुष्य मरकर तिर्यंच में घोड़ा हो रहा है। कहां भेजना है उसको ? *श्रोता: आपने पहले कुत्ते में भेजा था।* हमने पहले कुत्ते में भेजा था, अभी हम घोड़े की बात करेंगे। अभी पहले ही समय से घोड़े की पर्याय उसकी चालू हो गयी। उसको घोड़ा कहेंगे क्योंकि विग्रहगति के पहले समय से ही उसकी तिर्यंचगति, तिर्यंचायु सब चालू हो गयी है। परंतु संस्थान नामकर्म का उदय कब शुरू होगा ? जब जिस घोड़े की पर्याय में उत्पन्न होना है, शरीर जहां धारण करना है, वह अमेरिका का घोड़ा होना है, वहां जब पहुंचेगा तब वहां का घोड़े का आकार चालू हो जायेगा। उसके संस्थान नामकर्म का उदय वहां चालू हो जायेगा।

अभी भारत से कोई मनुष्य मरकर अमेरिका का घोड़ा हो रहा है तो जब जा रहा है तो कौनसे आकार से जायेगा ? मनुष्य मरकर जा रहा है; अभी उसको मनुष्य नहीं कहेंगे। जब तक मरा नहीं था तब तक हमने उसको मनुष्य कहा। अब जो जा रहा है वह घोड़ा है। अमेरिका जाना है तो बिना व्हीसा बिना पासपोर्ट जायेगा। एक या दो समय में जायेगा। यह चौदह-चौदह घंटे नहीं लगेंगे जाने के लिये। बिना औदारिकशरीर

के इतना फास्ट पहुंचता है। *श्रोता: फ्लाइट की जरूरत नहीं है।* फ्लाइट की जरूरत नहीं है। यह एक या दो समय में, तब उसका आकार कौनसा होगा ? *श्रोता: मनुष्य का आकार।* मनुष्य का आकार, अभी है तो घोड़ा। मनुष्य के आकार का घोड़ा देखा है आपने ? हमने आपको दिखाया। *श्रोता: आयु ?* आयु शुरू हो गयी। घोड़े की आयु चालू हो गयी, वे दो समय भी उसके घोड़े की आयु के हैं। परंतु जब तक नहीं पहुंचा है तो पहले मनुष्य का आकार चलेगा क्योंकि घोड़े की पर्याय का जो संस्थान नामकर्म है वह शरीरमिश्रकाल में चालू हो जायेगा, विग्रहगति में उसका उदय शुरू नहीं होता।

श्रोता: घोड़े के आकार के शरीर में घोड़ा कैसे आया है ? वहां कोई शरीर कैसे पड़ा रहेगा ? आपका प्रश्न है जैसे यहां रेडिमेड कपड़े लेते हैं वैसे घोड़े के शरीर का आकार का वहां कोई शरीर पड़ा होगा जिसमें जाकर वह आत्मा घुस जाती है ? ऐसा नहीं है। देखो, वहां जाकर जीव के औदारिकशरीर का नामकर्म का उदय चालू हो जायेगा। प्रत्येक शरीरवाला है तो प्रत्येक नामकर्म का, संस्थान नामकर्म का उदय शुरू हो गया है। अब उसकी पर्याप्ति वगैरह चालू हो गयी। उसने उस जाति के परमाणु का ग्रहण चालू कर दिया; स्पर्श, रस, गंध, वर्ण सब उस जाति के परमाणु ग्रहण करना शुरू हो गया है। परमाणु ग्रहण करता है तो आहारपर्याप्ति में कैसी शक्ति होती है ? उसको रसरूप-खलरूप परिणमाना। सॉलिड लिक्विड दो रूप भाग करने की शक्ति आहारपर्याप्ति में प्राप्त होती है। उसके अवयवों की रचना करने का कार्य है, उसकी जो शक्ति है वह शरीरपर्याप्ति में उसको मिलती है। जहां उनकी इन्द्रियां बननी हैं वहां के आत्मप्रदेशों के द्वारा अपनी-अपनी इन्द्रियों के विषयों को जानने की शक्ति वहां डेव्हलप हो जाती है वह इन्द्रियपर्याप्ति हो गयी। श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति में, उसकी श्वासोच्छ्वासरूप कार्य करने की शक्ति वहां उत्पन्न होती है। भाषापर्याप्ति में, भाषावर्गणा को ग्रहण करके शब्दरूप परिणमाने की शक्ति उत्पन्न होती है और मन:पर्याप्ति में, मन की रचना तो आलरेडि हो रही थी शरीरपर्याप्ति में, तो उसके द्वारा आगे जाननेरूप जो कार्य चलेगा उसकी शक्ति वहां उत्पन्न होती है।

यह शक्ति का उत्पन्न होना, शरीर का बनना, वहां जाकर जीव स्वयं उन पुद्गल परमाणुओं को ग्रहण करके करता है। वहां कोई रेडिमेड शरीर नहीं है। जीव का ऐसा आकार हुआ है वहां पर और उस आकार में शरीर ढाला जाता है, उसकी रचना हो जाती है। हम उलटा समझते हैं- शरीर के कारण हमारे आत्मा का आकार ऐसा हुआ,

ऐसा नहीं है। यह कर्मों का निमित्त बनता है। कौनसे कर्म का उदय है उस-उस जाति के आकार बन जाते हैं। जब सभी कर्म का निमित्त मिट जाता है तो अंतिम आकार है, वह सिद्धों में कायम रहता है। वह पलटने का कोई प्रयोजन नहीं है क्योंकि आत्मा का अपना आकार है। वह किस रूप में आकार है उससे उसका कुछ सुख दुःख नहीं है।

श्रोता: यह आनुपूर्वी का उदय ऋजुगति में क्यों नहीं होता ? ऋजुगति में ? मोड़वाले में ही कार्माणकाययोग पाया जाता है। जहां ऋजुगति है वह डायरेक्ट पहुंच जाता है। जो ऋजुगति में अन्य भव में जाता है उसके यह पहला काल नहीं होता, उसके डायरेक्ट दूसरा काल चालू हो जायेगा। उस दूसरे काल में इनमें बतायी हुयी आनुपूर्वी छोड़कर ये शेष सभी बीस प्रकृतियां तो होंगी ही और बाकी वहां शुरू होनेवाली अन्य प्रकृतियां डायरेक्ट उदयरूप होंगी। उनके बीचवाली विग्रहगतिवाली स्टेज नहीं पायी जायेगी। तो उनके शरीरमिश्रकाल में जो उदययोग्य प्रकृतियां हैं उन सबका उदय एक साथ चालू हो जायेगा, मात्र आनुपूर्वी का उदय नहीं रहेगा। आनुपूर्वी का उदय मोड़वाली गति में ही होता है अन्यत्र उसका उदय नहीं होता। मोड़वाली गति से जो जाता है उसके एक, दो या तीन समय तक कार्माणकाययोग होता है उसको कार्माणकाल कहते हैं। वहां इतनी ही प्रकृतियों का उदय पाया जाता है।

श्रोता: हमें क्या एक, दो, तीन समय का भावभासन हो सकता है ? भावभासन होने का सवाल नहीं है। वहां कौनसे कर्मों का उदय होता है, क्या-क्या बातें बनती हैं इसकी बात है। *श्रोता: छद्मस्थ को हो सकता है ?* नहीं। यह हम आगम के द्वारा जानते हैं। यह हमारे आगमज्ञान का विषय है। छद्मस्थ को ऐसा नहीं समझता कि मैं विग्रहगति से जा रहा हूं, अमेरिका जा रहा हूं कि क्या हो रहा है। यह उसके ज्ञान का विषय नहीं है। हम आगम के द्वारा इसको जान सकते हैं। उस जीव के ज्ञान का वह विषय हो ही नहीं सकता है। *श्रोता: एक समय का ज्ञान छद्मस्थ को नहीं हो सकता ?* किसी चीज को हमने एक समय के लिये देखा तो हमें ज्ञान होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* नहीं होगा, लगातार अंतर्मुहूर्त तक देखते रहे तो ज्ञान होगा। देखो हम कहते हैं हम एक साथ देख सुन सकते हैं कि नहीं सकते हैं ? क्या बात करते हैं अभी हम आपको देख भी रहे और सुन भी रहे हैं न ! परंतु यह उपयोग का पलटना इतना जल्दी होता है। हमने अंतर्मुहूर्त तक लगातार देखा तो हमें ख्याल में आया, फिर हमारा उपयोग

सुनने के प्रति गया। फिर उसको भी हम अंतर्मुहूर्त तक सुनते रहे तो वह बात ख्याल में आयी। फिर हमारा उपयोग अन्यत्र गया, अन्य इन्द्रिय की तरफ। उपयोग का पांचों इन्द्रियों में पलटना इतना फास्ट होता है कि हमें ऐसा लगता है हम सबको एक साथ जान रहे हैं। क्यों ? उसका इम्प्रेशन जिसको संस्कार कहते हैं वह रहता है।

अंधेरे में एक अगरबत्ती ऐसे गोल-गोल घुमाओ जोर से, क्या होता है ? पूरा सर्कल दिखायी देता है। क्यों ? वह जाना हुआ, उसका अभी इम्प्रेशन बना है अभी अपने ज्ञान में, मन में नहीं ज्ञान में। तो हमें वह ऐसा लगता है कि पूरा गोल दिखायी देता है। है तो एक पॉइंट, फिर भी पूरा गोल क्यों दिखायी देता है ? हां, उसको संस्कार कहते हैं। ये ज्ञान का संस्कार। यह हम बच्चों पर संस्कार डालते हैं उसकी बात नहीं है और लोग कहते हैं अभी संस्कार डालो तो आगे के भव में काम आयेगा वहवाली बात नहीं है, क्योंकि हम सारे संस्कार ही डालना चाहते हैं, कार्य कुछ करना नहीं चाहते। संस्कार से हमारा सब कार्य हो जायेगा ऐसा लगता है हमें। जो अभी हो सकता है, वह संस्कार में क्यों डाल रहे हैं ? *श्रोता: नहीं समझे।* नहीं समझे ?

देखो, लोग क्या कहते हैं ? अभी स्वाध्याय करो, संस्कार डालो फिर संस्कार से अगले भव में सम्यक्त्वरूपी कार्य हो जायेगा। उस ज्ञान के संस्कार अगले भव में आयेंगे और मिथ्यात्व का संस्कार कब का है ? *श्रोता: अनादि का।* अनादि का। वह नहीं आयेगा ? *श्रोता: आयेगा।* तो जो हम स्वाध्याय करते हैं, जो बात अभी हो सकती है वह हम संस्कार के भरोसे क्यों रहते हैं, यह मेरा प्रश्न है। संस्कार कौनसे गुण की पर्याय है ? हम संस्कार डालना तो चाहते हैं, मालूम नहीं संस्कार क्या है ? कौनसे गुण की पर्याय है ? चारित्रगुण की होगी न ! *श्रोता: चारित्रगुण की।* हां, चारित्र की है, आप क्या कहते हैं भाई ? *श्रोता: धारणावाले ज्ञान की।* हां, जो धारणावाला ज्ञान है वह ही आगे संस्काररूप चलता है। धारणा क्या है ? संस्कार का कारण है। यह जो बातें हैं, धारणा में ली थी वे संस्कार में रहेगी; यानी हम किसको याद करते हैं ? कौनसी बातें हमारी स्मृति में आ सकती हैं ? जो धारणा तक पहुंची थी। तो क्या हर समय जो कुछ ज्ञान की पर्याय में बात चल रही है वह क्या प्रत्येक बात स्मृति में आती है ? कभी-कभी किसीको देखते हैं और हम बहुत कोशिश करते हैं, याद करते हैं इसका नाम क्या है ? या यह कौन है ? नहीं याद आता है और फिर बैठे-बैठे कभी भी याद आ जाता है तो क्या संस्कार में नहीं था ? हां था, उस समय क्यों नहीं याद आया ?

परीक्षा में हम जाते थे स्कूल में, कॉलेज में, बिलकुल सब कुछ पढ़ा था, रटा था। उस समय क्यों याद नहीं आता था ? संस्कार में तो पड़ा था न, हमने कितना-कितना धारणा में लिया था उसको ? उस समय के ज्ञान की पर्याय की योग्यता है कि नहीं है ? स्मृति में भी कौनसी चीज आनी है वह उपयोगरूप ज्ञान की पर्याय की योग्यता है; भले संस्कार में पड़ी हो जब तक वह उपयोग में नहीं आयेगी तो संस्कार है या नहीं सब बराबर है। वर्तमान ज्ञान में जो उपयोगरूप है वह उस ज्ञान का वर्तमान का कार्य है। वह अपनी योग्यता से होगा। संस्कार में होगा यानी हर एक को वह कार्य होगा यह बात नहीं हो सकती। यह संस्कार नाम की चीज ही नहीं है वह बात नहीं है। फिर भी लोग क्या कहते हैं ? अभी संस्कार डालो, संस्कार से ही सब कुछ हो जायेगा। यह बात नहीं है क्योंकि द्रव्यानुयोग में हम क्या सीखते हैं ? कि प्रत्येक पर्याय स्वतंत्र है, एक पर्याय का दूसरी पर्याय में अभाव है। प्रागभाव, प्रध्वंसाभाव सीखे न हम और फिर भी सारा बोझा हम संस्कार के नाम पर डालकर वर्तमान में कुछ नहीं करना चाहते हैं।

संस्कार नहीं होता यह बात नहीं है। व्यवहार से कहने में आता है कि संस्कार से यह हुआ परंतु उस समय की ज्ञान की पर्याय की उस योग्यता से वह कार्य हो रहा है। नहीं तो सारी बातें स्मृति में आनी चाहिये थी ! नहीं आती हैं; विशिष्ट समय पर किसीकी स्मृति होती है, किसीकी नहीं भी होती है, है न ! कभी-कभी कालांतर से स्मृति आती है। तब क्यों नहीं आयी थी ? संस्कार में था तो क्यों नहीं आयी ? संस्कार भी उसीको उपयोगरूप हो जायेगा जो उपयोगरूप उसकी योग्यता से ले लेगा। जब हम कहते हैं न पूर्व भव का जातिस्मरण हुआ ! आदिनाथ भगवान जब मुनि थे तब उनके आहारदान के प्रसंग में श्रेयांस राजा को जातिस्मरण हुआ था। नौ भव पहले उन्होंने मुनिराज को आहारदान दिया था। तो पहले स्मरण में क्यों नहीं आया था ? उसी समय क्यों आया ? तभी की योग्यता थी इसलिये आया।

अवधिज्ञान की भी ऐसी बात है। समवशरण में महावीर भगवान की वाणी छियासठ दिन तक नहीं खिरी, इन्द्र ने अवधिज्ञान से जाना; पहले अवधिज्ञान क्यों नहीं लगाया ? इतनी देर तक क्यों रुके ? छियासठ दिन दिव्यध्वनी बिना गये। जिस समय जैसा कार्य होना है उसी समय वैसा और वही कार्य होता है। भाषावर्गणा का कार्य पुद्गल में होना था तो इन्द्र ने पहले क्यों नहीं प्रयत्न किये ? इन्द्रभूति को पहले बुला लाना

था न। पहले क्यों नहीं बुलाया आदि प्रश्न नहीं उठते। प्रत्येक जीव की और प्रत्येक परमाणु की हर समय की पर्याय निश्चित है। भाषा की पर्याय का अपने योग्यकाल में दिव्यध्वनि खिरने का काल था सब कुछ वैसा ही घटित हुआ। फिर हम निमित्त की ओर से कथन करते हैं- इन्द्र ने अवधिज्ञान लगाया, फिर वे इन्द्रभूति के पास गये, उनको बुलाकर लाये, फिर उन्होंने मानस्तंभ देखा और उनको सम्यग्दर्शन हुआ।

मेरा प्रश्न है- भगवान महावीर की वाणी से इन्द्रभूति को सम्यग्दर्शन हुआ कि नहीं हुआ ? *श्रोता: बिलकुल नहीं हुआ।* नहीं हुआ, क्यों नहीं हुआ ? *श्रोता: दिव्यध्वनि बाद में खिरी।* वे गृहीत मिथ्यादृष्टि थे, उसके निमित्त से वाणी कैसे खिरती ? तो वाणी सुने बिना ही सम्यग्दर्शन हुआ न ! बिना देशना के हुआ था न ! *श्रोता: पूर्वभव की थी।* बिना देशना के सम्यग्दर्शन होता ही नहीं है। तत्त्वार्थसूत्र में कहा है न - निसर्गज होता है। इस भव में कोई गुरु नहीं था, परंतु पूर्वभव की देशना इस भव में कार्य कर गयी। पूर्व की देशना थी यानी संस्कार थे तो वहां वैदिक ब्राह्मण था तब वह क्यों नहीं काम कर गयी ? संस्कार तब क्यों नहीं काम में आया ? जब मानस्तंभ को देखा, अरिहंत की प्रतिमा देखी तब क्यों कार्य कर गया ? *श्रोता: काललब्धि थी।* अभी काललब्धि आयी ? देखो ऐसा ही है। सभी समवाय इकट्ठे होते हैं तभी कार्य होता है, फिर निमित्त की ओर से आरोप आता है। उन्हींके निमित्त से क्यों खिरी ? वहां अन्य मुनि नहीं थे क्या ?

यह मस्करी घोषाल की कथा मालूम है कि नहीं मालूम ? नहीं मालूम ? सुनो- गणधर होने के पूर्व में इंद्रभूति, अग्निभूति, वायुभूति ये तीन वैदिक ब्राह्मण थे; हर एक के पांच सौ-पांच सौ शिष्य थे। सारे कौन थे ? अन्यमति थे, वैदिक थे। जिनमति नहीं थे यानी गृहीत मिथ्यादृष्टि थे। अब वे आये यहां पर, उनको सम्यग्दर्शन हुआ। भगवान के सामने चले गये और उन्होंने दीक्षा अंगीकार की। मुनि हुये, साक्षात् भगवान के सामने उन्होंने मुनिदीक्षा अंगीकार की और ध्यान में बैठ गये। फिर सातवां गुणस्थान प्रगट किया और फिर उन्हें मन:पर्ययज्ञान भी प्रगट हुआ। चार ज्ञान के धारी हुये तब जाकर भगवान की वाणी खिरी। तो वहां उस सभा में छियासठ दिन तक अन्य भी मुनि वगैरह थे कि नहीं थे ? *श्रोता: बहुत सारे थे।* बहुत सारे थे और पहले से भावलिंगी संत भी थे। भगवान पार्श्वनाथ के गणधर के डायरेक्ट शिष्य मस्करी घोषाल भी वहां थे। उन्होंने सोचा यह कोई बाहर का आदमी आया और उनके निमित्त से वाणी छूटी तो कितना गुस्सा आया होगा ? *श्रोता: आना चाहिये।* आना चाहिये न ! हां, हमारे यहां भी ऐसा ही

हुआ। कोई स्थानकवासी में जन्मा, समयसार पढ़ा, मोक्षमार्गप्रकाशक पढ़ा; उन्होंने वह संप्रदाय त्याग दिया, दिगंबर धर्म अंगीकार किया। ४५ वर्षों तक जिन्होंने अध्यात्मरस की गंगा प्रवाहित की जिसका प्रवाह आज तक बढ़ता ही जा रहा है ऐसे पूज्य श्री कानजीस्वामी की वाणी द्वारा आध्यात्मिक क्रांति हुयी। उनकी वाणी में हमें समयसार आदि शताधिक ग्रंथों का सही अर्थ और सार सब समझ में आया। तो जो मूल दिगंबर थे उनको कितना गुस्सा आना चाहिये ? ऐसा ही हुआ कि नहीं हुआ ? *श्रोता: हुआ।*

देखो, महावीर के काल से यह बात चल रही है। महावीर के गणधर भी पहले वैदिक थे। उनके बाद भी कितने ही ऐसे हो चुके कि जो अन्य मत में जन्में थे और जिन्होंने जिनधर्म को समझकर अपना कल्याण किया। कितने ही मुनि हो गये पहले के ज़माने में, बहुत सारे अन्यमतियों में से जैनी हुये थे। दक्षिण की ओर कहते थे कि हाथी के पैर के नीचे कुचल जाना अच्छा है मगर जिनमंदिर में प्रवेश नहीं करना। क्यों ? वहां जाता है तो वहीं चिपक जाता है। कितने ही ऐसे अन्यमति हैं उन्होंने दिगंबर जैन दीक्षा ली थी और कितने ग्रंथ उन्होंने लिखे हैं। अभी आजकल के काल में देखें- बनारसीदास कौन थे ? *श्रोता: श्वेतांबरी थे।* श्वेतांबरी थे और फिर श्रीमद् राजचंद्रजी वैष्णव थे और अभी गुरुदेवश्री कानजीस्वामी और ये गणेशप्रसाद वर्णीजी और भी कितने हैं। यह जरूरी नहीं कि जीव कहां जन्मा है। परंतु वह कौनसा उपदेश अंगीकार करके, अभी उसकी मान्यता क्या है उसके ऊपर यह बात निर्भर है। आज तो मैं कहूंगी आज की तारीख में मूल दिगंबर जैन संप्रदाय में जन्में हुये लोग तत्त्वज्ञान का जितना लाभ नहीं ले रहे हैं, उतना लाभ ये स्थानकवासी आदि अन्य संप्रदाय में से आकर ले रहे हैं। उनको स्थानकवासी कोई कहेगा तो गुस्सा आता है क्योंकि अभी वे दिगंबर जैन बन गये हैं !

क्यों सुशीलाबहन ? ये सारे स्थानकवासी हमारे घर में रोज आते हैं, मेजॉरिटी में सब उसी संप्रदाय से आये हैं। वे कहते हैं जैसे नित्य निगोद में से ६०८ जीव छह महीने आठ समय में बाहर उछलकर निकलते हैं ऐसे हम उस संप्रदाय में से उछलकर यहां आ गये, दिगंबरी बन गये। पंद्रह-पंद्रह साल से ये लोग रेग्युलर डेली दोनों टाइम स्वाध्याय में आते हैं और बिलकुल यह तत्त्व अपनाया और दिगंबर बन गये हैं। यह ज़रूरी नहीं कि कहां जन्मे हैं और क्या है ? *श्रोता: सारे बन गये ?* बिलकुल। आप कहां से आयी ? है न ! यह बहुत पुरुषार्थ की बात है। हम जिस संप्रदाय में जन्मते हैं वहां

रहना, वहां टिकना, उसका अभ्यास करना अलग बात है; उसमें कोई दिक्कत नहीं आती, परंतु जन्म कहीं और हुआ हो और हम स्वाध्यायपूर्वक, निर्णयपूर्वक अपनी पहले की मान्यता छोड़ देते हैं इसमें बहुत बड़ा पुरुषार्थ है। बहुत संकट आते हैं उन पर, फिर भी दुनियां की परवाह किये बिना इसमें लगे रहते हैं। तो उनका पुरुषार्थ बहुत-बहुत ज्यादा है। यह हमारी सुशीलाबहन आती हैं, उनके घर के कितने सदस्यों ने आर्यिका दीक्षा ली हुयी है और घर से कितना विरोध होता रहा कि तुम वहां दिगंबर में क्यों जाती हो। शुरुआत में उसको बहुत प्रश्न उठते थे। कहती थी आप बहुत हठी हो, आपकी दिगंबर की बात सच है और हमारी बात गलत है ? परंतु सुनती रही, अभ्यास करती रही। सिद्धांत प्रवेशिका छह महीने तक पढ़ी तब जाकर उसको कुछ दिमाग में प्रकाश हुआ - नहीं यही बात सच्ची है ! है न ? बहुत सारे ऐसे लोग हैं। यह अभी यहां बैठी है, इसलिये उसका नाम ले रहे हैं। हां, प्रतिभाताई क्या प्रश्न है ?

कथा हो गयी है न मस्करी घोषाल की। उसको बहुत गुस्सा आया कि हम तो मूल दिगंबरी, हमारे निमित्त से, वाणी नहीं खिरी और यह बाहर का आदमी आया है और गणधर बन गया और उनके निमित्त से वाणी खिरी है। तो चलो, निकल गये वहां से, समवशरण छोड़कर गये। छियासठ दिन तक लगातार आते रहे परंतु अब ऐसा गुस्सा आ गया कि हम नहीं बैठेंगे अभी यहां, चले गये। अपनी दूसरी दुकान चालू की। अभी क्या करें ? पंचमकाल अभी आनेवाला था न तो ऐसे ही होना था। *श्रोता: लास्ट में आनेवाला फर्स्ट आ गया।* लास्ट में आनेवाला फर्स्ट ऐसी कुछ बात नहीं है। कौन जीव कब इसका अभ्यास शुरू करता है ? इन्होंने पंद्रह साल से पढ़ा और अभी हमने इसमें प्रवेश किया या हमने अभी शुरू किया, ऐसा कुछ नहीं है। तत्त्वनिर्णय की बात है। अंतर्मुहूर्त में कार्य हो सकता है। इसके लिये लंबा-चौड़ा काल चाहिये ऐसी कोई बात नहीं है। अंदर से बिलकुल दृढ़ प्रतीति होनी चाहिये बस। सर्वज्ञ का स्वरूप समझ लो और बस उनकी बातों पर विश्वास आ जाये। यह अंदर सरल मन से जितना ग्रहण होता है वह कार्यकारी है। यह ऐसा कैसा होता है ? वैसा कैसे होता है ? ये कुतर्क जो करनेवाला है उसको कभी सत्य बात बैठनेवाली नहीं। जो समझना चाहता है उसको समझ में न आवे ऐसी बात ही नहीं बनती, उसको समझानेवाला भी मिलेगा। जिसकी अंदर से तैयारी होती है उसको निमित्त सहजरूप से सामने मिल ही जाता है। निमित्त नहीं मिला इसलिये कार्य रुका ऐसा तीन काल में नहीं होता है। तो जिसकी जिज्ञासा है,

जिसकी रुचि है, जिसकी वैसी पात्रता होती है उसके तो वह कार्य हो ही जाता है।

जो समझना चाहता है उसको समझ में आ ही जायेगा और जो कुतर्क ही करना चाहता है, समझना नहीं चाहता है परंतु सर्वज्ञ की बातों पर बार-बार प्रश्नचिन्ह करके 'मैं कुछ अधिक समझता हूं', 'मैं कुछ अधिक उसमें तर्क लगाता हूं' ऐसा सोचता है वह कुछ नहीं समझेगा। ये कुतर्क होते हैं। कुतर्क समझते हो ? नहीं समझते ? गधे को चार पैर हैं, आदमी को दो हैं इसलिये आदमी आधा गधा है - इसको क्या कहेंगे ? यह कुतर्क है। क्या ? फॅलॅसिकल लॉजिक है। *श्रोता: माल लॉजिक।* माल लॉजिक, नॉन लॉजिक हां, क्या कहें ? अपनी बुद्धि से कुछ न कुछ तर्क करते रहते हैं। सरल बुद्धि से, सरल मन से अगर हम यह उपदेश ग्रहण करेंगे तो न समझने जैसी उसमें कुछ बात नहीं है। ये कुछ याद होवे न होवे उसकी बात नहीं है, समझना मुख्य है। द्रव्यानुयोग के तत्त्वों को ग्रहण करना, समझना यह बहुत महत्व की बात है; सर्वज्ञ का स्वरूप, देव का, गुरु का, शास्त्र का स्वरूप निश्चित करना है; सात तत्त्वों का स्वरूप निश्चित करना है; निमित्त-उपादान का क्या स्वरूप है ? किससे कार्य होता है ? वह स्वरूप निश्चित करना है। ये जो मूलभूत सिद्धांत हैं उनको हम सरल बुद्धि से सही स्वीकार करेगें और सम्यग्दर्शन का कार्य न हो ऐसा बन ही नहीं सकता ! हम अपनी बुद्धि से कुछ न कुछ उसमें उलटा सोचना चाहते हैं। जैसा है वैसा विचार नहीं करते हैं, अपनी बुद्धि से कुछ अलग विचार करना चाहते हैं यानी उसमें संदेह रखते हैं तो यह कार्य नहीं होता।

गत्यानुपूर्वी की बात हो रही थी। हमने देखा था कि बारह ध्रुवोदयी प्रकृतियां हैं। फिर से दोहराते हैं तेजस, कार्माण, वर्णादि चार, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अगुरुलघु और निर्माण और यहां विग्रहगति में अन्य कौनसी प्रकृतियां हैं ? बेसिक कौनसी हैं ? ये ध्रुवोदयी १२ तो बिलकुल हैं ही, अन्य ९ ऐसी हैं कि उनमें ऑप्शनल होगी। ऑप्शनल क्यों ? चार गति में से कोई एक गति, जाति में से कोई एक जाति, त्रस या स्थावर, बादर या सूक्ष्म, पर्याप्त या अपर्याप्त, यहां प्रत्येक युगल का उदय नहीं है। प्रत्येक या साधारण का उदय यहां नहीं है; जहां जन्म लेना है, शरीर ग्रहण करना है, वहां जाकर प्रत्येकशरीर या साधारणशरीर का उदय होगा। यहां और कौनसे हैं ? सुभग या दुर्भग, आदेय या अनादेय, यशस्कीर्ति या अयशस्कीर्ति। अब ये विग्रहगति में हैं, यहीं पर आनुपूर्वी का उदय हो सकता है। जिस गति का उदय है उसी आनुपूर्वी का होगा।

तिर्यंचगति का उदय चल रहा है तो तिर्यंचानुपूर्वी का उदय चलेगा यहां पर। अब ये तो विग्रहगति की प्रकृतियां हमने देखी हैं। अब आगे देखते हैं, आगे यानी यह तो पहला काल हुआ। यहां जो एक संख्या लिखी है उसका अर्थ होता है पहला विग्रहगति का काल, इसको कार्माणकाल कहो या विग्रहगतिकाल कहो एक ही बात है।

नामकर्म के उदय का क्रम

१) ध्रुवोदयी १२ - तेजस, कार्माण, वर्णादि ४, स्थिर, अस्थिर, शुभ, अशुभ, अगुरुलघु, निर्माण
अन्य ९ - गति, जाति, त्रस/स्थावर, बादर/सूक्ष्म, पर्याप्त/अपर्याप्त, सुभग/दुर्भग, आदेय/अनादेय, यशस्कीर्ति/अयशस्कीर्ति, आनुपूर्वी

२) स्थावर में - शरीर, संस्थान, प्रत्येक/साधारण, उपघात
त्रस में - शरीर, संस्थान, प्रत्येक, उपघात, संहनन (म.ति. में), अंगोपांग

३) परघात, विहायोगति (त्रस में) (आतप/उद्योत)

४) उच्छ्वास

५) स्वर

यह दूसरे नंबर का कौनसा काल देखा था हमने ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल।* शरीरमिश्रकाल यानी अभी जहां शरीर धारण करना है वहां जीव पहुंच गया है। वहां जाते ही उसके और कौनसे कर्मों के उदय शुरू होते हैं ? शरीरनामकर्म। शरीर नामकर्म में औदारिकशरीर नामकर्म या वैक्रियिकशरीर नामकर्म यथायोग्य जहां गया है उसकी बात है। संस्थान नामकर्म - वहां के जो यथायोग्य संस्थान नामकर्म बांधकर गया था उसका यहां उदय चालू हो जायेगा। प्रत्येकशरीर या साधारणशरीर - यदि निगोद में जन्म लेना है तो वहां साधारणशरीर नामकर्म का उदय चालू है। यदि अन्य किसी प्रत्येक शरीर में जन्म लेना है तो प्रत्येकशरीर नामकर्म का वहां उदय होगा। उपघात नामकर्म का यहीं पर उदय होगा यानी ये जो चार प्रकृतियां हैं ये स्थावर में भी होंगी और त्रस में भी होंगी। शरीरमिश्रकाल चालू हो गया है यानी शरीर धारण करना है, वहां पहुंच गया है तो ये मिनिमम चार प्रकृतियों का उदय शुरू है। यानी जो एकेन्द्रिय जीव है, स्थावर जीव है उसके विग्रहगति में आनुपूर्वी सहित २१ प्रकृतियों का उदय था। यहां पहुंचते ही दूसरा काल चालू हो गया है; आनुपूर्वी का उदय मिट गया और उसका इन चार प्रकृतियों का उदय शुरू हो गया। २१ थी उसमें से एक आनुपूर्वी

घट गयी तो २० हुयी और ४ उसमें आ गयी नयी, उदयरूप हुयी तो कितनी प्रकृतियों का उदय होगा ? २४ का। किसको ? स्थावर को।

एकेन्द्रिय स्थावर जीवों को विग्रहगति में २१ प्रकृतियों का उदय था। वही एकेन्द्रिय जीव जब शरीरमिश्रकाल में यानी वहां पहुंच जाते हैं तो ये ४ प्रकृतियां उस समय उदयरूप होती हैं परंतु आनुपूर्वी का उदय मिट जाता है। तो उनके २४ प्रकृतियों का उदय चालू हो जाता है। ध्रुवोदयी १२, अन्य ९ के बदले यहां हम अन्य ८ कहेंगे - आनुपूर्वी का उदय यहां मिट गया है और यहां एकेन्द्रियों में शरीर नामकर्म, संस्थान नामकर्म, प्रत्येक या साधारण नामकर्म और उपघात नामकर्म इनका उदय चालू हो गया है। इसलिये एकेन्द्रियों के इस पोझिशन पर यानी शरीरमिश्रकाल में २४ प्रकृतियों का उदय होगा। अब जो त्रस हैं, त्रसों को भी विग्रहगति में २१ का उदय है। अब वह भी जन्मस्थान में पहुंच गया है तो उसके भी आनुपूर्वी का उदय मिट गया है यानी २० रह गयी। २० में शरीर, संस्थान, प्रत्येक अभी साधारण तो त्रस में होगा नहीं - तो शरीरनामकर्म, संस्थान नामकर्म, प्रत्येक शरीरनामकर्म और उपघात नामकर्म ये तो हैं ही हैं; इन ॲडिशन संहनन, किसमें ? मनुष्य और तिर्यंच में, देवों में संहनन का उदय नहीं होगा; और अंगोपांग का उदय होगा।

अभी हम त्रस नामकर्म लेकर देखते हैं, तिर्यंच की बात करते हैं। द्वीन्द्रिय आदि कोई जो तिर्यंच हैं उनके विग्रहगति में २१ का उदय था। जब शरीरमिश्रकाल - दूसरा काल शुरू हुआ; द्वीन्द्रिय की बात कर रहे हैं न; तो कौन-कौनसे उदय शुरू होंगे ? शरीर, संस्थान, प्रत्येक, उपघात, संहनन और अंगोपांग। तो कितनी हो जायेगी ? *श्रोता: २६ /* २६ का उदय चालू हो जायेगा। नहीं समझे ? अभी द्वीन्द्रिय की बात करते हैं। द्वीन्द्रिय जब विग्रहगति में था तो उसके ध्रुवोदयी १२ का उदय था कि नहीं था ? *श्रोता: था /* था, अन्य नौ की बात करते हैं। द्वीन्द्रिय की बात चलनेवाली है। गति कौनसी है ? *श्रोता: तिर्यंचगति /* तिर्यंचगति, जाति ? द्वीन्द्रिय जाति, त्रस है कि स्थावर है ? *श्रोता: त्रस /* त्रस है, बादर है या सूक्ष्म है ? बादर है। पर्याप्त है कि अपर्याप्त है ? हम पर्याप्त समझते हैं - पर्याप्त है। सुभग है या दुर्भग ? उसके दुर्भग का उदय होगा, अनादेय का होगा और मान लेते हैं अयशस्कीर्ति का है। आनुपूर्वी का तब कौनसा था ? तिर्यंचानुपूर्वी का। यानी द्वीन्द्रिय को विग्रहगति में २१ का उदय था।

अब वह वहां पहुंच गया जहां उसको जन्म लेना है, शरीर धारण करना है। विग्रहगति समाप्त हुयी तो उसका कौनसे शरीर का उदय चालू होगा ? औदारिकशरीर का। संस्थान कौनसा होगा द्वीन्द्रिय को ? *श्रोता: हुण्डकसंस्थान।* हुण्डकसंस्थान, प्रत्येक शरीर और उपघात। आनुपूर्वी का उदय मिट गया, ये ४ और संहनन कौनसा ? असंप्राप्तासृपाटिकासंहनन और औदारिकअंगोपांग। २१ में से एक आनुपूर्वी निकल गयी, २० रहे और ये ६ मिल गये। कौनसे ६ ? *श्रोता: शरीर, संस्थान, प्रत्येक, उपघात, संहनन और अंगोपांग।* शरीर, संस्थान, प्रत्येक, उपघात, संहनन और अंगोपांग ये ६ और मिले तो शरीरमिश्रकाल में कितनी प्रकृतियों का उदय है ? *श्रोता: २६।* २६।

अब यह पर्याप्त है। अभी उसके शरीरमिश्रकाल में से शरीरपर्याप्ति पूरी हुयी। शरीरपर्याप्ति पूरी होते ही अभी उसने तीसरे काल में प्रवेश किया। अभी हम द्वीन्द्रिय की बात कर रहे थे। द्वीन्द्रिय को २६ का उदय था और हमने देखा था एकेन्द्रिय को २४ का था, दोनों की बात करेंगे हम। पहले द्वीन्द्रिय की बात देख लेते हैं। तो द्वीन्द्रिय अभी तीसरे काल में प्रवेश कर गया उसका अर्थ क्या है ? शरीरपर्याप्तिकाल चालू हो गया है, शरीरपर्याप्ति पूरी हो गयी। उसके परघात का उदय चालू हो गया। द्वीन्द्रिय है इसलिये विहायोगति कौनसी ? अप्रशस्त विहायोगति का उदय चालू हो गया है। हम मानते हैं उसको आतप, उद्योत कुछ नहीं था। उद्योत हो सकता है, आतप तो नहीं होता द्वीन्द्रिय में। हम कहेंगे ये २ और मिल गयी उसमें, वहां २६ थे यहां २८ हो गये। एकेन्द्रिय का विचार करते हैं। एकेन्द्रिय को पहले २१ थी। शरीरमिश्रकाल में आने पर ४ मिली और आनुपूर्वी निकल गयी, २४ हुयी। वही जीव तीसरे काल में यानी शरीरपर्याप्तिकाल में आ गया है तब उसके परघात है, विहायोगति तो नहीं है, आतप भी नहीं है ऐसा लेते हैं तो कितने हो गये ? *श्रोता: २५।* २५। आतप या उद्योत होगा तो २६ हो जायेगी।

अब उसी जीव की यहां उच्छ्वासपर्याप्ति पूरी हो गयी तो यहां उच्छ्वास नामकर्म का उदय चालू हो गया है तो और एक आ गयी। एकेन्द्रिय के यहां कितनी थी ? *श्रोता: २५ थी।* २५ थी, वह कितनी हो गयी ? २६। द्वीन्द्रिय को यहां पर कितनी थी ? यहां २० और ६, २६ थी। यहां परघात और विहायोगति २ का उदय होने पर २८ हुयी और यहां उच्छ्वास का उदय होने पर उसकी २९ हो जायेगी। *श्रोता: यहां स्वर और बढ़ जायेगा।* यहां नहीं, भाषापर्याप्तिकाल पूर्ण होने पर स्वर - दुस्वर का उदय हो जायेगा । तो उसके आयु के अंत तक ३० प्रकृतियों का उदय चलेगा। यही बात अभी हम पढ़ेंगे।

अभी तो हमने पुस्तक में से नहीं पढ़ा है। क्रम से एक-एक की बात पढ़ेंगे। हमें थोड़ा ख्याल में आया है कि कहां कौनसी प्रकृतियों का उदय होता है।

विग्रहगति में हमने देखी थी १२ ध्रुवोदयी प्रकृतियां हैं। ध्रुवोदयी १२ के साथ ९ अन्य और हैं। कौनसी ९ हैं ? गति, जाति, त्रस, बादर, पर्याप्त है, फिर सुभग, आदेय और यशस्कीर्ति जो कोई जोड़ीवाली वहां होगी वे यथायोग्य होगी और आनुपूर्वी। पहली १२ और आनुपूर्वी सहित ९ तो २१ प्रकृति विग्रहगति में उदयरूप थी। शरीरमिश्रकाल शुरू हो गया वहां एकेन्द्रिय होगा तो ४ और आकर मिलेंगी - शरीर, संस्थान, प्रत्येक या साधारण और उपघात; त्रस होगा तो और इन ॲडिशन मनुष्य, तिर्यंच के लिये संहनन भी होगा और अंगोपांग भी। देव-नारकी होगा तो संहनन नहीं होगा। देव-नारकी की बात अलग से देखेंगे, एक साथ सब देखेंगे तो कन्फ्यूजन होगा। यह शरीर मिश्रकाल हुआ तब ६ और आकर मिल गयी। शरीरपर्याप्ति पूरी होने पर यानी तीसरे काल में त्रस होगा तो परघात और विहायोगति और एकेन्द्रिय होगा तो मात्र परघात का उदय होगा। अब एकेन्द्रिय और अन्य तिर्यंचों में यथायोग्य किसीके आतप या उद्योत का उदय कहां शुरू हो जाता है ? तीसरे काल में, शरीरपर्याप्तिपूर्ण होने के पश्चात्। फिर उच्छ्वासपर्याप्ति पूर्ण होती है तब उच्छ्वास नामकर्म का उदय चालू होता है और त्रसों में भाषापर्याप्ति पूर्ण होने पर स्वर नामकर्म का उदय चालू हो जाता है।

इसतरह कहां कौनसे नामकर्मों का उदय होता है उसकी अपेक्षा से हम उन प्रकृतियों के उदयस्थान कहेंगे। ये उसके अलग-अलग कालों में अलग-अलग कहा है; विग्रहगतिवाला कितने का उदयस्थान है ? शरीरमिश्रकाल का कितना है ? शरीरपर्याप्तिकाल का कितना है ? देवों के उस काल में कितने होंगे ? हर एक को हम उस काल में घटित करेंगे। अभी हम यहीं रुकते हैं। अपना विषय यहीं समाप्त होता है। *श्रोता: सीधी गति से जानेवाले को आनुपूर्वी का उदय होगा ?* ऋजुगति से जानेवाले को डायरेक्ट संस्थान नामकर्म वगैरह का उदय शुरू होगा, इसको आनुपूर्वी का उदय नहीं है। *श्रोता: बाकी नामकर्म रहेंगे ?* वे रहेंगे, उसकी कुछ बात नहीं है।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५४. नामकर्म के उदयस्थान

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है और पं. टोडरमलजी ने उसीके आधार से सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी हुयी है। उसीका हिंदी अनुवाद आपके हाथ में है, उसमें अभी हम नामकर्मों के उदयस्थानों की चर्चा कर रहे हैं। हमने नामकर्मों के बंधस्थान देखे, अब उदयस्थानों की बात हो रही है। नामकर्म की यह विशेषता है कि उसकी विशिष्ट प्रकृतियां विशिष्ट काल में उदयरूप होती हैं यानी उनका उदय होना आरंभ हो जाता है। नामकर्म के उदय के काल कहने में आते हैं - एक है विग्रहगतिकाल कहो या कार्माणकाल, दूसरा है शरीरमिश्रकाल, तीसरा है शरीरपर्याप्तिकाल, चौथा है उच्छ्वासपर्याप्तिकाल और पांचवां है भाषापर्याप्तिकाल।

ये पांचों ही काल किसमें होंगे ? द्वीन्द्रिय आदि जिनमें-जिनमें भाषापर्याप्ति होती है उन जीवों में भाषापर्याप्तिकाल होगा। एकेन्द्रिय पर्याप्त जीवों में उच्छ्वासपर्याप्ति तक के काल होंगे। एकेन्द्रिय लब्धिअपर्याप्तों में या अन्य भी द्वीन्द्रिय आदि अपर्याप्तों में कौनसे काल होंगे ? एक होगा कार्माणकाल या विग्रहगतिकाल और दूसरा शरीरमिश्रकाल क्योंकि तीसरा जो काल है वह शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने पर शुरू हो जाता है। एक प्रश्न बार-बार आ रहा है कि यह *मन:पर्याप्तिकाल पूर्ण होने पर और किसी कर्म का उदय क्यों नहीं होता ?* अब किसीका उदय होना नहीं बचा है यानी मन:पर्याप्ति पूर्ण होने पर मन के द्वारा जो जानने का कार्य चलता है वह किसी कर्म के उदय में नहीं होता है। उसके उदयरूप जो कुछ ज्ञानावरण का उघाड़ है वह विग्रहगति के पहले समय से चला आ रहा है। यहां जो पर्याप्ति का कार्य यहां पूर्ण हुआ है, अब ऐसी कोई अन्य प्रकृति नहीं रही कि जिसके कारण अभी उसका कुछ कार्य रुका हो। यह द्रव्यमन की रचना आदि शरीर की रचनारूप कार्य था वह तो पहले से ही होता आया था। अब पर्याप्ति यानी शक्ति की पूर्णता हुयी है यहां पर, अभी यहां नया कोई भी नामकर्म संबंधी कर्म उदयरूप होना बाकी नहीं रहा जिसको यहां कहा जाये। इसलिये मन:पर्याप्तिकाल अलग से नहीं बताया है और ना ही कोई अन्य प्रकृति है जो उदयरूप होने से अभी बाकी रही है।

हमने देखा है कि जो कार्माणकाल है या विग्रहगतिकाल है; पहले विग्रहगति

की बात करते हैं हम। दो नाम देने का प्रयोजन क्या है ? हां, क्योंकि विग्रहगति में तो यह पाया जाता है और तीर्थंकरों के या सामान्य केवली के जब समुद्घात होता है तो समुद्घात अवस्था में प्रतर, लोकपूरण और वापस प्रतर - तीन समय तक उनके कार्माणकाययोग पाया जाता है और तब उनको यह कार्माणकाल होता है। उस समय विशिष्ट कर्मप्रकृतियों का उदय होगा उसकी चर्चा हम करेंगे अभी। केवली के बारे में तो हमने अभी चर्चा नहीं की है, अभी-अभी हमने बात शुरू की है।

हमने यह बात देखी थी कि बेसिकरूप से कितनी प्रकृतियां हैं ? २० हैं और उनमें हम विग्रहगति में आनुपूर्वी एक जोड़ देते हैं। ये कौनसी हैं ? ध्रुवोदयी कितनी देखी थी हमने ? *श्रोता: बारह।* १२, ध्रुवोदयी १२ कौनसी हैं ? उसमें तेजस है, कार्माण है, वर्णादि चार हैं; ६ हो गयी। अब स्थिर-अस्थिर दोनों का ही उदय लगातार रहता है। जब हमने बंध देखा था तो कभी स्थिर का बंध होता है, कभी अस्थिर का होता है परंतु उदय तो दोनों का हमेशा ही रहेगा - पहले गुणस्थान से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक। इसीलिये इनको ध्रुवोदयी कह रहे हैं न ! तेजस, कार्माण, वर्णादि चार, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, अगुरुलघु और निर्माण इनको क्या कहते हैं ? *श्रोता: ध्रुवोदयी प्रकृतियां।* ध्रुवोदयी प्रकृतियां; अब अन्य जो ९ हैं इनमें भी ग्रुपवाली में से या युगल में से लेना है। देखो, इनमें से छह प्रकृतियां युगलवाली हमको लेनी हैं। पहले जो अन्य नौ लिखायी न, इनमें छह युगल हैं, गतिवाली पिंड प्रकृति है। गति और जाति और छह युगल लेना है। कैसे छह युगल लेना है ? गति यानी चार गति में से एक; पांच जाति में से एक; छह युगल यानी त्रस, बादर, पर्याप्त, प्रत्येकवाले जो चार कहते थे तो उसके बदले तीन ही लेना। त्रस, बादर और पर्याप्त को लेना है या उनके ऑपोझिट और अन्य जो हम स्थिर आदि छह देखते हैं न, उनके बदले स्थिर-अस्थिर और शुभ-अशुभ को हमने ध्रुवोदयी में ले लिया। अब चार बची - उनमें से स्वर को नहीं लेना है तो कौनसी रह गयी ? सुभग, आदेय और यशस्कीर्ति युगल यानी गति, जाति और छह युगल।

पहली ध्रुवोदयी १२ याद हो गयी ? कौनसी थी ? *श्रोता: तेजस, कार्माण, वर्णादि चार, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, अगुरुलघु और निर्माण।* तेजस, कार्माण, वर्णादि चार, स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ, अगुरुलघु और निर्माण ये ध्रुवोदयी १२ हुयी। अब इनमें कौनसी लेनी हैं ? एक गति, एक जाति और फिर छह युगल यानी त्रस आदि में से तीन

युगल और सुभग आदि तीन युगल, उनकी जो कुछ यथायोग्य प्रकृति होंगी। यथायोग्य क्यों कहा ? जिस किसी प्रकृति का वहां पर उदय चल रहा है उसके साथ उदय में आनेवाली यथायोग्य प्रकृति होगी जिनको हम अविरोधवाली प्रकृति कहेंगे या उनकी पूरक प्रकृति कहेंगे। कौनसी हो सकती है ? हम उसको विचार करके निकाल सकते हैं। ये ८ हुयी, पहले तो १२ हुयी और ये ८। विग्रहगति में आनुपूर्वी का उदय होगा परंतु तीर्थंकर के समुद्घात अवस्था में या सामान्य केवली के समुद्घात अवस्था में आनुपूर्वी का उदय नहीं रहेगा यह डिफरन्स है दोनों के कालों में। विग्रहगतिकाल में और समुद्घातवाला जो कार्माणकाल है उसमें डिफरन्स कहां है ? *श्रोता: आनुपूर्वी के उदय में।* वहां समुद्घात में आनुपूर्वी का उदय नहीं होगा। केवली को आनुपूर्वी का उदय नहीं होगा परंतु तीर्थंकर केवली को तीर्थंकर प्रकृति का उदय रहेगा। तीर्थंकर केवली जब समुद्घात करते हैं तो उनके ये २० प्रकृतियां रहेंगी। आनुपूर्वी नहीं रहती है परंतु उनके तीर्थंकर प्रकृति का उदय उस काल में रहेगा यानी सामान्य केवली को कार्माणकाल में २० प्रकृतियों का उदय रहेगा और तीर्थंकर केवली को २१ का रहेगा। तीर्थंकर जीवों को जब वे समुद्घात करते हैं तब की बात है।

हम कार्माणकाल की ही बात कर रहे हैं। कार्माणकाल अन्य कौनसी गतिवाले जीवों को होगा ? पहले हम यह प्रश्न करते हैं। मैंने पूछा कि चारों गतियों के जीवों को विग्रहगति होगी कि मनुष्य के होगी कि तिर्यंचों के होगी ? *श्रोता: सबमें होगी।* सबमें हो सकती है। चारों ही गति के जीव मरकर विग्रहगति से अन्य गति में जा सकते हैं यानी मोड़वाली गति से जा सकते हैं। तो उन सभी के उस समय में उदय कितने का रहेगा ? *श्रोता: २१ का रहेगा।* २१ का रहेगा। विग्रहगति में २१ का उदय रहेगा ही, मिनिमम या मॅक्झिमम नहीं, २१ का ही रहेगा। *श्रोता: विदाउटवाले को भी २१ का होगा ?* विदाउट मोड़वाले को विग्रहगतिकाल ही नहीं होगा, उसकी डायरेक्ट दूसरे काल से यानी शरीरमिश्रकाल से उदय की शुरुआत होगी। जो बिना मोड़ से जाते हैं, जिसको ऋजुगति कहते हैं, जिसको अविग्रहगति कहेंगे उनके विग्रहगतिकाल ही नहीं होगा। उन जीवों को डायरेक्ट कौनसा काल चालू हो जायेगा ? शरीरमिश्रकाल। यानी विग्रहगति में जो हमने आनुपूर्वी छोड़कर अन्य २० प्रकृतियां ली हैं और बाकी वहां उदयरूप होनेवाली मिलकर सबकी सब २४ हो या २५ हो या २६ जो कुछ हो उनका उदय एक साथ चालू हो जायेगा। *श्रोता: आनुपूर्वी वहां उदय में आयेगी ही नहीं ?*

आनुपूर्वी उदय में आयेगी ही नहीं। *श्रोता: आयेगी।* नहीं आयेगी। आनुपूर्वी का उदय मात्र मोड़वाली विग्रहगति में ही होता है। यदि वह सीधी गति से जाता है तो उसका उदय भी नहीं होगा। वह बंधती तो हर समय में है, जो गति बंध रही है; जिस समय जीव जिस गति का बंध कर रहा है उस नाम के गत्यानुपूर्वी का भी बंध होता ही है। सत्ता में पड़ी रहती है, उदय मात्र विग्रहगति में ही होता है अन्यत्र नहीं। ऋजुगति से जायेगा तो उसका उदय भी नहीं रहेगा, बस सत्ता में पड़ी रहेगी। आप कहेंगे तो क्या फायदा ? उसका क्या होता होगा ? उसकी अभी हम चिंता छोड़ देंगे। कहां किसका उदय होता है उसकी चिंता करेंगे।

देखो, पहला हमने विग्रहगतिकाल कहा या कार्माणकाल कहा सभी चारों गतियों के जीवों के होता है। हमने देखा था न, विग्रहगति में कोई पहले गुणस्थान में जाता है, कोई दूसरे गुणस्थान में जाता है, अन्य कोई सम्यग्दृष्टि है तो चौथे गुणस्थान में भी जाता है। उन सभी के उदययोग्य प्रकृतियां कितनी हैं ? विग्रहगति में मोड़ से जाते हैं तो २१ प्रकृतियों का उदय है। क्या हुआ ? *श्रोता: २० का है।* २० का नहीं, २१ का है आनुपूर्वी को लेना- विग्रहगति की बात चल रही है। यदि अविग्रह यानी बिना मोड़वाला जाता है तो विग्रहगति का काल ही नहीं होगा, डायरेक्ट दूसरा काल चालू हो जायेगा।

अब कार्माणकाल और किसको है ? तो केवली समुद्घात अवस्था में है। समुद्घात सामान्य केवली भी करते हैं, तीर्थंकर केवली भी करते हैं यानी हर जीव करता है ऐसी बात नहीं है। तेरहवें गुणस्थान के अंतिम अंतर्मुहूर्त में आयुकर्म से अन्य तीन अघातिकर्मों की स्थिति यदि अधिक है तो वह समान करने के लिये वहां समुद्घात अपने आप हो जाता है। उस समय कितनी प्रकृतियों का उदय है ? सामान्य केवली होंगे तो २० का है। जो हमने यहां देखी - ध्रुवोदयी १२ और आनुपूर्वी छोड़कर ९ यानी ९ में से आनुपूर्वी घटाना - रिमेनिंग ८ हो गयी। कौनसी होगी ? तीर्थंकर केवली नहीं हैं, सामान्य केवली हैं तो ध्रुवोदयी में कुछ अंतर पड़ेगा ? *श्रोता: नहीं।* ध्रुवोदयी वे ही हैं। तीर्थंकरों के भी कार्माणकाल में वे ही होंगी। अब वहां जो अन्य ८ हम कह रहे हैं, कौन-कौनसी होंगी ? गति कौनसी होगी ? *श्रोता: मनुष्यगति।* मनुष्यगति। जाति ? *श्रोता: मनुष्यजाति।* पंचेन्द्रियजाति। आगे क्या होगा त्रस युगल में से ? *श्रोता: त्रस।* त्रस। *श्रोता: बादर।* बादर। *श्रोता:पर्याप्त।* पर्याप्त। *श्रोता: सुभग।* सुभग। *श्रोता: आदेय।*

आदेय। *श्रोता: यशस्कीर्ति।* यशस्कीर्ति। *श्रोता: यशस्कीर्ति नहीं है।* क्यों नहीं है ? यहां बंध की नहीं, उदय की बात चल रही है। यशस्कीर्ति का उदय चौदहवें तक है। *श्रोता: अपर्याप्त में तीर्थंकर के नामकर्म कौनसा है ?* अपर्याप्त अवस्था जो तेरहवें गुणस्थान में बतायी है वह शरीरमिश्रकाल में औदारिकमिश्रकाययोग होता है। किस अवस्था में ? *श्रोता: समुद्घात अवस्था में।* कौनसा समुद्घात ? *श्रोता: कपाट में।* कपाट में एक समय के लिये औदारिकमिश्रकाययोग होता है उसकी अपेक्षा अपर्याप्त हैं, अपर्याप्त नामकर्म का उदय नहीं है। यहां नामकर्म के उदयों की बात चल रही है, ये तो पर्याप्त नामकर्मवाले हैं। पर्याप्त मनुष्य है न ! तीर्थंकर होनेवाले कौन हैं ? पर्याप्त जीव हैं।

हम देख रहे थे कि जो कार्माणकाल है, किसका ? केवली का, सामान्य केवली का। ध्रुवोदयी तो १२ ली हैं, अन्य कितनी लेनी हैं ? ८ लेनी हैं। गति ? मनुष्य। केवली की बात चल रही है। कौनसी गति का उदय है ? *श्रोता: मनुष्यगति का।* मनुष्यगति का। जाति ? पंचेन्द्रिय जाति। *श्रोता: त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति।* त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति। सामान्य केवली को अयशस्कीर्ति भी हो सकती है ? *श्रोता: हां, हो सकती है।* कैसे हो सकती है ? अयशस्कीर्ति के उदय की व्युच्छित्ति कहां हुयी ? *श्रोता: चौथे में हुयी है।* चौथे में हुयी है। दुर्भग, अनादेय और अयशस्कीर्ति के उदय की व्युच्छित्ति चौथे गुणस्थान में हुयी है। उसके ऊपर ये सब जीवों के आदेय ही है, सुभग ही है और यशस्कीर्ति ही है। इसीलिये पहले हमने इतनी व्युच्छित्ति-व्युच्छित्ति-व्युच्छित्ति कर दी यानी हम डिराइव्ह कर सकते हैं न कि इनके कौनसा उदय रह सकता है। चौथे गुणस्थान तक इनका उदय होगा, पांचवें गुणस्थान से आगे इनका उदय नहीं रहेगा। ख्याल में आयी बात ? यानी जिसका हमने अभ्यास किया है, सीखा है न, उस पर से ही हम सोचेंगे।

हमने विग्रहगतिकाल यानी कार्माणकाल देखा, सामान्य केवली की बात की, अभी तीर्थंकर केवली की बात करते हैं। तीर्थंकर केवली के समुद्घात अवस्था में, ये जो अभी उदययोग्य प्रकृतियां हमने देखी थी, कितनी होंगी ? ध्रुवोदयी १२, आनुपूर्वी को छोड़ देना और उसके बदले तीर्थंकर प्रकृति को रखना। वहवाली ८ और यह तीर्थंकर सहित ९ हुयी। १२ और ९ मिलकर २१ हो जायेंगी। २०वाला स्थान कौनसे जीव को होगा ? *श्रोता: सामान्य केवली को।* सामान्य केवली को समुद्घात अवस्था में। ख्याल में आती है बात ? अभी हम उदय के स्थान देख रहे हैं।

यह स्थान किसको कहना ? एक जीव के एक काल में नामकर्म की कितनी प्रकृतियां ॲट अ टाइम उदयरूप हो रही हैं ? उसको हम कहेंगे उदय के स्थान। ऐसे उदय के स्थान कौन-कौनसे हैं ? २० प्रकृतिवाला एक स्थान है। वह २०वाला कौनसा होगा ? किसके होगा ? मात्र सामान्य केवली के समुद्घात अवस्था में होगा। यह बात ख्याल में आयी ? देखो पुस्तक में हम पढ़ रहे हैं पेज ५६७ पर लास्ट लाइन ५९२ की टीका। **बीस का,** बीस का अर्थ है २० का एक उदयस्थान है। **इक्कीस का,** २१ का किसका ? हमने २० और २१ दोनों की चर्चा की है, आगेवाली चर्चा अभी हमने नहीं की है। जितनी चर्चा की है उसको समझेंगे। २१ का स्थान कहां-कहां पाया जाता है ? *श्रोता: तीर्थंकर केवली को।* तीर्थंकर केवली को और चारों गति के जीव जब विग्रहगति में जा रहे हैं तब उनके २१ का स्थान है। विग्रह से यानी मोड़ से जानेवाले चारों गति के जीव को विग्रहगति में २१ का स्थान है यह बात ख्याल में आयी ? *श्रोता: आनुपूर्वीवाला ?* आनुपूर्वीवाला। २१ का स्थान तीर्थंकर जीव के समुद्घात अवस्था में है और २१ का स्थान अन्य जीवों के लिये विग्रहगति में है। वह एकेन्द्रिय हो या संज्ञी पंचेन्द्रिय हो, देव हो या नारकी हो। विग्रहगति में २१ प्रकृतियों के उदय का स्थान है। इन दो स्थानों की बात ख्याल में आयी ? २०वाला एक और २१वाला एक।

अन्य कौन-कौनसे स्थान हैं पहले हम देख लेते हैं, उसकी चर्चा हम फिर करेंगे। देखो यहां लिखते हैं **बीस का, इक्कीस का, चौबीस का, इससे एक-एक अधिक** कहां तक ? **इकतीस** तक। इसका अर्थ ऐसा है २० का, २१ का हमने देखा; २२, २३वाला कोई स्थान नहीं है। २४, अभी २४ से लगातार लेना – २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३० और ३१। फिर दो रह गये और कौनसे ? *श्रोता: ९ का और ८ का।* **नौ का और आठ का**। टोटल कितने हुये ? *श्रोता: बारह।* बारह हुये। देखो क्या लिखा है आगे ? **ये बारह नामकर्म के उदयस्थान हैं।** हमने २० का देखा, २१ का देखा; अभी २४ से लगातार ले लो; २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, ९ और ८ का। ये ९ और ८ हैं न, ये तो अयोगकेवली के हैं। हां, तो उनकी बात हम बाद में करेंगे। बाकी जो स्थान हैं उनकी चर्चा अब करेंगे।

२४ का स्थान कैसे होगा ? हमने दोपहर में देखने की कोशिश की थी। अब जो एकेन्द्रिय जीव है विग्रहगति में उसके कितने का स्थान था ? *श्रोता: २१ का।* २१ का

स्थान था। अब उसका शरीरमिश्रकाल चालू हो गया है। शरीरमिश्रकाल में उसके और कौनसी प्रकृतियों का उदय चालू हो जायेगा ? आनुपूर्वी का उदय मिट जायेगा यानी २० हो गये। अब उसमें और किस-किसका उदय चालू हो जायेगा ? शरीर, अभी एकेन्द्रिय की बात अगर हम करते हैं तो कौनसा शरीर होगा उसके ? *श्रोता: औदारिकशरीर।* औदारिकशरीर; संस्थान- एकेन्द्रिय है तो हुण्डकसंस्थान है; साधारण होगा या प्रत्येक होगा ? तो कोई एक होगा और उपघात - ये चार मिलायी तो २४ का स्थान हो गया। ये बात ख्याल में आयी ? २४ का स्थान किसके होता है ? एकेन्द्रिय जीवों के। पर हमें काल बताना चाहिये। मात्र एकेन्द्रिय के होता है इतना कहने से नहीं चलेगा, एकेन्द्रिय जीवों के शरीरमिश्रकाल में होता है। उसको मिश्रशरीर कहते हैं या शरीरमिश्र कहते हैं दोनों ओर से कैसा भी कथन होता है। हम उसको शरीरमिश्रकाल यहां कह रहे हैं। २४ का स्थान ख्याल में आया ? अन्य किसीके वह २४वाला स्थान नहीं होगा।

अब २५वाला स्थान इसमें है कि नहीं है ? है न, एक-एक से अधिक ये सारे स्थान बतायेंगे। यह २५ का स्थान किसके होगा ? अब स्थावर को यह २४ का स्थान हुआ है वह कब हुआ ? शरीरमिश्र अवस्था में हुआ। अब उसीको आगे देखते हैं। जब वह एकेन्द्रिय तीसरे यानी शरीरपर्याप्तिकाल में आ गया है तो उसके और किसका उदय चालू हो जायेगा ? *श्रोता: आतप।* आतप नहीं परघात। आतप किसीको होगा और जिसको आतप होगा उसको परघात और आतप दो का उदय चालू होगा। परघात का तो होता ही होता है। शरीरपर्याप्तिकाल में परघात का उदय तो होगा ही होगा। जिस एकेन्द्रिय को शरीरमिश्रकाल में २४ का उदय था उसीको शरीरपर्याप्तिकाल में परघात मिलाने पर २५ का हो गया। उसी जीव ने यदि उसके साथ आतप को भी बांधा हुआ है तो आतप का भी उदय चालू हो जायेगा उसका तो २६ का उदयस्थान हो जायेगा। या कोई एकेन्द्रिय परघात और उद्योत का उदय चालू करेगा उसके भी २६ का होगा। जब एकेन्द्रिय जीव विग्रहगति से आया था तब २१ का उदय था। शरीरमिश्रकाल में २४ का उदय हुआ। परघात का उदय होने पर २५ का हुआ। अब हम आतप या उद्योत को भूल जाते हैं और उच्छ्वासपर्याप्तिकाल में उच्छ्वास का उदय होने पर २६ का हुआ। अथवा किसीके परघात और आतप या उद्योत का उदय चालू हो गया तब २४ से डायरेक्ट २६ का उदय हुआ था। उसका भी उच्छ्वास का उदय चालू होगा तो वह २७ का हो जायेगा। एकेन्द्रिय में कौन-कौनसे काल हैं ? पहले २१ का है, फिर २४ का हुआ,

फिर परघात का उदय होने पर २५ का हुआ। किसीको परघात के साथ आतप या उद्योत का भी उदय होगा तो उसी काल में उसको २६ का होगा। जो २५वाला है वह उच्छ्वासपर्याप्ति सहित उच्छ्वास के साथ २६वाला होगा और जिसके परघात और आतप पहले ही हुआ था जो २६ पर था वह २७वाला होगा।

पेज नंबर ५७२ निकालना। अभी जो हमने एकेन्द्रियों में देखा उसीको आपको दिखायेंगे। यह टेबल नीचे से ऊपर पढ़ना, नीचे से ऊपर पढ़ने का अर्थ है - देखो नामकर्म के उदयस्थान अब नीचे लिखा है कार्माण में। पहला कॉलम नीचे से ऊपर पढ़ना है कार्माण में, फिर शरीरमिश्र में, शरीरपर्याप्ति में, उच्छ्वासपर्याप्ति में, भाषापर्याप्ति में। यह एक के बाद एक इसके काल आते हैं और हमेशा काल का जो कथन होता है या काल के जो ड्रॉइंग होते हैं वे नीचे से ऊर्ध्व रचना होती है। शुरू-शुरू के काल नीचे बताते हुये बादवाले काल ऊपर बताते हैं। नीचे कार्माणकाल में कितने लिखे ? एकेन्द्रिय - पहला कॉलम है एकेन्द्रिय का। तो नीचे २१वाला लिया कार्माणकाल में। विग्रहगति में २१ प्रकृतियों का उदय था। याद आया न ? १२ ध्रुवोदयी देखी थी और ९ अन्य देखी थी आनुपूर्वी सहित। क्यों बहन ? आपको मिला कॉलम ?

पेज नंबर ५७२, वहां जो टेबल है, पहले कॉलम में नाम लिखे हैं। वे उदययोग्य काल जो हैं, नामकर्म के उदयकाल हैं उनको दिखाया है वहां पर। दूसरा कॉलम है एकेन्द्रिय संबंधी। नीचे से ऊपर देखना है। कार्माणकाल में उसके २१ का उदय है। शरीरमिश्र कहो या शरीरमिश्रकाल हमने नाम दिया है न ! वहां २४ होंगे। २१ में से आनुपूर्वी को घटाया और क्या मिलाया ? शरीर, संस्थान, प्रत्येक या साधारण और उपघात। उसके ऊपर शरीरपर्याप्ति में यानी शरीरपर्याप्तिकाल में परघात और मिला दिया, किसीके परघात और आतप भी था, किसीके परघात और उद्योत था। तो किसीको २५वाला हुआ कोई २६वाला हुआ। जो २५वाला है वह उच्छ्वास नामकर्म के उदय के साथ २६वाला होगा और जो ऑलरेडि २६ का था वह उच्छ्वास नामकर्म के उदय से २७ का हुआ। तो एकेन्द्रिय में कौन-कौनसे स्थान हैं ? आपको देखकर बताना है। *श्रोता: २१वाला, २४वाला, २५वाला, २६वाला और २७वाला।* २१वाला, २४वाला, २५वाला, २६वाला और २७वाला। एकेन्द्रिय पर्याय में उदययोग्य स्थान कौन-कौनसे हैं ? २१वाला, २४वाला, २५वाला, २६वाला, २७वाला। अभी हम एकेन्द्रिय लब्धिअपर्याप्त

की बात करेंगे। उसमें कौन-कौनसे काल होते हैं ? *श्रोता: दो ही काल हैं।* दो ही काल हैं, कौनसे दो ? एक विग्रहगतिवाला कार्माणकाल और शरीरमिश्रकाल। उसके कितनी प्रकृतियां यानी कौन-कौनसे स्थान होंगे ? पहला २१वाला होगा और दूसरा ? *श्रोता: २४वाला।* २४वाला। बात ख्याल में आती है यह ? उसके दो ही काल होंगे।

अब आगे बढ़ते हैं हम। ये हमने उदयस्थान देखे थे २०, २१, २४ आदि ३१ तक और आगे ९ और ८ ये बारह नामकर्म के उदयस्थान हैं हम ५६८ पेज पर आये थे। अब हम गाथा ५९३ और ५९४ की टीका देख रहे हैं। **उन स्थानों के स्वामी कहते हैं।** स्वामी का अर्थ है यह स्थान किसके होते हैं उसको हम कहेंगे। उस स्थान का स्वामी कौन है ? उसकी बात अभी हम देख रहे हैं यहां। **इक्कीस के स्थान के चतुर्गति के जीव स्वामी हैं।** यानी चारों ही गति के जीव जब विग्रहगति में हैं यानी अन्य गति में, अन्य पर्याय में जा रहे हैं तब उनके २१ प्रकृति का उदयरूप स्थान है। पुस्तक की जो भाषा है उसका अर्थ ख्याल में आता है कि नहीं इतना ही देखना है हमको। हमें कुछ याद नहीं रखना है, कुछ रटना नहीं, कुछ नहीं है। जब हम ग्रंथ पढ़ रहे हैं तो जो पढ़ रहे हैं उसका अर्थ हमें भासित होता है कि नहीं होता बस इतना ही करना है और कुछ नहीं करना है। हां, क्योंकि भाषा कुछ अटपटी होती है और उसका ठीक से अर्थ ख्याल में नहीं आता। तो हम अपनी बुद्धि से कुछ न कुछ अर्थ लगाना चाहते हैं और यह भी नहीं हो तो उसको टालकर आगे बढ़ते हैं। ऐसा होता है न ! ग्रंथ के कुछ शब्द ख्याल में नहीं आते हैं। तो यदि हम कहेंगे कि होगा कुछ भी चलो आगे क्या है वह देखेंगे तो उसका सही अर्थ अपने ख्याल में नहीं आता, चूक जाता है।

श्रोता: तीर्थंकर केवली का २१ का नामकर्म का स्थान कैसे होगा ? हां तीर्थंकर, अभी-अभी बताया था न ! समुद्घात अवस्था में सामान्य केवली को आनुपूर्वी बिना २० प्रकृतियां उदयरूप हैं और तीर्थंकर केवली के आनुपूर्वी के बदले वहां तीर्थंकर प्रकृति ली इसलिये २१ हुयी। समुद्घात अवस्था की बात चल रही है। आनुपूर्वी तो होती नहीं है उनके। अभी बात की थी हमने। तीर्थंकर केवली के समुद्घात अवस्था में तीर्थंकर प्रकृति का उदय है। *श्रोता: गिनना है उसको ?* हां, बिलकुल गिनना उसको। तीर्थंकर प्रकृति को गिनना क्योंकि तेरहवें और चौदहवें गुणस्थान में लगातार उसका उदय चल रहा है। तीर्थंकर प्रकृति का उदय लगातार है वहां पर।

अभी हम यहां देखते हैं उसके स्वामी कौन हैं ? यहां आते हैं हम ५६८ पेज पर, टीका - **इक्कीस के स्थान के चतुर्गति के जीव स्वामी हैं। चौबीस के स्थान के एकेन्द्रिय स्वामी हैं।** अभी हमने देखा था। *श्रोता: शरीर, संस्थान।* हां, शरीर, संस्थान, प्रत्येक या साधारण और उपघात ये हमने देखे थे। **पच्चीस के स्थान के** - उसके स्वामी कौन-कौन हैं ? हम ज़रा देख लेते हैं - **विशेष मनुष्य**; अभी इसका अर्थ हमें मालूम नहीं है हम पढ़ेंगे; **देव, नारकी और एकेन्द्रिय स्वामी हैं।** एकेन्द्रियों के २५ का कैसा स्थान होता है ? हमने देख लिया था जरा निकालो फिर वह टेबल। उन्होंने क्या बताया है ? २५ के स्वामी कौन-कौन हैं ? एकेन्द्रिय हैं। कब है ? शरीरपर्याप्ति के काल में। २४ तक आये थे उसमें परघात मिल गया तो २५ हो गये। ख्याल में आती है बात ?

अब दूसरा कौनसा बताया था उन्होंने ? विशेष मनुष्य। विशेष मनुष्य का अर्थ होता है आहारकशरीरवाले जीव। देखो, जब आहारकशरीर बनता है तो उसकी भी छह पर्याप्ति होती हैं परंतु वहां विग्रहगतिवाला काल नहीं होता। क्योंकि उन मुनिराजों का भाषापर्याप्ति का काल चल रहा है, है न ! क्योंकि मरण तक भाषापर्याप्तिकाल रहता है। उस भाषापर्याप्ति के काल में अभी आहारकशरीर संबंधी पर्याप्ति चालू हो गयी। पहले में पहले उनके आहारक संबंधी शरीरमिश्रकाल होगा। तो आहारकशरीर संबंधी मिश्रकाल में कौन-कौनसी प्रकृतियों का उदय होगा ? उसको हम देख लेते हैं। यहां पर आपके सामने टेबल है न कहां कौनसा उदय होता है ? आनुपूर्वी को छोड़ो ये २० हो गयी। *श्रोता: उनको डायरेक्ट शरीरमिश्रकाल होगा ?* हां, उनका डायरेक्ट दूसरा काल चालू हो जाता है। आहारकवालों के डायरेक्ट दूसरा शरीरमिश्रकाल यानी आहारकशरीरमिश्रकाल चालू हो जाता है। उसमें ये २०, यहां आहारकशरीर लेना, संस्थान - समचतुरस्रसंस्थान लेना, प्रत्येकशरीर लेना, उपघात लेना। आहारकशरीर में संहनन होता है क्या ? *श्रोता: नहीं।* सप्तधातु रहितवाला है तो संहनन को नहीं लेना है, अंगोपांग को लेना आहारकअंगोपांग। ये २० और ५ मिलकर २५ हो गये। जब आहारकशरीर होता है और उसका शरीरमिश्रकाल है तब उनके २५ प्रकृतियों का उदय है, उनके संहनन का उदय नहीं है।

श्रोता: तो फिर उनके वह ध्रुवोदयीवाली सब प्रकृतियां होंगी ? बिलकुल हां, वे सब होगी उनके लिये। *श्रोता: मूलशरीर छोड़े बिना ही ?* शरीर छोड़ा नहीं है, मूलशरीर

में तो है ही है। मूलशरीर संबंधी सब उनका उदय चल ही रहा है। अभी मनुष्यगति का उदय चल रहा है कि नहीं ? पंचेन्द्रिय जाति का चल रहा है कि नहीं है ? उसके साथ इन ॲडिशन उनको यह; *श्रोता: नया अभी ?* हां, नया अभी इसका उदय चालू है क्योंकि उस जाति के परमाणु का वे ग्रहण कर रहे हैं। उस समय आहारकशरीर के परमाणुओं का ग्रहण चल रहा है। *श्रोता: शरीर के परमाणु इधर-उधर हो जाते हैं ?* इधर-उधर कुछ नहीं, आत्मा एक अखण्ड है और सारे कर्म ऐसे सर्व आत्मप्रदेशों में फैले हुये हैं। इतने ही सारे कर्मों का उदय है उस अवस्था में बस हां, दो शरीर की दो अलग-अलग बातें नहीं होंगी वहां पर क्योंकि जिस समय आहारककाययोग है उस समय औदारिककाययोग नहीं होगा उस समय की बात चल रही है। अब यहां विशेष मनुष्य कहा न इसको। उस समयवाली बात हम देखेंगे अब।

श्रोता: आहारकवाले को छहों पर्याप्ति में श्वासोच्छ्वास पर्याप्ति होती है ? छहों पर्याप्ति होती हैं, आहारकवाले को भी छहों पर्याप्ति होती हैं। अभी तो हम २५ का काल किसको है उसकी बात कर रहे हैं। आहारकशरीरवाले को जब शरीरपर्याप्ति पूरी हो जायेगी तो उनके भी विहायोगति, परघात का उदय हो जायेगा; और आगे बढ़ेंगे तो उनके लिये भी उच्छ्वास का उदय होगा; आगे बढ़ेंगे तो उनके लिये भी स्वर का उदय चालू होगा। अभी २५ का उदयस्थान किसको-किसको है उसकी बात चल रही है अपनी। या तो एक-एक पर्याय ले लो और उसमें घटित करो या एक-एक स्थान ले लो और उसमें घटित करो। अभी हम क्या ले रहे हैं ? एक-एक स्थान ले रहे हैं। २० का स्थान कहां होता है हमने देख लिया। २१ का स्थान किसके होता है उसको देख लिया।

अभी हम २५ का स्थान देख रहे हैं। २५ का स्थान एकेन्द्रियों के भी होगा। कब होगा ? शरीरपर्याप्ति पूर्ण होने पर शरीरपर्याप्ति के काल में परघात के उदय होने पर २५ का स्थान होगा। और किसको होगा ? विशेष मनुष्य यानी आहारकवाले को ले लिया और किसके होगा ? देव को होगा, नारकी को होगा। देव और नारकी में यही घटित करना है क्योंकि उनमें भी संहनन नहीं होगा। जो देव और नारकी हैं उनके भी विग्रहगति में २१ का स्थान होगा। उसके बाद उनके आनुपूर्वी निकालो और ये पांच मिलाओ तो उनके भी २५वाला स्थान होगा - देव के भी और नारकी के भी। फिर से - *श्रोता: देवों के शरीर में संहनन नहीं होता है ?* देवों के शरीर में संहनन नहीं होता। संहनन क्या होता है मालूम है ? हड्डियों की जो मजबूती है उसको संहनन कहते हैं।

नामकर्म के उदय में संहनन होता है और देवों के सप्तधातु रहित ऐसा वैक्रियिकशरीर है, उसमें संहनन नहीं होता। संस्थान होता है, आकार होता है; संहनन नहीं होगा।

देखो, फिर से पृष्ठ ५७२ पर टेबल देखना। नीचे कार्माणकाल में कौन-कौनसे लिये हैं ? सामान्य केवली को २० का स्थान था। बाकी सभी के लिये २१ का था। उसके ऊपर देखते हैं शरीरमिश्रकाल में - एकेन्द्रियों के २४वाला था, देवों के २५ का है, नारकी के २५ का है, विशेष मनुष्य को २५ का है। यहां तक बात ख्याल में आयी ? २५ का स्थान किसके-किसके होता है ? *श्रोता: देवों को, नारकी को, विशेष मनुष्य को।* देव, नारकी, विशेष मनुष्य और एकेन्द्रियों के भी शरीरपर्याप्ति के काल में होगा। एकेन्द्रियों के शरीरपर्याप्ति के काल में भी २५ का होगा। तो २५ के स्थान कहां-कहां देखे ? एकेन्द्रिय के ? *श्रोता: शरीरपर्याप्तिकाल में।* शरीरपर्याप्तिकाल में। देव और नारकी के ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल में।* शरीरमिश्रकाल में और आहारकवाले के ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल में।* शरीरमिश्रकाल में। ख्याल में आयी बात ?

अब २५ के बाद हम २६ के स्थान देखेंगे, पृष्ठ ५६८ पर। **छब्बीस के स्थान के एकेन्द्रिय, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय और पंचेन्द्रिय सामान्य जीव स्वामी हैं।** हम टेबल देखते हैं। एकेन्द्रिय को २६ का स्थान कहां-कहां है ? देख लो। शरीरपर्याप्ति में किसके होगा ? आतप या उद्योतवाले को होगा और उसके ऊपर जाकर किसीको कब होगा ? उच्छ्वासपर्याप्ति के काल में होगा। ख्याल में आयी बात ? एकेन्द्रियों के होता है। २६ का स्थान और कहां-कहां है ? किसी-किसीके ? मनुष्य, तिर्यंच और सामान्य केवली के लिये शरीरमिश्रकाल में। सामान्य केवली को भी शरीरमिश्रकाल होता है क्या ? *श्रोता: समुद्घात में।* हां, केवली समुद्घात के कपाट अवस्था में फैलते समय और जब वे मूलशरीर में समेटते हैं, तो दुबारा सब वही प्रोसेस होगा; शरीरमिश्रकाल होगा, शरीरपर्याप्तिकाल होगा। उनके भी पर्याप्ति वगैरह पूरी हो जाती हैं वापस लौटकर ऐसे सभी वैसे काल होंगे उनके। यह हमने २६ का देख लिया है।

श्रोता: समुद्घात अवस्था में फैलते और समेटते समय दोनों ही में सभी काल होंगे ? सब में होंगे। फैलते समय तीन काल और समेटते हुये पांच काल। यह बात हमने कल की थी, पेज ५६५ पर ५८६ नंबर की गाथा निकालो । **समुद्घात केवली में** - मिला ? **कार्माण, औदारिकमिश्र, औदारिकशरीरपर्याप्ति, श्वासोच्छ्वासपर्याप्ति,**

भाषापर्याप्ति ऐसे पांच काल अनुक्रम से होते हैं। वह कब होते हैं ? समेटते समय होते हैं। **ये पांचों काल प्रदेशों को समेटते हुये ही होते हैं।** यानी वे पूरे लोकपूरण हुये और वापस समेटने लगे तब की बात है। **फैलते समय तीन ही काल हैं।** ख्याल में आया ? अब हम आते हैं अपनी जगह पर। *श्रोता: ये सब उदय के ही स्थान हैं ?* ये सारे उदय के ही स्थान चल रहे हैं ! *श्रोता: फैलाते समय तीन और समेटते समय पांच ?* पांचों हैं। मूलशरीर में प्रवेश करते हैं तो वहां फिर से दुबारा पर्याप्ति वगैरह कार्य हो जाता है इसलिये। औदारिकशरीर ही है न उनके ! तीर्थंकर की बात चल रही है।

पहले तो उनका कार्माणकाल था, फिर मिश्रकाल हुआ। कब हुआ मिश्रकाल ? देखो लोकपूरण और प्रतर अवस्था में कार्माणकाल था; जब कपाट में आ गये तो शरीरमिश्रकाल; जब दंड में आये तो शरीरपर्याप्तिकाल; मूलशरीर में आये तो बाकी और दो उच्छ्वासपर्याप्तिकाल और भाषापर्याप्तिकाल। उनके भी सभी काल हैं, उनके एक-एक समय में होता है। पहले हमने जो देखा था विग्रहगति से आता है तो अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त होता है इनके एक-एक समय में हो जाता है। उसका अभी हमें अभ्यास नहीं है न ! जब तीर्थंकरों के ये समुद्घात होते हैं तब उसमें क्या-क्या प्रोसेसेस होते हैं यह अभी अपना विषय यहां नहीं हुआ है। सभी विषयों को तो एक साथ नहीं टच कर सकते। अभी तो उदय की बात करेंगे हम। जब कभी उसका विषय आयेगा तो समेटने के काल में उसमें क्या-क्या होता है, हर एक समय में कितना कार्य होता है और कितनी निर्जरा होती है - क्या होता है ? वह सब ख्याल में आयेगा। हां, दुबारा देखो, उदय मिटा था, उदय फिर शुरू हुआ यह बात है। कार्माणकाल में २० ही का उदय था। वह उदय कम हुआ था वहां पर, फिर वापस वह उदय चालू हो गया।

देखो हमने अभी तक २० का देखा, २१ का देखा, २४ का देखा, २५ का देखा, २६ का देख रहे थे। २६ का स्थान एकेन्द्रियों के दो जगह है - किसीको शरीरपर्याप्ति के काल में ही है आतप या उद्योत सहित और किसीको उच्छ्वासपर्याप्तिकाल में आतप या उद्योत रहितवाले के होगा। २६ का और किसको है ? शरीरमिश्र; हम आपको ऐसे ही नहीं पूछ रहे। ५७२ पेज पर जो टेबल है उसको देखकर आपको नक्की करना है। *श्रोता: तिर्यंचों के।* तिर्यंचों के कब है ? *श्रोता: शरीरमिश्र में है।* शरीरमिश्र में है। मनुष्यों के भी शरीरमिश्र में, सामान्य केवली को भी शरीरमिश्र में, तो ये २६ कैसे होगी उसको जरा देख लेते हैं फिर। तिर्यंच को जब कह दिया है तो एकेन्द्रिय को अलग निकाला है,

अब अन्य की बात है - त्रस की बात है। यहां शरीरमिश्रकाल की बात है, यहां तिर्यंच और मनुष्यों के औदारिकशरीर होगा, संस्थान यथायोग्य जो कोई होगा, प्रत्येकशरीर होगा, उपघात होगा, संहनन यथायोग्य होगा और अंगोपांग भी औदारिकअंगोपांग होगा। तो २० और ६ मिलकर २६ का उदयरूप स्थान शरीरमिश्र अवस्था में होगा। किसकी बात चल रही है ? तिर्यंच, मनुष्य की। तिर्यंच में से एकेन्द्रियों को हमने अलग निकाला है, बाकी यानी द्वीन्द्रियादि सब तिर्यंच और सब मनुष्य उनकी बात यहां हो रही है। ये २६ के स्थान हमने देख लिये। *श्रोता: सामान्य केवली में ?* सामान्य केवली में भी वही होगा न ! क्योंकि उनमें भी शरीरमिश्रकाल होता है, उस समय एक समय के लिये उनके भी ऐसा ही स्थान हो जायेगा।

अब हम आगे का २७वाला स्थान देखेंगे, ५६८ पर पढ़ रहे थे न। **सत्ताइस के स्थान के** कौन-कौन स्वामी हैं ? वह बात चल रही है। **विशेष मनुष्य** का अर्थ है आहारकवाले, **देव, नारकी और एकेन्द्रिय स्वामी हैं।** अब यह टेबल निकालो। एकेन्द्रियों में २७वाला कौन है ? उच्छ्वासपर्याप्ति में जिसको आतप या उद्योत है उसकी बात है। अन्यत्र २७ का स्थान कहां दिखायी दे रहा है आपको ? *श्रोता: देव और नारकी में।* देव और नारकी में शरीरपर्याप्तिकाल में और विशेष मनुष्य यानी आहारकवाले के भी शरीरपर्याप्तिकाल में और तीर्थंकर को शरीरमिश्रकाल में होगा। अब उसका कारण हम देखते हैं। यहां जो अभी हमने सामान्य तिर्यंचों की बात देखी थी न द्वीन्द्रिय आदि की, तो यहां पर आकर उनके कितने उदयरूप हुये थे ? २६ हुये थे। याद है न ! २६ हुये थे। २६ में से वह तो २८ होनेवाले हैं परंतु यह २७वाला स्थान किसको होगा ? *श्रोता: देव, नारकी और विशेष मनुष्य को होगा।* देव, नारकी को होगा। देखो २७ का भी हम पढ़ रहे थे- विशेष मनुष्य, देव, नारकी और एकेन्द्रिय। एकेन्द्रियों की बात हमने देखी, एकेन्द्रियों में विग्रहगति में २१ थे, उनमें से २० लिये। शरीरमिश्रकाल में २४ हुये थे, फिर शरीरपर्याप्तिकाल में २५ हुआ था या किसी-किसीको यहां पर ही २६ हुये थे। जिसको २६ हुये थे उसको यहां पर २७ हुये। यह एकेन्द्रिय का २७वाला स्थान देखा।

अब देव-नारकी का २७वाला स्थान देखते हैं। देव-नारकी को विग्रहगति में २१ थे, उसमें से २० लेंगे और यहां शरीरमिश्रकाल में संहनन को छोड़कर बाकी ५ मिलाये, तो यहां पर २५ का स्थान हुआ। जब यहां पर शरीरपर्याप्तिकाल में आ गये तो परघात

और विहायोगति, २५ और २ मिलाकर २७ हुये। देव में भी ऐसा ही, नारकी में भी ऐसा ही, आहारक में भी ऐसा ही। तो २७ का स्थान उन तीनों को भी होगा। अब और आगे बढ़ते हैं। *श्रोता: तीर्थंकर में समुद्घातकेवली रह गया है।* हां, तीर्थंकर केवली को, अन्य को जहां हमने ६ मिलाये वहां तीर्थंकर एक और मिलाना। *श्रोता: २१ में तीर्थंकर तो पहले ही ले लिया था।* वह तो विग्रहगति कार्माणकाल में लिया था। यहां २१ थे, हां, बराबर है; यहीं पर वह तीर्थंकर था, वही कंटिन्युअस रहा। वह यानी वह तीर्थंकर यहां पर भी कंटिन्युअस रहा। यहां २१वाला था और उसमें ये ६ मिला दिये तो २७ हो गये, बराबर है। तीर्थंकर पहले से ही चला आ रहा था। २१ में यहां ६ मिलाये तो २७ का हो गया। *श्रोता: तीर्थंकर प्रकृति पहले ही थी ?* हां, तीर्थंकर प्रकृति ली थी। उनके २१ का था। २१ में ६ मिलाये तो २७ हो गये। अब ये २७ के हो गये।

२८ का स्थान देख लेते हैं। **अट्ठाइस और उनतीस के स्थान के सामान्य पुरुष, सकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय, विशेष पुरुष, देव, नारकी** सब **स्वामी हैं।** क्योंकि अभी एक ही प्रकृति मिलानी है। देखो, यहां टेबल देख लेते हैं। देव जो शरीरपर्याप्ति में २७ थे उच्छ्वासपर्याप्ति में उच्छ्वास कर्म जुड़ जाने से २८ हो गये। वही बात नारकी में, वही बात आहारक में। अब सामान्य में कैसा लेना है ? जहां शरीरमिश्र के काल में २६ था; किसके ? द्वीन्द्रिय आदि तिर्यंच और मनुष्यों के विग्रहगति में यहां २० थे शरीरमिश्रकाल में २६ हुये थे, वे जीव यहां शरीरपर्याप्तिकाल में आ गये तो कौनसे दो मिल गये ? *श्रोता: परघात और विहायोगति।* परघात और विहायोगति। तो यहीं पर वह २६ और २ मिलकर २८ हुये। ख्याल में आती है बात ? २८ का स्थान हां, अब २९वाली बात। २९वाला भी वहां हो सकता है। सामान्य तिर्यंचों के, सामान्य तिर्यंचों के लिये वहां २९वाला हो सकता है। *श्रोता: सामान्य केवली ?* सामान्य केवली ? हां होगा न, वह उच्छ्वासपर्याप्ति में होगा; जो मनुष्यों के होगा वही उनके होगा। जो सामान्य मनुष्यों के होता है वही उनके भी होता है। तीर्थंकरों के एक स्थान पहले हो जाता है, उनकी प्रकृति एक-एक एक्स्ट्रा है इसलिये उनके पहले हो जाता है। ये २९ के स्थान हो गये।

अब ३० के स्थान - सकलेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और सामान्य पुरुष स्वामी हैं। कहां पर है ३०वाला स्थान ? तिर्यंच में उच्छ्वासपर्याप्ति में, यह उच्छ्वासपर्याप्ति में जिसको ३० का है वह उद्योतवाला होना चाहिये या भाषापर्याप्ति में भी ३० का स्थान बिना उद्योतवाले को है। मनुष्यों के भी ३०वाला स्थान भाषापर्याप्तिकाल में है। सामान्य

केवली को भी ३०वाला वहीं पर है और जो ३१वाला स्थान है वह तीर्थंकरों के होगा और उद्योतवाले तिर्यंच में होगा। अभी यह हमने इधर से उधर ऐसा पढ़ लिया अब ५७३ पृष्ठ पर देख लेते हैं हम। उसका अलग से दुबारा कथन किया है इक्कट्ठा लिख दिया उसको। वह थोड़ा आसान होगा समझने के लिये। **२० का स्थान** यह कितने हैं ? उसके कौन-कौनसे अलग-अलग स्वामी हैं उसकी बात बता रहे हैं। **समुद्घातकेवली के कार्माण में उदययोग्य २०**, अभी हमने दो-चार बार देख लिया है। याद है न ! आनुपूर्वी बिना २० हैं। **२१ के स्थान दो** हैं - **चारों गतिवाले विग्रहगति के जीव और तीर्थंकर केवली के कार्माणकाल में उदययोग्य** क्योंकि आनुपूर्वी नहीं परंतु तीर्थंकर है। **२४ का एक ही स्थान है एकेन्द्रिय के मिश्रशरीर** यानी शरीरमिश्रकाल **में उदययोग्य** २४वाला है। **२५ के तीन** हैं, हमने उस टेबल में भी देखा था। कौनसे तीन हैं ? **एकेन्द्रिय के शरीरपर्याप्ति में उदययोग्य २५, आहारक के शरीरमिश्रकाल में उदययोग्य २५ और देव और नारकी के भी शरीरमिश्रकाल में उदययोग्य २५।**

श्रोता: विशेष मनुष्य का अर्थ क्या है ? विशेष मनुष्य यानी आहारक, प्रश्न नहीं समझ में आया। *श्रोता: यहां २५ के तीन स्थान हैं लेकिन स्थान तो चार होने चाहिये ?* आहारक को, देव और नारकी को एक साथ एक लाइन में लिखा है। चार हुये न ! देव और नारकी को एक साथ लिया हां। *श्रोता: उदययोग्य का अर्थ क्या है ?* उदययोग्य यानी नामकर्म की एक साथ इतनी प्रकृतियां उदयरूप हैं, वह उदय का स्थान है। २५ प्रकृति का उदय का स्थान है। उदययोग्य यानी २५ प्रकृतियां यहां उदयरूप हैं। एक जीव के एक काल की बात चल रही है। आगे, **२६ के स्थान तीन** हैं। **एकेन्द्रिय के शरीरपर्याप्तिकाल में उदययोग्य २६**। इसके साथ आप टेबल देखो तो ख्याल में आ जायेगा। शरीरपर्याप्ति में २६ किसके होगा ? जिसके आतप या उद्योत होगा उसके होगा, अन्य जिसके आतप, उद्योत नहीं है उनके **एकेन्द्रिय के उच्छ्वासपर्याप्ति के काल में २६** हो जायेगी और किसके होता है ? **द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय,** ये तिर्यंच हुये और **सामान्य मनुष्य** और **निरतिशय केवली** कहो या सामान्य केवली कहो एक ही बात है; उन**के औदारिकमिश्रकाल में उदययोग्य २६**। उदययोग्य २६ का अर्थ है उनका २६ प्रकृतिवाला उदय का स्थान है।

यह भी हमने देख लिया था। २७ के चार स्थान - **आहारकशरीरपर्याप्ति में**

यानी आहारकशरीरवाले के शरीरपर्याप्तिकाल में **उदययोग्य २७**। क्योंकि इनके संहनन नहीं होता है। इसलिये हमने देखा था पहले २५ हुआ था, फिर परघात और विहायोगति हो गयी तो इनके २७ हो गया। **तीर्थंकर समुद्घात केवली के उदययोग्य २७**। देव-नारकी के जैसे आहारक का है वैसे **देव-नारकी** का है, **शरीरपर्याप्ति में उदययोग्य २७** और **एकेन्द्रिय के उच्छ्वासपर्याप्ति में उदययोग्य २७**। यह किसके होगा ? जिसको आतप या उद्योत है उसके होगा। *श्रोता: तीर्थंकर समुद्घात केवली के शरीरमिश्रकाल लिखा नहीं है।* तीर्थंकर समुद्घात केवली के उदययोग्य २७ बताया। *श्रोता: शरीरमिश्रकाल में ?* शरीरमिश्रकाल में ही। *श्रोता: वहां नहीं लिखा है।* हां, नहीं लिखा है। **अट्ठाइस के स्थान**- **सामान्यमनुष्य, सामान्य केवली, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, पंचेन्द्रिय** यह जो हम द्वीन्द्रिय आदि कहते हैं या पंचेन्द्रिय वह तिर्यंच की बात है - उन**के शरीरपर्याप्ति में उदययोग्य २८** हैं। ये २८वाले बता दिये हमने, **आहारक के उच्छ्वासपर्याप्ति में उदययोग्य २८** क्योंकि उनके २७ था वह २८ हो जायेगा और **देव-नारकी के उच्छ्वासपर्याप्ति में उदययोग्य २८** उनके भी आहारक के जैसा ही होता है। पहले आया था विग्रहगति से तब २१ था, फिर २५ हुआ, फिर २७ हुआ, फिर २८ हुआ यहां पर, बाद में २९ हो जायेगा।

२९ के स्थान - सामान्य समुद्घात केवली के उच्छ्वासपर्याप्ति में, **द्वीन्द्रिय आदि सब के शरीरपर्याप्ति में उदययोग्य**, **द्वीन्द्रिय आदि वगैरह के उच्छ्वासपर्याप्ति में उदययोग्य** ये दोनों जगह उनको क्यों कहा ? उद्योत सहित और रहित के लिये। आतप मात्र एकेन्द्रियों में होता है, उद्योत एकेन्द्रिय से लेकर पंचेन्द्रिय तिर्यंच तक होता है। **तीर्थंकर समुद्घात केवली के शरीरपर्याप्ति में उदययोग्य**, **आहारक के भाषापर्याप्ति में उदययोग्य** और **देव-नारकी के भाषापर्याप्ति में उदययोग्य**। तो देव और नारकी को मरण तक नामकर्म के कितनी प्रकृतियों का उदय रहेगा ? *श्रोता: २९ का।* २९ का क्योंकि भाषापर्याप्तिकाल किसको कहते हैं ? भाषापर्याप्ति पूरी होने पर मरण तक उनके नामकर्म की कितनी प्रकृतियों का उदय चल रहा है ? २९, अभी उसमें कोई परिवर्तन नहीं होगा। परिवर्तन यानी जो पलटनेवाली हैं उसमें कुछ होगा तो कभी किसीका उदय वगैरह होता है तब। परंतु, बाकी जो प्रकृतियां हैं २९वाला वह हमेशा उतना ही रहेगा। ये २९ के स्थान हो गये।

३० के स्थान चार - में वह **द्वीन्द्रियादि है वह उच्छ्वासपर्याप्ति में**, **सामान्य**

मनुष्य वगैरह-वगैरह भाषापर्याप्ति में, **किसीको उच्छ्वासपर्याप्ति में** क्यों बढ़ गया ? वह उद्योतवाला लेना उसके साथ। **तीर्थंकरों के उच्छ्वासपर्याप्ति में** और **सामान्य के भाषापर्याप्ति में**। तीर्थंकरों के पास एक-एक प्रकृति ज्यादा है। उसके पहले-पहले इनकी वह संख्या आ जाती है। **३१वाले दो ही स्थान** हैं, ये उदय के स्थान चल रहे हैं। **तीर्थंकर केवली के भाषापर्याप्ति में उदययोग्य ३१** और **द्वीन्द्रियादि के भाषापर्याप्ति में उदययोग्य ३१** हैं ये उद्योतवाले हैं। अन्य सामान्य तिर्यंचों के ३०वाला स्थान होगा। अब दो ही रह गये - अयोगी के नामकर्म के ९ का स्थान तीर्थंकर अयोगकेवली के और ८ का स्थान सामान्य अयोगकेवली के। नामकर्म की बात है, टोटल १२ में से वे हैं न ! देखो, अयोगकेवली के कौनसे कर्म बाकी हैं ? चार अघाति - एक आयु है, एक वेदनीय है, एक गोत्र है। १२ में से तीन गये कितने रह गये ? *श्रोता: ९।* ९ - तीर्थंकर होगा तो ९, तीर्थंकर प्रकृति नहीं होगी उदयरूप यानी जो सामान्य केवली हैं उनके ८ प्रकृतियां उदयरूप हैं।

इसतरह से ये उदय के अलग-अलग स्थान हमने देखे हैं। अब फिर ८ और ९ को देखेंगे। ये ८ और ९ किसकी कब की बात है ? इसमें देखना है आपको। देखेंगे हम, जो अभी अयोगकेवली हुये हैं और यहां बात उदय की चल रही है। बराबर है न ! इनमें से तेजस, कार्माण का उदय कहां रुक गया ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। वर्णादि चार ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। स्थिर-अस्थिर, शुभ-अशुभ ये सब ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में। गति है क्या चौदहवेंवाले को ? गति नामकर्म है ? मनुष्यगति, पंचेन्द्रियजाति, त्रस, बादर, पर्याप्त, सुभग, आदेय, यशस्कीर्ति इसका उदय है सामान्य केवली को। कितने हुये ? *श्रोता: ८।* ८ और तीर्थंकरों के ? ९, ख्याल में आयी बात ? बाकी तो सबके उदय की व्युच्छित्ति हो चुकी। अभी बाकी ये सब उनके कुछ है ही नहीं है। तेरहवें में ही उन सबके उदय की व्युच्छित्ति हो गयी है। अब इतनी ही बची हैं ८, सामान्य केवली के ८ का उदय है और तीर्थंकर केवली के ९ का उदय है। अभी हम यहीं रुकेंगे, बाकी विषय आगे चलेगा अपना।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५५. देवों में कहां कौन जन्म लेते हैं ?

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है और पं. टोडरमलजी ने उसीकी जो भाषाटीका सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है, उसीका हम यहां हिंदी अनुवाद देख रहे हैं। अभी हमने नामकर्म के स्थानों में उदय के स्थानों की चर्चा की थी। बहुतों के प्रश्न हैं, कुछ कन्फ्यूजन चल रहा है। अयोगकेवली के जो ८ और ९ प्रकृतिवाले स्थान हमने देखे थे, देखो पढ़ लेते हैं।

पृष्ठ ५७५ पर ५९८ नंबर की गाथा है वहां क्या लिखा है ? **अयोगकेवली के बारह उदय प्रकृतियां हैं।** नामकर्म की बारह नहीं कही। अयोगकेवली के कौन-कौनसी मूलप्रकृतियों का उदय है ? *श्रोता: चार।* घाति कि अघाति ? *श्रोता: अघाति।* चार अघाति; चार अघाति की मिलकर १२ का उदय है। कौन-कौनसे ? एक वेदनीय है, आयु यानी मनुष्यायु है और उच्चगोत्र है, इन तीन को छोड़कर बची किसकी ? अभी नामकर्म की बच गयी। तो नामकर्म की कितनी हैं ? तो तीर्थंकर होंगे तो ९ प्रकृतियां हैं और सामान्य केवली होंगे तो ८ प्रकृतियां हैं। किसीका प्रश्न है- *ये वेदनीय, आयु और गोत्र को नामकर्म की प्रकृतियों में से क्यों घटाना ?* वे नामकर्म की हैं ही नहीं उनको क्यों घटायेंगे ? वे तो अघाति की अन्य प्रकृतियां हैं उनको छोड़कर केवल नामकर्म की ९ गिन रहे हैं। ख्याल में आयी बात ? हां, अभी उदय को छोड़ दो।

अब हम आते हैं ५११ पृष्ठ पर, कुछ अलग विषय चलायेंगे अभी। देवों में कौन कैसे उत्पन्न होते हैं केवल उसकी यहां चर्चा है। कौन-कौनसे जीव स्वर्गों में उत्पन्न होते हैं उसकी बात चल रही है। मनुष्यलोक यानी ढाईद्वीप। यह ढाईद्वीप कितना बड़ा है ? *श्रोता: ४५ लाख योजन का।* ४५ लाख योजन का। उसमें ढाईद्वीप कौन-कौनसे हैं ? नाम मालूम हैं ? बोलो ? *श्रोता: जम्बूद्वीप।* जम्बूद्वीप। *श्रोता: धातकीखण्ड।* धातकीखण्ड और ? *श्रोता: पुष्करार्ध द्वीप।* आधा पुष्कर जिसको पुष्करार्ध कहते हैं - ये ढाईद्वीप हो गये और बीचवाले दो समुद्र हैं, वे उसमें आ गये। तो सब मिलकर उनका डायमीटर कितना होगा ? ४५ लाख योजन। यह जो गोलाकार क्षेत्र है उसको कहेंगे मनुष्यक्षेत्र। यह मनुष्यक्षेत्र संबंधी तीस भोगभूमि हमने कल देखी थी। पांच मेरु हैं और हर एक मेरु के साथ छह-छह कुलाचल हैं। वहां एक भरतक्षेत्र होता है; एक ऐरावतक्षेत्र होता है; विदेहक्षेत्र होता है यानी तीन-तीन तो कर्मभूमि होती हैं। दो जघन्य, दो मध्यम और

दो उत्तम भोगभूमि होती हैं, ६ × ५ = ३० हो गयी न भोगभूमि ?

मनुष्यलोक संबंधी तीस भोगभूमि के तिर्यंच और मनुष्य, मनुष्यक्षेत्र तो कहा - मनुष्यक्षेत्र में अकेले मनुष्य रहते हैं कि तिर्यंच भी रहते हैं ? *श्रोता: तिर्यंच भी रहते हैं।* और भी कोई रहेगा ? *श्रोता: देव भी।* देव भी रहेंगे न ! व्यंतरों के आवास वगैरह पाये जायेंगे - देव भी रहेंगे। नारकी भी यहां आयेंगे क्या ? नहीं आयेंगे। हां, तो **तीस भोगभूमि के मनुष्य और तिर्यंच**। यहां तक ख्याल में आयी बात ? भोगभूमिवाले जीव नियम से मरकर देव ही होते हैं। मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक में जाते हैं, सम्यग्दृष्टि सौधर्म-ईशान में जाते हैं। आगे कहते हैं **मानुषोत्तर स्वयंप्रभ पर्वतों के बीच** मानुषोत्तर के परे-बाहर की ओर और स्वयंप्रभ पर्वत के अंदर की ओर, यह कहां है स्वयंप्रभ ? कल बात की थी मैंने। स्वयंभूरमण समुद्र के पहले स्वयंभूरमण नाम के द्वीप में, बीचोबीच ऐसा वलयाकार पर्वत है उसका नाम है स्वयंप्रभ पर्वत। उसके बाहरी ओर तो तिर्यंचों की कर्मभूमि है और अंदर की ओर है जघन्य भोगभूमि; बीचवाले जितने असंख्यात द्वीप हैं उन सबमें तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि है। सभी असंख्यात द्वीप और समुद्र मिलकर कितने हैं ? *श्रोता: पच्चीस कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य।* पच्चीस कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य जिसको हम ढाई उद्धारसागर कहेंगे।

यह पल्य क्या होते हैं ? पल्य संख्या को बताते हैं। पल्य भी तीन प्रकार के होते हैं - एक है व्यवहारपल्य, एक है उद्धारपल्य और एक है अद्धापल्य। जहां हम देवों की आयु या कर्मों की स्थिति देखते हैं वह अद्धापल्य और अद्धासागर में नापते हैं। जो द्वीपों और समुद्रों की संख्या नापते हैं वह उद्धारपल्य में नापते हैं। व्यवहारपल्य हम उसको कहते हैं वह जो रोमखण्ड कितने हैं ? उसको गिनने का वह तरीका है। तो पल्य यानी गड्ढा, खड्डा। कितना बड़ा करना ? एक योजन चौड़ा गोल और एक योजन ऊंड़ा। कौनसा ? वह महायोजनवाला। इतना बड़ा गड्ढा करना, कहां ? दिमाग में। नहीं तो कहां, अभी अपना मनुष्यलोक ही कितना छोटा है, और कहां करने जायेंगे ! या देव को बता देना कहीं जाकर करेगा इतना बड़ा खड्डा। इतना बड़ा इमॅजिन करना और उसको रोमखण्डों से भर देना रोमखण्ड समझते हैं ? बाल के अग्रभाग। कौनसे बाल ? उत्तम भोगभूमि के। क्यों ? हमारे नहीं चलेंगे, हमारे मोटे होते हैं। उत्तम भोगभूमि से मध्यम भोगभूमिवालों के बाल आठ गुणे मोटे, जघन्यवाले के उससे आठ गुणे मोटे और

कर्मभूमिवाले के उससे आठ गुणे मोटे। इसलिये वह उत्तम भोगभूमिवाला; वह भी कौन चाहिये ? जन्म से लेकर सात दिन के अंदरवाले। कौन ? घेटा यानी मेंढा, क्या कहते हैं हिन्दी में ? *श्रोता: भेड़।* भेड़, तो इतने मुलायम बाल होंगे उसका अग्रभाग लेना। टीव्ही पर दिखाते हैं न, नीचे मोटा और ऊपर ऐसा, तो लास्टवाला एण्ड उसका छोटे में छोटा टुकड़ा करना कि जिसका दूसरा टुकड़ा न हो। उन रोमखण्डों से वह गड्ढा भर देना। फिर क्या करना ? सौ साल के बाद एक रोमखण्ड निकालना। फिर दूसरे सौ साल होंगे तब दूसरा टुकड़ा निकालना। जब वह पूरा गड्ढा, सब स्पेस खाली हो जायेगी तब उसको क्या कहेंगे ? इतने वर्ष जब बीत जायेंगे तो हम कहेंगे एक व्यवहारपल्य हुआ। अब यह व्यवहारपल्य के जितने रोमखण्ड हैं उनको असंख्यात करोड़ वर्षों के समयों से गुणा करना। एक आवली में जघन्ययुक्तासंख्यात समय होते हैं और ऐसे संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवली का एक सेकंड होता है। अब एक वर्ष में कितने सेकंड, कितनी आवली ? गिन लो कितने समय होंगे ? असंख्यात करोड़ वर्षों के जितने समय होंगे उस संख्या से इन रोमखण्डों की संख्या को मल्टिप्लाय करेंगे तो उद्धारपल्य की संख्या आयेगी। जितनी संख्या है उसको पच्चीस कोड़ाकोड़ी से गुणा करो इतने मध्यलोक में द्वीप और समुद्र हैं और ये कैसे हैं ?

बीचवाला जम्बूद्वीप है वह एक लाख योजन चौड़ाई - विस्तारवाला है। उसके आगे का लवणसमुद्र है पूरा वलयाकार और उसका एक बाजू का विस्तार उससे डबल है, दो लाख योजन। उसके आगेवाला चार लाख योजन, उसके आगेवाला आठ लाख योजन, सोलह लाख योजन, बत्तीस लाख योजन, चलो कहां तक ? स्वयंभूरमण समुद्र तक जिसकी चौड़ाई करीबन वन फोर्थ राजू है। एक बाजू इतना और दूसरी बाजू इतना, दोनों मिलकर हाफ राजू हो जायेगा। इनके बीच में इतने समुद्र और इतने द्वीप हैं तो हर एक की अेरिया कितनी बड़ी-बड़ी होगी ? अभी पहले ढाईद्वीप छोड़ दो, लास्टवाला आधा द्वीप छोड़ दो; बीचवाले सर्व द्वीपों में कौन हैं ? तिर्यंच हैं और वहां उनकी जघन्य भोगभूमि है। तो कितने तिर्यंच होंगे ? वे सारे स्वर्ग में जानेवाले हैं, नियम से। जघन्य भोगभूमि है न वह ! तो उनका नंबर लगेगा कि अपना लगेगा वहां पर ? जरा सोच लो।

यहां क्या कहते हैं देखो **मानुषोत्तर और स्वयंप्रभ पर्वतों के बीच असंख्यात द्वीप-समुद्र संबंधी** पुस्तक में तो द्वीप-समुद्र संबंधी लिखा था परंतु समुद्रों में कोई

तिर्यंच वहां नहीं रहते हैं। जलचर नहीं पाये जाते इसलिये ब्रॅकेट में **मात्र द्वीपों में** लिख दिया है। **तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि के संज्ञी तिर्यंच,** वहां कोई मनुष्य नहीं है। ढाईद्वीप के बाहर कोई भी मनुष्य नहीं पाया जाता तो वहां सर्वत्र तिर्यंच ही हैं। फिर **लवणसमुद्र और कालोदधि के छानबे कुमानुष द्वीपवासी** यानी **कुभोगभूमि के कुमनुष्य,** उनको कुमनुष्य कहते हैं। वह भी भोगभूमि है परंतु कैसी है ? कुभोगभूमि, वे भी मरकर कहां जायेंगे ? वे भी भवनत्रिक में चले जायेंगे। **ये नियम से अपनी आयु के नौ महीने अवशेष रहने पर,** कहीं छह महीने का भी उल्लेख आता है, यहां नौ महीने लिखा है हम इसको लिखेंगे। **आठ अपकर्षों में बताये हुये त्रिभाग अवशेष रहने पर** यानी जब नौ महीने अवशेष रहते हैं; अभी ये नौ महीने के त्रिभाग करने हैं। जहां छह महीने कहते हैं उसके त्रिभाग करने यानी पहला अवसर कब हुआ ? वह छह महीने पहले बाकी हैं तब या यहां नौ महीने कहते हैं हम उसके अनुसार हम नौ महीने की बात करेंगे। दूसरा अवसर उसका त्रिभाग। नौ का त्रिभाग तीन महीने, फिर तीन का त्रिभाग एक महीना ऐसे उसके भी आठ अपकर्षकाल होते हैं। जब हम कर्मभूमि के मनुष्यों और तिर्यंचों में गिनते हैं, पूरी आयु के त्रिभाग करते हैं और यहां अंतिम नौ महीने का वह पहला अवसर आया फिर वह रिमेनिंग उसके त्रिभाग करेंगे। इतना रहने पर **देवायु को बांधकर, भुज्यमान आयु के नाश से** यानी उनकी जो कोई भोगभूमि है, कुभोगभूमि है जो कुछ है वहां उनकी आयु समाप्त हुयी। **भवनत्रिक में या कल्पवासिनी स्त्रियों में मिथ्यादृष्टि होकर उपजते हैं। वहां जब तक शरीरपर्याप्ति पूर्ण नहीं होती, तब तक निर्वृत्तिअपर्याप्त हैं।** उनके पर्याप्त नामकर्म का ही उदय है परंतु जब पर्याप्ति चल रही हैं, जब तक शरीरपर्याप्ति पूरी नहीं होती तब तक क्या कहेंगे उनको ? *श्रोता: निर्वृत्तिअपर्याप्त।* निर्वृत्तिअपर्याप्त, यह कोई अपर्याप्त नामकर्म की बात नहीं है।

अब और भी जो कथन है, त्रिलोकसार के आधार से उन्होंने यहां कुछ गाथायें बताकर उनका वर्णन किया है उसको देखेंगे। **मिथ्यादृष्टि भोगभूमिया** यानी भोगभूमि में रहनेवाले मिथ्यादृष्टि जीव **और तापसी 'वर' अर्थात् उत्कृष्टपने से भवनत्रिक में उपजते हैं, अन्यत्र नहीं।** उत्कृष्टपने का अर्थ होता है यहां तक ही उपजते हैं, उसके ऊपर नहीं। भवनत्रिक समझते हैं कौन हैं ? भवनवासी, व्यंतर और ज्योतिषी। इन तीन

प्रकार के देवों में ही उत्पन्न होते हैं, ऊपर के स्वर्गों में उत्पन्न नहीं होते। किसकी बात चल रही है ? मिथ्यादृष्टि भोगभूमि के जीव। *श्रोता: तापसी भी है।* तापसी को भी लिया। **पुनश्च भरत, ऐरावत, विदेहवासी वा स्वयंभूरमण द्वीप का अपरार्ध और स्वयंभूरमण, लवणोद, कालोद इन समुद्रों के वासी जीव,** समुद्रों के वासी यानी तिर्यंच समझना; **कोई जलचर, स्थलचर, नभचर संज्ञी पर्याप्त भद्र मिथ्यादृष्टि;** क्या-क्या मिला ? जिसे कहते हैं भद्र यानी भले, भद्र यानी शांत परिणामी। **तथा उपशम-ब्रह्मचर्य सहित वानप्रस्थ वा एकजटी, शतजटी, सहस्रजटी** वे जटावाले होते हैं न, ये अन्यमतियों की बात है। वे स्वर्ग में नहीं जाते यह बात नहीं है, केवल जैनी ही जायेंगे बाकी नहीं, ऐसी बात नहीं है। तो कहते हैं **वा नागा वा कांजी भक्षण करनेवाले वा कंदमूल, पत्र, पुष्प, फल खानेवाले वा अकामनिर्जरा संयुक्त** उस पर आयेंगे थोड़ी देर में; **वा एकदंडी, त्रिदंडी मिथ्या तपश्चरणरूप परिणत वे कायक्लेशादि आचरण से** कायक्लेशादि यानि उपवास करेंगे, कोई शरीर को पीड़ा देंगे, कोई विशिष्ट अपने अज्ञानी मत के अनुसार कुछ न कुछ संयम, संयम नहीं कुछ नियम-वियम पालेंगे उसकी बात चल रही है। तो मिथ्या तपश्चरण, सही तपश्चरण नहीं **मिथ्या तपश्चरणरूप परिणत** - वे क्या कर रहे हैं ? **अपनी-अपनी विशुद्धता के अनुसार** यानी मंद परिणाम के अनुसार; उनके मन्द परिणाम हैं और उसके अनुसार **भवनत्रिक से लेकर अच्युत** यानी सोलहवें स्वर्ग **तक उपजते हैं।**

वहां तक कौन कहां उत्पन्न होंगे ? उसकी बात करेंगे अभी। अभी यह अकामनिर्जरा क्या है उसको समझा रहे हैं। **'अकाम' अर्थात् अभिलाषा रहित अपने बंधनादि द्वारा क्षुधा-तृष्णा का सहना, ब्रह्मचर्य धारण करना, भूमि पर सोना, मलादिक धारण करना, परिषहादि सहन करना-इनसे जो निर्जरा होती है वह अकामनिर्जरा है।** अकाम यानी मोक्षमार्ग में कुछ काम की नहीं है। क्या कहा ? कुछ प्रतिकूलता आती है। कुछ ऐसे संयोग बनते हैं कि जिसमें जीव के बहुत शोक हो जाये या तीव्र संक्लेश हो जाये, फिर भी जो शांति से, समाधान से उसको सह लेता है। ज्यादा संक्लेशरूप परिणमित नहीं होता तो उसको क्या कहेंगे ? उस काल में यदि वह संक्लेशरूप परिणमित होता तो और तीव्र कर्मों का बंध हो जाता परंतु उसने शांति रखी। शांति से उसने काल बिताया तो जिन कर्मों का उदय आया तो वह कायम के लिये थोड़े ही रहेगा। वे तो फल देकर निकल गये तो उतना काल उसने शांति से

बिताया है, उस काल में वे खिर गये हैं। यह निर्जरा मोक्षमार्गवाली संवरपूर्वक निर्जरा नहीं है। कोई भी जो सामान्य उदय है कर्मों का उसको भी हम निर्जरा कहेंगे। परंतु वह कैसी निर्जरा है ? अकाम, इसको अकामनिर्जरा कहा और हर समय जो फल देकर खिर रहे हैं उसको क्या कहेंगे ? *श्रोता: सविपाकनिर्जरा।* सविपाकनिर्जरा। यह अकाम यानी यह भी विपाक होकर निकल रही है, परंतु उस काल में उसने नये और तीव्र अनुभागवाले अप्रशस्त कर्म नहीं बांधे हैं, थोड़ी शांति रखी है, इसलिये उसको यह मंद परिणामवश कुछ कर्मों का बंध हुआ है। *श्रोता: मलादिक धारण करना माने ?* मलादिक धारण करना यानी यह शरीर के मल वगैरह होते हैं तो उनको दूर नहीं करना; *श्रोता: गोमूत्र आदि ?* वह सब कुछ लगा लेना उसमें। *श्रोता: राख वगैरह भी लगाते हैं।* हां यानी शरीर के मल जो कोई हैं उनको दूर करने की चिंता नहीं करना।

हम आगे देखते हैं। **मिथ्यादर्शन सहित, मोक्ष उपाय रहित,** क्या कहा ? मिथ्यादर्शन से यानी अज्ञान के साथ, मिथ्यात्व के सहित; मोक्ष के उपाय से रहित **बहुत कायक्लेश करना,** कायक्लेश करना यानी उपवास आदि करना, शरीर को कष्ट देना। क्या कहते हैं ? ऐसे कहनेवाले भी हमें मिले हैं यह शरीर है न, जैसे नौकरों से क्या ? आजकल की बात नहीं पहले के ज़माने की। नौकरों को कम खिलाओ और बहुत काम करवा लो ऐसा कहते थे। आजकल नहीं चलेगा, वह तो एक झटके में काम करना छोड़ देगा। पहले के ज़माने में सप्तभय रहते थे। आजकल का यह आठवां भय आयेगा - नौकर छोड़कर चला जायेगा ! देखो, कायक्लेश करना, बहुत कायक्लेश करना, यानी ऐसा हमने सुना है यह शरीर है न, इसको कम खाना दे दो और उसको बहुत काम में लगाओ। किसमें ? यह मोक्ष, मोक्ष प्राप्त करना है न, तो इसको कम खिलाओ और इससे ज्यादा से ज्यादा अधिक काम करवा लो तो आपको जल्दी मोक्ष हो जायेगा। हमारा होगा कि मालूम नहीं, परंतु शरीर का तो हो जायेगा जल्दी !

यह सब अज्ञानवश ऐसा है कि शरीर को ज्यादा तकलीफ देंगे तो हमें अधिक पुण्य मिलेगा ऐसी मान्यता है। मिथ्यादर्शन सहित, यह मिथ्यादर्शन सहितवाली बात है। वे कहते भी हैं - क्या कहते हैं ? शरीर है तब तक धर्म होगा। 'शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनं' उसका गलत अर्थ लेते हैं। शास्त्र के वचनों का अर्थ गलत प्रस्तुत करते हैं। शरीर धर्म का साधन है ? कि अपना ज्ञानोपयोग अपने में लगाना धर्म का साधन है ?

स्वभाव धर्म का साधन है कि शरीर हमको धर्म में मदद करेगा ? तो ऐसी उलटी पट्टी दूसरों को भी सिखाते हैं। देखो, **मिथ्यादर्शन सहित, मोक्ष उपाय रहित, बहुत कायक्लेश करना, कपटरूप बहुत व्रत धारण करना, वह बालतप है।** कपटरूप क्यों ? मायाचारी चल रही न, अभी वह आत्मा की बात कुछ जानता ही नहीं है; आत्मस्थिरता की बात नहीं, आत्मा को पहचानने की कुछ बात नहीं है और बस बाह्य कुछ व्रतादि धारण करते हैं। अपनी मतिकल्पना से कुछ न कुछ करते रहते हैं और मानते भी हैं हम मोक्षमार्ग पर आरूढ़ हो गये। तो कहते हैं वह बालतप है।

देखिये मोक्षमार्गप्रकाशक में भी लिखा है कि मिथ्यादर्शन अवस्था में जो व्रतादि अंगीकार करे, बहुत धर्म करे यानी बहुत देवधर्म करे, बहुत अभ्यास करे, शास्त्र स्वाध्याय भी करे परंतु तत्त्वनिर्णय नहीं करे। तत्त्वनिर्णय रहित यह बहुत कुछ करे तो भी वह सम्यक्त्व होने का अधिकारी नहीं है और इसके बिना भी जो तत्त्वनिर्णय करता है उसके सम्यक्त्व हो जाता है। तो इसने तो कुछ करने से होगा ऐसा मान लिया है। सम्यग्दर्शन से ही धर्म की शुरुआत होती है इसको नहीं समझकर कुछ न कुछ व्रत करेंगे तो हम जल्दी मोक्ष प्राप्त करेंगे इस मान्यता से अज्ञानपूर्वक व्रतों को अंगीकार करते हैं। संयम भी धारण करते हैं; जिसको वे संयम मानते हैं जैसे अणुव्रत धारण करेंगे, महाव्रत भी धारण करेंगे। परंतु यह महाव्रत को भी, देखो धवला में भी बात आयी है - उसको संयम नहीं कहा। क्या कहा उसको ? द्रव्ययम कहा। संयम यानी सम्यक् प्रकार के यम यानी नियम, वे किसके होंगे ? जो सम्यग्दृष्टि हैं उनके होंगे।

तीन कषाय चौकड़ी के अभावपूर्वक जहां मुनियोग्य वीतरागता है उनके जो महाव्रत हैं उसको संयम कहेंगे और बाकी क्या है ? अज्ञानपूर्वक अंगीकार किये हुये ये सारे यम हैं। वह भी यदि आगमोचित हो तो हर एक श्रावक का कर्तव्य है कि उनके साथ मुनियोग्य आदर करे, उनके आहार आदि की व्यवस्था करे। कब ? जब वे २८ मूलगुण आगमोचित यथार्थ पालन करते हो तो। आगम से विरुद्ध जो कुछ स्वच्छंद चल रहा है, शिथिलाचार चल रहा है उनको मुनि मानकर उनके पीछे लगना, उनको नमस्कार करना, उनका आदर सत्कार करना ये सब क्या है ? यह तो मिथ्यात्व है, गृहीत मिथ्यात्व है। तो यह निर्णय हमें ही करना है, कोई और के कहने से नहीं करना है। **मिथ्यादर्शन सहित, मोक्ष उपाय रहित, बहुत कायक्लेश करना, कपटरूप बहुत व्रत धारण करना, वह बालतप है**; बाल का अर्थ होता है अज्ञान, अज्ञानियों का

तप है। **ये भी देव में उत्पन्न होने के कारण हैं।**

तो चलो इतना तो हो गया कि नहीं ? देव में तो उत्पन्न होंगे कि नहीं होंगे ? आज थोड़े ही पहली बार देवों में उत्पन्न हुआ है ? अनंतों बार यह जीव देव में आ चुका है। केवल देव में नहीं, मिथ्यात्व अवस्था में नौवें ग्रैवेयक तक गया है उसकी बात हम पढ़ेंगे अभी। परंतु देव में उत्पन्न हुआ तो क्या हुआ ? वह देव में से मरकर फिर नीचे आना ही है मनुष्य, तिर्यंचों में और फिर वापस उसके परिणामवश अज्ञानी ही है तो और कहीं चले जाना है नरक निगोद में ! एकाध भव देव का होने से, वहां भी मिथ्यात्व अवस्था में देवपर्याय पाने से उसका फायदा कुछ भी नहीं हैं। जब तक अज्ञान है, मिथ्यात्व है तब तक वह दुखी, दुखी, दुखी है। हमें देवों के संयोग देखकर लगता है वे कितने सुखी होंगे ! क्यों सुखी होंगे ? ना उनको व्यापार धंधा करना है, ना बालबच्चे संभालना है। हम तो बाल बच्चों के पीछे दुखी-दुखी हैं, है न ! वहां सब युवा ही उत्पन्न होते हैं। वहां देवियों को कोई तकलीफ नहीं है बच्चों को खिलाने की, स्कूल में भेजने की कुछ चिंता नहीं है। तो हमें लगता है वे कितने सुखी होंगे ! कितने सुखी होंगे ? परंतु जब तक मिथ्यात्व चल रहा है और जब तक राग-द्वेष हैं, भले ही शुभभाव भी क्यों न हो, उसमें जब तक एकत्व चल रहा है तब तक वे दुखी-दुखी और दुखी ही हैं।

अब देखेंगे - ये बालतप हैं ये भी देव में उत्पन्न होने के कारण हैं। अभी और भी आगे बतलाते हैं कौन कहां तक उत्पन्न होता है। **'चरकाः' अर्थात् नागा, परिव्राजक अर्थात् संन्यासी, एकदंडी, त्रिदंडी ये उत्कृष्ट भवनत्रिक से ब्रह्मस्वर्ग यानी पांचवें स्वर्ग तक उपजते हैं।** देखो, नागा यानी किसी अन्यमतियों में भी वे वन में रहते हैं। कौनसे हैं वे ? परमहंस, उनमें भी कोई नग्न रहनेवाले परमहंस होते हैं। **'आजीवा' अर्थात् कांजी के भक्षण करनेवाले उत्कृष्ट भवनत्रिक से अच्युत स्वर्ग तक उपजते हैं।** अच्युत यानी कितने नंबर का ? *श्रीताः सोलहवें तक।* सोलहवें तक। **अनुत्तर, अनुदिश विमानवासी देव द्विचरमशरीरी हैं।** द्विचरमशरीरी यानी ? चरमशरीरी का अर्थ है उसी भव से मोक्ष जानेवाले हैं, द्विचरमशरीरी यानी नेक्स्ट भव में मोक्ष जानेवाले हैं। **इसलिये वे मरकर नारायण, प्रतिनारायण होनेवाले नरकगामी जीवों में नहीं उपजते।** क्या कहना चाहते हैं ? जो नारायण हैं और प्रतिनारायण होते हैं वे नियम से मरकर नरक में ही जाते हैं। इसलिये कहते हैं कि वहां से मनुष्य में आकर जो मोक्ष

जानेवाले हैं वे नारायण या प्रतिनारायण नहीं होंगे। यह बात बताना चाहते हैं।

श्रोता: द्विचरम माने मनुष्य ? द्विचरम का अर्थ होता है वहां से एक भव बाकी रह गया यानी हम एकभवावतारी भी कहेंगे। वहां से आकर मनुष्य होकर मोक्ष जानेवाले ऐसे जो जीव हैं वे नारायण वगैरह नहीं बनेंगे यह बात बताना चाहते हैं। *श्रोता: द्विचरम कौन हैं ?* द्विचरम कौन हैं ? चरमशरीरी किसको कहते हैं ? उसी भव में मोक्ष जानेवाले। अभी जो स्वर्ग में है, उसी भव में तो मोक्ष जानेवाले नहीं हैं इसलिये द्विचरम कहा। जैसे हम उपांत्य कहते हैं, लास्ट बट वन कहते हैं वैसा द्विचरम हुआ। आगे भी देखते हैं देखो, *श्रोता: कांजी भक्षण क्या है ?* कांजी भक्षण पता नहीं; आजीवा कहा है उसको। कांजी कंदमूल नहीं, वह कुछ आटे की कांजी बनाकर ऐसा कुछ होगा। है न ! *श्रोता: चावल का पानी।* चावल का पानी ? अच्छा चावल का पानी। अभी कल से चावल का पानी पीना मत शुरू करना। कुछ खाने पीने से वहां नहीं जाते हैं। अन्य जो कुछ वे ब्रह्मचर्य पालते होंगे, अन्य जैसे कुछ रहते होंगे, सादा जीवन होगा। तो ये मंद परिणाम के कारण अज्ञानी भी स्वर्गों में उत्पन्न होते हैं इतनी बात है।

आगे देखते हैं, **पुनश्च सादि, अनादि वा अभव्य मिथ्यादृष्टि** क्या कहा ? सादि मिथ्यादृष्टि, अनादि मिथ्यादृष्टि या अभव्य मिथ्यादृष्टि। अभव्य में सादि होगा कि अनादि होगा ? *श्रोता: अनादि होगा।* वह अनादिअनंत मिथ्यादृष्टि ही रहनेवाला है। **अर्हंत के द्रव्यलिंग का धारक**, अर्हंत का द्रव्यलिंग यानी ? जैसे जिनराज हैं - जिनलिंग कहो, द्रव्यलिंग कहो यानी मुनि का लिंग; जैसी अर्हंत अवस्था है वैसा ही मुनि जो नग्न दशा यानी २८ मूलगुण के धारक है, जैसा अर्हंत भगवान ने बताया है। इसतरह से द्रव्यलिंग का धारक यानी मुनिलिंग धारण किया; मुनिलिंग यानी मात्र नग्नता नहीं; जो मुनि जीवन है, वैसे ही पूरे के पूरे बाह्य आचरण। द्रव्यलिंग का धारक, **बाह्य में छह प्रकार के तप में मग्न,** बारह तप क्यों नहीं लिये मुनि के ? *श्रोता: बाह्य तप लिये।* बाह्य तप लिये न ! अंतरंग होंगे तो अंतरंग में स्थिरता हो जाती है तो इसलिये बाह्य तप लिये। **त्रिकाल देववंदनादि क्रिया सहित,** यानी मुनि की जो क्रियायें बतायी हैं, तीनों काल करने की जो कुछ उन्हें देववंदनादि है, सामायिक है, कायोत्सर्ग है, प्रतिक्रमण आदि जो कुछ है - उनके सभी क्रिया से सहित; **दर्शन-चारित्र मोहरूप घातिकर्म का जिसके उदय पाया जाता है।** इसका अर्थ क्या है ? दर्शनमोहनीय का उदय है यानी मिथ्यादृष्टि है। चारित्रमोहनीय का भी उदय पाया जाता है यानी मिथ्यादृष्टि है न, तो चारों कषाय

चौकड़ी का उदय है ! केवल द्रव्यलिंग का धारण किया है। **उपशम-ब्रह्मचर्यादि संयुक्त द्रव्यलिंगी - वह उपरिम ग्रैवेयक तक उपजता है, ऊपर नहीं।** द्रव्यलिंग का धारक है, मिथ्यादृष्टि है वह कहां तक उपजता है ? नौवें ग्रैवेयक तक।

उसके लिये एक कंडिशन आवश्यक है। ऊपर के तीन संहननवाले ही ग्रैवेयक में जा सकते हैं यानी पंचमकाल का कोई जीव ग्रैवेयक में नहीं जायेगा। द्रव्यलिंगी हो या इस काल के भावलिंगी भी नहीं जायेंगे। कुन्दकुन्द आचार्य गये होंगे न ग्रैवेयक में ? नहीं, वे पंचमकाल के हैं। कम संहननवाले, हीन संहननवाले हैं ऊपर नहीं जा सकते। उत्तम संहननवाला मिथ्यादृष्टि होगा और इतना भद्रपरिणामी होगा, आयुबंध के समय और मरते समय शुक्ल लेश्या का धारक होगा तो वहां तक जायेगा। देखो, उसीकी बात आगे देख रहे हैं। **तिर्यंच-मनुष्य देशसंयत और असंयत उत्कृष्टपने अच्युत स्वर्ग तक उपजते हैं।** क्या कहा ? सम्यग्दृष्टि मनुष्य और तिर्यंच भी, ये कौनसे लिये ? देशव्रती लिये। कहां तक जाते हैं ? सोलहवें स्वर्ग तक। **जो द्रव्य से जिनरूप-महाव्रती हो** यानी जिन्होंने द्रव्यलिंग धारण किया है, मुनिदीक्षा अंगीकार की है। देखो, ऐसा नियम है जो भावलिंगी संत होते हैं यानी जो सातवां गुणस्थान प्रकट करते हैं - पहले गुणस्थान से गये हो या चौथे गुणस्थान से गये हो या जो पांचवें गुणस्थान से गये हो; सबसे पहले ये जो द्रव्य से जिनरूप-महाव्रत धारण करते ही करते हैं। मिथ्यात्व अवस्था में जिसने द्रव्यलिंग धारण किया है वही सही तत्त्वनिर्णयपूर्वक पहले से डायरेक्ट सातवें में जा सकता है। ऐसा नहीं होगा कि पहले सातवें में गया और बाद में जाकर मुनि दीक्षा ली। घर में बैठे-बैठे अगर सातवां गुणस्थान प्राप्त होता है तो फिर बाद में मुनिदीक्षा धारण करने की क्या जरूरत है ? ऐसा सहज नियम है - पहले बिलकुल विधिपूर्वक जिनदीक्षा अंगीकार करेंगे, बाद में जब ध्यान में चले जायेंगे, उनके ध्यान अवस्था होगी तब स्वसन्मुख उपयोग में उनके सातवां गुणस्थान प्रकट होगा।

वहां जो कुछ यथायोग्य करणपरिणाम होंगे, करणलब्धिपूर्वक हो जायेगा। **जो द्रव्य से जिनरूप-महाव्रती हो और भाव से असंयत, देशसंयत या मिथ्यादृष्टि हैं**। क्या कहा ? जिनको द्रव्यलिंग के धारक कहते हैं उनके भाव से कौन-कौनसे गुणस्थान हो सकते हैं ? पहला भी हो सकता है, चौथा भी हो सकता है और पांचवां भी हो सकता है। क्यों ? क्योंकि अभी बाह्य में उन्होंने मुनिदीक्षा अंगीकार की है। अभी सातवें के

योग्य वहां शुद्धि नहीं हुयी है, वीतरागता नहीं हुयी है तब तक उनको हम क्या कहेंगे ? जिनरूप-महाव्रती कहेंगे या द्रव्य से जिनलिंग धारण किया है ऐसा कहेंगे या द्रव्यलिंगी कहेंगे। बाह्य में तो उनको द्रव्यलिंग कहेंगे और अंतरंग में किसीके पहला गुणस्थान है, किसीके चौथा है और किसीके पांचवां है। ऐसे कहां तक उपजते हैं ? **उपरिम ग्रैवेयक तक उपजते हैं।** उन देवों में कौन- कौन उपजते हैं ? उस संबंधी ये सारी बातें यहां हो रही थी। वे कहां उत्पन्न होते हैं और वहां कौनसा बंध करते हैं उसकी बात है।

अभी लेश्या के प्रकरण में कौन कहां उत्पन्न होता है वह लिखा है, ५२७ पृष्ठ पर त्रिलोकसार की गाथा ५४५ हमने पहले भी देखी थी। **मनुष्य, तिर्यंच, देशव्रती या असंयत** अभी-अभी पढ़ा था न ! **उत्कृष्ट से अच्युत स्वर्ग तक उपजते हैं। द्रव्य से निर्ग्रंथ और भाव से असंयत, देशसंयत या मिथ्यादृष्टि ऊपर के ग्रैवेयक तक उपजते हैं। सर्वार्थसिद्धि तक सम्यग्दृष्टि महाव्रती उपजते हैं, भोगभूमिया सम्यग्दृष्टि तो सौधर्मयुगल में** यानी सौधर्म और ईशान में **और मिथ्यादृष्टि** कौनसे ? भोगभूमि के मिथ्यादृष्टि **भवनत्रिक में उपजते हैं।** और **तापसी भवनत्रिक में उपजते हैं।** तापसी यानी ये मिथ्या तप करनेवाले जो अन्यमति उनकी बात है। **नागा संन्यासी ब्रह्मोत्तर यानी पांचवें तक उपजते हैं। कांजीभिक्षु अच्युत तक उपजते हैं। अनुदिश, अनुत्तर विमान से चयकर जीव नारायण, प्रतिनारायण नहीं होते। सौधर्मइन्द्र की शची नामक पट्टदेवी,** यहां पट्टरानी कहते हैं, वहां पट्टदेवी कहते हैं। **लोकपाल सहित सौधर्म आदि दक्षिण दिशा के इन्द्र, लौकान्तिक देव और सर्वार्थसिद्धिवासी देव च्युत होकर मनुष्य होकर निर्वाण को ही प्राप्त करते हैं।**

क्या कहा ? नियम से, देव में से आकर निर्वाण यानी मोक्ष प्राप्त करनेवाले जीव कौन-कौन हैं ? सभी दक्षिण के इन्द्र। दक्षिण के किसको समझना ? हम जोड़ी-जोड़ी में नाम लेते हैं; सौधर्म-ईशान, फिर सनत्कुमार-माहेन्द्र, ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर, लान्तव-कापिष्ठ, शुक्र-महाशुक्र, शतार-सहस्रार, आनत-प्राणत, आरण-अच्युत; जो पहला नाम लिया वह दक्षिण के इन्द्र हैं। दक्षिण के स्वर्गों के नाम हम पहले लिखते हैं। *श्रोता: सौधर्म की लाइन में ?* सौधर्म के लाइन में हां, ये सारे दक्षिणवाले हैं। सर्व दक्षिण के इन्द्र नियम से वहां से आकर मनुष्य होकर मोक्ष जायेंगे ही जायेंगे। *श्रोता: यह सौधर्म सब दक्षिण के इन्द्र....?* सौधर्म दक्षिणवाला इन्द्र है। वैसे हर एक जोड़ी में जो नाम हम पहला लेते हैं वे सारे दक्षिण के हैं। हम पहले दक्षिण का बाद में उत्तर का नाम लेते हैं - सौधर्म-ईशान,

सनत्कुमार-माहेन्द्र। यह नियम से मोक्ष जानेवालों की बात है, अन्य नहीं जाते ऐसी बात नहीं है। और कौन-कौन हैं ? सौधर्म की शची नामक पट्टदेवी, जिनको शचीइन्द्राणी कहते हैं वे नियम से वहां से आकर मोक्ष जायेगी।

श्रोता: शची और इन्द्राणी यह एक ही नाम है या अलग-अलग है ? शची उनका नाम है वहां पर। जो पट्ट यानी पट्ट पर है न, पट्टदेवी कहा न ! मुख्य, प्रमुख। इन्द्र के तो बहुत सारी देवियां होती हैं। *श्रोता: शचीइन्द्राणी भी बहुत होती हैं ?* वे तो एक के बाद, एक के बाद एक की बात है न ! क्योंकि सौधर्मइन्द्र की आयु कितनी हैं ? *श्रोता: दो सागर।* दो सागर और इन्द्राणी की आयु ? *श्रोता: पचपन।* वह तो पल्यों में होगी न ! पचपन पल्य तो ऊपर के स्वर्गों के देवियों की होगी। कुछ पल्य, अधिक से अधिक पांच पल्य, उससे ज्यादा तो नहीं होगी और एक सागर यानी ? *श्रोता: दस कोड़ाकोड़ी पल्य।* दस कोड़ाकोड़ी पल्यों का एक सागर होता है। एक के बाद एक ऐसी उनकी कितनी इन्द्राणियां होंगी ? अभी महाराज वहीं पर विराजमान हैं और वहां से शचीइन्द्राणी यहां आ जायेगी। तो अधिक से अधिक आयु कितनी बांधकर आयेगी ? अधिक से अधिक करोड़पूर्व की। उसमें वह मोक्ष भी चले जाये और यह जरूरी नहीं कि एक करोड़पूर्व की बांधे, उससे पहले भी मोक्ष चली जायेगी। *श्रोता: सौधर्म की कितनी आयु है ?* दो सागर या साधिक दो सागर की होगी। उसकी आयु में एक के बाद एक कितनी शचीइन्द्राणी मोक्ष चली जाती हैं और वे महाराजसाहब वहीं विराजमान हैं !

श्रोता: एक सौधर्मइन्द्र कितने कल्याणक करता है ? कल्याणक करने से क्या है ? अभी कोई मुझे पूछ रहा था, *शचीइन्द्राणी मोक्ष जाती है क्या ? कितने कल्याणकों में जाती होगी ? तो हर एक को कहां चान्स है ! उन्होंने बालक तीर्थंकर को हाथ में लिया और ...* तो तीर्थंकर बालक को हाथ में लेने से थोड़े ही वह मोक्ष गयी है ? क्या बालक तीर्थंकर को नहीं लेनेवाले अन्य कोई मोक्ष जाते हैं कि नहीं जाते ? उससे कुछ नहीं होता है। कितने कल्याणक में ? ॲट अ टाइम १७० कल्याणक में जा सकते हैं। ॲट अ टाइम १७० जगह तीर्थंकर विराजमान हैं और उनके कभी आगे-पीछे जो कुछ कल्याणक होते होंगे, उसमें जायेंगे, उसमें क्या है ? वे तो व्यवस्थापक हैं। ऐरावत के तीर्थंकरों के कल्याणकों में ईशानइन्द्र चले जाते हैं। उनके हाथ में सारी व्यवस्था है।

ऊपर के भी इन्द्र आते हैं कल्याणकों में, परंतु सौधर्मइन्द्र सारी व्यवस्था देखते हैं। अन्य इन्द्र उनके सामने जाकर हाथ जोड़कर नाचते नहीं है जैसे यहां पंचकल्याणकों में दिखाते हैं। वे ऊपर के स्वर्गों के इन्द्र हैं, वे सौधर्मइन्द्र को थोड़े ही नमस्कार करेंगे !

कितने इन्द्र बनाते हैं कल्याणकों में ? *श्रोता: सोलह।* सोलह। सोलह स्वर्ग हैं तो ॲक्चुअल में सोलह इन्द्र हैं ? *श्रोता: बारह हैं।* बारह इन्द्र हैं फिर सोलह क्यों बनाते हैं ? *श्रोता: पैसों के लिये।* हां-हां, इसीलिये बनाते हैं। हमने मङ्गलायतन में पवनजी से पूछा था। हमको वहां बुलाया था दसलक्षण पर्व में और तब मैंने पूछा था कि इन्द्र तो बारह ही होते हैं और आप लोग सोलह इन्द्र क्यों बनाते हैं ? उन्होंने कबूल किया कि हम पैसे के लिये बनाते हैं। जैसे सौधर्म-ईशान, सनत्कुमार-माहेन्द्र, दो-दो हैं वैसे कुल बारह ही हैं। *श्रोता: दिल्ली पंचकल्याणक में क्या हुआ ?* दूसरा प्रसंग भी सुनना है ? सब इन्द्र क्या कहने लगे ? हमको हाथी पर बैठकर ही पांडुकशिला की प्रदक्षिणा करनी है ! हमारे पास आते तो हम ट्रिक बताते। दिल्ली में हुआ था ऐसा, दिल्ली में जब पंचकल्याणक हुआ तो चार-चार हाथी मंगवाये थे और सबने प्रदक्षिणा दी। क्यों ? कोई सौधर्मइन्द्र था, कोई ईशानवाला था, कोई सनत्कुमारवाला था, कोई कुबेर था। सबने वहां दानराशि दी थी, तो सबको हाथी पर बैठना था। हमें पूछते तो हम बताते हर एक स्वर्ग का जो वाहन विमान है वह अलग-अलग है। सौधर्म का ऐरावत है, दूसरे किसीका सिंह है, किसीका मोर है, किसीका हंस है तो उनको बिठा दो। हमें मालूम ही नहीं हैं न क्या होता है ? यह त्रिलोकसार में सब कुछ लिखा है।

श्रोता: इस बहाने भावना भाते हैं इन्द्र- इन्द्राणी बनने की। क्यों भाना ? अरे यहां हम स्त्रियां पांचवें गुणस्थान तक जा सकती हैं लेकिन जो इन्द्राणी बनना चाहती है उसे मिथ्यादृष्टि रहकर इन्द्राणी बनना पड़ेगा। अभी वहां पर जाकर चौथे में आना पड़ेगा क्यों ? *श्रोता: सारे इन्द्र जो हैं वे सम्यग्दृष्टि होते हैं ?* सारे इन्द्र नहीं कह सकते परंतु हां, ये सम्यग्दृष्टि हैं। सौधर्मइन्द्र आदि वे सब सम्यग्दृष्टि हैं क्योंकि इन्द्र का पद ही वैसे मिलेगा न ! संयमियों के या सम्यग्दृष्टियों के मिलेगा। बाकी सामान्य देव भी आते हैं। केवल इन्द्र को ही नेक्स्ट भव में मोक्ष है ऐसा नहीं है, इन्द्र के जो लोकपाल हैं; सौधर्मइन्द्र के लोकपाल कौन-कौन हैं ? सौधर्मइन्द्र के लोकपालों के नाम क्या है ? एक कुबेर है, एक वरुण है, एक यम है, चौथा कौन है ? सोम है। ये सारे ही वहां से आकर मनुष्य होकर मोक्ष जानेवाले हैं। यहां लिखा है देखो, **सौधर्मइन्द्र की शची**

नामक पट्टदेवी, लोकपाल सहित सौधर्म आदि दक्षिण दिशा के इन्द्र यानी दक्षिण दिशा के इन्द्र और उनके लोकपाल भी मोक्ष जायेंगे नेक्स्ट भव में। **लौकान्तिक देव**, लौकान्तिक देव कौनसे ? ये ब्रह्मस्वर्ग के जो बाहर के विमानों में रहनेवाले वहां के ब्रह्मचर्ययुक्त जो कोई हैं।

श्रोता: बारह इन्द्र कैसे हैं सोलह स्वर्ग में ? सोलह में बारह देखे न ! बीचवाले दो-दो में एक इन्द्र हैं। ब्रह्म-ब्रह्मोत्तर में एक इन्द्र है; ब्रह्म का अलग, ब्रह्मोत्तर का अलग नहीं है। ऐसे जो बीचवाले जो चार युगल हैं उनमें एक-एक ही इन्द्र है। *श्रोता: नीचे के चार और ऊपर के चार दोनों में कुल आठ हैं ?* हां, प्रत्येक में एक-एक है। उसमें भी दक्षिणोत्तर कौन है देख लेना। पहली पुस्तक है न अपनी जीवकाण्ड की, उसमें संदृष्टि अधिकार में एक चार्ट बना है उसमें दक्षिण के कहां कौनसे हैं ? दो-एक, दो-एक ऐसे नाम दिये हैं। संदृष्टि अधिकार में सब लिखा हुआ है। मेरे ख्याल से आपने फ़ोन किया था क्या इन्द्रों के लिये ? इंदौरवालो ने। तभी आपको वह देखकर बताया था। हां देखो, **लौकान्तिक देव, सर्वार्थसिद्धिवासी देव च्युत होकर मनुष्य होकर निर्वाण को प्राप्त होते ही हैं।** ये नियम से वहां से आकर मोक्ष ही जानेवाले हैं। *श्रोता: ये द्विचरमशरीरी हैं ?* हां, द्विचरमशरीरी हैं। **मनुष्यगति, तिर्यंचगति और भवनत्रिक से च्युत हुये जीव तिरसठ शलाका पुरुष की पदवी को प्राप्त नहीं होते।** यानी कौनसे जीव लिये ? तिर्यंच से आये हुये, मनुष्य से आये हुये। आप कहेंगे मनुष्यगति के तिरसठ शलाका पुरुष हैं। मनुष्यगति से मरकर मनुष्य में आनेवाले की बात है यहां पर। नरक से आये हुये हो सकते हैं क्या ? तीर्थंकर होंगे न ! इसलिये यहां नरकगति को नहीं लिया। अन्य नहीं होंगे; नरक से आये हुये अन्य बलभद्र, नारायण, प्रतिनारायण आदि नहीं होंगे परंतु वहां से आनेवाले तीर्थंकर हो सकते हैं।

आगे देखते हैं ५५० की टीका- **शुभ** यानी **सुख शय्या** उसीका नाम है **उपपाद शय्या स्थान में प्राप्त हुये देव ऐसे जन्म लेते हैं।** देवों का जन्म कैसा होता है मालूम है ? उपपाद शय्या यानी सीप जिसको अंग्रेजी में 'शेल' कहते हैं, उसके आकार की उपपाद शय्या होती है। वहां अंतर्मुहूर्त में युवा देव उत्पन्न हो जाते हैं। नारकी में भी उपपाद जन्म है; जैसे मधुछत्ते होते हैं ऐसे बिलों के छतों में उन स्थानों में अंदर नुकीले ऐसे शस्त्रों की जो कोई वहां रचना होती है वहां वे नारकी जीव उत्पन्न होते हैं। उत्पन्न

होते हैं और कटते-कटते शीघ्र ही नीचे आते हैं और पटकते हैं। वहां भूमि पर भाले जैसे तीक्ष्ण शस्त्र होते हैं। फिर उछलते हैं फिर गिरते हैं। नरकों में और देवों में वे अंतर्मुहूर्त में उत्पन्न होते हैं इसलिये स्वर्ग में सुख शय्या कहा-उपपाद शय्या कहा। वे ऐसे जन्म लेते हैं **जैसे पूर्व दिशा में उदयाचल पर सूर्य उगता है। अंतर्मुहूर्त में उनका शरीर सम्पूर्ण होता है जो सुगंध, शुभस्पर्श से युक्त तथा पवित्र होता है।**

देखेंगे और क्या-क्या होता है ? **आनंद के वाजित्र, जयकार और स्तुतिरूप शब्दों से अपने प्राप्त जन्म को जानकर** यानी अन्य जो देव हैं वे ही यह काम करते हैं - जयकार है, स्तुतिरूप शब्द है। **परिवार सहित सबको देखकर अवधिज्ञान को प्राप्त होता है।** परिवार सहित यानी उनके जो परिवार हैं, उनके जो देवियां हैं, अन्य जो देव हैं जो कुछ उनका परिवार है, उनको देखकर वे अवधिज्ञान से सब जान लेते हैं। **धर्म की प्रशंसा करके सरोवर में स्नान कर और अति उज्ज्वल शरीर और अलंकार सहित होकर सम्यग्दृष्टि जिनप्रतिमा का अभिषेक और पूजन करते हैं।** वहां जन्मते ही उनके अन्य जो देव हैं वे उनको ले जाते हैं वहां पर। **जो मिथ्यादृष्टि देव हैं,** वहां सब सम्यग्दृष्टि थोड़े ही उत्पन्न होनेवाले हैं। *श्रोता: त्रिलोकसार की बात है ?* हां, त्रिलोकसार की बात है। **जो मिथ्यादृष्टि देव हैं, वे अन्य देवों द्वारा संबोधने पर यानी समझाने पर,** अन्य देव बतायेंगे ऐसा करो-वैसा करो, **जिनपूजन करते हैं।** जैसे हमारे घरों में हमारे माता-पिता हमको बताते हैं- इसतरह से मंदिरजी में आना चाहिये, जिनपूजन करना चाहिये। वैसे वहां जो मिथ्यादृष्टि देव उत्पन्न होते हैं उनको अन्य देव समझाते हैं। वहां तो सब जिनधर्म ही चलता है। हां, उनके पूर्व संस्कारवश कुछ अन्य जो कल्पनायें हो, उनके होती होंगी, परंतु वहां तो जिनबिंब ही होते हैं और जिनधर्म ही चलता है और जिनदेव की ही वहां पूजा वगैरह होती है। वहां भी उनके जो प्रत्येक भवन होते हैं, प्रत्येक जो विमान होते हैं उनमें जिनबिंब होते हैं, मानस्तंभ आदि होते हैं और उन्हींकी पूजा वगैरह वहां होती है। **सुखसागर में मग्न वे देव बीते हुये काल को नहीं जान पाते, इतना समय कैसे बीत गया उन्हें पता ही नहीं चलता।**

सागरों की आयु होती है। मिनिमम तो पल्यों की होती है सौधर्म आदि में। वैसे वे सोते भी नहीं हमारे जैसे सात-सात, आठ-आठ घंटे। हमने देखा था स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला का उनके उदय नहीं है। निद्रा, प्रचला का उदय होगा, कुछ हल्की नींद आती होगी। इतने सुखरूप वहां साधन हैं, कैसे काल बीत गया पता ही

नहीं चलता ! **कल्पवासी देव महापूजा, इन्द्रध्वज विधान, अष्टान्हिका में नंदीश्वर द्वीप के अकृत्रिम जिनालयों में और तीर्थंकरों के कल्याणकों में जाते हैं।** ये सभी देव अन्यत्र पूजा वगैरह रचते हैं, वहां सब मिलकर चले जाते हैं। **अहमिन्द्र देव**; अहमिन्द्र यानी एक इन्द्र - उनके ऐसे कोई परिवार वगैरह नहीं होते। ग्रैवेयक और ऊपर के देव हैं उनको अहमिन्द्र कहते हैं। **अपने स्थान में रहकर ही** यानी वे गमन करके, कहीं विहार करके नहीं जाते; जाने की शक्ति है परंतु वे जायेंगे नहीं। **अपने स्थान में रहकर ही दोनों हाथ मणिजड़ित मुकुटों को लगाकर यानी हाथ जोड़कर मस्तक पर लगाकर नमस्कार करते हैं।** यानी जिसको कहेंगे वहीं से परोक्ष नमस्कार करते हैं। जिनालयों की वंदना वहीं से करेंगे वे।

जो विविध तपश्चरणों से आभूषित हैं, ज्ञान से पवित्र हैं, शीलरूपी वस्त्र के धारक हैं और सौम्य अंग सहित हैं, उन्हींके देवलक्ष्मी और मुक्तिलक्ष्मी वश में होती है। देवलक्ष्मी यानी उनके कुछ पुण्य बंधेगा तो स्वर्ग में चले जायेंगे और वही जीव आगे चलकर अभी सम्यक्त्व के धारक हैं तो उन्हींके मोक्ष की प्राप्ति हो जायेगी। यह देवों का वर्णन इसलिये आया था क्योंकि यहां कुछ लेश्या की बात थी। देखो, यहां मुझे बताना था कि कैसे-कैसे सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है ? तिर्यंचों को भी देव संबोधन करते हैं और चारणऋद्धिधारी मुनि भी संबोधन करते हैं ऐसी बात मैंने यहां पढ़ी थी। प्रथमोपशम सम्यग्दर्शन कैसे होता है ? मुझे बताना था, वहां लिखा था कि जो भोगभूमि के तिर्यंच होते हैं वहां देव संबोधन से या स्वयंभूरमण समुद्र के तिर्यंचों को भी देव के संबोधने से होता है ऐसा वहां स्पष्ट लिखा था।

श्रोता: उत्सर्पिणीकाल में जो तीर्थंकर आयेंगे नीचे से ही आयेंगे क्या ? क्या वह नरक से ही आयेंगे ? नरक से ही आयेंगे ऐसा कुछ नियम नहीं है। किसने बताया ? *श्रोता: ऐसे ही पूजा में है रावण का जीव।* रावण का जीव तीर्थंकर प्रकृति नहीं बांध रहा है। उसके कुछ भव बाकी हैं, अभी वहां से तीर्थंकर बननेवाला नहीं है। और किसकी बात कर रहे हैं ? *श्रोता: श्रीकृष्ण का जीव ?* हां, श्रीकृष्ण का आयेगा परंतु वह कितनेवां तीर्थंकर होगा ? *श्रोता: सोलहवां।* सोलहवां तो उसमें बीचवाले आयेंगे न अन्य ? यह कोई जरूरी नहीं कि नरक से ही वे आते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५६. नामकर्म के सत्त्वस्थान

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। पं. टोडरमलजी ने इस ग्रंथ के आधार से सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी हुयी है और उसका हिंदी अनुवाद हम यहां पर देख रहे हैं। अभी हमने जो मंगलाचरण किया न ! 'सच्चजुहिट्ठिर' का अर्थ क्या होता है ? देखो नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने ग्रंथ की रचना की है, वे नेमिनाथ भगवान को नमस्कार करके यहां शुरुआत करते हैं। 'णमिऊण णेमिणाहं' नेमिनाथ जिनेन्द्र को नमस्कार करके; कैसे हैं नेमिनाथ जिनेन्द्र ? 'सच्चजुहिट्ठिर' सत्य यानी युधिष्ठिर; युधिष्ठिर को सत्य भी कहते थे। युधिष्ठिर द्वारा प्रत्यक्ष उनको नमस्कार किया जाता था। युधिष्ठिर कौन थे ? पांडव नेमिनाथ के कौन थे ? नेमिनाथ का उनके साथ क्या रिलेशन था ? उनके द्वारा वे प्रत्यक्ष वंदित थे। इसतरह उनका विशेषण बना दिया और उनको नमस्कार करके स्थानसमुत्कीर्तन बताऊंगा ऐसी प्रतिज्ञा करते हैं। हमेशा ही ग्रंथों के शुरू में आचार्य हो या अन्य कोई भी; पहले के जमाने में ग्रंथों की रचना की है तो वहां पहले मंगलाचरण करके नमस्कार करेंगे; पंच परमेष्ठियों को या किसी विशिष्ट तीर्थंकर को और फिर किस विषय पर मैं ग्रंथ लिखूंगा यह बात वहां बताते हैं। ऐसा भी कहते हैं कि जो मूल परंपरा चली आयी है उसीके अनुसार मैं बताऊंगा जैसे जिनेन्द्र भगवान ने बताया है।

अपनी यहां स्थानसमुत्कीर्तन में प्रकृतियों के स्थानों की चर्चा चल रही है। सभी प्रकृतियों के यानी सभी मूलकर्मों की जो उत्तरप्रकृतियां हैं उनके हमने स्थान देखे ही थे। बंध के स्थान अलग, उदय के स्थान अलग और सत्त्व के स्थान अलग। मोहनीय के भी हमने बंध के, उदय के और सत्त्व के स्थान देख लिये हैं। हमने नामकर्म के बंध के स्थान देखने के बाद उदय के स्थान भी देखे। हमने बहुत मेहनत की है, अभी हम सत्ता के स्थान देखेंगे। मेहनत की यानी बांधने में मेहनत की न ! तो बंधे हुये हैं तो उदय भी आयेगा, सत्ता में भी पड़े रहेंगे। तो सत्ता में कितनी-कितनी प्रकृतियां हैं, कहां-कहां पायी जाती हैं उसकी हम यहां चर्चा करेंगे।

देखो, तीर्थंकर, आहारकद्विक सहित यह ९३वाली सत्ता पायी जायेगी। जब तक कर्मों का नाश नहीं होता, क्षय नहीं होता तब तक वे सत्ता में पड़े रहते हैं। उनका जब नाश हो जायेगा तब उनकी सत्ता मिट जायेगी क्योंकि हम तो देखते हैं उनके एकेन्द्रिय,

सूक्ष्म, अपर्याप्त, साधारण, आतप, उद्योत वगैरह कितनी ही प्रकृतियों का उदय है नहीं, फिर भी सत्ता में ये सारी प्रकृतियां पड़ी रहती हैं। कितने भवों पहले बंधी हुयी होगी और कैसे-कैसे पड़ी होगी। ये सत्ता में पायी जाती हैं तो कहां कितने स्थान होते हैं ? एक जीव के एक काल में नामकर्म की जितनी प्रकृतियों की सत्ता पायी जायेगी उसको यहां नामकर्म के सत्त्व के स्थान कहेंगे। पृष्ठ ५८६ पर गाथा ६०९ है उसके ऊपर लिखते हैं- **आगे नामकर्म के सत्त्वस्थान का प्रकरण उन्नीस गाथाओं द्वारा कहते हैं।** गाथा पढ़कर शुरुआत करेंगे।

तिदुइगिणउदी णउदी अडचउदोअहियसीदि सीदी य।
ऊणासीदट्ठत्तरि सत्तत्तरि दस य णव सत्ता॥ ६०९॥

अभी ये सत्त्व के अलग-अलग स्थान बता रहे हैं। तिरानबे का अर्थ है ९३ प्रकृतियों का एक स्थान। ९३, ९२, ९१, ९० फिर ८८, ८४, ८२ और ८०, ७९, ७८, ७७, १० और ९। कितने हुये टोटल ? पहले चार लेना, कौनसे ? ९३, ९२, ९१ और ९०; उसके बाद तीन लेना - ८८, ८४, ८२; फिर चार कंटिन्युअस लेना - ८०, ७९, ७८, ७७; और बाद में १० और ९। अभी हम देखेंगे कहां कौनसे स्थान होते हैं।

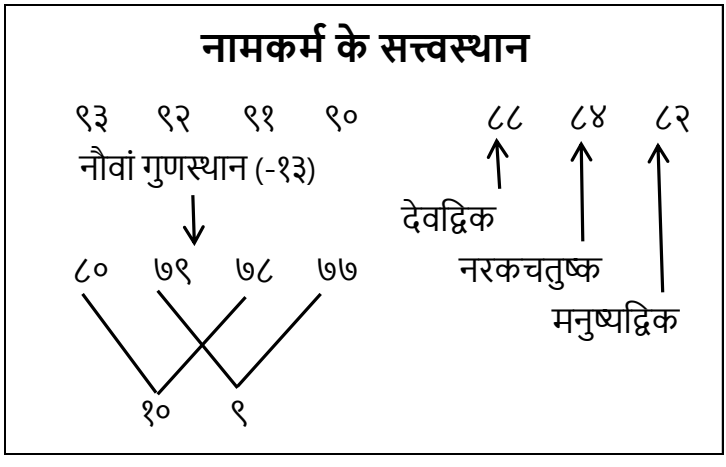

पहले हम नामकर्म के सत्त्वस्थान की संख्या से देखेंगे। एक जीव को, एक काल में ९३ प्रकृतियों का सत्त्व है ऐसा कौनसा जीव है हम देखेंगे। कोई जीव है उसके ९२ प्रकृतियां सत्ता में हैं, किसीके ९१ हैं और किसीके ९० हैं। पहले ये चार ही हम

देखते हैं। ९३वाला कौनसा जीव है ? यानी नामकर्म की सभी की सभी प्रकृतियां उसकी सत्ता में हैं, जिसने तीर्थंकर और आहारकद्विक दोनों का बंध किया हुआ है। हम तीर्थंकर नहीं कह सकते, बाय द टाइम वे तीर्थंकर होते हैं, उनकी सत्ता में ८० ही प्रकृतियां रह जाती हैं। जिन्होंने तीर्थंकर और आहारकद्विक बांधे हैं और जिन्होंने किसी भी कर्म की क्षपणा नहीं की है क्योंकि क्षपणा नौवें गुणस्थान से चालू हो जाती है। ऐसा जीव हम देखेंगे चौथे से नौवें गुणस्थान के शुरुआत तक ९३ का सत्त्व है। यानी तीर्थंकर प्रकृति भी बांधी है और आहारकद्विक भी बंधी हुयी हैं, उनकी सत्ता में है। यहां सत्ता की बात चल रही है, उदय की या बंध की बात हम नहीं सोच रहे हैं।

श्रोता: उसका गुणस्थान पहला ही है ? पहले गुणस्थान में किसीके ९३ की सत्ता हो ही नहीं सकती क्योंकि हमने देखा था कि मिथ्यादृष्टि एक जीव के आहारकद्विक और तीर्थंकर की सत्ता ॲट अ टाइम नहीं हो सकती। तीर्थंकर की सत्तावाला मिथ्यात्व में आ सकता है, आहारकद्विक की अकेली सत्ता हो तो वह आ सकता है। परंतु जिनके तीर्थंकर और आहारकद्विक दोनों की सत्ता ॲट अ टाइम है, वे दोनों सहित मिथ्यात्व में नहीं आ सकते, क्रम से आ सकते हैं। किसी जीव ने पहले संयम धारण किया है, मुनिराज हो गये हैं, आहारकद्विक का बंध किया, फिर मिथ्यात्व में गये; मिथ्यात्व में जाने के बाद आहारकद्विक की उद्वेलना हुयी; आहारकद्विक की उद्वेलना करने के बाद उन्होंने मिथ्यात्व अवस्था में नरकायु का बंध किया; नरकायु का बंध करने के बाद सम्यक्त्व प्राप्त किया, तीर्थंकर प्रकृति बांधने लगे; परंतु क्षायिक नहीं किया था तो दूसरे-तीसरे नरक में कहीं जानेवाले थे, जाने के पहले मिथ्यात्व गुणस्थान में आये हैं। तब मिथ्यात्व में रहते हुये तीर्थंकर की सत्ता पायी जाती है; पहले आहारकद्विक की हुयी थी, अब तीर्थंकर की हुयी है। हमने पहले जब १४८ की सत्ता पहले गुणस्थान में देखी थी, वह अनेक अलग-अलग जीवों की अपेक्षा देखी थी। किसीके तीर्थंकर की थी, किसीके आहारकद्विक की थी। सत्त्व के प्रकरण में वहां भी सभी १४८ प्रकृतियों की सत्ता हमने मिथ्यात्व गुणस्थान में देखी थी। यहां हम स्थान देख रहे हैं, एक जीव के एक काल में सत्त्वस्थान की बात चल रही है। तो यह ९३ का सत्त्वस्थान मिथ्यात्व गुणस्थान में नहीं है। ९३ की सत्ता कहां होगी ? चौथे गुणस्थान में और ऊपर। कहां तक ? जब तक वह १३ प्रकृतियों का क्षय नहीं करेगा तब तक। वह कब करेगा वह हम देखेंगे।

९३ की सत्तावाला ख्याल में आया ? सभी प्रकृतियां हैं उसकी सत्ता में। तीर्थंकर

का बंध किया है, आहारकद्विक का बंध किया है। उस जीव की सत्ता में सूक्ष्म, साधारण, अपर्याप्त प्रकृतियां होगी कि नहीं होगी ? *श्रोता: होगी।* ९३ सभी की सभी हैं न ! एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रियजाति, नरकगति आदि सभी - आयु नहीं ली है, नामकर्म की बात चल रही है। जितनी शुभ-अशुभ प्रकृतियां सब कुछ वहां पड़ी हुयी हैं। *श्रोता: विहायोगति ?* सभी दोनों विहायोगति सत्ता में हैं, उदय की बात नहीं चल रही है। सत्ता में नीचगोत्र और अन्य कर्म भी पड़े हैं, उनकी हम चर्चा नहीं कर रहे हैं परंतु यहां मात्र नामकर्म के सत्त्व की अपेक्षा बात चल रही है।

उदय में भी इतनी नहीं है, हमने उदय की बात देखी थी। उदयरूप कहा हमने, उदय के काल देखे थे। याद है कि भूल गये रातभर में ? विग्रहगतिकाल या कार्माणकाल कहा था, शरीरमिश्रकाल कहा था, शरीरपर्याप्तिकाल कहा था, उच्छ्वासपर्याप्तिकाल कहा था, भाषापर्याप्तिकाल कहा था। इस ९३वाले जीव के भाषापर्याप्ति का काल चल रहा है, तो वहां उसका उदय कितने का होगा ? आपकी पुस्तक में है न उदय का काल। तीर्थंकर जीव को भाषापर्याप्तिकाल में उदय कितना है देख लो। हम सत्ता को और उदय को कम्पेअर करेंगे। यह पॉइंट पेज नंबर ५७४ पर और ५७२ पर भी है। तीर्थंकर केवली के भाषापर्याप्ति में उदययोग्य ३१, इनके उदय कितने का चल रहा है ? ३१ का। परंतु ३१ का उदय कब होगा ? वे तीर्थंकर होंगे तब; उसकी बात नहीं चल रही हैं। अभी सामान्य मनुष्य की बात लेना है क्योंकि अभी तेरहवें गुणस्थान में नहीं पहुंचे है। सामान्य मनुष्य के अभी तीर्थंकर प्रकृति का उदय नहीं है, उदय बाद में हो जायेगा और जब उदय होगा तब ? उनके वे १३ प्रकृतियां नहीं रहेगी। मैं क्या कहना चाहती हूं - नीचे के गुणस्थानों में; जब तक उन्होंने नौवें गुणस्थान में १३ प्रकृतियों का क्षय नहीं किया है तब तक सभी ९३ की सत्ता है। तब कितना उदय हो रहा है, इसकी बात यहां देख रहे हैं। जब तक वे तीर्थंकर नहीं हुये, केवली नहीं हुये हैं तब तक उनको हम क्या कहेंगे ? सामान्य मनुष्य कहेंगे। उसका यंत्र देख लो ५७२ पेज पर। मनुष्य सामान्य के भाषापर्याप्तिकाल में कितनी उदययोग्य हैं ? ३० और उनकी सत्ता में अभी कितनी हैं ? ९३, है न ! यहां तो सत्ता की बात चल रही है।

अभी बंधस्थान, सत्त्वस्थान, उदयस्थान सब सीखने के बाद, इस ग्रंथ में ऐसी-ऐसी कंपॅरिझन की है कि विशिष्ट बंधस्थान में उदयस्थान और सत्त्वस्थान कौनसे होंगे।

एक ही उदयस्थान में, सत्त्वस्थान और बंधस्थान कौनसे होंगे और एक सत्त्वस्थान में बंधस्थान और उदयस्थान कितने होंगे। यानी एक को बेस बनाना और अन्य दो कौनसे होंगे बतायेंगे। बाद में दो फिक्स रखेंगे। पर्टिक्युलर बंधस्थान में पर्टिक्युलर उदयस्थान है, तो वहां सत्त्वस्थान कौनसा होगा ? अब वे तीनों के फिर कॉम्बिनेशन्स बतायेंगे। पहले बंधस्थान, उदयस्थान को फिक्स रखेंगे और सत्त्वस्थान जो बदलेंगे उसकी चर्चा करेंगे। फिर उदयस्थान, सत्त्वस्थान को लेंगे या बंधस्थान, सत्त्वस्थान को लेंगे। यानी कॉम्बिनेशन करके किसी-किसीको फिक्स रखेंगे और फिर अन्य कौनसा हो सकता है, उसको सोचकर उसका उत्तर निकालना है। *श्रोता: ऐसा बतायेंगे तो अगले शिबिर में कोई नहीं आयेगा।* नहीं, बहुत इंटरेस्टिंग है। अभी इतनी बातें तो किसीने सुनी हुयी नहीं है। यह विषय हमने आज तक कहीं पढ़ाया नहीं है। हां, घर में स्वाध्याय में हो चुका है, परंतु सभा में ये विषय नामकर्म के स्थान हो या मोहनीय के स्थान हो कभी कहीं लिये ही नहीं हैं। हमने देवलाली में करणानुयोग के अनेक विषय लिये मगर इसकी चर्चा कभी नहीं की थी क्योंकि यह बहुत गहरा विषय है। इतने लोग शांति से सुन रहे हैं तो अच्छा है ! आप घर जाकर आगे पढ़ सकते हैं। जब आपने सत्त्वस्थान क्या है, बंधस्थान क्या है, उदयस्थान क्या है यह सीख लिया है, आगे का विषय आपको सरल होगा। *श्रोता: आप इतनी अच्छी तरीके से समझा रही हैं तो शांति से समझ रहें हैं।* कोई दूसरे के समझाने से नहीं समझता यह बेस हमारा पक्का है, आप कितना भी कुछ भी कहो। यह सत्त्वस्थान देखें उनका विधान ५८७ नंबर पेज पर कह रहे हैं।

सव्वं तित्थाहारुभऊणं सुरणिरयणरदुचारिदुगे।
उव्वेल्लिदे हदे चउ तेरे जोगिस्स दसणवयं॥ ६१०॥

नामकर्म की सर्व प्रकृतिरूप तिरानबे का स्थान है। यानी इस जीव के नामकर्म की सभी प्रकृतियां सत्ता में हैं। बंध की या उदय की बात नहीं हो रही है। **सर्व प्रकृतियों में से तीर्थंकर प्रकृति घटने पर बानबे का स्थान होता है।** ऐसा कौनसा जीव है कि जिसकी तीर्थंकर प्रकृति घट जाती होगी ? अरे, उसने बांधी ही नहीं है। बंधने के बाद घटेगी नहीं, यह आहारकद्विक नहीं कि उद्वेलना होने से घटेगी। घटना यानी हमने ९३ में से घटाना है तो उसका अर्थ है उस जीव ने आहारकद्विक का तो बंध किया है, उसकी सत्ता में आहारकद्विक है परंतु उस जीव ने तीर्थंकर प्रकृति का बंध नहीं किया है। यहां भाषा तो क्या है ? 'वह घटने पर'। 'घटने पर' का अर्थ ऐसा नहीं

लेना कि बंधी थी और बाद में घट गयी है। **आहारकद्विक घटने पर इक्यानबे का स्थान है।** यानी ऐसे जीव है जिन्होंने तीर्थंकर प्रकृति का बंध तो किया है परंतु उनके आहारकद्विक का बंध नहीं हुआ है**।** पहले ९३वाला था, उसमें से एक तीर्थंकर मायनस कर दो तो ९२ हो गया। ९३ में से डायरेक्ट आहारकद्विक को मायनस करो, तीर्थंकर को रखो तो कितने हो जायेंगे ? ९१। यानी ९३वाला और ९१वाला स्थान कैसा स्थान है ? तीर्थंकर प्रकृति सहितवाला है। एक में आहारकद्विक भी है, एक में नहीं है।

श्रोता: आहारकद्विक उद्वेलित हुआ ? आहारकद्विक उद्वेलित हुआ, क्रम से उद्वेलित हुआ ऐसा कहेंगे। क्यों ? जैसे मैंने पहले बताया था पहले कभी आहारकद्विक बांधा था, मिथ्यात्व में जाकर उसने उद्वेलना की है, बाद में फिर सम्यग्दृष्टि हुआ, तीर्थंकर प्रकृति बांधी, वगैरह-वगैरह। उसकी बात हम देख रहे हैं यहां पर। परंतु एक बार तीर्थंकर प्रकृति बांधते समय आहारकद्विक भी बांधा होगा, तो बाद में उद्वेलना होने का सवाल नहीं है। उसने नहीं बांधी होगी ऐसा लेते हैं या पूर्व भव में कभी किसी काल में बांधकर उद्वेलित की थी, बाद में फिर दुबारा नहीं बांधी, ऐसा ले सकते हैं; यानी उसकी सत्ता में अभी आहारकद्विक नहीं है।

पहलावाला कौनसा देखा हमने ९३वाला ? तीर्थंकर भी है और आहारकद्विक भी है। यह जो पहले चार संख्या है न, यहां देखते हैं। ९३, ९२, ९१ और ९० यहां तक ही हमको विचार करना है। यह कैसे है ? ९३- तीर्थंकर, आहारकद्विक दोनों की सत्ता है; ९२- यहां तीर्थंकर की नहीं है, आहारकद्विक की सत्ता है; ९१- यहां पर तीर्थंकर है, आहारकद्विक नहीं है और ९०- यहां पर दोनों ही नहीं हैं यानी एक तीर्थंकर और आहारकद्विक तीन कम कर दी तो यहां ९० हो गयी है। ९३, ९२, ९१, ९० कैसे लिये ? पहला सत्त्वस्थान तीर्थंकर और आहारकद्विक सहित, दूसरा तीर्थंकर रहित परंतु आहारकद्विक सहित, तीसरा तीर्थंकर सहित और आहारकद्विक रहित और चौथा दोनों से रहित; तीर्थंकर प्रकृति भी नहीं है और आहारकद्विक भी नहीं है। यह जरूरी नहीं की हर जीव को होगा, ये सभी प्रकृतियां अंदर बंधी हुयी पड़ी हैं तो तभी उनका सत्त्व होगा। यहां तक समझ में आया ? ये चार बेसिक स्थान हमने देख लिये।

अब यहां हम पेज ५८७ पर पढ़ेंगे। **नामकर्म की सर्व प्रकृतिरूप तिरानबे का स्थान है।** यह हमने एक स्थान देखा, पहला स्थान। **सर्व प्रकृतियों में से तीर्थंकर**

प्रकृति घटने पर बानबे का स्थान होता है, यह दूसरा। **सर्व प्रकृतियों में से आहारक घटने पर** यानी वहां तीर्थंकर को रखना और आहारक को घटाना, **इक्यानबे का स्थान है**, ९३ मायनस २ किये हमने। **तीर्थंकर, आहारकद्विक दोनों घटने पर नब्बे का स्थान है।** यहां तक की बात ख्याल में आयी ? **उस नब्बे के स्थान में देवगति और देवगत्यानुपूर्वी की उद्वेलना होने पर अट्ठासी का स्थान होता है।** यह ९० का स्थान कौनसे गुणस्थान में हो सकता है ? *श्रोता: तेरहवें में।* तेरहवें में जब चला जायेगा, तो नौवें गुणस्थान में १३ प्रकृति का नाश करके चला जायेगा। क्या कहते हैं आप ? *श्रोता: मिथ्यात्व में।* मिथ्यात्व से नौवें तक, बहुत अच्छा ! क्योंकि मिथ्यात्व में होगा तभी वहां उद्वेलना करेगा। जो ९० की सत्तावाला है, उसकी सत्ता में तीर्थंकर भी नहीं है और आहारकद्विक भी नहीं है। ऐसा हो सकता है जिसकी सत्ता में तीर्थंकर प्रकृति नहीं है और आहारकद्विक है; उसने आहारकद्विक कब बांधा था ? सातवें-आठवें गुणस्थान में। अब ऐसा जीव मिथ्यात्व में गया तो उसकी सत्ता कितने की होगी ? तीर्थंकर नहीं है, आहारकद्विक है। अब ये कहां हो सकते हैं ? ९२ का सत्त्व कहां किस पर्याय में हो सकता है ? जिसके आहारक की सत्ता है, तीर्थंकर की सत्ता नहीं है - कौनसे जीवसमास में ये जीव पाये जायेंगे ? *श्रोता: पचेंद्रिय संज्ञी।*

हमने क्या देखा ? एक बार मिथ्यात्व में गये हैं, आहारक की सत्ता है तो सूक्ष्म निगोद से लेकर सातवें नरक के नारकी तक कहीं पर भी उसकी सत्ता होगी। जब तक उद्वेलना नहीं हुयी है, तब तक क्या होगा ? उसकी सत्ता बनी रहेगी। वह मिथ्यात्व में रहते हुये आहारकद्विक की उद्वेलना करके ९०वाला स्थान हो सकता है। यह स्थान कैसे होगा ? ९२ के बाद उद्वेलना करके हो सकता है या आहारकद्विक बांधे ही नहीं हो तो भी हो सकता है। ऑर्डिनरि किसी भी एकेन्द्रिय आदि सभी पर्यायों में ९० का स्थान होता है, हो सकता है। ९२ का भी हो सकता है, क्योंकि ९२ का कौनसा है ? तीर्थंकर से रहित है, आहारकद्विक से सहित है। यानी उसने कभी न कभी आहारकद्विक बांधी थी। परंतु ऐसे भी हैं न कि उसके बाद परिणामवश मिथ्यात्व में चले गये हैं। मिथ्यात्व में जाने पर सभी गतियों के दरवाजे खुले हैं। भले कभी संयम प्राप्त किया था, अब कहां हैं ? कोई सूक्ष्म निगोद में पड़े हैं, कोई पृथ्वीकायिक में पड़े हैं, कोई नरकों में भी पड़े हैं। कहीं पर भी, चौदह जीवसमास ले लेना।

अब वहां जाने पर क्या होगा ? पहले में पहले उद्वेलना किसकी होगी ?

आहारकद्विक की, तो ९०वाला स्थान हो जायेगा। उसके बाद उद्वेलना का कौनसा स्थान होगा ? देवगति। देवगति '(- दे २)' लिखा है न यहां पर, देवद्विक - देवगति, देवगत्यानुपूर्वी। ९० में से वे दो चली गयी तो ८८ का सत्त्व होगा। उसके बाद उद्वेलना होनेवाली प्रकृतियां नरकचतुष्क '(- ना ४)' लिखा है न, उसका अर्थ है नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग; तो सत्त्व ८८ में से ८४ तक आ जायेगा। हमने एक बार देखा था उद्वेलना क्या है, फिर उसकी बात करेंगे। यहां कौनसे जीव यह कर रहे हैं ? मिथ्यादृष्टि एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक के पर्याय में हैं या एकेन्द्रिय हैं, मुख्यता एकेन्द्रियों की है यहां पर। क्योंकि एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक के जीव देवगति, नरकगति नहीं बांध रहे हैं और लंबे काल तक उस पर्याय में रहते हैं, तो पूर्व में बंधी हुयी प्रकृतियों का नाश होता है, उद्वेलना होती है। यानी वे उलटा संक्रमण होकर नष्ट हो जाती हैं, अन्य सजातीय प्रकृतिरूप हो जाती हैं।

यहां पर उसने देवद्विक की उद्वेलना की; उसके बाद नरकचतुष्क - नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग। अग्निकायिक, वायुकायिक में और भी अधिक काल तक रहता है तो मनुष्यद्विक - मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी की भी उद्वेलना होती है। उद्वेलना होनेवाली टोटल कितनी प्रकृतियां हुयी ? *श्रोता: दस।* दस हुयी। नामकर्म की उद्वेलनावाली प्रकृतियां कितनी हैं ? दस और हमने टोटल उद्वेलनावाली कितनी देखी थी ? *श्रोता: तेरह।* कौनसी तीन नहीं हैं ? *श्रोता: सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व, मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व की उद्वेलना कैसे होगी ? सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व और उच्चगोत्र। यह नामकर्म की है क्या ? सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व कौनसी हैं ? दर्शनमोहनीय की। और उच्चगोत्र ? *श्रोता: गोत्र की। अनंतानुबंधी की ?* अनंतानुबंधी की विसंयोजना होती है, उद्वेलना नहीं होती है। उद्वेलना होनेवाली जो १३ प्रकृतियां देखी थी, उनमें नामकर्म की दस हैं। जिसने दस प्रकृतियों की उद्वेलना की है, उसके कौनसा स्थान होगा ? ८२वाला। यह करनेवाला कौनसा जीव है ? मनुष्यद्विक की भी उद्वेलना कौन करता है ? हां, अग्निकायिक, वायुकायिक। अग्निकायिक, वायुकायिक ही करते हैं। हां, करने के बाद अगर वे चतुरिन्द्रिय में, पंचेन्द्रिय में भी जन्म लेंगे तो शुरू में थोड़े काल के लिये तो उनके भी यह सत्ता पायी जायेगी। इस पर हम दुबारा आयेंगे बाद में कि यह सत्ता किसके-किसके होती है, कौनसे गुणस्थानवाले

के होती है, कौनसी पर्यायवाले के होती है ?

हमने सत्ता की बात देखी। यह ९३वाले स्थान में पूरी सभी की सत्ता है, उसके तीर्थंकर भी है और आहारकद्विक भी है। ९२वाला कौनसा है ? तीर्थंकर प्रकृति नहीं है, उसकी सत्ता में आहारकद्विक है। ९१वाला ? आहारकद्विक नहीं है, तीर्थंकर की सत्ता है और ९०वाला ? दोनों की सत्ता नहीं है। फिर देवद्विक की उद्वेलना होने पर ८८, नरकचतुष्क की उद्वेलना होने पर ८४ और मनुष्यद्विक की उद्वेलना होने पर ८२। यह मात्र नामकर्म की चर्चा चल रही है। मेरा प्रश्न है कोई जीव ८२ की सत्तावाला है, वहां से ८० में आयेगा कि नहीं आयेगा ? आपको हां या नहीं बोलना है क्योंकि हमें तो क्रम से ऐसा ही लगता है न ! अभी ८२ में से और कौनसी कम होगी ? अरे यह अग्निकायिक, वायुकायिक है; मिथ्यात्व में पड़ा हैं और यह ८०वाला स्थान कौनसा है ? जो तीर्थंकर-आहारकद्विक की सत्तावाला जीव है, नौवें गुणस्थान में जहां हमने देखा सबसे पहले १६ प्रकृतियों का क्षय हो जाता है। पहले हमने सत्ता में देखा था क्षपकश्रेणी में, याद है ? पहले १६, फिर ८, फिर १-१ ऐसे देखे थे। १६ में से तीन स्त्यानगृद्धि वगैरह तीन थी, वे दर्शनावरण की प्रकृतियां थी और बाकी १३ नामकर्म की प्रकृतियां थी। नरकगति और तिर्यंचगति संबंधी देखी थी; नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी और बाकी तिर्यंचगति की थी - तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी, एकेन्द्रिय, स्थावर, आतप, उद्योत, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, सूक्ष्म, साधारण ये ग्यारह। ये सभी वहां नाश हो गयी थी।

यह ९३वाला जो है, जिसके आहारकद्विक की भी सत्ता है और तीर्थंकर की भी सत्ता है, जब नौवें गुणस्थान में आता है तब १३ प्रकृतियों का क्षय हो जाता है, उसके ८० का सत्त्व होगा। यहां आहारकद्विक और तीर्थंकर की अभी सत्ता है। कौनसी १३ प्रकृतियों का नाश हुआ ? नरकगति और तिर्यंचगति संबंधी जो १३ प्रकृतियां हैं, उनका यहां नाश होता है तब उनको ८० होगा। जो ९२ पर था, कौनसा था ? तीर्थंकर रहित, आहारक सहित उसके १३ का नाश होगा और वह ७९ पर आ जायेगा। जो ९१ पर था; तीर्थंकर की सत्ता है परंतु आहारक नहीं है, उनके भी उन्हीं १३ प्रकृतियों का नाश होकर ७८ पर आ जायेगा। और जिनके दोनों ही नहीं थी फिर भी क्षपकश्रेणी तो चढ़ सकता है कि नहीं ? हां। वह भी १३ का नाश करके उनके ७७ का सत्त्व हो जायेगा। यानी ८०वाले में और ७८वाले में तीर्थंकर प्रकृति है, ७९वाले में और ७७वाले में तीर्थंकर प्रकृति नहीं है। ७९वाले में आहारक है, ७७वाले में आहारक नहीं है, इतनी

बात ख्याल में आयी ?

अब सयोगकेवली के कितनी प्रकृतियों की टोटल सत्ता है ? टोटल पूछ रही हूं; सयोगकेवली की सभी प्रकृतियां मिलकर ? ८५। हम तो जयमाला गाते हैं, हम पूजन करते हैं। क्या कहते हैं ? 'चऊ कर्म की त्रेसठ प्रकृति नाशी'। कौनसे चार कर्मों की ६३ प्रकृति नाश की हैं ? क्या घातिया कर्मों में ६३ प्रकृतियां होती हैं या ४७ होती हैं ? *श्रोता: ४७ होती हैं।* ४७ होती हैं, तो ६३ का हिसाब कैसा होगा ? *श्रोता: नामकर्म की १३।* नामकर्म के १३, तो कितनी हो गयी ? साठ हां, तीन आयु बांधी नहीं थी। गाते तो हैं हम, क्या ? 'चऊ कर्म की त्रेसठ प्रकृति नाशी'। अरे उसमें तीन आयु तो बंधी ही नहीं थी और घाति की ४७ गयी, तो ५० हो गयी और ये नामकर्म की १३ गयी हैं, तब ६३ प्रकृति का नाश करके अरिहंत अवस्था हुयी है। यह नाश तो उन्होंने बहुत पहले किया है। बारहवें गुणस्थान में तो मात्र ज्ञानावरण, दर्शनावरण, अंतराय का ही नाश किया है। बाकी ये सब पहले नाश हो चुकी हैं।

यह ९३वाला ८० पर आता है, ९२वाला ७९ पर आता है, ९१वाला ७८ पर आता है और ९०वाला ७७ पर आता है। अब इसमें से और नाश यानी क्षय कहां होगा ? अभी सत्ता का क्षय कहां होगा ? चौदहवें के उपांत्य समय में। कितनी जाती हैं टोटल ? *श्रोता: ७२।* ७२, उसमें नामकर्म की कितनी जायेगी ? लिखा है न वहां। दस जायेगी या दस रहेगी ? ७२ का नाश होता है, है न ! ८५ में से ७२ गयी, १३ की सत्ता रही थी। अयोगकेवली के उपांत्य समय में ८५ प्रकृतियों में से ७२ प्रकृतियों का क्षय हो गया, १३ प्रकृतियों की सत्ता रही। टोटल में से बाद कर रहे हैं हम तो उन ७२ में नामकर्म की छोड़कर बाकी कौनसी-कौनसी गयी हैं ? एक वेदनीय, नीचगोत्र। *श्रोता: आयु ?* आयु का घात करेंगे तो पहले ही सिद्ध हो जायेंगे ! तो अंतिम समय के लिये आयु ही नहीं बचेगी। *श्रोता: वेदनीय।* वेदनीय गया न। हां, एक वेदनीय और नीचगोत्र। तो बाकी ७० नामकर्म की हैं। ७० यहां लिखा है न ? ८० में से १० रहती हैं यानी कितनी गयी ? देखो यहां ८० पर भी तीर्थंकर की सत्ता थी और यहां ७८ पर भी थी। यहां ७९ पर नहीं थी और यहां ७७ पर नहीं थी, बराबर है न ? परंतु आहारकद्विक की यहां ७९ पर सत्ता थी, यहां ७७ पर नहीं थी। परंतु आहारकद्विक होवे या नहीं होवे, वह ७२ में से जो ७० प्रकृतियां नामकर्म की हैं उन सबका क्षय होगा। पहले थी या नहीं कुछ मतलब नहीं है।

बाकी कितनी बचती हैं ? ९। यहां बाकी कितनी बचती हैं ? १०। तो जहां जिसकी सत्ता थी उसको हम कम कहेंगे। ८० में से ७० गयी तो १० रह गयी। ७८ में से कितनी गयी कहेंगे ? उनके पास आहारकद्विक की सत्ता नहीं थी तो दो कम प्रकृतियों का यानी ७० के बदले ६८ का क्षय किया कहेंगे, ख्याल में आती है बात !

अयोगकेवली के उपांत्य समय में हमें पता है कि ७२ प्रकृतियों का नाश होता है। ७२ में से जो उदयरूप नहीं हैं ऐसी एक वेदनीय है और नीचगोत्र है, बाकी सारी नामकर्म की हैं। आयु का यहां कोई अंत नहीं होगा, अंतिम समय तक मनुष्यायु रहेगी ही रहेगी। जब ८० में से नामकर्म की ७० गयी तो दस रही। जिसके ७८ थे, उसके तो आहारकद्विक सत्ता में थी ही नहीं तो उसके ६८ का नाश हुआ, वह भी १० पर आ गया। ये तीर्थंकर केवली हैं अयोग अवस्था में। तीर्थंकर केवली हैं - एक के आहारक की सत्ता थी ८०; एक के सत्ता नहीं थी, ७८। परंतु दोनों के तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता है, तो उसके अयोगकेवली में नामकर्म की दस की सत्ता है, सत्ता की बात चल रही है यहां पर। जो तीर्थंकर रहितवाले हैं वे ९ पर आ गये। ७९वाले ने ७० प्रकृतियों का नाश किया और ७७वाले ने ६८ प्रकृतियों का नाश किया, ख्याल में आती है बात ? जिसके आहारक नहीं थी, उसे क्षय करने का सवाल कहां आता है ? इसलिये अभी यहां दो ही ऑप्शन्स हैं, पहले चार ऑप्शन्स थे। जब आहारकद्विक की सत्ता का ही नाश हो गया तो पूर्व में थी या नहीं थी कहने का कोई प्रयोजन नहीं। अयोगकेवली में दो ही स्थान रह गये - तीर्थंकरवाले के १० नामकर्म हैं, १० प्रकृतियां हैं नामकर्म की और बाकी जीवों के ९ हैं। इसमें उदयरूप यहां ९ हैं और यहां ८ हैं। क्या कहा ? हां कौनसी नहीं है ?

श्रोता: ९वाला ? यह ९२वाला यहां कौनसा था ? आहारकद्विक है और तीर्थंकर नहीं है। ९२ में से १३ गये ७९ पर आया। ९०वाले स्थान में तीर्थंकर प्रकृति भी नहीं थी और आहारकद्विक भी नहीं थी, वह १३ का क्षय होने पर ७७ पर आ गया। अब अयोगकेवली के उपांत्य समय में यानी लास्ट बट वन समय में, यहां नामकर्म की ७० प्रकृतियों का नाश हुआ। जिनके ८० की सत्ता थी उनके ७० का नाश हो जायेगा। ७८वाले के आहारकद्विक थी ही नहीं, तो उनके ६८ का नाश हुआ। ८० में से ७० गये तो १० रह गये। ७८ में से ६८ गये तो भी १० रह गये। अभी ७९, ७७ की बात चलती है; ७९वाला एक कम है यानी तीर्थंकर रहित है, आहारक सहित है और यह ७७वाला तीर्थंकर और आहारक दोनों से रहित है। अब ७९वाले ने ७० का नाश किया है,

आहारक थी न उसके तो उसके सहित ७० गयी तो ९ रह गयी। ७७वाले ने कितने का घात किया ? ६८ का, तो भी ९ रह गयी।

अयोगकेवली के अंतिम समय में सत्ता के दो ही स्थान रहे, १० की सत्तावाला और ९ की सत्तावाला। १० की सत्तावाले को ९ का उदय है और ९ की सत्तावाले को ८ का उदय है। तो मेरा प्रश्न है, वह कौनसी प्रकृति है कि जिसका वहां उदय नहीं है परंतु सत्ता में पड़ी है ? मनुष्यानुपूर्वी। मनुष्यगति वहां पड़ी है, मनुष्यगति का उदय चल रहा है परंतु आनुपूर्वी का उदय तो अन्यथा होता ही नहीं है, विग्रहगति में ही होता है। तो वहां सत्ता में है और अंतिम समय में उसका भी क्षय होगा अन्य कर्मों के साथ। परंतु सत्ता में उसको गिनेंगे, उदय में हम नहीं गिनेंगे। उदय तो ९ या ८ का कहेंगे, परंतु सत्ता में हम १० या ९ कहेंगे। *श्रोता: एक गति से दूसरी गति में जाता है तो आनुपूर्वी कर्म समाप्त नहीं होता ?* आपका कहना है एक गति से दूसरी गति में जाता है तो आनुपूर्वी कर्म समाप्त होता है कि नहीं होता ? समाप्त नहीं होता है, सत्ता में पड़ा रहता है, नया तो हर समय बंधता है। अभी उसका उदय विशिष्ट जगह ही आता है।

अभी हम ५८७ पृष्ठ पर दुबारा पढ़ेंगे इसको। **नामकर्म की सर्व प्रकृतिरूप तिरानबे का स्थान है**, सर्व यानी तीर्थंकर और आहारक दोनों को ले लेना। सर्वमें ऑप्शन कहां है ? तीर्थंकर प्रकृति और आहारक प्रकृति के संबंध में ही चार ऑप्शन्स हमने देखे थे। तो यह सर्ववाला पहला हुआ। **सर्व प्रकृतियों में से तीर्थंकर प्रकृति घटने पर बानबे का स्थान होता है।** यानी ऐसा जीव है, आहारक का बंध किया है परंतु तीर्थंकर का नहीं किया हुआ है। **आहारकद्विक घटने पर इक्यानबे का स्थान है।** इनके तीर्थंकर प्रकृति है परंतु आहारकद्विक नहीं है। और चौथा कौनसा है ? **तीर्थंकर और आहारकद्विक दोनों घटने पर नब्बे का स्थान है।** ये चार समझ में आये ? ९३, ९२, ९१ और ९०। उस ९० के स्थान में देवगति और देवगत्यानुपूर्वी की उद्वेलना होने पर, यह कौनसा जीव करेगा ? मिथ्यादृष्टि एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय तक के जो जीव हैं वे करेंगे। सबसे पहले उनके कौनसे प्रकृतियों की उद्वेलना हुयी ? अभी नामकर्म की उद्वेलना की बात चल रही है और सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व की हम यहां बात नहीं कर रहे हैं। उनकी भी साथ-साथ उद्वेलना हो रही होगी, यहां हम केवल नामकर्म की बात करेंगे। देवगति और देवगत्यानुपूर्वी की उद्वेलना होने पर जो

९०वाला स्थान है, वह अभी कितनेवाला हो जाता है ? ८८ का होता है।

मेरा प्रश्न है - ९० में से दो कम करके ८८ हुआ, ९१ में से कम करके ८९वाला होगा क्या नहीं होगा ? होना चाहिये था न ! हां ? *श्रोता: एकेन्द्रिय में जायेगा तो होगा।* ९१ का कौनसा स्थान है ? तीर्थंकर सहितवाला स्थान है, ९३ में से मात्र आहारकद्विक घटायी है। ९१ तीर्थंकर सहितवाला है तो एकेन्द्रिय में कैसे जायेगा ? मिथ्यात्व में जायेगा फिर अंतर्मुहूर्त रहेगा, उद्वेलना के लिये उसके काल कहां बाकी है ? और वह क्यों करेगा उद्वेलना ? क्योंकि वह तो सम्यग्दृष्टि रहनेवाला है। जिसने नरकायु बांधी थी मिथ्यात्व अवस्था में, वह ही अंतर्मुहूर्त के लिये मिथ्यात्व में जा सकता है; यदि क्षायिक नहीं हो तो जा सकता है। यह ९१वाला दो मायनस करके ८९वाला नहीं होगा, नहीं तो वह लिखते न आचार्य ? उन्होंने लिखा ही नहीं क्योंकि वह स्थान होता ही नहीं है। ९२वाला ? आहारक बंधी हुयी और वह अगर मिथ्यात्व में जाता है तो ९०वाला हो सकता है। हो सकता है क्योंकि तीर्थंकर प्रकृति नहीं है, आहारकद्विक है, तो मिथ्यात्व में जाकर उद्वेलना कर सकता है या ऐसा भी होगा जिसने बांधी ही नहीं हो, दोनों पॉसिबिलिटिज् हैं। यहां देखते हैं - **नब्बे के स्थान में देवगत्यानुपूर्वी और देवगति की उद्वेलना होने पर अट्ठासी का स्थान होता है। इसमें से भी नरकचतुष्क की उद्वेलना होने पर** यानी अभी दूसरी गति; नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वी की उद्वेलना कर रहा है।

एकेन्द्रिय से चतुरिन्द्रिय तक के जीव देवगति को बांध नहीं सकते, नरकगति को भी वे नहीं बांधते और है उसकी उद्वेलना कर देते हैं। इसलिये उसमें पंचेन्द्रिय को नहीं लिया। इन गतियों की उद्वेलना करनेवालों में पंचेंद्रिय जीवों को नहीं लिया है। ८८ के बाद चार प्रकृतियां एक साथ जाती हैं क्योंकि पहले देवगति चली गयी है। अब नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी चली गयी हैं तो उसके साथ बंधनेवाली जो वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग भी उसके साथ उद्वेलना होकर चली जाती है। इसलिये नरकचतुष्क कहा, देवचतुष्क नहीं कहा क्योंकि नरकगति बाकी थी तब तक वैक्रियिक अंदर पड़ा रहेगा। **चौरासी का स्थान हो जाता है। इसमें से भी मनुष्यद्विक की उद्वेलना होने पर** यानी ८४ थे, दो और चली गयी तो **बयासी का स्थान होता है।** सभी प्रकृतियों की बात की थी हमने उच्चगोत्र जाता है, फिर मनुष्यद्विक जाता है, ऐसी बात की थी। लेकिन यहां अन्य प्रकृतियों की चर्चा नहीं है, मात्र नामकर्म की चर्चा है।

आगे देखते हैं- अभी यहां कितने हुये ? **'णिरयतिरख्ख दु वियलं' इत्यादि गाथोक्त अनिवृत्तिकरण में क्षय हुयी तेरह प्रकृति**, यानी नरक और तिर्यंच संबंधी १३ प्रकृतियों का क्षय होता है; टोटल १६ का एक साथ क्षय हो जाता है उसमें स्त्यानगृद्धित्रिक का क्षय होता है इस पॉइंट पर। परंतु वह दर्शनावरण की है, इसलिये हम उसका नाम नहीं ले रहे हैं। हम केवल १३ की बात कर रहे हैं यहां पर। **तिरानबे में से घटने पर अस्सी का स्थान होता है।** हमने देखा न अभी घटाकर। **बानबे से घटने पर उन्नासी का स्थान होता है, इक्यानबे से घटने पर अठहत्तर का स्थान होता है और नब्बे में से घटने पर सतहत्तर का स्थान होता है।** पहले जो हमने ९३, ९२, ९१, ९० देखे थे उसमें से हर एक में से - अपने-अपने में से १३ घटा दो तो कितने रह गये ? ८०, ७९, ७८ और ७७। *श्रोता: यह नौवें गुणस्थान तक इतनी तो रहेगी ही रहेगी ?* नौवें गुणस्थान में १३ का क्षय होने पर सत्ता में इतनी प्रकृतियां रहेगी ही, बिलकुल रहेगी। *श्रोता: यानी सामान्य से ८८, ८४, ८२ और ८० का इतना सत्त्व तेरहवें से लेकर आठवें गुणस्थान तक होगा ?* ८० का सत्त्व नौवें के ऊपर ही होगा; ८८, ८४, ८२ ये तो सारे मिथ्यात्व में हैं। ये तीन तो नियम से मिथ्यात्व में है, मिथ्यात्व में ये भी सत्त्वस्थान हो सकते हैं। *श्रोता: मिथ्यात्व हो या सम्यग्दृष्टि हो ?* मिथ्यादृष्टि के ही ये स्थान होंगे परंतु सम्यग्दृष्टि के ये नहीं होंगे। सम्यग्दृष्टि के कैसे हो सकते हैं ? हां उधरवाली हो सकती है। सामान्य में से जिसके आहारक भी नहीं है और तीर्थंकर भी नहीं है, तो उसके लिये ज्यादा सोचने की ज़रूरत नहीं है। वह ९०वाला स्थान मिथ्यात्व गुणस्थान से सब जगह हो सकता है, जब तक वे १३ नहीं जाती हैं तब तक होगा।

अयोगकेवली में १० का और ९ का स्थान है। इसीका यहां टेबल बनाया है उसको देखते हैं, पहले लेफ्ट फिर राइट ऐसा पढ़ेंगे। एक के बाद **तिरानबे का स्थान सर्व प्रकृतिरूप।** उसके बाद राइट साइड पर देखना **बानबे का स्थान तीर्थंकर रहित**, **इक्यानबे का स्थान आहारकद्विक रहित**, **नब्बे का स्थान तीर्थंकर, आहारकद्विक रहित**। **अट्ठासी का स्थान तीर्थंकर, आहारकद्विक और देवद्विक रहित**, जिनको दोनों ही नहीं है उन्होंने देवद्विक की उद्वेलना की है; **चौरासी का स्थान तीर्थंकर, आहारकद्विक, देवद्विक और नरकचतुष्क रहित।** टोटल सब कौनसी-कौनसी नहीं है ? टोटल गिनायी है। **बयासी का स्थान तीर्थंकर, आहारकद्विक,**

देवद्विक, नरकचतुष्क और मनुष्यद्विक रहित, ये जो हमने तीन स्थान देखे वह उद्वेलना की अपेक्षा देखे। अभी क्षय होने पर क्या-क्या होता है ? हम १३-१३ घटायेंगे। **अस्सी का स्थान अनिवृत्तिकरण में**, यानी नौवें गुणस्थान में **तेरह का क्षय हुआ, उनसे रहित।** यानी ९३ में से १३ घटाने पर ८० रह गये। **उन्नासी का स्थान तेरह और तीर्थंकर रहित, अठहत्तर का स्थान तेरह और आहारकद्विक रहित** यानी इसमें तीर्थंकर की सत्ता है। **सतहत्तर का स्थान तेरह और तीर्थंकर, आहारकद्विक रहित, दस का स्थान तीर्थंकर अयोगी के अंत समय सत्तारूप।** और **नौ का स्थान सामान्य अयोगकेवली के अंत समय सत्तारूप।** क्योंकि क्षय हुआ तब उसकी सत्ता थी, उपांत्य समय में क्षय हुआ यानी सत्ता थी और वह अंतिम समय में नहीं रहा, तब हमने कहा वहां उसका क्षय हुआ। *श्रोता: उपशमवाले में क्या होता है ?* उपशमवाले में कुछ होता ही नहीं है, नामकर्म में कुछ परिवर्तन नहीं होता, उनकी सत्ता बनी रहती है। *श्रोता: ग्यारहवें गुणस्थान तक पायी जाती है ?* हां, बिलकुल पायी जायेगी। उपशमश्रेणी में कोई परिवर्तन नहीं है उसमें बस, हां।

आगे गाथा ६११ देखते हैं - **दस के और नौ के स्थानों में प्रकृतियों का कथन करते हैं। अयोगकेवली में सत्त्वप्रकृति 'उदयगवारणराणू' इत्यादि गाथा से कही हुयी तेरह हैं।** उनमें से टोटल १३ है। **उनमें से वेदनीय, मनुष्यायु और उच्चगोत्र घटाने पर** - घटाने पर का अर्थ क्या है ? चार अघातिकर्म बाकी हैं, अघातिकर्म में से नामकर्म की हमको गिननी हैं। तो अन्य कौनसी हैं ? एक वेदनीय है, मनुष्यायु है, उच्चगोत्र है, तो उन तीन को अभी हम नहीं सोचेंगे। तो उसको घटाने पर **नामकर्म की दस प्रकृतियों का सत्त्व है।** सत्ता की बात चल रही है, उदय की नहीं। **उनमें से तीर्थंकर प्रकृति बिना नौ का सत्त्व होता है।** यानी अयोगकेवली में दो ही ऑप्शन्स रहे; पहले तो चार-चार थे न, तीर्थंकर रहित, वह सहित-रहित सब हमने देखा था।

अब कहते हैं **उद्वेलना के स्थानों का विशेष कहते हैं।** नामकर्म की कौन-कौनसी प्रकृतियों की उद्वेलना होती है ? हां, आहारकद्विक, देवद्विक, नरकचतुष्क और मनुष्यद्विक चार ही स्थान होंगे। चार स्थान यानी नामकर्म की उद्वेलना के चार अलग-अलग स्थान। पहले में पहले उद्वेलना करेगा तो आहारकद्विक की, फिर देवद्विक की, फिर नरकचतुष्क की और फिर मनुष्यद्विक की। अब उसको देखेंगे - **उद्वेलना के स्थानों का विशेष कहते हैं। मिथ्यादृष्टि में जिन प्रकृतियों के बंध का वा उदय का**

गंध अर्थात् वासनामात्र भी नहीं है, ऐसी सम्यक्त्वादि गुण से उत्पन्न सम्यक्त्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय, आहारकद्विक इन चार प्रकृतियों की तथा अवशेष उद्वेलनप्रकृतियों की उद्वेलना मिथ्यात्व गुणस्थान में ही होती है। क्या कह रहे हैं ? यह किसका गंध क्या चल रहा है देखो। मिथ्यादृष्टि में जिसका बंध भी नहीं है और उदय भी नहीं है, इसका गंध भी नहीं है, वासना भी नहीं है। किसकी बात चल रही है ? सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व की। मिथ्यात्व का बंध भी है, उदय भी है और पूरी वासना बनी रही है। यहां अन्य दो प्रकृतियों की बात चल रही है। ये दो प्रकृतियां कौनसी है ? सम्यक्त्वमोहनीय, मिश्रमोहनीय। ये दो और आहारकद्विक इन चार की क्या विशेषता है ? इन चारों को लिया है। ये कैसे उत्पन्न हुयी थी ? सम्यक्त्वादि गुण से उत्पन्न हुयी थी। सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति कैसे उत्पन्न हुयी थी ? मिथ्यादृष्टि जब सम्यग्दृष्टि हुआ था तो सम्यक्त्व के कारण वहां पर मिथ्यात्व प्रकृति में से अन्य दो उत्पन्न हुयी थी। तो सम्यक्त्व गुण के कारण उत्पन्न हुयी थी।

आहारकद्विक भी किसके उत्पन्न हुयी थी ? तो संयमी के। वहां सम्यक्त्व गुण ले लेना और उसके साथ संयम भी ले लेना। जब वह सम्यग्दृष्टि भ्रष्ट होकर मिथ्यात्व में चला जाता है, तो उनकी उद्वेलना हो जाती है। कहते हैं इन चार प्रकृतियों तथा अवशेष की यानी हमने टोटल १३ देखी थी; तो प्रकृतियों की उद्वेलना कौनसे गुणस्थान में होती है ? मिथ्यात्व गुणस्थान में होती है, अन्य गुणस्थानों में उद्वेलना का कार्य नहीं होता है, मिथ्यात्व गुणस्थान में होता है। अब आगे और बढ़ेंगे तो उसका अनुक्रम कहेंगे।

अनुक्रम पहले कौनसी प्रकृति की उद्वेलना होगी, फिर किसकी होगी, फिर किसकी होगी, इसकी बात बताने जा रहे हैं। पृष्ठ ५८९, गाथा ६१३ की टीका। **आहारकद्विक प्रशस्त प्रकृति है,** शुभ प्रकृति है, शुभ नामकर्म में इसको ले लिया है। **इसलिये चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव पहले आहारकद्विक की उद्वेलना करते हैं।** जब मोहनीय की बात देखी थी तो हमने देखा था सम्यक्त्व में से मिथ्यात्व में चला आता है तो उसकी उद्वेलना चालू हो जाती है। किसकी ? सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति की। अभी हम सभी प्रकृतियों की बात कर रहे हैं तो सबसे पहले उद्वेलना होनेवाली प्रकृति कौनसी है ? यदि आहारकद्विक का बंध किया हो तो उसकी उद्वेलना सबसे पहले चालू हो जाती है। चालू तो सबकी होती है, उद्वेलना होती है यानी इसका

कंप्लीशन पहले होगा। आहारकद्विक की उद्वेलना भी शुरू है, सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व की भी, इन चारों की तो ॲट अ टाइम उद्वेलना शुरू है। पहले कंप्लीशन किसका होगा ? यानी पूर्णता, उद्वेलना आहारकद्विक की होगी पहले।

आहारकद्विक प्रशस्त प्रकृति है, सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व अप्रशस्त हैं। उनमें से प्रशस्त कौनसी है और अप्रशस्त कौनसी है ? सम्यक् प्रकृति प्रशस्त है ? घातिकर्मों में कितनी प्रकृतियां प्रशस्त होती है ? घातिकर्मों की ४७ प्रकृतियां हैं और हमने क्या कहा ? सभी पापरूप ही हैं। हमें लगता है सम्यक् प्रकृति है, सम्यक्त्व होने देती है तो प्रशस्त होगी। बिलकुल नहीं, मोहनीय की ही है, वह बिलकुल अप्रशस्त प्रकृति है और आहारकद्विक कैसी है ? प्रशस्त है। आहारकद्विक प्रशस्त है। इसलिये चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव पहले आहारकद्विक की उद्वेलना करते हैं। मिथ्यात्व के कारण उसकी उद्वेलना पहले होती है। **उसके पश्चात् सम्यक्त्वमोहनीय और उसके पश्चात् मिश्रमोहनीय।** सबकी ॲट अ टाइम चालू होती है परंतु उद्वेलना पूर्ण होने का क्रम है। **पश्चात् अवशेष देवद्विक आदि प्रकृतियों की उद्वेलना** ये पहली चार प्रकृतियों की उद्वेलना तो चारों गति के मिथ्यादृष्टि करते हैं और आगे देवद्विक आदि जो प्रकृतियां हैं उसकी उद्वेलना **एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय करते हैं।** आगे देखेंगे हम।

उस उद्वेलना के अवसर का काल कहते हैं। वह उद्वेलना कितने काल में हो जाती है और कब होती है उसकी बात चल रही है तो उसके अवसर का काल कहेंगे। ६१४ की टीका **वेदकयोग्य काल में तो आहारकद्विक की उद्वेलना करता है और उपशमकाल में सम्यक्त्व प्रकृति की और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की और एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय जीव वैक्रियिकषट्क** यानी देवद्विक और नरकचतुष्क **की उद्वेलना करते हैं।** क्या कहा ? दो शब्द आये हैं वेदकयोग्य काल और उपशमयोग्य काल। हमने इसकी चर्चा की थी, वेदकयोग्य काल किसको कहते हैं ? सम्यग्दृष्टि जीव जब मिथ्यात्व में आता है तो असंख्यात वर्षों तक तीन प्रकृतियों की सत्ता बनी रहती है। मिथ्यात्व तो नया बंध ही रहा है; पुराना तो था ही था, नया और भी बंध रहा है। परंतु सम्यक्त्व अवस्था में जो सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति तैयार हुयी थी वे वैसी की वैसी बनी रहती हैं। उनकी स्थिति बढ़ती नहीं है परंतु उनकी उद्वेलना चालू होती है। उद्वेलना चालू होती है यानी उनकी स्थिति घटती है क्योंकि उद्वेलनाकांडक वगैरह कांडकरूप से उद्वेलना होती है तो उनकी स्थिति बहुत घटती-घटती चली जाती है।

पहले मिथ्यात्व में आया तो उनकी स्थिति अंतःकोड़ाकोड़ी सागरप्रमाण थी, अब उद्वेलना होते ही घटती चली जाती है। कुछ हज़ारों सागर रह जायेगी, फिर वह भी घटते-घटते-घटते करीबन सागर जितनी रह जायेगी। इतने काल तक यदि उस जीव को सम्यक्त्व की प्राप्ति होती है तो वेदक सम्यक्त्व प्राप्त करता है। इसलिये इतने काल को वेदकयोग्य काल कहते हैं या वेदककाल कहते हैं। इसके पश्चात् यदि उसको सम्यक्त्व होगा, यानी वह स्थिति और घट ही रही है, तो उसको क्या होगा ? उपशम सम्यक्त्व होगा; इसके पश्चात् वाले काल में उपशम सम्यक्त्व होगा। तो उसको कहेंगे उपशमयोग्य काल। यह काल क्यों बताया ? कौनसी प्रकृतियों की उद्वेलना किस काल में होती है यह बताने के लिये। *श्रोता: दूसरी प्रकृति रहेगी तो तीसरे गुणस्थान में होगा न सम्यग्मिथ्यात्व ?* अभी वह मिथ्यात्व में ही है। जब वह तीसरे गुणस्थान में आयेगा; अगर तीसरे गुणस्थान योग्य परिणाम होंगे तो आयेगा, उसकी यहां कहां चर्चा है ? यहां उद्वेलना होनेवाली प्रकृतियों की चर्चा चल रही है।

हम यह पॅरेग्राफ पढ़ेंगे, ये दोनों कालों का लक्षण भी यहां बतानेवाले हैं। आगे के लेक्चर में उसका लक्षण देखेंगे। **वेदकयोग्य काल में तो आहारकद्विक की उद्वेलना करता है।** वेदकयोग्य काल यानी अभी सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक् प्रकृति दोनों की सत्ता त्रस में पृथक्त्व सागर और एकेन्द्रिय में करीबन सागर जितनी बाकी है; त्रसों में कुछ सागर और एकेन्द्रियों में एक सागर जितनी, तब तक उसको वेदककाल कहेंगे और उस काल में आहारकद्विक की उद्वेलना पूर्ण हो जाती है। अभी सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना इस काल में पूरी नहीं हुयी है। **और उपशमकाल में सम्यक्त्वप्रकृति की और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की उद्वेलना पूर्ण होती है। एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय जीव** उसी काल में क्या करते हैं ? **वैक्रियिकषट्क की उद्वेलना करते हैं।** इतने लंबे काल तक वह उस पर्याय में ही घूम रहा है तब उसके उस षट्क की उद्वेलना भी पूर्ण हो जाती है। अब यहां जो दो काल बताये हैं - वेदककाल उसको वेदकयोग्य काल कहते हैं और दूसरा उपशमकाल या उपशमयोग्य काल, उन दोनों काल के लक्षण और उसकी चर्चा हम आगामी लेक्चर में करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५७. उद्वेलना

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने इस गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है, जिसका हिंदी अनुवाद आपके हाथ में है। उसीके आधार से अभी हम नामकर्म की सत्त्व प्रकृति यानी नामकर्म के सत्त्व के स्थान देख रहे हैं। इसका अर्थ क्या है ? एक जीव के एक काल में नामकर्म की कितनी उत्तरप्रकृतियों का एक साथ सत्त्व पाया जायेगा, उसकी बात यहां चल रही है।

हमने कौन-कौनसे स्थान देखे ? ९३ प्रकृति का एक स्थान, ९२ का ? देखो, जब ९३ कहेंगे तो सभी की सभी उत्तरप्रकृतियों की सत्ता है। अंतर कहां पड़ता है ? तीर्थंकर प्रकृति है या नहीं है, आहारकद्विक है या नहीं है इसकी अपेक्षा, हम मूल में चार स्थान कहेंगे। फिर कुछ स्थान उद्वेलना की अपेक्षा कहेंगे और कुछ स्थान क्षय की अपेक्षा कहेंगे। मूल में चार स्थान देखते हैं, तीर्थंकर और आहारक की अपेक्षा लगाकर। पहला स्थान है जहां अन्य तो सभी प्रकृतियां है, तीर्थंकर प्रकृति भी है और आहारकद्विक भी है तो हम कहेंगे वह ९३ प्रकृति का स्थान है। दूसरा स्थान ९२ प्रकृति का है यानी एक नहीं है वह कौनसी नहीं होगी ? तीर्थंकर की नहीं होगी; ९३ में से १ मायनस कर दिया वह ९२ प्रकृति का एक स्थान हुआ। तीसरा स्थान हमने ९१ का देखा यानी ९३ में से दो गयी तो कौनसी नहीं है ? आहारकद्विक नहीं है परंतु तीर्थंकर प्रकृति है यह तीसरा स्थान है और चौथा स्थान है जिसके तीर्थंकर प्रकृति भी नहीं है और आहारकद्विक भी नहीं है। हो सकता है बांधी ही नहीं है, तीर्थंकर प्रकृति तो बांधी ही नहीं है और आहारकद्विक की बंध के बाद उद्वेलना हो सकती है और बंधी भी नहीं है ऐसा भी हो सकता है। उसके बाद हमने उद्वेलना की अपेक्षा और कुछ स्थान देखे थे। देवद्विक की उद्वेलना होती है तो ९० में से ८८ का स्थान हो गया। उसके बाद नरकचतुष्क की उद्वेलना होने पर ८४वाला स्थान और मनुष्यद्विक की उद्वेलना होने पर ८२वाला स्थान हुआ। यह हमने अलग-अलग स्थान देखे थे।

अब क्षपणा की अपेक्षा आगे बढ़ते हैं। नौवें गुणस्थान में जब जीव आता है, सबसे पहले जहां १६ प्रकृतियों का क्षय होता है, उसमें से १३ नामकर्म की हैं। तीन वे स्त्यानगृद्धि आदि थी। तो जिसके पहले ९३ का सत्त्व था उसके १३ घटकर ८० का सत्त्व

हो जाता है; जिसको ९२ का था, उसमें से १३ घटाओ तो ७९ होगा; जिसको पहले ९१ था उसके कितने हो जायेंगे ? ७८ और जिसके ९० थे उसके हो जायेंगे ७७। तो ८०, ७९, ७८ और ७७ ये चार स्थान १३ प्रकृतियों का क्षय होने पर हो गये। अब अयोगी के बताये - अयोगी के द्विचरम समय तक ये सत्ता बनी रहेगी, चार अलग-अलग स्थान पाये जायेंगे। उसके बाद जहां ७२ प्रकृतियों का क्षय हो जाता है, उनमें से नामकर्म की यथायोग्य ७० होगी या ६८ होगी। जिनके आहारक की सत्ता है वे ७० प्रकृति का नाश करेंगे; तो जिनके पहले ८० थी उनके १० रह जायेगी और जिनके ७९ थी उनके ९ रह जायेगी। जिनके आहारक की सत्ता नहीं थी, उनमें से तो सत्ता नहीं थी तो नाश करने का सवाल नहीं है, तो उन्होंने ६८ का नाश कर दिया। तो दोनों के दो ही ऑप्शन्स रहेंगे अभी - जो तीर्थंकर की सत्तावाले हैं, उनके १० प्रकृतियों का सत्त्व है और जो सामान्य केवली हैं उनके ९ प्रकृतियों का सत्त्व है। इसतरह से हमने उद्वेलना की अपेक्षा कुछ सत्ता के स्थान देखे हैं और क्षय की अपेक्षा कुछ देखे हैं। अब हम आगे बढ़ेंगे।

हमने देखा था जब उद्वेलना होती है तो उसकी प्रकृतियां निश्चित हैं कि कौनसी प्रकृतियों में उद्वेलना होती है। हमने उद्वेलना योग्य टोटल प्रकृतियां देखी थी उसमें देखा था सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व, आहारकशरीर, आहारकअंगोपांग; फिर देवद्विक; नरकचतुष्क यानी नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर, वैक्रियिकअंगोपांग; उसके बाद उच्चगोत्र और मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी ये टोटल १३ उद्वेलना योग्य प्रकृतियां हैं। इनकी उद्वेलना कौन करता है और कहां करता है ? तो मिथ्यादृष्टि करता है। जिसने पहले आहारक का बंध किया है ऐसा जीव जब मिथ्यात्व में चला जाता है, तो चारों ही गतियों में उसकी उद्वेलना होती है। मिथ्यात्व में जाने के बाद सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना शुरू तो होती है, चारों की शुरू होती है परंतु आहारकद्विक की उद्वेलना सबसे पहले पूर्ण हो जाती है। वह प्रकृति नष्ट होती है सत्ता में से, बाद में सम्यक् प्रकृति, सम्यग्मिथ्यात्व नष्ट होती है। परंतु हम यहां केवल नामकर्म की बात देख रहे थे, इसलिये यहां आहारकद्विक की बात पहले उठायी। तो उसकी उद्वेलना कब होती है ? तो कहा वेदकयोग्य काल में होती है।

यह वेदकयोग्य काल क्या है ? वेदकयोग्य काल हम उसको कहते हैं कि जब सम्यग्दृष्टि जीव मिथ्यात्व में चला जाता है तो उसकी सत्ता में मिथ्यात्व है ही है, उसका

नया बंध भी हो रहा है। सम्यग्दृष्टि हुआ था तभी जो सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति तैयार हुयी थी, अब वे वैसी ही रहती है, बढ़ती नहीं है; परंतु मिथ्यात्व का नया बंध होगा, मिथ्यात्व बढ़ेगा परंतु अब मिथ्यात्व अवस्था में मिथ्यात्व में से सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक् प्रकृति नहीं बनती। यह कार्य मात्र सम्यग्दृष्टि में ही होता है। अभी मिथ्यात्व में आया है, तो उलटा संक्रमण होगा जिसको हम उद्वेलना कहते हैं। सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व मिथ्यात्व प्रकृतिरूप टर्न होती रहती है उसको कहते हैं उनकी उद्वेलना होती रहती है। तो जब तक ये सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति घटते-घटते-घटते... उसकी स्थिति अत्यंत घटती है। कैसी घटती है उसको हम देखेंगे। जब घटकर वह त्रस जीवों में पृथक्त्व सागर यानी कुछ सागर प्रमाण रहती है और एकेन्द्रियों में सागर प्रमाण शेष रहती है, तब तक के काल को वेदकयोग्य काल कहेंगे।

अभी जो एकेन्द्रियों में हैं या अन्य द्वीन्द्रिय आदि में हैं वहां कोई सम्यक्त्व प्राप्त नहीं करेगा। परंतु इतने काल में यदि कोई जीव संज्ञी पंचेन्द्रिय बन जाता है किसी भी पर्याय का, तो उतने काल में उसको यदि दुबारा सम्यक्त्व होता है, मिथ्यात्व में से फिर सम्यक्त्व प्राप्त करता है तो उसको वेदक सम्यक्त्व ही प्राप्त होगा। अधिक स्थितिवाले जो सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति है उसको उपशमा नहीं सकता। उसकी स्थिति सागर के करीबन हो जाये या बिलकुल उससे भी बहुत कम हो जाये तो उसको उपशमा सकता है। यानी फिर दुबारा उपशम सम्यक्त्व प्राप्त करने के लिये पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण इतना काल जाना पड़ता है, तब जाकर दुबारा औपशमिक होगा। सम्यक्त्व नहीं होगा यह बात नहीं कह रहे हैं। सम्यक्त्व तो उसके मिथ्यात्व आने पर एक अंतर्मुहूर्त में दुबारा हो सकता है, उसकी ना नहीं है। परंतु वह औपशमिक सम्यक्त्व नहीं होगा; वह क्षयोपशम सम्यक्त्व होगा, वेदक सम्यक्त्व जिसको कहते हैं। यह बात ख्याल में आयी ? जितने असंख्यात वर्षों तक वह वेदक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है, उसको हम वेदकयोग्य काल कहेंगे। उसके पश्चात् वाला जो काल है उसको उपशमयोग्य काल कहेंगे। उस काल में उसको सम्यक्त्व होगा तो औपशमिक सम्यक्त्व ही होगा। इसतरह से हमने इन दो कालों के लक्षण देखे।

अभी ६१३ की गाथा की टीका में हमने पढ़ा था कि **आहारकद्विक प्रशस्त प्रकृति है, इसलिये चारों गति के मिथ्यादृष्टि जीव पहले आहारकद्विक की उद्वेलना करते हैं।** जब उद्वेलना करते हैं ऐसा लिखा है, उद्वेलना का प्रोसेस चालू तो

हो जाता है, पहले इनके उद्वेलना की पूर्णता होती है। **उसके पश्चात् सम्यक्त्वमोहनीय यानी सम्यक् प्रकृति और उसके पश्चात् मिश्रमोहनीय यानी सम्यग्मिथ्यात्व और उसके पश्चात् अवशेष देवद्विक आदि** यानी देवद्विक, नरकचतुष्क, वगैरह-वगैरह **प्रकृतियों की उद्वेलना**, कौन करते हैं ? **एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय और पंचेन्द्रिय करते हैं।** पंचेन्द्रिय इसलिये कहा कि इन दोनों मोहनीय की उद्वेलना तो पंचेन्द्रियों में भी चलती रहती है। अब यह उद्वेलना के अवसर में हमने जो वेदकयोग्य काल और उपशमयोग्य काल कहा उसकी बात आगे की गाथा ६१४ में बताते हैं।

वेदकयोग्य काल में तो आहारकद्विक की उद्वेलना करता है। वेदकयोग्य काल है का अर्थ है अभी सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व सत्ता में हैं, अभी उनकी स्थिति सागर के करीबन या थोड़ी ज्यादा है यानी उनकी उद्वेलना अभी पूरी नहीं हुयी है, उसके पहले आहारकद्विक की उद्वेलना पूर्ण हो जाती है। **और उपशमकाल में सम्यक्त्व प्रकृति की और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृति की और एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय जीव वैक्रियिकषट्क की उद्वेलना करते हैं।** इसका अर्थ ख्याल में आया ? कि इतना लंबा काल चलता है तब जाकर यह उद्वेलना का कार्य पूरा होता है। इसका अर्थ इतने लंबे काल तक वह मिथ्यात्व में है और इतने लंबे काल तक एकेन्द्रिय, विकलेन्द्रिय पर्यायों में घूम रहा है। तब जाकर ये सभी प्रकृतियां जो पहले बंधी थी या तैयार हुयी थी, उनकी उद्वेलना पूर्ण होती है। अब इन दोनों कालों का लक्षण हम देखते हैं, ६१५ की टीका। *श्रोता: वैक्रियिकषट्क यानी क्या ?* षट्क यानी देवद्विक और नरकचतुष्क; देवगति, देवगत्यानुपूर्वी, नरकगति, नरकगत्यानुपूर्वी, वैक्रियिकशरीर और वैक्रियिकअंगोपांग इन सबको मिलकर अगर छह को बताना है तो वैक्रियिकषट्क कह दिया। देवद्विक को अलग बताना है तो उसीको हमने देवद्विक बताया और नरकचतुष्क एक साथ बताया। पहले किसका होता है ? क्रम से होता है परंतु सबकी उद्वेलना होती है इसलिये यहां वैक्रियिकषट्क कह दिया। आगे की गाथा देखते हैं।

सम्यक्त्वमोहनीय और मिश्रमोहनीय इनकी जो पहले स्थिति थी वह सत्तारूप स्थिति मिथ्यात्व में आने पर पहले कितनी स्थिति थी ? हां, अंतःकोड़ाकोड़ी सागर, अधिक भी हो सकती है, परंतु अंतःकोड़ाकोड़ी सागर होती है। यह अधिक क्यों हो सकती है ? देखो औपशमिक सम्यक्त्व प्राप्त करता है, उसके पहले जो पांच लब्धि

होती हैं, उसमें प्रायोग्यलब्धि में सभी कर्मों की स्थिति अंतःकोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण हो जाती है। सम्यक्त्व प्राप्त होने पर मिथ्यात्व की स्थिति अंतःकोड़ाकोड़ी सागर है। परंतु जो सादि मिथ्यादृष्टि है, एक बार जिसने सम्यक्त्व प्राप्त किया है, जो मिथ्यात्व में गया है अब वह मिथ्यात्व का नया बंध करेगा कि नहीं करेगा ? अधिक से अधिक कितना कर सकता है ? ७० कोड़ाकोड़ी सागर का होगा। जिसने ७० कोड़ाकोड़ी सागर का बंध किया है, ऐसा मिथ्यादृष्टि जीव एक अंतर्मुहूर्त के बाद वेदक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। तो उसके सम्यक्त्व की अवस्था में मिथ्यात्व की स्थिति कितनी है ? एक अंतर्मुहूर्त कम ७० कोड़ाकोड़ी सागर और तब वह सम्यग्मिथ्यात्व, सम्यक् प्रकृति भी उतनी स्थितिवाली बनेगी। यह परिणामों की कितनी विचित्रता है कि एक अंतर्मुहूर्त पहले इतने संक्लेश परिणाम किये कि मिथ्यात्व की उत्कृष्ट स्थिति ७० कोड़ाकोड़ी सागर की बांधी और अंतर्मुहूर्त के पश्चात् केवल एक-एक निषेक, एक-एक समय गल गया है और उसकी स्थिति एक अंतर्मुहूर्त ही कम हुयी है और ऐसी स्थिति के साथ वेदक सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। फिर आगे कैसे प्रोसेस होता है वह विषय अपना नहीं है, परंतु ऐसी भी बातें हैं क्योंकि अंतर्मुहूर्त में ही उसने सम्यक्त्व प्राप्त कर लिया है।

अब हम यहां इन दोनों कालों का जो वर्णन देख रहे थे कि मिथ्यात्व में आने पर सम्यक्त्वमोहनीय और मिश्रमोहनीय इनकी जो पहले स्थिति थी वह सत्तारूप स्थिति अभी घटेगी न ! अभी उद्वेलना हो रही है। उद्वेलना हो रही है उसका अर्थ क्या है ? सत्तारूप स्थिति घट रही है। केवल एक-एक समय से नहीं घट रही है। तो कहते हैं कांडकों में घट रही है। ये कांडक क्या होते हैं ? कांडक यानी टुकड़े। जैसे गन्ना खाते हो तो क्या करते हैं ? इतना लंबा है, हमने उसे यहां से कट किया तो शॉर्ट हो गया न। फिर और इतना कट किया; थोड़ा-थोड़ा नहीं ॲट अ टाइम, बहुत बड़ा लंबा टुकड़ा हम कट करेंगे। ऐसे बहुत निषेक कट होते हैं, एक समय में नहीं होते, अंतर्मुहूर्त में होते हैं तो उसको कहेंगे कांडक। जैसे आपने शायद नाम सुना होगा स्थितिकांडकघात यानी स्थिति का घटना, अनुभागकांडकघात यानी अनुभाग का घटना। ऐसे यहां उद्वेलना के भी कांडक होते हैं। इतनी स्थितियों की याने निषेकों की उद्वेलना हो जाती है एक अंतर्मुहूर्त में। फिर और रिमेनिंग स्थितियों की उद्वेलना हो जाती है।

हम पढ़ेंगे, यही बात बता रहे हैं कि जितनी उनकी स्थिति थी वह **सत्तारूप स्थिति त्रस के तो पृथक्त्व सागर प्रमाण अवशेष रहे** वेदककाल किसको कहते हैं

उसकी बात चल रही है। जब तक वह पृथक्त्व सागर हो जाती है तब तक के काल को यानी मिथ्यात्व में आने के समय से लेकर जब तक पृथक्त्व सागर प्रमाण शेष रहती है। क्योंकि वे निषेक कट हो गये हैं न उसके, उद्वेलना के द्वारा कांडक-कांडक होते होते नष्ट हो गये हैं, इतनी स्थिति अवशेष रहती है तब तक का जो काल है, त्रस में कितना ? पृथक्त्व सागर **और एकेन्द्रिय में पल्य के असंख्यातवें भाग से हीन एक सागर।** करीबन एक सागर कहो न, थोड़ासा हीन है उसको हम गौण कर देते हैं। तब तक के काल को, इतना जो काल बीत गया है जो पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण काल है, उस काल को क्या कहेंगे ? वेदकयोग्य काल कहते हैं और यदि उसके ऊपर सत्तारूप स्थिति कम हो जाये, उसके ऊपर यानी ? उसमें से और घट जाये क्योंकि उद्वेलना के कांडक तो चलते ही रहते हैं, जब तक पूर्णरूप से सत्ता में से नष्ट नहीं होते हैं, तब तक कांडक चलते ही रहते हैं। अब तो घटते-घटते स्थिति सागर या पृथक्त्व सागर हुयी थी। वैसे मिथ्यात्व में ही रहा तो उसके कांडक होते-होते स्थिति और घटती चली जाती है तब उसको क्या कहेंगे ? उपशमयोग्य काल।

निषेक रचना

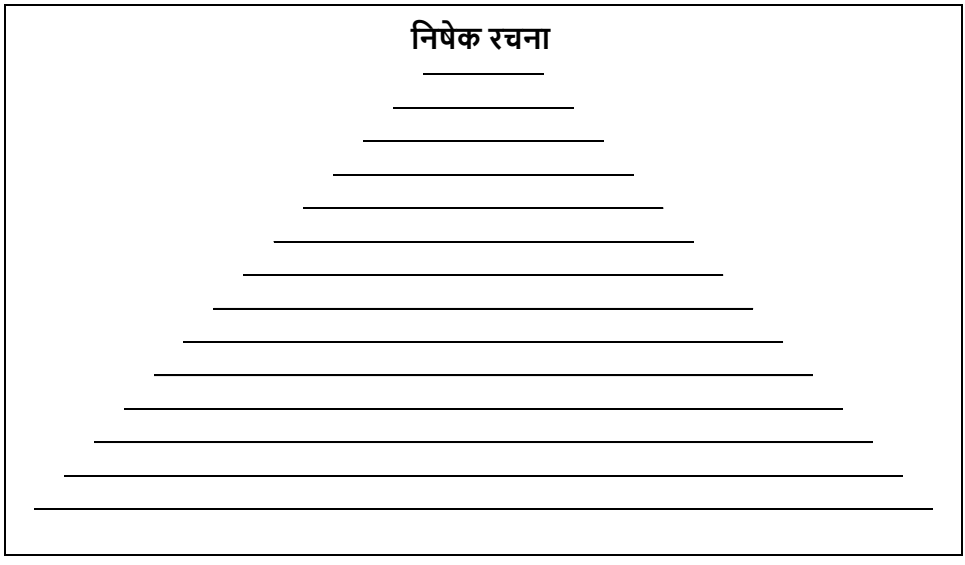

आगे देखते हैं। देखो, यह जैसे घटती हुयी पंक्तियां हैं तो यह क्या है ? हम देखते हैं, इसको निषेक रचना कहते हैं। आड़ी लाइन बतायी है इसको कहेंगे निषेक। निषेक किसको कहते हैं मालूम है ? परमाणुओं के समूह को। कैसे समूह हैं वे ?

जिनमें समान स्थिति पायी जाती है। नीचे का निषेक वर्तमान का निषेक है और ऊपर के निषेक भविष्य के निषेक हैं। सत्ता में जो कर्म पड़े हैं उन अनंत परमाणुओं में अपनी अलग-अलग स्थिति होती है। वर्तमान समय के पास कौनसे निषेक हैं और ऊपर कौनसे पड़े हैं ? हमेशा काल की बात नीचे से ऊपर समझायी जाती है। यह नीचे है वह वर्तमान है। अभी हम यहां सम्यक् प्रकृति ले रहे हैं और सम्यग्मिथ्यात्व को देख रहे हैं। उसकी अपनी-अपनी निषेक रचना होगी। उसका उदय नहीं है, उदय तो मिथ्यात्व का है। वह वर्तमान का निषेक मिथ्यात्वरूप से उदय में आयेगा, परंतु सत्ता में इतने सारे निषेक पड़े हैं। उद्वेलना होती है यानी क्या होता है ? तो ऊपर के पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण निषेक, उन सभी निषेकों में से पहले समय में थोड़े परमाणु मिथ्यात्वरूप संक्रमित हो जाते हैं, उद्वेलना होती हैं। दूसरे समय में और थोड़े, तीसरे समय में और थोड़े, चौथे समय में और थोड़े। एक अंतर्मुहूर्त में इतने सभी निषेकों का अभाव हो जायेगा, उद्वेलना हो जायेगी।

एक अंतर्मुहूर्त में कितने निषेक नष्ट हो गये ? पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण। एक बार एक अंतर्मुहूर्त में इतना हुआ, फिर दूसरे अंतर्मुहूर्त में ? अंतर्मुहूर्त का अर्थ हर बार ४८ मिनिट नहीं समझना, वह सेकंड या उससे भी बहुत छोटा अल्पकाल हो सकता है। इतने छोटे-छोटे काल में ये इतने सारे निषेक नष्ट हो रहे हैं, मिथ्यात्वरूप हो रहे हैं। एक कांडक हुआ, फिर दूसरा कांडक हुआ, फिर तीसरा कांडक हुआ, हर बार पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण निषेकों का नाश होकर मिथ्यात्वरूप परिणमन चलता रहता है। तो इनकी स्थिति घटेगी कि नहीं घटेगी ? *श्रोता: घटेगी।* और मिथ्यात्व की स्थिति ? जितना बंध है उतनी रहेगी। मिथ्यात्व का कम-अधिक बंध हो रहा है, उसकी स्थिति बहुत है और इन दोनों की स्थिति हर अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में घटती चली जाती है। घटते-घटते-घटते एक समय ऐसा आता है कि इनकी सत्ता पूरी नष्ट हो जाती है। घटते-घटते-घटते सागर तक स्थिति आ जायेगी उसके लिये कितना काल लगता है ? उसके लिये भी असंख्यात वर्ष लगते हैं। तब तक के काल को क्या कहेंगे ? वेदकयोग्य काल। उससे भी कम स्थिति होती जायेगी, तो उसके बाद उसे सम्यक्त्व होगा तो वह औपशमिक सम्यक्त्व ही होगा, इसलिये उसको उपशमयोग्य काल कहेंगे। पहला वेदकयोग्य काल था और बाद में उपशमयोग्य काल कहेंगे।

उद्वेलना होती है यानी क्या होता है ? कांडक के रूप में एक-एक अंतर्मुहूर्त में

एक-एक बड़ा कांडक अन्य प्रकृतिरूप होकर नष्ट होता है। एक कांडक में पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण निषेक होते हैं क्योंकि एक-एक समय में एक-एक निषेक पड़ा है। यदि एक-एक-एक-एक नष्ट होता तो कितना काल लगता ? अंतःकोड़ाकोड़ी सागर काल लगता, परंतु ऐसा नहीं होता है। असंख्यात वर्षों में ही - बहुत छोटे काल में, सागरों की अपेक्षा वह छोटा है; ये सभी प्रकृतियां उद्वेलित होकर नष्ट हो जाती हैं। *श्रोता: असंख्यात वर्ष भी छोटा है ?* असंख्यात वर्ष भी छोटा है क्योंकि असंख्यात में भी असंख्यात व्हेरिएशन्स हैं। *श्रोता: ये उद्वेलित होते हैं तो मिथ्यात्व के निषेक हो जाते हैं ?* मिथ्यात्व के निषेकों में टर्न हो जाते हैं, ट्रान्स्फर हो जाते हैं। *श्रोता: क्या उनकी स्थिति बढ़ सकती है ?* मिथ्यात्वरूप संक्रमित होकर उनका उत्कर्षण हो सकता है, वे ऊपर चढ़ सकते हैं - उनकी शक्तिस्थिति तक ही ऊपर जायेंगे। मिथ्यात्व की शक्तिस्थिति ७० कोड़ाकोड़ी सागर है। बंध के समय से लेकर इतने काल तक ही उनका उत्कर्षण होगा, संक्रमण में भी यही नियम है। हर बार उसको ऊपर संक्रमित कराओगे तो कोई भी कर्म सत्ता छोड़कर जायेगा नहीं, हर बार ऊपर ऊपर जाता रहेगा।

क्या हमारे पास अनादि का कर्म होगा ? हर बार उत्कर्षण किया, हर बार उत्कर्षण किया, क्या ऐसा हो सकता है ? इनकी बात छोड़ दो। हम किसी अन्य की बात करते हैं सामान्य से। मिथ्यात्व की बात करते हैं, अनादि मिथ्यादृष्टि है। उसने इतना कर्म एक समय में बांधा और सत्ता में पड़ा है। हमने सुना है कि कर्म का उत्कर्षण भी होता है, नये बंध के साथ ऊपर भी चढ़ता है। तो ऐसा होगा न इसके बंध के साथ ऊपर चढ़ा, नीचे आते-आते फिर और नया बंध होगा तो और ऊपर चढ़ा। तो ऐसे कर्म पड़े रहेंगे अनादि के हमारे साथ ? नहीं। जितनी उसकी स्थिति बंधी थी न, ७० कोड़ाकोड़ी, जब उतना काल बीत गया है तभी उसका उत्कर्षण नहीं हो सकता। बंधे हुये समय से लेकर ७० कोड़ाकोड़ी सागर तक ही मिथ्यात्व का कोई कर्म अपनी सत्ता में रह सकता है, उससे अधिक काल नहीं। वैसे कितने ही नष्ट हो जाते हैं, फिर भी यदि रहेगा तो उतना ही रहेगा। जब संक्रमण का प्रकरण आयेगा तब इसे हम याद करेंगे।

हमने देखा वेदकयोग्य काल किसको कहते हैं, उपशमयोग्य काल किसको कहते हैं और उद्वेलना होती है यानी क्या होता है, कांडक के रूप में वह नष्ट हो जाते हैं और मिथ्यात्वरूप संक्रमित हो जाते हैं। *श्रोता: नष्ट होते हैं यानी निर्जरा कहेंगे क्या ?*

इसको निर्जरा नहीं कहेंगे। ये मिथ्यात्वरूप संक्रमित हो गये हैं, मिथ्यात्व का उदय चल रहा है। *श्रोता: प्रदेश तो कायम रह जाते हैं ?* प्रदेश कायम हैं, प्रदेश जो सम्यग्मिथ्यात्व या सम्यक् प्रकृतिरूप थे वे ही प्रदेश यानी वे ही कर्म परमाणु अभी मिथ्यात्व कहलायेंगे। उनका अनुभाग बढ़ गया है, संक्रमित हुये यानी क्या हुआ ? मिथ्यात्व का अनुभाग घटकर ये प्रकृतियां तैयार हुयी थी, उनका अनुभाग वापस मिथ्यात्व जैसा हो गया। नया बंध भी हो रहा है और वहां मिथ्यात्व प्रकृति पड़ी है, उसरूप उसकी उद्वेलना होती है। इसको कहते हैं उद्वेलना होती है, बात ख्याल में आयी ?

अन्य भी प्रकृतियों की उद्वेलना होती रहती है, वे कौनसी प्रकृतियां हैं वह आगे ६१६ टीका में देखते हैं - **तेजस्कायिक और वायुकायिक के उद्वेलन प्रकृतियों को कहते हैं।** अभी तक हमने कौन-कौनसी देखी ? नामकर्म की आहारकद्विक देखी, देवद्विक देखी और नरकचतुष्क देखी। वेदकयोग्य और उपशमयोग्य काल समझाने के लिये हमने सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व की भी बात यहां उठायी। अब आगे बढ़ते हैं। **तेजस्कायिक, वायुकायिक में** इन दो प्रकार के जीवों की विशेषता है, वे ही जीव उच्चगोत्र और मनुष्यद्विक की उद्वेलना करते हैं, यहां मनुष्यद्विक की बात देखी। **तेजस्कायिक, वायुकायिक में मनुष्यद्विक और उच्चगोत्र ये तीन प्रकृतियां उद्वेलनरूप होती हैं।** अन्य किसी पर्यायवाले जीव इनकी उद्वेलना नहीं करते हैं। परंतु जिन्होंने उद्वेलना की है वे मरकर तिर्यंचों में ही उत्पन्न होते हैं; एकेन्द्रिय से लेकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तक कहीं पर भी, मनुष्य में नहीं आते। जिन्होंने इनकी उद्वेलना की है वे जीव संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न होते हैं, तब हम कहेंगे तिर्यंचों में संज्ञी पंचेन्द्रियों में भी इतनी कम सत्ता पायी जाती है।

जिस अग्निकायिक यानी तेजस्कायिक ने या वायुकायिक ने, कितनी सत्ता की ? हमने यहां देखी थी न ? ८२ की कर दी। ऐसा जीव मरकर संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच में उत्पन्न हुआ और जब तक वह मनुष्यगति आदि का बंध नहीं करेगा, तो उसकी सत्ता में ८२ का सत्त्व बना रहेगा कुछ काल तक। बाद में मनुष्यगति बांधेगा तो उसके फिर उसकी सत्ता आ जायेगी। मनुष्य में तो ये ८२ का सत्त्व नहीं हो सकता क्योंकि वे ८२ के सत्त्व सहित मनुष्य में कोई उत्पन्न ही नहीं होगा क्योंकि उसने उस गति की उद्वेलना की थी। आगे बढ़ेंगे, देखो **ये तीन प्रकृतियां उद्वेलनरूप होती हैं। उस उद्वेलना करने के काल का प्रमाण** कितने काल में उद्वेलना होती है ? **जघन्य या उत्कृष्ट पल्य**

के असंख्यातवें भागप्रमाण जानना। हर जगह पल्य के असंख्यातवें भाग लिखा है, परंतु वह भी यथायोग्य छोटा-बड़ा हो सकता है। **इतने काल द्वारा उनके सर्व स्थिति के निषेकों को उद्वेलनारूप करते हैं।** यानी सत्ता में उन प्रकृतियों के जितने निषेक पड़े हैं उन सबको नष्ट कर देता है।

अब वही आगे की गाथा ६१७ में बतायेंगे। **पहले जो बंधी थी ऐसी सत्तारूप स्थिति में से**, पहले जो बंधी थी यह हम मनुष्यद्विक पर लगायेंगे। **पहले जो बंधी सत्तारूप स्थिति में से पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण स्थिति को**, जो हमने ऊपर दिखाया है। पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण स्थिति को **एक अंतर्मुहूर्त काल में उद्वेलना करते हैं।** पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण निषेकों की उद्वेलना करने के लिये एक अंतर्मुहूर्त लगता है तो कहते हैं संख्यात सागर, यह अंतःकोड़ाकोड़ी हो या अनेक कोड़ाकोड़ी सागर हो; उसको क्या कहेंगे ? संख्यात सागर। संख्यात यानी दो-चार ऐसा अर्थ मत समझना, जिसको हम कहेंगे न काउंटेबल फिगर। यह कोड़ाकोड़ी कहो या उससे भी आगे चले जाओ - नील, पद्म जो कुछ भी कहना हो, वे सारे कैसे हैं ? संख्यात हैं। जैसे हम पूर्व वगैरह देखते हैं न, तो ये सब संख्यात वर्ष हैं। यहां क्या कहते हैं ? **संख्यात सागर प्रमाण मनुष्यद्विकादि की सत्तारूप स्थिति को** यह सत्ता में कितनी स्थिति पड़ी है मनुष्यद्विक यानी मनुष्यगति, मनुष्यगत्यानुपूर्वी की ? अनेक सागरों की स्थिति पड़ी है, कोड़ाकोड़ी सागरों की स्थिति पड़ी है। अब उसकी उद्वेलना करेगा।

श्रोता: मनुष्यगति से अन्य गति का बंध चल रहा है। वह मरकर तेजस्कायिक, वायुकायिक में आ गया, उसकी स्थिति बता रही है कि अंतर्मुहूर्त में उद्वेलना कर लेता है, ऐसा है ? अंतर्मुहूर्त में इतने की ही उद्वेलना करता है। अंतर्मुहूर्त में पूरी उद्वेलना नहीं करता, पूरी उद्वेलना करने के लिये पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण काल लगेगा। यानी इतने लंबे काल तक इन्हीं पर्यायों में घूम रहा है ऐसा अर्थ हुआ न ! *श्रोता: वह निकल नहीं सकता वहां से ?* निकलेगा तो उद्वेलना नहीं करेगा, फिर बांधेगा। उद्वेलना पूरी ही नहीं होगी। यदि निकलेगा तो उसका अर्थ है उद्वेलना पूरी नहीं हुयी है। फिर दुबारा बांधेगा न अन्य पर्यायों में जाकर। मनुष्यगति की उद्वेलना शुरू की किसीने और स्थिति थोड़ी ही उसने कट की; इतनी ही कम हुयी और बाकी सब पड़ी है। ऐसा जीव अग्निकायिक में से अन्य तिर्यंच में चला जायेगा, अन्य तिर्यंच यानी एकेन्द्रिय से लेकर

पंचेन्द्रिय तक तिर्यंच में कहीं पर जायेगा क्योंकि अग्निकायिक है तो मनुष्य में नहीं आ सकता। वहां जाकर फिर वह मनुष्यगति भी बांधेगा, मनुष्यायु भी बंधेगा और मनुष्य में भी चला जायेगा। उसकी उद्वेलना शुरू की थी परंतु पूरी ही नहीं हुयी।

यदि लंबे काल तक लगातार अग्निकायिक-वायुकायिक मरकर अग्निकायिक-वायुकायिक होता रहा तो ही उद्वेलना पूरी हो सकती है। कभी अग्निकायिक, कभी वायुकायिक इसमें ही रहा तो ही यह उद्वेलना पूरी होगी क्योंकि उसके लिये काल भी कितना लगेगा ? असंख्यात वर्ष लगेंगे। उन असंख्यात वर्षों तक उन्हीं दो पर्यायों में जन्म-मरण करता रहेगा, तो ही इनकी उद्वेलना पूरी हो सकती है; शुरू तो हुयी थी। यही गणित बता रहे हैं, त्रैराशिक बता रहे हैं। प्रश्न है ? *श्रोता: एक कांडक है उसका प्रमाण कितना है ?* पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण निषेकों का एक कांडक होता है। उतनी स्थिति अंतर्मुहूर्त में कट करता है यानी इतनी स्थिति कम करने के लिये एक अंतर्मुहूर्त लगता है तो सागरों की, अनेक सागरों की स्थिति कम करने के लिये कितना काल लगेगा ? यहां त्रैराशिक है, इसको त्रैराशिक कहते हैं। देखो फिर पढ़ेंगे।

श्रोता: वह जीव वहां पर इतना पुण्य बांध लेता है क्या ? पुण्य कहां ? यह तो पापी जीव है। इतना पाप है कि मनुष्यगति जैसी प्रकृति की भी उद्वेलना कर रहा है। स्थिति का कांडकघात नहीं हो रहा है, यह स्थिति के उद्वेलनाकांडक हो रहे हैं। उद्वेलनाकांडक उद्वेलना के द्वारा नष्ट कर रहा है। मनुष्यगति कौनसी प्रकृति है ? शुभ प्रकृति है कि अशुभ प्रकृति है ? अग्निकायिक और वायुकायिक के परिणाम ऐसे हैं कि यह प्रशस्त प्रकृति को नष्ट कर रहा है। इसको स्थितिकांडकघात नहीं कह रहे हैं। स्थितिकांडकघात अलग बात है, यह उद्वेलनाकांडक चल रहा है। मात्र मनुष्यगतिद्विक के जो कर्म पड़े हैं, प्रकृति हैं मात्र उन पर असर हो रहा है। जब स्थितिकांडकघात होते हैं तो सभी प्रकृतियों में होते हैं, यह स्थितिकांडकघात नहीं चल रहा है।

अब हम त्रैराशिक पढ़ लेते हैं ५९० पृष्ठ, नीचे का पॅरेग्राफ। **पहले जो बंधी थी ऐसी सत्तारूप स्थिति में से** अभी यहां मनुष्यद्विक की बात चल रही है, **पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण स्थिति की एक अंतर्मुहूर्त काल में उद्वेलना करते हैं।** यह उद्वेलना का कांडक है। उतने कांडकप्रमाण निषेक जो मनुष्यगतिरूप से थे, वे परमाणु जीव को छोड़कर चले नहीं गये। अभी वे तिर्यंचगतिरूप से हो जायेंगे वहां

पर। **तो संख्यात सागर प्रमाण** संख्यात सागर यानी अनेक कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण **मनुष्यद्विकादि की**; मनुष्यद्विकादि यानी मनुष्यद्विक और उच्चगोत्र की बात चल रही है यहां पर; **सत्तारूप स्थिति को कितने काल में उद्वेलना करेगा ?** सिम्पल त्रैराशिक है। पल्य के असंख्यातवें भाग प्रमाण स्थिति की उद्वेलना करने के लिये एक अंतर्मुहूर्त लगता है, तो संख्यात सागरों की उद्वेलना करने के लिये कितना काल लगेगा ? **यह प्रश्न होने पर उसका उत्तर है कि पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण काल में उस सर्वस्थिति की उद्वेलना करते हैं।** अब इसी बात को फिर दुबारा बता रहे हैं।

इस स्थिति के अग्रतन भाग में, यह अग्रतन भाग यानी लास्टवाला, अंतिम, ऊपर का - इसको अग्र कहेंगे; **पल्य के अर्धच्छेदों के असंख्यातवें भागप्रमाण कांडक अधोगलनरूप अंतर्मुहूर्त से अधिक** अभी यह कुछ गणित, जब यह कांडक होता है, अभी इसको पढ़ा है तो इसका अर्थ समझाना है आपको। यह कांडक होता है, तो एक समय में कांडकप्रमाण सर्व निषेकों में से इतने परमाणु उद्वेलित हो गये यानी अन्य प्रकृतिरूप हो गये। फिर दूसरे समय में और थोड़े, तीसरे समय में और थोड़े, चौथे समय में और थोड़े तो फिर बाद में पूरे कांडक की उद्वेलना पूरी हो गयी। इसके लिये अंतर्मुहूर्त लगता है। एक समय में जितने परमाणुओं की उद्वेलना हुयी उसको कहेंगे एक फाली हुयी। जैसे हम क्या कहते हैं, ऐसे कोई टुकड़ा करना है तो टुकड़ा निकाला, फिर दूसरा निकाला, फिर तीसरा निकाला फिर चौथा निकाला। ऐसे ये उद्वेलना इतने सारे परमाणुओं की या निषेकों की उद्वेलना होनेवाली है। उस कांडक के सब निषेकों में से थोड़ा-थोड़ा निकाला। जब यह उद्वेलना हो रही है, कितने समय लगे ? अंतर्मुहूर्त। हम मान लेते हैं १०० समय लगे तो उतने १०० समय ये नीचे गल गये कि नहीं ? इसमें से इसकी स्थिति भी १०० समय से घट गयी है। यही बात करते हैं यहां पर, अधोगलना द्वारा अंतर्मुहूर्त जो बीत गया है वह भी उसीमें मिला देंगे।

यह ब्रॅकेट में लिखा है **यहां कांडकरूप उद्वेलना के लिये एक अंतर्मुहूर्त काल लगता है, उतने काल में प्रति समय एक- एक निषेक अधोगलना** अधोगलना का अर्थ है सत्ता में है, वर्तमान समय तक जो पहुंचा है। अधोगलन होता है यानी इसका भले उदय नहीं है, उस समय अग्निकायिक, वायुकायिक के कौनसी गति का उदय चल रहा है ? तिर्यंचगति का। यह एक निषेक तिर्यंचगतिरूप होकर उदय में

आता है। हमारे अभी मनुष्यगति का उदय चल रहा है और हमारी सत्ता में नरकगति, देवगति, तिर्यंचगति सभी के परमाणु पड़े हैं और जो निषेक उदय के समय तक पहुंचते हैं, तो उदय के समयवाले अन्य गति के निषेक एक समय के लिये मनुष्यगतिरूप होकर उदय में आते हैं। बस एक-एक समय का एक-एक निषेक उसरूप होता है उसको उद्वेलना नहीं कहते। उसको टर्न होकर एक समय का उदय में आना उसको कहेंगे थिउक्क संक्रमण। थिउक्क संक्रमण या उसको थिबक भी कहेंगे। यह आपका ड्रिप इरिगेशन कि ड्रॉप इरिगेशन क्या होता है ? ड्रिप ड्रिप आता है न ! वैसे इसका थिउक्क संक्रमण। एक निषेक उदयरूप प्रकृति में ट्रान्सफर होकर उदय में आयेगा। हमारी सत्ता में सभी गतियों के परमाणु पड़े हैं और हमारा मनुष्यगति का उदय चल रहा है तो बीच में तिर्यंचगति का उदय आयेगा कि नहीं ? उसकी स्थिति पूरी हुयी है तो सत्ता में नहीं रहेगा, छोड़कर चला जायेगा। मनुष्यगति में ट्रान्सफर होकर मनुष्यगतिरूप से उदय आयेगा। उसका तिर्यंचगतिरूप कुछ कार्य नहीं होगा।

लोग पूछते हैं ऐसा संक्रमण होकर उदय में आता है तो जीव नारकी जैसा, तिर्यंच जैसा बिहेव करता है ? ऐसा कुछ नहीं होता, यह सब गप-झूठ है। इसे कितना काल लगता है ? अंतर्मुहूर्त तो पूरी स्थिति घटने के लिये कितना काल लगेगा ? तो कहते हैं पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण काल लगेगा। एक अंतर्मुहूर्त, एक अंतर्मुहूर्त, एक अंतर्मुहूर्त, एक अंतर्मुहूर्त। *श्रोता: जब आपने कहा ऊपर के जो निषेक हैं उनका उद्वेलन होता है, उदयावली में तो आते ही नहीं ?* उदयावली में आते ही नहीं। उदयावली में आ मिलते हैं उसको उदीरणा कहते हैं, यहां उद्वेलना चल रही है। उदीरणा उसीकी होती है जिसका उदय है। अब अग्निकायिक है, उसको तिर्यंचगति का उदय चल रहा है और मनुष्यगतिद्विक संक्रमित हो रहे हैं, नष्ट हो रहे हैं, अपनेरूप से नहीं रहे। उनकी उदीरणा, अपकर्षण वह कुछ मत सोचो, बस अन्यरूप हो रहे हैं। उदय नहीं है उनका, ना ही उदयावली में आ रहे हैं। यह नीचे बताया है हमने, पहले स्थिति बांधी वह क्रम से नीचे-नीचे आयेंगे, परंतु इनका उदय नहीं हो रहा है। उदयवाला निषेक तिर्यंचगतिरूप से उदय में आ रहा है। *श्रोता: विग्रहगति के पहले समय से ही वायुकायिक और उनका संक्रमण शुरू हो जायेगा ?* नहीं, यथायोग्य समय पर हो जायेगा क्योंकि वहां आते ही इमीजिएट्लि शुरू होगा यह बात नहीं है। हां, अभी पहले समय से शुरू किया तो भी कांडक पूरा होने के लिये अंतर्मुहूर्त तो लगेगा ही

लगेगा। यथायोग्य समय पर यानी इतने असंख्यात वर्षों में कांडकरूप से उद्वेलना होते-होते इतने सारे निषेक अन्यरूप हो जाते हैं इतनी बात है।

अभी हम गणित को छोड़ देते हैं, लास्ट दो लाइन पढ़ना है- **यहां अंतर्मुहूर्त में जितनी स्थिति के निषेक उद्वेलनारूप किये**, उदीरणारूप किये नहीं कहा, उद्वेलनारूप किये; **उसीका नाम कांडक जानना।** कांडक यानी टुकड़ा, इतना टुकड़ा नष्ट कर दिया। सत्ता में से नहीं गया है, सत्ता में अन्य प्रकृतिरूप हो गया है। सत्ता में से परमाणु गये नहीं है, सत्ता में से वह प्रकृति नाश हुयी है ऐसा कहेंगे पर उस प्रकृति के परमाणु अन्य प्रकृतिरूप होकर, तिर्यंचगतिरूप होकर सत्ता में पड़े हैं, नष्ट नहीं हुये हैं। कोई भी बंधा हुआ कर्म उदय में आकर खिरे बिना नष्ट होता ही नहीं। क्या कहा ? आप कहेंगे हमने देखा है अविपाकनिर्जरा होती है, बिना फल दिये नष्ट हो जाता है। हां ! हमने क्या कहा ? उदय में आये बिना नष्ट नहीं होता। अब वह अपनेरूप से उदय में आवे, अन्यरूप होकर उदय में आवे, अनुभाग घटकर उदय में आवे वह बात अलग है। उदय में तो आयेगा ही आयेगा, वर्तमान समय में आकर, खिरकर ही नष्ट हो जायेगा यह नियम है। अब जिसका अनुभाग मिनिमम होकर उदय में आयेगा, उसका फल वैसा नहीं मिलेगा या टर्न होकर उदय में आयेगा तो हम कहेंगे इसका उसको फल नहीं मिल रहा है।

जैसे मिथ्यात्व इतना सारा बांधा, अब वह सम्यग्दृष्टि हुआ है। उपशम सम्यक्त्व का काल तो अंतर्मुहूर्त है, बाद में वह वेदक सम्यग्दृष्टि हुआ, तो वह मिथ्यात्व का क्या हो रहा है ? वह सम्यक् प्रकृतिरूप होकर उदय में आकर चला जा रहा है। हर समय सम्यक् प्रकृति का उदय हो रहा है तो हर समय मिथ्यात्व के परमाणु ट्रान्स्फर होते ही रहते हैं, उनका संक्रमण चलता ही रहता है। सम्यग्दृष्टि को मिथ्यात्व में से सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक् प्रकृति तैयार होती है। वही जीव मिथ्यात्व में जाता है तो उद्वेलना होती है, उलटा संक्रमण होता है। *श्रोता: स्टॉक कितना कम होगा ?* स्टॉक कम हो जायेगा, सम्यग्दृष्टि हो जायेगा तो स्टॉक कम हो जायेगा। *श्रोता: नहीं, उद्वेलना में स्टॉक कितना कम होगा ?* उद्वेलना में उसका कम हो रहा है न ! उद्वेलना में ऊपर के निषेक नष्ट हो रहे हैं, वे अन्य प्रकृतिरूप हो रहे हैं। उसका स्टॉक कम हो रहा है। जो मनुष्यगति की उद्वेलना हो रही है, तो कुछ काल के बाद मनुष्यगति के परमाणु अपने

रूप से नष्ट हो जायेंगे। वे पूरे तिर्यंचगतिरूप से हो जायेंगे। *श्रोता: फिर से तो बंधेगी ?* बंधेगी तो सत्ता आयेगी, वापस वह तिर्यंचगति में से मनुष्यगतिरूप ऐसे ही नहीं हो जायेंगे। नयी बंधेगी तो उसकी सत्ता फिर तैयार होगी, तब तक उसकी सत्ता नहीं है, तब तक हम कहेंगे उद्वेलना हो चुकी। हो सकता है अभी उद्वेलना पूरी नहीं हुयी, अन्य पर्याय में चले गये, अन्य एकेन्द्रियादि में उत्पन्न होकर मनुष्यगति का फिर बंध किया। फिर उसकी सत्ता हो गयी। यह तो चलता ही रहता है ऐसा।

आगे इंटरेस्टिंग विषय है, क्या कहते हैं ? **सम्यक्त्व की विराधना कितनी बार होती है वह कहते हैं।** मैंने यह बात लिखी थी पंचलब्धि या करणानुयोग में, कितनी बार जीव मिथ्यात्व में आ सकता है तो कितने ही लोगों ने पूछा तो क्या फायदा ? सम्यग्दर्शन होने के बाद फिर मिथ्यात्व में आना पड़ता है ? आना कहां पड़ता है ? वह परिणाम ऐसे करता है तो मिथ्यात्व में चला जाता है। कोई कर्म इसको जबरदस्ती मिथ्यात्व में नहीं ले जाता। मैंने बहुत बार कहा है सभी कर्मों की सत्ता पड़ी है, जीव जिसरूप परिणमता है उसका उदय कहलायेगा। सभी कर्म वहां पड़े हैं। जैसे हम सिद्धान्त प्रवेशिका सीखते हैं न, धर्मद्रव्य किसको कहते हैं ? स्वयं गमन करनेवाले जीव और पुद्गल को गति करने में, गमन करने में जो निमित्त होता है और अधर्मद्रव्य ? स्वयं गतिपूर्वक स्थिर होने में। इस पूरे लोकाकाश में धर्मद्रव्य है और अधर्मद्रव्य भी है तो धर्मद्रव्य चलाता होगा और अधर्मद्रव्य रुकाता होगा ? किसको निमित्त है ? दोनों एक-एक टांग खीचेंगे, अधर्मद्रव्य कहता है मुझे रुकाना है, धर्मद्रव्य बोले नहीं मुझे चलाना है। तो ऐसा होगा कि धर्मद्रव्य का उदय हुआ इसलिये जीव चलने लगा ? उदय होता है कि क्या होता है ? अरे ! वे दोनों अनादिअनंत पड़े हैं वहां पर। जो चलेगा उसको धर्मद्रव्य का निमित्त कहेंगे, चलते हुये रुकेगा उसको अधर्म का निमित्त कहेंगे।

यहां सत्ता की बात हम पढ़ रहे हैं, सत्ता में सभी कर्म पड़े हैं और जो उदय में नहीं हैं वे कर्म भी यहां एक समय ऊपर पड़े रहते हैं। जीव भाव करेगा तो वे अपनेरूप से उदय में आयेंगे। जब जीव सम्यग्दृष्टि है तो उसके मिथ्यात्व के परमाणु सम्यक् प्रकृतिरूप होकर उदय में आ रहे हैं। जीव उसी समय मिथ्यात्व करेगा तो सम्यक् प्रकृति के परमाणु मिथ्यात्वरूप से उदय में आयेंगे। सब स्टॉक वहीं पड़ा है; वहां क्रोध के भी है, मान के भी है, माया के भी है, लोभ के भी सभी परमाणु अपनी-अपनी निषेक रचना में स्थित हैं। तो जीव को क्रोध क्यों होता है ? वह करता है इसलिये होता है।

क्रोध करता है तो हम कहेंगे क्रोध का उदय हुआ। मान, माया, लोभ वे सभी उसरूप से होकर उदय में आयेंगे, क्रोधरूप से उनका उदय मिलेगा। एक समय के लिये सब टर्न होकर उदय में आयेंगे। सभी का स्टॉक पड़ा है अपने पास ! जो चाहो उसका उदय कराओ, बटन दबाओ। बटन हम दबाते हैं न ! अभी तक हम ऐसा ही समझते हैं क्या करें ! उसका उदय आता है इसलिये हमें रोना पड़ता है, उसका उदय आता है तो हमको हंसना पड़ता है, ऐसा नहीं है। वह केवल बतानेवाला है। बाहर बॅरोमीटर लगाते हैं; यहां पर मई महीने में आये थे न तो टेम्परेचर बहुत बढ़ गया था। कितना हुआ था ? ४३ हुआ था ? तो वहां उसने ४३ बताया। उसमें ४३ आया इसलिये बाहर गर्मी हो रही थी कि नहीं ? यह तो बतानेवाला है। कर्म का उदय तो हमारे परिणामों को बताता है, ज्ञापक है, वह कुछ करनेवाला-कंट्रोलर नहीं है। हम स्वयं अपनी मूर्खता से कभी क्रोध, मान, माया, लोभ या मिथ्यात्वरूप परिणमते हैं तो वहां तो वह हाजिर है। वह कहता है हम तो हाजिर है, हम क्या करें। आपने हमको बुलाया, हम उदय में आ गये !

अब कहते हैं सम्यक्त्व की विराधना कितनी बार होती है ? हमें पूछा था कि सम्यक्त्व प्राप्त करने के बाद भी कोई मिथ्यात्व में आता है तो कितनी बार आता है ? वह हम गाथा ६१८ की टीका में देखेंगे- प्रथमोपशम सम्यक्त्व; प्रथमोपशम सम्यक्त्व उसे कहते हैं जब मिथ्यात्व गुणस्थान में से कोई जीव अनंतानुबंधी और दर्शनमोहनीय की उपशमना करके, उनको उपशमित करके सम्यक्त्व प्राप्त करता है। वह भले चौथे गुणस्थान में जाता है, कोई पांचवें गुणस्थान में, कोई सातवें गुणस्थान में तो उसको कहते हैं प्रथमोपशम सम्यक्त्व। कोई मिथ्यात्व में गया और असंख्यात वर्षों के बाद सम्यक् प्रकृति और सम्यग्मिथ्यात्व की उद्वेलना करके फिर दुबारा उपशम सम्यक्त्व प्राप्त करेगा तब उसको क्या कहेंगे ? प्रथमोपशम ही कहेंगे, द्वितीयोपशम नहीं कहेंगे, ख्याल में आयी बात ? दूसरी बार किया इसलिये द्वितीयोपशम नहीं।

ऐसा एक बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने के बाद दूसरा प्रथमोपशम होने के बीचवाला मिनिमम अंतर; मॅक्झिमम नहीं, मिनिमम अंतर पल्य के असंख्यातवें भाग है क्योंकि बीच में वेदककाल है, उसमें सम्यक्त्व होगा तो वेदक सम्यक्त्व होगा। परंतु एक बार प्रथमोपशम होकर छूट जाये और दूसरी बार प्रथमोपशम हो, तो बीच में मिनिमम पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण काल जाता है। मॅक्झिमम काल कितना होगा

बोलो ? अर्धपुद्गलपरावर्तन काल जो अनंत-अनंत-अनंतकाल है। एक बार सम्यक्त्व होकर छूटा, मिथ्यात्व में चला गया अर्धपुद्गलपरावर्तन काल अनंत-अनंत-अनंत अवसर्पिणी और उत्सर्पिणी चली जाये इतना लंबा काल है तब तक उसने सम्यक्त्व प्राप्त ही नहीं किया, मिथ्यात्व में ही रहा। फिर जाकर जब सम्यक्त्व प्राप्त करेगा, उसको इतने लंबे काल के बाद प्रथमोपशम ही होगा। फिर सम्यक्त्व प्राप्त करेगा, संयम प्राप्त करेगा, मोक्ष भी प्राप्त करेगा; एक बार सम्यक्त्व होने के बाद कोई भी जीव अर्धपुद्गलपरावर्तन से अधिक काल तक संसार में नहीं रहता यह गॅरंटी है। तो ऐसा करेंगे न, एक बार सम्यक्त्व प्राप्त करके छोड़ देंगे, फिर संसार की मजा ले लेंगे। *श्रोता: सम्यक्त्व होता भी उसीको ही है ?* किसको ? *श्रोता: जिसका अर्धपुद्गलपरावर्तन काल बाकी है ?* हां, वह पहली बार जिसको होता है उसकी बात है और जरूरी नहीं है कि इतना लंबा काल बाकी है तभी होगा। ऐसा भी कोई जीव है, अभी तक अनादि से सम्यक्त्व प्राप्त नहीं किया है और मनुष्य में आया है और दस साल में मोक्ष जाना है, तो वहां उसको सम्यक्त्व हुआ। हो सकता है या नहीं हो सकता ? हो सकता है; सम्यक्त्व प्राप्त करेगा, मुनि अवस्था प्राप्त करेगा फिर सब कुछ हो जायेगा उतने काल में।

देखो हम यहां देखते हैं कितनी बार ऐसा हो सकता है। प्रथमोपशम सम्यक्त्व एक बार होकर छूटा, दूसरी बार होकर छूटा, तो कहते हैं दो उपशम सम्यक्त्व होने के बीच में, उपशम यानी कौनसा ? प्रथमोपशम की बात है, द्वितीयोपशम नहीं कह रहे हैं। द्वितीयोपशम सम्यक्त्व तो उपशमश्रेणी के पूर्व में होता है और वे नीचे आ जायेंगे, दुबारा उपशमश्रेणी मांड़नी है तो दुबारा द्वितीयोपशम करेंगे तो अंतर्मुहूर्त में कर सकते हैं। परंतु यहां बात प्रथमोपशम की हो रही है और दो प्रथमोपशम के बीच कितना काल है ? असंख्यात वर्षों का काल है। हमने नाटक समयसार में पढ़ा है 'कोई उपशमी और कोई क्षयोपशमी, छिन में आग में और छिन में पानी में।' यह आधार देकर कहते हैं देखो उपशम सम्यक्त्व क्षण-क्षण में अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में होता है कि नहीं ? बिलकुल नहीं होता, वहां कुछ अन्य बात कहनी है। वह करणानुयोग का ग्रंथ है ही नहीं तो उसको हम आधार नहीं बना सकते। हमारे पास करणानुयोग के बहुत सारे ग्रंथ हैं; धवला है, जयधवला है, ये सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका कहो, ये अन्य सभी जो टीकायें हैं, बहुत सारे ग्रंथ उपलब्ध हैं।

लोग पूछते हैं कहां लिखा है ? अरे पेज-पेज पर लिखा है, कहां नहीं लिखा है ?

हम कहीं जाते हैं न तो बोलते हैं आधार बताओ। हमने बोला ग्रंथ लाओ हम बताते हैं। आप ग्रंथ लाओ, हम खुद आपको ढूंढ़कर बताते हैं। हमारे पास ग्रंथ नहीं है, तो आधार क्यों पूछ रहे हो ? आगम का आधार जब पूछते हो तो आपके पास आगम तो होने चाहिये न ! ऐसे ही सुनी हुयी कुछ बातें हम मन में रखते हैं और फिर उसीको सच मान लेते हैं - वह करणानुयोग का आधार नहीं है। दो उपशम सम्यक्त्व के बीच में जो अंतर है; अंतर प्ररूपणा यानी एक सम्यक्त्व के बाद दूसरे सम्यक्त्व में कितना अंतर हो सकता है; एक गुणस्थान में आया फिर छोड़ दिया, फिर उस गुणस्थान में आने के लिये कम से कम अंतर और अधिक से अधिक अंतर कितना हो सकता है इसको अंतर प्ररूपणा कहते हैं। उसके ऊपर धवला की एक पुस्तक है। हमें मालूम ही नहीं न !

श्रोता: एक बार औपशमिक सम्यक्त्व किया तो वेदक सम्यक्त्व अंतर्मुहूर्त में कर सकता है ? वेदक सम्यक्त्व अंतर्मुहूर्त में कर सकता है। वेदक सम्यक्त्व छूटकर भी दुबारा अंतर्मुहूर्त में कर सकता है, उसकी ना नहीं है। दो प्रथमोपशम के बीच की बात चल रही है; द्वितीयोपशम भी नहीं कहा, द्वितीयोपशम दुबारा अंतर्मुहूर्त में हो सकता है। यहां प्रथमोपशम की बात चल रही है। देखो, **प्रथमोपशम सम्यक्त्व** वह कितनी बार होकर छूट सकता है ? **वेदक सम्यक्त्व, देशसंयत** यानी पांचवां गुणस्थान किसीने प्राप्त किया, फिर छूट गया, कालांतर से फिर दुबारा कभी प्राप्त किया **और अनंतानुबंधी की विसंयोजना का विधान** विसंयोजना समझते हैं न ? हमने बहुत बार कहा था, सम्यग्दृष्टि जीव जब तीन करण मांड़ता है, उसके अत्यंत शुद्धोपयोग के परिणाम हैं, विशुद्ध परिणाम हैं, उस काल में अनंतानुबंधी की सत्ता नष्ट होकर अन्य तीनरूप हो जाती हैं, नोकषायरूप भी हो जाती हैं। सत्ता में से नष्ट होती है उसको कहते हैं अनंतानुबंधी की विसंयोजना होना।

परंतु यदि वह जीव मिथ्यात्व में चला जाता है, तो दुबारा अनंतानुबंधी का बंध भी करता है और उसकी सत्ता भी हो जाती है। तो विसंयोजना अनेक बार कर सकता है कि नहीं कर सकता ? एक बार मिथ्यात्व में गया, विसंयोजना की फिर संयोजना हुयी, फिर अनंतानुबंधी की सत्ता हो गयी। फिर कभी सम्यग्दृष्टि हुआ, फिर उसके विशुद्ध परिणाम हुये, फिर विसंयोजना की। ऐसे अधिक से अधिक कितनी बार करता है ? इन चार को, कौन-कौनसे लिये ? **प्रथमोपशम सम्यक्त्व, वेदक सम्यक्त्व,**

देशसंयतपना और अनंतानुबंधी की विसंयोजना, इन चार को जीव उत्कृष्टपने से यानी अधिक से अधिक बार करें तो पल्य के असंख्यातवें भाग के जितने समय हो उतनी बार छोड़कर ग्रहण करता है। अरे, एक आवली में जघन्य युक्तासंख्यात समय होते हैं और ऐसी संख्यात हजार कोड़ाकोड़ी आवली एक सेकंड में होती हैं और ऐसे ६० सेकंड का एक मिनट होगा। ऐसे कितने सेकंड होंगे एक वर्ष में ? यहां पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण वर्ष हैं और उसके समय कितने होंगे ? उसको हम इमॅजिन भी नहीं कर सकते इतनी बार सम्यक्त्व होकर छूट सकता है ! वह भी प्रथमोपशम। दो प्रथमोपशम सम्यक्त्व के बीच में जो पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण अंतर है क्योंकि यह पूरा अंतर अर्धपुद्गलपरावर्तन जो है न, कोई जीव उसके बीच में इतनी बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व प्राप्त कर सकता है। भाग्यशाली ! वह कहेगा न मैंने इतनी बार किया सम्यक्त्व ! उसका भी रेकॉर्ड होगा कि नहीं होगा, नहीं होता क्या ?

देखो, हमने एक बार सम्यक्त्व प्राप्त किया, कोई कहे हमने दो बार किया, कोई कहे हमने पल्य के असंख्यातवें भाग बार किया। तो वह ज्यादा एक्स्पीरिअन्स्ड है न, एकदम। तो क्या कहते हैं ? इतनी बार, पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण जितने समय उतनी बार छोड़कर ग्रहण करता है। यानी सम्यक्त्व वापस छोड़ा है तभी तो दुबारा होगा न। एक बार हो चुका है और सम्यग्दृष्टि ही रहा तो हम कैसे कहेंगे दुबारा हुआ ? दुबारा होने के लिये उसको फिर मिथ्यात्व में जाना पड़ेगा। *श्रोता: जिनकी पल्यों में आयु है और सागरों की आयु है उनके लिये सिद्धान्त का क्या ?* अरे वह चारों गति की अपेक्षा सिद्धान्त है। वह जरूरी नहीं कि उसी भव में रहे, यह कोई थोड़े ही जरूरी है ! हो सकता है; जहां सागरों की आयु है, अनेकों बार वह सम्यक्त्व से मिथ्यात्व में जा सकता है उसकी ना नहीं है। करोड़ पूर्व में कहां होता है ? एक करोड़ पूर्व में पल्य का असंख्यातवां भाग भी घटित नहीं होता, दो बार उपशम सम्यक्त्व भी नहीं करेगा। एक बार प्रथमोपशम करेगा, बाद में उसके वेदककाल चलेगा और वेदककाल में अनेक बार वेदक सम्यक्त्व हो सकता है। यहां क्या बात हो रही है ? **पश्चात् नियम से सिद्धि पद को ही प्राप्त करता है।** यानी पल्य के असंख्यात भाग बार वह प्रथमोपशम करके छोड़ा है, फिर प्राप्त कर लिया है और उसका अर्धपुद्गलपरावर्तन काल पूरा हुआ है तो वह नियम से मोक्ष चला जायेगा।

श्रोता: उन्होंने ये इतने भव में किया है कि इतनी बार किया ? इतनी बार किया

है। इतनी बार होता है - दो बार, तीन बार; अभी पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण जो काल है उसमें कितने सारे समय है, उतनी बार हमको लिखना है; वे असंख्यात ही हैं। पल्य का असंख्यातवां भाग असंख्यात है, परंतु वह बहुत बड़ा असंख्यात है; आवली के लिये भी असंख्यात कहते हैं परंतु वह प्रमाण बहुत छोटा असंख्यात है। *श्रोता: भव कितने हो सकते हैं, असंख्यात हो सकते हैं ?* बहुत हो सकते हैं, अनंत हो सकते हैं। अगर निगोद में चला जायेगा तो अनंत भव हो सकते हैं। नही होंगे ? *श्रोता: यह सब मनुष्यभव में ही तो किया होगा न ?* प्रथमोपशम सम्यक्त्व चारों गति में होता है; वेदक सम्यक्त्व चारों गति में होता है; देशसंयत मात्र तिर्यंच और मनुष्यगति में होगा और अनंतानुबंधी की विसंयोजना भी चारों गति में होती है। तो कभी न कभी, जब कभी की तो उसको एक बार गिनेंगे, फिर दो बार गिनेंगे, फिर तीन बार गिनेंगे तो पल्य के असंख्यातवें भागप्रमाण जो काल है, उसके जितने समय हैं वे समय कितने अधिक होंगे ! उतनी बार इसने, अनेकों बार इसने सम्यक्त्व प्राप्त करके छोड़ा है।

आगे श्रेणी की बात ६१९ गाथा में लिखते हैं। **उत्कृष्टपने से उपशमश्रेणी चार बार ही चढ़ता है।** वह पूरे अर्धपुद्गलपरावर्तन काल में कितनी बार उपशमश्रेणी चढ़कर उतर सकता है ? मात्र चार बार और किसी एक भव में मात्र दो बार। एक भव में दो बार अधिक से अधिक उपशमश्रेणी चढ़ सकता है और फिर कभी दुबारा चढ़ेगा तो और दो बार चढ़ सकता है, उससे अधिक नहीं। **पश्चात् क्षय किये है कर्म के अंश जिसने - ऐसा होकर क्षपकश्रेणी ही चढ़ता है। सकलसंयम को उत्कृष्टपने से बत्तीस बार ही धारण करता है।** कोई भावलिंगी मुनिराज हो जाये - हम ऐसा भी देखते हैं न, देव का, मनुष्य का, देव का, मनुष्य का भव करते रहते हैं और हर बार मनुष्य में आयेंगे और संयम भी धारण करेंगे तो अधिक से अधिक कितनी बार संयम हो सकता है ? फिर गिरकर कोई मिथ्यात्व में भी जा सकता है। अनेकों बार मिथ्यात्व में जाकर फिर मनुष्य होकर भावलिंगी संत बनेंगे - ऐसा अधिक से अधिक बत्तीस बार ही होता है, उससे अधिक नहीं। **पश्चात् तो निर्वाण ही को प्राप्त करता है।** अब कौनसे गुणस्थान में कौनसे सत्त्व पाये जायेंगे उसकी चर्चा थोड़ी देर बाद करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५८. नामकर्म के सत्त्वस्थान - गुणस्थानों और जीवपदों में

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका लिखी हुयी है। उसीका हिंदी अनुवाद हमारे सामने है। हम नामकर्म के सत्त्वस्थान देख रहे थे।

देखिये पं. टोडरमलजी की कैसी बातें हैं। उन्होंने कौनसी टीका पढ़ी थी ? कन्नड लिपि में लिखी हुयी संस्कृत टीका ! फिर उसका अभ्यास कैसे किया ? उनको कन्नड कैसे आती थी ? पता नहीं कैसे सीखा होगा और भाषा भी संस्कृत और उसका अपनी बोलीभाषा-देशभाषा जो सब सामान्य जन समझें ऐसी भाषा में उसकी टीका लिखी। उनका बहुत विरोध हुआ था, क्यों ? ये जो ग्रंथ हैं वे संस्कृत और प्राकृत में ही शोभा देते हैं, अपनी सादी भाषा में उनको नहीं लिखना चाहिये ऐसे उस जमाने में कुछ लोग कहते थे, उनका बहुत विरोध हुआ था। उनके सामने तो जयधवला या धवला ग्रंथ भी नहीं थे। उनको देखने या लाने के लिये मूडबिद्री में तीन जन गये थे, एक जन रास्ते में ही मर गये। वहां वे ग्रंथ दर्शन मात्र उपलब्ध थे। उस जमाने में पढ़ना मुश्किल नहीं था, परंतु किसीको पढ़ने देते ही नहीं थे, बस दूर से दर्शन करो ऐसी बात थी।

आचार्य शांतिसागर महाराज हुये, उनके कारण ये सब ग्रंथ बाहर आ गये। उनकी प्रेरणा से फिर उनकी कॉपियां भी बनी, उनको छपवाया भी और फिर उनका हिंदी किया न, पं. फूलचन्दजी शास्त्री आदि जिन्होंने अपना पूरा लाइफटाइम उन ग्रंथों के संपादन में लगा दिया। उनका पूरा हिंदी अनुवाद कर दिया। पं. टोडरमलजी के नसीब में नहीं था कि उन ग्रंथों में से पढ़कर उसमें से अर्थ ग्रहण करे। उनके सामने जो टीकायें उपलब्ध थी उनमें से उन्होंने सभी टिकायें लिखी। फिर भी उन्होंने इतना गजब का कार्य किया है कि इनको पढ़ते हैं तो मूल ग्रंथों का पढ़ना सरल हो जाता है। प्रत्येक बात उन्होंने शुरू से समझायी है। नहीं तो क्या है, बड़े-बड़े ग्रंथों में बहुत गहरी चर्चा तो होती है परंतु सामान्य जीव उसको कुछ समझ नहीं पाते हैं। इन्होंने ऐसा अलौकिक कार्य किया है - मूल ग्रंथ पढ़ने जाते हैं तो उसमें जो विषय आया वहीं उसका गणित है और वह भी संदृष्टियों में है। संदृष्टि देखकर ही जीव घबरा जाता है। देखना है ? इसी पुस्तक में है, आपके हाथ में है। उदाहरण के तौर पर मेरे हाथ में आया हुआ ८९० और ८९१ पृष्ठ। कहीं पर भी देखो, सभी जगह ऐसी ही बात है। ये क्या है ? उसका अर्थ क्या

है ? क्यों ऐसे लिखा है ? उसका मीनिंग कुछ नहीं भासित होता है। आगे ८९३ पेज पर भी, स्थिति के भेद, आबाधा के भेद, स्थिति का प्रमाण, ये सब कुछ कोड लँग्वेज में लिखा है जैसे सिम्बॉल्स में। आगे ८९५ पेज पर, देखो ये कैसे-कैसे सिम्बॉल्स बनाये हैं।

आगे पेज ८९६ पर। ये सर्वघाति, देशघाति कैसा बंध होता है ? सबके अनुभाग कैसे हैं ? ये सब संदृष्टियों में समझाया है। ऐसे देखकर लगता है चलो, इसे अभी छोड़ दे, यह अपने बस की बात नहीं है। जहां जिसका विषय था वहीं पर ये संदृष्टि बनी हुयी थी। पं. टोडरमलजी ने क्या किया ? इनको अलग से लिया, पूरा विषय रखा और इन संदृष्टियों की एक अलग पुस्तक बनायी; उसका मॅटर था जो ऐसा समझाया हुआ था, उसको अलग कर दिया। थोड़े समझने के तौर पर जिसको हम कहे न कल्पना से अंक लेकर समझते हैं उसको कहेंगे अंकसंदृष्टि, वह कुछ-कुछ तो रखी। अर्थसंदृष्टि यानी यथार्थ में जहां अनंत की बात है, जहां असंख्यात की बात है, उनको चिन्ह करके जो ऑलरेडि ग्रंथों में चिन्ह थे, उन्हीं चिन्हों को उन्होंने पहले समझाया। चिन्ह समझाकर चिन्हों के गणित कैसे किये जाते हैं उसकी भी बात बतायी।

जीवकाण्ड की अर्थसंदृष्टि अलग निकाली, उसको अलग समझाया। कर्मकाण्ड की अलग अर्थसंदृष्टि, जो आपके हाथ में यहां पर है और लब्धिसार-क्षपणासार की अर्थसंदृष्टि अलग, उसके और चिन्ह अलग। उसके सभी जो कुछ ड्रॉइंग्स वगैरह बनाये हैं। किसतरह से क्षपणा होती है ? क्या होता है ? कहां कितने कौनसे कर्म बाकी रहते हैं ? कहां कैसे अपकर्षण होता है ? कितने परमाणु कहां दिये जाते हैं ? वह पूरी रचना उसमें अलग से बतायी। मूल पुस्तक में अगर देखेंगे तो वह विषय इतना गहरा और गहन लगता है, ऑर्डिनरि आदमी को आगे पढ़ने का साहस नहीं होता। यह साधारण है, कठीन गणित को अलग निकाला है, फिर भी इसको पढ़ने का ढाढ़स-साहस नहीं होता है - पढ़ने के लिये कोई तैयार नहीं होता। हां, जीवकाण्ड की जो संदृष्टि है वह भी देखेंगे तो इससे भी ज्यादा डर लगेगा।

यहां सुशीलाबहन है ? है ! हमारे घर में रोज का स्वाध्याय चला। जीवकाण्ड हमने शुरू से अंत तक पढ़ा जिसके ३०० लेक्चर्स हुये थे। उसके बाद मैंने अर्थसंदृष्टि के ऊपर लेक्चर्स दिये; कैसे ? ऐसे व्हाइट बोर्ड रखा था और कलर पेन से उसके ऊपर एक-एक अक्षर, एक-एक ड्रॉइंग, एक-एक संख्या जैसे स्कूल में बच्चों को १, २, ३, ४

समझाते हैं इसतरह से मैंने समझाये। उसके पूरे ५४ लेक्चर्स हुये, व्हिडिओ भी बनाये। घर इतनासा छोटा, मैं जहां बैठती थी उसके पीछे पर्दा लगाना पड़ता था, दिनेशजी ने आगे कॅमेरा रखकर रोज के रोज उसकी शूटिंग की। जैसे यहां देवलाली में लेक्चर शुरू होने के बाद भी आते हैं न कोई-कोई, तो वहां कोई समय के बाद आते थे तो उनको झुककर ऐसा जमीन पर रेंगकर जाना पड़ता था, क्रॉलिंग करके। उसमें लाइट ॲडजस्ट करना आदि बातें हमें ही करनी पड़ती थी। यह फोटोग्राफर भाईसाहब यहां शिबिर में हमारी शूटिंग की व्यवस्था देख रहे हैं, परंतु वहां तो स्वाध्याय स्वयं करे और फिर शूटिंग भी स्वयं करे। ऐसे कठिनाइयों में भी हमने ५४ लेक्चर्स DVD के रूप में बनाये हैं; उनकी व्हिजुअल DVDs बनायी हैं क्योंकि देखे बिना केवल सुनकर गणित समझ नहीं सकते। ड्रॉइंग कैसे बनाना, उसकी संदृष्टि क्या है, एक लाइन इधर से उधर होती है तो अनंतों का डिफरन्स पड़ जाता है ! मगर वे डिव्हीडीज् बहुत अच्छी बनी हैं।

यह हमारी अष्टीकर है, आपने सुनी न सब कि ले गये केवल कपाट में रखने के लिये ? जीवकाण्ड की अर्थसंदृष्टि के ५४ व्हिडिओज् है तो सब कुछ सुने-देखें, सब कुछ समझ सकते हैं। आपको गणित समझ में आये कि नहीं ? हां, बहुत अच्छा ! हम यह चाहते हैं कि पं. टोडरमलजी ने जो हमारे लिये यह सारा लिखा है और हम नहीं समझे तो क्या होगा ? केवल पुस्तकें छापने से कुछ नहीं होगा, हम स्वयं समझे-पढ़े तो ही उसका उपयोग है। लोग क्या कहते हैं ? चलो इतनी दानराशि हमारी ओर से ले लीजिये; वह नहीं चलेगा। हम चाहते हैं कि आप लोग सब इसको पढ़े। जो बात हमें समझ में आयी है, लगता है आप सब लोग भी समझे ! घर में एक थोड़ासा कुछ हलवा बनाते हैं तो बच्चों को क्या कहते हैं ? अरे खाकर तो देखो, चखकर तो देखो ! हम भी चाहते हैं कि जो चीजें हमारी समझ में आयी हैं वे आप सब लोग समझें। हम और कुछ नहीं चाहते हैं आपसे। इतने प्रेम से आप इतना कठिन विषय सुन रहे हैं न, आनंद होता है हमें ! ऐसा लगता है सब लोग इसे समझे, यह अपनी बात है, अपने घर की बात है। पं. टोडरमलजी ने यह लिखा था ढूंढ़ारी भाषा में, पढ़ने में लोगों को कठिन जाता था। अभी वह हिंदी हो गया आपके लिये, है न ! हम पढ़ेंगे तो उसका बहुत आनंद आयेगा। इसमें समझने से जो आनंद आता है, कुछ अनोखा आनंद आता है और इसके लिये हमें कुछ नहीं करना है, बस पढ़ना है और समझना है। देखो अभी हम आगे बढ़ेंगे।

नामकर्म के सत्त्वस्थान की बात चल रही थी। हमने उसमें जो स्थान देखे थे

९३वाला, ९२वाला, ९१वाला और ९०वाला; उसमें से क्षय की अपेक्षा १३-१३ प्रकृतियां घटायी थी। हमारी एक बहन आकर बोली वे कौनसी १३ प्रकृतियां हैं ? कब से हम सोच रहे हैं। क्या देवगति और नरकगति चतुष्क इसमें से घटाना क्या ? वे उद्वेलनावाली प्रकृतियां हैं; यहां क्षयवाली प्रकृतियों की बात चल रही है, वे नरक और तिर्यंच संबंधी प्रकृतियां हैं। १३ प्रकृतियां कौनसी हैं याद है ? हां बोलो। नरकगति और नरकगत्यानुपूर्वी - नरक संबंधी ये दो हैं; फिर तिर्यंचगति, तिर्यंचगत्यानुपूर्वी। बाकी हैं न, वे एकेन्द्रिय और द्वीन्द्रिय संबंधी हैं। हां, एकेन्द्रियजाति, द्वीन्द्रियजाति, त्रीन्द्रियजाति, चतुरिन्द्रियजाति और स्थावर है, सूक्ष्म है, साधारण है, आतप है और उद्योत है। ये जो प्रकृतियां हैं उन १३ प्रकृतियों का क्षय हो जाता है और बाकी जो सत्ता में रहती हैं जैसे अपर्याप्त नामकर्म है वह तो क्षय हो जायेगा चौदहवें गुणस्थान के उपांत्य समय में, फिर भी इन १३ का यहां पर क्षय हो जाता है। तिर्यंचगति संबंधी यानी चतुरिन्द्रियजाति तक की जो हैं और उद्योत आदि जो प्रकृतियां तिर्यंचगति में हैं वे यहां चली जाती हैं। फिर भी नीचगोत्र वगैरह यहां नहीं जाता है, मात्र इतनी १३ प्रकृतियों का यहां क्षय हो जाता है।

एक प्रश्न यह भी था कि *इतनी बार आपने प्रथमोपशम सम्यक्त्व कहा, तो उतनी बार अनंतानुबंधी की विसंयोजना भी होगी कि नहीं होगी ?* अनंतानुबंधी की विसंयोजना क्षयोपशम सम्यक्त्ववाला जीव करता है, क्षायिक सम्यक्त्व होने के पूर्व या द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होने के पूर्व में भी वह होता है। वैसी विसंयोजना प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने के पूर्व नहीं होती। अनंतानुबंधी मात्र सत्ता में पड़ी रहती है, उसमें अंतरवाला उपशम भी नहीं होता है। बस मात्र सत्ता में है जैसे हमने कहा जब उदय में आता है तो अन्यरूप होकर उदय चलता है, पड़ी रहती है वहां पर। उसको भी उपशम कहेंगे, उसको अप्रशस्त उपशम कहेंगे। विसंयोजना बाद में, वेदक सम्यक्त्व के काल में या किसीके अनुसार उपशम सम्यक्त्व होने के पश्चात् विसंयोजना का कार्य हो सकता है और वह इतने अनेकों बार होता है यह यहां बताया गया है। जीव के परिणाम कैसे ऊपर-नीचे होते हैं देखो ! कोई श्रेणी चढ़ा है, श्रेणी चढ़कर उतरा है और हो सकता है अभी देवायु नहीं बांधी है तो मिथ्यात्व में चला जाये और कहीं निगोद जैसे भी परिणाम हो जाये और निगोद में चला जाये। ऐसे भी होते हैं जीवों के परिणाम !

कैसे-कैसे परिणाम होते हैं इसका वर्णन हम ग्रंथों में पढ़ते हैं। हम सोचते हैं, नहीं-नहीं, अभी हमारे स्वाध्याय के परिणाम हैं, परंतु क्या करें ? अभी थोड़ी अनुकूलता नहीं है। संयोग थोड़े ठीकठाक हो जायेंगे न फिर हम स्वाध्याय करेंगे। यानी स्वाध्याय भी भविष्य पर टालते हैं। क्या यही परिणाम रहनेवाले हैं भविष्य में ? फिर कुछ बीमारी लग जायेगी, बैठा नहीं जायेगा, सुना नहीं जायेगा, देखा नहीं जाता, शास्त्र नहीं है, मंदिर दूर है, बच्चों को टाइम नहीं है कि फुरसत निकाले और गाड़ी की अरेंजमेंट करे और हमें मंदिर तक ले जायें। हो सकता है कि नहीं हो सकता है ? आज हमारी इतनी बुद्धि है कि इसमें लगाये तो समझ सकते हैं। क्या गॅरंटी इतनी बुद्धि रह जायेगी ? हम नहीं चाहते बुद्धि नष्ट हो जाये, वह और बढ़े, उसमें क्या है ? जो कार्य आज कर सकते हैं वह हम कल पर क्यों डाले ? स्वाध्याय में हमारा पूरा कल्याण है। एक भव के लिये जो संयोग हमें कार्यकारी लगते हैं उसके पीछे हम जिंदगी बर्बाद करते हैं; अनंत भवों का अभाव करके मोक्ष प्राप्त करने का जो अलौकिक कार्य है उसके लिये हम क्या करते हैं ? उसका एहसास ही नहीं होता कि मुझे करने लायक बस यही एक बात है, अन्य कुछ नहीं है। लौकिक में हम चाहेंगे तो बाहर की दुनिया में कोई भी हमारे जो सगे हैं या कोई फ्रेंड्स हैं, कोई मित्र हैं, कोई अन्य भी हैं, तो एक-दूसरे से यही बात करेंगे कि पैसा कैसे कमाना, कैसे भोगना, कैसे क्या करना; अरे उसमें क्या रखा है ?

जिसको अंदर से लगन लगी है, तो इसी तत्त्वज्ञान से अपना कल्याण कर लें अन्य कुछ करने लायक नहीं। कल का दिन किसने देखा है ? हम देख रहे हैं कि किसी पर कैसी नौबत आती है। अभी बैठे-बैठे कोई हार्ट फेल हो जाये और चला जाये। यह तत्त्वनिर्णय मोस्ट प्रायॉरिटीवाला कार्य है। हम अभी ऐसे स्टेज पर आ गये हैं - अभी ठीक है छोटी बच्ची है उसकी बात छोड़ दो, मगर हम कुछ कृतकृत्य हो गये की नहीं अभी तक ? करने लायक सब कर दिया। बच्चों को पढ़ाया है, बेटियों की शादी कर दी है, बेटों को भी धंधे पर लगा दिया है। अभी क्या रह गया है ? स्वाध्याय करना है या बेटों के बेटों को संभालना है ? *श्रोता: मूल से ब्याज प्यारा है।* हां, ब्याज प्यारा है तो उसमें मोह और ज्यादा बढ़ रहा है। वे कोई अपने को रोक नहीं रहे हैं, हमारा उनमें जो रचा-पचापना है वह नहीं छूट रहा है। हम उन पर आरोप कर रहे हैं, क्या करें यह बच्चे हमको नहीं छोड़ते ! वे कुछ नहीं करते, तू ही उनको नहीं छोड़ रहा है। बात सच है क्या ? देखो, यह अपने से पूछना है। हमारा ही बहुत मोह पड़ा है वहां।

प्रश्नः एक बार सम्यक्त्व होने के बाद छूट जाये, फिर अनेकों बार प्रथमोपशम सम्यक्त्व होता है तो उतना ही पुरुषार्थ करना होता है ? होगा तो पुरुषार्थ से ही होगा, तो छूट नहीं जाये ऐसा पुरुषार्थ करो न ! वह क्यों छूटे ? प्रथमोपशम सम्यक्त्व का काल अंतर्मुहूर्त ही है, फिर वेदक सम्यक्त्व हो जाये। यह जरूरी नहीं की मिथ्यात्व में जाना पड़े, सम्यग्दृष्टि रहो ! एक बार प्रथमोपशम होने के बाद दुबारा प्रथमोपशम होने के लिये बीच में कितना समय गया है ? असंख्यात वर्ष चले गये हैं। फिर वह अनादि मिथ्यादृष्टि जैसा हो गया। फिर दुबारा सभी पांच लब्धिपूर्वक सब होगा, दुबारा देशना की भी जरूरत होगी। वेदक सम्यक्त्व होता है वहां उसको इतना काल भी नहीं लगता, अंतर्मुहूर्त में हो सकता है और तीन करण और पूरी पांच लब्धि वहां नहीं होती। वेदक सम्यक्त्व तो ऐसे ही दो करण में हो जाता है। परंतु प्रथमोपशम सम्यक्त्व फिर दुबारा होगा तो उसके पांचों लब्धिसहित ही होगा। वहां सभी कंडिशन्स जो हैं पांच लब्धि की, वे सब वहां होगी ही। गिरने की बात करनी ही नहीं, गिरने की बात क्यों नहीं करनी ? क्योंकि वहां दृढ़ता है परंतु यह ज्ञान का विषय है। नहीं तो चलो हमने सम्यक्त्व प्राप्त किया, चलो अभी हम छूट गये - यह नहीं चलेगा, हमें स्वच्छंदी नहीं होना चाहिये।

श्रोताः यह जीव प्रथमोपशम सम्यक्त्व जितनी बार करे, उतनी बार पांच लब्धि सब करेगा ? बिलकुल-बिलुकल सभी होंगी। *श्रोताः एक बार देशना मिली है, कितनी बार चलती है ?* यह जो देशनालब्धि कहते हैं न, देशनालब्धि कौनसे गुण की पर्याय है ? ज्ञानगुण की और देशना किसको कहते हैं ? उपदेश को। जो तीर्थंकर, आचार्य आदि के उपदेश को देशना कहेंगे और देशनालब्धि किसको कहेंगे ? ज्ञान की पर्याय को। हमने वह सुनकर समझा तो देशनालब्धि कहेंगे कि वहां जाकर बैठने से देशनालब्धि कहेंगे ? सुनना पड़ेगा, समझना पड़ेगा, याद रखना पड़ेगा, उस पर बारंबार चिंतवन करके तत्त्वनिर्णय तक पहुंचना पड़ेगा - यह सब देशनालब्धि की बात है। परंतु वह जो देशना मिली है वह हमने सुनी है, याद भी रखी है। यदि वह धारणा तक पहुंची है तो तीसरे भव तक भी काम करेगी, उसके लिये बीच में संज्ञी पंचेन्द्रिय ही रहना चाहिये। बीच में एकेन्द्रिय में चला गया तो उसकी वह देशना काम नहीं करेगी। ये तीन भव तक की देशना काम आती है यह कहते हैं वह कौनसी ? वह धारणा तक पहुंची है तब याद आयेगी और याद आयेगी ही ऐसी कोई गॅरंटी नहीं है। हो सकता है किसी समय की

वह योग्यता हो जाये, जैसे इंद्रभूति को जब तक वे अन्यमति में वहां के प्रमुख होकर बैठे थे न ! वैदिक ब्राह्मण थे, तब तक याद नहीं आ रही थी। फिर जब जिनबिंब देखा तब उनको पूर्व की देशना याद आ गयी। उनके उस भव की देशना नहीं थी, पूर्व भव की देशना थी। पूर्व भव में कितने ही सालों तक द्रव्यलिंगी रहे थे, तब वह कार्य नहीं हुआ था, परंतु देशना मिली थी तो बाद के अन्य भव में भी उनका कार्य हो गया। परंतु उस गॅरंटी पर मत रहना। हम क्या कहते हैं कि चलो अभी पढ़ेंगे, फिर आगे चलकर इसका कार्य होगा - ऐसा नहीं है। यह तो बस कोई घबराता है न तो उसके लिये कहेंगे कि नहीं-नहीं चलो अभी संस्कार हो गये तो आगे काम में आयेंगे, डरो मत; यह तो बिलकुल स्थूल उपचार है। उसमें कोई दम नहीं है।

अभी हम जो देख रहे थे, असंख्यात बार सम्यक्त्व से गिरकर फिर दुबारा प्राप्त कर सकता है। उपशमश्रेणी भी अधिक से अधिक ४ बार चढ़कर उतर सकता है, संयम भी अधिक से अधिक ३२ बार धारण कर सकता है। अब हम यहां ५९२ पृष्ठ पर कौनसे गुणस्थान में कहां कौनसा सत्त्व पाया जायेगा उसकी बात करेंगे। मिथ्यात्व गुणस्थान में, मिथ्यात्व की बात करेंगे। अभी गुणस्थानों में सोचना है तो मेरा प्रश्न है मिथ्यात्व गुणस्थान में किसीको ८०, ७९, ७८, ७७ का सत्त्व होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: नहीं होगा।* हां ! नहीं होगा। क्यों ? यह तो १३ का क्षय होने के बाद की बात है, केवली भगवान के भी होगा। ९वें गुणस्थान में १३ का क्षय होने के बाद ये सत्त्वस्थान होंगे।

अभी हम मिथ्यात्व की बात कर रहे हैं। मिथ्यात्व अवस्था में किसीके ९३ का सत्त्व पाया जायेगा कि नहीं पाया जायेगा ? *श्रोता: हां पाया जायेगा।* कैसे पाया जायेगा ? किसके पाया जायेगा ? *श्रोता: आहारकद्विक जिसके पाया जायेगा।* तो वह मिथ्यात्व में कैसे आयेगा ? तीर्थंकर सहित मिथ्यात्व में आनेवाला जीव कौन है पहले यह नक्की करते हैं। जिसने पहले नरकायु का बंध किया है, गति नहीं, जिसने पहले मिथ्यात्व अवस्था में नरकायु का बंध किया है, बाद में जिसने सम्यक्त्व प्राप्त किया है और तीर्थंकर प्रकृति बांधी है, वही जीव यदि क्षायिक नहीं होता है तो एक अंतर्मुहूर्त के लिये मिथ्यात्व में आता है। परंतु आहारकद्विक का बंध कब करेगा ? उसने तीर्थंकर प्रकृति बांध ली, अब आहारक का बंध कब करने जायेगा ? *श्रोता: नरकायु का बंध किया है ?* हां, नरकायु का बंध किया उसको पांचवां गुणस्थान भी नहीं होगा, तो आहारकद्विक कब बांधेगा ? *श्रोता: पहले आहारकद्विक का बंध किया है, फिर नरकायु बांधी, नीचे*

आया फिर मिथ्यात्वी हो गया। फिर ? होता ही नहीं। हमने पहले ही यह रूल देखा था एक जीव को जिसके तीर्थंकर और आहारकद्विक दोनों की सत्ता है, वह जीव मिथ्यात्व में नहीं आ सकता। एक जीव की अपेक्षा दोनों की सत्ता एक साथ नहीं हो सकती, हमने यह रूल देखा था। क्रम से आ सकता है, कब ? जब आहारकद्विक की उद्वेलना करेगा, बाद में नरकायु बांधेगा, फिर सम्यग्दृष्टि होगा, फिर तीर्थंकर प्रकृति बांधेगा। वह नरक में जानेवाला है, इसलिये अंतर्मुहूर्त तक मिथ्यात्व में आ सकता है। अन्यथा कोई तीर्थंकर प्रकृति की सत्तावाला मिथ्यात्व में नहीं आता। सिर्फ जो नरकायु का बंध करके बाद में तीर्थंकर प्रकृति बांधकर दूसरे या तीसरे नरक में जानेवाला है, बिना क्षायिक के उसकी बात है, तो मिथ्यात्व गुणस्थान में एक जीव को एक काल में ९३ की सत्ता किसीके होगी ही नहीं। ख्याल में आयी यह बात ? अब आगे बढ़ते हैं।

देखो, यहां पढ़ेंगे हम, **मिथ्यात्व गुणस्थान में एक जीव की अपेक्षा तीर्थंकर, आहारकद्विक इन दोनों से सहित स्थान नहीं पाया जाता।** अभी हम ये स्थान देख रहे हैं वे कौन-कौनसे गुणस्थान में पाये जाते हैं उसकी बात हम कर रहे हैं। **या तो तीर्थंकर ही का सत्त्व होगा या आहारकद्विक ही का सत्त्व होगा।** तीर्थंकर का सत्त्व जिसके है वह मिथ्यात्व में कब आता है ? नरकायु का बंध किया हो तो। **परंतु नाना जीवों की अपेक्षा**, नाना का अर्थ है अनेक जीवों की अपेक्षा; **मिथ्यादृष्टि में दोनों का सत्त्व है।** जब हमने पूरे सत्त्व की बात देखी थी, तो १४८ का सत्त्व देखा था मिथ्यात्व गुणस्थान में, उसका अर्थ क्या है ? किसी जीव को तीर्थंकर का सत्त्व है और किसी जीव को आहारक का सत्त्व है - इसको कहेंगे नाना जीवों की अपेक्षा। यहां हम स्थान देख रहे हैं। स्थान का अर्थ ही क्या है ? एक जीव के एक काल में युगपत् जितनी प्रकृतियां सत्ता में पायी जाती हैं उसको सत्त्वस्थान कहेंगे। किसी एक जीव को मिथ्यात्व अवस्था में आहारक की भी सत्ता है और तीर्थंकर की भी ऐसा नहीं हो सकता। या तो किसीके तीर्थंकर की सत्ता होगी या किसीके आहारक की सत्ता होगी या दोनों की नहीं होगी उसमें क्या है ? वैसा होने में कोई बाधा नहीं है, अब आगे।

मिथ्यात्व गुणस्थान में ९३वाली सत्ता नहीं होगी। आगे क्षपणा में जो ८० वगैरह होती हैं, वे भी नहीं होगी। अभी सासादन की बात कर रहे हैं। **सासादन में तो नाना जीवों की अपेक्षा भी आहारक, तीर्थंकर सहित सत्त्वस्थान नहीं है।** जिसके

तीर्थंकर की सत्ता है, जिसके आहारक की सत्ता है वह जीव दूसरे गुणस्थान में नहीं जाता है यानी किसी भी सासादनवाले जीव को तीर्थंकर की सत्ता या आहारक की सत्ता होगी ही नहीं तो उसको कितने का सत्त्व होगा ? ९३ का हो सकता है ? नहीं। ९२ का ? नहीं। ९१ का ? नहीं। ९० का ? *श्रोता: हो सकता है।* हो सकता है, ९० का ही हो सकता है। **मिश्र गुणस्थान में तीर्थंकर सहित सत्त्वस्थान नहीं है, आहारक सहित है।** यानी कौनसे होंगे ? ९३ का ? नहीं है और ९२ का ? ९२ का हो सकता है क्योंकि उसमें हमने तीर्थंकर अकेली घटायी है, आहारक की है। ९१ का ? देखो ९३ और ९१ है न, तीर्थंकरवाले हैं और ९२ और ९० दोनों तीर्थंकर रहितवाले हैं। ९२वाले को आहारक है और ९०वाले को नहीं है। आहारक सहित है **क्योंकि उन कर्मों की सत्तावाले जीवों के वह गुणस्थान नहीं पाया जाता वही कहते हैं - तीर्थंकर, आहारक दोनों का सत्त्व होने पर मिथ्यात्व का उदय नहीं होता। तीर्थंकर और आहारक में से एक का भी सत्त्व होने पर मिथ्यात्व रहित अनंतानुबंधी का उदय नहीं होता।**

मिथ्यात्व रहित अनंतानुबंधी का उदय कहां होता है ? सासादन गुणस्थान में, तीसरे गुणस्थान में उदय नहीं है। *श्रोता: नीचे उतरते समय ?* कहां से उतरते समय ? उतरते समय यानी सासादन में कहो न, उतरते समय कहां है ? ऐसा कोई उतरनेवाला ऐसा कुछ अलग समय नहीं होता है। सासादन गुणस्थान है जहां मिथ्यात्व का उदय तो नहीं हुआ है, मात्र अनंतानुबंधी का उदय हुआ है उस गुणस्थान को हम सासादन गुणस्थान कहते हैं। **तीर्थंकर का सत्त्व होने पर सम्यग्मिथ्यात्व का उदय नहीं होता।** इसका अर्थ है तीर्थंकर की सत्तावाला जीव तीसरे गुणस्थान में नहीं आता क्योंकि उस जीव के वे परिणाम नहीं होंगे, ऐसे खोटे परिणाम नहीं होंगे। आहारकद्विक का सत्त्व होने पर सम्यग्मिथ्यात्व का उदय हो सकता है। हां दूसरे गुणस्थान में नहीं जाता, तीसरे गुणस्थान में जा सकता है जीव।

आगे चार गति की विवक्षा से गुणस्थानों में नामकर्म के सत्त्वस्थान देखो जितनी अपेक्षा से विवेचन करेंगे उतने उसमें लगते हैं और हमारी भी उसमें क्लॅरिटी बढ़ती है, ज्यादा स्पष्टता हो जाती है। अभी ९३ का सत्त्वस्थान कहां पाया जायेगा यह देखेंगे। ९३ में कौनसा है ? तीर्थंकर भी है और आहारकद्विक भी है तो देवगति में होगा कि नहीं होगा ? *श्रोता: होगा।* होगा। देवगति में मिथ्यात्व में होगा क्या ? तीर्थंकर की सत्तावाला देवगतिवाला कभी मिथ्यात्व में जाता ही नहीं है। मात्र तीर्थंकर की सत्तावाला

जो जीव दूसरे या तीसरे नरक में जानेवाला है वह मरण के पूर्व अंतर्मुहूर्त पहले मिथ्यात्व में जाता है। देवगति में तीर्थंकर की सत्तावाला है उसका गुणस्थान चौथा ही है, अन्य कोई नहीं। **तिरानबे का सत्त्वस्थान देव असंयत सम्यग्दृष्टि में**। मनुष्य में होगा कि नहीं होगा ? होगा, बांधनेवाला मनुष्य है। **मनुष्य** भी कौनसा होगा ? **असंयतादि**, आदि क्यों कहा ? क्योंकि बंधता है सातवें-आठवें में और वे जीव चौथे तक आ सकते हैं। दोनों का सत्त्व है चौथे से लेकर ऊपर कहां तक ? *श्रोता: आठवें तक।* आठवें तक क्यों रुके ? हां ९३ का सत्त्व कहां तक होगा ? जब तक ये ८० नहीं होता तब तक। नौवें में जब क्षपणा होती है १३ की तब उसका सत्त्व ९३ का ८० हो जायेगा। तो उसके गुणस्थान मनुष्यों में कौनसे होंगे ? चौथा, पांचवां, छठां, सातवां, आठवां और नौवें में जब तक १३ की क्षपणा नहीं हुयी हो तब तक, उपशमश्रेणी में ग्यारहवें तक।

९३ का सत्त्व तिर्यंचों में होगा कि नहीं होगा ? हो ही नहीं सकता। तिर्यंचों में तीर्थंकर प्रकृति नहीं पायी जाती। अब कहते हैं नरक में तो होगा ९३ का सत्त्व ? *श्रोता: असंयत रहते हैं।* अभी श्रेणिक राजा की सत्ता में आहारकद्विक है क्या ? तीर्थंकर और आहारकद्विक कैसे होंगे ? वे असंयत ही थे। नरकायु बंधी थी तो उनके तीर्थंकर सहित आहारकद्विक का सत्त्व नहीं हो सकता है यह हमने पहले ही देखा था। ९३ का सत्त्व नारकी के नहीं पाया जायेगा। अभी यहां क्या-क्या लिखा है देखेंगे - **देव असंयत सम्यग्दृष्टि में और मनुष्यों में असंयतादि में**, ऊपर जब तक ८० नहीं होता तब तक पाया जायेगा। **बानबे का स्थान सासादन रहित चारों गतियों के जीवों में पाया जाता है।** अभी ९२ का कौनसा है ? तीर्थंकर से रहितवाला है। अब तीर्थंकर रहित है तो बिलकुल चारों गति को हम याद कर सकते हैं। मिथ्यात्व में भी हो सकती है उसकी सत्ता परंतु आहारक की सत्तावाला दूसरे में नहीं आता यह हमने देखा था। ९२ का स्थान चारों गति में है परंतु दूसरे गुणस्थान में ९२ की सत्ता नहीं है।

इक्यानबे का स्थान यानी यहां तीर्थंकर प्रकृति है अभी, आहारकद्विक नहीं है; कहां-कहां होगा ? **देव सम्यग्दृष्टि में, मनुष्य और नारकी सम्यग्दृष्टि में और मिथ्यादृष्टि में पाया जाता है।** मिथ्यादृष्टि में क्यों कहा ? नरक जानेवाला जीव मनुष्य है, मरण के पहले मिथ्यात्व में गया है और उनके तीर्थंकर प्रकृति की सत्ता है। वहां मरकर वहां नरक में पंहुचा है, मिथ्यात्व अवस्था में पंहुचा है, नारकी है, वहां पर भी ९१

की सत्ता है; बाद में वह सम्यक्त्व प्राप्त करेगा। तो मिथ्यात्व अवस्था में भी कहां पायी जायेगी ? मनुष्य में और नारकी में और देवों में सम्यग्दृष्टि के ही पायी जायेगी। आगे ५९३ पृष्ठ पर ९० का स्थान देखते हैं- अब ९० है यानी क्या-क्या नहीं है ? तीर्थंकर की सत्ता नहीं है और आहारकद्विक की भी नहीं है। हम सोच सकते हैं यह स्थान चारों गति में होगा कि नहीं होगा ? हो सकता है। कहते हैं **नब्बे का स्थान अनिवृत्तिकरण में तेरह प्रकृति का क्षय होता है, उसके नीचे सर्वत्र** यानी पहले गुणस्थान से लेकर सर्वत्र **चारों गतियों के जीवों में पाया जाता है।** उसमें न तीर्थंकर की सत्ता है न आहारक की है तो कोई सोचने की बात नहीं है। तो बाकी जीवों के ९० का सत्त्व होगा।

अभी उद्वेलना की अपेक्षा जो स्थान हैं उनकी बात कहेंगे। **अट्ठासी, चौरासी के दोनों स्थान, तिर्यंच या मनुष्य मिथ्यादृष्टि में ही पाये जाते हैं।** ८२वाला नहीं लिया क्योंकि ८२वाला मनुष्य में नहीं पाया जायेगा। ८२वाला कब होता है ? जिसने मनुष्यगति की उद्वेलना कर दी है और जो मनुष्यायु नहीं बांध सकता ऐसे अग्निकायिक -वायुकायिक में होगा, तो वह मरकर मनुष्यगति में नहीं आ सकता। इसलिये ८२ का स्थान मनुष्य में नहीं होगा, परंतु ८८वाला और ८४वाला; ये करनेवाले कौन हैं ? जिसने देवद्विक की उद्वेलना की है उसके ८८ का है और जिसने नरकचतुष्क की भी उद्वेलना की है उसके ८४ का है। मनुष्य तो इनकी उद्वेलना नहीं कर रहे हैं, क्या कहा ? मिथ्यादृष्टि मनुष्य इन प्रकृतियों की उद्वेलना नहीं कर रहे हैं, परंतु जिन एकेन्द्रिय से लेकर चतुरिन्द्रिय तक के जीवों ने नरकगति, देवगति संबंधी ये जो छह प्रकृतियों की उद्वेलना की है वे जीव मरकर मनुष्यों में उत्पन्न हो सकते हैं; तो उनकी उत्पन्न होने की अपेक्षा अंतर्मुहूर्त काल तक उसके ८८ का भी सत्त्व पाया जायेगा और ८४ का भी।

तिर्यंच में तो होगा ही होगा। **क्योंकि 'सपदे उप्पण्णठाणेवि'** 'सपदे' यानी स्वस्थान में और 'उप्पण्णठाणेवि' यानी उत्पन्न होने के स्थान में भी, 'वि' यानी भी। दोनों जगह यह सत्ता पायी जाती है। जिसने उद्वेलना की है उस पर्याय में भी यानी तिर्यंचों में एकेन्द्रियादि चतुरिन्द्रिय तक में और मरकर जहां उत्पन्न हुये हैं, वहां भी ये स्थान पाये जाते हैं। **इस गाथा से एकेन्द्रियादि में जहां देवद्विकादि की उद्वेलना होती है वहां भी ऐसी पायी जाती है। वह जीव मरकर तिर्यंच या मनुष्य में जहां उत्पन्न हो वहां भी ऐसी सत्ता पायी जाती है।** इसका अर्थ ख्याल में आता है ? इनकी उद्वेलना करनेवाला जीव मरकर मनुष्य में आयेगा तो उस मनुष्य मिथ्यादृष्टि के भी ये ८८ की या

८४ की सत्ता हो सकती है। जब तक वह देवगति, नरकगति नहीं बांधेगा तब तक उसके वह सत्ता का स्थान-सत्त्वस्थान होगा।

८२ का स्थान - अब ८२वाला कौनसा है ? कौनसी दो और ? *श्रोता: मनुष्यगति।* मनुष्यगति और मनुष्यगत्यानुपूर्वी। तो कौन करता है ? अग्निकायिक और वायुकायिक, करनेवाले दो हैं। वहां से मरकर अग्निकायिक और वायुकायिक कहां उत्पन्न होते हैं ? मनुष्य में तो हो ही नहीं सकते; तिर्यंच में कहीं भी एकेन्द्रिय से पंचेन्द्रिय तक उत्पन्न होते हैं। तो करनेवाले की अपेक्षा और जहां जन्म लेते हैं वहां उनकी अपेक्षा दोनों में ८२ का सत्त्व पाया जायेगा। तो क्या कहते हैं ? **बयासी का स्थान मिथ्यादृष्टि तिर्यंच में ही पाया जाता है क्योंकि मनुष्यद्विक की उद्वेलना तेजस्कायिक, वायुकायिक के होती है। वहां ऐसी सत्ता होकर** यानी उद्वेलना करके **पश्चात् वह मरकर तिर्यंच में ही उपजता है,** तिर्यंच में ही उत्पन्न होगा, मनुष्यगति की तो उद्वेलना की है और वह मनुष्यगति या मनुष्यायु बांध नहीं सकता; **अन्यत्र नहीं, वहां ऐसी सत्ता होती है।**

पहले हमने देखा था ९३ की सत्ता कहां हो सकती है ? देव असंयत में हो सकती है और मनुष्य में भी हो सकती है, चौथे गुणस्थान से लेकर नौवें गुणस्थान तक जब तक वह १३ का क्षय नहीं करता। ९२वाला यानी कौनसा है ? तीर्थंकर रहितवाला है, परंतु आहारक सहितवाला है तो उसकी सत्ता कहां-कहां हो सकती है ? सासादन छोड़कर चारों गति में हो सकती है। ९१वाला तीर्थंकर सहितवाला है वह कहां होगा ? देव असंयत में तो होगा ही होगा, यह स्थान मिथ्यादृष्टि में भी हो सकता है। कौनसे मिथ्यादृष्टि ? मनुष्य मिथ्यादृष्टि यानी मरण के पहले और नारकी मिथ्यादृष्टि जन्म से अंतर्मुहूर्त तक - इतनी दो अवस्था में उनको ले लेना। इसतरह हमने इसको दुबारा देखा है। अब **अस्सी से लेकर चार स्थान** हैं उसकी चर्चा करेंगे। यह ८० आदि जो चार हैं वे स्थान कब होते हैं ? नौवें गुणस्थान में जब १३ का क्षय होता है तब। पहले हमने ९३, ९२, ९१ और ९० देखे थे, उन सभी में १३-१३ घटा देना; जो जितनी सत्तावाला था वह हर एक जीव १३ का क्षय करेगा ही करेगा। इसका अर्थ है, जब तक क्षय नहीं होता है तो इन ऊपर के गुणस्थानों में भी इन प्रकृतियों का सत्त्व पड़ा है। कभी न कभी बांधे हैं, तो ये पड़े हैं सारे सत्ता में। तभी तो हम देखते हैं कभी मिथ्यात्व में भी चला जाये तो फिर दुबारा यह ऐसे कर्म बांधता है फिर उस पर्याय में भी चला जाता है।

देखो **८० से लेकर चार स्थान** कौन-कौनसे हैं ? **८०, ७९, ७८, ७७**। **तेरह प्रकृतियों के क्षय सहित अनिवृत्तिकरण से लेकर** जब १३ का क्षय हुआ तब ये ८० आदि चार स्थान हो गये। वे चार स्थान कब तक रहेंगे ? जब तक और किसी नामकर्म का क्षय नहीं होगा तब तक। वह क्षय का कार्य कब होगा ? **अयोगकेवली के उपांत्य समय तक जानना** यानी उपांत्य समय में सत्ता है, अंतिम समय में सत्ता नहीं है। क्या कहा ? क्षय कब किया कहा ? चौदहवें के उपांत्य समय में, परंतु वहां सत्ता है। जहां सत्ता है वहां क्षय किया ऐसा जब कहेंगे और कभी-कभी क्या कथन पद्धति होती है कि जब सत्ता में से नाश हुआ तब क्षय किया कहेंगे। दो प्रकार से कथन होते हैं। यहां तो सत्ता है, तो क्षय कब किया ? यह कथन में डिफरन्स है।

अभी आपका प्रश्न था न कि थिउक्क संक्रमण वर्तमान समय में हुआ कि एक समय ऊपर हुआ ? यह कथन का डिफरन्स है। जहां सत्ता है वहीं पर नाश हुआ, वहीं पर संक्रमण हुआ, यह कहने की पद्धति है और जहां इट इज नो मोअर तभी उसका नाश हुआ कहना यह अलग कथन पद्धति है। दो अलग-अलग कथन पद्धति हैं, जिनको हमने उत्पादानुच्छेद और अनुत्पादानुच्छेद कहा था। जिनको द्रव्यार्थिकनय और पर्यायार्थिकनय कहा था। कथन में डिफरन्स है, विवक्षा डिफरन्स है, परंतु विरोध नहीं है। किसीने किस विवक्षावश कथन किया है यह समझना चाहिये।

ये ८० से लेकर जो चार स्थान हैं वे नौवें गुणस्थान में जब १३ का क्षय हुआ तो ये स्थान उत्पन्न हुये। वे कब तक रहेंगे ? अयोगी के द्विचरम समय तक सत्ता है कह रहे हैं, सत्ता की बात है। द्विचरम समय में क्षय हुआ परंतु वहां सत्ता है, अंतिम समय में उसकी सत्ता नहीं है। फिर अंतिम समय में कितनी सत्ता रहेगी ? तो कहते हैं - **दस और नौ का सत्त्व अयोगी के अंतिम समय में पाया जाता है।** क्योंकि जो ७२ प्रकृतियों का क्षय होता है उनमें आहारकवाले को नामकर्म की ७० होगी या जिसके आहारक की सत्ता नहीं है उसके ६८ होगी। तो उसका उतनी प्रकृतियों का नाश होगा। जो तीर्थंकर की सत्ता सहित हैं उनके १० प्रकृतियां हैं सत्ता में और जो सामान्य केवली हैं, उनके ९ प्रकृतियां सत्ता में हैं, यहां नामकर्म की बात चल रही है।

हमने देखा कौनसा स्थान कहां होता है इसीको अब **इकतालीस जीवपदों में कहते हैं।** ४१ जीवपद याद हैं ? पहला पद कौनसा देखा था ? नारकी का पर्याप्त।

फिर बाद में कौनसे देखे थे ? एकेन्द्रिय संबंधी देखे थे जिनके बादर और सूक्ष्म दोनों भेद हो सकते हैं ऐसे पृथ्वीकायिक, अप्कायिक, तेजस्कायिक, वायुकायिक और साधारण वनस्पतिकायिक; इनके बादर भी और सूक्ष्म भी १० भेद हुये थे। फिर प्रत्येक वनस्पति, द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, संज्ञी पंचेन्द्रिय और मनुष्य ये सात हो गये। पहले १० और ये ७ मिलकर १७ हुये। १७ के पर्याप्त और १७ के अपर्याप्त ३४ हुये। पहला नारकी का १ और ये ३४ टोटल ३५ हो गये। केवली के ४ लिये थे - सामान्य केवली, तीर्थंकर केवली ये तो स्वस्थानवाले हुये और समुद्घातवाले सामान्य केवली और समुद्घातवाले तीर्थंकर केवली। ये पहले ३५ और ये ४; फिर आहारक का १ और देव का १। टोटल कितने हुये ? ४१ जीवपद। हम उन जीवों को इन नामों से कहेंगे, पहचानेंगे। कर्मपद यानी क्या लिया था ? उस कर्मपद सहित अन्य कर्मों का भी बंध हो रहा था, वे ३६ लिये थे। कर्मपद में केवली को नहीं लिया था क्योंकि केवली पद सहित वहां कोई नामकर्म का बंध नहीं हो रहा है। आहारकवाला देवगति के साथ लिया था क्योंकि वह देवगति सहित बंधता है।

पहला जीवपद हमने नारकी का देखा था। नारकी में कौन-कौनसे सत्त्वस्थान होंगे इसकी चर्चा करेंगे। हमें कुछ रटना नहीं है। ऐसा क्यों कहा ? उसका क्या कारण है ? बस उसकी चर्चा करेंगे। नामकर्म के सत्त्वस्थान नारकी में कौन-कौनसे हैं ? ९२, ९१ और ९० के ये तीन हैं। अभी ९२वाला कौनसा स्थान है ? तीर्थंकर रहितवाला है और आहारक सहितवाला है। नहीं समझे ? जिसके तीर्थंकर की सत्ता नहीं है; ९३ में से एक कौनसी घटायी ? तीर्थंकर की सत्ता घटायी तो उनकी सत्ता में आहारकद्विक है, तीर्थंकर प्रकृति नहीं है। ऐसा जीव कौनसे नरक में पाया जायेगा ? प्रश्न फिर से - जिसको ९२ की सत्ता है, तीर्थंकर की सत्ता नहीं है, आहारकद्विक की सत्ता है, ऐसा जीव कौनसे नरक में पाया जायेगा ? *श्रोता: एक से सात नरकों में पाया जायेगा।* सभी नरकों में पाया जायेगा। मिथ्यादृष्टि में आहारक की सत्ता हो सकती है कि नहीं हो सकती ? किसके होगी ? १४ जीवसमास में सबको होगी। सूक्ष्म निगोद को भी हो सकती है, नहीं हो सकती ? मिथ्यात्व में गया है क्योंकि उसने कभी बांधी है, अभी उद्वेलना पूरी नहीं हुयी है, तो मरकर कहीं पर भी जायेगा। तीर्थंकर हो तो थोड़ा विचार करना पड़ेगा। इतना है कि सासादनवाले को वह ९२वाला स्थान नहीं होगा। नारकी

सासादनवाले को ९२ की सत्ता नहीं होगी परंतु जो पहले गुणस्थानवाले नारकी हैं, तीसरे गुणस्थानवाले हैं, चौथे गुणस्थानवाले हैं उनके हो सकती है। आगे बढ़ेंगे-

देखो **नामकर्म के सत्त्वस्थान नारकी में बानबे**, अभी ९१ में क्या लिया था हमने ? आहारक को नहीं लिया, तीर्थंकर को लिया। तो यह नरक में कहां तक होगा ? तीसरे नरक तक क्योंकि तीर्थंकर की सत्ता तीसरे नरक तक ही पायी जाती है और ९० के ? ९० का सर्वत्र होगा। ९० कौनसा है ? ना तीर्थंकर की सत्ता है, ना आहारक की, तो यह सत्त्व कभी भी, किसी भी गुणस्थान में पाया जायेगा। हमने देखा था सासादनवाले को ९०वाला ही होगा यानी किसी भी गुणस्थान में किसी भी पर्याय में होगा। पृथ्वीकाय आदि सर्व तिर्यंचों में, अब सभी तिर्यंच हैं तो ९३ और ९१ का विचार ही नहीं करना क्योंकि वे स्थान तीर्थंकर प्रकृतिवाले हैं। तिर्यंच है न यह, तो कौन-कौनसा सत्त्व होगा ? ९२ का होगा, ९० का होगा, ८८ का होगा, ८४ का होगा और ८२ का होगा। ८२वाले करनेवाले वायुकायिक-अग्निकायिक होंगे, परंतु वे मरकर इन तिर्यंचों में उत्पन्न होंगे उस अपेक्षा से सबको यहां ले लिया है, ख्याल में आती है बात ? याद करने की कोशिश मत करो। तिर्यंच है, तीर्थंकर की सत्ता हो नहीं सकती। तीर्थंकर की सत्तावाले दो ही है ९३वाला और ९१वाला। तो तिर्यंच में आहारक की सत्तावाला होगा कि नहीं होगा ? एकेन्द्रिय में जा सकता है न मिथ्यात्व में जाकर ? तो ९२ का होगा। ९०वाला तो दोनों से रहित है वह भी होगा और उद्वेलना इन्हीं पर्यायों में होती है तो उद्वेलना की अपेक्षा ८८ का भी होगा, ८४ का भी होगा और ८२ का भी होगा।

मनुष्य में ९३ का होगा कि नहीं होगा ? अरे होगा न, मनुष्य में तो होता है। ९२वाला ? हां होगा। फिर ९१वाला ? होगा। ९०वाला ? होगा। ८८वाला ? होगा क्योंकि देवद्विक की उद्वेलना करके मनुष्य में आया है और ८४वाला ? होगा और ८२वाला? नहीं हो सकता। ८२वाले को छोड़कर बाकी सभी होंगे और आगेवाले ८०, ७९, वगैरह सब ? वे सब मनुष्य के ही होते हैं क्योंकि क्षपणा का कार्य मनुष्य में ही तो होगा। तो मनुष्यगति में ही बाकी सब घटित होंगे। **सयोगकेवली** गुणस्थान **में अस्सी आदि चार स्थान हैं**; क्योंकि वहां पर क्षपणा नहीं हुयी, अभी सत्ता में हैं। पहले १३ कम करके आया है अब ये ८० आदि चार स्थान हैं। **अयोगकेवली में अस्सी आदि छह स्थान हैं।** सयोगकेवली से अयोगकेवली के स्थान ज्यादा होंगे ? ऐसे कैसे ? पहले सयोगकेवली में थे सत्त्व उसके साथ अयोगी में गये, द्विचरम समय तक तो उतना ही सत्त्व रहा। अंतिम

समय में १० और ९ का हो गया। इसलिये उनके छह स्थान पाये जाते हैं।

यहां नीचे की टीका पढ़ेंगे - **केवली में जो स्थान कहे, सयोगकेवली में चार और अयोगी में छह उनमें तीर्थंकर सहित में समरूप और तीर्थंकर रहित में विषमरूप प्रकृति जानना।** क्या कहना चाहते हैं ? सयोगी में अयोगी में दोनों में जो स्थान देखे। विषम और सम समझते हैं न ? हां, ऑड नंबर और ईव्हन नंबर जल्दी समझते हैं, हिंदी में जल्दी नहीं समझते हैं। १, ३, ५ आदि कैसी हैं ? विषम संख्यायें हैं और २, ४, ६ वगैरह कैसी हैं ? सम संख्यायें हैं। यहां क्या लिखा है देखो, तीर्थंकर सहित में - सयोगी और अयोगी की बात चल रही है; यहां सम में बतायी है, पहले तो विषम में तीर्थंकर थी। अब १३ का क्षय होने के बाद की बात है क्योंकि इतनी सत्ता सहित सयोगी में गये हैं। अयोगी में भी ये सत्त्व कायम रहेगा और बाद में १० और ९ का होगा। इनके लिये सम संख्या कौनसी है इसमें ? ८० और ७८ और १० ये तीनों सम संख्यावाले हैं वे तीर्थंकर की सत्तावाले हैं। ७९, ७७ और ९ ये विषम संख्यावाले हैं और तीर्थंकर की सत्ता से रहित हैं क्योंकि जो पहले विषम थे उनमें से १३ यानी विषम में से विषम बाद किये तो सम संख्या आयी। यह पहले की बात नहीं, बाद की बात है; सयोगी और अयोगी की बात है। विषम यानी ऑड।

देखो, **सयोगी में अस्सी, अठहत्तर के और अयोगी में अस्सी, अठहत्तर और दस के ऐसे सम गिनतीवाले स्थान तीर्थंकर के सत्त्व सहित हैं और अयोगी में उन्नासी, सतहत्तर के तथा अयोगी में उन्नासी, सतहत्तर और नौ के ऐसे विषम गिनतीवाले स्थान सामान्य केवली के यानी तीर्थंकर रहित के सत्त्वरूप हैं।** आहारक पद में; आहारक पद कह रहे हैं, यह जीवपदों की बात है। हमने पहले नारकी पद भी देखा था, फिर मनुष्यों में भी देखे थे, मनुष्यों के बाद केवली के पद देखे थे और अब ये जीवपदों की बात है। तो कहते हैं **आहारक पद में तिरानबे, बानबे के दो स्थान हैं।** आहारक पद है तो उनके आहारक होगी कि नहीं होगी ? हां, उनके तीर्थंकर नहीं भी होगी, होगी भी। इसलिये कहते हैं ९३, ९२ के दो स्थान हैं। **वैमानिक देवों में आदि के चार स्थान हैं।** कौनसे ? ९३, ९२, ९१ और ९०; उनमें क्षय नहीं होता तो ८० आदि स्थान नहीं होंगे; उनमें उद्वेलना नहीं होती है तो ८८ आदि भी स्थान नहीं पाये जायेंगे। *श्रोता: आहारक पद में ९३ और ९२ क्यों बताया ?* आहारक है और

तीर्थंकर भी है तो ९३ का हुआ। अकेला आहारक है और तीर्थंकर नहीं है तो ९२ का।

आगे ५९५ पृष्ठ पर - **भवनत्रिक देवों के, सर्व भोगभूमिया मनुष्य,तिर्यंचों के अंजनादि** कितने नंबर की ? चौथे। **नीचे की चार पृथ्वी के *(चौथे से सातवें नरक के)*** नारकियों के ९२, ९० के दो ही सत्त्वस्थान हैं। क्या कहना चाहते हैं ? भवनत्रिक में तीर्थंकर की सत्तावाले होंगे कि नहीं ? नहीं हो सकते। भोगभूमि के मनुष्य या तिर्यंचों में ? हो ही नहीं सकते। परसों किसीका प्रश्न आया था न भोगभूमि के तिर्यंच या मनुष्य तीर्थंकर प्रकृति बांधेंगे कि नहीं बांधेंगे या मरकर जायेंगे कि नहीं ? नहीं जा सकते। हमने देखा था कि जिसने मनुष्यायु का बंध किया है, वह मनुष्य तीर्थंकर प्रकृति नहीं बांधेगा। अभी उसके लिये यह प्रूफ आया कि नहीं आया ? क्योंकि भोगभूमिवालों में तीर्थंकर का सत्त्व ही नहीं है। भोगभूमि में क्षायिक सम्यग्दृष्टि पाये जाते हैं यानी जिसने क्षायिक सम्यग्दर्शन प्राप्त किया है वह मरकर यहां से भोगभूमि का मनुष्य होगा। यहां से यानी चौथेकाल में, पंचमकाल की बात नहीं है। परंतु जिसने तीर्थंकर प्रकृति का बंध किया है वह देव में जायेगा; या बद्धायु होगा नरकायुवाला तो नरक में जायेगा; भोगभूमि का मनुष्य या तिर्यंच नहीं बन सकता। तिर्यंचों के कभी तीर्थंकर प्रकृति नहीं होती है।

चौथे नरक के नीचे नरकों में तीर्थंकर प्रकृति का सत्त्व नहीं है। उनमें कौनसा पाया जायेगा ? ९२ और ९०। उनमें ८८ आदि आगे के स्थान नहीं पाये जायेंगे और वे ८० आदि ? वे क्षपणावाले स्थान भी नहीं पाये जायेंगे। पहले चार में ही मुख्यत: सोचना है। तिर्यंचों में उद्वेलना का सोचना है और जो मनुष्य क्षपकश्रेणी चढ़ेगा उसमें क्षपणा की बात सोचनी है। **सर्व ही सासादन गुणस्थानवर्ती जीवों** यानी चारों गति के सासादनवाले **के नब्बे का ही स्थान है।** क्यों ? आहारकवाले भी दूसरे गुणस्थान में नहीं आते, तीर्थंकर सत्त्ववाले भी नहीं आते हैं। ९३ में से तीनों को बाद करो, तो ९०वाला ही सत्त्व होगा। ८८वाला वगैरह होगा कि नहीं होगा ? वे मिथ्यादृष्टि के होते हैं। ८८, ८४ वगैरह जो उद्वेलनावाले स्थान वे मिथ्यादृष्टि के होते हैं और यहां बात सासादन की चल रही है। उसके अकेला मात्र एक ९०वाला ही स्थान हो सकता है। हमने कहां कौनसे स्थान होते हैं उसकी बात देखी। यह तो जितना हमें घटित करना है उतना मार्गणाओं में घटित कर सकते हैं।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

५९. नामकर्म के बंध, उदय, सत्त्वस्थानों में त्रिसंयोग

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है। उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी है और उसीका हिंदी अनुवाद देखते हुये हम स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार देख रहे थे। हमने नामकर्म के बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान देख लिये, उसके पहले मोहनीय के भी बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान देख लिये हैं। अब हम विषय आगे बढ़ाते हैं, हमने मूलप्रकृति और उत्तरप्रकृतियों के जो बंध, उदय और सत्त्व के स्थान देखे उनके संयोगरूप कुछ भंग बतायेंगे। हमें विस्तार में नहीं जाना है, बिलकुल स्थूल-स्थूल बातें देखेंगे। पृष्ठ ५९५ पर गाथा ६२८ की टीका पढ़ेंगे।

अट्ठविहसत्तछब्बंधगेसु अट्ठेव उदयकम्मंसा।
एयविहे तिवियप्पो एयवियप्पो अबंधम्मि॥ ६२८॥

मूलप्रकृतियां ज्ञानावरणादि के भेद से आठ प्रकार की हैं। ये आसान हैं न हमारे लिये; आठ मूलप्रकृतियां हैं - ज्ञानावरण, दर्शनावरण, मोहनीय, अंतराय, वेदनीय, आयु, नाम और गोत्र; घाति-अघाति चार-चार। **वहां जिस जीव के** मूलप्रकृतियों की बात है, उत्तर भेदों की बात नहीं है। मूलप्रकृति सात बंध रही हैं कि आठ बंध रही हैं ? उसका उदय सात का है कि आठ का है ? सत्त्व कितने का है ? इतनी बात है। हम उत्तरप्रकृतियों में देख चुके हैं। मूलप्रकृतियों में किसी एक स्थान पर बंध कितना है ? उदय कितना है ? और सत्त्व कितना है ? मूलप्रकृतियों में आसान है। क्या सभी की सभी मूलप्रकृतियों का बंध हो रहा है ? क्या सभी का उदय है ? क्या सभी का सत्त्व है ? इतनी बात बतायेंगे - यह बहुत आसान है, उत्तरप्रकृतियों में थोड़ा सोचना पड़ता है।

जिस जीव के आठ, सात, या छह प्रकार की मूलप्रकृतियों का बंध होता है, आगे का वाक्य बाद में पढ़ेंगे। आठ मूलप्रकृतियों का बंध हो रहा है; यह कौनसे गुणस्थान में होता है ? *श्रोता: मिथ्यात्व में।* मिथ्यात्व में ही होता है केवल ? आठ का अर्थ क्या है ? आयुकर्म सहित सभी कर्म बंध रहे हैं तो तीसरा गुणस्थान छोड़ दो। पहले गुणस्थान में भी आठों कर्म बंध सकते हैं, कभी सात कभी आठ; दूसरे गुणस्थान में भी, चौथे गुणस्थान में, पांचवें गुणस्थान में, छठे गुणस्थान में, सातवें गुणस्थान में -

वहां तक आठ प्रकृतियों का बंध हो सकता है। तो कहते हैं जहां आठ, सात प्रकृतियों का बंध; कहां होता है ? अभी देखे वहां सात का भी हो सकता है; जहां आयु नहीं बंध रही है। तीसरे गुणस्थान में मात्र सात का होता है और सात का कहां होगा ? आठवें गुणस्थान में होगा; नौवें गुणस्थान तक मोहनीय का है, आयु का नहीं हैं; परंतु दसवें गुणस्थान में मोहनीय का भी बंध नहीं हैं और आयु का भी नहीं है। वहां छह का है।

जिस जीव के आठ प्रकृतियों का बंध है, **सात** प्रकृतियों का है; मूलप्रकृतियों की बात चल रही है, उत्तर भेदों की नहीं; या **छह प्रकार की मूलप्रकृतियों का बंध होता है**, **उसके उदय और सत्त्व आठ-आठ प्रकार का ही जानना।** ही लगाया है यानी जो सात प्रकृतियों का बंध कर रहा है, आयु का बंध नहीं कर रहा है उसके आयु का उदय चल रहा है कि नहीं चल रहा है ? *श्रोता: चल रहा है।* चल रहा है यानी उसका उदय आठ का है। उदय आठ का है, सत्ता में आठ होंगे तो ही उदय आठ होगा। तो जो आयु का बंध नहीं कर रहा है ऐसा सात प्रकृतियों का जो बंध कर रहा है उसके उदय आठ का है, सत्त्व भी आठ का है। जिस समय आयु का बंध कर रहा है उस समय भी उदय आठ का है, सत्त्व आठ का है और जिस समय वह छह का बंध कर रहा है; कब करता है ? दसवें गुणस्थान में, दसवें गुणस्थान में आयु और मोहनीय बिना छह प्रकृतियों का बंध हो रहा है। वहां भी उदय कितने का है ? आठ का है।

जिसके एक प्रकार की मूलप्रकृति का बंध है, यह कब होगा ? *श्रोता: ग्यारहवें में।* ग्यारहवें गुणस्थान में। दसवें गुणस्थान में क्या-क्या बंध था ? ज्ञानावरण का था, दर्शनावरण का था, अंतराय का था, फिर वेदनीय का था, नाम का था और गोत्र का - छह का बंध हो रहा था। ग्यारहवें गुणस्थान में जाने पर अभी कौनसा बंध रह गया ? वेदनीय; सातावेदनीय यानी मूलप्रकृति वेदनीय की बात करेंगे। वेदनीय का बंध रह गया तो जहां एक वेदनीय का बंध हो रहा है, वहां गुणस्थान कौन-कौनसे हैं ? ग्यारहवां, बारहवां और तेरहवां। प्रश्न है - वहां उदय कितना है और सत्त्व कितना है ? जहां एक मूलप्रकृति का बंध है **उसके उदय सात प्रकार के**, कौनसा उदय रुक गया ? *श्रोता: मोहनीय का।* मोहनीय का क्योंकि मोहनीय का उदय तो दसवें गुणस्थान तक ही है। अभी ग्यारहवें गुणस्थानवाले को कितने का उदय है ? सात का है, हां, सत्त्व आठ प्रकार का है। ग्यारहवें गुणस्थान में सत्ता में से नाश नहीं हुआ है तो **सत्त्व आठ प्रकार का है अथवा**; अब अथवा कहेंगे **उदय और सत्त्व दोनों सात-सात प्रकार का** है।

यह क्यों कहा ? कौनसे गुणस्थान में होगा ? बारहवें गुणस्थान में उदय सात का होगा क्योंकि मोहनीय का क्षय कर दिया है और सत्त्व भी सात का होगा।

अभी तीसरा ऑप्शन जहां एक का बंध हो रहा है अभी कौन रह गया ? ग्यारहवां गुणस्थान हो गया, बारहवां गुणस्थान हो गया, अभी कौन रह गया ? तेरहवां गुणस्थान तो तेरहवें गुणस्थानवाले को मूलप्रकृतियां कितनी उदय में हैं और कितनी सत्त्व में हैं ? *श्रोता: चार।* चार, तो **उदय और सत्त्व दोनों चार-चार प्रकार के पाये जाते हैं।** यह कितना आसान है। है न ! केजी क्लास का लगता है न अभी ! **पुनश्च जिसके एक भी मूलप्रकृति का बंध नहीं है**, ऐसा कौन हैं ? अयोगकेवली तो उनके उदय और सत्त्व होगा कि नहीं होगा ? कितना होगा ? *श्रोता: चार का।* चार का। **उनके उदय और सत्त्व दोनों चार-चार प्रकार के ही हैं।** बात ख़्याल में आयी ?

अब इसी को यंत्र में यानी कोष्टक में बतायेंगे। जहां बंध आठ का है वहां उदय आठ और सत्ता आठ है। देखो, नीचे लिखा है - यह आठ यानी उसके बंधस्थान। सात का आयु बिना, जहां बंध सात का है वहां उदय आठ और सत्ता भी आठ; सात कहा उसमें क्या समझना था ? आयु बिना अन्य सात का बंध है। जहां छह कहा है वहां ? आयु का भी बंध नहीं हैं और मोहनीय का भी बंध नहीं है और वह कौनसा लिया था हमने ? दसवां गुणस्थान। ग्यारहवें में एक का बंध हो जायेगा, मात्र वेदनीय का। जहां एक का बंध है वहां देखो तीन ऑप्शन दिये हैं - एक ग्यारहवें गुणस्थान में सात का उदय है और आठ की सत्ता है क्योंकि ग्यारहवें गुणस्थान में मोहनीय की सत्ता है, उदय में नहीं है। बारहवें गुणस्थान में एक का बंध है, सात का उदय है और सात की सत्ता है। तेरहवें गुणस्थान में एक का जो बंध है अभी यह तेरहवें गुणस्थान की बात है। एक का बंध हो रहा है उदय कितना है ? *श्रोता: चार का।* चार का। उनके अघातिकर्म हैं; चारों का उदय है और सत्त्व भी चारों का है। जहां झिरो यानी अयोगकेवली हैं; बंध नहीं है, फिर भी उदय और सत्त्व चार-चार का है। यह मूलप्रकृतियों पर उन्होंने बंध, उदय और सत्त्व के साथ कंपॅरिझन करके संयोग करके बता दिये कैसे हैं।

अब यही गुणस्थानों में घटित कर सकते हैं। यह पढ़ने के बदले आगे का टेबल देखेंगे तो और आसान हो जाता है। ५९७ पृष्ठ पर- मिथ्यात्व गुणस्थान में हम सोचते हैं। मिथ्यात्व गुणस्थान में बंध कितने का है ? कभी आठ का, कभी सात का; जब आयु बंध

रही है तभी आठ का है। आयु का बंध हर समय तो नहीं होता है, कभी-कभी होता है। जब नहीं हो रहा है तब सात मूलप्रकृतियों का बंध हो रहा है। परंतु उस समय उदय कितने का है ? आठ का और सत्ता कितने की है ? वह भी आठ की है। सासादन गुणस्थान में देखते हैं- वहां भी आठ का बंध है या सात का बंध है क्योंकि वहां भी आयु का बंध हो ही सकता है। वहां भी उदय आठ का है और सत्त्व भी आठ का है। मिश्र गुणस्थान में ? आयु का बंध होता ही नहीं तो मात्र सात का ही बंध है, आठ का उदय है और आठ की ही सत्ता है। असंयत गुणस्थान में ? फिर आठ या सात का बंध है। जब आठ का बंध है तब आठ का उदय और आठ की सत्ता और जिस समय सात का बंध हो रहा है उस समय भी आठ का उदय और आठ की सत्ता। पांचवें गुणस्थान में भी ऐसा ही है। बंध आठ का हो या सात का हो, उदय भी आठ का और सत्त्व भी आठ का है। प्रमत्त गुणस्थान में भी ऐसा ही है। अप्रमत्त गुणस्थान में भी ऐसा ही है।

अपूर्वकरण गुणस्थान में क्या है ? आयु का बंध होता है ? कौनसी आयु बंधती है अपूर्वकरण गुणस्थान में ? कहां पर ? वहां देवगति बंधती है। अपूर्वकरण गुणस्थान में आयु का बंध नहीं होता तो वहां सात लिखा है, परंतु फिर भी उदय और सत्त्व आठ-आठ का है। अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में भी ऐसा ही है; सात का बंध, आठ का उदय, आठ की सत्ता। सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान में ? अभी यहां मोह का बंध नहीं है। तो आयु का भी बंध नहीं है और मोहनीय का भी नहीं है। तो वहां छह का बंध है आठ का उदय और आठ की सत्ता। उपशांतमोह गुणस्थान में अभी बंध कितने का है ? *श्रोता: एक का।* एक का ही है, वेदनीय का ही है और उदय ? *श्रोता: सात का।* किसका उदय नहीं है ? *श्रोता: मोहनीय का।* मोहनीय का। उपशांतमोह गुणस्थान है न, उपशमित हुये हैं, उदय नहीं है, परंतु सत्ता में है तो सत्त्व आठ का होगा। क्षीणमोह गुणस्थान जहां है, मोहनीय का क्षय कर दिया है तो यहां बंध एक का ही है जैसा ग्यारहवें गुणस्थान में था, परंतु सत्ता कितने की होगी, उदय कितना है ? *श्रोता: सात का।* सात और सत्ता भी ? उपशांतमोह गुणस्थान में सत्ता आठ की थी और क्षीणमोह गुणस्थान में ? सात की ही सत्ता है, उन्होंने क्षय कर दिया है। सयोगकेवली में ? एक का ही बंध है। क्षीणमोह गुणस्थान में सात का उदय था, यहां चार का हो गया; सत्ता भी और उदय भी। कौनसी तीन चली गयी ? *श्रोता: ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय।* ज्ञानावरण, दर्शनावरण और अंतराय। उनका क्षय कर दिया है इसलिये चार का उदय और चार की सत्ता।

अयोगकेवली में बंध नहीं है, उदय चार का है और सत्ता चार की है।

यह हमने पहले देखा था, उन्होंने यहां यंत्र बनाकर गुणस्थान में लिख दिया। यह मूलप्रकृति में हुआ, अब थोड़ा उत्तरप्रकृति में देख लेते हैं। है न ! आसान है कुछ कठिन नहीं है ! अभी हम अलग-अलग एक-एक प्रकृति लेकर उनकी उत्तरप्रकृतियों पर घटित करेंगे। ज्ञानावरण को और अंतराय को सबसे पहले लेते हैं। उसमें ज्यादा सोचने की बात नहीं है। ज्ञानावरण और अंतराय की पांच-पांच प्रकृतियां कहां से कहां तक बंधती हैं ? *श्रोता: पहले से लेकर दसवें तक।* पहले गुणस्थान से लेकर दसवें गुणस्थान तक बंध है। सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान तक बंध, उदय, सत्त्वरूप हैं यानी सभी पांच-पांच-पांच सभी जगह हैं। पांच का बंध, पांच का उदय, पांच का सत्त्व यानी सूक्ष्मसाम्पराय गुणस्थान तक कुछ सोचना नहीं है। बाद में, बंध का अभाव होने पर उपशांतमोह गुणस्थान और क्षीणमोह गुणस्थान में, क्या होगा उनका ? उदय है कि नहीं है ? उदय है और सत्ता नहीं है ? सत्ता भी है। बंध नहीं है, ज्ञानावरण का बंध नहीं है परंतु उदय भी पांचों का है और सत्त्व भी पांचों का है। क्षीणमोह गुणस्थान में बंध नहीं है, उदय पांचों का और सत्ता पांचों की है। दोनों में ही घटाया, दोनों के ही टेबल बनाये। दोनों में ही पांच-पांच प्रकृतियां हैं कि नहीं ? पांचों हैं। यह ज्ञानावरण, अंतराय की बात हो गयी। तीनों को हम एक साथ सोच रहे हैं - कौनसे गुणस्थानों में, कौनसी उत्तरप्रकृतियां यानी कितने का बंध है, कितने का उदय है और कितने का सत्त्व है।

अब दर्शनावरण की बात देखते हैं, उसमें त्रिसंयोग की रचना करेंगे। त्रिसंयोग यानी बंध, उदय और सत्ता का हम गुणस्थानों में एक साथ विचार करेंगे। यहां हम डायरेक्ट टेबल देखेंगे। दर्शनावरण में कितने का बंध होता है ? *श्रोता: नौ का।* नौ का। कौन-कौनसे गुणस्थानों में ? पहले और दूसरे में नौ का बंध होता है। दूसरे में क्या विशेषता होती है ? *श्रोता: तीन की बंधव्युच्छित्ति होती है।* तीन की बंधव्युच्छित्ति; कौनसे तीन ? *श्रोता: स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला।* स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला। तीसरे गुणस्थान से बंध कितने का होगा ? *श्रोता: छह का होगा।* छह का होगा। पहले गुणस्थान की बात सोचते हैं, जब नौ का बंध है तो उदय कितने का है ? नौ का है कि नहीं है ? *श्रोता: जाग्रत अवस्था में चार का।* जाग्रत अवस्था में चार का और निद्रित यानी जब नींद में हैं तब पांच का क्योंकि सभी निद्राओं का एक साथ उदय नहीं हो

सकता, किसी एक का होगा वह भी अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में बदलता रहता है। उदय चार या पांच का होगा। सत्ता में कितनी होंगी ? सत्ता में भी चार-पांच होंगी ? अरे ! बंध नौ का हो गया है। देखो टेबल में - मिथ्यात्व गुणस्थान में बंध नौ का है, उदय चार या पांच का है। चार या पांच जब कहते हैं जाग्रत अवस्था में चार का है; कौनसे चार ? चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण और केवलदर्शनावरण। और पांच यानी ? कोई भी एक निद्रा उनके साथ ले लो। और सत्ता ? नौ के नौ की है।

अब सासादन में देखते हैं- वहां भी बंध नौ का है, उदय चार या पांच का है और सत्ता नौ की है। *श्रोता: सासादन गुणस्थान में भी नींद आती है क्या ?* सासादन गुणस्थान में भी नींद आती है क्या, ऐसा प्रश्न पूछ रहे हैं। आयेगी, हां एक समय है या जो कुछ है। छह आवली में आयेगी कि नहीं आयेगी ? क्योंकि अभी इतना पुरुषार्थ करके थक गया है न। सम्यक्त्व प्राप्त करके अनंतानुबंधी का उदय आ जायेगा। देखो, तीसरे मिश्र गुणस्थान में आया है तो तीन की बंधव्युच्छित्ति हो गयी है। अभी यहां से छह का बंध होगा। कौनसे गुणस्थान तक ? *श्रोता: आठवें के पहले भाग तक।* आठवें के पहले भाग तक, वहां जाकर निद्रा और प्रचला की बंधव्युच्छित्ति होती है। तब तक हम तीसरे, चौथे, पांचवें गुणस्थान में क्या कहेंगे ? छह का बंध है। अब देखते हैं - मिश्र गुणस्थान में छह का बंध है, उदय चार या पांच का और सत्ता नौ की। नौ की सत्ता कब तक बनेगी ? जब तक क्षपणा नहीं हुयी तब तक। क्षपकश्रेणी में क्षपणा किसकी होगी ? दर्शनावरण के कौनसी प्रकृति की क्षपणा सबसे पहले हो जायेगी ? *श्रोता: तीन निद्रा की।* तीन निद्रा, कब होगी ? जहां हमने नामकर्म की १३ देखी थी उनके साथ ये तीन; एक साथ सोलह का क्षय हो जाता है। तब तक सत्ता कितनी रहेगी ? नौ की। क्षपकश्रेणीवाले के नौ की सत्ता में से तीन का क्षय होने पर छह हो जायेंगे। उपशमश्रेणी में सत्ता कितनी रहेगी ? नौ की ही। कब तक ? ग्यारहवें गुणस्थान तक। क्षपकश्रेणी में तीन की सत्ता कम हो जायेगी तब तक सत्ता नौ की कहेंगे।

असंयत गुणस्थान में भी छह का बंध है, चार या पांच का उदय है और नौ की सत्ता है। देशसंयत गुणस्थान में भी छह का बंध है, चार या पांच का उदय है और नौ की सत्ता है। प्रमत्तसंयत गुणस्थान में छह का बंध है, चार या पांच का उदय है और नौ की सत्ता है। अप्रमत्त गुणस्थान में भी छह का बंध है, चार या पांच का उदय है और नौ की सत्ता है। प्रमत्त गुणस्थान में भी निद्रा का उदय है जब पांच कहा है और अप्रमत्त

गुणस्थान में भी पांच कहे हैं उसमें कुछ अंतर है क्या ? प्रमत्त में भी निद्रा का उदय है और अप्रमत्त में भी निद्रा का उदय है तो उसमें क्या अंतर है ? *श्रोता: स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा और प्रचला-प्रचला की उदयव्युच्छित्ति होती है।* स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा और प्रचला-प्रचला की उदयव्युच्छित्ति कहां होती है ? *श्रोता: छठे गुणस्थान में।* छठे गुणस्थान में होती है। तो सातवें गुणस्थानवाले में जो हम पांच का उदय कह रहे हैं वहां निद्रा या प्रचला का उदय है। समझ में आती है बात ? पांच प्रकृति कही तो दर्शनावरण की चार रेग्युलर हमने ली और इन ऑडिशन कौनसी ली ? निद्रा या प्रचला।

छठे गुणस्थान में ? चार तो हैं ही और कौनसी एक होगी ? स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला, निद्रा और प्रचला पांचों में से कोई एक होगी। चक्षुदर्शनावरण, अचक्षुदर्शनावरण, अवधिदर्शनावरण, केवलदर्शनावरण चार या पांच। पांचवीं कौनसी हो सकती है ? पांचों निद्रा में से कोई भी हो सकती है। कहां तक ? छठे गुणस्थान तक। सातवें गुणस्थानवाले को ? जब पांच कहेंगे तो उसमें मात्र निद्रा या प्रचला का ऑप्शन है। वहां कहेंगे चार या पांच, परंतु तीन निद्रा की उदयव्युच्छित्ति छठे गुणस्थान में हो गयी। अपूर्वकरण गुणस्थान में ? पहले भाग में कितने का बंध है ? छह का। पहले भाग में निद्रा, प्रचला के बंध की व्युच्छित्ति हो जायेगी; पहले भाग में बंध है दूसरे भाग से नहीं है इसलिये यहां छह और चार दोनों लिखे। पहले भाग में छह फिर दूसरे भाग से चार का बंध है। उदय ? वही चार या पांच का और सत्त्व नौ का। देखो, अभी अपूर्वकरण, अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में उपशामक और क्षपक ऐसे दो-दो लिये हैं। क्षपक में कुछ खास बात हो सकती है ? अपूर्वकरण क्षपक में कोई क्षपणा होती है ? कुछ नहीं होती। आठवें गुणस्थान में क्षपणा का या उपशमना का कोई कार्य नहीं होता, उसको श्रेणी का गुणस्थान कहा है। क्योंकि श्रेणी की कुछ विशुद्धि बढ़नी है वहां उतना कार्य होता है। बाकी ना उपशमने का कार्य होता है, ना क्षपणा का कार्य होता है।

फिर अनिवृत्तिकरण गुणस्थान में आते हैं। उपशामक के बंध चार का है, उदय चार या पांच का है और सत्ता नौ की है और क्षपक के बंध चार का है, उदय चार या पांच का है। अब यहां नौ की सत्ता थी; जब नामकर्म की १३ का क्षय होता है उसके साथ-साथ ये जो स्त्यानगृद्धि, निद्रा-निद्रा, प्रचला-प्रचला उदयरूप नहीं थी परंतु सत्ता में थी उनका यहां पर क्षय हो गया; इसलिये नौ का सत्त्व था वह छह का हो गया। हम

पहले इसको देख चुके हैं। *श्रोता: क्षपक अनिवृत्तिकरणवाले के नौ और छह का सत्त्व लिया।* नौ, शुरुआत में नौ थी; जब क्षय हो जायेगा तो तीन कम हो गयी उनमें से, छह रह गयी। अब सूक्ष्मसाम्पराय उपशामक में देखेंगे। जो आठवें गुणस्थान में है, वही नौवें गुणस्थान में है, है न ! तो सूक्ष्मसाम्पराय उपशामक- दसवें गुणस्थान में कितना है ? चार का बंध है, चार या पांच का उदय है और नौ का सत्त्व है। सूक्ष्मसाम्पराय क्षपक में चार का बंध है, उदय चार या पांच का है और सत्ता छह की है।

उपशांतमोह गुणस्थान में बंध नहीं है, उदय चार या पांच का और सत्ता नौ की है। तो वहां यह उपशमित है कि क्या है ? उपशांतमोह में ये उपशमित हैं ? दर्शनावरण उपशमित है कि क्या है ? कुछ नहीं है। किसका उपशम होता है ? *श्रोता: मोहनीय का।* मोहनीय का, मात्र मोहनीय का। बाकी किसीको मत उपशमाना, यदि ज्ञानावरण का उपशम हो गया, कितने काल तक ? अंतर्मुहूर्त तक के लिये, तो केवलज्ञान हो जायेगा ! सब कुछ जान लिया, फिर राग-द्वेष करने के लिये छूट। क्षीणमोह गुणस्थान में ? क्षीणमोह गुणस्थान में दो कॉलम किये हैं, पहले कॉलम में लिखा है बंध नहीं है और उदय चार या पांच का है और वहां सत्ता छह की है; दूसरे कॉलम में लिखा है बंध तो नहीं है, उदय चार का ही है और सत्ता भी चार की है। ऐसा क्यों ? उपांत्य समय में निद्रा और प्रचला का उदय भी मिटता है और क्षय भी होता है यह हमने पहले देखा था। अंतिम समय तो सब का क्षय हो जायेगा। ये दर्शनावरण की बात देखी थी हमने।

अब वेदनीय की बात देख लेते हैं। वेदनीय की कितनी प्रकृतियों का बंध होता है ॲट अ टाइम ? *श्रोता: एक का।* एक का, कहां से कहां तक एक का बंध होता है ? पहले से तेरहवें गुणस्थान तक। मैंने क्या पूछा ? एक का बंध कहां होता है ? पहले से लेकर तेरहवें गुणस्थान तक। ऑप्शनल कहां होता है पूछेंगे, तो छठे गुणस्थान तक ऑप्शनल है; सातावेदनीय बंधेगी या असातावेदनीय बंधेगी और बाद में मात्र साता का ही बंध होगा। जब एक का बंध हो रहा है तो उदय कितने का हो रहा है ? *श्रोता: दोनों का।* दोनों का नहीं, उदय भी एक का ही रहेगा। यह जरूरी नहीं कि साता बंध रही है तो साता का ही उदय है। उसमें कोई भी कॉम्बिनेशन हो सकता है। उदय साता का है और बंध असाता का है यह हो सकता है कि नहीं हो सकता ? *श्रोता: हो सकता है।* हां, या बंध जब हो रहा है साता का या असाता का कुछ भी, तो उदय भी कुछ भी हो सकता है। परंतु सत्ता में कितने होंगे ? *श्रोता: दोनों।* दोनों, दोनों। जहां बंध साता का है,

मान लेते हैं उदय भी साता का है, तो सत्ता में क्या होगा ? हां, असाता अभी अंतर्मुहूर्त के लिये उदय में नहीं है परंतु सत्ता में दोनों ही पड़ी हैं क्योंकि अंतर्मुहूर्त-अंतर्मुहूर्त में इनका बंध चेंज होता रहता है, उदय भी चेंज होता रहता है।

अभी पढ़ेंगे हम - **साता और असाता में एक ही का बंध और उदय, योग्य स्थान में होता है।** योग्य स्थान में क्यों कहा ? वह ब्रॅकेट में लिखा है ***(पहले से छठे तक दोनों में से एक और सातवें से आगे साता का ही बंध)*** **तथा सत्त्व तो सयोगी तक दोनों ही का है। अयोगी में उदय जिसका है, उसी का सत्त्व है; इसलिये गुणस्थानों में वेदनीय के भंग इस प्रकार हैं।** वेदनीय में कैसे लगायेंगे भंग ? *श्रोता: जिसका उदय है उसी का सत्त्व है ?* ॲक्चुअलि दोनों का सत्त्व अयोगी के उपांत्य समय तक कहना है। दूसरे का सत्त्व भी उपांत्य समय तक है। वहां उसका क्षय हो जाता है परंतु मूल पुस्तक में जैसा था वैसा ही उसका ट्रान्स्लेशन कर दिया है। कहां-कहां चेंजेस हैं उसे प्रस्तावना में देखना पड़ेगा। उसमें बहुत सारी बातें लिखी हैं। देखो, **अयोगी में जिसका उदय है, उसी का सत्त्व है** बताया यह बात अंतिम समय में लागू होती है। गुणस्थानों में देखते हैं - छठे प्रमत्तसंयत गुणस्थान तक तो साता का बंध और उदय, सत्त्व दोनों का। क्या-क्या कॉम्बिनेशन्स हो सकते हैं ? छठे प्रमत्तसंयत गुणस्थान तक यानी पहले, दूसरे, तीसरे, छठे गुणस्थान तक बंध किसका हो रहा है ? साता का। उदय किसका है ? साता का। हम ॲट अ टाइम एक बात देख रहे हैं, ऑप्शन बाद में देखेंगे। उदय एक साथ दोनों का कभी भी नहीं होता, दोनों में से एक का होगा।

अब कॉम्बिनेशन्स कौन-कौनसे हो सकते हैं उसको देखेंगे। अथवा कहकर दूसरा भी कॉम्बिनेशन- भंग बतायेंगे बाद में। **छठे प्रमत्तसंयत तक तो साता का बंध है, साता का उदय है, सत्त्व** कितने का होगा ? *श्रोता: दोनों का।* **दोनों का।** दूसरा ऑप्शन क्या है ? दूसरी पॉसिबिलिटि क्या है ? **साता का बंध है, असाता का उदय है और सत्त्व दोनों का है।** तीसरी पॉसिबिलिटि क्या है ? पहले दोनों हमने साता के बंधवाले देखे। तीसरी बात **असाता का बंध, साता का उदय, सत्त्व दोनों का।** या चौथी कौनसी बात हो सकती है ? **असाता का ही बंध, असाता का ही उदय, परंतु सत्त्व दोनों का।** ये चार बातें हो सकती हैं, ये चार भंग होंगे। ऐसे कहां तक हो सकता है ? छठे गुणस्थान तक। बाद में वह असाता का बंध नहीं होगा, उदय में ले लेंगे हम।

ऊपर के गुणस्थानों में सयोगी तक केवल साता ही का बंध है, इसलिये साता ही का बंध और उदय है और सत्त्व दोनों का। बंध और उदय साता का है और सत्त्व दोनों का है। दूसरी कौनसी बात हो सकती है ? **साता का बंध है, असाता का उदय है और सत्त्व दोनों का।** ये दो ही होंगे कि पहले जैसे चार होंगे ? *श्रोता: दो ही होंगे।* दो ही होंगे क्योंकि साता का बंध है तो उदय साता का हो सकता है या असाता का; दो ही भंग होंगे। **अयोगी में बंध का तो अभाव है इसलिये साता का उदय, सत्त्व दोनों का या असाता का उदय, सत्त्व दोनों का।** बाद में जब उपांत्य समय में एक का क्षय हो जायेगा तब ? **साता ही का उदय और साता ही का सत्त्व।** किसीके असाता का वहां सत्त्व रहेगा तो **असाता ही का उदय, असाता ही का सत्त्व।** बंध नहीं होने पर भी ये भंग बन जाते हैं **ऐसे चार भंग हैं।** यह जो ***तीसरा और चौथा भंग*** बताया है वह ***अंतिम समय में होता है।*** क्योंकि उपांत्य समय में एक का क्षय हो जाता है। तब तक यहां दोनों ही का सत्त्व पाया जायेगा। ऊपर वाक्य आया था न, जिसका उदय उसी का सत्त्व है यह बात अंतिम समय में घटित होती है।

अब गोत्रकर्म के भंग देखेंगे। गोत्रकर्म में बंध कितने का होता है ? *श्रोता: दो का।* दो का, कहां पर ? किसी एक का होगा। दोनों में से एक का होगा - उच्चगोत्र का या नीचगोत्र का। कहां तक ? *श्रोता: दूसरे गुणस्थान तक ?* दूसरे गुणस्थान तक क्यों ? नीचगोत्र के बंध की व्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में होती है। तीसरे से दसवें गुणस्थान तक एक उच्चगोत्र का ही बंध होगा। ग्यारहवें से ऊपर उसके बंध का अभाव है। अब उदय किसका होगा ? किसीका भी होगा और वह भी कहां तक होगा ? पांचवें गुणस्थान तक दोनों में से किसी एक का उदय होगा। छठे से अयोगी के अंतिम समय तक एक उच्चगोत्र का ही उदय होगा। हम पढ़ेंगे - **गोत्रद्विक के बंधरूप यथासंभव स्थान में उच्च या नीच में से एक ही का बंध और उदय होता है। सत्त्व अयोगी के द्विचरम समय तक दोनों का है।** नीचगोत्र का क्षय कहां देखा था ? अयोगी के द्विचरम समय में। वहां तक दोनों का सत्त्व है, अंतिम समय में उच्चगोत्र एक का ही सत्त्व है। तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवों में नीचगोत्र का बंध और उदय है।

जिनके उच्चगोत्र की उद्वेलना हुयी है; यह उद्वेलना याद है कि भूल गये ? **जिनके उच्चगोत्र की उद्वेलना हुयी है ऐसे तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवों के केवल नीचगोत्र ही का सत्त्व है।** हमने देखा था सत्त्व दो का होगा। कहां तक ?

अयोगी के उपांत्य समय तक। अब इसके लिये कौनसा ऑप्शन आया ? जिन्होंने उच्चगोत्र की उद्वेलना की है उनके सत्त्व कौनसा होगा ? *श्रोता: नीचगोत्र।* नीचगोत्र का होगा। ऐसे तेजस्कायिक और वायुकायिक जीवों के केवल नीचगोत्र ही का सत्त्व है। **अवशेष एकेन्द्रियों, विकलेन्द्रियों, सकलेन्द्रियों के सत्त्व नीच ही का या दोनों का होता है।** नीचगोत्र का क्यों ? जिसने अग्निकायिक में उच्चगोत्र की उद्वेलना की है और वह अन्य एकेन्द्रियादि में उत्पन्न होता है तो उसकी सत्ता में भी नीचगोत्र है, उच्चगोत्र नहीं है। उस अपेक्षा से उसको भी ले लेना। देखो, यहां नीचे गाथा में उसीको बतायेंगे - **उच्चगोत्र की उद्वेलनायुक्त तेजस्कायिकों और वायुकायिकों में एक नीचगोत्र ही का सत्त्व है।** जिन-जिन तेजस्कायिक; हर एक जीव भले शुरू करे परंतु उद्वेलना पूर्ण होने में बहुत लंबा टाइम लगता है। प्रत्येक अग्निकायिक में उसकी उद्वेलना हो चुकी है ऐसा नहीं है। लंबे काल तक उन पर्यायों में रहनेवाले जिन जीवों के उद्वेलना का कार्य पूरा हो गया है, उनको उच्चगोत्र की सत्ता नहीं होती।

कहते हैं कि **उच्चगोत्र की उद्वेलना युक्त तेजस्कायिक और वायुकायिक में एक नीचगोत्र ही का सत्त्व है। ऐसे तेजस्कायिक, वायुकायिक जीव मरकर जहां उत्पन्न होते हैं** मनुष्यों में उत्पन्न होंगे क्या ? *श्रोता: नहीं।* नहीं, तिर्यंच में ही जायेंगे। तो कहां-कहां जायेंगे ? **एकेन्द्रिय** में जा सकते हैं, **विकलेन्द्रिय** में; विकलेन्द्रिय किसको कहते हैं ? *श्रोता: द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय, चतुरिन्द्रिय।* द्वीन्द्रिय, त्रीन्द्रिय और चतुरिन्द्रिय को विकलेन्द्रिय कहते हैं **और सकलेन्द्रिय** यानी पंचेन्द्रिय। **तिर्यंचों में उपजने के समय से लेकर अंतर्मुहूर्त तक के प्रथम काल में एक नीचगोत्र ही का सत्त्व है।** अंतर्मुहूर्त तक ही क्यों कहा ? वे फिर उच्चगोत्र बांध लेते हैं। **पश्चात् उच्चगोत्र को बांधते हैं, तब उनके दोनों का सत्त्व होता है।** एक अंतर्मुहूर्त के लिये उनके भी; उन्होंने उद्वेलना नहीं की थी परंतु उद्वेलना करनेवाले जीव उन पर्यायों में उत्पन्न हो गये हैं इसलिये उनके उच्चगोत्र का सत्त्व नहीं था। जब नया बंध किया तब फिर से सत्त्व हो गया।

नियम से गोत्र के भंग गुणस्थानों में कहते हैं। अब हमने पढ़ा है उसीको गुणस्थानों में घटित करेंगे। मिथ्यात्व में क्या क्या पॉसिबिलिटिज् हैं उसको बता रहे हैं। **मिथ्यात्व में नीच का बंध और उदय, सत्त्व दोनों का**; यह एक पॉसिबिलिटि है। नीचगोत्र का बंध, नीचगोत्र का उदय और दोनों का सत्त्व ये एक बात हो गयी। दूसरा

भंग क्या है ? **नीच का बंध है, उच्च का उदय है और सत्त्व दोनों का है।** दूसरा भंग कहेंगे इसको। तीसरा भंग कौनसा है ? **उच्च का ही बंध, उच्च का ही उदय और सत्त्व दोनों का ही है।** यह तीसरे नंबर का भंग हुआ। चौथे नंबर का भंग कौनसा है ? **उच्च का बंध, नीच का उदय और सत्त्व दोनों का।** पांचवां भंग हम देखते हैं- **नीच ही का बंध, नीच ही का उदय और नीच ही का सत्त्व।** हमने यह कौनसे जीव में देखा था ? *श्रोता: अग्निकायिक और वायुकायिक।* अग्निकायिक और वायुकायिक और वहां से दूसरे में उत्पन्न होकर अन्य तिर्यंचों में अंतर्मुहूर्त तक नीच का बंध है, नीच का उदय है और अकेले नीच का ही सत्त्व है। जिसने उद्वेलना की है ऐसे जीव की बात है।

गोत्र के त्रिसंयोग भंग							
बंध	नी	नी	उ	उ	नी	०	०
उदय	नी	उ	उ	नी	नी	उ	उ
सत्त्व	२	२	२	२	नी	२	उ
भंग	१	२	३	४	५	६	७

ये मिथ्यात्व में ऐसे पांच भंग हो गये। ये पांच भंग कहां हैं ? गुणस्थानों में घटित कर रहे हैं। आप पृष्ठ ६०१ का टेबल देखना, नीचे की लाइन में भंग लिखा है १, २, ३, ४, ५ तो पहला, दूसरा, तीसरा, चौथा और पांचवां भंग ये सब मिथ्यात्व में हो सकते हैं। ऊपर जो बंध का अभाव है वह मिथ्यात्व में नहीं हो सकता, पहले पांचों भंग हो सकते हैं। आगे सासादन में देखते हैं - **सासादन में अंत का नीच ही का बंध, उदय, सत्त्वरूप भंग नहीं है।** क्या कहते हैं ? ये जो अग्निकायिक, वायुकायिक उच्चगोत्र की उद्वेलना करते हैं इसलिये वहां नीच का बंध, नीच का उदय और नीच का सत्त्व यह जो बात है वह सासादन गुणस्थान में घटित नहीं हो सकती। परंतु बाकी घटित हो सकते हैं। तो सासादन में कौन-कौनसे होंगे ? अन्य चार यानी जहां नीचे भंग नंबर लिखे हैं भंग नंबर १, २, ३, ४ सासादन में हो सकते हैं।

आगे देखते हैं - **मिश्रादिक तीन में**, मिश्रादिक तीन यानी कौनसे ? तीसरा, चौथा, पांचवां गुणस्थान; **उच्च का बंध है, उच्च का ही उदय है और सत्त्व दोनों का है।** उच्च का बंध क्यों कह रहे हैं तीसरा गुणस्थानवाला ? नीचगोत्र की बंधव्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में हुयी इसलिये तीसरा गुणस्थानवाला उच्चगोत्र का ही बंध कर रहा है।

उच्च का बंध और उदय है और सत्त्व दोनों का। दूसरा भंग कौनसा हो सकता है ? उच्च का बंध, नीच का उदय; कहां तक ? *श्रोता: पांचवें तक।* तिर्यंचों के भी होता है न, इसलिये पांचवें तक। नीचगोत्र के उदय की व्युच्छित्ति कहां देखी थी ? बंध की व्युच्छित्ति दूसरे में और उदय की व्युच्छित्ति पांचवें में, वह तिर्यंचगति के साथ हमने देखा था। **उच्च का बंध, नीच का उदय और सत्त्व दोनों का** ऐसे दो-दो भंग हैं। इसलिये तीसरे, चौथे, पांचवें गुणस्थान तक ही कहा। **प्रमत्त से सूक्ष्मसाम्पराय तक के गुणस्थानों में उच्च ही का बंध, उच्च ही का उदय सत्त्व दोनों का** । बंध की व्युच्छित्ति दूसरे गुणस्थान में हुयी, उदय की व्युच्छित्ति पांचवें गुणस्थान में हुयी तो अभी बंध भी उच्चगोत्र का, उदय भी उच्चगोत्र का। सत्त्व कितने का होगा ? दोनों का। जैसे किसीने उच्चगोत्र की उद्वेलना की; वैसे ही नीचगोत्र पहले ही समाप्त हो जाये ऐसा नहीं बनता, वह अयोगकेवली के उपांत्य समय तक सत्ता में पड़ा रहेगा। उसका बंध भी नहीं है, उदय भी नहीं है। तो उच्च का बंध, उच्च का ही उदय और सत्त्व दोनों का।

ऊपर सयोगी तक बंध का अभाव है। ऊपर यानी ग्यारहवें, बारहवें आदि गुणस्थानों में उसका बंध नहीं होता है। उच्च का उदय होता है यानी बंध तो रुक गया है। फिर भी उदय चल रहा है कि नहीं चल रहा है ? *श्रोता: चल रहा है।* कहां तक ? *श्रोता: चौदहवें गुणस्थान तक।* उच्चगोत्र का उदय चौदहवें गुणस्थान के अंतिम समय तक है। यहां बंध का अभाव है, **उच्च का उदय है** परंतु **सत्त्व दोनों का** है। जब तक उपांत्य समय में नीचगोत्र का क्षय नहीं होता, तब तक उसका सत्त्व बना रहेगा। **ऐसा ही एक भंग है। अयोगी में उच्च का उदय, सत्त्व दोनों का या** यानी जब तक क्षय नहीं होता तब तक उपांत्य समय तक; या कहकर अंतिम समय में क्या पोझिशन है ? **उच्च ही का उदय और सत्त्व** वह भी उच्च ही का। मात्र अंतिम समय में यह बात घटित होगी। ख्याल में आती है बात ? **ऐसे दो भंग हैं।** *श्रोता: उच्चगोत्र, नीचगोत्र का उदय कहां है?* जिसका जहां उदय है। तिर्यंचों में और नारकियों में नीचगोत्र का उदय पाया जाता है, मनुष्यों में और देवों में उच्चगोत्र है। किसी-किसी मनुष्यों में नीचगोत्र भी है। *श्रोता: कार्य कैसा है ?* अभी तिर्यंच, नारकी में जो कुछ कार्य है वह सब नीचगोत्र का समझ लेना और मनुष्यों में उच्च और नीच ऐसे दो हैं। उनमें कार्यरूप समझाने के लिये शूद्र आदि जो हैं वे नीचगोत्रवाले ऐसा कहेंगे। कार्य यानी उनकी जो जीवनशैली है,

उस पर से हम उसको कह सकते हैं। ये जो भंग बताये हैं ये ही टेबल में बताये हैं।

अब आयु के बंध के बारे में देखेंगे। आयु बांधना है, अच्छी-अच्छी बांधना है, देखेंगे कहां बंधती है ! बाकी सभी कर्मों का हम क्षय चाहते हैं, आयु का क्षय नहीं चाहते हैं। बात सही है कि नहीं ? अरे ! हम मरण नहीं चाहते उसका अर्थ क्या है ? आयु को रखना चाहते हैं। बाकी सब कर्म चले जायें तो अच्छा है, हां ! **जिस उदयागत**, उदयागत यानी उदय में जो आयु चल रही है वह; **आयु को भोगते हैं**, जिस कर्म का उदय चलता है, उसको भोगते हैं ऐसा कहने में आता है। **उस भुज्यमान आयु के** उस आयु को क्या कहते हैं ? *श्रोता: भुज्यमान आयु।* भुज्यमान; अभी आप हमारी सबकी भुज्यमान आयु कौनसी चल रही है ? *श्रोता: मनुष्यायु।* मनुष्यायु हमारी भुज्यमान आयु है। **उत्कृष्ट छह महीने अवशेष रहने पर देव और नारकी** देव और नारकी की बात चल रही है। देवगति के जीव हैं, नारकी जीव हैं वे अपनी आयु के उत्कृष्ट छह महीने यानी अधिक से अधिक छह महीने बाकी हैं, तब किस आयु को बांधते हैं ? **मनुष्यायु** को बांधते हैं **या तिर्यंचायु को बांधते हैं।** क्या कहा ? जब देव और नारकी जीव की आयु के छह महीने अवशेष रहते हैं यानी पहली बार आयु बंध का अवसर उन्हें कब प्राप्त होता है ? जब छह महीने बाकी हैं तब, इसलिये उत्कृष्ट शब्द डाला। कौनसी आयु बांधते हैं ? मनुष्यायु या तिर्यंचायु उस काल में बंधयोग्य हैं। देव हैं वे देवायु को नहीं बांधेंगे और नरकायु को नहीं बांधेंगे, मनुष्यायु या तिर्यंचायु को बांधेंगे।

सहस्रार तक के देवों को दो ही ऑप्शन्स हैं, मनुष्यायु को बांधेंगे या तिर्यंचायु को। सहस्रार के ऊपर आनत-प्राणत, आरण-अच्युत और ऊपर के सभी ग्रैवेयक आदि के देव मनुष्यायु को ही बांधेंगे; मिथ्यादृष्टि हैं तब भी वे तिर्यंचायु नहीं बांधेंगे, वे एकेन्द्रिय में भी नहीं जायेंगे। हम छहढाला में पढ़ते हैं न कि मुनिव्रत धार ग्रैवेयक में चला गया और वहां से चय कर एकेन्द्रिय में चला गया। ऐसा कहेंगे हम क्योंकि मालूम नहीं है न कौन कहां जाता है। सौधर्म तक के देव ही एकेन्द्रिय में जाते हैं, भवनत्रिक या सौधर्म तक के जीव मरकर एकेन्द्रिय में जा सकते हैं। ऊपर सहस्रार तक के देव तिर्यंच में जा सकते हैं। उसके ऊपर मिथ्यादृष्टि हो तो भी मनुष्य में ही आनेवाले हैं।

मनुष्य और तिर्यंच अभी बांधनेवाले जीव कौन हैं ? मनुष्य और तिर्यंच। वे आयु का बंध कब करते हैं, कौनसी आयु को बांधते हैं ? **मनुष्य और तिर्यंच उनके**

भुज्यमान आयु का तीसरा भाग अवशेष रहने पर चारों आयु को बांधते हैं। चारों आयु को यानी चारों आयु में से किसी एक आयु को। शब्दों को हम कैसे भी मरोड़ सकते हैं न ! उसका कुछ भी अर्थ निकालो अपनी मति से, फिर कहेंगे देखो यहां लिखा है कि नहीं कि चारों आयु को बांधते हैं ? **भोगभूमिया जीव छह महीने अवशेष रहने पर देवायु ही को बांधते हैं।** सुबह मैंने बताया था न, कहीं नौ महीने, कहीं छह महीने पढ़ने में आता है, यहां छह महीने लिखा है। **एकेन्द्रिय और विकलेन्द्रिय** यानी जो एकेन्द्रिय हैं, द्वीन्द्रिय हैं, त्रीन्द्रिय हैं, चतुरिन्द्रिय हैं वे देवायु को नहीं बांध सकते, नरकायु को नहीं बांध सकते। कौनसी आयु बांधते हैं ? **मनुष्यायु और तिर्यंचायु को ही बांधते हैं।** अग्निकायिक और वायुकायिक ? तिर्यंचायु ही बांधेगे; वे मरकर तिर्यंच में पैदा होंगे, मनुष्य नहीं होंगे। यहां लिखा है- **तेजस्कायिक, वायुकायिक और सातवीं पृथ्वी के नारकी तिर्यंचायु को ही बांधते हैं।** वे तेजस्कायिक मरकर एकेन्द्रियों आदि में भी जायेंगे, परंतु सातवें नरक के नारकी संज्ञी पंचेन्द्रिय तिर्यंच, हिंस्र पशु हो जायेंगे।

अब आयु के उदय और सत्त्व का विधान। आयु का बंध एक का है और वह कभी-कभी होता है। आयु के बंध के काल में आयु का बंध हो रहा है। कौनसे-कौनसे गुणस्थानों में आयु बंध सकती है वह भी हमने देखा। उदय कितने का होगा ॲट अ टाइम ? *श्रोता: एक का होगा।* एक का होगा और सत्ता में ? चारों ? चारों होंगी न ! नहीं, एक तो भुज्यमान आयु की सत्ता है और एक बंधी हुयी बध्यमान की सत्ता है। दो की सत्ता है, चार आयु की सत्ता नहीं होती। *श्रोता: गति हो सकती है ?* गति हो सकती है, हां। दो-चार भवों की आयु एक साथ बांधकर रखे यह नहीं हो सकता है। नहीं तो ऐसा करेंगे न, अभी परिणाम अच्छे हैं न तो दो चार भवों की बांधकर रखेंगे।

श्रोता: तीर्थंकर के भामंडल में तो आगामी तीन भव मालूम पड़ते हैं न ? मालूम पड़ना अलग है और बंध होना अलग बात है। केवलज्ञानी के ज्ञान में कितने होंगे ? वहां तीन ही भव दिख रहे हैं, केवलज्ञानियों को अनंत दिख रहे होंगे किसीके, है न ! तो अनंत थोड़े ही बांधेगा। यहां हम पैसे कमाकर रखते हैं। कितने भव के लिये ? अपने लिये नहीं क्योंकि हम इतने परोपकारी हैं ! अरे ! हम भोगते भी नहीं। सारा बांध-बांधकर बिलकुल एकदम ऐसे कंजूसाइ से रखते हैं। शास्त्र में कहा है; शास्त्र में यानी हम जब संस्कृत पढ़ते थे स्कूल में कि कंजूस सबसे उत्तम दाता होता है। कृपण, क्यों ?

वह स्वयं बिलकुल नहीं भोगता इतनी कंजूसाइ करता है और पूरा का पूरा देकर जाता है। अभी वह बच्चे को देता है कि कोई लूट लेता है। उसको सबसे उत्तम दाता कहा है। देखो, हम इतना कमा रहे हैं न, उसमें से कितना ले जायेंगे ? क्यों ? व्यवस्था नहीं है। मैं कहती हूं कि परभव में साथ में ले जाने की व्यवस्था होती तो क्या होता ? एक पाई भी अपने लड़कों के लिये, बच्चों के लिये, बीवी के लिये किसीके लिये नहीं छोड़ता। अभी व्यवस्था नहीं है तो कहता है कि मैं क्या अपने लिये थोड़ा ही कमा रहा हूं। देखो, मैं तो रात दिन मेहनत कर रहा हूं। मैं अपने बच्चों के लिये कमा रहा हूं और यदि ले जाने की व्यवस्था होती तो अरे इतना भी, इतनासा भी नहीं छोड़ता। क्या करें ?

जीव के ऐसे परिणाम ! नहीं ले जा सकता है फिर भी उसके ऐसे परिणाम हैं। ऐसे ही है जैसे नशे की गोलियां होती हैं, मदिरा होती है वैसे एक बार पैसा कमाना सूझ गया तो पैसा कमाना आसान हो जाता है। बहुत मेहनत नहीं करनी पड़ती है, बुद्धि तो बिलकुल नहीं लगानी पड़ती है और फिर भी उसका नशा ऐसा चढ़ता है। बुद्धि से थोड़े ही पैसा आता है ? हमारी कर्म थिअरी कहती है बुद्धि से कुछ नहीं आता है। कितने बुद्धिमान ऐसे ही रह जाते हैं और अंगूठा छाप भी कमा लेते हैं। जिसके जैसी होनहार है, जितने पैसे आने हैं उसके आकर ही रहेंगे। कार्तिकेयानुप्रेक्षा में आचार्य कार्तिकेय ने लिखा है- भोग तो सही ! क्या कहा ? इतना कमाता है भोग तो सही कहते हैं। जितना नसीब में लक्ष्मी है न, तुम भोगो या दान करो वह खूटनेवाली नहीं है और जिस समय नसीब में से चली जानेवाली है, तुम कितना भी चाहे कुछ भी करो, रहनेवाली नहीं है। ये भोगने का उपदेश नहीं दे रहे हैं ! ऐसा कह रहे हैं क्योंकि आचार्यों की ऐसी बातें कहीं-कहीं तो कषाय उत्पन्न करके भी इस सही मार्ग में लगाते हैं। नहीं समझे ?

कहते हैं न, मंदिर का कलश देखे तो इतने उपवास का फल मिला। हम मंदिर में गये तो इतने उपवास का फल मिला। तो यह लोभिया, अरे चलो, इतने उपवास का फल मिलता है, चलो मंदिर में चलो। तो देवदर्शन करने को आता है। देवदर्शन को आयेगा उसको कहेंगे अरे स्वाध्याय कर ! दर्शन करने से क्या होगा ? उसको कुछ लालच दिखाकर क्योंकि मालूम है कि ऐसे यह आनेवाला नहीं है। कुछ उसके फायदे की बात करेंगे तो आयेगा। उसको शुभभाव की भी बात बताकर चलो इसमें आओ ऐसा कहेंगे। शुभभाव से कुछ कल्याण नहीं होनेवाला। कितनी भी पुण्य प्रकृतियां बंधी हो यह सब छोड़कर ही जाना है। साथ में ले जायेंगे सिद्धालय में थोड़ीसी ?

देखो, आगे नीचे की गाथा देखते हैं। **नारकादिकों के** यानी चारों गतियों के, **अपनी-अपनी गति संबंधी ही एक आयु का उदय होता है।** नरकगतिवालों को नरकायु का उदय है, मनुष्यगतिवालों को मनुष्यायु का उदय है, देवगतिवालों को देवायु का ही उदय है। अपनी-अपनी गति संबंधी अपनी जो आयु है उसीका उदय पाया जाता है। **परभव की आयु का बंध होने पर सत्त्व**, सत्ता की बात है, **उदयागत आयु सहित दो आयु का है।** यह जो एक भुज्यमान आयु और बंधी हुयी आयु, सत्ता में दो आयु होंगी। कब ? जिसने बंध किया है उसके। जो चरमशरीरी उसी भव में मोक्ष जानेवाले हैं उनके कितनी आयु का सत्त्व होगा ? *श्रोता: एक भुज्यमान आयु।* एक भुज्यमान क्योंकि वे आयु का बंध ही नहीं करेंगे। बाकी सभी जीव जो उस भव में मोक्ष जानेवाले नहीं हैं ऐसे सभी जीव आयु का बंध करेंगे ही करेंगे। आयु का बंध किये बिना नहीं मरेंगे। ऐसा कोई भटकता नहीं है कि कहां जाना है ? ट्राफिक जाम है, अभी कहां जाऊं ? वह सारी व्यवस्था पहले हो जाती है। *श्रोता: जहां पैदा होंगे, अगर यह पता चल जाये कि मरने के बाद वहां जायेंगे तो अपनी धन संपत्ति वहां रख आयेंगे थोड़ीसी ?* यहां की धन संपत्ति आपकी है ही नहीं। यहां रहते हुये भी हमारी नहीं है तो वहां कहां ले जायेंगे ? धन संपत्ति से सुख मिलता ही नहीं है। यह सब हमारी मिथ्या मान्यता है।

एक जीव एक भव में एक ही आयु को बांधता है। मनुष्यायु का बंध है तो मनुष्यायु का ही बंध; वह चेंज होकर फिर कोई अभी परिणाम चेंज हो गये, नरकायु हो जाये, देवायु हो जाये, ऐसा नहीं हो सकता। आयु में कोई संक्रमण नहीं होता, जो बंधी वह बंधी। हां, वह दूसरी बार यदि बंधती है तो उसकी स्थिति अधिक भी बंध सकती है और हीन भी बंध सकती है। **योग्यकाल में बांधता है। आठ बार ही बांधता है और सर्वत्र तीसरा-तीसरा भाग अवशेष रहनेपर बांधता है।** यह जरूरी नहीं कि आठों ही बार बंध हो; परंतु कोई एक बार, कोई दो बार, कोई तीन बार, कोई आठों ही बार आयु का बंध करता है। किसीके अधिक बंधेगी किसीको हीन बंधेगी तो उसमें क्या विशेषता होती है उसकी चर्चा हम थोड़ी देर में करेंगे।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।

६०. मोहनीय के स्थानों के त्रिसंयोगी भंग

आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धान्तचक्रवर्ती ने गोम्मटसार कर्मकाण्ड ग्रंथ की रचना की है उसीके आधार से पं. टोडरमलजी ने सम्यग्ज्ञानचन्द्रिका भाषाटीका ढूंढ़ारी भाषा में लिखी हुयी है और उसीका हिंदी अनुवाद देखते हुये हम स्थानसमुत्कीर्तनाधिकार की चर्चा कर रहे थे। हम तत्त्वार्थसूत्र के मंगलाचरण में देखते हैं 'भेत्तारं कर्मभूभृताम्' उसका अर्थ क्या है ? कर्मरूपी पर्वत को भेदनेवाले ! यहां आकर समझ में आया ये कितने बड़े पर्वत हैं ! हम उसको केवल कर्मरूपी पर्वत कह रहे थे। कितने-कितने कर्म कहे ? कैसे-कैसे बंधे हुये ? कैसे सत्ता में पड़े रहते हैं ? उनकी क्षपणा की विधि अभी हमने नहीं देखी, हम पहले उन कर्मों की पहचान कर रहे हैं। क्षपणा किस विधि से होती है, किसतरह से उनमें अवस्थायें बदलती हैं वह आगे के ग्रंथों का विषय है।

अभी हम कर्मों पर उनके बंध, उदय और सत्ता के कॉम्बिनेशन्स -भंग देख रहे थे। अपनी आयु की बात चल रही थी। आयु की बात हमने क्या देखी ? एक भव में जीव आगामी एक ही भव की आयु बांधता है। वह कब बांधता है ? देव और नारकी हैं उनको अपनी आयु के अंतिम छह महीने बाकी हैं तब पहली बार आयुबंध का अवसर होता है, बाद में उसके भी त्रिभाग-त्रिभाग में आयु के बंध का अवसर आता है। भोगभूमि में भी ऐसा ही है, छह महीने जब आयु शेष रहती है तब आयुबंध का पहला अवसर आता है। मनुष्य और तिर्यंच जो हैं; कर्मभूमि के मनुष्य, तिर्यंच के अपनी आयु के त्रिभाग में वहां आयु बंधने का अवसर होता है। उस एक अंतर्मुहूर्त तक ही आयुबंध के योग्य परिणाम होते हैं। यह बात उसमें समझने लायक है।

हमने पृष्ठ ६०३, गाथा ६४२ की टीका में देखा था - **एक जीव एक भव में एक ही आयु को बांधता है, वह भी योग्यकाल में,** योग्यकाल यानी उसका जो त्रिभाग कहा, त्रिभाग क्यों कहते हैं कि उस समय उसके वैसे परिणाम होते हैं, सहज वैसा निमित्त-नैमित्तिक संबंध है; कहते हैं कि **आठ बार ही बांधता है, वहां सर्वत्र तीसरा-तीसरा भाग अवशेष रहने पर बांधता है।** पहला अवसर कब आता है ? त्रिभाग बाकी है तब; दूसरा अवसर ? उस त्रिभाग का त्रिभाग; अब तीसरा अवसर ? उसका और त्रिभाग; ऐसा आठ बार करना। आगे ६४३ की टीका - **आठ अपकर्षों में पहली बार को छोड़कर द्वितीयादि बार में** यानी दूसरी बार, तीसरी बार, चौथी बार आदि;

पहली बार जो आयु बांधी थी, उसकी स्थिति की वृद्धि, हानि या अवस्थिति होती है। अन्य आयु बंधती है ऐसा नहीं कहा। क्या हो सकता है ? या तो पहली जितनी बंधी थी उतनी बंधेगी या वृद्धि होकर अधिक स्थिति का बंध होगा या हीन हो जायेगा, बंध जो है कम स्थितिवाला होगा। उसीका भावार्थ बताते हैं।

पहले आयु की जो स्थिति बांधी थी, स्थिति बांधी थी यानी क्या अर्थ है ? कि आयु का भी स्थितिबंध होता है। आगे के भव में उसका लाइफस्पॅन कितना होगा ? उसकी आयु कितनी होगी ? यह पूर्वभव में जब आयु बंधी थी तभी नक्की हो गया था। जितनी आयु की स्थिति बांधी थी, **पश्चात् दूसरी बार, तीसरी बार आदि बांधेगा तब पहली स्थिति से अधिक, हीन या जितनी की उतनी स्थिति बांधता है।** क्या नक्की होगा ? कौनसी आयु को पकड़ना फिर ? यहां देखते हैं- **वहां यदि वृद्धि होती है तो पश्चात् जो अधिक स्थिति बंधी उसीकी प्रधानता जानना।** पहले कम बंधी थी, बाद में अधिक बंधी। पहले सौ साल की बांधी थी, बाद में १२० की बांधी तो कौनसी रहेगी ? १२०वाली रहेगी। यदि हानि होती है पहले १०० की बांधी थी फिर ८० साल की बांधी तो १०० की वहां पड़ी है तो १०० की आयु कहलायेगी। पहले के जो निषेक हैं उनमें ये भी परमाणु जाकर जुड़ जायेंगे। **यदि हानि होती है तो पहले अधिक स्थिति बंधी थी उसीकी प्रधानता जानना। पुनश्च आयुबंध करनेवाले जीवों के परिणामों के वश से अपवर्तन भी होता है।**

आयुबंध जब कर रहे हैं या हो गया है। इस मनुष्यभव में किसीने आगामी आयु का बंध कर लिया है। अब उसके परिणाम कुछ पलटे, तो बंधी हुयी आयु है उसमें कटौती भी हो सकती है उसको घात यानी अपवर्तनघात कहा। कदलीघात भुज्यमान आयु को कहते हैं क्योंकि वहां आयु ही कट हो जाती है। जो भोग रहे हैं उस आयु के कुछ निषेकों का घात; पूरा घात हो जाना उसको कदलीघात कहते हैं और बंधी हुयी आयु कम हो जाना, उसको अपवर्तनघात कहा था। उस जीव को घातायुष्क भी कहते हैं। जैसे श्रेणिक राजा ने ३३ सागर की नरकायु बांधी थी। बाद में कितनी हो गयी ? *श्रोता: चौरासी हजार।* चौरासी हजार वर्ष, उन्होंने दुबारा आयु बंध किया तो चौरासी हजार वर्ष की हुयी ? सम्यग्दृष्टि होने पर नरकायु बांधी ऐसा नहीं कह सकते क्योंकि नरकायु की बंधव्युच्छित्ति पहले गुणस्थान में हो जाती है। आयुबंध के अवसर में वह

घटी नहीं है। वे सम्यग्दृष्टि हुये, तीर्थंकर प्रकृति बांध रहे थे तो उनके परिणाम ऐसे हुये तो उनकी पहले अधिक बंधी हुयी आयु कम हो गयी। उसके लिये फिर आयुबंध के अवसर की जरूरत नहीं है यह बताना चाहते हैं। बंधी हुयी आयु घट सकती है, बढ़ नहीं सकती परंतु जो बंधी है उसमें परिणामवश कटौती हो सकती है।

श्रोता: सम्यग्दृष्टि होने के पश्चात् ? बंध नहीं हुआ। बंधी हुयी आयु का घटना उसको हम उदीरणा नहीं कह रहे, उसका घात कह रहे हैं। आयु अधिक बांधी थी; कितनी बांधी थी ? ३३ सागर की और कितनी रह गयी ? *श्रोता: चौरासी हजार वर्ष।* चौरासी हजार वर्ष, तो उन परमाणुओं का क्या हुआ ? खिर गये ? *श्रोता: नहीं।* नहीं, सत्ता में पड़े रहे, जो ३३ सागर के समयों में उसका जो डिस्ट्रिब्यूशन हुआ था, बंधे हुये थे वे अभी चौरासी हजार वर्षों में सिमट गये। उनकी आयु उतनी रह गयी। वह कब हुआ ? जब मनुष्य थे। श्रेणिकराजा की पर्याय में ही हुआ था, नरक में जाने के बाद कटौती नहीं हुयी है। अभी वर्तमान में जो नरकायु भोग रहे हैं वह आयु का उदय शुरू होने के बाद कटौती नहीं हुयी है क्योंकि नरक में या देव में कदलीघात या आयु का कुछ घात-वात नहीं होता। एक बार भोगना चालू किया फिर उसमें कटौती नहीं होती।

श्रोता: घातायुष्क में घात है ? घातायुष्क यानी बध्यमान आयु का घात होना, परंतु उसे कदलीघात नहीं कहेंगे। कदलीघात भुज्यमान आयु का होता है, उसको घातायुष्क नहीं कहते हैं। जिन्होंने बध्यमान आयु का घात किया है ऐसे जीव को घातायुष्क कहते हैं। पहले हम देखते हैं न, ऊपर के स्वर्गों की लंबी आयु बांधी थी बाद में ऐसे कुछ परिणाम बिगड़ गये तो उनकी नीचे के स्वर्गों की आयु हो जाती है, हां।

अब आगे - **पुनश्च तीसरा भाग-तीसरा भाग अवशेष रहने पर आयु बंधेगी ही ऐसा एकांत नियम नहीं है।** क्या कहा ? पहली बार जो आयु बंधी है तो फिर दूसरे त्रिभाग में बंधनी चाहिये ऐसा कोई नियम नहीं है। बंधेगी तो बंधेगी, नहीं बंधेगी तो नहीं बंधेगी। बंधेगी तो कुछ ज्यादा बलवान आयुवाला हो जायेगा, बीमार नहीं पड़ेगा ऐसा कुछ नहीं है और नहीं बंधेगी तो कुछ व्हेरिएशन होगा ऐसा भी कुछ नहीं है। उस काल में आयु के बंध होने की योग्यता होती है; वहां आयु बंधे अथवा न भी बंधे। परंतु अन्य काल में यानी त्रिभाग के सिवाय अन्य काल में आयु का बंध होता ही नहीं यह नियम है क्योंकि आयु के बंध के योग्य परिणाम जब हों तभी आयु का बंध हो सकता है और

परिणाम ऐसे त्रिभाग-त्रिभाग में ही होते हैं। अपकर्षों का वर्णन पहले आ चुका था। जीवकाण्ड में भी आया था और इसमें भी पहले पढ़ा था। अब हम आगे बढ़ते हैं।

श्रोता: अपकर्षकाल के बिना परिणामों से कैसे आयु घट सकती है ? हां, अपकर्षकाल बिना परिणामविशेष से आयु घट सकती है। *श्रोता: अपकर्षकाल बिना परिणामों की विशुद्धि विशेष से बढ़ भी सकती है ?* नहीं बढ़ सकती क्योंकि उत्कर्षण में हमेशा नये बंध की अपेक्षा आती है। *श्रोता: तो उसमें अपकर्षकाल नहीं चाहिये ?* अपकर्षकाल में ही दुबारा अधिक स्थितिवाली आयु बंधेगी तभी उसका उत्कर्षण हो सकता है। दुबारा आयु का बंध अधिक स्थितिवाला होगा, तो ही आयु बढ़ सकती है। घटने के लिये कोई ऐसी रुकावट नहीं है, बढ़ने के लिये नया बंध होना चाहिये। कहीं भी उत्कर्षण होता है, तो उत्कर्षण के लिये हमेशा ही नये बंध की आवश्यकता है। अब अधिक स्थिति कैसे हो सकती है ? दुबारा आयु का बंध हो और वह अधिक स्थितिवाला हो तो ही बध्यमान आयु की स्थिति बढ़ सकती है।

श्रोता: यहां हानि लिखा है इसका अर्थ क्या है ? हानि का अर्थ है कम आयु बंधी। *श्रोता: बाद में कम हो जाना ?* कम हो जाना नहीं, मैंने बोला भी था। पहले १०० साल की बांधी थी, फिर दूसरी बार जब अवसर आया तो ८० साल की बांधी उसको हम कहेंगे हानि है। हानि है परंतु उसकी टोटल आयु नहीं घटी। ८० साल की बंधी है, पहले ऑलरेडि १०० साल की पड़ी है वहां पर, तो उसकी आयु १०० साल की ही होगी। *श्रोता: उस न्याय से श्रेणिक राजा की आयु दस हजार वर्ष की हुयी ?* दस हजार वर्ष नहीं वह ३३ सागर की थी और चौरासी हजार वर्ष की हो गयी है। वह परिणामवश हुयी है, आयुबंध के काल में नहीं कहेंगे क्योंकि अगर दुबारा आयुबंध हुआ कहेंगे तो उसको सम्यक्त्व होने पर नरकायु बांधनी पड़ेगी। हम अपनी ओर से कुछ बतायेंगे तो कहीं न कहीं हम अटक जाते हैं। बध्यमान आयु घटाने के लिये दुबारा आयुबंध की या अपकर्षकाल की आवश्यकता नहीं। जो सामान्य परिणाम चलते हैं उसके कारण आयु घट सकती है, उसके लिये फिर दुबारा अपकर्षकाल की आवश्यकता नहीं है।

देखो, हमने ज्ञानावरण के स्थानों के संयोग देखे, अंतराय के देखे, गोत्र के देखे, वेदनीय के देखे न, अलग-अलग कॉम्बिनेशन्स देखे। आयु के बारे में भी बात कर दी, अब मोहनीय की बात करेंगे। अभी-अभी हम नामकर्म सीखे, उनको थोड़ा गौण करो।

पहले मोहनीय की बात याद करो। बंधस्थान याद हैं कि नहीं मोहनीय के ? मिथ्यात्व में २२ का था। फिर सासादन गुणस्थान में २१ का हुआ। तीसरे, चौथे गुणस्थान में १७ का हुआ। पांचवें गुणस्थान में १३ का। छठे, सातवें, आठवें गुणस्थान में ? *श्रोता: ९ का।* ९ का, फिर जाकर नौवें में ये बंधस्थान ५, ४, ३, २, १ के हुये थे।

उदयस्थान याद हैं ? मिथ्यात्व गुणस्थान में हमने आठ कूट किये थे ? १०, ९, ९, ८ और ९, ८, ८, ७ परंतु टोटल कितने गिने थे ? १०, ९, ८, ७, रिपीटेड को एक ही बार गिनों। दूसरे गुणस्थान में भी देखे थे उदयस्थान ९, ८, ७। तीसरे गुणस्थान में भी ९, ८, ७। चौथे गुणस्थान में ९, ८, ७, ६। इसतरह से हमने उदयस्थान देखे थे और सत्त्वस्थान कितने देखे थे ? २८ का, २७ का, २६ का, २४ का, २३ का, २२ का, २१ का। २१ के बाद ८ चले गये तो १३ का, १२ का और ११ का। फिर ? *श्रोता: ५, ४, ३, २, १।* ५, ४, ३, २, १ का - ये सत्त्वस्थान हुये। अभी हम क्या करनेवाले हैं ? तीनों के कॉम्बिनेशन्स करनेवाले हैं हम। अभी हमने ज्ञानावरण का देखा, सर्वत्र बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान पांच-पांच-पांच के थे। अब मोहनीय में देखेंगे।

देखो पेज ६०९ लास्ट लाइन, कहते हैं मोहनीय के त्रिसंयोगी भंग; कौनसे तीन संयोग ? बंधस्थान, उदयस्थान और सत्त्वस्थान। हम तीनों के संयोगरूपी भंग देख रहे हैं। मैंने पहले आपको एक बार बताया था, आगे चलकर एक को आधार बनायेंगे यानी एक को फिक्स रखेंगे और दो में कौनसे स्थान हैं देखेंगे। हमें देखना है जहां कोई बंधस्थान है वहां उदयस्थान कौन-कौनसे हो सकते हैं ? सत्त्वस्थान कौन-कौनसे हो सकते हैं ? फिर क्या करेंगे ? दो को फिक्स करेंगे। बंधस्थान है, वहां का उदयस्थान है, उसमें सत्त्व देखेंगे। इसतरह से हम उनके कॉम्बिनेशन्स करते जायेंगे। अभी वह बात नहीं देखी, हम केवल बंध देखेंगे। जहां कोई बंधस्थान है जैसे २२ का बंधस्थान है। कहां होता है ? मिथ्यात्व गुणस्थान में। वहां उदयस्थान कौनसा होगा ? हमने उदय के कूट देखे थे, १० का है, ९ का है, ८ का है, ७ का है। मिथ्यात्व गुणस्थान में मोहनीयकर्म का सत्त्व कितना-कितना हो सकता है? २८ का हो सकता है, उद्वेलना होने पर २७ का हो सकता है और २६ का भी हो सकता है; तीनों ही हो सकते हैं।

देखो, पृष्ठ ६०९, लास्ट लाइन। **पहले मोहनीय के जो बंध, उदय और सत्त्व के स्थान कहे थे उनमें से आदि के आठ गुणस्थानों में यथासंभव बंधस्थान तो**

एक-एक ही है। आठ गुणस्थानों में बंधस्थान एक-एक ही है का अर्थ क्या है ? हर एक गुणस्थान का अपना-अपना एक बंधस्थान है। हमने अभी देखा न ! मिथ्यात्व गुणस्थान में २२ का है। सासादन गुणस्थान में २१ का है। तीसरे गुणस्थान में १७ का है। चौथे गुणस्थान में १७ का है। पांचवें गुणस्थान में १३ का है। छठे गुणस्थान में ९ का है। सातवें गुणस्थान में ९ का है। आठवें गुणस्थान में भी ९ का है। नौवें गुणस्थान में व्हेरिएशन्स हैं - पहले एक वेद और चार संज्वलन ५ का बंधस्थान है, फिर ४ का है, फिर ३ का है, फिर २ का है, फिर १ का है। इसलिये पहले से आठवें गुणस्थान तक अपना एक-एक बंधस्थान है। नौवें में कितने बंधस्थान हैं ? ५ का, ४ का, ३ का, २ का और १ का; पांच हैं अलग। दसवें में कितने हैं ? एक है ? हां ? बंध नहीं है मोहनीय का।

कहते हैं **उदयस्थान आदि के गुणस्थान में चार, ऊपर के,** आदि का मतलब समझना मिथ्यात्व गुणस्थान में चार, ऊपर के **दो गुणस्थानों में तीन-तीन** यानी सासादन में भी तीन उदयस्थान हैं और मिश्र में भी। ९, ८, ७ - ९, ८, ७ हमने पहले देखे थे। **ऊपर के चार गुणस्थानों में चार-चार**। चार-चार किसकी बात चल रही है ? उदयस्थानों की। जैसे हमने चौथे में कितना देखा था ? ९, ८, ७, ६। चार्ट नंबर चौदह निकालना उदयस्थान के लिये। बंधस्थान तो सर्वत्र एक-एक है वह ख्याल में रह जाये ऐसी बात है। मिथ्यात्व में उदयस्थान कौनसे देखे थे हमने ? १०, ९, ९, ८ और ९, ८, ८, ७ जो रिपीटेड हैं उनको एक बार ही काउंट करना। कौन-कौनसे होंगे ? १०, ९, ८ और ७। सासादन और मिश्र में कौनसे हैं ? ९, ८, ७ और ९, ८, ७। उनकी प्रकृतियां अलग-अलग हैं उसकी बात अभी छोड़ना है, हमें केवल संख्या बतानी है। असंयत में कौन-कौनसे हैं ? *श्रोता: ९, ८, ७, ६ / ९, ८, ७, ६*। अभी हम उसके साथ इसको पढ़ेंगे। **चार गुणस्थान में** यानी **चौथे से सातवें तक चार गुणस्थानों में** यानी हर एक में **चार-चार हैं।** चार-चार क्या हैं ? उदयस्थान, कौनसे चार-चार हैं ? हर एक के अपने अलग हैं।

चौथे गुणस्थान में कौनसे चार हैं ? *श्रोता: ९, ८, ७, ६ / ९, ८, ७* और ६। याद है न यह ? ये दो-दो बार कूट क्यों किये थे हमने ? चार और चार क्यों किये थे ? *श्रोता: अनंतानुबंधी ?* नहीं, वेदक सहित और वेदक रहित क्योंकि यहां सम्यक् प्रकृति का उदय है और वहां उदय नहीं है। किसके नहीं होता ? औपशमिक सम्यग्दृष्टि और क्षायिक सम्यग्दृष्टि के सम्यक् प्रकृति का उदय नहीं है इसलिये वहां प्रकृतियों की

संख्या अलग हो जाती है और चार-चार कैसे बने थे याद है न ! पहले कूट में भय-जुगुप्सा दोनों का उदय है, दूसरे में अकेले भय का उदय है, तीसरे में अकेला जुगुप्सा का उदय है, चौथे में दोनों का ही उदय नहीं है। चौथे से सातवें गुणस्थान में चार-चार उदयस्थान हैं। यानी चौथेवाले के कौनसे हैं ? ९, ८, ७ और ६। पांचवें के ? ८, ७, ६ और ५। छठे के ? ७, ६, ५ और ४। सातवें के भी वे ही हैं ७, ६, ५ और ४।

अब आगे ६१० पृष्ठ पर तीसरी लाइन। **एक में**, एक में यानी आठवें में; देखो, मूल पुस्तक में एक में इतना है, दो में इतना है, चार में इतना ही लिखा था। वह कौनसे हैं ये समझने के लिये ब्रॅकेट में, इटॅलिक अक्षरों में लिख दिया है। **एक में** यानी ***(आठवें में)*** **तीन जानना।** तीन क्या जानना ? उदयस्थान तीन हैं। कौन-कौनसे तीन हैं ? अपूर्वकरण में ६, ५ और ४। अब **सत्त्वस्थान** कह रहे हैं **क्रम से**। क्रम से यानी मिथ्यात्व में सत्त्व कितने का था ? **मिथ्यात्व में तीन** सत्त्वस्थान का अर्थ क्या है ? २८ का एक है। २७ का एक है, २६ का है। आपके पास मोहनीय के सत्त्वस्थान का चार्ट है, देख लो। मिथ्यात्व में सत्त्वस्थान कितने हैं ? कितने का है यह नहीं पूछा। कौनसे हैं पूछेंगे तो २८ का एक है। २७ का है और २६ का है। परंतु कितने हैं ? तीन। देखो यहां **सत्त्वस्थान क्रम से मिथ्यात्व में तीन, सासादन में एक,** कौनसा है ? २८ का ही है। **मिश्र में दो** हैं, २८ और २४। तीसरे गुणस्थान में २४ का स्थान कैसे हो सकता है ? *श्रोता: अनंतानुबंधी की जिसने विसंयोजना की हो।* अनंतानुबंधी की जिसने विसंयोजना की है ऐसा जीव चौथे आदि गुणस्थान से गिरकर तीसरे गुणस्थान में आता है तो वहां अनंतानुबंधी का उदय नहीं होता है। इसलिये वहां पर उसके २४ की सत्तावाला भी स्थान हो सकता है। पहले गुणस्थान में चला जायेगा तो फिर अनंतानुबंधी की सत्ता हो जायेगी, नया बंध शुरू हो जायेगा। मिश्र में दो स्थान देखे।

ऊपर के चार गुणस्थानों में, ऊपर के चार गुणस्थान कौनसे ? चौथा, पांचवां, छठा और सातवां। उनमें सत्ता के कौन-कौनसे स्थान हैं और कितने हैं ? **पांच-पांच हैं**, हर एक में पांच हैं। चौथे गुणस्थान में भी पांच स्थान, पांचवें गुणस्थान में भी, छठे गुणस्थान में भी और सातवें गुणस्थान में भी पांच स्थान हैं। कौनसे हैं ? *श्रोता: २८ के।* २८ की सत्तावाला कौनसा है ? रेग्युलर। *श्रोता: देवगति के ?* चारों गतियों में २८की सत्ता तो पायी जायेगी। २४ की सत्तावाला जीव कौन है ? *श्रोता: अनंतानुबंधी की जिसने विसंयोजना की हो।* अनंतानुबंधी की जिसने विसंयोजना की है। कौनसी गति का जीव

है ? *श्रोता: चारों गति का।* चारों गति का। २३वाला ? मिथ्यात्व की क्षपणा जिसने कर दी है। कौनसी गति में होगा ? *श्रोता: मनुष्यगति में।* मनुष्य में ही होगा। फिर २२वाला ? मिथ्यात्व की क्षपणा पूरी हो गयी तो २३वाला था। फिर सम्यग्मिथ्यात्व का भी क्षय हो गया, क्षपणा पूरी हुयी तो २२ पर आ गया। अभी भी सम्यक् प्रकृति बाकी है, जब २२ में से उसका भी क्षय हो जायेगा तब २१ की सत्ता हो जायेगी उसको क्षायिक सम्यग्दृष्टि कहेंगे। यह कार्य चौथे गुणस्थान में भी होगा, पांचवें में, छठे में और सातवें में भी हो सकता है। इसलिये सत्ता के स्थान कौन-कौनसे कहे ? २८वाला, २४वाला, २३वाला, २२वाला और २१वाला पांच-पांच स्थान होंगे। **एक में तीन जानना।** एक में यानी उपशामक आठवें गुणस्थान में तीन कौनसे ? २८वाला, २४वाला और २१वाला। फिर नौवें, दसवें, ग्यारहवें गुणस्थानों में बंध, उदय और सत्त्व के स्थान बताये हैं।

अब जहां एक से ज्यादा बंधस्थान हैं उसकी बात करेंगे। **अनिवृत्तिकरण में बंध, उदय और सत्त्वस्थान अनुक्रम से पांच, दो और ग्यारह जानना।** क्या कहते हैं ? पांच, दो और ग्यारह का अर्थ क्या है ? बंध के स्थान पांच; कौनसे ? ५ का बंध, ४ का बंध, ३ का बंध, २ का बंध और १ का बंध। दो क्या है ? उदय के स्थान दो। कौनसे ? दो का उदय और एक का उदय। नहीं समझे ? दो का उदय यानी स्टार्टिंग में क्या है ? एक वेद और एक कषाय का उदय होता है तो दो का उदय। जब वेद का उदय मिटता है तो एक का उदय रहता है। तो २वाला एक स्थान और १वाला एक स्थान और ग्यारह; ग्यारह क्या हैं ? सत्त्व के स्थान। ग्यारह कैसे बनेंगे ? अनिवृत्तिकरण गुणस्थान उपशामक का भी है और क्षपक का भी है। उपशामक के तीन स्थान-कौनसे ? २८, २४, २१। यह २१वाला स्थान क्षपक में भी होगा तो दुबारा काउंट नहीं करेंगे। यहां कौन-कौनसे होंगे ? २१ में से जब आठ कषाय आदि का क्षय हो जाता है तब १३ का होगा, १२ का होगा, फिर ११ का होगा, फिर ५, ४, ३, २, १ वगैरह। यही लिखे यहां पर देखो। ***(२८, २४, २१, १३, १२, ११, ५, ४, ३, २, १)*** ख्याल में आयी बात ? यहां क्या लिखा है उसको समझना है इतनीसी बात है ।

सूक्ष्मसाम्पराय में, दसवें गुणस्थान में **बंधस्थान का अभाव** है; मोहनीय की ही बात चल रही है; **उदयस्थान एक** है **और सत्त्वस्थान चार हैं।** देखो, ***(२८, २४, २१ और १)*** उदयस्थान उपशामक के लिये बताया है कि क्षपक के लिये बताया है ? *श्रोता:*

उपशामक के लिये। उपशामक के लिये और क्षपक के लिये ? दोनों में ही सूक्ष्मलोभ एक का ही उदय है, उदय के लिये एक ही स्थान है दोनों में। बंध और उदय में कोई फर्क नहीं है। मोहनीय का बंध तो है ही नहीं, उदय एक का है। सत्ता में व्हेरिएशन्स हैं। उपशामक की सत्ता में २८, २४, २१ और क्षपकवाले के ? *श्रोता: १ का।* १ की ही सत्ता इसलिये चार स्थान बताये। **उपशांतमोह में** बंध भी नहीं है और उदय भी नहीं है। **बंधस्थान** नहीं है कहेंगे **उदयस्थान नहीं है** कहेंगे। सत्त्व है कि नहीं है ? *श्रोता: है।* है, २८, २४ और २१। बारहवें गुणस्थान में ? मोहनीय है ही नहीं है। सर्वथा अभाव है।

अब ये कौनसे स्थान हैं वह अभी बता रहे हैं। हम पहले बंध में देख चुके कौन-कौनसे हैं। उन्होंने अलग-अलग गाथाओं में उनके नाम बताने के लिये उनकी अलग-अलग चर्चा की है। हम पढ़ेंगे इसमें से, अपना पक्का हो जायेगा। देखो, **मिथ्यादृष्टि का बंधस्थान एक बाइस का ही है।** हमने पहले ही देखा था। २२ का स्थान याद है न ! २२ कैसे हुयी ? हां, ध्रुवबंधी, मोहनीय की ध्रुवबंधी कौनसी हैं ? मिथ्यात्व, सोलह कषाय और भय, जुगुप्सा ये १९ हुयी और बाकी ऑप्शनल प्रतिपक्षवाली कौनसी ? तीन वेद में से एक वेद और दो युगल में से एक युगल। दो और एक तीन, उन्नीस और तीन २२ का बंध होगा यहां पर। यह बात ख्याल में आती है ? तो मिथ्यादृष्टि में २२ का एक बंधस्थान है। **उदयस्थान १० से लेकर ४ (१० का, ९ का, ८ का, ७ का) हैं।**

अभी हमने देखे थे उदयस्थान, चौदहवें नंबर का चार्ट था। कौनसे थे ? १०, ९, ८ और ७ और सत्त्वस्थान कौन-कौनसे हैं ? २८, २७ और २६। यह २८ किसके होगा ? *श्रोता: सादि मिथ्यादृष्टि को।* सादि मिथ्यादृष्टि परंतु वह जब उद्वेलना करता जाता है तब सम्यक् प्रकृति की सबसे पहले उद्वेलना पूरी हो जाती है तो मिथ्यात्व, सम्यग्मिथ्यात्व दो ही रह गये और बाकी चारित्रमोहनीय की पच्चीस हैं ही हैं तो २७वाला हो गया। सम्यग्मिथ्यात्व की भी उद्वेलना हो जायेगी तो ? *श्रोता: २६वाला।* २६, जैसे अनादि मिथ्यादृष्टि २६वाला था वैसे ही उद्वेलना के बाद यह २६वाला हो जाता है। तो मिथ्यादृष्टि में बंधस्थान एक २२ का। उदयस्थान १०, ९, ८ और ७। दोनों लिये थे न हमने अनंतानुबंधी सहित और अनंतानुबंधी रहित, रहितवाला किसको लिया था याद है कि भूल गये ? *श्रोता: जिसने विसंयोजना की।* जिसने विसंयोजना की है और मिथ्यात्व में चला जाता है तो अनंतानुबंधी का नया बंध शुरू हो जाता है। परंतु बंध के बाद एक आवली तक उसमें कुछ विशेष नहीं होता। उसके बाद क्या होगा ? अपकर्षण होगा,

उदीरणा होकर उसका उदय चालू हो जायेगा। इसलिये कहते हैं कि आवली तक क्या हो रहा है उसका ? उदय नहीं हो रहा है। तो उदयरूप प्रकृतियां वहां कम हो जायेंगी। इसलिये हमने १० के बदले ९, ९ के बदले ८ गिनी थी। इसतरह से चार और चार आठ कूट बनाये थे।

अब आगे देखते हैं। **सासादन में बंधस्थान एक इक्कीस का ही है।** कौनसी एक घट गयी ? *श्रोता: मिथ्यात्व।* मिथ्यात्व घट गयी। **उदयस्थान ९ से लेकर तीन हैं (९, ८, ७)।** उसके हमने चार कूट कैसे किये थे ? ९, ८, ८ और ७। वहां ८ रिपीटेड है, पुनरुक्त है इसलिये उसको घटा दिया, एक बार ही कह दिया। **सत्त्वस्थान अट्ठाइस ही का है** क्योंकि सासादन में कौन आता है ? औपशमिक सम्यग्दृष्टि गिरकर आता है। तो औपशमिक के काल में सत्ता कितनी कर ली थी उसने ? २८ की कर ली थी। तो २८ का स्थान होगा उसमें, अन्य कोई स्थान नहीं होगा।

मिश्र में बंधस्थान एक सत्रह ही का है और उदयस्थान नौ से लेकर तीन हैं (९, ८, ७)। सत्त्वस्थान दो हैं २८ का और २४ का। अभी हमने देखे हैं सब। २४ का हमने देखा था विसंयोजनावाला तीसरे में आ सकता है। **असंयत में बंधस्थान सत्रह का एक ही है और उदयस्थान नौ से लेकर चार हैं (९, ८, ७ और ६)।** इसमें भी हमने चार और चार कूट किये थे, वेदक सहित चार और वेदक रहित चार। औपशमिक और क्षायिकवाले के सम्यक् प्रकृति का उदय नहीं है इसलिये। **सत्त्वस्थान अट्ठाइस और चौबीस के दो और तेइस से लेकर तीन *(२३, २२ और २१)*** दर्शनमोहनीय की क्षपणा करनेवाले की अपेक्षा। **ये पांच सत्त्वस्थान अप्रमत्त तक जानना** यानी चौथे गुणस्थानवाले को भी पांच हैं, पांचवें गुणस्थानवाले को भी हैं, छठे गुणस्थानवाले को भी हैं, सातवें गुणस्थानवाले को भी हैं। **देशसंयत में बंधस्थान तेरह का एक ही है; उदयस्थान आठ से लेकर चार हैं (८, ७, ६,५) और सत्त्वस्थान पांच हैं।**

प्रमत्त, अप्रमत्त में बंधस्थान एक नौ का ही है। यह कौनसी नौ प्रकृतियां बंध रही हैं ? प्रमत्त, अप्रमत्त में नौ प्रकृतियां कौनसी बंध रही हैं ? *श्रोता: संज्वलन चार।* संज्वलन चार और ? *श्रोता: एक वेद।* एक वेद यानी कौनसा वेद ? एक पुरुषवेद और ? *श्रोता: हास्य, रति।* हास्य, रति या अरति, शोक छठे में, और ? *श्रोता: भय और जुगुप्सा।*

भय और जुगुप्सा। भय और जुगुप्सा यह कैसी है ? ध्रुवबंधी है। उनके उदय में ऑप्शन है, बंध में नहीं। आठवें के अंत तक बंधव्युच्छिति नहीं होती, तब तक ये बंधती ही रहती है। **प्रमत्त, अप्रमत्त में बंधस्थान एक नौ का ही है, उदयस्थान सात से लेकर चार हैं** यानी ७, ६, ५ और ४; **सत्त्वस्थान पांच हैं।** कौनसे ? जो दर्शनमोह की क्षपणा की अपेक्षा लगाये थे वे २८, २४, २३, २२ और २१। **अपूर्वकरण में बंधस्थान नौ का एक ही है।** वही बंधस्थान हमने अभी देखा था। **उदयस्थान छह से लेकर तीन हैं** ६, ५ और ४। **सत्त्वस्थान अट्ठाइस, चौबीस, इक्कीस के तीन हैं।** यह उपशमश्रेणी की अपेक्षा तीन हैं। क्षपकश्रेणी में एक ही होगा। **क्षपक में इक्कीस ही का है।**

मैं बंधस्थान के ऊपर से एक बात बताना चाहती थी। अनंतानुबंधी की विसंयोजना कौनसे गुणस्थान में होती है ? छठे में ? *श्रोता: चौथे से सातवें तक।* चौथे से सातवें तक कहीं भी हो सकती है। विसंयोजना होती है यानी क्या होता है ? *श्रोता: अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन तीन कषायों में मिल जाती है।* अनंतानुबंधी प्रकृतियां अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन में और नोकषाय में चली जाती हैं। तो चौथे गुणस्थानवाला जो विसंयोजना करता है तो १२ में और ५ नोकषाय में चली जाती हैं, है न ! बराबर ? छठे-सातवें गुणस्थानवाला जब विसंयोजना करेगा तो कितनी प्रकृतियों में उसका संक्रमण होगा ? ४ संज्वलन और ५ नोकषाय में होगा न ? जिसने चौथे में विसंयोजना नहीं की उसकी बात है।

देखो, कोई चौथे गुणस्थानवाला विसंयोजना कर रहा है, उसका अनंतानुबंधी किसमें संक्रमित होगा ? अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण, संज्वलन। जो छठे-सातवें गुणस्थानवाला विसंयोजना कर रहा है उसके अनंतानुबंधी किसमें संक्रमित होंगे ? *श्रोता: बारह कषाय में।* बारह में ही होंगे ? नहीं, जिसका बंध है उसीमें यानी ४ संज्वलन और ५ नोकषाय में संक्रमण होता है। रूल क्या है ? चौथे गुणस्थानवाला किसका बंध कर रहा है ? चौथे गुणस्थानवाले को अप्रत्याख्यानावरण का बंध है, प्रत्याख्यानावरण का है, संज्वलन का है और वहां सब नोकषाय नहीं बंध रही हैं। उस समय उसको कितने नोकषाय बंध रहे हैं ? एक वेद बंध रहा है, पुरुषवेद बंध रहा है; हास्य-रति बंध रहा है; भय, जुगुप्सा भी बंध रही है तो उनमें संक्रमण होगा। अब छठे-सातवें गुणस्थानवाला जो अनंतानुबंधी की विसंयोजना करता है उस समय बंध कितने का कर रहा है ? अभी हमने देखा न ! नौ का बंध कर रहा है यानी चार संज्वलन का,

एक वेद यानी पुरुषवेद का, हास्य-रति का और भय-जुगुप्सा का बंध कर रहा है। तब उसके अनंतानुबंधी मात्र बंधनेवाली में ही संक्रमित होगी। संक्रमण के लिये नियम है, जिसका बंध होता है उसीमें संक्रमण होता है।

श्रोता: अनंतानुबंधी का क्या दूसरा ऑप्शन है ? जहां बंधती है उसमें संक्रमित होगी, नहीं बंधती वहां बंधनेवाली में संक्रमित होगी। *श्रोता: अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण का संक्रमण नहीं होता है क्या ?* विसंयोजना की बात चल रही है, उनका संक्रमण होगा। *श्रोता: उनकी विसंयोजना होगी ?* उनकी विसंयोजना नहीं होती है, यहां विसंयोजना की बात चल रही है। यदि हम संक्रमण का प्रकरण देखते तो अन्य भी जो हैं वे सब संक्रमित हो रही हैं उसमें। वे सब संज्वलन में संक्रमित हो रही हैं। वह ऑर्डिनरि संक्रमण है, ऑर्डिनरि संक्रमण में सत्ता का नाश नहीं होता। जो ऑर्डिनरि संक्रमण होता है तब कुछ परमाणु संक्रमित होते हैं। अब यहां विसंयोजना में सारे के सारे परमाणु संक्रमित हो रहे हैं। फिर भी उसके लिये नियम वही है - जो बंध रहा है उसीमें संक्रमण होगा। संक्रमण जिसमें होता है उस प्रकृति को क्या कहते हैं ? जिसमें संक्रमित होते हैं यानी यह संक्रमण है उनका दूसरे में ट्रान्स्फर होता है उसको ॲक्सेप्ट करनेवाली कोई प्रकृति चाहिये न ? हां, उसको क्या कहेंगे ? प्रतिग्रह प्रकृति कहते हैं। बंधनेवाली में ही संक्रमण होता है और उन प्रकृतियों को प्रतिग्रह प्रकृति कहते हैं। जैसे हमने यहां प्रत्येक गुणस्थान में देखा न ! बंधस्थान देखे और उसके उदयस्थान देखे, सत्त्व के स्थान देखे। प्रत्येक गुणस्थान में कौनसी प्रकृतियां संक्रमित हो सकती हैं ? और कौनसी प्रकृतियां वहां प्रतिग्रहवाली हैं ? ॲक्सेप्ट करनेवाली, ये संक्रमण कर रही हैं तब उसको ॲक्सेप्ट करनेवाली भी चाहिये कोई। वे सब के सब निश्चित हैं - कौनसे गुणस्थान में किसका संक्रमण होता है और किसमें संक्रमण होता है ? उसके भी टेबल हैं। अभी यह अपने कर्मकाण्ड में नहीं है, घबराना नहीं, हां !

श्रोता: प्रत्याख्यानावरण में संक्रमण नहीं होता क्या ? देखो, पांचवें गुणस्थानवाले को प्रत्याख्यानावरण है न ? बंध रहा है उसमें ऑर्डिनरि संक्रमण हर एक का चल रहा है। परंतु यहां विसंयोजना की बात चल रही है। *श्रोता: विसंयोजनावाली जो प्रकृति है वह अप्रत्याख्यानावरण, प्रत्याख्यानावरण में संक्रमित होगी न ?* प्रत्याख्यानावरण और संज्वलन में संक्रमण होगा। जो बंध रहे हैं उसमें संक्रमित होगी। विसंयोजना में क्या हो रहा है ? अनंतानुबंधी सारे के सारे सत्ता में से नाश होकर अन्यरूप परिणमित हो रहे

हैं। एक अंतर्मुहूर्त में यह कार्य हो रहा है। एक अंतर्मुहूर्त में अंत:कोड़ाकोड़ी सागर के जितने परमाणु हैं, जितनी स्थिति है वह सारी की सारी स्थितियां यानी निषेक अन्य कषायरूप टर्न होती हैं। ये अन्य तीन कषायरूप होती हैं, यह साधारण कथन है। वह चौथे गुणस्थानवाले की अपेक्षा है, परंतु पांचवें गुणस्थानवाला अन्य दो कषाय चौकड़ी में परिणमित होगा। छठे-सातवें गुणस्थानवाला संज्वलन में और जो अन्य नोकषाय भय, जुगुप्सा बंध रही है, पुरुषवेद बंध रहा है, युगल बंध रहा है उनमें संक्रमित होगा।

अभी विसंयोजना के काल में विशुद्धि बहुत है। उस काल में हास्य-रति ही बंधती होगी तो उसीमें संक्रमण होगा, शोक-अरति में तो होगा नहीं। ऐसे सूक्ष्म पॉइंट हैं इसमें। यह कर्मकाण्ड का विषय नहीं है, यह जयधवला का विषय है। फिर भी आपको थोड़ा-थोड़ा नियम बताते हैं। संक्रमण का विषय इसमें आयेगा, हमने पांच प्रकार के संक्रमण को नहीं लिया था। उसमें यह बात आती है कि जो बंधनेवाली प्रकृतियां है उसमें संक्रमण होता है आदि सामान्य नियम तो वहां भी बताये हैं। उसको हमने दो में यहां हमने पहले बंध, उदय और सत्ता बताया। सभी के स्थान बता दिये। अब इन स्थानों के संयोगी भंग देख रहे हैं। इस कर्मकाण्ड ग्रंथ के लास्ट-लास्ट में एक दस करणवाला प्रकरण है और पंचभागहार चूलिका यानी पांच प्रकार के संक्रमण उसको हमने नहीं लिया है। जो आपके चार्ट्स में हैं परंतु यहां नहीं ले सके।

यह सत्त्वस्थान, भंगअधिकार बहुत बड़ा अधिकार है, बंधोदयसत्त्वाधिकार भी बहुत बड़ा अधिकार है। कर्मकाण्ड के ये दो बड़े अधिकार यहां हुये, आगे तो बहुत आसान है। यह आस्रवअधिकार है, भावाधिकार है जो हमने यहां देवलाली में लिये भी थे। करणानुयोग के आधार से पांचभाव लिये थे, आस्रव की भी बात हुयी थी। कौनसे गुणस्थान में कितने और कौनसे आस्रव होते हैं उसके डिटेल्स लिये थे। वह तो बात आसान है। अभी जो हमने पढ़ा है पांच दिन में यह थोड़ा कठिन-क्लिष्ट विषय था। फिर भी आप इतने धीर-वीर हैं। *श्रोता: यह इनको समझ में नहीं आ रहा था इसलिये इतने प्रश्न पूछ रहा था।* नहीं आने पर भी चुपचाप बैठना, यह बहुत-बहुत वीरता का और धीरता का लक्षण है। कुछ नहीं बोले, शांति से सुन लिया है। अभी जब आप पढ़ोगे न, बिलकुल सरलता से समझ में आये यह ऐसी बात है।

अभी अलग-अलग स्थानों में कौनसे भंग होते हैं उसकी बात हम देख रहे थे। देशसंयत को देखा था। क्षपक का २१ का स्थान देखा था। पृष्ठ ६११ पर गाथा ६५८ की

दो उत्तम भोगभूमि होती हैं, ६ × ५ = ३० हो गयी न भोगभूमि ?

मनुष्यलोक संबंधी तीस भोगभूमि के तिर्यंच और मनुष्य, मनुष्यक्षेत्र तो कहा - मनुष्यक्षेत्र में अकेले मनुष्य रहते हैं कि तिर्यंच भी रहते हैं ? *श्रोता: तिर्यंच भी रहते हैं।* और भी कोई रहेगा ? *श्रोता: देव भी।* देव भी रहेंगे न ! व्यंतरों के आवास वगैरह पाये जायेंगे - देव भी रहेंगे। नारकी भी यहां आयेंगे क्या ? नहीं आयेंगे। हां, तो **तीस भोगभूमि के मनुष्य और तिर्यंच**। यहां तक ख्याल में आयी बात ? भोगभूमिवाले जीव नियम से मरकर देव ही होते हैं। मिथ्यादृष्टि भवनत्रिक में जाते हैं, सम्यग्दृष्टि सौधर्म-ईशान में जाते हैं। आगे कहते हैं **मानुषोत्तर स्वयंप्रभ पर्वतों के बीच** मानुषोत्तर के परे-बाहर की ओर और स्वयंप्रभ पर्वत के अंदर की ओर, यह कहां है स्वयंप्रभ ? कल बात की थी मैंने। स्वयंभूरमण समुद्र के पहले स्वयंभूरमण नाम के द्वीप में, बीचोबीच ऐसा वलयाकार पर्वत है उसका नाम है स्वयंप्रभ पर्वत। उसके बाहरी ओर तो तिर्यंचों की कर्मभूमि है और अंदर की ओर है जघन्य भोगभूमि; बीचवाले जितने असंख्यात द्वीप हैं उन सबमें तिर्यंचों की जघन्य भोगभूमि है। सभी असंख्यात द्वीप और समुद्र मिलकर कितने हैं ? *श्रोता: पच्चीस कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य।* पच्चीस कोड़ाकोड़ी उद्धारपल्य जिसको हम ढाई उद्धारसागर कहेंगे।

यह पल्य क्या होते हैं ? पल्य संख्या को बताते हैं। पल्य भी तीन प्रकार के होते हैं - एक है व्यवहारपल्य, एक है उद्धारपल्य और एक है अद्धापल्य। जहां हम देवों की आयु या कर्मों की स्थिति देखते हैं वह अद्धापल्य और अद्धासागर में नापते हैं। जो द्वीपों और समुद्रों की संख्या नापते हैं वह उद्धारपल्य में नापते हैं। व्यवहारपल्य हम उसको कहते हैं वह जो रोमखण्ड कितने हैं ? उसको गिनने का वह तरीका है। तो पल्य यानी गड्ढा, खड्डा। कितना बड़ा करना ? एक योजन चौड़ा गोल और एक योजन ऊंड़ा। कौनसा ? वह महायोजनवाला। इतना बड़ा गड्ढा करना, कहां ? दिमाग में। नहीं तो कहां, अभी अपना मनुष्यलोक ही कितना छोटा है, और कहां करने जायेंगे ! या देव को बता देना कहीं जाकर करेगा इतना बड़ा खड्डा। इतना बड़ा इमॅजिन करना और उसको रोमखण्डों से भर देना रोमखण्ड समझते हैं ? बाल के अग्रभाग। कौनसे बाल ? उत्तम भोगभूमि के। क्यों ? हमारे नहीं चलेंगे, हमारे मोटे होते हैं। उत्तम भोगभूमि से मध्यम भोगभूमिवालों के बाल आठ गुणे मोटे, जघन्यवाले के उससे आठ गुणे मोटे और

द्वीन्द्रियादि अपर्याप्तवाला, २६वाला एकेन्द्रिय प्लस आतप-उद्योत, २८वाला देव-नारकी संबंधी, २९वाला तिर्यंचपर्याप्त या मनुष्य पर्याप्तवाला या देव सहित तीर्थंकरवाला। इसतरह ये बंधस्थान थे। नामकर्म की बात है अभी मोहनीय को भूल जाओ।

देखो डायरेक्ट विशेषार्थ में, एक-एक गुणस्थान की बात देखेंगे। मिथ्यात्व में बंधस्थान कौन-कौनसे हैं ? मिथ्यात्व अवस्था में कौन-कौनसी गति संबंधी बंध करेगा ? २३वाला होगा, २५वाला होगा, २६वाला, २८वाला यानी देव और नारकीवाला, २९वाला मनुष्य या तिर्यंच संबंधी, ३०वाला तिर्यंचगति उद्योतवाला, ये अलग-अलग स्थान होंगे। उदयस्थान कौन-कौनसे होंगे ? नामकर्म के उदय में क्या विशेषता थी ? पांच काल के अलग-अलग उदयस्थान हैं। विग्रहगति का काल या कार्माणकाल, फिर दूसरा ? शरीरमिश्रकाल। तीसरा ? *श्रोता: शरीरपर्याप्तिकाल।* शरीरपर्याप्तिकाल। *श्रोता: उच्छ्वासपर्याप्तिकाल।* उच्छ्वासपर्याप्तिकाल। *श्रोता: भाषापर्याप्तिकाल।* भाषापर्याप्तिकाल। उसकी अपेक्षा उदयस्थान बहुत अलग-अलग होंगे।

मिथ्यादृष्टि के कौन-कौनसे स्थान कहां पर हैं ? देखो यहां पर, २१वाला ? विग्रहगति में। २४वाला ? एकेन्द्रिय को शरीरमिश्रकाल में। २५वाला ? *श्रोता: शरीरमिश्रकाल में।* शरीरमिश्रकाल में देवों के होता है, नारकी के होता है, मिथ्यादृष्टि को आहारक पद नहीं होता। २६वाला ? त्रसों को शरीरमिश्रकाल में होगा या एकेन्द्रियों को शरीरपर्याप्तिकाल में होगा। २७वाला ? अभी एकेन्द्रियों में उसमें आतप और मिला देना तो यह २७वाला हो जायेगा। या देवों में शरीरपर्याप्तिकाल में वह दो प्रकृति मिला देना परघात और विहायोगति तो २७वाला स्थान होगा। तो यह २८, २९, ३०, ३१ ऐसे कुल नौ स्थान हो सकते हैं। सत्त्वस्थान ? जब हम सत्त्व की बात सोचते हैं, किसमें ? मिथ्यात्व में ९३वाला होगा ही नहीं क्योंकि एक जीव को एक काल में आहारकद्विक और तीर्थंकर की सत्ता सहित मिथ्यात्व गुणस्थान नहीं हो सकता। परंतु ९२वाला होगा, क्योंकि तीर्थंकर प्रकृतिवाला मिथ्यात्व में आ सकता है वह नरकायुवाला तो ९१वाला है, फिर ९०वाला है और फिर उद्वेलना की अपेक्षा ? ८८वाला, ८४वाला, ८२वाला।

अब सासादन में देखते हैं। सासादन में बंधस्थान २८ का आदि तीन हैं। यह नीचे के विशेषार्थ में दिया है। २८वाला है, २९वाला है और ३०वाला है क्योंकि सासादन में कौन-कौनसी गति बंध सकती हैं ? *श्रोता: तीन ही गति बंध सकती हैं।* नरकगति नहीं बंधेगी। मनुष्यगति, तिर्यंचगति या देवगति का बंध होगा तो यह २८, २९, ३०वाले ले

लिये। उदयस्थान कौनसे-कौनसे होंगे ? तो ये २१ वगैरह ले लेंगे सब। सत्त्वस्थान मात्र ९० का होगा क्योंकि आहारक और तीर्थंकरवाला इस गुणस्थान में नहीं आता।

आगे मिश्र में देखेंगे – मिश्र गुणस्थान में बंधस्थान २८ या २९ का क्योंकि यह मिश्रवाला है। अभी उसके नरकगति की भी बंधव्युच्छित्ति हो गयी है, तिर्यंचगति की भी हो चुकी है। अब कौनसे रह गये ? *श्रोता: मनुष्य और देव।* तो मनुष्य और देव तो देवगतियुत २८वाला और मनुष्यगतियुत २९वाला दो स्थान रह गये हैं। उदयस्थान ? २९, ३०, ३१वाले क्योंकि मिश्र गुणस्थान है, पर्याप्त जीव ही इसमें आता है। इसलिये भाषापर्याप्तिकाल ही लेना। मिश्र गुणस्थान में कौन आयेगा ? विग्रहगतिवाला होगा क्या ? *श्रोता: नहीं होगा।* तो इसलिये विग्रहगतिकाल, शरीरमिश्रकाल, यह इसके होंगे क्या ? *श्रोता: नहीं।* मिश्र गुणस्थानवाले के नहीं होंगे। तो मिश्रगुणस्थानवाले के कौनसा काल होगा ? *श्रोता: भाषापर्याप्तिकाल।* भाषापर्याप्तिकाल में ही होगा। वह तो ऑलरेडि पर्याप्त होने के बाद वह तीसरे में आता है। तो इसलिये उदयस्थान २९, ३०, ३१ लिये। देव की अपेक्षा, मनुष्य की अपेक्षा, उद्योतवाले तिर्यंच की अपेक्षा भी ये स्थान ले लिये। सत्त्वस्थान भी तीर्थंकर रहितवाले दो ९२वाला और ९०वाला ऐसे लिये उसमें।

असंयत में भी ऐसा ही समझना है। ये बंधस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थान ॲट अ टाइम जो हैं वे हर एक के विशेषार्थ में लिख दिये हैं, यह आसान होने के लिये। वैसे इसका डिस्क्रिप्शन तो लिखा है, परंतु डिस्क्रिप्शन में केवल नौ उदयस्थान हैं या तीन बंधस्थान हैं इतनी ही बात है। वे कौनसे हैं उसकी चर्चा करने के लिये ये सारे ही विशेषार्थ लिखे हैं। आप स्वयं पढ़ेंगे तो भी यह सारा एकदम आसान होनेवाला है। प्रत्येक गति में, प्रत्येक मार्गणा में इसको यहां लगा लिया है। इसतरह से ये जो अभी तक हमने पढ़ा है इसका स्वाध्याय आपको चालू रखना है।

किसी भी ग्रंथ को शुरू से आद्योपांत पढ़ना है। आप शुरू से पढ़ना चालू करेंगे तो सभी बातें जरूर समझ में आयेंगी। अभी तक के प्रवचनों में मेरी ओर से कुछ आगम के बारे में जो कोई भूल हो गयी है उसके लिये सबसे प्रथम मैं क्षमा चाहती हूं। अब यही स्वाध्याय आप आगे बढ़ाना, चालू रखना। हम यहीं रुकते हैं अभी।

बोलो, चौबीसों भगवान की जय।